बीतक

महामति श्री लालदास जी रचित

टीका व भावार्थ

श्री राजन स्वामी

प्रकाशक

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड, सरसावा, सहारनपुर, उ.प्र.

www.spjin.org

पी.डी.एफ. संस्करण – २०१८

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

प्राणाधार श्री सुन्दरसाथ जी! सागर अपनी अभिन्न स्वरूपा लहरों के साथ सर्वदा क्रीड़ा में निमग्न रहता है। सूर्य भी इसी प्रकार अपने से अभिन्न किरणों के द्वारा निरन्तर प्रकाश देता रहता है। यदि इन जड़ पदार्थों में अंग–अंगी का सातत्य सम्बन्ध है, तो स्वलीला अद्वैत सच्चिदानन्द परब्रह्म का अपनी आत्माओं से अलगाव की कैसी मानसिकता पाली जाती है?

बीतक कोई मानवीय इतिहास नहीं है और न ही किसी भगवान, आचार्य, सन्त, या गुरु का अपने भक्तों या शिष्यों के साथ घटित होने वाला वृत्तान्त है। स्वलीला अद्वैत सच्चिदानन्द परब्रह्म का अपनी आवेश शक्ति द्वारा श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान होकर उन्हें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में अपने जैसा ही

बना देने, एवं माया के अन्धकार में भटकती हुई आत्माओं को क्षर–अक्षर से परे परमधाम की अलौकिक राह दिखाने की दिव्य लीला का वर्णन ही बीतक है।

सृष्टि के प्रारम्भिक काल से ही कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जिनका यथोचित उत्तर जानने का प्रयास प्रत्येक मनीषि करता रहा है। मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, मृत्यु के पश्चात् मैं कहाँ जाऊँगा? परब्रह्म कौन है, कहाँ है, और कैसा है? यह सृष्टि क्यों बनी, कैसे बनी, तथा लय होने के पश्चात् इसका अस्तित्व कहाँ विलीन हो जायेगा?

यद्यपि तारतम वाणी में इन प्रश्नों का यथावत् समाधान है, किन्तु उस ज्ञान मञ्जूषा (पेटी) को खोलने की कुञ्जी (चाभी) श्री बीतक ही है। इसमें विभिन्न घटनाक्रमों के माध्यम से ज्ञान के अनमोल मोतियों को बिखेरा गया है तथा वेद–कतेब के एकीकरण के द्वारा

समस्त विश्व को एक आँगन में लाने की एक मधुर झाँकी दर्शायी गयी है। इसका अनुशीलन करने वाला डिण्डिम घोष के साथ यह कह सकता है– कौन कहता है कि परब्रह्म का साक्षात्कार नहीं हो सकता ? मुझे तो ब्रह्मात्माओं के पद्चिन्हों पर चलकर ऐसा लग रहा है कि परब्रह्म मेरी आत्मा के धाम हृदय में अखण्ड रूप से विराजमान हैं और उन्हें अपनी अन्तर्दृष्टि से कभी भी देखा जा सकता है।

यद्यपि इस टीका से पूर्व पूज्य मनीषियों द्वारा अनेक टीकायें प्रचलित हैं, किन्तु सन्दर्भ, भावार्थ, स्पष्टीकरण, एवं टिप्पणियों से युक्त टीका की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा था।

मुझ जैसे अल्पज्ञ एवं अल्पबुद्धि वाले व्यक्ति के लिये यह कदापि सम्भव नहीं था, किन्तु मुझे ऐसा लगा

कि सर्वशक्तिमान अक्षरातीत के चरणों में समर्पण करने के पश्चात् भी यदि ऐसा नहीं होता है तो उनकी अलौकिक महिमा पर ही प्रश्नचिन्ह खड़ा हो जायेगा?

अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की कृपा के सागर की एक बूँद मुझे प्राप्त हुई और उसने इस असम्भव से दिखने वाले कार्य को सम्भव कर दिया। प्यारे सद्गुरु परमहँस महाराज श्री रामरतन दास जी एवं सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी की छत्रछाया में बैठकर यह कार्य विधिवत् पूर्ण हुआ।

इस शुभ कार्य में श्री ५ पद्मावती पुरी धाम के वयोवृद्ध विद्वान् श्री आनन्द दास जी शर्मा एवं गुम्मट जी मन्दिर के पुजारी श्री अनिरुद्ध जी से यथोचित आशीर्वाद, मार्गदर्शन, एवं सहयोग मिला। कतेब पक्ष के प्रसंगों में नरेश टण्डन, जालन्धर का विशेष सहयोग है।

वे कुरआन पक्ष के एक उच्चस्तरीय विद्वान हैं एवं धाम धनी के प्रति समर्पित सुन्दरसाथ हैं। इसके प्रकाशन में कनाडा सुन्दरसाथ ने प्रिय "वीनम" की स्मृति में आर्थिक सहयोग दिया है। मुद्रण कार्य में ज्ञानपीठ के विद्यार्थियों की अथक सेवा को कभी भुलाया नहीं जा सकता। धाम धनी से प्रार्थना है कि इन सब सुन्दरसाथ पर अपनी मेहेर (कृपा) की दृष्टि पल-पल बनाये रखें।

सभी सम्माननीय टीकाकारों के प्रति श्रद्धा-सुमन समर्पित करते हुए मैं आशा करता हूँ कि यह टीका आपको रुचिकर लगेगी। सभी सुन्दरसाथ से निवेदन है कि इसमें होने वाली त्रुटियों को सुधारकर मुझे भी सूचित करने की कृपा करें, जिससे मैं भी आपके अनमोल वचनों से लाभ उठा सकूँ एवं अपने को धन्य-धन्य कर सकूँ।

आपकी चरण रज

राजन स्वामी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

सरसावा

तीस–दिवसीय बीतक पठन योजना

हर वर्ष श्रावण मास की पञ्चमी से लेकर अगले एक महीने तक निजानन्द सम्प्रदाय से जुड़े सभी मन्दिरों व आश्रमों में बीतक चर्चा का आयोजन किया जाता है। अब सुन्दरसाथ की सुविधा के लिए यहाँ बीतक टीका को तीस दिन में पढ़ने का कार्यक्रम प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसका पालन करके सुन्दरसाथ इस टीका को ठीक तीस दिन में पूरा पढ़ सकते हैं–

दिवस	प्रकरण
१	१ तथा २
२	३ तथा ४
३	५ से ७
४	८ से १२

५	१३, १४ व १५ (चौ. ३९ तक)
६	१५ (चौ. ४०) से १७
७	१८ से २०
८	२१ से २४
९	२५ से २७
१०	२८ से ३०
११	३१ तथा ३२
१२	३३, ३४ व ३५ (चौ. २८ तक)
१३	३५ (चौ. २९) से ३७ (चौ. २३)
१४	३७ (चौ. २४) से ३८
१५	३९ तथा ४०
१६	४१ से ४३
१७	४४ से ४६

१८	४७
१९	४८ तथा ४९
२०	५० से ५२
२१	५३
२२	५४ से ५६
२३	५७ से ५८ (चौ. ४७ तक)
२४	५८ (चौ. ४८) से ५९
२५	६०
२६	६१ तथा ६२
२७	६३ तथा ६४
२८	६५ तथा ६६
२९	६७ से ६९
३०	७० से ७३

।। श्री बीतक साहिब।।

निजनाम श्री जी साहिब जी, अनादि अक्षरातीत।
सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहित।।

।। अथ तीन सरूपों की बीतक लिखते।।

"अथ" शब्द का कथन मंगलाचरण के अभिप्राय से किया जाता है। इसका आशय यह होता है कि ग्रन्थकार अब तक परमात्म–चिन्तन में डूबा हुआ था तथा अपने आराध्य के प्रति सर्व समर्पण की भावना से ग्रन्थ का लेखन कार्य प्रारम्भ करने जा रहा है। प्रायः अधिकतर वैदिक ग्रन्थों में अथ अथवा ओऽम् शब्द से ही ग्रन्थ का प्रारम्भ किया जाता है–

अथ योगानुशासनम्– योग दर्शन १/१

अथ त्रिविध दुःखात् अत्यन्त निवृत्तिः अत्यन्त पुरुषार्थः

– सांख्य दर्शन १/१

अथातो ब्रह्म जिज्ञासा– वेदान्त दर्शन १/१/१

अथातो धर्म जिज्ञासा– मीमांसा दर्शन १/१/१

अथा अतो धर्मम् व्याख्यामः– वैशेषिक दर्शन १/१

अथ शब्दानुशासनम्– महाभाष्य

आत्मा और सच्चिदानन्द परब्रह्म का स्वरूप अनादि है। दोनों के मध्य अनादि काल से जो लीला होती आ रही है, वर्तमान काल में जो हो रही है तथा भविष्य में भी जो होगी, उसका सम्पूर्ण घटनाक्रम ही बीतक है। बीतक को ऐतिहासिक वृत्तान्त के रूप में मानने की भूल नहीं करनी चाहिए।

जागनी लीला के १२० वर्षों (१६३८–१७५८) में

तीन स्वरूपों के द्वारा जागनी का प्रकाश फैलता है। इस सम्बन्ध में बीतक २/२४ का यह कथन देखने योग्य है-

सोई सरत कुरान में, लिखी एक सौ बीस बरस।
चार पांच छठा दिन, तब जाहिर होवे अरस।।

१६३८ से १७१२ तक सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के द्वारा, १७१२ से १७५१ तक श्री प्राणनाथ जी के द्वारा, एवं शेष सात वर्ष की आवेश लीला महाराजा छत्रशाल जी के तन से सम्पादित होती है। इसी प्रकार श्यामा जी की बादशाही (स्वामित्व) के ४० वर्षों (१७३५ से १७७५) में १६ वर्ष श्री महामति जी के तन से पूर्ण होते हैं, तो २४ वर्ष महाराजा छत्रशाल जी के तन से। बीतक की ४३७७ चौपाइयों में पद्मावतीपुरी एवं अष्ट प्रहर आदि की लगभग एक चौथाई चौपाइयों का सम्बन्ध किसी न

किसी रूप में छत्रशाल जी से है। ऐसी स्थिति में तीन स्वरूपों का भाव इन्हीं तीन स्वरूपों से लिया जायेगा, न कि बशरी, मल्की तथा हकी स्वरूप से। यह जागनी लीला की बीतक है, जिसमें मुहम्मद साहिब का अति अल्प ही वर्णन किया गया है। यद्यपि तारतम वाणी में तीन स्वरूपों का प्रयोग बसरी, मल्की तथा हकी स्वरूप के लिये अवश्य है–

बसरी मलकी और हकी, लिखी महमंद तीन सूरत।
होसी हक दीदार सबन को, करसी महंमद सिफायत।।
खु. १/७८

किन्तु कहीं–कहीं पर व्रज एवं रास के स्वरूप को भी तीन स्वरूपों के अन्दर माना गया है–

साहेब के संसार में, आए तीन सरूप।
सो कुरान यों केहेवहीं, सुन्दर रूप अनूप।।

एक बाल दूजा किसोर, तीसरा बुढ़ापन।

सुन्दरता सुग्यान की, बढ़त जात अति घन।।

खु. १३/७१, ७२

तीन सरूप खुदाए के कहे, तीनों तकरार रूहों बीच रहे।

एक बृज बाल दूजा रास किसोर, तीसरे बुढ़ापन में भोर।।

ब. क. ६/२८

किन्तु बीतक २/२८–

तीन सरूप की बीतक, जनम से लेकर।

सो कहों आगे सैयनों, ए चरचा सब ऊपर।।

तथा ६०/८५–

यामें अपनी बीतक सब है, श्री देवचन्द्र को मेरो तेरो नाम।

जा दिन जो बीती हम तीनों में, सो सब लिखी तमाम।।

के कथन से यही सिद्ध होता है कि इस जागनी लीला

की बीतक में तीन स्वरूपों (सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी, एवं महाराजा छत्रशाल जी) के द्वारा होने वाली जागनी लीला का वर्णन किया गया है।

यदि यह संशय किया जाय कि जब श्री लालदास जी के तन से बीतक की रचना का कार्य प्रारम्भ हुआ था, उस समय तो छत्रशाल जी के तन से जागनी की कोई लीला ही नहीं हुई थी। ऐसी स्थिति में उनको तीन स्वरूपों के अन्दर कैसे माना जा सकता है?

इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि श्री लालदास जी की अन्तर्दृष्टि ने यह पहले ही जान लिया था कि अब आगे की लीला छत्रशाल जी के द्वारा होने जा रही है। इसका संकेत उन्होंने स्पष्ट रूप से कर दिया है-

साथ सौंप्या श्री राज को, जाहिर में श्री महाराज।
अब हम फिरत धाम को, तुम रहो सावचेत आज।।

महाराजा जी सों कहा, मैं देखत हों एक तुम।

तिस वास्ते सेवा साथ की, सौंप चलत हैं हम।।

बी. सा. ७/२३,२४

भविष्य पुराण में, राजा कहे जुग चार।

वचन जो हैं व्यास के, ताको करो विचार।।१।।

भविष्य पुराण में चारों युगों के राजाओं का वर्णन किया गया है। हे साथ जी! व्यास जी के द्वारा कहे हुए उन वचनों का विचार कीजिए।

द्रष्टव्य– १. अठारह पुराण जिनके अन्तर्गत भविष्य पुराण आता है, उसमें चारों युगों के राजाओं का उल्लेख है। यहां राजा शब्द से तात्पर्य केवल राज महलों में रहने वाले राजा से नहीं, बल्कि ऐसे व्यक्तित्व से है, जो अपने ज्ञान, तप, प्रशासनिक क्षमता एवं वीरता आदि के क्षेत्र में अपनी उज्ज्वल आभा से प्रकाशमान हो रहा हो। राजा का अर्थ ही प्रकाशमान होता है। इस प्रकरण में अनेक व्यक्ति ऐसे हैं जो राजा नहीं थे, जैसे– धूम ऋषि, ब्रह्मा जी, मरीचि, कश्यप, व्यास आदि महर्षि, एवं अर्जुन भी राजा

नहीं थे। अर्जुन वीरता की दृष्टि से अग्रगण्य थे, इसलिये यहाँ उनकी गणना की गयी है। राजा मात्र युधिष्ठिर थे।

२. इस प्रकरण में चारों युगों के राजाओं का जो वर्णन किया गया है, उसका मुख्य उद्देश्य केवल इतना ही है कि औरंगजेब के समय प्रकट होने वाले श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप श्री प्राणनाथ जी की पहचान हो सके। इस बात को विशेष ध्यान में रखते हुए ही राजाओं की क्रमबद्धता तथा समय आदि की सत्यता को गौण कर दिया गया है।

३. इस प्रकरण में जिन राजाओं का वर्णन किया गया है, वे ७वें मन्वन्तर के २८वीं चतुर्युग के चारों युगों के ही राजा हैं। इसके पहले ६ मन्वन्तर और बीत चुके हैं। पहले स्वायम्भुव मन्वन्तर में ब्रह्मा, भृगु, स्वायम्भुव मनु, और मरीचि आदि हुए थे। महाराज उत्तानपाद एवं ध्रुव भी

उसी मन्वन्तर में हुए थे।

४. सातवें वैवस्वत मन्वन्तर में मानवी सृष्टि को हुए अब तक लगभग १२,०५,३३,११४ वर्ष हो चुके हैं। वैवस्वत मनु से ही सूर्य वंश एवं चन्द्र वंश का विस्तार हुआ है। किन्तु वर्तमान चतुर्युगी में जिन राजाओं का नाम प्रचलित है, वे सृष्टि के प्रारम्भ या सातवें मन्वन्तर के प्रथम चतुर्युग के नहीं हैं, क्योंकि भगवान राम को हुए अब तक लगभग १६ लाख वर्ष हो चुके हैं।

५. सतयुग की आयु १७,२८,००० वर्ष है। इसमें मात्र १७ राजाओं का ही वर्णन किया गया है। यह कदापि सम्भव नहीं है कि एक-एक राजा एक-एक लाख वर्ष की उम्र तक शासन करता रहे। वैदिक मर्यादा के अनुसार भी सतयुग में मनुष्यों की उम्र ४०० वर्ष, त्रेता में ३०० वर्ष, द्वापर में २०० वर्ष, और कलियुग में १०० वर्ष

होती है।

६. राजाओं (विशिष्ट व्यक्तियों) के ५ वर्ग हैं– १. देव, २. ऋषि, ३. मनुष्य, ४. असुर, ५. यवन (मुस्लिम)।

७. यह सर्वविदित है कि बाणासुर की पुत्री उषा का विवाह श्री कृष्ण जी के पोते अनिरुद्ध के साथ हुआ था। यह घटना द्वापर के अन्त समय की है। किन्तु सतयुग के राजाओं की गणना में बाणासुर का भी नाम है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि राजाओं के क्रम एवं समय में काफी हेर–फेर है। यही स्थिति त्रेतायुग की है। प्रथम मन्वन्तर के सतयुग के भृगु, मरीचि, आदि को सातवें मन्वन्तर के त्रेतायुग में मानना काफी उलझन भरा है। इस कथन के सम्बन्ध में मनुस्मृति के कथन अवलोकनीय हैं।

८. यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि "व्यास" एक उपाधि है, जिसे धारण करके भिन्न–भिन्न मतों के

विद्वानों ने पुराणों की रचना की है। यही कारण है कि प्रायः सभी पुराणों के कथनों में विरोधाभास है और एक–दूसरे के इष्ट पर कीचड़ उछाला गया है। भविष्य पुराण के इन कथनों से ही यह स्पष्ट होता है कि वेद व्यास जी ने सभी पुराण नहीं बनाये हैं। यदि वेद व्यास जी ने पुराण बनाये होते तो पुराणों में वेद विरूद्ध मृतक श्राद्ध, काल्पनिक देवी देवताओं की पूजा, नरबलि, पशु बलि, देवी–देवताओं तथा ऋषि–मुनियों के चरित्र पर कीचड़ नहीं उछाला गया होता। संक्षेप में भविष्य पुराण में "कृष्णांशस्य शोभा संवाद" नामक प्रसंग के ये कथन देखने योग्य हैं–

पराशरेण रचितं पुराणं विष्णु दैवतम्।

शिवेन रचितं स्कंन्दं पद्मं ब्रह्म मुखोद्भवम्।।

शुकप्रोक्तं भागवतं ब्राह्मं वै ब्रह्मणाकृतम्।

गरुणः हरिणा प्रोक्तं षड् वै सात्विक संभवाः।।

मत्स्यः कूर्मो नृसिंहश्च वामनः शिव एव च।

वायुरेतत्पुराणानि व्यासेन रचितानि वै।।

राजसाः षट् स्मृता वीर कर्मकांडमया भुवि।

मार्कण्डेयं च वाराहं मार्कंडेयेन निर्मितम्।।

आग्नेयमंगिराश्चैव जनयामास चोत्तमम्।

लिंगब्रह्माण्डके चापि तण्डिना रचिते शुभे।।

महादेवेन लोकार्थं भविष्यं रचितं शुभे।।

अर्थात् जिसके देवता विष्णु है, उस विष्णु पुराण की रचना पराशर मुनि ने की है। शिव जी ने स्कन्द पुराण की रचना की है और पद्म पुराण ब्रह्मा जी के मुख से कहा गया है। श्रीमद्भागवत् महापुराण के कर्ता शुकदेव जी हैं।

ब्रह्म पुराण की रचना ब्रह्मा जी के द्वारा हुई है। गरुड़ पुराण श्री हरि के द्वारा कहा गया है। ये छः सात्विक पुराण हैं। मत्स्य, कूर्म, नृसिंह, वामन, शिव और वायु पुराण श्री व्यास जी के द्वारा रचे हुए कहे गये हैं, जो राजसिक माने जाते हैं। ये पुराण कर्मकाण्डों से परिपूर्ण हैं। मार्कण्डेय और वाराह पुराण मार्कण्डेय मुनि के द्वारा लिखे गये हैं। अंगिरा मुनि ने उत्तम अग्नि पुराण रचा था। लिंग तथा ब्रह्माण्ड पुराण तण्डि के द्वारा रचे गये हैं। महादेव जी ने संसार के कल्याण के लिये भविष्य पुराण की रचना की थी।

सतयुग के राजा

सत्रह राजा सतजुग में, एक कह्यो राजा कृत्त।

तिन अपनी भुगती, तापर भयो कृतदत्त।।२।।

सतयुग में १७ प्रमुख राजा (महान व्यक्तित्व) हुए, जिनमें एक राजा कृत्त हुए हैं। उन्होंने उत्तम प्रशासन का अपना उत्तरदायित्व निभाया। उसके पश्चात् राजा कृतदन्त हुए।

भावार्थ– इन दोनों राजाओं का नाम सृष्टि के प्रारम्भिक राजाओं में नहीं आता। सभी ऐतिहासिक धर्मग्रन्थों के अनुसार सृष्टि के पहले राजा मनु ही होते हैं, चाहे वे स्वायम्भुव मनु हों या वैवस्तवत मनु या अन्य कोई। भविष्य पुराण में वर्णित सतयुग के राजाओं की संक्षिप्त सूची इस प्रकार है–

मनु, इक्ष्वाकु, विकुक्षि, रिपुंजय, कुकुत्स्थ, अनेना, पृथु, विश्वश्व, अद्रि, भद्राश्व, युवनाश्व, श्रावस्त, बृहदश्व, कुवलयाश्व, दृढ़ाश्व, निकुम्भक, संकटाश्व, प्रसेनजित, रवणाश्व, मान्धाता, पुरूकुत्स, त्रिंशदश्व, अनरण्य,

वृषदश्व, हर्यश्व, वसुमान, त्रिधन्वा, त्र्यारूणि, त्रिषंकु, हरिश्चन्द्र, रोहित, हारीत, चंचुभूप, विजय, रूरुक, सगर, असमंजस, अंशुमान, दिलीप, भगीरथ, श्रुतसेन, नाभाग, अम्बरीष, सिन्धुद्वीप, सर्वकाम, कल्माषपाद, सुदास, अश्मक, हरिवर्मा, दशरथ (प्रथम), विश्वासह, खटवांग, दीर्घबाहु और सुदर्शन।

इनकी संख्या ५४ होती है, किन्तु इनकी वास्तविक संख्या क्या है, इस सम्बन्ध में श्री रघुनन्दन शर्मा द्वारा लिखित "वैदिक सम्पत्ति" नामक ग्रन्थ में बहुत अच्छी समीक्षा की गयी है, जिसका कुछ अंश यहाँ पर उद्धृत है–

पुराणों में जो वंशावलियां दी गयी हैं, उसके दो विभाग है। पहला विभाग महाभारत के युद्ध से पहले का है और दूसरा विभाग बाद का है। पहला विभाग वंशावली नहीं,

बल्कि नामावलि है और दूसरा विभाग वंशावलि है।

१. पहले विभाग की वंशावलि के नामों की संख्या निश्चित नहीं है। प्रत्येक पुराण में अलग-अलग दी गयी है। विष्णु पुराण में मनु से लेकर महाभारतकालीन बृहद्बल तक ९२ पीढ़ी, शिवपुराण में ८२ पीढ़ी, भविष्य पुराण में ९१ पीढ़ी, और भागवत में ८८ पीढ़ी लिखी है। इससे ज्ञात होता है कि यह वंशावलि नहीं, बल्कि नामावलि है।

२. महाभारत के प्रथम अध्याय में दो वंशावलियां दी गयी हैं, जो मनु से लेकर महाभारतकालीन शन्तनु तक ही हैं, किन्तु एक में ३० पीढ़ी और दूसरी में ४३ पीढ़ी के नाम हैं। इन वंशावलियों में पिता-पुत्र के नामों का भी ठिकाना नहीं है।

३. वाल्मीकि रामायण में दिलीप के पुत्र भगीरथ, उनके कुकुत्स्थ, उनके रघु, तथा रघु की १२वीं पीढ़ी में अज

का जन्म लेना लिखा गया है, किन्तु रघुवंश में दिलीप के पुत्र रघु तथा रघु के पुत्र अज का वर्णन दिया गया है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार दिलीप रघु के प्रपौत्र (पौत्र के पुत्र) सिद्ध होते हैं, किन्तु रघुवंश के अनुसार वे पुत्र ही ज्ञात होते हैं।

४. इसी तरह महाभारत में नहुष तथा ययाति चन्द्र वंश में माने गये हैं, किन्तु वाल्मीकि रामायण बाल काण्ड सर्ग ७० श्लोक ३६ में लिखा है कि सूर्यवंशी अम्बरीष के नहुष, नहुष के ययाति, और ययाति के नाभाग हुए। इससे भी ये नामावलियां ही सिद्ध होती हैं।

५. इन नामावलियों में बीच के हजारों नाम छूट गये हैं। इसका उत्कृष्ट प्रमाण सूर्यवंश और चन्द्रवंश के मिलान से मिलता है।

सभी जानते हैं कि मनु से सूर्यवंश चला और उन्ही मनु

की इला नामक पौत्री से चन्द्रवंश चला। मनु से इक्ष्वाकु हुए और इक्ष्वाकु की पुत्री से चन्द्र वंश का मूल पुरुष पुरूरवा हुआ अर्थात् दोनों वंश एक साथ ही आरम्भ हुए, किन्तु आगे चलकर दोनों ही पीढ़ियों में जो घट-बढ़ हुई, वह बहुत ही सन्देहात्मक है-

क) युधिष्ठिर चन्द्रवंश की ५०वीं पीढ़ी में हुए, किन्तु इनके समकालीन सूर्यवंशी राजा बृहद्बल को सूर्यवंश की ९२वीं पीढ़ी में देखा जाता है।

ख) परशुराम जी ने सहस्रार्जुन को मारा था, जो चन्द्रवंश की १९वीं पीढ़ी में हुआ था। परन्तु उन्हीं परशुराम जी के भय से सूर्यवंश का राजा अश्मक, जो स्त्रियों में छिपने से "नारी कवच" भी कहलाता है, सूर्यवंश की ५२वीं पीढ़ी में था।

ग) विश्वामित्र चन्द्रवंश की १५वीं पीढ़ी में थे, किन्तु

उन्होंने वशिष्ठ के लड़कों को, जिस कल्माषपाद राजा के द्वारा मरवा डाला, वह सूर्य वंश की ५२वीं पीढ़ी में था।

घ) राजा सुदास सूर्यवंश की ५१वीं पीढ़ी में था, किन्तु इसका युद्ध राजा ययाति के लड़कों से हुआ था , जो चन्द्रवंश की छठी पीढ़ी में थे। इस तरह से देखा जाय तो दोनों वंशों में कई पीढ़ियों का अन्तर होता है , जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह वंशावलि नहीं , बल्कि नामावलि है।

६. वैवस्वत मनु से दो वंश चलते हैं, एक अयोध्या में और दूसरा मिथिला में। अयोध्या वाले वंश के रामचन्द्र इक्ष्वाकु से ६३वीं पीढ़ी में थे, किन्तु इन्हीं के समकालीन मिथिला के राजा जनक इक्ष्वाकु से १७वीं पीढ़ी में थे। इससे भी दोनों वंशों में ४६ पीढ़ी का अन्तर पड़ता है।

७. यदि इन पीढ़ियों को सही माना जाय और सूर्य

तथा चन्द्रवंश को एक ही समय से चला हुआ माना जाय तो श्री रामचन्द्र जी सूर्यवंश में मनु से ६३वीं पीढ़ी में और राजा युधिष्ठिर उन्ही मनु की पौत्री इला से चलने वाले चन्द्रवंश की ५०वीं पीढ़ी में थे। श्री कृष्ण जी राजा युधिष्ठिर के समकालीन थे ही, ऐसी दशा में वे रामचन्द्र जी से १३वीं पीढ़ी अर्थात् कोई ३२५ वर्ष पूर्व के सिद्ध होते हैं और राम–रावण युद्ध महाभारत युद्ध के बाद का सिद्ध होता है। ऐसी दशा में वंशावलियां नहीं कही जा सकतीं। ये तो नामावलियां हैं और प्रसिद्ध–प्रसिद्ध राजाओं का वर्णन करने के लिये एकत्रित की गयी हैं। चन्द्रवंश का वर्णन करते हुए महाभारत में स्पष्ट लिखा है–

अपरे ये च पूर्वे च भारता इति विश्रुताः।

भरतास्यन्ववाये हि देवकल्पा महौजसः।।

बभूवुर्ब्रह्मकल्पाश्च बहवो राजसत्तमाः।

येषामपरिमेयानि नामधेयानि सर्वशः।।

तेषां तु ये यथामुख्यं कीर्तयिष्यामि भारत।

महाभागान्देवकल्पान्सत्यार्जवपरायणान्।।

म. भा. आदि ३/४३-४५

अर्थात् राजा भरत के पहले और बाद में देवताओं के समान महाप्रतापी और ब्रह्मनिष्ठ राजा भरत-कुल में हो चुके हैं। वे भी सब भरत के नाम से ही विख्यात हैं। उनके असंख्य नाम हैं, इसलिए गिने नहीं जा सकते। यहां तो मुख्य-मुख्य राजाओं का जो देवताओं के समान बड़े भाग्यशाली एवं सत्य और विनम्रता से पूर्ण हो गये हैं, उन्हीं का वर्णन करते हैं। इसी प्रकार सूर्यवंश का वर्णन करते हुए भागवत में भी लिखा है-

श्रूयता मानवो वंशः प्राचुर्येण परन्तपः।

न शक्यते विस्तरतो वक्तुं वर्षशतैरपि।।

अर्थात् मनु के वंश का वर्णन तो खूब सुनिए, किन्तु विस्तार से उसका वर्णन तो सौ वर्ष में भी नहीं हो सकता।

इसका आशय यही निकलता है कि मात्र प्रधान-प्रधान राजाओं का ही वर्णन ग्रन्थों में मिलता है। भागवत ९/७ में लिखा है-

षष्टि वर्ष सहस्राणि षष्टि वर्ष शतानि च।

नालकदिपरो राजन्मेदिनीं बुभुजे युवा।।

अर्थात् केवल अलर्क ने ही ६६००० वर्ष तक राज्य किया। इस आधार पर अलर्क किसी वंश का पद (उपाधि) नाम ही प्रतीत होता है। इसलिये पौराणिक वंशावलियों को नामावलियां ही समझना चाहिए, क्योंकि

पौराणिक वंशावलियां जिन प्राचीन नामावलियों के आधार पर बनी हैं, उनके कुछ नमूने अब तक ब्राह्मण ग्रन्थों में पाये जाते हैं।

मैत्रायण्युपनिषद् प्रपाठक १ खण्ड ४ में लिखा है-

"अथ किमेतैर्वापरेऽन्ये। महाधनुर्धराश्चक्रवर्तिनः केचित् सुद्युम्नभुरिद्युम्नेन्द्रद्युम्नकुवलयाश्वयौवनाश्ववद्ध्यश्वाश्वपतिः शशविन्दु हरिश्चन्द्र अम्बरीषननक्तुसर्यातिययातियनरण्याक्षसेनादयः अथ मरुतभरत प्रभृतयो राजानः।"

यह एक नामावलि है, जिसमें सूर्य और चन्द्र दोनों वंशों के राजाओं के नाम आये हैं। ये सभी राजा चक्रवर्ती कहे गये हैं, इसलिये इनका नाम एक जगह संग्रहित कर दिया गया है। इसी प्रकार की दूसरी नामावलि ऐतरेय ब्राह्मण ७/३४ में लिखी हुई है। उसमें लिखा है-

"कावेषयः तुरः साहदेव्यः सोमकः सांजैयः सहदेवः दैवावृधो बभ्रूः वैदर्भो भीमः गान्धारो नग्नजित् जानकिः क्रतुवित्, पैजवनः सुदसः .... सर्वे हैव महाराज आसुरादित्य इव ह स्म श्रियां प्रतिष्ठितास्तपन्ति सर्वाभ्यो दिग्भ्यो बलिमावहन्ते।"

इसमें भी सार्वभौम राजाओं को उनके देश आदि के साथ कहा गया है। इन नामावलियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन काल में प्रसिद्ध-प्रसिद्ध वंशों की चक्रवर्ती राजाओं की और सार्वभौम राजाओं की बड़ी-बड़ी अनेकों नामावलियां थी, जिनको एक में मिला-मिलाकर पौराणिक बन्दीजनों ने वंशावलियों का रूप दे दिया है।

इस सम्बन्ध में राजा जनक का उदाहरण देखने योग्य है। सीता के पिता शिरध्वज भी जनक कहलाते हैं तथा शुकदेव जी को ज्ञान देने वाले मिथिला नरेश भी जनक

कहलाते हैं, जबकि उनके बीच में लगभग १६ लाख वर्ष का अन्तर है। ऐसी स्थिति में क्या यह सम्भव है कि राजा जनक की उम्र १६ लाख वर्ष हुई हो। कदापि नहीं, बल्कि जनक एक उपाधि है, जो मिथिला नरेशों को दी जाती थी। यही स्थिति अन्य राजाओं की भी है। इस प्रकार पुराणों में वर्णित वंशावलियों को उपाधि नामों के रूप में जोड़कर ही सत्यता को जाना जा सकता है। वर्तमान समय में शंकराचार्य नाम भी इसी का अनुकरण करता है। प्राचीन काल के इन्द्र, मनु, व्यास, आदि नाम भी इसी परम्परानुसार हैं।

ता ऊपर अन्त भयो, फेर मुचकुन्दभा होय।
ता ऊपर भैरवानन्द, राजा कम्भो कह्यो सोय।।३।।

इसके पश्चात् अन्त नामक राजा हुए। उसके पश्चात्

मुचकुन्द राजा हुए। इसके बाद भैरवानन्द तथा कुम्भो राजा प्रसिद्ध हुए।

विशेष– मान्धाता के पुत्र का नाम मुचकुन्द था। भविष्य पुराण में मान्धाता की गणना सत्युग के राजाओं में की गयी है। अतः यह कहा जा सकता है कि यहाँ मुचकुन्द मान्धाता पुत्र ही हैं।

ता ऊपर आदि भयो, फेर हरनाकुस कह्यो नाम।
ता ऊपर ताके ठौर, प्रहलाद भयो इस ठाम।।४।।

उसके बाद "आदि" राजा होते हैं। तत्पश्चात् असुरराज हिरण्यकश्यप का नाम आता है। उसके पश्चात् उसका पुत्र भक्त प्रह्लाद असुर कुल के राज सिंहासन पर विराजमान हुए।

ता ऊपर बलिलोचन, तापर बलिभोगत।

इनहों अपनी भुगती, लोचनबली इत।।५।।

प्रह्लाद के बाद उनका पुत्र विरोचन सिंहासन पर बैठा। उसके पश्चात् उसका पुत्र भक्त बलि राजगद्दी पर बैठा। इनकी राजसत्ता के बाद लोचनबलि सिंहासन पर आरूढ़ हुए।

विशेष– प्रसिद्ध है कि देवासुर संग्राम के पश्चात् राजा बलि पाताल (अमेरिका) चले गये और राज्य व्यवस्था बाणासुर के हाथों में चली गयी।

ता ऊपर बानासुर, तापर कपिलाक्ष नाम।

कपिलभद्र तापर भयो, जरासरी इस ठाम।।६।।

उसके पश्चात् बाणासुर ने राज्य किया और तत्पश्चात् कपिलाक्ष ने। इसके बाद कपिलभद्र हुए और उनके

अनन्तर जराशर का नाम आता है।

द्रष्टव्य– इतिहास प्रसिद्ध है कि बाणासुर की पुत्री का विवाह श्री कृष्ण जी के पोते अनिरूद्ध के साथ हुआ था। इस प्रकार यह घटना द्वापर में घटित होती है, जबकि उनका नाम सत्युग के राजाओं में है। इससे नामावलि की ही मान्यता स्पष्ट होती है।

तापर धूमऋषि कह्यो, ए सत्रह सतजुग के।
अब कहों त्रेता के, उनतीस नाम भये।।७।।

तत्पश्चात् धूम ऋषि का नाम आता है। सत्युग के ये सत्रह व्यक्ति अति प्रसिद्ध रहे हैं, इसलिये उन्हें राजा कहकर सम्बोधित किया गया है। अब मैं त्रेतायुग में प्रकट होने वाले २९ प्रमुख व्यक्तियों के नाम बताता हूँ।

त्रेतायुग के राजा

प्रथम तो ब्रह्मा भयो, तापर मारीच नाम।

तापर कश्यप भयो, फेर सूरज इस ठाम।।८।।

सबसे पहले ब्रह्मा जी हुए। उनके द्वारा मानसी पुत्र के रूप में मरीचि ऋषि हुए। तत्पश्चात् कश्यप ऋषि का नाम आता है। इनके साथ ही सूर्य का नाम आता है, जिनसे सृष्टि का विस्तार हुआ।

भावार्थ– आदिनारायण के संकल्प से सर्वप्रथम सांकल्पिक सृष्टि हुई, जिसमें ब्रह्मा आदि ऋषि उत्पन्न हुए। उनके साथ मरीचि आदि भी उत्पन्न हुए। यह घटना प्रथम मन्वन्तर की है, जबकि सूर्य की उत्पत्ति वैवस्वत मन्वन्तर (सातवें) की है। शेष अन्य व्यक्ति इसी २८वीं चतुर्युगी के ही दर्शाये गये हैं।

तापर तवछत्र भयो, तापर अक्षयभा नाम।

ता ऊपर अरण्यभा, विश्वामित्र इस ठाम।।९।।

इनके पश्चात् क्रमशः तवछत्र और अक्षय हुआ। तदनन्तर अरण्य और विश्वामित्र जी हुए।

फेर महामंत्र भयो, तापर भयो चिमन।

ता ऊपर राजा भयो, नाम भद्र उदवन।।१०।।

विश्वामित्र जी के पश्चात् महामन्त्र हुए और उनके बाद च्यवन जी हुए। इसके अनन्तर भद्र तथा उदवन राजा हुए।

तापर त्रिसंख भयो, तापर हरिश्चन्द्र होय।

तापर रोहितास नाम, मानधाता कह्यो सोय।।११।।

इसके पश्चात् त्रिशंकु राजा हुए। तत्पश्चात् उनके पुत्र सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र जी हुए। उनके बाद उनका पुत्र रोहिताश्व सिंहासन पर बैठा। ये सभी मान्धाता के वंश में कहे जाते हैं।

फेर राजा सगर भयो, फेर आसा मित्र नाम।
तापर भगीरथ भयो, दिलीप जो इस ठाम।।१२।।

इसके पश्चात् राजा सगर हुए हैं। उसके पश्चात् उनके पौत्र अंशुमान हुए। अंशुमान के पुत्र दिलीप राजा होते हैं और दिलीप के पुत्र राजा भगीरथ होते हैं।

भावार्थ– श्रीमद्भागवत् ९/८ के अनुसार रोहिताश्व और सगर के बीच की सात पीढ़ियों का नाम नहीं आया है। उनके नाम इस प्रकार हैं– हरित, चम्प, सुदेव, विजय, भरूक, वृक और बाहुक। सगर राजा बाहुक के पुत्र थे।

सगर के पुत्र का नाम था असमंजस और असमंजस के पुत्र हुए अंशुमान। "आसामित्र" शब्द अपभ्रंश है। इसका शुद्ध शब्द अंशुमान होगा।

तापर रघु भयो, फेर अज इस ठाम।

तापर भयो दशरथ, फेर रामचन्द्र नाम।।१३।।

इसके पश्चात् राजा रघु होते हैं। पुनः अज होते हैं, जिनके पुत्र जितेन्द्रिय महाराज दशरथ होते हैं। दशरथ के पुत्र मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र जी हुए।

भावार्थ– श्रीमद्भागवत ९/९ के अनुसार भगीरथ तथा राजा रघु के बीच में १३ पीढ़ियों का अन्तर है। वे नाम इस प्रकार हैं– श्रुत, नाभ, सिन्धुद्वीप, अयुतायु, ऋतुपर्ण, सर्वकाम, सुदास, अश्मक, दशरथ, ऐडविड, विश्वसह, खट्वांग, दीर्घबाहु और रघु।

तापर लव भयो, तापर अन्तभान।

तापर कयलखी, तापर बबरबान।।१४।।

इसके पश्चात् मर्यादापुरुषोत्तम श्री राम के पुत्र लव का राज्य रहा। तत्पश्चात् अन्तभान हुए। उसके बाद क्रमशः कायलख एवं बर्बरीवान् हुए।

ता ऊपर सुदरसन, तापर अग्निवरन।

ऐ उनतीस त्रेता मिने, भये राजा ऊपर धरन।।१५।।

उसके पश्चात् सुदर्शन राजा हुए। अनन्तर अग्निवर्ण। इस प्रकार त्रेतायुग में इस पृथ्वी पर लगभग २९ राजा (महान व्यक्ति) हुए।

द्वापर युग के राजा

उनैस भये द्वापर में, प्रथम इन्द्र नाम।

तापर भयो चन्द्रमा, फेर पूरवा राजा इस ठाम।।१६।।

द्वापर युग में मुख्यतः १९ राजा (प्रमुख व्यक्ति) हुए। सबसे प्रथम देवराज इन्द्र हुए। तत्पश्चात् चन्द्रमा हुए। उनके पश्चात् पुरूरवा राजा का नाम आता है।

भावार्थ– देव सृष्टि में इन्द्र देवों के राजा माने जाते थे। उनके ही समकालीन चन्द्रमा भी थे। यहाँ चन्द्रमा शब्द से आशय आकाश में भ्रमण करने वाला चन्द्रमा नहीं, बल्कि एक राजा का नाम है, जो देव समाज में उत्पन्न हुआ। चन्द्रमा के पुत्र बुध और बुध के पुत्र पुरूरवा है, जिनकी पत्नी उर्वशी हुई।

अय राजा तापर भयो, निरमोक्ष तापर होय।

तापर सान्तनु भयो, चित्र राजा कह्यो सोय।।१७।।

इसके पश्चात् अय नामक राजा हुए। तत्पश्चात् निर्मोक्ष हुए। इनके अनन्तर शन्तनु राजा का नाम आता है। उसके बाद चित्र राजा हुए।

भावार्थ– शन्तनु के द्वारा सत्यवती के गर्भ से चित्र और विचित्र दो पुत्र हुए। वेद व्यास जी भी सत्यवती के ही पुत्र थे, किन्तु इनके पिता पराशर ऋषि थे।

तापर विचित्र भयो, तापर भयो व्यास।

ता ऊपर पाण्डु भयो, फेर अर्जुन राजा आस।।१८।।

चित्र के बाद विचित्र को सिंहासन पर विराजमान किया गया। महर्षि वेदव्यास इन्हीं के समकालीन थे। इसके पश्चात् पाण्डु राजा हुए, जिनके पुत्र अर्जुन महान धनुर्धर

के रूप में प्रसिद्ध हैं।

भावार्थ– चित्र तथा विचित्र की कम आयु में ही देहान्त हो जाने के कारण, वेदव्यास जी ने नियोग विधि से चित्र और विचित्र की पत्नियों, अम्बा तथा अम्बिका, से धृतराष्ट्र एवं पाण्डु की उत्पत्ति की। एक दासी से विदुर जी उत्पन्न हुए। पाण्डु ही राजा बने, जिनके पुत्र पाण्डव कहलाये। पाण्डवों में युधिष्ठिर ही राजा बने, किन्तु प्रसिद्धि की अधिकता से अर्जुन का नाम यहां लिया गया है।

तापर अहिवरन कुमार, फेर सेत्रनख नाम।
ता ऊपर संतन भयो, बलीवान इस ठाम।।१९।।

उसके पश्चात् अहिवर्ण कुमार राजा हुए। तत्पश्चात् क्षेत्रनख, सन्तन और बलिवान् क्रमशः राजा हुए।

तापर निरवान भयो, तापर बलीचन्द होय।

तापर परीछित भयो, फेर जनमेजय कह्यो सोय।।२०।।

इनके बाद निर्वाण राजा बने और उनके पश्चात् बलिचन्द्र राजा हुए। पाण्डवों के बाद परीक्षित और बाद में उनके पुत्र जन्मेजय राज्य के सिंहासन पर विराजमान हुए।

भावार्थ- हस्तिनापुर के सिंहासन पर ३६ वर्ष तक राज्य करने के पश्चात् पांचों पाण्डव परीक्षित को अपना राज्य सौंपकर हिमालय की यात्रा पर निकल गये। इस प्रकार अर्जुन तथा परीक्षित के बीच में जिन छः राजाओं का नाम आया है, वे जन्मेजय के बाद के राजा हैं।

अब कहों बीस कलिजुग के, उन्नीस कहे द्वापर।

उनतीस त्रेता के कहे, सत्रह सतजुग पर।।२१।।

द्वापर के इन १९ राजाओं का वर्णन करने के पश्चात् कलियुग में होने वाले २० प्रमुख राजाओं का मैं वर्णन करता हूं। इसके पहले त्रेता के २९ तथा सत्युग के १७ प्रसिद्ध महानुभावों का वर्णन हो चुका है।

कलियुग के राजा

अब कहों कलिजुग के, प्रथम तो जदु नाम।
ता ऊपर अजयपाल, फेर महिपाल इस ठाम।।२२।।

कलियुग के राजाओं में यदु का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। इसके पश्चात् अजयपाल तथा महिपाल हुए।

तापर गन्धर्वसेन, वीर विक्रमादित्य।
तापर विक्रमाचक्र, फेर भोज कह्यो सावित।।२३।।

इनके बाद गन्धर्व सेन और विक्रमादित्य का राज्य हुआ, जिसने अपनी वीरता से शकों को देश के बाहर कर दिया। इसके पश्चात् विक्रमाचक्र और राजा भोज का नाम आता है।

तापर गौरी पातसाह, सुलतान अलाउद्दीन नाम।
तापर नसीरूदीन, लोढ़ा महमूद इस ठाम।।२४।।

इनके पश्चात् मुहम्मद गौरी की देश पर बादशाहत रही। उसके पश्चात् अलाऊद्दीन खिलजी बादशाह बना। अनन्तर नसीरुद्दीन खुसरो सुल्तान बना। महमूद लोदी उसके बाद बादशाह हुआ।

तापर बड़ा महमूद, तापर सूरखां होय।
तैमूरलिंग तापर भयो, बावर कह्यो सोय।।२५।।

मुस्लिम काल में महमूद गजनवी हुआ। इसी युग में शेर खां हुआ। गाजी कहलाने वाला क्रूर तैमूरलंग भी इसी समय में था। तत्पश्चात् बाबर का नाम आता है।

भावार्थ– इस चौपाई में प्रायः आक्रमणकारियों का नाम लिया गया है। महमूद गजनवी को बड़ा महमूद कहकर वर्णित किया गया है। यद्यपि इसका समय मुहम्मद गौरी से पहले लगभग दसवीं शताब्दी में था। यदि यह कहा जाय कि महमूद गजनवी ने भारत पर केवल हमला किया था, राज्य नहीं, इसलिये उसकी भारत के बादशाहों में गणना नहीं की जा सकती, तो इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि तैमूरलंग ने भी केवल आक्रमण ही किया था, शासन नहीं। इस चौपाई से पूर्व की चौपाई में लोढ़ा महमूद का शुद्ध शब्द महमूद लोदी होना चाहिए, जो इब्राहीम लोदी का भाई था और बाबर के विरुद्ध लड़ा

था।

ता ऊपर हुमायूं, ता ऊपर अकबर।

ता ऊपर सलीम साह, साहजहां तिन पर।।२६।।

बाबर के पश्चात् हुमायूं सिंहासन पर बैठा, तत्पश्चात् उसका पुत्र अकबर। उसके बाद उसका पुत्र जहांगीर (सलीम) हिन्दुस्तान का बादशाह हुआ। इसके उपरान्त शाहजहां दिल्ली के सिंहासन पर बैठा।

ता ऊपर औरंगजेब, ए कलियुग के नाम।

आगे अवतार होयगा, बुद्ध कलंकी इस ठाम।।२७।।

शाहजहाँ के पश्चात् उसका सबसे छोटा पुत्र औरँगजेब हिन्दुस्तान का बादशाह बना। इस प्रकार कलियुग के २० प्रमुख व्यक्तियों (राजाओं) के नाम बताये गये हैं।

इस भविष्य पुराण सहित अन्य ग्रन्थों में भी यह साक्षी है कि औरंगजेब बादशाह के समय में श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप का प्रकटन होगा।

द्रष्टव्य– इस सम्बन्ध में भविष्योत्तर पुराण, जो वर्तमान समय में अप्राप्य है, का कथन बहुत महत्वपूर्ण है।

महीतले च म्लेच्छानां राज्यवंशः प्रवर्तते।
परस्परे विरोधे च अवरंगाख्यो भवेद्यदा।।
विक्रमस्य गतेऽब्दे सप्तदशाष्टत्रिकं यदा।
तदायं सच्चिदानन्दो अक्षरात् परतः परः।।
भारते चेन्दिरायां स बुद्ध आविर्भविष्यति।
स बुद्ध कल्कि रूपेण क्षात्रधर्मेण तत्परः।।
चित्रकूटे वने रम्ये स वै तत्र भविष्यति।

भविष्योत्तर पुराण ब्र. ख. अ. ७२

अर्थात् जब पृथ्वी पर मुसलमानों का राज्य होगा, उस समय औरंगजेब बादशाह राज्य कर रहा होगा, और समय होगा विक्रम संवत् १७३८। ऐसे समय अक्षर से भी परे सच्चिदानन्द परब्रह्म की शक्ति भारत वर्ष में इन्द्रावती आत्मा के अन्दर प्रकट होगी। चित्रकूट के रमणीय क्षेत्र में श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक के स्वरूप में परब्रह्म की शक्ति विराजमान होगी और उनके द्वारा सबके धर्म की रक्षा होगी।

श्री महामति कहे ऐ साथ जी, सास्त्र कहें यों कर।
आगे अपनी बीतक, सो लीजे चित धर।।२८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! शास्त्रों (धर्मग्रन्थों) में ऐसा कहा गया है। इसके आगे अपना सम्पूर्ण प्रसंग (वृतान्त) आ रहा है, उसे अपने हृदय में

धारण कीजिये।

भावार्थ– सामान्यतः शास्त्र का तात्पर्य छः दर्शनों से लिया जाता है, किन्तु यहाँ पर भविष्य की साक्षी देने वाले ग्रन्थों से है। "शास्यते येन स शास्त्र" अर्थात् जिसके द्वारा ज्ञान के क्षेत्र में विशेष निर्देशन दिया जाय, उसे शास्त्र कहते हैं।

प्रकरण ।।१।। चौपाई ।।२८।।

महाकारण

जो कार्य दृष्टिगोचर होता है, उसके पीछे कारण अवश्य होता है, किन्तु कारण का भी जो कारण है, वह महाकारण कहलाता है।

हद-बेहद से परे वह स्वलीला अद्वैत परमधाम है, जहां के कण-कण में सच्चिदानन्द परब्रह्म की लीला होती है। श्री राज जी, श्यामा जी, सखियां, अक्षरब्रह्म और महालक्ष्मी इन पांचों का एक अद्वैत स्वरूप है। श्यामा जी आनन्द अंग हैं और अक्षरब्रह्म सत् अंग।

अक्षरातीत का हृदय परम सत्य (ऋत्/मारिफत) का स्वरूप है। वह ही सत्य (यथार्थ, हकीकत) के रूप में श्यामा, सखियों, अक्षरब्रह्म तथा महालक्ष्मी एवं पच्चीस पक्षों के रूप में क्रीड़ा कर रहा है।

इसे श्री मुखवाणी के इन कथनों से समझा जा सकता

है–

हक हादी अर्स मोमिन, सो तो पेहेले हक दिल मांहें।
जो चीज प्यारी रूह को, ताए हक पल छोड़े नाहें।।
जो मता कह्या दिल मोमिन, सो मोमिन दिल समेत।
सो बसत हक के दिल में, सो हक दिल मता रूह लेत।।

श्रृंगार २/१७,१८

किन्तु इस भेद का पता सखियों, श्यामा जी या अक्षरब्रह्म में से किसी को भी नहीं था। धाम धनी ने अपने दिल में यह बात ली कि श्यामा जी तथा सखियों को मैं इस बात की पहचान करा दूँ कि उनका रूप मेरा ही स्वरूप है, तथा उनके अन्दर मेरा ही प्रेम (इश्क) है। पच्चीस पक्षों में दृष्टिगत शोभा एवं लीला भी मेरे ही हृदय का प्रकट रूप है। इस तथ्य को श्रीमुखवाणी में इन शब्दों में व्यक्त किया गया है–

एक पातसाही अर्स की, और वाहेदत का इस्क।
सो देखलावने रूहों को, पेहेले दिल में लिया हक।।

खिलवत ६/४३

अक्षरातीत के हृदय में प्रकट होने वाली इस स्वाभाविक इच्छा को ही खेल का महाकारण कहते हैं। इस इच्छा के परिणाम स्वरूप ही अक्षर ब्रह्म ने तीसरी भूमिका की पड़साल में विद्यमान सखियों को देखा तथा सखियों ने अक्षर को। दोनों ने एक दूसरे की लीला को देखने की इच्छा तभी की।

जो पेहेले लई हकें दिल में, पीछे आई मांहे नूर।
तिन पीछे हादी रूहन में, ए जो कर हुआ जहूर।।

खिलवत ६/४४

इसे खेल का कारण कहते हैं।

यद्यपि परमधाम में अनादि काल से ही प्रेम की लीला

चल रही थी। इसके साथ ही अपने प्रेम का दावा भी साथ-साथ चल रहा था, जिसने एक प्रेममयी विवाद की स्थिति पैदा कर दी थी कि किसका प्रेम बड़ा है और कौन किसको रिझाता है?

जब सखियों ने अक्षर ब्रह्म को देखा तो अक्षरातीत से अक्षर का खेल देखने की इच्छा की तथा सखियों को देखकर अक्षर ब्रह्म ने भी परमधाम की प्रेम एवं आनन्द से परिपूर्ण लीला को देखने की इच्छा की।

अक्षर मन उपजी ए आस, देखों धनी जी को प्रेम विलास।

तब सखियों मन उपजी एह, खेल देखें अक्षर का जेह।।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३७/१८

इस प्रकरण के प्रारम्भ की भूमिका इसी घटनाक्रम पर आधारित है।

अब कहों फेर के, मूल मिलावे की बीतक।

जैसी आज्ञा धनी की, सो बातें बुजरक।।१।।

श्री महामति जी के स्वरों में श्री लालदास जी कहते हैं कि हे साथ जी! संसार के धर्मग्रन्थों से परब्रह्म के इस नश्वर जगत में प्रकट होने की बात कहने के बाद, अब मैं पुनः आपको उस परमधाम में वापस ले चलता हूँ, जहां मूल मिलावे में आपकी अक्षरातीत के साथ प्रेम भरी लीला हुई। धाम धनी के आदेश से ही मैं यह सारी बातें कह रहा हूँ, जो बड़ी ही महान गरिमा वाली है।

भावार्थ- इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "मूल मिलावे की बीतक" का भाव यह है कि सखियों को माया का खेल दिखाने की इच्छा से धाम धनी ने पाट घाट न जाकर मूल मिलावे (प्रथम भूमिका में चार चौरस हवेलियों के बाद पाँचवी गोल हवेली) में अपने सामने

बैठा लिया और कहा कि मेरी तरफ देखो, मैं तुम्हें माया का खेल दिखाता हूँ। उनके यह कहते ही सम्पूर्ण परमधाम में फरामोशी (नींद) छा गयी। जहाँ सखियों के मूल तन विराजमान हैं, उसे मूल मिलावा कहते हैं।

पहले मूल अद्वैत में, भोम जहाँ इस्क।
तहां प्रेम रबद में, भया हुकम हक।।२।।

उस स्वलीला अद्वैत परमधाम की भूमिका परम प्रेममयी है। वहाँ सखियों, श्यामा जी तथा श्री राज जी के बीच में अपने प्रेम को बड़ा सिद्ध करने के लिये एक संवाद हुआ, उसका निर्णय करने के लिये इस मायावी जगत की रचना करने के लिये श्री राज जी का आदेश हुआ।

भावार्थ– कालमाया का ब्रह्माण्ड द्वैतमयी है, क्योंकि

यहाँ जीव तथा माया की लीला होती है। इसके विपरीत योगमाया के ब्रह्माण्ड में अद्वैत लीला है, क्योंकि वहाँ अक्षरब्रह्म का नूर क्रीड़ा करता है। वहाँ अखण्ड ब्रह्म अपनी अखण्ड शक्ति (योगमाया, चैतन्य प्रकृति) के साथ लीला मग्न है। इस अद्वैत भूमिका के मूल में वह परमधाम है, क्योंकि अक्षरब्रह्म अक्षरातीत के ही सत अंग हैं। योगमाया अद्वैत होते हुए भी स्वलीला अद्वैत नहीं है, क्योंकि उसमें एकत्व (वहदत) का रस नहीं है। इस प्रकार परमधाम को बेहद मण्डल (योगमाया) अद्वैत भूमिका का मूल होने से मूल अद्वैत कहते हैं।

एह खेल देखन की, इच्छा उपजाई दोय।
अक्षर और सैयन को, आदि अनादि फल कह्यो सोय।।३।।

अक्षरातीत श्री राज जी ने सखियों तथा अक्षर ब्रह्म में

लीला देखने की इच्छा पैदा की। सखियों ने नश्वर जगत की दुःख भरी लीला देखने की इच्छा की, तो अक्षर ब्रह्म ने परमधाम की अनादि काल से चली आ रही प्रेममयी लीला को देखना चाहा।

भावार्थ– जगत् की लीला को "आदि" इसलिये कहा गया है, क्योंकि इसकी उत्पत्ति (प्रारम्भ) होने से विनाश भी निश्चित् रूप से होना है। परमधाम की लीला अनादि काल से चल रही है और अनन्त काल तक चलती रहेगी।

ताके तीन तकरार कहे, सो भये तीनों इण्ड।
ताकी बीतक जुदी–जुदी, माया मिथ्या नट ब्रह्मांड।।४।।

इस खेल के तीन अलग–अलग भाग हैं– १. व्रज, २. रास, ३. जागनी। ये तीनों तीन अलग–अलग ब्रह्माण्डों

में हुए हैं। इन तीनों में अलग –अलग प्रकार की तीन लीलाएं हुई हैं। जिस प्रकार एक बाजीगर अपने जादू की शक्ति से मिथ्या एवं चमत्कारपूर्ण खेल दिखाया करता है, उसी प्रकार अक्षरब्रह्म का मन अव्याकृत अपनी माया से इस नश्वर जगत् की मिथ्या लीला किया करता है।

भावार्थ– व्रज की लीला कालमाया के ब्रह्माण्ड में और महारास की लीला योगमाया (केवल ब्रह्म) के ब्रह्माण्ड में खेली। वर्तमान समय में चल रही जागनी लीला इस कालमाया के ब्रह्माण्ड में ही है। व्रज लीला पूरी नींद में हुई। इसमें अपने मूल घर एवं धनी से अपने मूल सम्बन्ध की कोई भी पहचान नहीं थी।

पूरी नींद को जो सुपन, कालमाया नाम धराया तिन।

प्रकटवाणी ३७/३२

महारास की लीला अर्ध जाग्रति की हुई , अर्थात्

सम्बन्ध का पता था किन्तु मूल घर का नहीं था।

कछुक नींद कछु जाग्रत भए, जोगमाया के सिनगार जो कहे।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३७/३९

किन्तु जागनी लीला में मूल घर एवं मूल सम्बन्ध आदि की पूर्ण पहचान तारतम वाणी से हो गयी है। इस प्रकार तीनों लीलाओं की दृश्यावलि अलग-अलग प्रकार की है। इस जगत की परिवर्तनशील लीला को बाजीगर (नट) के खेल से उपमा देने का आशय इस खेल की नश्वरता को प्रदर्शित करना है। इस खेल के जीव तो भला अपने बाजीगर को कहाँ खोज पायेंगे, वे तो उसके स्वाप्निक रूप (आदिनारायण) को भी नहीं जान पाते?

कोई कहे ए भरम की बाजी, जो खेलत कबूतर।

तो कबूतर जो खेल के, सो क्यों पावे बाजीगर।।

किरंतन २९/३

पहले अग्यारे बरस, और ऊपर बावन दिन।

काल माया ब्रह्मांड में, खेले मिल निज जन।।५।।

सबसे पहले व्रजलीला हुई, जिसमें ११ वर्ष और ५२ दिन तक अक्षरातीत ने इस कालमाया के ब्रह्माण्ड में अपनी आत्माओं के साथ क्रीड़ा की।

भावार्थ– श्रीमद्भागवत् १०/३/४३ में वर्णित है कि विष्णु भगवान कारागार के अन्दर वसुदेव के पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुए। नन्द के घर पहुँचने पर उस बालक में अक्षरातीत का आवेश, और जोश, अक्षर की आत्मा के साथ प्रविष्ट हुआ। "सो सूरत धनी को ले आवेस, नंद घर कियो प्रवेस" प्र. हि. ३७/२९ तथा "दो भुजा सरूप जो स्याम, आतम अक्षर जोस धनी धाम" प्र. हि. ३७/३० से यह स्पष्ट होता है। परमधाम की आत्मायें गोपियों के तनों में प्रविष्ट हुईं तथा अक्षर ब्रह्म के द्वारा

धारण की गयी २४००० सुरतायें भी खेल में आयीं, जिन्हें कुमारिका कहा गया। व्रज में शकटासुर और पूतना वध से लेकर कालिय नाग दमन, इन्द्र मद मर्दन, आदि तक अति मनोहर लीलायें हुई। ११ वर्ष व्यतीत होने के बाद ५२ दिन तक वियोग की लीला हुई। आलमन्दार संहिता में कहा गया है कि–

तस्माद् एकादश समा द्विपंचाशत् दिनानि च।
कृष्णो ब्रजातु संयातो लीला कृत्वा स्वमालयम्।।

ता पीछे आये रास में, इण्ड जोगमाया जाग्रत।
जहां विरह विलास दोऊ, देख के फिरे इत।।६।।

इसके पश्चात् अक्षरातीत योगमाया के जाग्रत ब्रह्माण्ड में आये। वहाँ उन्होंने अपनी अंगरूपा आत्माओं के साथ महारास की लीला की। इसमें सखियों ने विरह तथा प्रेम

के विलास का प्रत्यक्ष अनुभव किया। इसके पश्चात् धाम धनी अपनी आत्माओं के साथ पुनः परमधाम आ गये।

भावार्थ– आनन्द योगमाया (केवल ब्रह्म) के ब्रह्माण्ड में महारास की लीला हुई, जो परमधाम तथा कालमाया दोनों से भिन्न था।

एह सरूप ने एह वृन्दावन, एह जमुना त्रट सार।
घरथी तीत ब्रह्माण्डथी अलगो, ते तारतमे कीधो निरधार।।

रास १०/३६

अक्षरातीत ने अक्षरब्रह्म को परमधाम की लीला दिखाने के लिये अपने आवेश द्वारा महारास की लीला की।

फेर मूल सरूपें देख्या तित, ए दोऊ मगन हुए खेलत।
जब जोस लियो खेंच कर, तब चित्त चौंक भई अछर।।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३७/४२

कौन बन कौन सखियां कौन हम, यों चौंक के फिरी आतम।

मूल स्वरूप अक्षरातीत ने जब श्री कृष्ण जी के तन से अपना जोश खींचा, तो अक्षरब्रह्म को यह पता चला कि मैं परमधाम में नहीं बल्कि अपने ही योगमाया के ब्रह्माण्ड में धनी की प्रेममयी लीला देख रहा हूँ।

इस अवस्था में सखियों को भी श्री कृष्ण जी का तन नहीं दिखायी दिया। पुनः धनी के द्वारा जोश दिये जाने पर लीला प्रारम्भ हुई तथा सबकी इच्छा को पूर्ण कर वे परमधाम वापस ले गये।

ब्रज रास दोऊ अखण्ड, कर चेतन बुधि फिरे मन।
ए ब्रह्माण्ड तीसरा, जहां महम्मद आये रोसन।।७।।

अक्षर ब्रह्म की जाग्रत बुद्धि के स्वरूप केवल ब्रह्म में होने वाली यह लीला उनके चित्त स्वरूप सबलिक के

महाकारण में अखण्ड हो गयी। इसी प्रकार व्रज लीला भी सबलिक ब्रह्म के कारण में अखण्ड हो गयी। रास लीला के पश्चात् सखियों के मन (सूरता) वहाँ से वापस परमधाम आ गये। पुनः यह कालमाया का जागनी ब्रह्माण्ड बना, जिसमें मुहम्मद (सल्ल.) ने आकर अखण्ड ज्ञान का प्रकाश किया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "फिरे मन" का तात्पर्य है, सखियों की सुरता का व्रज–रास से वापस अपने परमधाम में आ जाना।

व्रज से रास में सखियों के पहुँचते ही इस ब्रह्माण्ड का प्रलय हो गया। "एक रंचक न राखी चौदे लोक की, महाप्रले कह्यो ऐसो अंत" किरंतन १३/८ से यही निष्कर्ष निकलता है।

महारास की लीला में १२००० नूरमयी तनों में एक–

एक ब्रह्मसृष्टि तथा दो-दो ईश्वरी सृष्टि (कुमारिका) विद्यमान थीं। ईश्वरी सृष्टि के जीव व्रज लीला में अखण्ड हो गये थे। पूर्व में प्राप्त वरदान के कारण इस नये ब्रह्माण्ड में उनकी २४००० सुरतायें आयीं, जिन्हें प्रतिबिम्ब की सखियां कहा गया।

इसी प्रकार सबलिक के महाकारण में होने वाली महारास का प्रतिबिम्ब सबलिक के स्थूल (अव्याकृत के महाकारण) में पड़ा, जिससे मुग्ध होकर वेदों ने उस लीला में स्वयं को शामिल करने की प्रार्थना की।

इस प्रार्थना के स्वीकार होने पर वेदों ने १२००० सखियों का रूप धारण कर इस नये ब्रह्माण्ड में लीला का सुख लिया। इस प्रकार पूर्व ब्रह्माण्ड की तरह ही ३६००० सखियां हो गयी। प्रगटवाणी के शब्दों में-

ए तीसरा इण्ड नया भया जो अब, अछर की सूरत का सब।
याही सूरत की सखियां भई, प्रतिबिम्ब वेद ऋचा जो कहीं।।
प्रकास हिन्दुस्तानी ३७/५३

इस नये ब्रह्माण्ड के श्री कृष्ण जी में न तो अक्षरब्रह्म की आत्मा थी और न अक्षरातीत का जोश-आवेश। केवल रास बिहारी की शक्ति ने नये ब्रह्माण्ड के श्री कृष्ण जी में विराजमान होकर एक रात्रि की रास लीला की। इसके पश्चात् सात दिन गोकुल में तथा चार दिन तक मथुरा में इसी शक्ति ने लीला की। जब कंस को मारकर श्री कृष्ण जी ने ग्वाले का वेश उतार दिया तथा राजसी वस्त्र धारण किया, तो रास बिहारी की शक्ति भी श्री कृष्ण जी के तन को छोड़कर व्रज मण्डल में विद्यमान राधा जी के तन में स्थित हो गयी। इसी स्वरूप के विरह में १०० वर्षों तक प्रतिबिम्ब तथा वेदऋचा सखियां तड़पती रहीं और अपने

धाम गयीं। वेद ऋचायें अव्याकृत के महाकारण में प्रतिबिम्बित महारास में गयीं तथा प्रतिबिम्ब की सखियां अखण्ड व्रज में गयीं। मथुरा तथा द्वारिका में विष्णु स्वरूप योगेश्वर कृष्ण की ११२ वर्ष तक लीला रही। यह श्री कृष्ण की त्रिधा लीला है, जिसमें ११ वर्ष ५२ दिन तक अक्षरातीत ने, ११ दिन तक अखण्ड रास बिहारी की शक्ति ने, तथा ११२ तक वैकुण्ठ बिहारी विष्णु ने लीला की।

रास लीला खेल के, आये बरारब में।

तहां बात सब जाहिर करी, चल्या मारग इनसे।।८।।

रास लीला के पश्चात् अक्षर की आत्मा और धनी के जोश का स्वरूप मुहम्मद (सल्ल.) के रूप में अरब की धरती पर अवतरित हुआ। वहाँ पर उन्होंने परमधाम की

बातों को संकेतों में प्रकट किया। इसी स्वरूप के द्वारा इस्लामी जगत् में शरीअत (कर्मकाण्ड) के मार्ग का प्रसार हुआ।

भावार्थ– रास वाले स्वरूप (आत्मा अक्षर+धनी का जोश) के अरब में प्रकट होने के सम्बन्ध में गुरुवाणी में भी कहा गया है–

पार जातु गोपी ले अईया, वृन्दावन माहें रंग कीआ।
ले नीले कपड़े वस्तर पहने, तुर्क पठाणी अमल कीआ।।

छे दिन कुरान में, वाके भये जब।
ता दिन की हकीकत, सारी छिप कही तब।।९।।

कुरआन में छः दिनों का प्रसंग वर्णित है। मुहम्मद साहिब ने उन छः दिनों में होने वाले घटनाक्रमों को संकेतों में छिपाकर कुरआन में प्रकट किया है।

भावार्थ– कुरआन के सिपारा १ पारा २ में छः और सात दोनों दिनों का प्रसंग दिया हुआ है। सातवें दिन की लीला सबके न्याय से जुड़ी है।

तामें एक दिन ब्रज में, दूसरे दिन रास।
एक रात तहां खेले, देखे विरह विलास।।१०।।

इसमें पहला दिन व्रज की लीला (हूद नबी के घर तूफान आने) का है। दूसरा दिन रास की लीला (नूह नबी के घर तूफान आने) का है। इस लीला में परब्रह्म ने अपनी आत्माओं के साथ महारास की लीला की, जिसमें सखियों को विरह तथा प्रेम के विलास का यथार्थ अनुभव हुआ।

मनोरथ पीछे रहे, तब तीसरो भयो इण्ड।

तामें आये बरारब, आमर फैलाया ब्रह्माण्ड।।११।।

ब्रह्मात्माओं के मन में माया का खेल देखने की जो इच्छा थी, वह व्रज एवं रास में पूर्ण नहीं हो सकी थी। इसलिये यह तीसरा ब्रह्माण्ड बना, जो जागनी ब्रह्माण्ड कहलाता है। इस तीसरे ब्रह्माण्ड में मुहम्मद (सल्ल.) का अरब में प्रकटन हुआ और उन्होंने धाम धनी के सन्देश "एकमात्र अल्लाह ही पूज्य है" को सारे संसार में फैलाया।

एह है दिन तीसरा, रहे साठ बरस और तीन।

रब्बानी कलाम ल्याय के, सब को दिया आकीन।।१२।।

यह तीसरे दिन की लीला है, जो अरब की धरती पर मुहम्मद साहिब के तन से ६३ वर्ष की अवस्था तक चली। उन्होंने अल्लाह तआला की वाणी कुरआन के द्वारा

एक परब्रह्म पर सबको विश्वास दिलाया।

भावार्थ– मुहम्मद साहिब के अरब में आने से पूर्व अनेक प्रकार की मूर्तियों की पूजा हुआ करती थी। सम्पूर्ण अरबी जगत तरह–तरह की बुराइयों से ग्रस्त था। उन्होंने परब्रह्म की छत्रछाया में अरबवासियों को एकेश्वरवाद पर अटूट आस्था दिलायी।

एह कथा बहुत है, विस्तार नहीं सुमार।
पर ए चौथे दिन की, सैयां करो विचार।।१३।।

मुहम्मद साहिब के तन से होने वाली लीला का विस्तार बहुत अधिक है। यहाँ उसका पूर्णरूपेण वर्णन करना प्रासंगिक नहीं है। किन्तु हे साथ जी! चौथे दिन की जो महत्वपूर्ण लीला स्वयं श्यामा जी के द्वारा हुई है, उसका आप चिन्तन करें।

जब महंमद साहेब की, नव सदी बीतक।

सवा नव बाकी रहे, दसमी के बुजरक।।१४।।

जब मुहम्मद साहिब को अन्तर्धान हुए (देह त्याग किये, पर्दे में हुए) ९०० वर्ष व्यतीत हो गये, तथा गरिमामयी दशवीं सदी में सवा नौ वर्ष बाकी रहे।

भावार्थ– दशवीं सदी में श्यामा जी का प्रकटन हुआ है, इसलिये इस चौपाई के चौथे चरण में दशवीं सदी के लिये "बुजरक" शब्द का प्रयोग किया गया है। सवा नौ वर्ष का तात्पर्य है– ९ वर्ष और ३ माह। अर्थात् दशवीं सदी के ९० वर्ष ९ माह व्यतीत हो चुके थे। फारसी भाषा में नवर का तात्पर्य है– १० कम हजार। इसी को अरबी में अलिफ सानी कहते हैं, जिसका आशय भी हजार वर्ष में आने वाला सुधारक होता है।

साल नव सै नब्बे मास नव, हुये रसूल को जब।

रूह अल्लाह मिसल गाजियों, सैयां उतरे तब।।१५।।

इस प्रकार रसूल मुहम्मद साहिब को पर्दे में हुए जब ९९० वर्ष और ९ माह हो गये, तब परब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति श्यामा जी अपने परमधाम की उन ब्रह्मात्माओं के साथ संसार में आयीं, जो धर्म पर अपना सर्वस्व समर्पण करने वाली हैं।

भावार्थ– कट्टरपन्थी लोग "गाजी" का अर्थ काफिरों का कत्ल करने वाला मानते हैं, किन्तु इसका आशय है– परब्रह्म की राह में अपनी सांसारिक इच्छाओं का त्याग कर देना। एक ऐतिहासिक तथ्य है कि दिल्ली और मेरठ में हिन्दुओं का भयानक संहार करने के पश्चात् तैमूर लंग ने स्वयं को "गाजी" के रूप में घोषित किया था।

सम्बत सोलह सै अड़तीसे, आसो सुदी चौदस को।

जन्में दिन श्री देवचन्द्रजी, आए प्रगटे मारवाड़ मों।।१६।।

विक्रम सम्वत् १६३८ में आश्विन मास की शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को श्री देवचन्द्र जी का जन्म मारवाड़ प्रान्त में हुआ था। उस तन में परब्रह्म की आनन्द स्वरूपा श्री श्यामा जी ने प्रवेश किया।

तामें गाम उमरकोट, मत्तू मेहता घर अवतार।

माता जो कुंवरबाई, ताको कहों विस्तार।।१७।।

जिस ग्राम में उनका जन्म हुआ था, उसका नाम उमरकोट था। उनके पिता का नाम मत्तू मेहता तथा माता का नाम कुंवरबाई था। अब वहाँ की लीला का मैं आगे वर्णन करता हूँ।

जब जनमे मारवाड़ में, घर अति आनन्द नर नार।

यह बधाई ब्रह्मांड में, त्रिगुण समेत विस्तार।।१८।।

जब मारवाड़ प्रान्त में श्री देवचन्द्र जी का जन्म हुआ, तो उनके परिवार तथा अन्य सगे-सम्बन्धियों में बहुत अधिक आनन्द हुआ। उनके प्रकट होने की खुशी ब्रह्मा, विष्णु, शिव सहित ब्रह्माण्ड के सभी प्राणियों के लिये थी।

भावार्थ- संसार के सभी प्राणी सत्व, रज और तम के त्रिगुणात्मक बन्धन में पड़े रहते हैं। इसलिये सभी को त्रिगुण कहा जा सकता है, किन्तु जीव सृष्टि में अग्रगण्य होने से प्रायः ब्रह्मा, विष्णु और शिव को ही त्रिगुण कहकर सम्बोधित किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति में सत्व, रज और तम कम-अधिक मात्रा में मिले रहते हैं, किन्तु जिस गुण की जिसमें अधिक मात्रा होती है, उस

व्यक्ति को उसी गुण से सम्बोधित किया जाता है, जैसे– विष्णु भगवान को सतोगुणी, ब्रह्मा जी को रजोगुणी, एवं शंकर जी को तमोगुणी माना जाता है। शंकर जी में भी सतोगुण का अंश है, जिससे वे योगिराज कहलाते हैं।

सुखदाई सबन को, अखण्ड करन हार।
विश्व बन्दे अक्षर लों, सुके परीक्षित सों कह्यो विचार।।१९।।

शुकदेव जी ने परीक्षित से यह बात बतायी है कि संसार के सभी लोग (भक्त, मनीषी, योगी, आदि) केवल अक्षर ब्रह्म (विभूति पाद) तक की ही भक्ति करते हैं, जबकि ये तो अक्षरब्रह्म से भी परे साक्षात् अक्षरातीत की आह्लादिनी शक्ति हैं। इसलिये इनके इस संसार में आ जाने से सबको अखण्ड मुक्ति मिलेगी और सभी को शाश्वत् सुख प्राप्त होगा। उनके परिचय के सम्बन्ध में श्रीमद्भागवत् के

ये उद्धरण देखने योग्य हैं–

देवापिः सन्तनोभ्राता मरुश्चेक्ष्वाकुवंशजः।

कलाप ग्राम आसाते, महायोग बलान्वितौ।।

श्रीमद्भागवत्१२/२/३७

चन्द्रवंशी शन्तनु के भाई देवापि और इक्ष्वाकु (सूर्य) वंश में उत्पन्न होने वाले राजा मरू हिमालय स्थित कलाप ग्राम में साधनारत हैं और दोनों ही महान योगबल से युक्त हैं।

ताविहैत्य कलेरन्ते वासुदेवानुशिक्षितौं।

वर्णाश्रमयुतं धर्म पूर्ववत् प्रथयिष्यतः।। १२/२/३८

भगवान् की प्रेरणा से ये दोनों कलियुग के अन्त में प्रकट होंगे तथा पहले की ही तरह शुद्ध धर्म की स्थापना करेंगे।

द्रष्टव्य– इन श्लोकों में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी तथा

श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की कुछ पहचान करायी गयी है। कहने का आशय यह है कि कलियुग के अन्त में जब सच्चिदानन्द परब्रह्म की आवेश शक्ति प्रकट होगी, तो वह इन दोनों (मरू और देवापि) के द्वारा धारण किये गये तन में विराजमान होकर लीला करेगी।

वेद-शास्त्रों के अनुसार कर्मों के आधार पर सम्पूर्ण मानव जाति के ४ वर्ग होते हैं, जिन्हें वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) कहा जाता है। इन्हें जाति नहीं समझना चाहिए। इसी प्रकार चारों आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास) का पालन करने पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति सरलतापूर्वक हो जाती है। इस व्यवस्था को वर्णाश्रम व्यवस्था कहते हैं। तात्पर्य यह है कि वेदानकूल (धर्ममय) जीवन पद्धति को इन दोनों स्वरूपों के द्वारा समाज में स्थापित किया

जायेगा।

सतजुग के बीज भूत, इनों बीच रहे विस्तार।

होवे सब में जाहिर, अखण्ड ए संसार।।२०।।

ये दोनों स्वरूप सत्युग के कारण रूप हैं। इनके द्वारा परमधाम का अलौकिक ज्ञान प्रकट होकर सबमें फैल जायेगा, जिससे यह सारा जगत् अखण्ड मुक्ति को प्राप्त कर लेगा।

भावार्थ– चारों युगों के सम्बन्ध में ऐतरेय ब्राह्मण ख. ३ में कहा गया है–

कलिः शयानो भवति संजिहानस्तु द्वापरः।

उत्तिष्ठस्त्रेता भवति, कृतं संपद्यते चरश्चरैवेति।।

अर्थात् अज्ञानता की नींद में शयन करने वाला कलियुग से ग्रस्त माना जाता है। ज्ञान पाकर बैठ जाने

वाला द्वापर युग में रहने वाला होता है। उठकर खड़े हो जाने वाले को त्रेतायुग की स्थिति में रहने वाला समझना चाहिए। किन्तु परब्रह्म को पाने के लिये जो प्रेम में दौड़ लगाने लगे, वह सत्युग की स्थिति में कहा जाता है।

इस कथन का निष्कर्ष यही है कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र तथा श्री प्राणनाथ जी के द्वारा दिये हुए अलौकिक तारतम ज्ञान का जो अनुसरण करके आचरण में लायेगा, वह माया की निद्रा छोड़कर जाग्रत हो जायेगा तथा प्रेम की दौड़ लगाकर अपने आराध्य परब्रह्म को प्राप्त कर लेगा। इसलिये इन दोनों स्वरूपों (श्री देवचन्द्र जी तथा श्री प्राणनाथ जी) को इस कलियुग में ही सत्युग की स्थापना करने वाला कहा गया है।

सोई वेद कतेब में, इनों की लिखी साख।

और उपनिषद भागवत में, लिखी बाणी कै भाख।।२१।।

वेद–कतेबों में इन्हीं दोनों स्वरूपों की साक्षी लिखी हुई है। उपनिषदों, श्रीमद्भागवत् तथा सन्तों की वाणी आदि में भी अनेक रूपों में यह बात दर्शायी गयी है।

भावार्थ– इस चौपाई में वेद का तात्पर्य हिन्दू धर्मग्रन्थों से है। ऐतरेय ब्राह्मण ऋग्वेद का व्याख्यान ग्रन्थ है, जिसमें चारों युगों की पहचान बतायी गयी है। उपनिषदों में धर्म एवं अध्यात्म के वास्तविक स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। पुराण संहिता में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सच्चिदानन्द परब्रह्म दो स्वरुपों में लीला करेंगे। पुराण संहिता ३१/५२–७० के १८ श्लोकों को मिलाने पर यह श्लोक निकलता है–

सुन्दरी चेन्दिरा नामाभ्यां चन्द्रसूर्ययोः।

मायान्धकार विनाशाय प्रतिबुद्धे भविष्यतः कलौयुगे।।

अर्थात् श्यामा जी एवं इन्द्रावती जी जो तन धारण करेंगी, उनमें एक का नाम चन्द्रमा (देवचन्द्र) तथा दूसरे का नाम सूर्य (मिहिरराज) के भाव वाला होगा। ये दोनों स्वरुप कलियुग में अज्ञान रूपी माया के अन्धकार का नाश करेंगे।

कबीर जी एवं गुरुनानक देव जी की वाणी आदि में भी इस प्रकार की साक्षियां दी गयी हैं। इसी प्रकार, कुरआन के २८वें पारे की व्याख्या में तफ्सीरे हुसैनी में श्यामा जी (रूहुल्लाहु) के द्वारा दो तनों में लीला करने का प्रसंग आया है।

जब को ये ब्रह्माण्ड, तब के एह वचन।

जनम से ले बीतक, जाके सुने पतीजे मन।।२२।।

जब से इस ब्रह्माण्ड की रचना हुई है, तभी से एक परब्रह्म की पहचान से सम्बन्धित तथ्य धर्मग्रन्थों में दिये गये हैं। सच्चिदानन्द परब्रह्म की वास्तविक पहचान देने के लिये प्रकट होने वाले इन दोनों स्वरुपों (सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी तथा श्री प्राणनाथ जी) की लीला को सुनने पर मन को अपार शान्ति मिलती है तथा धनी पर अटूट विश्वास होता है।

ताके ग्रन्थ भाषा मिने, आप अपने किये सब।

एक मिलाय खोल दीजिए, ए वस्त पावे तब।।२३।।

सभी मत-पन्थों के अपने-अपने धर्मग्रन्थ हैं तथा अपनी-अपनी भाषायें हैं, जिनमें उस परम सत्य की

पहचान संकेतों में दी गयी है। किन्तु जब तारतम ज्ञान की दृष्टि से देखते हैं, तो सभी ग्रन्थों में सांकेतिक रूप में वर्णित उस सच्चिदानन्द परब्रह्म की यथार्थ पहचान हो जाती है।

सोई सरत कुरान में, लिखी एक सौ बीस बरस।
चार पांच छठा दिन, तब जाहिर होवे अरस।।२४।।

कुरआन में भी यही बात दर्शायी गयी है कि जब चौथे, पांचवें एवं छठे दिन की लीला होगी तो उस समय जागनी का कार्यकाल १२० वर्षों तक चलेगा। ऐसी स्थिति में ही संसार को अखण्ड परमधाम तथा अक्षरातीत की पहचान होगी।

भावार्थ– कुरआन के दूसरे तथा तीसवें पारे की व्याख्या (तफ्सीरे हुसैनी) में १२० वर्ष तक रूहों

(आत्माओं) की जागनी की बात की गयी है। चौथे दिन का तात्पर्य है सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की लीला , पाँचवें दिन श्री प्राणनाथ जी की लीला, तथा छठे दिन ब्रह्मात्माओं से होने वाली लीला जिसमें महाराजा छत्रसाल जी के तन से होने वाली ७ वर्षों की आवेश लीला जुड़कर जागनी के १२० वर्ष (१६३८-१७५८) हो जाते हैं।

सब सृष्टि सेजदा करे, होवे जाहिर अखण्ड धाम।
जो याद नहीं अक्षर को, सो सुध सबों हुई तमाम।।२५।।

जागनी लीला में प्रकट होने वाले इन दोनों स्वरूपों के ऊपर सभी प्राणी नतमस्तक होंगे। इनके द्वारा अवतरित ब्रह्मवाणी से ही अखण्ड परमधाम का ज्ञान चारों ओर फैलेगा। अक्षर ब्रह्म को भी जिस अद्वैत लीला की पहचान

नहीं थी, उसका ज्ञान सामान्य जीवसृष्टि को भी हो जायेगा।

जो दृष्टि सुपन जीव की, नहीं लखी मिनें लगार।
सो दृष्टि अखण्ड सुख में, पहुंची नूर के पार।।२६।।

तारतम ज्ञान के अवतरित होने से पहले स्वप्न के जीवों को अखण्ड की जरा भी पहचान नहीं थी। उनकी दृष्टि वैकुण्ठ एवं निराकार से जरा भी आगे नहीं चल पाती थी। तारतम ज्ञान की छत्रछाया में उनकी दृष्टि बेहद को भी पार कर स्वलीला अद्वैत परमधाम के अखण्ड सुखों में विहार करने लगी।

ए सुध जो ले आये, रूह अल्ला चौथे आसमान।
तिन सेती प्रापत भई, त्रिगुण सृष्ट पहिचान।।२७।।

इस प्रकार का अलौकिक तारतम ज्ञान श्यामा जी परमधाम से लेकर आयी हैं। उसी तारतम ज्ञान से जीवसृष्टि को भी अक्षरातीत तथा परमधाम की वास्तविक पहचान हो सकी है, जो आज तक संसार में यथार्थ रूप से किसी को भी नहीं थी।

भावार्थ– कतेब परम्परा में चार प्रकार के आकाशों की मान्यता है– १. नासूत (पृथ्वी लोक), २. मलकूत (वैकुण्ठ लोक), ३. जबरूत (बेहद मण्डल), ४. लाहूत (परमधाम)। इस प्रकार यहाँ आकाश का तात्पर्य लोक विशेष से है, शून्य निराकार से नहीं।

तिन सरूप की बीतक, जनम से लेकर।

सो कहों आगे सैयनों, ए चरचा सब ऊपर।।२८।।

श्यामा जी के इस नश्वर जगत में प्रकट होने से लेकर

आगे का सम्पूर्ण वृतान्त मैं परमधाम की ब्रह्मात्माओं से कह रहा हूँ। उनकी इस चर्चा से श्रेष्ठ कार्य और कोई भी नहीं है।

जब भया बरस अग्यारमाँ, तब मन उपज्यो विचार।
मैं कौन कहां थे आइयो, कहाँ मेरो भरतार।।२९।।

जब श्री देवचन्द्र जी की आयु ११ वर्ष की हुई, तो उनके मन में यह विचार आया कि मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, और मेरी आत्मा का प्रियतम कौन है?

पूछत फिरे परदेस में, कहां है परमेस्वर।
जिन सबको पैदा किया, सो कहाँ है सब ऊपर।।३०।।

वे अपने गांव के अतिरिक्त आस-पास के अन्य गांवों के परिचित लोगों से यह पूछते रहते थे कि जिस

परमात्मा ने सारी सृष्टि को पैदा किया है और जिससे श्रेष्ठ अन्य कोई भी नहीं है, वह परमात्मा कहाँ है?

विशेष– श्री देवचन्द्र जी अपने गांव से अधिक दूर नहीं जा सकते थे, क्योंकि उनकी उम्र अभी छोटी थी। इसलिये आस–पास के गांवों को ही परदेश कहा गया है।

कोऊ कहे वह घट घट, है व्यापक संसार।
तब जान्या वह निकट, ए ही ग्रहों मैं सार।।३१।।

किसी ने उनसे कह दिया कि वह परमात्मा तो इस संसार के कण–कण में व्यापक हो रहा है। उसकी इस बात को सुनकर श्री देवचन्द्र जी ने अपने मन में सोचा कि जब वे मेरे इतने निकट हैं, तो मैं अवश्य ही उन्हें प्राप्त कर लूँगा। उन्होंने उसकी इस बात को बहुत ही प्राथमिकता दी और उसे आत्मसात् (ग्रहण) करने का

निश्चय किया।

एक देहुरा तहां रहे, तामें मूरत पिंगल स्याम।
आगे इहां बिराजते, दै प्रदक्षणा उस ठाम।।३२।।

श्री देवचन्द्र जी के गाँव के बाहर श्री कृष्ण जी (पिंगल श्याम) का एक छोटा सा मन्दिर था। श्री देवचन्द्र जी सवेरे-सवेरे वहाँ आ जाते और युगल स्वरूप की उस मूर्ति की परिक्रमा करते।

ले लोटा घर से चले, दन्त धावन के काज।
सुध आकार करके फिरें, आवे न मन में लाज।।३३।।

वे प्रातःकाल घर से लोटा लेकर चलते तथा शौचादि क्रियाओं से निवृत्त होकर दन्त धावन और स्नान करते। तत्पश्चात् परिक्रमा करते। ऐसा करने में उन्हें जरा भी

संकोच नहीं होता था।

नित्य इत प्रदक्षणा, देवें एक पोहोर।

फेर दण्डवत करके, मेहनत करें अति जोर।।३४।।

वे मूर्ति के सामने दण्डवत् प्रणाम करते हुए प्रतिदिन ३ घण्टे तक परिक्रमा करते थे। भक्ति के इस कार्य में वे बहुत अधिक परिश्रम करते थे।

उस देस में साध सन्त, आवत नाहीं कोइ।

जल कसनी देख के, काहू न आवन होइ।।३५।।

मारवाड़ का वह क्षेत्र शुष्क रेगिस्तानी था, इसलिये वहाँ जल की बहुत कमी थी। जल की इस कमी के कारण ही उस क्षेत्र में कोई भी साधु–महात्मा नहीं आता था।

एक बेर मत्तू मेहता संग, आए हते कच्छ देस।

तहां देहुरे साध बहुत, देखे बीच विदेस।।३६।।

व्यापार के सम्बन्ध में एक बार श्री देवचन्द्र जी को अपने पिताजी के साथ कच्छ जाने का अवसर मिला। वहाँ पर उन्होंने बहुत से साधु-महात्माओं तथा मन्दिरों को देखा।

बात तब की मन में रहे, मैं जाऊं कच्छ में।

तहां जाय के खोज करों, पाऊं परमेस्वर तिन से।।३७।।

कच्छ के धार्मिक वातावरण से आकर्षित होने पर उन्होंने अपने मन में यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि मैं किसी भी प्रकार से कच्छ अवश्य जाऊँगा और परमात्मा की खोज करूँगा। उनके मन में यह बात हमेशा बनी रहती थी कि मैं कच्छ जाकर परमात्मा का साक्षात्कार

करूँ।

घर में खटपट रहे, मन में रहे वैराग।
दुनी से वैर रहे, उन्हें देखे लगे आग।।३८।।

मन में वैराग्य की तीव्र अग्नि के प्रज्वलित होने के कारण परिवार के किसी भी सदस्य के प्रति उन्हें लगाव नहीं था। वे संसार के अन्य लोगों को न तो जरा भी देखना चाहते थे और न उनसे किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध ही रखना चाहते थे।

भावार्थ– खटपट रहने का भाव यहाँ विवाद बनाये रखना नहीं है, बल्कि स्नेह–आसक्ति से पूर्णतया रहित हो जाना है। उस का उग्र रूप वैर रखना है। आग लगना एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है– किसी को देखने की जरा भी इच्छा न होना, या सामने पड़ने पर किसी न

किसी माध्यम से घोर उपेक्षापूर्वक नजर बचाना। मन में ऐसी भावना रखना कि इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध न तो है और न होगा।

दै सिखापन बहुतक, कर कर थके सब कोय।
ए फिराए ज्यों फिरे, कहे समझावे सोय।।३९।।

श्री देवचन्द्र जी को तीव्र वैराग्य की राह पर चलते हुए देखकर सबने उन्हें समझाना चाहा, किन्तु सभी थक कर शान्त हो गये। उन्हें कोई भी उस पथ से विचलित नहीं कर सका। सगे-सम्बन्धियों के द्वारा समझाये जाने का एक ही उद्देश्य था कि किसी भी प्रकार से श्री देवचन्द्र जी वैराग्य के रास्ते को छोड़कर घर-गृहस्थी में मन लगायें।

श्री देवचन्द्र जी के मन में, जाऊं कहूं विदेस।

तहां जाय के खोज करों, कोई मोहे दे उपदेस।।४०।।

किन्तु श्री देवचन्द्र जी के मन को एक ही बात उद्वेलित (व्याकुल) किया करती थी कि मैं उमरकोट छोड़कर कहीं और जाऊँ तथा किसी परम ज्ञानी की खोज करूँ। उनसे उपदेश ग्रहण करके मैं अपने आराध्य को प्रत्यक्ष प्राप्त करूँ।

पूछत फिरे सब ठौरों, कोई मुझे बतावे राह।

या समय राजा उमरकोट का, ताको बजीर जाय ताह।।४१।।

वे हर जगह घूम-घूम कर सबसे यही पूछा करते थे कि मुझे परमात्मा को पाने की राह बतायें। अचानक इसी समय उनको पता चला कि उमरकोट के राजकुमार का विवाह कच्छ में होने जा रहा है, जिससे मन्त्री को भी

कच्छ जाना होगा।

खांड़ा विवाहने को, जाता था कच्छ में।

दो सै असवार एक बहल, उतावले पहुंचने।।४२।।

राजकुमार की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए विवाह के लिये मन्त्री को राजकुमार की तलवार लेकर कच्छ जाना था। कच्छ तक की यात्रा को शीघ्र पूरी करने के लिये उनके पास दो सौ सवार तथा एक रथ था।

भावार्थ– इस चौपाई में यह बात कही गयी है कि उस बारात में दो सौ सवार थे, किन्तु इसी प्रकरण की चौपाई ९१ में वजीर के द्वारा यह पूछा गया कि दो ऊँटों पर कितने लोग सवार हैं? इससे यह स्पष्ट होता है कि १९६ घोड़ों पर १९६ सवार तथा २ ऊँटों पर चार व्यक्ति बैठे थे। सम्भवतः रथ पर राजकुमार की तलवार रखी होगी

और उस पर मन्त्री बैठ सकता है, किन्तु उसमें कितने ऊँट या घोड़े जुते थे, यह स्पष्ट नहीं है। यदि यह कहा जाय कि २०० घोड़े थे, तो बारातियों (सवारों) की संख्या में ४ बाराती बढ़ सकते हैं।

श्री देवचन्द्र जी ने सुनी, गए पूछने तिन से।
तिन बजीर ने बातें करी, हम कच्छ जायेंगे।।४३।।

जब श्री देवचन्द्र जी ने कच्छ में राजकुमार की बारात जाने की बात सुनी, तो वे इस सम्बन्ध में बात करने के लिये राजमहल गये। मन्त्री ने बताया कि वे बारात के साथ कच्छ जायेंगे।

तब पूछा उन्होंने, क्या असवारी तुम्हारे।
हम संग क्यों पहुंचोगे, प्यादे असवारों के।।४४।।

तब मन्त्री ने पूछा कि तुम्हारे पास जाने का क्या साधन है? यदि तुम पैदल चलना चाहते हो तो हम घुड़सवारों के साथ वहां तक कैसे चल सकोगे?

तब कह्या श्री देवचन्द्र जी, हम चले आवेंगे।
तब उनने बरजे, जिन आओ संग हमारे।।४५।।

इस बात पर श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि आप मेरी सवारी की चिन्ता न करें। मैं पैदल ही वहाँ तक जा सकता हूँ। मन्त्री ने यह बात सुनकर देवचन्द्र जी को मना कर दिया कि तुम हमारे साथ न चलो।

तब श्री देवचन्द्र जी विचारिया, मैं काहे पूछों इन्हें।
पीछे चला जाऊंगा, अपने पांवों से।।४६।।

श्री देवचन्द्र जी ने अपने मन में सोचा कि जब ये साथ

में नहीं ले जाना चाहते तो मैं इनसे बार–बार क्यों आग्रह करूँ? जिस मार्ग से ये जायेंगे, उसी मार्ग से मैं पीछे–पीछे अपने पैरों से चला जाऊँगा।

घरों जाय के साज को, राह की लेने लगे।
थारी कटोरा लोहंडा, और लोटा जल के।।४७।।

अपने घर जाकर उन्होंने गुप्त रूप से जाने की तैयारी की। मार्ग में जिन–जिन वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती थी, उसका उन्होंने संग्रह कर लिया, जैसे– थाली, कटोरा, रोटी पकाने के लिये तवा, और जल रखने के लिये लोटा।

एक नीमचा कमर को, और कपड़े पहनन के।
बकुचा बांध तैयार भये, खरची बांधी तिन में।।४८।।

उन्होंने पहनने के कुछ कपड़े तथा थोड़ी सी भोज्य सामग्री रखकर एक छोटी सी गठरी तैयार कर ली। कमर में एक कटारनुमा तलवार भी छिपाकर रख ली।

ले प्रसाद पौढ़ रहे, पीछला दिन रह्या घड़ी चार।
वे साथ असवार भये, ए करने लगे विचार।।४९।।

दोपहर के भोजन के पश्चात् वे शयन कक्ष में आराम करने लगे (लेट गये)। जब तक वे उठते, तब तक सन्ध्या समय के साढ़े चार बज चुके थे और मन्त्री के साथ राजकुमार की बारात अपनी सवारियों पर जा चुकी थी।

कमर बांधते बांधते, कछू ढील हो गई इत।
वे असवार चले गये, ए पीछे चले जाये तित।।५०।।

चलने की तैयारी करते–करते उन्हें कुछ देर सी हो गयी। घोड़ों पर सवार बाराती तो जा चुके थे, फिर भी श्री देवचन्द्र जी ने धैर्य नहीं खोया और अनुमान से पीछे–पीछे चल पड़े।

भावार्थ– "कमर बांधना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है तैयार हो जाना। श्री देवचन्द्र जी का तो सारा सामान बंधा पड़ा था, किन्तु माता–पिता से दृष्टि बचाकर निकलना था। देर होने का मुख्य कारण यही था।

चले अति उतावले, मन में पहुंचैं धाय।

वे असवार ये प्यादे, क्यों कर पहुंच्यो जाय।।५१।।

कच्छ पहुँचने की चाहत में श्री देवचन्द्र जी बहुत ही उतावले होकर चले। मन में एक ही इच्छा थी कि मैं

जल्दी से जल्दी कच्छ पहुँच जाऊँ, किन्तु वे पैदल थे। भला घुड़सवारों के पीछे कहाँ तक साथ-साथ चल सकते थे?

यों करते चले गये, बीच पड़ी आए रात।
ए मुलक रेतीय का, ए किन सों करें बात।।५२।।

मन में शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने की भावना थी, इसलिये वे बहुत तेज गति से चल रहे थे। अचानक मार्ग में ही रात हो गयी। वे कुछ घबरा से गये और सोचने लगे कि इस वीरान मरुस्थल में मैं अकेले फँस गया हूँ। यहाँ पर मैं किससे बात करूँ?

तहां चली राह न पाइये, भय चोरन का जोर।
एक दोय निबाह न सकें, है इन भांत का ठौर।।५३।।

वे सोच रहे थे– यह तो ऐसा रेगिस्तान है, जिसमें रास्ता भूल जाने पर पुनः खोज पाना बहुत कठिन होता है। चोर–डाकुओं का भय भी बहुत होता है। ऐसी अंधेरी रात में तो एक–दो आदमी चल ही नहीं सकते।

एक ढेर वाउ उठाए, खड़ा करे तरफ और।
फेर तहां वाउ लगे, ढेर लगे और ठौर।।५४।।

तेज बहती हुई हवा बालू के टीलों को उड़ाकर दूसरी जगह जमा कर देती है। पुनः वहाँ से भी उठाकर कहीं और इकट्ठा कर देती है। ऐसे स्थिति में रात के घने अन्धेरे में सही मार्ग पर चल पाना बहुत ही कठिन होता है।

वय बालक मन दहसत, पेट में उठा दरद।

ना जाने आगे पीछे, हैं कौन जागा सरहद।।५५।।

श्री देवचन्द्र जी की अभी बाल्यावस्था ही है। वे मात्र १६ वर्ष के हैं। दौड़ते-दौड़ते उनके पेट में दर्द भी होने लगा है। रात्रि की भयानकता से मन में कुछ डर भी बैठ गया है। आगे-पीछे कुछ भी दिखायी नहीं पड़ रहा है। आखिर जाएँ तो कहाँ जाएँ? यह भी पता नहीं चल पा रहा है कि मैं किस स्थान पर हूँ और इस स्थान की सीमा कहाँ तक है?

यों करते चले जाते, एक सख्स दिया दीदार।

तब बड़ी दहसत भई, ऐसो आयो विचार।।५६।।

ऐसा सोचते हुए वे चले जा रहे थे कि एक व्यक्ति ने उन्हें दर्शन दिया। उसे देखते ही वे भय की अधिकता से

काँपने लगे और अपने मन में सोचने लगे।

ए चोर मोको मारेगा, नहीं बचने का ठौर।

मेरा कछु न चले हे, मुझ गई दिस और।।५७।।

लगता है यह चोर मुझे मार डालेगा। अब तो मेरे बचने का कोई उपाय ही नहीं दिख रहा है। मेरा अब कुछ भी वश नहीं चल रहा है। मेरी तो बुद्धि ही कुण्ठित हो गयी है। मेरी समझ में अब नहीं आ रहा है कि मैं क्या करूँ?

भावार्थ– बुद्धि का कहीं और चला जाना मुहाविरा है जिसका अभिप्राय होता है, बुद्धि का निष्क्रिय (कुण्ठित) हो जाना।

इतने में आए गया, होए गई मुलाकात।

देखत ही दहसत भई, वह कहने लगा–बात।।५८।।

श्री देवचन्द्र जी अभी अपने मन में ऐसा सोच ही रहे थे कि इतने में ही अचानक वह व्यक्ति सामने आकर खड़ा हो गया। दोनों की आमने-सामने भेंट हो गयी। उसे देखते ही देवचन्द्र जी के मन में भय समा गया। सामने वाला वह व्यक्ति देवचन्द्र जी से कुछ कहने लगा।

ए भेष सिपाही का, कमर कटारी तरवार।
मोंह दाढ़ी हाथ बरछी, ऐसो भेष ल्यावन हार।।५९।।

सामने वाला व्यक्ति सिपाही की वेश-भूषा में था। उसकी कमर में कटारी तथा तलवार लटक रही थी। उसके मुख पर घनी दाढ़ी और हाथ में भयानक बरछी थी। उस व्यक्ति का ऐसा विचित्र भेष था।

मुख से आये वचन, कहे छोड़ो कमर तरवार।

मुंह मूंदा दहसत से, कछू न आयो विचार।।६०।।

अचानक उस व्यक्ति ने बोलना प्रारम्भ किया– "ए बालक! अपनी कमर में छिपायी हुई तलवार मुझे दे दो।" यह सुनते ही श्री देवचन्द्र जी भय के मारे कुछ भी बोल न सके। उनके मस्तिष्क ने सोचना भी बन्द कर दिया।

तुरत तरवार छोड़ के, दई हाथ में श्री राज।

कहा छोड़ तू गाठड़ी, ए बातें देखी इन काज।।६१।।

श्री देवचन्द्र जी ने सिपाही के कहने पर तुरन्त ही अपनी तलवार कमर से निकालकर उसे सौंप दी। इसके बाद सिपाही ने कहा कि अपनी गठरी भी मुझे दे दो। इस लीला में आश्चर्यचकित करने वाली इस प्रकार की घटनायें (बातें) देखी गयीं।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कहा गया है कि "दई हाथ में श्री राज" अर्थात् श्री देवचन्द्र जी ने श्री राज जी को तलवार दी। इससे यह सिद्ध होता है कि सिपाही के वेश में स्वयं श्री राज जी ही थे। प्र.७ चौ.५ में कहा गया है कि "तहां से आए कच्छ देस में, बीच महम्मदें दिया दीदार" के बाह्य अर्थ से प्रायः यह भ्रान्ति फैल गयी है कि बारात के पीछे जाते समय श्री देवचन्द्र जी को सिपाही के वेश में हुक्म के स्वरूप मुहम्मद साहिब ने दर्शन दिया था। किन्तु इसका आशय यह है कि श्री राज जी ने ही मुहम्मद साहिब जैसा वेश धारण कर उन्हें दर्शन दिया था। इसलिये "दई हाथ में श्री राज" लिखा है।

प्रकास हिन्दुस्तानी की प्रकटवाणी में भी स्पष्ट लिखा है कि "पिया किये अति प्रसन, तीन बेर दिए दरसन" से भी यही प्रमाणित होता है। दूसरा दर्शन चितवनि में होगा,

जब वे धाम धनी को बाल कृष्ण के रूप में और स्वयं को राधा जी के रूप में देखेंगे। तीसरी बार धाम धनी श्याम जी के मन्दिर में परमधाम के पूर्ण श्रृंगार में दर्शन देंगे।

सिपाही के रूप में स्वयं श्री राज जी ही श्री देवचन्द्र जी के सामने हैं, लेकिन वे पहचान नहीं पा रहे हैं। इसलिये इस चौपाई के चौथे चरण में कहा गया है- "ए बातें देखी इन काज।"

तब जान्या मुझे मारेगा, उनने कहे सुकन।
बिछाय पिछौड़ी सुवाये, तब कांपने लगा मन।।६२।।

गठरी मांगने की बात सुनकर देवचन्द्र जी यह समझे कि लगता है, अब यह मुझे निश्चित रूप से मार डालेगा। जब सिपाही ने अपनी पिछौरी बिछा दी और उस पर श्री देवचन्द्र जी को सोने के लिये कहा, तब वे भय से काँपने

लगे कि अब तो मुझे मरना ही पड़ेगा।

बरछी हाथ पकड़ के, एक साथल पर दे पाय।
बोझ दिया सरीर का, फेर यों पूछी जाय।।६३।।

सिपाही ने अपने एक हाथ से बरछी को पकड़े रखा तथा उसके सहारे खड़े-खड़े उसने अपना एक पांव श्री देवचन्द्र जी की जांघ के मूल में रखकर दबाया तथा अपने शरीर का हल्का सा बोझ डाला। पुनः अपनत्व भरे शब्दों में पूछा कि अब कितना दर्द है?

दरद भया कछू हलका, सूल पेट का था जोर।
श्री देवचन्द्र जी उत्तर दिया, कछू रह्या और ठौर।।६४।।

उनके पेट में बहुत जोर से दर्द हो रहा था, किन्तु सिपाही रूपधारी श्री राज जी के द्वारा दबाने से बहुत

कुछ दूर हो गया। श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि इधर की ओर कुछ दर्द हो रहा है।

फेर दूसरी जांघ मूल में, दे पांव खड़े रहे।
बोझ दिया सरीर का, इन सरीर पर दे।।६५।।

पुनः दूसरी जांघ के मूल में सिपाही ने खड़े-खड़े ही अपने पैर से दबाया। उन्होंने अपने शरीर का बोझ श्री देवचन्द्र जी के शरीर पर डाला।

फेर पूछा क्या खबर, सूल मिटा आकार।
तब उठ खड़े भये श्री देवचन्द्र जी, ऐसा किया विचार।।६६।।

और पुनः पूछा कि अब कैसी स्थिति है? तुम्हारे शरीर का दर्द मिटा या नहीं? उनके इस प्रकार कहते ही श्री देवचन्द्र जी पूर्णतया स्वस्थ होकर इस प्रकार उठकर बैठ

गये, जैसा कि पहले कुछ हुआ ही नहीं था। देवचन्द्र जी ने अपने मन में सोचा कि यह कैसा व्यक्ति है , जिसने इतनी सरलता से मेरे दर्द को दूर कर दिया?

पिछौड़ी कमर बंधाइ के, बोझ बांधा अपनी पीठ पर।
तब जान्या श्री देवचन्द्र जी, ए मारे नहीं क्योंए कर।।६७।।

श्री राज जी ने अपनी पिछोरी श्री देवचन्द्र जी की कमर में बांध दी तथा उनकी गठरी को अपनी पीठ पर लाद लिया। अब श्री देवचन्द्र जी को यह पूर्ण विश्वास हो गया कि यह व्यक्ति चाहे कितना भी कठोर क्यों न लगे, किन्तु मुझे मारेगा तो नहीं।

विशेष– पीठ पर ओढ़े जाने वाले वस्त्र को पिछोरी कहते हैं।

बन्दीखानें रख के, करेगा गुलाम।

मारने से तो बचाया, अब क्या करावे काम।।६८।।

ऐसा लगता है कि यह मुझे अपने कारागार में डालकर अपना दास बनायेगा और सेवा करवायेगा। परमात्मा ने इसके हाथ से मरने से तो मुझे बचा लिया है। अब मैं देखता हूँ कि यह मुझसे कौन सा काम करवाता है?

मिल दोऊ इहां से चले, राह में अत जोर।

लगे बात लौकिक पूछने, कहो कौन तुमारो ठौर।।६९।।

अब यहाँ से दोनों मिलकर मार्ग में तेज कदमों से चलने लगते हैं। अपनी तरफ से उनका ध्यान हटाये रखने के लिये श्री राज जी ने उनसे सांसारिक बातें पूछनी शुरू कर दीं कि बताओ तुम कौन हो और कहाँ के रहने वाले हो?

नाम माता को पूछत, और कुटुम्ब परिवार।

ताको उत्तर देत हैं, चले जाये तिन लार।।७०।।

उन्होंने श्री देवचन्द्र जी से उनके माता–पिता का नाम तथा परिवार का अन्य परिचय भी पूछा। श्री देवचन्द्र जी उनकी बातों में उलझ जाते हैं तथा उनके प्रश्नों का उत्तर देते हुए साथ–साथ चलते रहते हैं।

देवचन्द्र उत्तर दियो, रहें उमरकोट गाम।

मत्तू मेहता जो पिता, करें सौदागरी का काम।।७१।।

श्री देवचन्द्र जी कहते हैं कि मेरे पिता का नाम श्री मत्तू मेहता है। वे मारवाड़ के उमरकोट नामक गांव में रहते हैं और व्यापार का व्यवसाय करते हैं।

फेर खबर देस की, पूछने लगे सुकन।

कौन राजा तुम देस को, कैसो ताको चलन।।७२।।

पुनः श्री राज जी ने बातों-बातों में उनके मारवाड़ देश का समाचार भी पूछा कि वहाँ का राजा कौन है तथा उसका अपनी प्रजा के प्रति कैसा व्यवहार रहता है?

कौन वजीर ताके रहे, क्योंकर चलत बेहेवार।

कै ऐसी बातें लौकिक, एही पूछे विचार।।७३।।

राजा का मन्त्री कौन है तथा राजा के प्रति उसका क्या सम्बन्ध है? इस प्रकार की अनेकों सांसारिक बातें श्री राज जी पूछते रहे और श्री देवचन्द्र जी से उनके विचार लेते रहे।

यों करते पूछत चले, पन्थ करते जाय।

रात रही थोड़ी बाकी, साथ को पहुंचे धाय।।७४।।

इस तरह से सिपाही वेश में श्री राज जी उनसे पूछते जाते तथा रास्ते में चलते भी जाते। जब थोड़ी सी रात बाकी रह गयी, तो वे अपने बाराती साथियों के निकट पहुँच गये।

भावार्थ– धाम धनी की कृपा से इतने लम्बे मार्ग की यात्रा सुखमय रही तथा बातों–बातों में थोड़ी ही देर में वे कच्छ जा पहुँचे।

उस जागा खड़े रहे, पिछौड़ी छुड़ाई कमर से।

अपनी पीठ पर गांठड़ी, सो दई श्री देवचन्द्र जी को इन समें।।७५।।

बारातियों से कुछ दूरी पर खड़े होकर सिपाही वेश में विराजमान श्री राज जी ने श्री देवचन्द्र जी की कमर में

बंधी हुई अपनी पिछोरी वापस ले ली तथा अपनी पीठ पर रखी हुई उनकी गठरी उनको वापस कर दी।

दई तरवार छोड़ के, देख ए तेरो साथ।

पीछे फिर के देखहीं, मेरा किनने पकड़ा था हाथ।।७६।।

श्री राज जी ने श्री देवचन्द्र जी को उनकी तलवार भी वापस लौटा दी और बारात वालों की ओर संकेत करते हुए कहा कि इन लोगों को पहचान लो कि ये लोग बारात वाले ही हैं या अन्य कोई हैं? श्री देवचन्द्र ने एक पल के लिये जैसे ही उधर नजर की, श्री राज जी अन्तर्धान हो गये। जब श्री देवचन्द्र जी ने अपने पास श्री राज जी को नहीं देखा, तो वे दुःखी होकर सोचने लगे कि मुझे यहाँ तक पहुँचाने वाला कौन था?

भावार्थ– "हाथ पकड़ना" एक मुहाविरा है, जिसका

अभिप्राय होता है– आत्मसात् या ग्रहण करना, अपनाना, स्वीकार करना। धाम धनी ने अपनी कृपा की छाँव तले श्री देवचन्द्र जी को गन्तव्य स्थान तक पहुँचा दिया। इसे ही हाथ पकड़ना कहा गया है। इस प्रकार की लीला के द्वारा श्री राज जी ने उन्हें यह अनुभव करा दिया कि मैं उनसे एक पल भी दूर नहीं हूँ, आवश्यकता है केवल माया का पर्दा हटाने की।

उहां तो कछु न देखहीं, कौन कहां गयो एह।
ए तहकीक मेरा खावन्द, कियो विलाप याद कर तेह।।७७।।

श्री देवचन्द्र जी को अपने पास कोई भी दिखायी नहीं दिया। उन्होंने अपने मन में विचार किया कि मुझे रेगिस्तान से पार कराकर यहाँ तक लाने वाले कौन थे और अब यहाँ छोड़कर कहाँ चले गये? निश्चित रूप से वे

मेरी आत्मा के वही प्रियतम थे, जिनकी खोज में मैं निकला हूँ। अब वे उनकी याद में विलाप करने लगे।

फेर के एता विचारिया, मेरे ए तो हैं सिर पर।
जहां कहूं मैं डार हों, ए छोड़े नहीं क्यों कर।।७८।।

उन्होंने पुनः सोचा कि मेरे प्रियतम परब्रह्म तो मेरे सिर पर पल-पल विराजमान हैं। भले ही मैं माया में उनसे दूर हो जाऊँ, किन्तु वे मुझे किसी भी स्थिति में छोड़ नहीं सकते।

ए तो तहकीक हुआ, धनी हैं मेरे हाजर।
भले अब कहां जायेंगे, खोज लेऊँ इन पर।।७९।।

अब तो मैं पूर्ण रूप से निश्चिंत हो गया हूँ कि मेरे प्रियतम परब्रह्म पल-पल मेरे साथ ही हैं। अब मैं उनकी

खोज अवश्य कर लूँगा। भला अब मुझसे अदृश्य रहकर वे कब तक दूर रहेंगे?

तब सनमुख चले साथ को, आवत रोके तिन।
कौन है कहां आवत, नाम श्री देवचन्द्र लिया इन।।८०।।

तब वे अपने सामने थोड़ी दूर पर स्थित बारातियों की ओर चल पड़े। पहरे पर खड़े लोगों ने उन्हें रोक दिया। उन्होंने परिचय के लिये पूछा कि आप कौन हैं तथा हमारे बीच इस हल्के अंधेरे में कैसे आ गये? श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि मैं भी उमरकोट गांव का ही रहने वाला हूँ तथा मेरा नाम देवचन्द्र है।

भावार्थ– यदि ऐसा संशय करें कि जब उमरकोट से ही बारात जा रही थी, तो उन्होंने देवचन्द्र जी से उनका परिचय क्यों पूछा? क्या वे उनको पहचानते नहीं थे?

इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि वैवाहिक कार्यक्रमों में बाहर के सगे –सम्बन्धी भी आते हैं। सम्भवतः पहरे पर वे ही हों और श्री देवचन्द्र जी को पहचान न पाये हों। डकैतों के डर से सुरक्षा व्यवस्था का कठोर होना स्वाभाविक ही है।

तब ले चले सिरदार पे, उनने पूछे सुकन।
तुम क्यों आये हमको मिले, बड़ो अचरज भयो मन।।८१।।

पहरेदार उन्हें मन्त्री के पास ले गये। मन्त्री श्री देवचन्द्र जी को देखकर बहुत ही आश्चर्य में पड़ गया। उसने पूछा कि तुम यहाँ किस प्रकार आये हो?

क्योंकर राह पाई तुम, क्यों पहुंचे असवारों संग।
तब जवाब श्री देवचन्द्र जी दिया, आए चले जैसे वंग।।८२।।

हमारे पास तो ऊँट और घोड़े हैं, जबकि तुम मात्र पैदल ही हो। मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि तुमने किस प्रकार हमारी बराबरी की है और इतना लम्बा मार्ग तय कर लिया है? तब श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि जैसे हवा बहती है, उसी प्रकार हम भी परमात्मा की कृपा से आ गये।

भावार्थ– इस चौपाई में यह विशेष शिक्षा दी गयी है कि अपनी आध्यात्मिक उपलब्धियों का ढिंढोरा नहीं पीटना चाहिए, बल्कि उसे वैसे ही गोपनीय रखना चाहिए जैसे कि श्री देवचन्द्र जी ने किया। उन्होंने मन्त्री को कुछ भी नहीं बताया कि मुझे साक्षात् परमात्मा ने ही दर्शन देकर यहाँ तक पहुँचाया है।

तुमारे पीछे चले आये, कदमों पर धरे कदम।

पांव अपने बल से, चले मार्ग आये हम।।८३।।

आप लोग जिस-जिस मार्ग से आये, उस-उस मार्ग से आपका अनुसरण करते हुए आपके पीछे-पीछे मैं आ गया। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। आपके ही मार्ग से मैं पैदल चलकर यहां तक आ गया हूँ।

सबों बड़ो अचरज पाइ के, कही खोलो कमर।

वे पुन डेरा डाण्डी पछाड़ी, कोई था आग जलावने पर।।८४।।

यद्यपि श्री देवचन्द्र जी की बातों पर सबको विश्वास नहीं हो पा रहा था कि कैसे कोई पैदल, बिना थके, यहां तक आ सकता है? वे गहन आश्चर्य में डूबे रहे। उन्होंने श्री देवचन्द्र जी को अपना सामान रखकर आराम करने के लिये कहा। उनमें से कुछ लोग ठहरने के लिये तम्बू

आदि की व्यवस्था करने लगे थे, तो कुछ लोग भोजन बनाने के लिये आग जलाने लगे थे।

भावार्थ– "कमर खोलना" एक मुहाविरा है, जिसका आशय है, अपना सामान रखकर आराम करना। यह कमर बांधने का विलोम है।

तब उन कायस्थ सिरदार ने, रसोई का किया आदर।
चाहो तो सीधा लेवो, या आओ रसोई पर।।८५।।

उमरकोट के राजा का मन्त्री भी कायस्थ ही था। उसने श्री देवचन्द्र जी से आदरपूर्वक भोजन करने के लिये आग्रह किया। उसने कहा कि या तो तुम हम से भोजन बनाने के लिये सभी भोज्य सामग्री ले लो, या हमारे साथ बैठकर भोजन करो।

तब श्री देवचन्द्र जी ने, यों कर दिया जवाब।

मैं अपने हाथों करत हों, कह्या कायस्थ तिन के बाब।।८६।।

कायस्थ मन्त्री के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि मैं केवल अपने ही हाथों से बनाया हुआ भोजन करता हूँ। इसलिये मैं आपके यहाँ का बना हुआ भोजन करने में असमर्थ हूँ।

तो हमारे भंडार से, सीधा लेवो तुम।

तब श्री देवचन्द्र जी ने कहा, घर से सीधा ल्याए हम।।८७।।

मन्त्री ने कहा कि यदि ऐसी बात है तो हमारे भण्डार से आटा आदि लेकर भोजन बना लो। यह सुनकर श्री देवचन्द्र जी ने कहा कि मैं घर से आटा आदि सब कुछ लेकर ही आया हूँ।

तब कायस्थ दुख पाए के, कही हमारी नहीं ए रवेस।
हमारी न्यात का ले हम पे, हो तुम हमारे खेस।।८८।।

उनकी इस बात से मन्त्री ने दुःखी होकर कहा कि हमारे समाज में इस प्रकार की परम्परा नहीं है कि कोई अपनी ही बिरादरी–जाति के किसी व्यक्ति का दिया हुआ न खाये। देवचन्द्र जी! तुम तो मेरी ही जाति के हो। ऐसी स्थिति में तुम्हें मेरा दिया हुआ लेने में क्या आपत्ति है?

तब सीधा तिनका लिया, करी रसोई तब।
जा सरूप को दर्शन पायो थे, ताको रसोई अरुगायी सब।।८९।।

तब उनका भाव रखने के लिये श्री देवचन्द्र जी ने उनसे आटा आदि लेकर भोजन बनाया। मार्ग में आते समय उन्होंने सिपाही वेश में अपने आराध्य के जिस स्वरूप को देखा था, अति प्रेम से उन्हें ही भोग लगाया।

प्रसाद लेके पौढ़ रहे, फेर के उठे जब।

उठके गैल चलन को, हुए तैयार सब।।९०।।

इसके पश्चात् उन्होंने भोजन किया और लेटकर आराम करने लगे। कुछ देर के बाद वे उठ गये। जब सब लोग वहाँ से चलने लगे, तब श्री देवचन्द्र जी भी इनके साथ चलने के लिये तैयार हो गये।

तब उन कायस्थ ने, कह्या अपने लोगों को।

दोय ऊंट पर असवार, केते सामिल हो उन मो।।९१।।

उस मन्त्री ने अपने लोगों से पूछा कि हमारे पास जो दो ऊँट हैं, उन पर कुल कितने लोग सवार हैं?

तब उनने उत्तर दिया, हम हैं जने चार।

तब कह्या पांचमा एह तुम, सामिल करो असवार।।९२।।

उन लोगों ने उत्तर दिया कि हम कुल चार आदमी हैं। तब मन्त्री ने कहा कि देवचन्द्र जी को पाँचवें व्यक्ति के रूप में ऊँट पर सवार करा लो।

इन भांत श्री देवचन्द्र जी, आये पहुंचे कच्छ मों।

गये लोक अपने ठौर, आप लगे खोज को।।९३।।

इस प्रकार श्री देवचन्द्र जी कच्छ में आ जाते हैं। मन्त्री के साथ आये हुए बाराती लोग तो अपने लौकिक काम में लग गये और श्री देवचन्द्र जी अपने प्राणेश्वर की खोज में लग गये।

महामति कहें ए साथ जी, एह श्री देवचन्द्र जी की बीतक।

आगे खोज करेंगे, सो बातें बुजरक।।९४।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! श्री देवचन्द्र जी के तन से होने वाली प्रारम्भिक लीला का यह वृत्तान्त है। यहां कच्छ में आकर वे जिस प्रकार धनी की खोज करते हैं, वे बातें बड़ी ही महान गरिमा वाली हैं।

प्रकरण ।।२।। चौपाई ।।१२२।।

बीतक कच्छ देश की

इस प्रकरण में यह दर्शाया गया है कि श्री देवचन्द्र जी ने किस प्रकार से कष्ट सह–सहकर प्रियतम परब्रह्म की खोज की।

अब कहो कच्छ देस की, पहुंचे आप आये जित।
तहां आये खोज करी, सो बताऊं इत।।१।।

अब मैं उस कच्छ प्रान्त का प्रसंग कहता हूँ, जहाँ श्री देवचन्द्र जी आये। अपने प्राण प्रियतम को पाने के लिये उन्होंने जिन–जिन पन्थों में जाकर खोज की, उसका पूर्ण विवरण अब मैं कह रहा हूँ।

भावार्थ– आज से लगभग ७०० वर्ष पहले सम्पूर्ण देश छोटे–छोटे राज्यों में बंटा था। राष्ट्रीयता की भावना के कम होने से प्रत्येक राज्य का निवासी अपने राज्य को

देश कहकर ही सम्बोधित करता था। परिणाम स्वरूप अपने राज्य को ही देश कहने की परम्परा चल गई। इसी आधार पर बीतक में भी छोटे-छोटे राज्यों को देश कहा गया है, जैसे- हलार देश, कच्छ देश, मारवाड़ देश, आदि। किन्तु वास्तविकता तो यह है कि देश मात्र एक है- वह है भारतवर्ष या आर्यावर्त।

लगे खोज करने, बैठे देहुरे जाय।

चरचा को उत पूछत, वे प्रतिमा को ठहराय।।२।।

कच्छ पहुँचकर परम तत्व (परमात्मा) की खोज में वे जगह-जगह जाते हैं। एक मन्दिर में जाकर वे पुजारी जी से जब कथा-चर्चा के सम्बन्ध में पूछते हैं तो उनका उत्तर होता है कि यहाँ मूर्ति के रूप में साक्षात् परमात्मा ही विराजमान है। भला कथा-चर्चा की क्या

आवश्यकता?

भावार्थ– मूर्ति–पूजा की जड़ता ने हिन्दू समाज को बुरी तरह जकड़ लिया है। यह ऐसी खाई है, जिसमें गिरने वाला बहुत ही कठिनाई से निकल पाता है। समस्त समाज को ज्ञान, भक्ति और वैराग्य से रहित कर आडम्बरों की प्रभुता स्थापित कराने का मूल श्रेय जड़–पूजा को ही है।

तहां मन माने नहीं, राह न आवे नजर।
कोइक दिन रहे तिन में, फेर उठे खोज ऊपर।।३।।

ज्ञान चर्चा से पूर्णतया रहित, मन्दिरों में होने वाले पूजा–पाठ के कोलाहलपूर्ण कर्मकाण्डों के बीच उनका मन नहीं लगा, किन्तु उन्हें कोई मार्ग भी नहीं सूझ रहा था कि परब्रह्म को पाने के लिये वे क्या करें? कुछ दिन

तक उन्होंने अपना समय तो काटा, किन्तु उन्हें सन्तोष नहीं हुआ और वे पुनः खोज करने के लिये निकल पड़े।

आये खोजे सन्यासी, बड़े डिंभ धारी।
आम पूजे तिन को, आवे खलक सारी।।४।।

वे दत्तात्रेय मत के अनुयायी सन्यासियों के बीच में आकर खोज करने लगे। इन सन्यासियों को अपनी वेश-भूषा तथा वैराग्य भावना का बहुत अभिमान था। उनके चमत्कारों से प्रभावित होकर वहां की सारी जनता उनके चरणों में नतमस्तक थी।

तहां जाय के खोजिया, कहें जानत हैं सब हम।
देवें नाम सुमरन, नेहेचे कर ग्रहो तुम।।५।।

उनके बीच जाकर वे परम सत्य की खोज करने लगे।

उन सन्यासियों ने उन्हें पूर्ण रूप से आश्वस्त किया कि हम तुम्हें अवश्य ही परमात्मा का साक्षात्कार करवा देंगे। हम तुम्हें परमात्मा के नाम का स्मरण करने का ढंग बतायेंगे। तुम दृढ़तापूर्वक हमारे मार्ग का अनुसरण करो।

भावार्थ– "नाम स्मरण" ग्रहण करने का तात्पर्य मन्त्र दीक्षा तथा ध्यान की पद्धति के ग्रहण करने से है। दीक्षा की प्रक्रिया को ही बोलचाल की भाषा में "नाम लेना" कहते हैं।

और चरचा करें दत्त की, लिया नाम सुमरन।
दिल में कछु न आवहीं, क्योंए न पतीजे मन।।६।।

वे महर्षि दत्तात्रेय के द्वारा दर्शाये गये ध्यान मार्ग की चर्चा किया करते थे। श्री देवचन्द्र जी ने उनसे दीक्षा ले ली और कुछ मास तक उनके पास रहकर उनकी बतायी

पद्धति से साधना करते रहे, किन्तु उनके हृदय को न तो शान्ति मिली और न मन को सन्तोष हो सका।

कोइक दिन तहाँ रहे, फेर चले जागा और।
बड़े डिंभ कन फटे, चले गये तिन ठौर।।७।।

श्री देवचन्द्र जी कुछ दिनों तक दत्तात्रेय मत के सन्यासियों के बीच में रहकर ज्ञान की खोज में अन्यत्र (दूसरी जगह) चल दिये। इस बार वे नाथ पन्थ के कनफटे योगियों के बीच में पहुँचे, जो अपनी सिद्धियों तथा सन्यास पद का बहुत ही अभिमान रखने वाले थे।

भावार्थ– नाथ पंथ हठयोगियों का पंथ माना जाता है। इसमें मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, आदि अनेक प्रसिद्ध योगी हो चुके हैं। कान को छिदवाकर ये लोग उसमें बाले पहनते हैं, इसलिये इनका नाम "कनफटा" भी पड़ गया

है।

वे राज गुरु कहावते, बहुत चेले तिन को।
कच्छ देस ताय मानहीं, जाय पहुंचे इन मों।।८।।

वे लोग राजगुरु कहलाते थे। उनके शिष्यों की संख्या भी बहुत अधिक थी। सम्पूर्ण कच्छ में इनका भरपूर सम्मान था। श्री देवचन्द्र जी ने अपनी जिज्ञासा के समाधान के लिये इनका भी मार्ग ग्रहण किया।

विशेष– जिस सन्यासी के शिष्यत्व में राजा होता है, उस सन्यासी को राजगुरु कहते हैं।

कोइक दिन तहाँ रहे, साख न होय अन्दर।
पूछी चरचा तिनकी, कछु न पड़े खबर।।९।।

श्री देवचन्द्र जी ने उनसे धर्म चर्चा करके अपनी जिज्ञासाओं का समाधान करना चाहा। वे उनके बीच कुछ दिनों तक रहे तथा उनके द्वारा बतायी गयी विधि से उन्होंने साधना भी की, किन्तु उन्हें कोई विशेष अनुभूति नहीं हुई और अन्तरात्मा से साक्षी भी नहीं मिली।

फेर वैरागी कापड़ी में, रहे कोइक दिन।
वस्त न देखी तिन में, परे इन्द्री बस मन।।१०।।

नाथ पन्थ से अलग होकर वे कापड़ी वैरागियों में भी कुछ दिनों तक रहे। उन्होंने अनुभव किया कि इनमें तो आध्यात्मिक ज्ञान का कोई प्रकाश था ही नहीं। ये लोग अपने मन एवं इन्द्रियों के विषय भोगों में फंसे हुए थे।

भावार्थ– "कापड़ी" शब्द कापालिक का अपभ्रंश प्रतीत होता है। कापालिक साधु श्मशान या निर्जन

स्थानों में अपनी तान्त्रिक साधनायें किया करते हैं। प्रायः ये नशा करते हैं तथा अभक्ष्य आदि भी खा लिया करते हैं। वैसे अधिकतर पन्थों के विरक्त लोग अपने को वैरागी कहते हैं और अपने पंथ को उससे जोड़ देते हैं, जैसे– वैष्णव वैरागी, शैव वैरागी, आदि। कापड़ी वैरागी भी इसी प्रकार के हैं।

इन भाँत मेहेजद में, मुल्ला की करी सोहबत।
तहाँ कछु न पावहीं, कोइक दिन रहे तित।।११।।

इसी क्रम में, अपनी आध्यात्मिक प्यास को शान्त करने के लिये श्री देवचन्द्र जी मस्जिद में जाकर मुल्ला से भी मिले। वहां भी कुछ दिनों तक रहे, किन्तु शरीअत का मार्ग उन्हें रास (पसन्द) नहीं आया। वहां भी सच्चे ज्ञान का प्रत्यक्ष अभाव दिखा।

और ब्राह्मण भेष कई, और भेष सब ठौर।

खोजत ही फिरत रहे, मेहनत करी अति जोर।।१२।।

ब्राह्मण वेश धारी अनेक साम्प्रदायिक विद्वानों तथा अन्य बहुत से पौराणिक मत–मतान्तरों में वे खोज करते रहे। सत्य को पाने के लिये उन्होंने बहुत अधिक परिश्रम किया।

भावार्थ– श्री देवचन्द्र जी लगभग १८ माह तक नाना पन्थों में परब्रह्म की प्राप्ति के लिये भटकते रहे। उस समय वैष्णवों के चारों पन्थों (रामानुज, निम्बार्क, माध्वाचार्य तथा विष्णु स्वामी) के अनुयायियों, वाममार्गियों तथा वेदान्तियों आदि से उन्होंने अपनी जिज्ञासा का समाधान करने का प्रयास किया।

फिर भोजनगर आए, तिन सहर में।

तहां हरदास जी रहे, भई सोहबत तिन से।।१३।।

अन्त में चारों ओर से थक–हार कर वे भोजनगर में आये। धाम धनी की कृपा से वहाँ पर उनकी भेंट हरिदास जी से हुई।

वे थे राधा वल्लभी, सेवत कारज आतम।

सेवा बंके बिहारी की, करे सखी भाव धरम।।१४।।

वे राधा वल्लभ मत के अनुयायी थे। इनकी आराधना का एकमात्र उद्देश्य आत्म कल्याण था। वे स्वयं को एक गोपी मानते थे और सखी भाव से अपने आराध्य बांके बिहारी की सेवा किया करते थे।

रहे तिनकी सोहबत में, देखी सेवा अत प्रेम।

साँचा देखा तिन को, सेवत हैं अत नेम।।१५।।

हरिदास जी की संगति में रहकर श्री देवचन्द्र जी ने उनकी प्रेमभरी सेवा की अटूट भावना देखी। उन्होंने इस बात का प्रत्यक्ष अनुभव किया कि हरिदास जी अपने आराध्य की सच्चे हृदय से निष्ठापूर्वक सेवा करते हैं।

जब रूत आवे गरमी की, तब सेवा तिन माफक।

ठंडक करें हर भांत सों, आगा समे रूत ताकत।।१६।।

जब गरमी की ऋतु होती थी तो उसके अनुसार वे सेवा करते थे, अर्थात् शीतल जल एवं वायु के द्वारा ठण्डक बनाये रखते थे। किसी भी ऋतु के आने से पहले ही सेवा की आवश्यकताओं को वे पूर्ण कर लिया करते थे।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण का भाव यह है कि

हरिदास जी ग्रीष्म ऋतु के आने से पहले पतले–सूती वस्त्रों, पंखा (विजनों), इत्र, आदि की व्यवस्था कर लेते थे। इसी प्रकार, शीत ऋतु के आने से पूर्व वे अंगीठी के लिये लकड़ी आदि का उचित प्रबन्ध करते थे।

जाड़े की रूत मिने, गरमी का करें इलाज।
अब ए वस्त करों, चाहिएगी मुझे आज।।१७।।

शीत ऋतु में वे बांके बिहारी के लिये गरमी की व्यवस्था करते थे। वे हमेशा इसी चिन्तन में लगे रहते थे कि आज अपने आराध्य की सेवा में किस वस्तु की आवश्यकता है? उसकी उपलब्धि करके उससे वे अवश्य सेवा करते थे।

अस्नान करें दिन में, दोय चार वखत।

जब रूत पलटे में चाहिए, गरमी सीत होय इत।।१८।।

वे प्रतिदिन २–४ बार तो स्नान करते ही थे। जब ऋतु का परिवर्तन होता था, अर्थात् शरद् ऋतु के पश्चात् ग्रीष्म, या ग्रीष्म के पश्चात् वर्षा ऋतु के होने पर, तब शीत तथा गरमी की विषमता हो जाती थी।

भावार्थ– दिन में २–४ बार स्नान का तात्पर्य है कि गरमी के मौसम में वे ४ बार तो स्नान करते ही थे, शीत ऋतु में भी कम से कम २ बार स्नान अवश्य कर लेते थे। ऋतुओं के परिवर्तन काल में कफ, वात एवं पित्त के कुपित होने से अस्वस्थता की सम्भावना बढ़ जाती है। इसलिये शरीर शुद्धि के लिये बार–बार स्नान की आवश्यकता होती है।

तब इनको अस्नान का, फेर फेर बखत होय।

ए सांचवटी देख के, ऐसी करे न कोय।।१९।।

ऐसे समय में उन्हें बार–बार स्नान करना पड़ता था। अपने आराध्य के प्रति सेवा की ऐसी सच्ची निष्ठा को देखकर श्री देवचन्द्र जी बहुत प्रभावित हुए कि इस तरह से तो कोई भी सेवा नहीं कर सकता है।

इन ठिकाने आये के, आतम पायो करार।

ए सांचवटी देख के, करने लगे विचार।।२०।।

हरिदास जी की सामीप्यता में आकर श्री देवचन्द्र जी को बहुत अधिक शान्ति मिली। अपने आराध्य के प्रति इस प्रकार की सत्यनिष्ठा देखकर श्री देवचन्द्र जी ने यह विचार किया।

इनकी मैं सेवा करों, वस्त ग्रहों इनसों।

तब लगे सेवा करने, रहें इनकी सोहबत मों।।२१।।

मैं इनकी सेवा करके अखण्ड ज्ञान प्राप्त करूँ। अपने मन में इस प्रकार की धारणा बनाकर श्री देवचन्द्र जी हरिदास जी के पास ही ठहर गये और उनकी सेवा करने लगे।

नित्याने चरचा सुने, जाय बैठे सोहबत।

जब ए मतू मेहते सुनी, धाय के आए तित।।२२।।

श्री देवचन्द्र जी प्रतिदिन नियमबद्ध होकर हरिदास जी से आध्यात्मिक ज्ञान का श्रवण करने लगे। उनके पिता श्री मत्तू मेहता जी को जब पता चला कि देवचन्द्र जी उनके गुरु हरिदास जी के ही पास हैं, तो वे दौड़े-दौड़े वहाँ आये।

भावार्थ– श्री देवचन्द्र जी के द्वारा छिपकर गृह त्याग करने से उनके माता–पिता बहुत ही दुःखी रहते थे। उन्होंने अपने गुरु हरिदास जी के भी पास यह सूचना भेज दी थी। जब श्री देवचन्द्र जी हरिदास जी के पास पहुँचे तो उन्होंने उनका परिचय लेकर मत्तू मेहता जी को सूचित कर दिया था।

नसीहत जो कहने हती, सो कह कह थके सब।
ए क्योंए माने नही, बेजार हुए तब।।२३।।

माता–पिता ने गृहस्थ आश्रम की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए श्री देवचन्द्र जी को तरह–तरह की सीख दी, लेकिन वे थक गये और श्री देवचन्द्र के वैराग्य पर कोई असर नहीं पड़ा। उन्होंने अपने माता–पिता की सिखापन को अनसुना कर दिया। इस बात से उनके माता–पिता

बहुत ही दुःखी हुए।

श्री देवचन्द्र जी माया के, क्योंए नजीक न जाये।

इनको वह गमे नहीं, बड़ो दुःख पहुंचाय।।२४।।

श्री देवचन्द्र जी अपने आराध्य का प्रेम छोड़कर किसी भी तरह से माया के निकट नहीं जाना चाहते थे। उन्हें माया जरा भी अच्छी नहीं लगती थी, किन्तु उनके माता–पिता उनकी वैराग्य भावना से बहुत अधिक दुःखी थे।

हरिदास की सेवा करें, मनसा वाचा करम।

कछू सक न ल्यावहीं, रहें आतम के धरम।।२५।।

श्री देवचन्द्र जी अपने शुद्ध मन, वाणी तथा कर्म से हरिदास जी की सेवा करते थे। उनके प्रति उनके मन में

जरा भी संशय नहीं था। अपने आत्म–कल्याणार्थ वे सेवा–धर्म का यथावत् पालन कर रहे थे।

देख सांचे हरिदास जी इनको, मन में देऊं नाम सुमरन।
ऐसो विचार करके, एक दिल में लिया दिन।।२६।।

श्री देवचन्द्र जी की सच्ची लगन देखकर हरिदास जी ने अपने मन में उन्हें दीक्षा (नाम–स्मरण की विधि) देने का विचार किया। ऐसा विचार करके उन्होंने एक शुभ दिन निश्चित कर दिया।

मतू मेहता विचार करें, क्योंए डारों माया में।
तो ए हाथ आवे मेरे, छूटे वैराग इनसे।।२७।।

उधर मत्तू मेहता हमेशा यही सोचा करते थे कि देवचन्द्र जी को किस प्रकार मायारूपी गृहस्थी के बन्धनों

में डाला जाये, ताकि वे वैराग्य भाव को छोड़ दें और घर पर मेरे साथ रहकर सामान्य जीवन बितायें।

द्रष्टव्य– यद्यपि हाथ आने का तात्पर्य है अधीनस्थ होना, किन्तु यहाँ पर भाव यह है कि देवचन्द्र जी वैराग्य भाव को छोड़कर उन्हें अपना पिता मानें और पुत्रवत् अधीनस्थ रहकर उनकी सेवा करें।

एक ठौर सगाई करके, ब्याह को धरायो दिन।
वही दिन था उत्तम, लेने का नाम सुमरन।।२८।।

अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने श्री देवचन्द्र जी को बिना बताये ही उनकी सगाई लीलबाई नामक एक कन्या से कर दी तथा विवाह का दिन भी निश्चित कर दिया। संयोगवश जो दिन विवाह के लिए उत्तम निश्चित किया गया था, दीक्षा के लिये भी वही दिन उत्तम माना

गया।

द्रष्टव्य– फलित ज्योतिष के अनुसार राशियों के आधार पर शुभ मुहूर्त निकाले जाते हैं, जो अन्धविश्वास के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है। चैतन्य स्वरूप को ग्रह, राशि एवं नक्षत्रों के बन्धन में मानना अज्ञानता है। फलित ज्योतिष का सिद्धान्त वैदिक मान्यता के पूर्णतया विपरीत है।

मारग राधावल्लभी में, लेने नाम सुमरन।
भद्र भेष होत है, श्री देवचन्द्रजी विचार किया मन।।२९।।

श्री देवचन्द्र जी ने अपने मन में विचार किया कि राधा वल्लभ सम्प्रदाय में तो ऐसी मान्यता है कि दीक्षा लेने के लिये मुण्डन कराना पड़ता है।

विशेष– भद्र भेष होने का तात्पर्य है, मुण्डन कराना।

इस प्रक्रिया में शिर, दाढ़ी तथा मूंछ को बालों से रहित (उस्तरे द्वारा) कर दिया जाता है।

हरिदास जी ने पूछिया, तुमको नाम सुमरन देवें आज।
भद्र भेष हो आओ, तो होय तुम्हारा काज।।३०।।

हरिदास जी ने श्री देवचन्द्र जी से पूछा कि यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मैं आज तुम्हें राधा वल्लभ मत की दीक्षा देना चाहता हूँ। इसके लिये तुम्हें अपना मुण्डन कराना होगा। तभी तुम्हारा दीक्षा कार्य सम्पन्न हो सकेगा।

तब ही भद्र भेष होय के, आय के बैठे पास।
पूछा नाम सुमरन काहू का लिया है, कह्या सन्यासी का कर विस्वास।।३१।।

उसी समय श्री देवचन्द्र जी अपने शिर के बाल मुण्डित कराकर हरिदास जी के पास बैठ गये और उनसे दीक्षा के

लिये आग्रह किया। हरिदास जी ने उनसे पूछा कि क्या तुमने पहले किसी और से भी दीक्षा ली है? श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि हाँ! मैंने दत्तात्रेय मत पर विश्वास करके एक सन्यासी से दीक्षा ली है।

भावार्थ– यजुर्वेद में कहा गया है कि "व्रतेन दीक्षामाप्नोति" अर्थात् व्रत से दीक्षा को प्राप्त किया जाता है। परब्रह्म के ध्यान की प्रक्रिया को निष्ठाबद्ध होकर पूरा करने का व्रत लेना ही दीक्षा है, जिसे बोलचाल की भाषा में नाम लेना या मन्त्र लेना कहा जाता है। इसी का अपभ्रंश रूप है– नाम सुमिरन (स्मरण का मार्ग) लेना।

कहा सोई नाम सुमरन, चिट्ठी में लिख कर।
रोटी में चिट्ठी वायके, देवो सन्यासी को योंकर।।३२।।

यह सुनकर हरिदास जी ने उनसे कहा कि तुमने जो

भी मन्त्र लिया है, उसे एक पत्र (कागज) पर लिखकर रोटी में छिपा दो तथा किसी सनं्यासी को भिक्षा में दान कर दो, जिससे उनका मन्त्र उनके पास चला जाय।

तब श्री देवचन्द्रजी ने कह्या, इनसे कछु न होय।
जो नाम ओ जोरावर, तो क्योंकर निकसे सोय।।३३।।

तब श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि गुरुदेव! ऐसा करने से क्या लाभ है? यदि सन्यासी का दिया हुआ मन्त्र आपके मन्त्र से अधिक शक्तिशाली होगा तो मेरे हृदय से वह कदापि नहीं निकल सकेगा।

भावार्थ– मन्त्र का तात्पर्य होता है – "मननात् इति मन्त्रः" अर्थात् मनन किये जाने से वह मन्त्र कहलाता है। मन्त्र में ज्ञान छिपा होता है, जिसका आचरण करने से वह फलित होता है। मन्त्र के अधिक शक्तिशाली होने का

अभिप्राय यह है कि जिस मन्त्र में जितने ऊँचे आध्यात्मिक ज्ञान का प्रकाश होगा, वह उतना ही शीघ्र परब्रह्म की प्राप्ति कराने में समर्थ होगा।

जो तुम्हारा नाम जोरावर, ओ आपही होवे दूर।
ए तो अर्थ ऊपर का, ए आम का मजकूर।।३४।।

यदि आपका दिया हुआ मन्त्र मेरे पहले वाले मन्त्र से अधिक शक्तिशाली होगा, तो वैसे ही वह निकल जायेगा, किसी को दान करने की आवश्यकता ही नहीं होगी। दान द्वारा मन्त्र वापस करना तो बहुत ही सामान्य लोगों की प्रवृत्ति है और मात्र बाह्य कर्मकाण्ड है।

सुन ऐसी बात हरिदास जी, बड़ो जो पाया सुख।
दियो नाम सुमरन, देखो सरूप सनमुख।।३५।।

श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से इस तरह की अलौकिक बातें सुनकर हरिदास जी बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने राधा वल्लभ मत की दीक्षा देते हुए कहा कि अपने सामने हमेशा राधाकृष्ण के युगल स्वरूप की भावना करनी चाहिए।

भजमन श्री वृन्दावन, कुंजबिहारी नित बिलास।
एह राखो तुम दिल में, सुमरो कर विस्वास।।३६।।

इस मन्त्र "भजमन श्री वृन्दावन, कुंज बिहारी नित्य विलास" को तुम सर्वदा ही अपने हृदय मन्दिर में बसाओ और दृढ़ विश्वास के साथ इसका चिन्तन, मनन, स्मरण करते रहो।

भावार्थ– इस मन्त्र का आशय यह है कि हे मन ! योगमाया के ब्रह्माण्ड में नित्य वृन्दावन के अन्दर

महारास की नित्य लीला करने वाले, कुंजों में तरह – तरह की क्रीड़ायें करने वाले, उस रासेश्वर श्री कृष्ण को तू यादकर अपने हृदय मन्दिर में बसा।

यथार्थतः मन्त्र में निहित ज्ञान को आचरण में उतारना चाहिए, अर्थात् सखी भाव से ध्यान द्वारा अपने आराध्य का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहिए। माला पर जप करना तो मात्र प्राथमिक कक्षा ही कही जा सकती है।

सखी भाव होय भजिओ, उपदेस करके एह।
विदा दई तिन घर को, देखा मतू मेहते तेह।।३७।।

तुम स्वयं को नित्य वृन्दावन की गोपी मानना और सखी भाव से रास बिहारी को अपने हृदय में बसाना। इस प्रकार का उपदेश करके हरिदास जी ने श्री देवचन्द्र जी को विदा किया। जब मत्तू मेहता ने उन्हें इस प्रकार

से–

भद्र भेष देख के, करने लगे सोर।
ए कैसो काम कियो, चाहिए सिनगार इस ठौर।।३८।।

मुण्डन कराये हुए देखा तो वे अत्यधिक उग्र हो गये और क्रोध में कहने लगे कि तुमने यह कैसा उल्टा काम कर दिया? आज तुम्हारे विवाह का दिन है। ऐसे समय में जहाँ तुम्हें अपना श्रृंगार करना चाहिए, वहाँ तुमने शोक के प्रतीक स्वरूप अपना शिर मुंडवा रखा है।

रोय पीट दुख पाय के, खीज डराय कहे सुकन।
श्री देवचन्द्र जी उत्तर दियो, तुम क्या चाहत हो दिन।।३९।।

यह कहकर मत्तू मेहता जी दुःखी होकर रोने–पीटने लगे। बहुत क्रोध में उन्होंने डराने वाली बातें भी कहीं।

अन्त में श्री देवचन्द्र जी ने उनसे पूछा कि पिता जी ! आज के दिन आप क्या चाहते हैं?

भावार्थ– पौराणिक (गरुड़ पुराण की) मान्यता के अनुसार पिता के देहान्त के पश्चात् पुत्र को अपना शिर मुड़वाना पड़ता है। मत्तू मेहता जी को यही बुरा लग रहा था कि विवाह जैसे शुभ कार्य में भी देवचन्द्र जी ने शिर क्यों मुड़वा लिया, जबकि मैं अभी जीवित ही हूँ। डराने का आशय है– अशुभ घटना घटित होने का संकेत देना।

मैं ब्याह करने था जिनसों, किया है तिन सों।
मैं तो तुमको बरजिया, मेरे काम नहीं इनमों।।४०।।

मुझे जिससे विवाह करना था, मैंने उनसे कर लिया है अर्थात् मेरी आत्मा का विवाह रास बिहारी से हो चुका है, जबकि आप मेरे शरीर के विवाह के लिये इतने व्याकुल

हो रहे हैं। मैंने तो आपको बारम्बार मना किया था कि सांसारिकता में मेरी जरा भी रुचि नहीं है। मेरा विवाह किसी भी स्थिति में नहीं होना चाहिए।

ऐसे में ब्याह हुआ, खटपट नित होइ।
श्री देवचन्द्र जी हरिदास जी की, सेवा करत है सोइ।।४१।।

ऐसे कड़वाहट भरे वातावरण में श्री देवचन्द्र जी का विवाह हुआ। उनका मन संसार में नहीं लगता था। परिणामस्वरूप घर में प्रतिदिन झिक-झिक होना स्वाभाविक ही था। श्री देवचन्द्र जी के ऊपर विवाह का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा और वे पूर्ववत् हरिदास जी की सेवा करते रहे।

रहे सोहबत हरिदास जी की, दोय पहर रात लगे।

चरचा और कीर्तन में, गुजरान करते ए।।४२।।

वे रात्रि के १२ बजे तक हरिदास जी के पास ही रहा करते। वहाँ पर उनका सारा समय चर्चा सुनने तथा कीर्तन में ही व्यतीत हो जाता था।

रहें एक पहर घर अपने, पीछली रात रहे जब पोहोर।

हरिदास जी के मंदिर प्रदक्षिणा, देवे मेहनत अति जोर।।४३।।

वे अपने घर पर मात्र रात्रि के १२ बजे से ३ बजे तक ही रहते थे। जब रात्रि में केवल तीन घण्टे बाकी रहते थे, अर्थात् प्रातः ३ से ६ बजे के समय में, वे हरिदास जी के यहाँ मन्दिर में बहुत अधिक श्रम के साथ परिक्रमा किया करते थे।

एक दिवस हरिदास जी, उठे थे देह कारज।

ऊपर झरोखे थें देखिया, कह्या कौन फिरत कौन गरज।।४४।।

अचानक एक दिन हरिदास जी को लघुशंका आदि के लिये उठना पड़ा। उन्होंने जब अपने कक्ष के झरोखे से देखा तो किसी को घूमते हुए देखकर आवाज लगायी, तुम कौन हो और किस लिये घूम रहे हो?

रात पिछली पहर एक है, घर के पीछे फिरत।

ए कौन सख्स आयो कहा, ए देख के तित।।४५।।

उस व्यक्ति को देखकर हरिदास जी ने अपने मन में विचारा कि अभी तो रात्रि के व्यतीत होने में तीन घण्टे बाकी हैं, किन्तु यह कौन सा व्यक्ति है जो घर के चारों ओर घूम रहा है? इस के यहां पर आने का उद्देश्य क्या है?

तब हरिदास जी टोकिया, कौन सख्स हो तुम।

तब श्री देवचन्द्र जी उत्तर दिया, कह्या इत आये हैं हम।।४६।।

तब हरिदास जी ने उसे टोका (बोला)– हे भाई! तुम कौन हो? यह सुनकर श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि गुरुदेव! मैं देवचन्द्र हूँ।

स्वर पहिचाना हरदास जी, आए श्री देवचन्द्र जी तुम कित।

खोल द्वार घर में लिए, तुम क्यों आए इस वखत।।४७।।

श्री देवचन्द्र जी की आवाज पहचान कर हरिदास जी ने अपने घर का दरवाजा खोला और उनको घर के अन्दर लाकर पूछा कि देवचन्द्र! तुम रात्रि के घने अंधेरे में इस समय यहाँ कैसे चले आये?

जबाब श्री देवचन्द्र जी दिया, सुनिए आप वचन।
रात खबर मोहे न रही, मैं जान्या उग्या दिन।।४८।।

श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया– हे गुरूदेव! आप मेरी बात पर विश्वास कीजिए। जब मैं रात में उठा तो समय का सही अनुमान नहीं कर पाया। मुझे ऐसा लगा कि जैसे दिन उगने ही वाला है। इसलिये मैं आपके पास चला आया।

भावार्थ– सेवा और भक्ति गोपनीयता में ही फलीभूत होते है। इनका ढोल पीटना आत्म–कल्याण में बाधक है।

सेवा करे न जनावहीं, अपनी आतम के कारन।
दिखावें नहीं काहू को, समझावें अपना मन।।४९।।

अपनी आत्मा के सुख के लिये वे सेवा करके उसे प्रकट नहीं होने देते थे। वे अपने मन को विवेकपूर्वक

संसार से हटाये रहते थे तथा किसी भी प्रकार से अपने त्याग, संयम या श्रद्धा–भक्ति का किसी के सामने प्रदर्शन नहीं करते थे।

हरदास जी सुन के, कही है माफक परवान।
ए नित प्रदक्षिणा देवहीं, और दिन की सेवा करे जान।।५०।।

यह बात सुनकर हरिदास जी ने कहा कि ठीक है! जो तुमने किया, वह अच्छा ही किया। किन्तु बात यहीं तक नहीं है। श्री देवचन्द्र जी पूर्ववत् प्रातःकाल तड़के (३–६ बजे के बीच) परिक्रमा करते रहे और दिल में अपना सच्चा गुरू मानकर हरिदास जी की सेवा करते तथा मन्दिर की कई सेवाओं में भी भाग लेते थे।

एक दिवस हरिदास जी, थे सेवा में हुसियार।
आगे श्री देवचन्द्र जी, बैठे थे खबरदार।।५१।।

एक दिन हरिदास जी मन्दिर में अपनी सेवा में तल्लीन थे। उनके साथ श्री देवचन्द्र जी भी सेवा में सहायक की भूमिका निभा रहे थे तथा किसी भी सेवा के प्रति पूर्णतया सजग थे।

तब एक सख्स को, मारा बिच्छू ने जोर।
तिनके आकार में चेतन, कछु न रह्या इस ठौर।।५२।।

उस समय एक व्यक्ति को बिच्छू ने डंक मार दिया था। उसके तीव्र विष के प्रभाव से उसका शरीर जड़ हो गया था। ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे इसमें चेतना है ही नहीं।

चार जने पकड़ के, आये खड़ा किया सामे द्वार।

और सख्स जो संग के, सो करने लगे पुकार।।५३।।

उस व्यक्ति को चार आदमी उठाकर लाये थे। उन्होंने उसे मन्दिर के द्वार के सामने लाकर रख दिया। साथ में जो और लोग आये थे, वे हरिदास जी को सम्बोधित करके पुकारने लगे।

आए बाहिर देखिया, हरिदास जी इने समे।

हाथ मूंछो पर फेरते, हुआ चैन तिन समे।।५४।।

उनकी आवाज सुनकर हरिदास जी मन्दिर से बाहर निकले और सामने का दृश्य देखकर समझ गये कि बिच्छू के विष से ही यह स्थिति बनी है। उन्होंने मन्त्र पढ़कर जब अपनी मूछों पर हाथ फेरा, तो उस व्यक्ति को बहुत अधिक आराम हो गया।

फेर के दूसरी बेर हाथ, मूंछो पर फेरा जो और।

तब आकार चेतन होए के, खड़ा रह्या इस ठौर।।५५।।

पुनः दूसरी बार मन्त्र पढ़ कर जब उन्होंने मूंछों पर हाथ फेरा, तो उसके शरीर में पूरी तरह से चेतनता आ गयी और वह उठ कर खड़ा हो गया।

तीसरी बेर फेरते, जोर न लगे जब।

तब जहर कछु ना रह्या, दण्डवत किया तब।।५६।।

जब मन्त्र पढ़कर तीसरी बार उन्होंने मूंछों पर हाथ फेरा, तब बहुत ही सरलता से उसका सारा विष उतर गया। वह व्यक्ति अत्यन्त श्रद्धान्वित् होकर हरिदास जी के चरणों में गिर पड़ा।

सबों ने सलाम कर, अस्तुत करी बनाइ।

जीव दान तुम इने दिया, तुम्हारी बड़ाई कही न जाइ।।५७।।

वहां उपस्थित सभी लोगों ने हरिदास जी को अत्यधिक श्रद्धा भाव से प्रणाम किया और उनकी महिमा का बखान किया। उन्होंने बहुत ही विनम्र स्वरों में कहा कि आपने इस व्यक्ति को जीवन दान दिया है। यदि आप नहीं होते, तो यह व्यक्ति मर चुका होता। आपकी महिमा को हम शब्दों से व्यक्त नहीं कर सकते हैं।

तब हरिदास जी ने कह्या, श्री देवचन्द्र जी सो वचन।

श्री देवचन्द्र जी बड़ो मंत्र है, ए रखों तुम्हारे तन।।५८।।

उन लोगों के चले जाने पर हरिदास जी ने श्री देवचन्द्र जी से कहा कि देवचन्द्र! इस मन्त्र की शक्ति बहुत अधिक है। मैं तुम्हें यह मन्त्र भी सिखाना चाहता हूँ।

जो एक घड़ी फुरसत, न होती मंत्र कहने में।

तो प्राण न रहते इन के, होत ऐसो उपकार इन से।।५९।।

यदि मेरे पास आने तक या मेरे द्वारा मन्त्र से उपचार करने में एक घड़ी (साढ़े बाइस मिनट) की भी देरी हो गयी होती, तो इस व्यक्ति के प्राण सुरक्षित नहीं रह सकते थे। दूसरों के जीवन की रक्षा करने जैसा महान उपकार इस मन्त्र से होता है।

विशेष– मन्त्र जप के द्वारा संकल्प शक्ति को दृढ़ बना लिया जाता है तथा अपने आत्मिक बल से विष का शमन कर दिया जाता है। इसमें अवचेतन मन की शक्ति कार्य करती है। मूंछो पर हाथ फेरना संकल्प शक्ति की दृढ़ता को दर्शाना है।

तब श्री देवचन्द्र जी ने कह्या, हरिदास जी सुनो तुम।

हम को मंत्र जो तुम दियो, सो हृदय राखें हम।।६०।।

श्री देवचन्द्र जी ने कहा– हे गुरुदेव! आप मेरा निवेदन सुनिये। आपने जो मुझे अलौकिक मन्त्र दे रखा है, उसे मैं अति श्रद्धापूर्वक अपने हृदय में रखता हूँ।

सो ए मंत्र कैसा है, जो लाख बिच्छू का दुख।

सो जनम और मरण का, छुड़ाय के देवे सुख।।६१।।

आपके द्वारा दिये गये मन्त्र की महिमा ऐसी है कि वह जीव के जन्म लेने तथा मरने में लाखों बिच्छुओं के काटने का जो दुःख होता है, उससे छुड़ाकर अखण्ड लीला का सुख देता है।

सो मंत्र जिन उर में रहे, तहां ए कैसे समाय।

तब हरिदास जी रीझ के, सिफत करी बनाय।।६२।।

ऐसा दिव्य मन्त्र जिसके हृदय में वास करता है, वहाँ बिच्छू का लौकिक विष उतारने वाला मन्त्र भला कहाँ रह सकता है? यह बात सुनकर हरिदास जी बहुत ही आनन्दित हुए और श्री देवचन्द्र जी के दिव्य गुणों का बखान करने लगे।

हे श्री देवचन्द्र जी ए बुध, हममें नही लगार।

जो तुम कहत हो, सो हम में नहीं विचार।।६३।।

वे कहने लगे– हे देवचन्द्र! इतने ऊँचे विचार की जो अलैकिक बुद्धि आप में है, उसका थोड़ा सा भी अंश मुझमें नहीं है। यह यथार्थ है। अध्यात्म के जिन महान सिद्धान्तों की आप बात करते हैं, वे हमारे अन्दर नहीं हैं।

द्रष्टव्य– एक गुरु के द्वारा शिष्य को स्वयं से बड़ा कहना, उसकी महानता को दर्शाता है।

इन भांत कै बीतकें, भई माहें भोजनगर।
श्री देवचन्द्रजी सेवा करें, पड़े न काहू खबर।।६४।।

इस प्रकार श्री देवचन्द्र जी के तन से होने वाली दिव्य लीला की अनेक घटनायें भोजनगर में हुई। श्री देवचन्द्र जी अपने आराध्य तथा गुरुदेव की सेवा में गोपनीय रूप से इस प्रकार लगे रहते थे कि किसी को पता नहीं चलने देते थे।

भावार्थ– श्री देवचन्द्र जी रास बिहारी की परिक्रमा तो छिपकर करते ही थे, हरिदास जी के वस्त्र धोने आदि की सेवा भी गुप्त रूप से किया करते थे, जिसका पता किसी को भी नहीं होता था।

एक दिन फिरते घर को, देखे झरोखे पर।

देखा श्री देवचन्द्र जी को फिरते, बुलाय लिए ऊपर।।६५।।

एक दिन तड़के रात्रि को हरिदास जी ने पुनः झरोखे से देखा कि देवचन्द्र जी तो आज फिर मेरे मकान की परिक्रमा कर रहे हैं। उन्होंने आवाज देकर श्री देवचन्द्र जी को ऊपर बुलाया।

भावार्थ– बांके बिहारी तथा बाल मुकुन्द जी का मन्दिर निचली भूमिका (मन्जिल) में था तथा उसके ऊपर की भूमिका में हरिदास जी का निवास था। श्री देवचन्द्र जी जब मन्दिर की परिक्रमा करते थे, तो हरिदास जी को ऐसा प्रतीत होता था कि उनके आराध्य के साथ उनकी भी परिक्रमा की जा रही है।

मैं जान्या तुम एक दिन, भूल के रात को आये।

ए तो नित फिरत हो, मैं ए मेहनत सही न जाय।।६६।।

हरिदास जी ने श्री देवचन्द्र जी से कहा कि मैंने उस दिन यही समझा था कि तुम भूलवश ही रात्रि को आ गये थे, किन्तु अब मैं समझ गया हूँ कि तुम तो प्रतिदिन ही भोर में परिक्रमा करते हो। तुम्हारे द्वारा की जाने वाली इस महान् सेवा का बोझ सहन करना मेरे सामर्थ्य से बाहर है।

तुम मोसों कहा कहत हो, क्या मांगत हो मुझ से।

मोसों तुम कह देवो, वह मैं देऊं तुमें।।६७।।

तुम मुझसे क्या कहना चाहते हो, अर्थात् यदि तुम अपने मन की कोई भी ऐसी बात जो अब तक नहीं कह सके हो, तो वह मुझे बता सकते हो। तुम यह भी बताओ

कि मुझसे क्या चाहते हो? तुम्हारी जो भी इच्छा हो, वह अवश्य बताओ। मैं उसे निश्चित रूप से पूर्ण करूँगा।

तब हरिदास जी ने कह्या, मैं तुम्हें देऊं बालमुकुन्द।
तिनकी सेवा तुम करो, ज्यों पावो आनन्द।।६८।।

श्री देवचन्द्र जी के चुप रहने पर हरिदास जी ने कहा कि मैं तुम्हें बालमुकुन्द जी की मूर्ति देता हूँ। तुम उस मूर्ति को अपने घर ले जाकर सेवा करो, जिससे तुम्हें आनन्द हो।

तब श्री देवचन्द्र जी ने कह्या, जो आज्ञा तुम्हारी होय।
सोई हमें करनी, करें सेवा जो सोय।।६९।।

यह सुनकर श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि गुरुदेव! आपकी जैसी आज्ञा। मुझे तो आपके आदेश के अनुसार

ही सब कुछ करना है। मैं बालमुकुन्द जी की मूर्ति की सेवा अवश्य करूँगा।

महामति कहे ए साथ जी, यह बीतक भोजनगर।

आगे इनके और कहों, बीतक पहिचान पर।।७०।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह भोजनगर का वृत्तान्त है। अब इसके आगे श्री देवचन्द्र जी के स्वरूप की पहचान का प्रसंग है, जिसका वर्णन मैं करने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।३।। चौपाई ।।९२।

श्री देवचन्द्र जी के स्वरूप की पहचान

या समै हरिदास जी, एक दिन नीको ठहराय कर।

कह्या बाल मुकुन्दजी पधरावो, तुम सेवो अपने घर।।१।।

श्री हरिदास जी ने बालमुकुन्द जी की मूर्ति देने के लिए एक शुभ दिन निश्चित कर दिया तथा श्री देवचन्द्र जी से कह दिया कि इस दिन तुम मेरे यहाँ से मूर्ति ले जाकर अपने यहाँ पधरा लेना और प्रेमपूर्वक सेवा करना।

ता दिन जो देखे सेवा में, समय प्रातः काल के।

सरूप तो देखे नहीं, तब लगे तहां ढूंढ़ने।।२।।

किन्तु उस दिन जब वे प्रातः काल के समय मन्दिर में सेवा करने के लिये गये, तो वहाँ पर बालमुकुन्द जी की मूर्ति दिखायी नहीं पड़ी। इस घटना से हरिदास जी बहुत

परेशान हो गये और मूर्ति को ढूंढ़ने लगे।

सरूप कहूं न पावहीं, भए हरिदास जी दिलगीर।
सिंहासन सेज्या पर, पावे नहीं क्यों ए कर।।३।।

चारों ओर बहुत खोजने पर भी जब वे मूर्ति को नहीं पा सके तो बहुत ही दुःखी हो गये। उन्होंने सिंहासन तथा शैय्या (सेज्या) आदि सभी जगह खोज डाला, किन्तु कहीं भी मूर्ति को नहीं पा सके।

लगे पूछने घर में, इहां तो कोई आया नाहें।
तब जवाब तिनने दिया, इहां किनकी ताकत जो आये।।४।।

तब उन्होंने अपने घर के सदस्यों से पूछा कि यहां कोई आया तो नहीं था? परिवार के सदस्यों ने उत्तर दिया कि बाहर का मुख्य द्वार बन्द था। ऐसी अवस्था में किसकी

शक्ति है, जो यहाँ आ जाये?

हरिदास जी विस्मय भये, सेवा बिहारीजी की कर।
बाल मुकुन्द जी को ढूंढ़त फिरत, पस हुए यों कर।।५।।

हरिदास जी को इस विचित्र घटना से बहुत ही आश्चर्य हो रहा था कि जब यहाँ कोई आया ही नहीं, तो मूर्ति कहाँ चली गई? उचित समय पर उन्होंने बांके बिहारी जी की सेवा की और बाल मुकुन्द जी की मूर्ति को खोजते फिरे। सफलता न मिलने पर वे अत्यधिक परेशान हो गए।

इन समें आये पहुंचे, श्री देवचन्द्र जी घर से।
यह हकीकत सुनके, दिलगीर हुए मन में।।६।।

इसी समय श्री देवचन्द्र जी भी अपने घर से आ पहुँचे।

जब उन्होंने यह घटना सुनी, तो वे भी अपने मन में बहुत दुःखी हुए।

और हरिदास जी सों, लगे बातें करने।
यह चिन्ता तुम जिन करो, भई चूक हमसें।।७।।

हरिदास जी को सान्त्वना देने के उद्देश्य से श्री देवचन्द्र जी कहने लगे– हे गुरुदेव! मुझे मूर्ति न दे पाने से आप चिन्तित न होइए। कहीं न कहीं मुझसे भूल हुई है, जिसके कारण मैं मूर्ति को अपने घर ले जाने का पात्र नहीं बन सका था।

तुम तो हम को दे चुके, वस्त आई थी हम पास।
एह हमारी भूल है, जो टूटी हमारी आस।।८।।

जब आपने अपने मन में देने का संकल्प कर लिया था,

तो आप यह भी मान लीजिए कि आपने मुझे दे ही दिया था। मैं भी यही मानता हूँ कि भावनात्मक रूप से मूर्ति मुझे प्राप्त हो गयी। कहीं न कहीं मुझसे भूल अवश्य हुई है, जिसके कारण अपात्र होने से मैं प्रत्यक्ष रूप से मूर्ति को प्राप्त नहीं कर सका हूँ।

हरिदास जी मानें नहीं, प्रसाद न लेऊं लगार।
जब मैं दर्सन करों, तब मोहे होय करार।।९।।

किन्तु हरिदास जी को श्री देवचन्द्र की बातों में सन्तुष्टि नहीं हुई। उन्होंने प्रण कर लिया कि जब तक मैं बालमुकुन्द (की मूर्ति) का पुनः दर्शन नहीं कर लूँगा, तब तक मुझे शान्ति नहीं मिल सकती और उसके पहले मैं थोड़ा सा भी भोजन ग्रहण नहीं करूँगा।

बिहारी जी को आरोगाए, दोउ बाल भोग राज भोग।

अरोगने बाल गोपाल को, कर दियो संजोग।।१०।।

हरिदास जी ने बांके बिहारी की मूर्ति को प्रातः काल जो बालभोग (प्रातःराश) तथा दोपहर को राजभोग लगाया, वह प्रसाद के रूप में परिवार के छोटे–छोटे बाल बच्चों को दे दिया। बाल मुकुन्द को भोग लगाने की इच्छा मन ही में रह गयी। इससे ऐसी स्थिति पैदा हो गयी कि–

भावार्थ– बाल मुकुन्द ११ वर्ष और ५२ दिन तक की लीला करने वाले व्रज बिहारी श्री कृष्ण के लिये प्रयोग किया जाता है। रास बिहारी श्री कृष्ण का स्वरूप महारास में इतना सुन्दर और इतना प्यारा था कि उनकी दृष्टि, कमर, आदि सभी तिरछी मुद्रा में थी , इसलिये उन्हें बांके बिहारी कहते हैं।

घर में सब लोगों ने, और हरिदास जी नें।

करने लगे सब एकादसी, श्री देवचन्द्र जी तिन समें।।११।।

न तो हरिदास जी ने भोजन किया और न ही परिवार के किसी बड़े सदस्य ने। इस प्रकार बिना एकादशी की तिथि के ही सभी ने उपवास किया।

प्रसाद न लियो घर में, भयो वितीत दिन।

इहाँ हरिदास जी बैठे रहे, दुख पाया अति मन।।१२।।

उधर श्री देवचन्द्र जी ने भी घर में भोजन नहीं किया। इस प्रकार पूरा दिन बीत गया, किन्तु किसी ने भी भोजन नहीं किया। इधर हरिदास जी बहुत ही दुःखी मन से अपने घर में एकान्त में बैठे रहे।

योें करते मध्य रात, भई वितीत जब।

हरिदास जी बैठे हते, कछु आंख मिची तब।।१३।।

इस प्रकार जब हरिदास जी को अपने आराध्य के चिन्तन में बैठे-बैठे आधी रात बीत गयी, तब अचानक ही उनकी आँखें निद्रा के आगोश में बन्द हो गयी, अर्थात् हल्की सी झपकी (नींद) आ गयी।

तहां आये बालमुकुन्दजी, साक्षात दियो दर्सन।

अहो प्रभुजी कहां गए हते, हम ढूंढ़त कलपे मन।।१४।।

उस समय साक्षात् बालमुकुन्द जी ने उन्हें दर्शन दिया। उन्हें अपने सामने देखकर हरिदास जी आनन्द से विभोर हो गये। वे कहने लगे- हे प्रभो! आप कहाँ चले गये थे? आपको खोजते खोजते हम इतने दुःखी हो गये थे।

भावार्थ- यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि हरिदास जी

बैठे–बैठे योग निद्रा में चले गये थे। पलंग पर लेटे–लेटे तमोगुण के प्रभाव से आने वाली निद्रा तथा योगनिद्रा में बहुत अन्तर है। योग निद्रा में अवचेतन मन कार्य करता है। इसमें ध्यान–समाधि जैसी अवस्था अनायास ही आ जाती है। हरिदास जी को स्वप्न में दर्शन नहीं मिला था, बल्कि ध्यान–समाधि की अवस्था में होने वाला दर्शन था, जो बालमुकुन्द जी के चिन्तन में बैठे रहने से हो गया था। यहां स्पष्ट है कि परब्रह्म का साक्षात्कार केवल प्रेममयी ध्यान से ही होता है, चार–चार बार स्नान करने या अन्य कर्मकाण्डों से नहीं।

कह्या हम तो उतहीं बैठे हते, तो तुम क्यों न दियो दीदार।
कही तुम मोको पधरावते थे, श्री देवचन्द्र जी के द्वार।।१५।।

बाल मुकुन्द जी ने कहा कि मैं तो वहीं बैठा था, गया

कहीं भी नहीं। इस बात पर हरिदास जी बोले कि जब आप वहीं थे तो आपने मुझे दर्शन क्यों नहीं दिया? बाल मुकुन्द जी ने उत्तर दिया कि तुम मुझे श्री देवचन्द्र जी के यहां पधराना चाहते थे, इसलिये मैं अदृश्य हो गया था।

सो तुमको इन सरूप की, भई नहीं पहिचान।
मैं इनकी सेवा न सह सकों, ना सह सकों अहसान।।१६।।

हरिदास जी! तुम्हें अब तक श्री देवचन्द्र जी के वास्तविक स्वरूप की पहचान ही नहीं हुई है। मुझे यह कभी भी सहन नहीं होगा कि वे मेरी सेवा करें। उनके अन्दर विराजमान परब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति के कारण ही तो मैं इस समय अखण्ड लीला में हूँ, इसलिये मैं उनके एहसानों से कभी भी उऋण नहीं हो सकता।

भावार्थ– यहाँ यह संशय होता है कि पूर्व के प्रकरणों में

यह दर्शाया गया है कि मूर्तिपूजा से कोई लाभ नहीं है, क्योंकि लम्बे समय तक उमरकोट में श्री देवचन्द्र जी ने राधा कृष्ण की मूर्ति की परिक्रमा की थी, किन्तु उनकी थोड़ी भी आध्यात्मिक उन्नति नहीं हुई थी, जबकि यहां मूर्तिपूजा की सार्थकता बतायी जा रही है कि बालमुकुन्द अपनी मूर्ति की सेवा श्री देवचन्द्र जी से कराने से मना कर रहे हैं। इस प्रकार दोनों कथनों में स्पष्ट विरोधाभास झलकता है।

इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि स्थूल जड़-पूजा का त्याग किये बिना अध्यात्म के चरम को नहीं छुआ जा सकता है। इसी प्रकरण में आगे की चौपाई में यह बात आती है कि स्वयं बालमुकुन्द जी कहते हैं कि यदि श्री देवचन्द्र जी मूर्ति के न मिलने से दुःखी होते हैं, तो उन्हें बांके बिहारी के वस्त्रों की सेवा दे देना। यहाँ

ध्यान देने योग्य विशेष तथ्य यह है कि जब बालमुकुन्द जी को यह मालूम था कि श्री देवचन्द्र जी के अन्दर बांके बिहारी की आह्लादिनी शक्ति है, तो उन्होंने बांके बिहारी की मूर्ति को ही देने के लिये क्यों नहीं कहा? वस्त्रों की सेवा देने के लिये ही क्यों कहा?

इसका संक्षिप्त सा उत्तर यह है कि यद्यपि वस्त्र भी स्थूल जड़ पदार्थ ही है, किन्तु ठोस मूर्ति की अपेक्षा उसमें स्थूलता कम है। वस्त्रों से प्रेममयी भावों की अभिव्यक्ति होती है, जो अन्ततोगत्वा विरह की ओर ले जाती है तथा साक्षात्कार में सहयोगी की भूमिका निभा सकती है।

यह ध्यान योग का सर्वमान्य सिद्धान्त है कि जड़ मूर्ति के षोडशोपचार पूजने से कभी भी ध्यान-समाधि की प्राप्ति नहीं हो सकती। आगे इसी प्रकरण की चौ. ४४ में यह वर्णित है कि श्री देवचन्द्र जी को ध्यान में अपने

प्रियतम् का दर्शन होता है। यदि वे मूर्ति ले जाते तो सम्भव था कि वे भी षोडशोपचार पूजन (स्नान, श्रृंगार, भोजन, शयन, आदि कराने) में लग जाते और मार्ग से भटक जाते।

जब कुछ रंगीन कपड़ो को राष्ट्रध्वज का रूप दे दिया जाता है, तो उसका अपमान सम्पूर्ण राष्ट्र का अपमान माना जाता है। इसी प्रकार किसी सम्माननीय व्यक्ति के आगे-आगे चलने तथा उनके आसन पर स्वयं बैठ जाने से उनको कोई क्षति नहीं होती, किन्तु भावात्मक रूप से ऐसा उचित नहीं माना जाता। ठीक यही स्थिति बाल मुकुन्द जी की है। वे भावात्मक रूप से रास बिहारी एवं रासेश्वरी राधा जी के प्रति इतने श्रद्धान्वित हैं कि उनको स्वप्न में भी यह सहन नहीं है कि श्री देवचन्द्र जी उनकी मूर्ति की भी सेवा करें।

जो दिलगीर होय श्री देवचन्द्र जी, एह बात सुन के।

तो वस्तर सेवा दीजियो, तुम मोहे न दीजो इनें।।१७।।

यदि श्री देवचन्द्रजी इस बात को सुनकर दुःखी होते हैं, तो उन्हें बांके बिहारी जी के वस्त्रों की सेवा दे देना , किन्तु मेरी मूर्ति को न देना।

अब प्रभु जी तुम कहां हो, कही मैं बैठो वाही ठौर।

यों करते आंख खुल गई, भड़क उठे यों कर।।१८।।

हरिदास जी ने पूछा कि हे प्रभो! अब आप कहाँ है? बालमुकुन्द जी ने कहा कि मैं तो अपने स्थान पर पूर्ववत् बैठा हूँ। अभी यह बातचीत चल रही थी कि उनकी आँखे खुल गयी। इस प्रकार की दर्शन लीला से वे चौंक गये।

भावार्थ– इस चौपाई से यह स्पष्ट होता है कि जड़ मूर्ति कहीं गयी नहीं थी, बल्कि बालमुकुन्द जी ने अपनी शक्ति

से दृष्टि बन्ध कर दिया था, अर्थात् सिंहासन पर मूर्ति के विराजमान होने पर भी उसको देखा नहीं जा सकता था। इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "आंखे खुलने" से निद्रा में शयन करने का भाव नहीं लेना चाहिए, बल्कि यहाँ ध्यानावस्था की ओर संकेत किया गया है।

जो अन्दर आए के देखहीं, तो बालमुकुन्द बैठे सिंहासन।
फरि-फरि चरणों लगे, प्रफुल्लित हुआ मन।।१९।।

जब हरिदास जी ने निज मन्दिर में आकर देखा तो बालमुकुन्द जी को सिंहासन पर बैठे हुए देखा। उनका मन आनन्द से भर गया और वे बारम्बार अपने आराध्य के चरणों में शीश झुकाने लगे।

हरिदास जी घर से चले, देऊं खबर श्री देवचन्द्र जी को।
भई खुसाली दीदार की, मिले सामे बाजार मों।।२०।।

हरिदास जी के मन में बालमुकुन्द जी के दर्शन तथा उनके साथ होने वाली वार्ता से बहुत अधिक खुशी थी। श्री देवचन्द्र जी को इस बात की सूचना देने के लिये, वे अपने घर से चल पड़े। दोनों की भेंट बाजार में ही हो गयी।

हरिदासजी दौड़ उतावले, सीस नमाया चरन।
कही हरिदासजी कहा करत हो, हाथों उठाया तिन।।२१।।

श्री देवचन्द्र जी को दूर से ही देखकर हरिदास जी दौड़ पड़े और शीघ्रतापूर्वक उन्होंने अपना शिर श्री देवचन्द्र जी के चरणों में रख दिया। यह देखकर श्री देवचन्द्र जी भौंचक्के रह गये और उन्हें अपने हाथों से ऊपर उठाते हुए

बोले कि गुरुदेव! ऐसा अनर्थ आप क्यों कर रहे हैं?

भावार्थ– हरिदास जी को मालूम था कि श्री देवचन्द्र जी ने उनके जूठे बर्तन तक धोये हैं और उनकी हर प्रकार से सेवा की है। उन्हें जब विदित हुआ कि मेरे आराध्य (श्री कृष्ण जी) की प्राणेश्वरी श्री देवचन्द्र जी के अन्दर हैं और मैं उन्हीं से अपनी सेवा कराता रहा हूँ तो, अपने इस अपराध के प्रायश्चित के लिये, उन्होंने अपना शिर श्री देवचन्द्र जी के चरणों में रख दिया।

कह्या ए श्री देवचन्द्र जी, कहा खबर कहों मैं तुम।
कही तुमारे सरूप की, पहिचान नहीं हम।।२२।।

हरिदासजी बोले कि हे देवचन्द्र जी! इस बात को मैं आपसे कैसे कहूँ? आपके स्वरूप की वास्तविक पहचान मुझे अब तक नहीं थी।

आज दिन लगे हम सेवते, कबहूं दरस नाहीं साक्षात।

सो सरूप बालमुकुन्द जी, मोसों करी विख्यात।।२३।।

आज तक मैं युगल स्वरूप (बांके बिहारी और बाल मुकुन्द) की सेवा करता रहा हूँ, किन्तु कभी भी प्रत्यक्ष दर्शन नहीं हुआ था। सौभाग्य से आज की रात बाल मुकुन्द जी ने मुझे प्रत्यक्ष दर्शन दिया और बातें की।

सो तुमारे सरूप की, पहिचान कर दई।

तुम इनको जानत नहीं, मोहे ऐसी बात कही।।२४।।

उन्होंने मुझे आपके स्वरूप की पहचान करायी और मुझे स्पष्ट रूप से कह दिया कि हरिदास जी! आपको श्री देवचन्द्र जी के स्वरूप की जरा भी पहचान नहीं है। इनके अन्दर तो रास बिहारी श्री कृष्ण की आह्लादिनी शक्ति विराजमान है।

विशेष– तारतम ज्ञान के अभाव में बाल मुकुन्द जी को भी यह मालूम नहीं था कि रास लीला के पश्चात् अक्षरातीत का आवेश तथा श्यामा जी सहित परमधाम की आत्मायें अपने निजधाम चले गये। वे बांके बिहारी को ही अक्षरातीत मानते रहे।

और मेरी सेवा करन को, इन्हें देवो तुम जिन।
जो होय श्री देवचन्द्र जी दिलगीर, तो दीजो वस्तर सेवन।।२५।।

उन्होंने मुझसे यह बात विशेष रूप से कही कि श्री देवचन्द्र जी को कभी भी मेरी मूर्ति की सेवा नहीं देना क्योंकि मैं उनसे अपनी सेवा नहीं करवा सकता। यदि श्री देवचन्द्र जी दुःखी होते हैं, तो उन्हें बांके बिहारी जी के वस्त्रों की सेवा दे देना।

तब पूछा श्री देवचन्द्रजी, पाए बालमुकुन्द तुम।

तब कह्या हरिदासजी ने, चलो दर्सन करावें हम।।२६।।

तब श्री देवचन्द्र जी ने पूछा कि गुरुदेव! क्या बाल मुकुन्द जी की मूर्ति मिल गयी? हरिदास जी ने उत्तर दिया कि हाँ। चलिये आपको भी दर्शन कराता हूँ।

दोऊ जने बातें करते, खुसाल होय के मन।

आये हरिदास जी के घरों, मगन होय रोसन।।२७।।

इस प्रकार दोनों व्यक्ति आनन्द में भरकर बातें करते – करते मन्दिर में आये। इस समय उनके हृदय में प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था।

दोऊ जने दीदार करके, लिया प्रसाद जो इत।

सब घर के लोगों लिया, हुआ प्राप्त बखत।।२८।।

दोनों ने सिंहासन पर विराजमान बाल मुकुन्द जी का दर्शन किया और प्रीतिपूर्वक भोजन किया। इसके पश्चात् परिवार के अन्य सभी लोगों ने भी भोजन ग्रहण किया।

इन विध भोजनगर में, भई कै भांत बीतक।

ताकी एक भांत तुम सों कही, है बात बड़ी बुजरक।।२९।।

इस प्रकार भोजनगर में कई अलौकिक लीलायें घटित हुई, जिनका वर्णन मैं कहाँ तक करूँ? उनमें से केवल एक घटना का वर्णन मैंने आपसे किया है। श्री देवचन्द्र जी के स्वरूप की पहचान कराने वाली यह घटना बहुत ही महान् गरिमा वाली है।

जामा बांके बिहारी जी का, दिया सेवने को।

श्री देवचन्द्र जी सिर चढ़ाए के, ल्याए अपने घर मों।।३०।।

हरिदास जी ने श्री देवचन्द्र जी को बांके बिहारी जी के वस्त्रों की सेवा दी। श्री देवचन्द्र जी ने बहुत ही आदरपूर्वक (सिर चढ़ाकर) उसे लाकर अपने घर में पधराया।

भावार्थ– सिर चढ़ाना एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है– बहुत ही सम्मान करना। वैसे भी किसी पूज्य वस्तु को प्रायः सिर पर रखकर ही लाया जाता है।

तहां जाय एक ठौर को, बनाई नीके कर।

बासन सेज सिंहासन, तहां पधराये वस्तर।।३१।।

अपने घर में उन्होंने एक स्वच्छ स्थान का चयन किया और सिंहासन तथा सेज की व्यवस्था की। बांके बिहारी

जी के वस्त्रों को उन्होंने उस पर पधराया। उनकी सेवा के लिये अलग से स्वच्छ बर्तन आदि उन्होंने रख लिया।

लगे सेवा करने तिनकी, आप अपने अंग सों।
चौका पानी रसोई, देह पछाड़े इन मों।।३२।।

श्री देवचन्द्र जी बांके बिहारी जी के वस्त्रों की सच्चे हृदय से सेवा करने लगे। पानी लाने, सफाई करने, तथा भोग बनाने में उन्होंने अपने शरीर की सारी ऊर्जा लगा दी।

जल भर ल्यावें सिर पर, जो काहू की परछाई परे तिन पर।
तो फेर ल्यावें और जल, सेवा करें यों कर।।३३।।

वे अपने सिर पर स्वयं जल भरकर लाते थे। रास्ते में यदि किसी की छाया भी पड़ जाती थी, तो उसे अशुद्ध मानकर पुनः जल लाते थे। इस प्रकार वे अति निष्ठा के

साथ सेवा किया करते थे।

रसोई करें विवेक सों, सेवा को सब साज।
सेवा में चितवन रहे, मोको ए वस्त करनी आज।।३४।।

वे बहुत ही विचारपूर्वक अपने आराध्य का भोग तैयार करते थे। उनका ध्यान हमेशा सेवा में ही रहा करता था। सेवा की प्रत्येक वस्तु को वे सुव्यवस्थित तरीके से रखा करते थे। उनके मन में सेवा के नये-नये विचार आते रहते थे और उसके अनुसार वे निर्णय लेते थे कि मुझे अपने प्रियतम के लिये इस प्रकार की सेवा करनी है।

चावल मूंग घीऊ खाड, कर जुदा श्री राज के काज।
अपने वास्ते उतरती, जुदा बनावें साज।।३५।।

वे अपने प्राणेश्वर को भोग लगाने हेतु अलग से चावल,

मूंग, घी, खांड (गुड़), आदि रखा करते थे। स्वयं तो घर में बना हुआ सामान्य स्तर का भोजन खा लेते थे, लेकिन अपने धनी को रिझाने के लिये अच्छा सा भोग तैयार करते थे।

द्रष्टव्य– इस चौपाई के दूसरे चरण में श्री राज शब्द के प्रयोग से यह नहीं समझना चाहिये कि बांके बिहारी ही श्री राज जी हैं। बांके बिहारी जी को श्री राज जी तभी तक माना जा सकता है, जब तक उनके अन्दर श्री राज जी का आवेश था। मूल सम्बन्ध के कारण श्री देवचन्द्र जी के सामने श्री राज जी ही आयेंगे, चाहे वेश–भूषा किसी की भी (मुहम्मद साहिब, बाल कृष्ण) क्यों न हो।

और रसोई विवेक सों, करे नीके कर।

आकार को प्रवाह ज्यों, पालत हैं यों कर।।३६।।

श्री देवचन्द्र जी प्रेम भरी बुद्धिमता के साथ बहुत अच्छी तरह से धनी के लिये भोग बनाते थे। किन्तु स्वयं अपने शरीर का पालन-पोषण परिवार में बनने वाले सामान्य भोजन से ही किया करते थे।

जब इन भांत सेवा करें, लगे लीलबाई को लोग कहने।
तुम ऐसी स्त्री हो घर में, श्री देवचन्द्रजी मेहनत करे हाथों सें।।३७।।

श्री देवचन्द्र जी को अपने हाथों से चौका देते, पानी लाते, एवं भोजन बनाते देखकर आसपास के लोगों ने लीलबाई जी को ताना मारना प्रारम्भ कर दिया। वे लोग व्यंग्यात्मक शब्दों में कहने लगे कि तुम कैसी स्त्री हो कि तुम्हारे रहते श्री देवचन्द्र जी को रसोई का सारा काम स्वयं करना पड़ता है?

तुम क्यों रसोई न करो, जल क्यों न भर ल्यावो तेह।

तुम चौका क्यों न देवत, चाहिए सेवा तुमको येह।।३८।।

तुम रसोई क्यों नहीं तैयार कर देती हो? न तो तुम जल ही भरकर लाती हो और न चौका ही देती (गोबर से लीपती) हो। यह सारी सेवायें तो तुम्हें स्वयं करनी चाहिये।

तब इत लीलबाई ने, करी आय के अरज।

सब मोकों ताना मारत, करों सेवा अपनी गरज।।३९।।

इस तरह की जली-कटी बातें सुनकर जब लीलबाई के कान पक गये, तब उन्होंने आकर श्री देवचन्द्र जी से प्रार्थना की कि पड़ोस के सभी लोग मुझे ताना मारते हैं कि तुम्हारे रहते तुम्हारे पति को रसोई का सारा काम करना पड़ता है। इसलिये मैं आपकी यह सेवा लेना

चाहती हूँ।

तब श्री देवचन्द्र जी ऐं कह्या, नाहीं तेरो ए काम।
कबहूं तेरो चित दुखायगो, जल भरते इस ठाम।।४०।।

तब श्री देवचन्द्र जी ने अपनी धर्मपत्नी को समझाते हुए कहा कि मेरे आराध्य की सेवा करना तुम्हारा काम नहीं है। मुझे दूर से जल लाना पड़ता है। इस कार्य में सम्भवतः तुम्हारा मन दुःखी हो सकता है।

या और टहल करते दुखाय, ताको नहीं पहिचान।
तब सेवा-धरम कहाँ रह्यो, ना होय मेरे समान।।४१।।

अभी तुम्हें मेरे प्राणेश्वर के स्वरूप की पहचान नहीं हुई है, इसलिये सेवा का कोई भी कार्य करते समय यदि तुम्हारा मन दुःखी हो गया, तो सेवा धर्म कहाँ रहेगा

अर्थात् कलंकित हो जायेगा। तुम मेरी तरह से श्रद्धा भाव से सेवा नहीं कर सकोगी।

देऊँ नहीं तिस वास्ते, मैं करों अपने अंग।
है मेरो प्रेम सरूप सों, तामें होवे भंग।।४२।।

इसलिये यह सेवा मैं तुम्हें नहीं दे सकता , बल्कि मैं स्वयं करूँगा। रास बिहारी से मेरी आत्मा का अटूट प्रेम है। यदि मैं यह सेवा किसी और को देता हूँ, तो मेरी सेवा भंग होती है।

सेवा करने न दई, सब करें अपने हाथ।
हमेसा चितवन करें, रहें सेवा के साथ।।४३।।

इस प्रकार श्री देवचन्द्र जी ने अपनी धर्मपत्नी को सेवा नहीं करने दी। अपने सर्वेश्वर की सेवा वे स्वयं अपने

हाथों से करते थे। हमेशा वे अखण्ड लीला का ध्यान करते थे और सेवा में मग्न रहा करते थे।

इन भांत एक दिन, हुआ ध्यान में दरसन।
जाने हम ब्रज में गये, द्वार नन्द के रोसन।।४४।।

इस तरह एक दिन ध्यान में श्री देवचन्द्र जी को अखण्ड व्रज के दर्शन हुए। ध्यान में उन्हें ऐसा लगा जैसे वे राधिका जी हों और अखण्ड व्रज में नन्द जी के घर पहुँच गये हों।

जहां जसोदा जी बैठी थी, ऊपर मांची के।
देखे दूध उटावते, टहेल करावते एह।।४५।।

वहाँ पर माता यशोदा जी पीढ़ी के ऊपर बैठकर दूध को गर्म कर रही थीं। साथ ही साथ दूसरों से अन्य कार्य भी

करवाती जा रही थीं।

तहां आप श्री देवचन्द्र जी, ठाढ़े भये जब जाये।

कहे आई जी आवो श्री देवचन्द्र जी, मन में महा सुख पाये।।४६।।

वहाँ जाकर जब राधिका जी खड़ी हो जाती हैं, तो यशोदा जी अपने मन में बहुत अधिक आनन्दित होकर कहती हैं कि आओ राधिका।

भावार्थ– यद्यपि इस चौपाई में "श्री देवचन्द्र जी" शब्द प्रयुक्त हुआ है, किन्तु भाव में राधा जी ही लिया जायेगा, क्योंकि इस चौपाई के तीसरे चरण में "आई जी" अर्थात् सासू जी कहा गया है। स्पष्ट है कि श्री देवचन्द्र जी की सास के रूप में यशोदा जी नहीं हो सकती, क्योंकि वे पुरुष रूप वाले हैं। दूसरा, माता यशोदा द्वारा "श्री देवचन्द्र जी" का सम्बोधन उचित नहीं है। किरंतन

६४/९ में कहा गया है कि "पुरूखपणें ए दृष्ट न आवे, ए अबलापणें लीजे अंग" से स्पष्ट है कि चितवनि में पुरुष भाव लेकर कोई भी व्यक्ति योगमाया या परमधाम में नहीं जा सकता। इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि चितवनि में श्री देवचन्द्र जी जब अखण्ड व्रज में पहुँचते हैं तो मात्र राधा रूप में ही जा सकते हैं, श्री देवचन्द्र जी के रूप में नहीं। आगे की चौपाईयों में भी यही भाव लेना चाहिए।

यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि श्री लालदास जी ने अपने भावों के अनुसार आदरसूचक शब्दों में प्रायः अधिकतर स्थानों पर "श्री देवचन्द्र जी" ही प्रयोग किया है। इसी भाव को ध्यान में रखते हुए उन्होंने राधा जी की जगह भी श्री देवचन्द्र जी ही प्रयोग किया है। इसी प्रकार व्रजलीला के प्रेम भरे शब्द कन्हैया की जगह "श्री कृष्ण

जी" शब्द का प्रयोग किया गया है।

जसोदा जी कहें तुम आरोगो, श्री देवचन्द्र जी इत।
तब पूछा श्री देवचन्द्र जी ने, श्री कृष्ण जी हैं कित।।४७।।

यशोदा जी ने कहा– राधा! तुम भोजन कर लो। तब राधा जी ने पूछा– कन्हैया कहाँ है?

हैं कहां श्री कृष्ण जी, मैं करों दरसन।
कही गये बन में खेलने, कह्या है उत मेरा मन।।४८।।

वे (श्री कृष्ण जी) जहाँ भी हैं, मैं उनसे मिलना चाहती हूँ। यशोदा माता ने कहा– वन में ही कहीं खेलने गया होगा। तब राधा जी ने कहा– मेरा मन भी वहीं पर है, इसलिये मैं उनके पास जाना चाहती हूँ।

मिठाई घर में से मंगाय के, दई श्री देवचन्द्र जी के हाथ।
उहाँइ जाय के आरोगियो, दोऊ मिलके साथ।।४९।।

यशोदा जी ने घर में से मिठाई मंगाकर राधा जी के हाथों में रख दी और कहा कि इसे ले जाओ। तुम दोनों मिलकर वन में साथ-साथ खा लेना।

तहां आप श्री देवचन्द्र जी, चले तरफ जहां बन।
तहां बाल गोपाल खेलते, कहां श्री कृष्णजी पूछा तिन।।५०।।

राधिका जी (श्री देवचन्द्र जी) वन की ओर चल देती हैं। वहाँ पर बहुत से छोटे-छोटे बच्चे खेल रहे थे। राधिका जी ने उन बालकों से पूछा कि श्री कृष्ण जी कहाँ हैं?

कहा कौन श्री कृष्ण जी तुम कहो, खेले टोले टोले लड़के।
कृष्णजी नाम बहुतन का, कहा बेटा नन्द जी का जे।।५१।।

उन बालकों ने उत्तर दिया कि किस कृष्ण से मिलना है? यहाँ तो बालकों की प्रत्येक टोली में कृष्ण जी खेल रहे हैं। हमारे बीच बहुत से बालकों का नाम कृष्ण है। तब राधिका जी ने कहाँ कि नन्द के पुत्र श्री कृष्ण।

नन्द के बेटे कृष्ण जी, इहां बहुत रहत।
तुम किन को कहत हो, कहा जसोदा बेटा इत।।५२।।

बालकों ने पुनः कहा कि व्रज में बहुत से नन्द हैं , जिनके पुत्र का नाम श्री कृष्ण ही है। वे सभी यहाँ खेल रहे हैं। आप सबसे पहले यह बताइये कि किस कृष्ण से मिलना है। अन्त में राधा जी को कहना पड़ा– यशोदा पुत्र श्री कृष्ण से मिलना है।

बुलाय लिये देवचन्द्र जी, बैठाए अपने पास।

बातें लगे करने, मुख मीठे प्रेम लिये खास।।५३।।

श्री कृष्ण जी वहीं पर पास में ही खड़े थे। मुस्कराते हुए उन्होंने राधा जी को बुलाया और अपने पास बैठा लिया। वे अपने मुख से अति मधुर शब्दों के द्वारा विशेष प्रेम के साथ राधिका जी से बातें करने लगे।

इन समै इत घूंघरी, पकाई भोजन मों।

छेड़े दोऊ छटके लै रूमाल, पानी निकालने तिन सों।।५४।।

इस समय वन में सभी ग्वाल बालों ने मिलकर घूंघरी पकायी थी। अंगोछे (रूमाल) के दोनों अलग-अलग किनारों से घूंघरी को रखकर उसका पानी निकाला जा रहा था।

भावार्थ- बोलचाल की भाषा में घूंघरी को घूंघनी भी

कहते हैं। जल या दूध में गेहूं, मक्का या चने को उबालकर उसमें नमक या मीठा डालकर इसे बनाया जाता है। कहीं–कहीं इसे घी या तेल में तलकर भी बनाते हैं।

श्री देवचन्द्रजी मिठाई, जो ल्याए थे नन्द घर से।
तिनको ले आगे धरी, दई लड़को को बांटने।।५५।।

नन्द जी के घर से जो मिठाई राधिका जी लेकर आयी थीं, उसे उन्होंने उन बालकों के आगे रख दिया, जिससे वह सबमें बांट दिया जाय।

कह्या श्री कृष्ण जी ए बांट दयो, देवो हमको दो बांटे के।
दिये उन लड़कों इन्हें, दोय भाग जो इनके।।५६।।

श्री कृष्ण जी ने उन बालकों से कहा कि घूंघरी के साथ इस मिठाई को भी सबमें बांट दो तथा मुझे भी दो भाग दे

दो– एक भाग मेरे लिये तथा दूसरा राधिका के लिये।

और सामा सब के, हिस्से दिये दोय।

श्री देवचन्द्र जी आप आरोगे, फेर ध्यान से चौंके सोय।।५७।।

भोजन की वह सामग्री सभी को बाँट दी गयी। खाने की प्रत्येक सामग्री में से दो–दो भाग राधिका जी और श्री कृष्ण को दिये गये। राधिका रूप में श्री देवचन्द्र जी ने भोजन करने के लिये जैसे ही अपना हाथ पत्तल में डाला, वैसे ही उनका ध्यान टूट गया, क्योंकि हाथ पत्तल से टकरा गया था। ध्यान टूटने के बाद वे चौंक गये, कि अरे! यह मैं कैसा दृश्य देख रहा था?

भावार्थ– इस घटनाक्रम से यह विशेष शिक्षा मिलती है कि चितवनि के समय शरीर इतना स्थिर हो जाना चाहिए कि उसका आभास ही न हो। जब श्री देवचन्द्र जी के

हाथ के हिलने मात्र से ध्यान टूट जाता है और दर्शन भी बन्द हो जाता है, तो जो सुन्दरसाथ चलते–फिरते चितवनि करने की बातें करते हैं, उन्हें यह आत्म–मंथन करना चाहिए कि कहीं वे दिवास्वप्न के शिकार तो नहीं हो रहे हैं? चलते–फिरते धाम धनी के प्रेममयी भावों में डूबे रहना भावलीनता है। इसे चितवनि की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

तब इनका विचार करके, तहकीक किया मन में।
हमारा खावन्द एही है, चित्त बांधा इन सरूप से।।५८।।

दर्शन देने वाले इस स्वरूप के विषय में श्री देवचन्द्र जी ने गहन चिन्तन किया और अपने मन में यह निश्चय किया कि निश्चित रूप से यही मेरा प्रियतम है। उन्होंने अपने हृदय में इस स्वरूप को बसा लिया।

भावार्थ– मूल स्वरूप श्री राज जी का आवेश ही अलग–अलग रूपों में उन्हें दर्शन देता है। व्रज के जिस स्वरूप को उन्होंने ध्यान में देखा था, वे श्री राज जी ही थे। यद्यपि श्री देवचन्द्र जी की सुरता अखण्ड व्रज में अवश्य पहुँची, किन्तु बाल कृष्ण के रूप में श्री राज जी ने ही दर्शन दिया था, बाल मुकुन्द जी ने नहीं क्योंकि वे तो पहले ही कह चुके हैं– "मैं इनकी सेवा न सह सकूं, न सह सकूं एहसान।"

अरुगावन लगे इनको, दिल में कर विस्वास।
दिल में ए ही उपजी, ब्रजलीला की रही आस।।५९।।

श्री देवचन्द्र जी अपने हृदय में व्रज के स्वरूप के प्रति अटूट विश्वास रखकर प्रतिदिन भोग लगाते तथा उनका ध्यान करते हैं। उनके दिल में व्रजलीला के प्रति ऐसा

प्रेम उमड़ा कि उसके अतिरिक्त अन्य किसी भी वस्तु की आशा (इच्छा) नहीं रही।

कोइक दिन इन भांति सों, हुआ है गुजरान।
इन भांत कई बिध की, कहा लों कहों पहिचान।।६०।।

इस तरह से ध्यान–साधना करते हुए श्री देवचन्द्र जी ने भोजनगर में कुछ वर्ष व्यतीत किये। उनकी आध्यात्मिक अनुभूतियों की ऐसी कई घटनायें हुई, जिनके विषय में मैं कहाँ तक वर्णन करूँ?

भावार्थ– जब श्री देवचन्द्र जी बारात के पीछे–पीछे चले थे, तो उनकी उम्र लगभग १६ वर्ष ६ माह की थी। कच्छ में चार वर्ष तक खोज की तथा भोजनगर में हरिदास जी के पास ४ वर्ष व्यतीत किये। २४ वर्ष की अवस्था में वे नौतनपुरी पहुँचे। भागवत कथा २६ वर्ष की

अवस्था में वि.सं.१६६४ के बाद से सुनना प्रारम्भ किया। ऐसा "वृतान्त मुक्तावली" में वर्णित किया गया है। किन्तु "सुन्दर सागर" प्रकरण २४ में कहा गया है कि वे २६ वर्ष की उम्र में नौतनपुरी आये।

महामति कहे ए साथ जी, ए इत के कहे बयान।
श्री देवचन्द्र जी के सरूप की, नेक कहों पहिचान।।६१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यहां भोजनगर में घटित होने वाले प्रसंगों का वर्णन है। श्री देवचन्द्र जी के स्वरूप की थोड़ी सी पहचान अब आगे और वर्णन करता हूँ।

प्रकरण ।।४।। चौपाई ।।२५३।।

नौतनपुरी लीला

अब इहां से आये, बीच हलार देस।

तहां नौतनपुरी मिने, बहुत जमा भये खेस।।१।।

श्री देवचन्द्र जी भोजनगर से चलकर हलार प्रदेश नवतनपुरी नगर में आये। यहाँ उनके काफी सगे–सम्बन्धी रहा करते थे।

इत माँ बाप आये रहे, उत वल्लभी मार्ग रहे जोर।

तिन सेती रबद रहे, वे करने लगे सोर।।२।।

श्री देवचन्द्र जी के माता–पिता भी यहाँ आकर रहने लगे। यहाँ वल्लभाचार्य मत के अनुयायियों का बहुत ही अधिक प्रभाव था। उनसे श्री देवचन्द्र जी का विवाद रहा

करता था। वे लोग श्री देवचन्द्र जी का हमेशा विरोध करते रहते थे।

भावार्थ– कट्टरपन्थी तथा छूआछूत को मानने वाले वल्लभ मत वालों से श्री देवचन्द्र जी का विवाद होना स्वाभाविक ही था। यद्यपि हरिदास जी से दीक्षा लेने के कारण श्री देवचन्द्र जी भी उसी मत के थे, किन्तु उनका दृष्टिकोण साम्प्रदायिक संकुचितता से पूर्णतया परे था।

स्याम जी के देवल में, कथा कहे कान जी भट।
निस्टा ले सुनने लगे, होए वल्लभियों से खटपट।।३।।

श्याम (श्री कृष्ण जी) के मन्दिर में कान्ह जी भट्ट श्रीमद्भागवत की कथा किया करते थे। श्री देवचन्द्र जी निष्ठाबद्ध होकर कथा श्रवण के लिये वहाँ जाने लगे, किन्तु वल्लभाचार्य मत के कट्टरवादी लोगों से उनकी

झिकझिक होती रहती थी।

जलपान को तब करें, जब आहार देवें आतम।

तब आहार आकार को, देवे न करे कम।।४।।

प्रातःकाल श्रीमद्भागवत की चर्चा रूपी आत्मिक आहार लेने के पश्चात् ही वे जलपान ग्रहण करते थे। इस प्रकार वे आत्मिक आहार के बाद ही शरीर को आहार देते थे और अपने इस निष्ठा में वे किसी भी प्रकार की कमी नहीं आने देते थे।

जो कदी एक दोय स्लोक, आगे बाँचे होय तिन।

तो फेर पुस्तक मंगाय के, वे ही सुने वचन।।५।।

यदि किसी कारणवश श्री देवचन्द्र जी को थोड़ी सी देर हो जाती थी, और कान्हजी भट्ट एक-दो श्लोक भी आगे

बढ़ जाते थे, तो श्री देवचन्द्र जी उनके घर चले जाते थे और भागवत ग्रन्थ पधरवाकर पुनः उन श्लोकों को उनसे सुना करते थे।

ऐसा जान के वह भट्ट, तोलों न खोलें पुस्तक।
जोलों श्री देवचन्द्र जी ना आवहीं, और बात न करें बुजरक।।६।।

श्रीमद्भागवत् कथा के श्रवण में श्री देवचन्द्र जी की ऐसी निष्ठा देखकर कान्ह जी भट्ट तब तक कथा का प्रारम्भ नहीं करते थे, जब तक श्री देवचन्द्र जी नहीं आ जाते थे। उनके आने से पहले वे गुह्य ज्ञान की कोई विशेष बात भी नहीं करते थे।

रहे श्रोता सहर के चौधरी, और बड़े साहूकार।
सो मार्ग बल्लभी मिने, होत खटपट हमेसा बेहवार।।७।।

नौतनपुरी के बड़े–बड़े चौधरी और सेठ लोग वल्लभाचार्य मत के अनुयायी थे। कथा श्रवण के लिये वे लोग भी आया करते थे। श्री देवचन्द्र जी से उन लोगों का कुछ न कुछ विवाद बना ही रहता था।

एक दिवस भट्ट को पूछिया, तुमारा क्या इनसे रूजगार।
जब लग ए नहीं आवत, तोलों करो नहीं उच्चार।।८।।

एक दिन उन लोगों ने मिलकर कान्हजी भट्ट से पूछ ही लिया कि भट्ट जी! आपका इनसे क्या धन्धा चल रहा है कि जब तक ये नहीं आते, तब तक आप भागवत कथा का प्रारम्भ ही नहीं करते?

तब कह्या कानजी भट्ट ने, मुझे न काहू की आस।
मैं आगे बांचत स्यामजी के, सुने श्री देवचन्द्रजी खास।।९।।

उनके इस प्रकार के व्यंग्य भरे आरोप को सुनकर कान्हजी भट्ट ने कहा कि मैं किसी से कुछ भी भेंट पाने की आशा नहीं रखता। मैं तो अपने आराध्य श्री कृष्ण जी के सामने भक्तिभाव के कारण सुनाता हूँ, किसी व्यवसायिक दृष्टिकोण से नहीं। श्री देवचन्द्र जी मेरे विशेष श्रोता हैं।

मोहे प्राप्त कहिये तो तुम से, होय क्या इन गरीब सें।
पर तुम कबहूं मोहे पूछत, आगे पीछे स्लोक कहों मैं।।१०।।

मुझे धन तो आप जैसे धन्ना सेठों से ही प्राप्त हो सकता है, किन्तु मैं तो आप लोगों से कुछ मांगता नहीं। श्री देवचन्द्र जी तो गरीब परिवार से हैं। भला वे मुझे क्या धन दे सकते हैं? यदि मैं कोई भी श्लोक आगे-पीछे बोल जाता हूँ, तो आप में से ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जो

मुझसे यह पूछ सके कि आपने यह श्लोक आगे-पीछे कैसे बोल दिया?

मैं एक स्लोक आगे कहों, कब हूं ए पास न होय।

तो घरों जाय फेर पूछत, पुस्तक छोड़ावत सोय।।११।।

पर श्री देवचन्द्र जी की अनुपस्थिति में यदि मैं एक श्लोक भी आगे-पीछे बोल जाता हूँ, तो वे मेरे घर पहुँच जाते हैं तथा भागवत ग्रन्थ को पधरवाकर पुनः उसे सुनते हैं।

तिस वास्ते इन आये से, मैं करत उच्चार।

मैं काहू की आसा न करों, मेरे चाहिए न कार वेहवार।।१२।।

यही कारण है कि जब तक श्री देवचन्द्र जी नहीं आ जाते, तब तक मैं श्रीमद्भागवत कथा का प्रारम्भ नहीं

करता। भागवत की कथा सुनाना मेरा व्यवसाय नहीं है और मैं आप लोगों में से किसी भी व्यक्ति से कुछ भी चाहना नहीं रखता हूँ।

तब सब ही मोंगे रहे, बोलत नाहीं कोय।

कथा सुन घरों पीछे फिरे, रोस जो मन में होय।।१३।।

भट्ट जी की इस बात को सुनकर सभी मौन रह गये, कोई कुछ भी नहीं बोल सका। वे कथा का श्रवण करके अपने-अपने घर तो चले गये, किन्तु उनके मन में श्री देवचन्द्र जी के प्रति गहरा द्वेष पैदा हो गया।

भावार्थ- वृद्धों को अपना अतीत प्रिय होता है। वर्तमान में जहाँ उनके वर्चस्व का ह्रास हो रहा होता है, उनमें किसी प्रतिभाशाली युवा का आगमन उनके मन में कुण्ठा, द्वेष, तथा हीन भावना को जन्म देता है। श्री

देवचन्द्र जी के प्रति सेठ लोगों के वैर का यही प्रमुख कारण था।

छिद्र को ढूंढत रहे, रहे बाहिर दृस्ट अहंकार।
मार्ग को पावे नहीं, रहे रब्द को तैयार।।१४।।

धन के अहंकार में चूर–चूर ये सेठ लोग बहिर्मुखी दृष्टि वाले अर्थात् घोर कर्मकाण्डी थे। वे हमेशा श्री देवचन्द्र जी में कोई न कोई अवगुण खोजने की ही कोशिश में लगे रहते थे। वे हमेशा झगड़ा करने के लिये तैयार रहते थे, किन्तु उन्हें झगड़े का कोई बहाना (रास्ता) ही नहीं मिल पाता था।

और श्री देवचन्द्र जी को प्रन रहे, ना होय द्वादसी को भागवत।
ता दिन आप उपवास करें, आज आहार न पायो आतम इत।।१५।।

शीघ्र ही उन्हें विवाद खड़ा करने का एक अवसर भी मिल गया। श्री देवचन्द्र जी का नियम था कि वे बिना आत्मिक आहार दिये शरीर को भोजन नहीं देते थे। द्वादशी को श्रीमद्भागवत की कथा नहीं होती थी, इसलिये वे उस दिन पूरी तरह से उपवास रखते थे, क्योंकि उस दिन उनकी आत्मा को भागवत का कथा-श्रवण रूपी आहार प्राप्त नहीं हुआ था।

ए तो भांडा आहार का, क्योंकर देऊं आकार।
श्री भागवत सुने नेष्टाबंध, रहे याही को विचार।।१६।।

श्री देवचन्द्र जी का यह दृढ़ विचार था कि यह शरीर तो भोजन रखने का बर्तन मात्र है। जब आत्मा को ही आहार नहीं मिले तो इस नश्वर शरीर को आहार देने से क्या लाभ है? इसी नियम का पालन करते हुए वे निष्ठाबद्ध

होकर भागवत कथा का श्रवण करते रहे।

यह बात उन लोगों ने, सुनी अपने कान।

ए आहार एकादसी को करे, बारस उपवास रहे जान।।१७।।

जब उनके विरोधियों ने यह बात सुनी कि श्री देवचन्द्र जी एकादशी को तो भरपेट खाते हैं, तथा द्वादशी को जब भण्डारा होता है और सब लोग भोजन करते हैं, उस दिन ये पूरी तरह से उपवास करते हैं।

एह निंदा लेय के, करने लगे विचार।

अब दाव हमारा आइया, ए कैसा धर्म वेहेवार।।१८।।

श्री देवचन्द्र जी के कार्य की उन्होंने जी भरकर निन्दा की और आपस में विचार किया कि श्री देवचन्द्र जी को नतमस्तक करने का हमारे लिये अब सुनहरा अवसर है।

एकादशी को भोजन करना जहाँ अधर्म माना गया है, वही श्री देवचन्द्र जी के लिये धर्म का श्रेष्ठ आचरण है। यह कैसी विसंगति (उल्टा व्यवहार) है?

आए सभा में मिल के, पूछी कानजी भट्ट से।
ऐसा उपदेस तुम दिया, जो प्रसाद ले एकादसी में।।१९।।

वे सभी मिलकर एक साथ सभा में आए और कान्हजी भट्ट से सबने पूछा कि आपने देवचन्द्र जी को एकादशी के दिन भोजन करने का उपदेश क्यों दिया है, जबकि हमारे लिये उपवास रखने का नियम है?

करे बारस को उपवास, यह कौन सास्त्रों बताइ।
यों श्री देवचन्द्र जी करत हैं, सो हम सों कहो समझाइ।।२०।।

यह किस ग्रन्थ में लिखा है कि द्वादशी को उपवास

किया जाय? आप हमारे इस संशय का समाधान कीजिए कि देवचन्द्र जी इस प्रकार का धर्म विरूद्ध आचरण क्यों करते हैं?

तब कान जी भट्ट नें, इन भांत दिया उत्तर।

जो वे करें सो समझ के, फेर पूछ के देऊं खबर।।२१।।

कान्हजी भट्ट ने उन्हें इस प्रकार उत्तर दिया– देवचन्द्र जी जो भी करते हैं, वे सोच–समझ कर ही करते हैं, ऐसा मेरा विश्वास है। किन्तु यदि आप लोग ऐसा कहते हैं, तो मैं उनसे पूछकर आपको बताऊंगा।

यों करते श्री देवचन्द्र जी, आये बिराजे सभा में।

कान जी भट्टें पूछिया, यों श्री देवचन्द्र जी सें।।२२।।

अभी यह बातचीत चल ही रही थी कि उसी समय श्री

देवचन्द्र जी आ गये और सभा में आकर बैठ गये। तब सबकी शंका का निवारण करने के लिये कान्ह जी भट्ट ने श्री देवचन्द्र जी से इस प्रकार पूछा।

करत बारस को उपवास, एकादसी को करत आहार।
मैं तो एह मानी नही, श्री देवचन्द्र जी करन हार।।२३।।

देवचन्द्र जी! यहाँ उपस्थित सभी लोगों का कहना है कि आप द्वादशी को उपवास रखते हैं तथा एकादशी को भोजन करते हैं, यद्यपि मैं यह नहीं मानता कि आप ऐसा करते हैं।

तब श्री देवचन्द्र जी उत्तर दियो, एही भांत हम करत।
तब सबों ने कह्या अर्थ कहो, हम समझत नाहीं इत।।२४।।

श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि यह सत्य है। मैं ऐसा

ही करता हूँ। तब सभी ने एक स्वर में कहा कि आप इसका अभिप्राय बताइये कि आप ऐसा क्यों करते हैं? आपके मन्तव्य (मानसिकता) को हम नहीं समझ पा रहे हैं कि आप ऐसा क्यों करते हैं?

पर इतना हम समझत हैं, जो श्री भागवत दरखत।
ताकी एक डारी को, कोई बिरला पहुंचत।।२५।।

किन्तु हम इतना तो समझते हैं कि भागवत रूपी वृक्ष की किसी डाल तक कोई विरला ही पहुँच पाता है, अर्थात् भागवत के जो १२ स्कन्ध हैं, वे डाल रूप हैं, उनमें से किसी एक स्कन्ध का भी यथार्थ ज्ञान किसी-किसी को ही हो पाता है।

पर तुम पात पात की रग में, है दरखत विस्तार।

तहां तुम सब में फिरवले, ऐसो औरन को नही विचार।।२६।।

आप तो सम्पूर्ण भागवत रूपी वृक्ष के एक-एक पत्ते की रग-रग में विचरण करने वाले हैं। भला दूसरों में आप की तरह श्रेष्ठ विचार कहाँ से आ सकते हैं?

भावार्थ- वल्लभाचार्य मत के विरोधी लोगों ने यह कथन व्यंग्यपूर्वक कहा है। वृक्षों की छोटी-छोटी टहनियां (शाखायें) अध्याय हैं। पत्तियां श्लोक रूपिणी हैं और उनकी रग-रग की शब्द से उपमा दी गयी है। विपक्षियों का व्यंग्य है कि श्री देवचन्द्र जी श्रीमद्भागवत् के एक-एक शब्द की व्याख्या करने का सामर्थ्य रखते हैं।

कह्या ए तो तुम कहत हो, सास्त्रों के वचन।

ताको सांच जान के, लेत हैं समझाए मन।।२७।।

पुनः वे लोग भट्ट जी को सम्बोधित करके कहने लगे– आप धर्मग्रन्थों के उद्धरण देकर हमें चर्चा सुनाते हैं, जिसे हम अक्षरशः सत्य मानते हैं और अपने मन को समझा लेते हैं कि चलो, जो कुछ भी भट्ट जी कह रहे हैं, वह सब सत्य है।

भावार्थ– विरोध करने वालों का आशय यह था कि भट्ट जी दो प्रकार का ज्ञान क्यों सुनाते हैं? यदि एकादशी व्रत की महत्ता है, तो देवचन्द्र जी उसका पालन क्यों नहीं करते और पालन न करने पर भी भट्ट जी के इतने प्रियपात्र क्यों हैं? और यदि एकादशी की कोई महत्ता नहीं है, तो हमें उसका पालन करने के लिये भागवत शास्त्र की दुहाई क्यों दी जाती है (कहा जाता है)?

तब श्री देवचन्द्रजी ने कही, हम लिया ऐसा पन।

है भागवत आहार आतम को, जोलों सुनने न पावे मन।।२८।।

तब श्री देवचन्द्र जी ने उत्तर दिया कि यह मैंने प्रण लिया है कि श्रीमद्भागवत की चर्चा, जो मेरी आत्मा का आहार है, जब तक मुझे सुनने को नहीं मिलेगी, तब तक मैं अपने नश्वर तन को भोजन नहीं दूँगा।

सो भागवत द्वादसी को, तुम नाहीं बांचत।

मैं तब आकार को, आहार न देवत।।२९।।

द्वादशी को यहाँ पर श्रीमद्भागवत की कथा नहीं होती है, इसलिये मैं भी अपने प्रण को पूरा करने के लिये अपने शरीर को किसी प्रकार का भोजन नहीं देता।

और एकादसी को लेत प्रसाद, ताको भेद इतना जानत।

कोट एकादसी एक सीत के, तुल्य न आवत।।३०।।

और एकादशी को यहाँ पर बहुत अधिक चर्चा होती है, इसलिये मैं उस दिन भोजन ग्रहण करता हूँ। इस का रहस्य मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि करोड़ों एकादशी के उपवास का फल परब्रह्म के प्रसाद के एक कण के समान नहीं है।

भावार्थ– नारद पंचरात्र में परब्रह्म के प्रसाद की महिमा एकादशी के मुख से स्वयं दर्शायी गयी है–

मद्व्रतं ये प्रकुर्वन्ति तेऽपि कालान्तरेषु च।

हरिप्रसाद महात्म्याद् हरिं यास्यंन्ति नान्यथा।।

व्रत तीर्थानि नियमाः क्रतवो दानदक्षिणाः।

भवन्ति पुण्य कर्माणि नाच्युतान्न समान्यहो।।

हरिभुक्त प्रसादान्नं यद्दिने नोपभुज्यते।
तद्दिनं निष्फलं पुंसां ब्राह्मणानां तु विशेषतः।।
प्रत्यहं हरिदत्तान्नं ये भजन्ति नरोत्तमाः।
तानाऽलोक्य पवितोऽहं स्याम एकादश्यपि द्विजाः।।

अर्थात् मेरा व्रत करने वाले भी कालान्तर में परमात्मा के प्रसाद के प्रताप से ही परम पद को प्राप्त हो सकते हैं, अन्य किसी प्रकार से नहीं। सभी व्रत, तीर्थ, यम-नियम, यज्ञ, दान, दक्षिणा, आदि जो भी पुण्य कर्म है, वे भी अच्युत श्री कृष्ण जी के प्रसाद के समान नहीं है। जिस दिन भी परमात्मा को भोग लगाया गया भोज्य पदार्थ ग्रहण नहीं किया जाता , उस दिन को निष्फल समझना चाहिए। ब्राह्मणों को तो विशेष रूप से समझना चाहिए। जो मनुष्य प्रतिदिन परमात्मा को निवेदित किये हुए अन्न का भोजन करते हैं, उनको देखकर मैं एकादशी

भी पवित्र हो जाती हूँ।

श्री पारब्रह्म लीला रस का, यह जो ग्रन्थ श्री भागवत।
तिनको सुन के स्वर्ग का, ए सब साधन करत।।३१।।

यह श्रीमद्भागवत ग्रन्थ परब्रह्म के द्वारा की जाने वाली, आनन्द रस से भरपूर, प्रेममयी लीला का वर्णन करने वाला है। इसको सुनकर भी यदि आप लोग स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाले एकादशी व्रत को ही सर्वोपरि मानते हैं, तो बहुत ही आश्चर्य होता है कि संसार कहाँ भटक रहा है?

भावार्थ– यद्यपि भागवत के नवम स्कन्ध के अध्याय चार में राजा अम्बरीष की कथा के द्वारा एकादशी के महत्व का वर्णन किया गया है, किन्तु इसकी अन्तिम उपलब्धि पर कोई ध्यान नहीं देता है। व्रत का तात्पर्य

होता है– किसी शुभ कार्य के लिये दृढ़ निश्चय करना। भोजन न करने को उपवास कहते हैं, व्रत नहीं। अखण्ड लीला का ध्यान जहाँ जीव को अखण्ड में पहुँचाता है, वहीं एकादशी आदि व्रत से मात्र स्वर्ग–वैकुण्ठ की प्राप्ति हो सकती है, शाश्वत मुक्ति नहीं।

तब कान जी भट्टें कह्या, देवो इनको उत्तर।

जवाब न आया काहू को, धन धन कह्या योंकर।।३२।।

तब कान जी भट्ट ने कहा– अब आप लोग देवचन्द्र जी के प्रश्नों का उत्तर दीजिये। कोई भी भला क्या उत्तर देता? उनके पास उत्तर था ही नहीं। अन्त में सभी अपनी भूल के लिये लज्जित हुए और श्री देवचन्द्र जी को धन्य–धन्य कहने लगे।

इन भांत चरचा मिने, रहत है एक रस।

नीर नयनों झरत है, जो वाणी सुने सरस।।३३।।

इस प्रकार श्री देवचन्द्र जी श्रीमद्भागवत की चर्चा में एकरस होकर डूबे रहते हैं। जब भी वे व्रज-रास की रसभरी चर्चा सुनते हैं, तो उनके नेत्रों से आँसुओं की धारा बहने लगती है।

यों चौदह वर्ष नेष्टा बंध, बचन ग्रहे सब सार।

या उपरान्त कृपा भई, ताको कहों विचार।।३४।।

इस तरह निष्ठाबद्ध होकर चर्चा सुनते-सुनते चौदह वर्ष व्यतीत हो गये। उन्होंने श्रीमद्भागवत के वचनों के सारभूत अंश व्रज-रास की लीला को ग्रहण किया। इसके पश्चात् धाम धनी की उन पर कैसे कृपा होती है, उसका वर्णन करता हूँ।

महामति कहें ए साथ जी, ए नौतनपुरी की हकीकत।

और भी आगे की कहों, भई जो बीतक इत।।३५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! नौतनपुरी में होने वाली सत्य लीला के कुछ अंशों का यह वर्णन है। इसके बाद और जो कुछ भी घटनाक्रम हुआ, उसका मैं वर्णन करता हूँ।

प्रकरण ।।५।। चौपाई ।।२८८।।

दर्शन

इस प्रकरण में अक्षरातीत परब्रह्म के द्वारा श्री देवचन्द्र जी को दर्शन दिये जाने का प्रसंग वर्णित है।

अब कहों श्री देवचन्द्रजी की, जो बात मूल बुजरक।
जो मेहर सैंयन पर, करी सुभानुल हक।।१।।

अब मैं श्री देवचन्द्रजी के द्वारा प्रियतम अक्षरातीत के दर्शन का प्रसंग वर्णित कर रहा हूँ, जिसकी महिमा अनुपम है। इसी घटना के द्वारा तारतम ज्ञान का अवतरण होता है, इसलिये यह ब्रह्मसृष्टियों पर धाम धनी की विशेष कृपा मानी जायेगी।

चौदह वर्ष नेष्टाबन्ध, सुनयो श्री भागवत जब।
आवेस लीला भई, सब नजरों आया तब।।२।।

जब श्री देवचन्द्र जी ने निष्ठाबद्ध होकर भागवत कथा का श्रवण किया, तो अक्षरातीत श्री राज जी ने अपने आवेश स्वरूप से प्रकट होकर उन्हें दर्शन दिया, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें हद से लेकर परमधाम तक का सारा दृश्य दिखायी देने लगा।

कछू कसनी भई आकार को, इन समें इस ठौर।
पर नजरों कछु न आइया, दज्जाल लड़ने लगा जोर।।३।।

इस समय नौतनपुरी में उनके शरीर को बुखार का कुछ कष्ट झेलना पड़ा। यद्यपि माया का कदम –कदम पर विरोध था, फिर भी उन्हें अपने प्रियतम अक्षरातीत के अतिरिक्त और कुछ भी दिखायी नहीं देता था।

भावार्थ– ज्वर का बिगड़ते–बिगड़ते सन्निपात जैसी अवस्था में पहुँचना ही दज्जाल का लड़ना है। बुखार के

बिगड़ जाने के बाद भी उन्होंने भागवत श्रवण की अपनी निष्ठा को टूटने नहीं दिया, अन्यथा घातक ज्वर की उस अवस्था में भला पैदल चलकर कौन श्रवण करने जाता है?

इहां ज्वर आवने लगा, एक लंघन भई दोय।
श्रवना भंग न करें, कान बांध के सुनने जायें सोय।।४।।

श्री देवचन्द्र जी को अचानक ही बुखार आने लगा, जिससे उन्होंने एक-दो दिन भोजन नहीं किया। इतना होने पर भी उन्होंने भागवत कथा में जाना बन्द नहीं किया। वे अँगोछे से अपनी दोनों कानों को बांध लेते थे और कथा-श्रवण के लिये चल पड़ते थे।

तीन चार पांच भई, ज्वर न छूटे जब।

ए तो जाय सुनने, ए सेवा न छूटे तब।।५।।

आगे भी ज्वर नहीं गया, जिससे तीन, चार, पाँच दिन और उपवास करना पड़ा। श्री देवचन्द्र जी के ऊपर ज्वर का दबदबा नहीं चला। वे पूर्ववत् कथा-श्रवण में जाते रहे और अपने आराध्य की सेवा करते रहे।

भावार्थ- आयुर्वेद के सिद्धान्त के अनुसार "सर्वे दोषाः मलाश्रयाः" अर्थात् सभी रोग विकारों (मल संग्रह) से ही होते हैं। उपवास के द्वारा शरीर की शुद्धि होने से रोग की भी निवृत्ति होती है। इसलिये श्री देवचन्द्र जी उपवास रखते थे।

यों करते दस बारह लों, लांघन भई जोर।

ए भागवत सुनन का, कछु न छूटे ठौर।।६।।

ज्वर के तीव्र होने पर दस–बारह उपवास हो गये, किन्तु श्री देवचन्द्र जी की दिनचर्या में कोई भी अन्तर नहीं पड़ा। न तो उनका भागवत सुनना छूटा और न बाँके बिहारी की सेवा।

मत्तू मेहता तबीब को, बुलाय दिखाया हाथ।
तब तबीब औषध दिया, जतन करो इन साथ।।७।।

अन्त में उनके पिता श्री मत्तू मेहता जी ने वैद्य को बुलाकर उनकी नाड़ी पहचान करायी। वैद्य ने औषधि देकर यह कहा कि इनका बुखार बिगड़ चुका है। इन्हें बहुत अधिक संयम करने (हवा आदि से बचने) की आवश्यकता है।

वाउ लगने ना देवो, जतन करो इन पर।

तब कुंअर बाई ने कहा, ए अबहीं जाये भागवत पर।।८।।

वैद्य ने श्री देवचन्द्र जी के माता-पिता से कहा कि इन्हें हवा नहीं लगनी चाहिए। आप लोग इनकी अच्छी तरह से देखभाल करें। यह सुनकर माता कुँवरबाई ने कहा कि ये तो अभी ही भागवत सुनने जायेंगे।

तब वैद औषद को, इनसे लई फेर।

इन वाउ से सनपात होय, मैं न आऊं दूजी बेर।।९।।

यह सुनकर वैद्य ने अपनी औषधि वापस ले ली और कहा कि हवा लगने से सन्निपात ज्वर हो जायेगा। ऐसी अवस्था में मैं पुनः दूसरी बार नहीं आऊँगा।

भावार्थ- सन्निपात ज्वर में मस्तिष्क में बुखार चढ़ जाता है, जिससे रोगी बड़बड़ाने लगता है। यह स्थिति

बहुत ही घातक होती है।

तब मत्तू मेहता ने कह्या, करेंगे हम जतन।
हम क्यों जाने देवेंगे, रखना है याको तन।।१०।।

तब मत्तू मेहता जी ने कहा कि वैद्य जी! आप चिन्ता न करें। हम इनकी देखभाल करेंगे। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये देखभाल आवश्यक है। हम इन्हें किसी भी स्थिति में भागवत सुनने बाहर नहीं जाने देंगे।

तब श्री देवचन्द्र जी ने कह्या, मैं न रहों क्योंए कर।
धर्म राखे ते देह है, जवाब देत यों कर।।११।।

इसके उत्तर में श्री देवचन्द्र जी ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि मैं किसी भी स्थिति में नहीं रुकूँगा। मुझे तो कथा श्रवण के लिये जाना ही होगा। मेरे लिये धर्म ही

सर्वोपरि है। यदि धर्म है तो शरीर है, अन्यथा कुछ भी नहीं।

वे जवाब यों देवहीं, देह राखे होय धरम।

इनकी मत माया मिने, आधीन रहे करम।।१२।।

मत्तू मेहता जी ने उत्तर दिया कि शरीर रहेगा, तभी तो धर्म का आचरण होगा। उनकी इस बात पर श्री देवचन्द्र जी बोल पड़े कि आपकी बुद्धि माया के अन्दर ही भटक रही है। आप मुझे कर्मों के अधीन रखना चाहते हैं।

भावार्थ– श्री देवचन्द्र जी का आशय यह है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसके शरीर की रक्षा अवश्य करेगा, क्योंकि शरीर में स्थित आत्मा अपने प्रियतम से अभिन्न होती है। इसके विपरीत उनके पिता जी का विचार था कि जब शरीर ही नहीं रहेगा, तब परमात्मा का

चिन्तन कैसे होगा? उनके लिये शरीर पहले है, धर्म या परमात्मा बाद में।

वैद तो तब उठ गया, काढ़ा पिलाया जब।

बखत हुआ सुनन का, कान मूंद लाठी ले चले तब।।१३।।

वैद्य इस बहस को कुछ देर तक सुनता रहा। बाद में आश्वस्त होकर उसने अपनी दवा से काढ़ा तैयार किया तथा श्री देवचन्द्र जी को पिलाकर अपने घर चला गया। थोड़ी देर के पश्चात् श्री देवचन्द्र जी को ऐसा लगा कि अब भागवत कथा में जाने का समय हो गया है, तो वे अपने अँगोछे से दोनों कानों को ढक (बन्द) कर लाठी लेकर चल दिए।

मत्तू मेहता कुंवर बाई, बहुतक रहे बरज।

ए कैसेहु माने नही, आतम साधन गरज।।१४।।

उनको जाते हुए देखकर माता-पिता उनको मना करने लगे, किन्तु श्री देवचन्द्र जी किसी भी तरह से नहीं माने, क्योंकि उनका एक ही लक्ष्य था- अपनी आत्मा के आधार को पा लेना।

तब घर में रुध किवाड़ दे, द्वार खड़ा मत्तू मेहता आप।

श्री देवचन्द्र जी पुकारहीं, बड़ो दुख पायो ताप।।१५।।

तब उनके पिता जी ने बलपूर्वक दरवाजे को बन्द कर दिया तथा वहीं पर खड़े हो गये, जिससे स्वयं दरवाजा खोलकर श्री देवचन्द्र जी न जा सकें। उनके इस प्रकार के व्यवहार से श्री देवचन्द्र जी मानसिक रूप से बहुत दुःखी हो गये और कहने लगे।

रे मूरखो मैं मरने का नही, मेरा देखोगे आकार।

उत मेरी आतम जायगी, और नही विचार।।१६।।

हे मूर्खों! मैं इस ज्वर से मरूँगा नहीं। यदि आप लोग मुझे रोकेंगे, तो मैं अवश्य मर जाऊँगा। मेरी आत्मा तो कथा सुनने अवश्य ही जायेगी। मेरे मन में इस समय कथा के अतिरिक्त अन्य कोई विचार नहीं है।

भावार्थ– पिता के द्वारा बलपूर्वक रोके जाने से श्री देवचन्द्र जी बहुत दुःखी हो गये थे। प्रियतम के प्रेम में परिवार को बाधक समझने के कारण ही उनके मुख से ("रे मूर्खों" जैसे) कठोर शब्द निकल गये, अन्यथा वे तो शालीनता की प्रतिमूर्ति थे।

ए क्योंए माने नही, तब गिरे पीछले पाय।

खम्मा खम्मा माता कहे, गिरे भोम भमरी खाय।।१७।।

मत्तू मेहता दरवाजा छोड़ने के लिये तैयार नहीं थे और श्री देवचन्द्र जी के लिये रुक पाना सम्भव नहीं था। अन्त में श्री देवचन्द्र जी चक्कर खाकर पिछले पायों की ओर (पीछे की ओर) जमीन पर गिर पड़े। यह देखकर माता कुँवरबाई "बचाओ! बचाओ!" कहकर रुदन करने लगी।

तब कुंवरबाई ने सोर करयो, कठिन कह खुलाए द्वार।
आकार आंखे फिर गईं, कछु न आवे विचार।।१८।।

ऐसे समय में माता कुँवरबाई के विलाप का शोर फैलने लगा। उन्होंने अपने पति को कठोर शब्द कहकर दरवाजा खुलवा दिया। श्री देवचन्द्र जी की आँखें बन्द हो चुकी थी। अब माता-पिता को कुछ भी नहीं सूझ रहा था कि ऐसे समय में क्या करें?

अहो श्री देवचन्द्र जी, यों पुकार सुनावें कान।

ए कछु न सुनत, ना सके काहू पहिचान।।१९।।

मत्तू मेहता जी श्री देवचन्द्र जी के कान में उनका नाम ले-लेकर पुकारने लगे, किन्तु श्री देवचन्द्र जी तो बेहोश थे। उन्हें न तो कानों से कुछ सुनायी पड़ रहा था और न वे किसी को पहचान ही पा रहे थे।

तुम जाओ सुनने श्री भागवत, भट्ट के बुलौआ आय।

तुम को कोई न रोकहीं, चलो पहुंचावें धाय।।२०।।

मत्तू मेहता जी अब जोर-जोर से कहने लगे थे- देवचन्द्र! भट्ट जी ने तुम्हारे लिये संदेश भिजवाया है। भागवत सुनने के लिये जाओ। अब तुम्हें कोई भी नहीं रोकेगा। चलो! मैं तुम्हें वहाँ जल्दी से पहुँचा आता हूँ।

एक आध घड़ी पीछे, कछुक भये सावचेत।

तब उठ बैठे भये, मुख होय गया सुपेत।।२१।।

लगभग आधे घण्टे बाद श्री देवचन्द्र जी को कुछ सुध हुई (बेहोशी दूर हुई)। इसके पश्चात् वे उठकर बैठ गये। उनका मुँह सफेद सा हो गया था।

भावार्थ– डेढ़ घड़ी का तात्पर्य लगभग ३३ मिनट, अर्थात् आधे घण्टे के पश्चात्।

जाय श्रवण करो श्री भागवत, कोई न बरजे तुम।

लाठी पकड़ ठाढ़े भये, कहो तो पहुंचावे हम।।२२।।

मत्तू मेहता जी ने कहा– प्रिय देवचन्द्र! अब तुम जाकर भागवत का श्रवण करो। तुम्हें कोई भी मना नहीं करेगा। या कहो तो मैं तुम्हें वहाँ तक छोड़ आऊँ। श्री देवचन्द्र जी चलने के लिए अपनी लाठी पकड़कर खड़े हो गये।

श्री देवचन्द्र जी बोले नही, चले स्याम जी मंदिर द्वार।

आय बैठे सभा मिने, सुनत श्रवन उस्तवार।।२३।।

उन्होंने अपने पिता की बातों का कोई भी उत्तर नहीं दिया और श्याम जी के मन्दिर की ओर चल पड़े। वे आकर श्रोताओं की सभा में बैठ गये तथा दृढ़ भाव से चर्चा सुनते रहे।

भावार्थ– दृढ़तापूर्वक चर्चा सुनने का भाव यह है कि उन्होंने अपने चेहरे से यह प्रकट नहीं होने दिया कि थोड़ी देर पहले उनका स्वास्थ्य बहुत अधिक बिगड़ा हुआ था।

जब भागवत सुन के, फेर के आये घर।

तबहीं चैन जो पाइया, ठाढ़ा न रह्या ज्वर।।२४।।

भागवत कथा का श्रवण करके जब वे अपने घर आये,

तो उन्हें शान्ति मिली। तब तक ज्वर भी पूरी तरह से जा चुका था।

भावार्थ– श्री देवचन्द्र जी के मन को इसलिये सन्तोष मिला, क्योंकि उनकी दृढ़ता से भागवत श्रवण की निष्ठा भंग नहीं हो पायी।

फेर इहां से पथ लिया, होय चली फुरसद।
दिन दिन चढ़ते गये, यही कसनी की हद।।२५।।

अब श्री देवचन्द्र जी स्वास्थ्य के अनुकूल भोजन (पथ्य) लेने लगे और उन्हें ज्वर से पूर्णतया छुटकारा मिल गया। दिन–प्रतिदिन उनका स्वास्थ्य सुधरता गया। उस दिन ज्वर का अति तेज हो जाना तो उनकी परीक्षा की आखिरी सीमा थी।

दिन दस पन्द्रह हुए, कथा सुनत हैं कान।

तहां आय दीदार दिया, तुमको मेरी पहिचान।।२६।।

उस दिन से १०–१५ दिन के बाद, जब वे कान्ह जी भट्ट से कथा सुन रहे थे, उसी समय अक्षरातीत श्री राज जी ने प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होकर उन्हें दर्शन दिया तथा उनसे पूछा कि क्या तुम्हें मेरी पहचान है?

भावार्थ– यह घटना संवत् १६७८ आश्विन माह के कृष्ण पक्ष में रविवार को प्रातः काल घटित हुई, जब स्वयं परब्रह्म ने अपने आवेश स्वरूप से उन्हें दर्शन दिया।

वय किसोर अति सुन्दर, सरूप खेला जो वृन्दावन।

देख श्री देवचन्द्र जी ने कह्या, जैसी गवाही दई मन।।२७।।

वह किशोरावस्था के स्वरूप में था, अति सुन्दर था

अर्थात् इतना सुन्दर था कि उससे सुन्दर कोई हो ही नहीं सकता। दर्शन देने वाला वही आवेश स्वरूप था, जिसने नित्य वृन्दावन में महारास की लीला की थी। उस स्वरूप को श्री देवचन्द्र जी मन्त्रमुग्ध होकर देखते रहे और धीरे से बोले– मेरा मन तो यही साक्षी दे रहा है कि–

भावार्थ– प्रायः भ्रान्तिवश इस चौपाई का यह अर्थ किया जाता है कि महारास की लीला करने वाले वृन्दावन बिहारी श्री कृष्ण जी ने श्री देवचन्द्र जी को दर्शन दिया।

किन्तु वास्तविक तथ्य यह है कि अक्षरातीत के जिस आवेश स्वरूप ने व्रज–रास में लीला की थी, वहीं आवेश स्वरूप परमधाम के श्रृंगार में श्री देवचन्द्र जी के समक्ष प्रकट हुआ था। इसकी साक्षी में नवरंग स्वामी कृत

"सुन्दर सागर" और "वृत्तान्त मुक्तावली" के ये कथन देखने योग्य हैं–

चरणी अंग केसरी चलकै, बागो स्वेत जड़ित रंग झलकै।
फैंटो नील पीत रंग रमकै, उपरैणी रंग आसमानी चमकै।।
पाग रंग सिंदुरिए सोहै, कोटि कोटि जोत में जोहै।
रंग में रंग अनन्त रंग रंगे, तेज में तेज उठै तरंगै।।
सोभा कहूं मैं कहां लो केती, पूरण परसोत्तम धनी सेती।
खेल्यो व्रज रास में जेही, साक्षात स्वरूप विराजै तेही।।

सुन्दर सागर प्र. २६ चौ. ६–८

मूरति किशोर सर्वज्ञ नाम, अति गौर बरन छवि तेज धाम।
बहु ज्योति पुंज बरन्यो न जाई, रहि निरखि नयन दुति में समाई।।
लखि पाग कुसुम रंग बहुत कान्ति, कटि बंध पीत अति हरित शान्ति।
निज स्वेत रंग बागो अभंग, नभरंग पिछौरी लसत संग।।

रंग काश्मीर सूथन सुदेश, इमि वस्त्र पंचकरि मूल बेस।

बहु अलंकार मनि जटित लेखि, पति दोई स्वरूप को परख देखि।।

वृत्तान्त मुक्तावली प्र. ३२ चौ. १००-१०२

ऊपर की चौपाइयों में दर्शन देने वाले स्वरूप का वही श्रृंगार वर्णित है, जो श्रीमुखवाणी में परमधाम में विराजमान श्री राज जी का है, अर्थात् सिन्दुरिया रंग की पाग, केशरिया रंग की इजार, आसमानी रंग की पिछौरी, श्वेत रंग का बागा, नीलो न पीलो बीच के रंग का पटुका।

जबकि रास ग्रन्थ में रासबिहारी का श्रृंगार अलग है-

पीड़ी ऊपर पायचा, ने झीणी कुरली झलवार।

केसरिए रंग सूथनी, इन्द्रावती निरखे करार।।

रास ८/१०

पीली पटोली पेहेरी एक जुगते, मांहें विविध पेरे जड़ाव।
जीव तणुं जीवन ज्यारे जोइए, त्यारे नव मुकाय लगार।।

रास ८/१३

रंग सेंदुरिए पछेड़ी, अने मांहें कसवनी भांत।
छेड़े तार ने कसवी कोरे, इंद्रावती जुए करी खांत।।

रास ८/२१

अर्थात् रास बिहारी के श्रृंगार में केशरिया रंग की सूथनी है, जिसके पायचे में बारीक चुन्नटें झलक रही हैं। उन्होंने पीले रंग की पटोली पहन रखी है। सिन्दुरिया रंग की पिछौरी है, जिसमें तरह-तरह की कढ़ाई की गयी है। इस प्रकार पिछौरी के रंग में भी अन्तर दिखायी दे रहा है।

इसके अतिरिक्त "मस्तक मुकट सोहामणो" रास ८/३७ का कथन यही दर्शाता है कि उनके सिर पर पाग नहीं बल्कि सुन्दर मुकुट है। श्री राज जी के घुंघराले

बालों के स्थान पर रासबिहारी के बालों की चोटी गूंथी है–

बेण गूंथी एक नवल भांत नी, गोफणड़े विविध जड़ाव।
रास ८/४३

इस प्रकार का भेद स्पष्ट करता है कि श्री देवचन्द्र जी को दर्शन देने वाला स्वरूप परमधाम के श्रृंगार में था, रास के श्रृंगार में नहीं।

बीतक प्र. ७ चौ. ७ में कहा गया है कि "चालीस बरस की उमर में, हकें दिया दीदार।" हक का अर्थ क्या होता है– अक्षरातीत या बाँके बिहारी?

जब प्रकटवाणी में स्पष्ट कहा गया है कि "पिया किए अति प्रसन्न, तीन बेर दिये दरसन", तो तीसरी बार दर्शन देने वाला स्वरूप कौन है? श्यामा जी के प्रियतम अक्षरातीत हैं या वर्तमान में रासबिहारी का वह नूरी तन

जिसमें धनी का जोश–आवेश नहीं है? "कछु इन विध कियो रास, खेल फिरे घर। खेल देखन के कारने, आइयां उमेदा कर।।" प्रकास हिन्दुस्तानी १/१ का कथन यही संकेत कर रहा है।

श्री देवचन्द्र जी तथा श्री राज जी की वार्ता यही सिद्ध करती है कि दर्शन देने वाला स्वरूप परमधाम का है। जब प्रकाश हि. की पहली चौपाई से यह सिद्ध होता है कि श्यामा जी सहित सभी सखियां परमधाम से खेल में आयी हैं तो उन्हें दर्शन देने वाला स्वरूप रासमण्डल से कैसे हो सकता है? रास का नूरी तन परमधाम के प्रेम–संवाद का वर्णन कैसे कर सकता है? सभी आत्माओं को जगाने का निर्देश परमधाम का ही स्वरूप कर सकता है, रास का नहीं।

उपरोक्त विवेचना से यही निष्कर्ष निकलता है कि

पूर्णब्रह्म अक्षरातीत के जिस आवेश स्वरूप ने व्रज में ११ वर्ष ५२ दिन तक लीला की, महारास की लीला की, उसी ने श्री देवचन्द्र जी को तीन बार दर्शन दिया– १. मुहम्मद साहिब के रूप में, २. व्रज बिहारी के रूप में, और ३. परमधाम के श्रृंगार में।

यह विशेष ध्यान देने योग्य तथ्य है कि जब श्री देवचन्द्र जी और श्री राज जी में वार्ता चल रही थी, उस समय अन्य किसी को उनकी आवाज सुनायी नहीं पड़ रही थी तथा अन्य किसी को भी श्री राज जी का दर्शन नहीं हो रहा था। यह धाम धनी की अपनी लीला थी, जिसका रहस्य मात्र भुक्तभोगी ही जान सकता है, अन्य नहीं।

तुम हमारे खावन्द, एता जानत हैं हम।

आप को पहिचानत हो, कौन कहां से आये तुम।।२८।।

आप ही मेरे प्रियतम हैं। बस मुझे केवल इतना ही पता है। श्री राज जी पूछते हैं कि क्या तुम स्वयं को पहचानते हो कि तुम कौन हो और कहाँ से आये हो?

इतना हम जानत हैं, जो धनी हमारे तुम।
कह्या तुम एता ही जानत, अब बतावें हम।।२९।।

श्री देवचन्द्र जी उत्तर देते हैं कि मुझे केवल इतना ही पता है कि आप मेरी आत्मा के प्रियतम हैं। यह सुनकर श्री राज जी कहते हैं कि क्या तुम इतना ही जानते हो? आओ, मैं तुम्हें सारी बात बताता हूँ।

नाम तुम्हारा बाई सुन्दर, खेले तुम ब्रज रास में।
मनोरथ पूरे ना भये, ए तीसरा हुआ तिन सें।।३०।।

परमधाम में तुम्हारा नाम सुन्दरबाई (श्यामा जी) है।

व्रज और रास में तुमने मेरे साथ लीला की है, किन्तु माया का खेल देखने की तुम्हारी इच्छा पूरी न हो सकी थी, इसलिये यह तीसरा जागनी का ब्रह्माण्ड बनाया गया है।

भावार्थ– सुन्दरबाई और श्यामा जी को अलग–अलग मानना भ्रान्तिपूर्ण है। यह भी कहना उचित नहीं है कि सुन्दरबाई में श्यामा जी का आवेश है तथा इन्द्रावती जी में श्री राज जी का। ये सारी भ्रान्तियां पुराण संहिता की देन हैं।

श्रीमुखवाणी में स्पष्ट लिखा है–

यामें सुरत आई स्यामा जी की सार, मत्तू मेहता घर अवतार।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३७/६६

सुन्दरबाई इन फेरे, आए हैं साथ कारन जी।

भेजे धनिएं आवेस देय के, अब न्यारे न होए एक खिन जी।।

प्रकास हिन्दुस्तानी २/२

अब सब साथ बुलाय के, आओ अपने धाम।

धनी वे साथ कहां हैं, कह्या मैं भेजों तमाम।।३१।।

अब सब सुन्दरसाथ की आत्मा को जाग्रत करके उन्हें परमधाम लेकर आओ। यह बात सुनकर श्री देवचन्द्र जी पूछते हैं– हे धाम धनी! सब सुन्दरसाथ कहाँ पर हैं? श्री राज जी उत्तर देते हैं– तुम्हारी आत्मा पर फरामोशी का पर्दा है, इसलिए तुम्हें या अन्य किसी को भी यह नहीं मालूम है कि परमधाम की आत्मायें कहाँ –कहाँ पर किस–किस तन में हैं? इस रहस्य को एकमात्र मैं ही जानता हूँ और मैं ही उन्हें तुम्हारे पास भेजूँगा।

भावार्थ– श्री राज जी ने परमधाम की आत्माओं को जगाने के लिये श्यामा जी को जो निर्देश दिया, वह

तारतम वाणी के शब्दों में इस प्रकार है–

ल्याओ बुलाए तुम रूह अल्ला, जो रूहें मेरी आसिक।
रब्द किया प्यार वास्ते, कहियो केहेलाया हक।।

खिलवत १३/१

ए भागवत कागद तुम्हारा, सो तुम्हें खुले कलाम।
और कोई न खोल सके, ए जो खलक आम।।३२।।

इस भागवत ग्रन्थ में तुम्हारी व्रज रास की लीला का वर्णन है। इसके भेद एकमात्र तुम ही जान सकते हो। जीवसृष्टि के विद्वान कभी भी इसके गुह्य रहस्यों को नहीं जान सकते।

अब तुमहें पूछना होय, सो पूछ लेओ तुम।
फेर के ऐसी तरह से, द्रष्ट न आवें हम।।३३।।

अब तुम्हें जो कुछ पूछना हो, इसी समय पूछ लो, क्योंकि इसके बाद अब मैं पुनः तुम्हें बाह्य नेत्रों से इस तरह दिखाई नहीं दूँगा।

तब पूछा श्री देवचन्द्र जी ने, धनी कहां जाओंगे तुम।
तुम्हारे अंदर आकार में, आये के बैठें हम।।३४।।

तब श्री देवचन्द्र जी ने पूछा– हे धनी! आप कहाँ जायेंगे? श्री राज जी ने उत्तर दिया– मैं तुम्हारे धाम हृदय में विराजमान होकर तुम्हारे तन से लीला करूँगा।

तब मोको कहा पूछना, ए कहे तारतम बीज वचन।

फेर के अदृष्ट भए, प्रफुल्लित हुआ मन।।३५।।

तब श्री देवचन्द्र जी बोले– जब आप मेरे अन्दर ही विराजमान होंगे, तो मुझे पूछने की क्या आवश्यकता है? श्री राज जी एवं श्री देवचन्द्र जी के बीच में होने वाली यह वार्ता ही तारतम का बीज रूप है। यह कहकर श्री राज जी श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में विराजमान हो गये, जिससे श्री देवचन्द्र जी का मन अत्यधिक आनन्द में डूब गया।

भावार्थ– जब श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में श्री राज जी विराजमान हो गये। तब उनके मुख से एक चौपाई अवतरित हुई–

निजनाम श्री कृष्ण जी, अनादि अछरातीत।

सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहीत।।

अर्थात् जिस अक्षरातीत ने व्रज–रास में श्री कृष्ण नाम से लीला की थी, जो अनादि है और अक्षर से भी परे है, वह अपने परमधाम के सम्पूर्ण ज्ञान, शोभा, तथा आनन्द के साथ मेरे धाम हृदय में प्रकट हो गये हैं।

यह मान्यता पूर्णतया भ्रान्तिपूर्ण है कि श्याम जी के मन्दिर में श्री देवचन्द्र जी से अक्षरातीत कहते हैं कि हे श्यामा जी! मेरा नाम श्री कृष्ण है और मैं अनादि हूँ तथा अक्षर से भी परे अक्षरातीत श्री कृष्ण हूँ।

यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि यद्यपि आवेश स्वरूप से श्री राज जी ही कह रहे हैं, किन्तु श्यामा जी के द्वारा यह चौपाई कहलवायी गयी है, इसलिये इस चौपाई के तीसरे चरण में सो तो (प्रथम पुरुष) अब जाहेर भए लिखा है।

यदि श्री राज जी की ओर से कहा गया होता, तो "मैं

तो (उत्तम पुरूष) अब जाहिर भया" होता।

वस्तुतः श्री राज जी और श्री देवचन्द्र जी के बीच में जो वार्ता हुई, उसे तारतम का बीज (कारण) इसलिये कहा गया है कि उसका ही संक्षिप्त रूप एक चौपाई के रूप में श्री देवचन्द्र जी के तन से उतरा, जो कालान्तर में छः चौपाइयों के रूप में प्रकट हुआ, और उसी का विस्तार श्रीमुख (तारतम) वाणी है।

जब श्री जी दीपबन्दर पधारे तो वहाँ पर दूसरी, तीसरी, चौथी, और पाँचवीं चौपाई उतरी। उस समय "श्री देवचन्द्र जी सत्य छे" उतरा था, किन्तु जब अनूपशहर में प्रकास हिन्दुस्तानी की प्रकटवाणी का अवतरण होने लगा तो उसके स्थान पर "श्री श्यामा जी वर सत्य है" हो गया, और छठी चौपाई भी जुड़ गयी।

सनद के अवतरण के समय से "निजनाम श्री जी साहेब

जी, अनादि अक्षरातीत" का प्रचलन हो गया, क्योंकि सनद वाणी से मुस्लिम लोगों को जाग्रत करना था। इस तारतम में हिन्दू–मुस्लिम सब का परब्रह्म एक अक्षरातीत श्री जी को माना गया है। हिन्दुओं के लिये जहाँ वे "श्रीजी" हैं, कतेब परम्परा वालों के लिये वे "साहेब जी" हैं।

सनंध ४२/१६ में कहा गया है कि "कोई दूजा मरद न कहावहीं, एक मेंहेंदी पाक पूरन"। श्री प्राणनाथ जी के अतिरिक्त इस जागनी ब्रह्माण्ड में कोई दूसरा अक्षरातीत नहीं हो सकता। इस आधार पर तारतम में श्री कृष्ण जी की जगह "श्री जी साहेब जी" के नाम का उल्लेख हुआ है।

संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि परम्परा रूप में "निजनाम श्री कृष्ण जी" का तारतम मान्य है और

मंगलाचरण के रूप में प्रत्येक ग्रन्थ के प्रारम्भ में यही लिखने की परम्परा है, किन्तु तारतम वाणी के सैद्धान्तिक पक्ष को देखने से यही निर्णय निकलता है कि इस जागनी ब्रह्माण्ड में सबके परब्रह्म श्री प्राणनाथ (श्रीजी) हैं।

सुर असुर सबों के ए पति, सब पर एकै दया।
देत दीदार सबन को सांईं, जिनहूं जैसा चाह्या।।

किरन्तन ५९/७

इस विचारधारा के अनुसार "निजनाम श्री जी साहिब जी" का तारतम प्रारम्भ हुआ है। इस प्रकार दोनों तारतम प्रचलित हैं, जो अपनी-अपनी आस्था, परम्परा, और सिद्धान्त के आधार पर माने जाते हैं।

तब ही नजर सत वस्त को, जाय के पहुंची धाम।

ब्रज रास दोऊ अखण्ड, सुरत पहुंची तिस ठाम।।३६।।

श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में श्री राज जी के विराजमान होते ही उनकी आत्मिक दृष्टि परमधाम की अखण्ड शोभा को देखने लगी। उनकी आत्मा अखण्ड व्रज एवं रास की मोहिनी लीलाओं का भी रसास्वादन करने लगी।

भावार्थ– अब वे मात्र श्री देवचन्द्र जी नहीं रहे, बल्कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी या श्री निजानन्द स्वामी हो गये।

श्री भागवत सास्त्र की, सब खुल गई नजर।

विवेक सारी वस्त को, हो गई आतम फजर।।३७।।

उनके ज्ञान चक्षुओं के सामने श्रीमद्भागवत् की सभी

गुह्यतम बातों का रहस्य उजागर हो गया। इसके साथ ही उनकी आत्मा में सम्पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान का पूर्ण प्रकाश भी हो गया।

उठके आये आसन, अपने गृह विश्राम।

एह बात मैं किनको कहों, कौन माने इस ठाम।।३८।।

श्याम जी के मन्दिर से कथा का श्रवण करना छोड़कर विश्राम करने के लिये वे अपने घर आये। वे अपने मन में सोचने लगे कि यह अलौकिक ज्ञान किसे सुनाऊँ? भला इस मायावी जगत में परमधाम की बातों को कौन मानेगा?

एक ठौर कथा मिने, भाई गांगजी देत श्रवण।

जब कथा से उठते, तिन आगे कहे वचन।।३९।।

कान्ह जी भट्ट के यहाँ गांगजी भाई भागवत कथा का श्रवण करने जाया करते थे। जब वे कथा सुनकर उधर से आ रहे थे, तब इधर से धाम धनी की प्रेरणा से श्री देवचन्द्र जी भी जा रहे थे। दोनों की भेंट हुई और श्री देवचन्द्र जी ने उनको अखण्ड ज्ञान की कुछ बातें बतायीं।

राह मिने खड़े रहे, चरचा ठाढ़े करे दोय।
पानी भरने जाये पनिहारी, फेर आये खड़े देखे सोय।।४०।।

रास्ते में दोनों खड़े होकर आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा करने लगे। उस मार्ग से पानी भरने वाली पनिहारिन जा रही थी। उसने पानी भरकर लौटते समय भी यही देखा कि दोनों खड़े होकर ही चर्चा कर रहे हैं।

फेर दूसरी बेर जाये भरने, ए त्यों ही ठाढ़े कहे बचन।
तब वे आपस में बातें करे, याके पांउ न थाके मन।।४१।।

पुनः दूसरी बार पानी भरने के लिये जब जाने लगी, तो उसने उन दोनों को खड़े-खड़े चर्चा करते हुए देखा। पनिहारिन सोचने लगी कि ये लोग किस मिट्टी के बने हैं कि इतनी देर से खड़े-खड़े बातें कर रहे हैं, न तो इनके पैर थक रहे हैं और न मन?

ए चरचा के रस में, देह की न रखे खबर।
तब से पनिहारी तीसरे, कहे वचन यों कर।।४२।।

आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा के आनन्द में दोनों इतने मग्न थे कि उन्हें अपने शरीर की सुध ही नहीं थी कि वे कितनी देर से खड़े-खड़े चर्चा कर रहे हैं? जब पनिहारिन तीसरी बार उधर से गुजर रही थी तो उससे

रहा नहीं गया और बोल पड़ी।

ए भाई तुम बैठ के, क्यों न बातें करो बनाये।
कब के तुम ठाढ़े हो, हम तीन बेर फेर फेर आये।।४३।।

हे भाई! आप दोनों बैठकर क्यों नहीं बातें करते हैं? मैं इधर से तीन बार आ–जा चुकी हूँ और आप दोनों तब से खड़े–खड़े ही बातें कर रहे हैं।

तब जाय सरीर की, सुध आवे याद।
विचार कहे से दोऊ, याद करे बुनियाद।।४४।।

इस प्रकार उस पनिहारिन के टोकने पर श्री देवचन्द्र जी तथा गांगजी भाई को अपने शरीर की सुधि आयी। दोनों के द्वारा अपने विचारों का आदान–प्रदान होने लगा। अब गांगजी भाई को मूल घर परमधाम की स्मृति ताजा होने

लगी।

भावार्थ– सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी और गांगजी भाई की चर्चा का प्रसंग समाज के लिये बहुत ही प्रेरणादायी है। आजकल बड़े–बड़े कार्यक्रमों में आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा जहां नाम मात्र की होती है, वहीं पर तरह–तरह के तमाशों और फिल्मी धुनों पर बने भजनों के गायन की भरमार रहती है। यह प्रवृत्ति समाज के अधःपतन का संकेत है।

यों नित करते रहे, गांगजी भाई ने देखे वचन।
एह बात अगाध है, है कछु अलौकिक रोसन।।४५।।

इस प्रकार दोनों प्रतिदिन ही खड़े होकर बहुत देर तक आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा करते रहते। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के वचनों का जब गांगजी भाई ने विचार

किया तो उन्हें ऐसा लगा कि जैसे इनका ज्ञान सबसे अलग है और अलौकिक है। उन्हें श्री देवचन्द्र जी में असीम ज्ञान का प्रकाश दिखा।

तब गांग जी भाई ने पूछिया, हम तुम भागवत सुनते दोय।
एह प्रस्न तुम कहां से ल्यावत, तुम मोहे बताओ सोय।।४६।।

तब गांगजी भाई ने पूछा कि मैं और आप दोनों ही कान्हजी भट्ट से भागवत कथा सुना करते थे, किन्तु आप कृपा करके यह बताइये कि आप जिस प्रकार के प्रश्न मुझसे पूछते हैं, आप उन्हें कहाँ से लाते हैं? क्योंकि इन प्रश्नों का उत्तर तो कान्हजी भट्ट जानते ही नहीं हैं।

भावार्थ– श्री निजानन्द स्वामी ने गांगजी भाई से पूछा कि महाप्रलय में जब पाँच तत्व तथा तीन गुण रहेंगे ही नहीं, तो उस समय अखण्ड व्रज तथा रास का अस्तित्व

कहाँ रहेगा? इस प्रकार के प्रश्नों ने गांगजी भाई को आश्चर्य में डाल दिया था।

गांग जी भाई को जब देखिया, वस्त का पूरा पात्र।

तब कछु चले बतावते, सत बोय रज मात्र।।४७।।

सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी ने जब गांगजी भाई में अखण्ड ज्ञान की पात्रता देखी, तो उन्होंने अखण्ड ज्ञान की कुछ-कुछ बातों को धीरे-धीरे बताना प्रारम्भ किया।

तिन खुसबोय से भए, जोर जिज्ञासु जब।

तब कछु आगे चले, बीतक बताई तब।।४८।।

उस अलौकिक ज्ञान की सुगन्धि से गांगजी भाई में अत्यधिक जिज्ञासा पैदा हो गयी। तब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने आगे के कुछ और वृत्तान्त का वर्णन

किया।

फेर जनम से लेय के, आये नये नगर।

तहां लो सारी बीतक, कह चले ता ऊपर।।४९।।

पुनः सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी ने गांगजी भाई को उमरकोट में जन्म होने से लेकर कच्छ में खोज , भोजनगर की घटनाओं, तथा नवतनपुरी में आने पर घटित होने वाले सारे प्रसंगों का विधिवत् वर्णन किया।

फेर नये नगर में, ज्यों कर भया दीदार।

सो सारी बताय दई, जो मेहर परवर दिगार।।५०।।

पुनः नवतनपुरी (नवानगर, जामनगर) में किस प्रकार प्रियतम अक्षरातीत की अपार कृपा (मेहर) हुई, जिसके परिणामस्वरूप उनका प्रत्यक्ष दर्शन हुआ तथा उनसे

वार्ता हुई, उसका भी सविस्तार वर्णन उन्होंने कह सुनाया।

तब बहुत राजी भए, आवें चर्चा को घर।
तहां मण्डान होने लगा, बात पसर चली योंकर।।५१।।

यह सुनकर गांगजी भाई बहुत ही आनन्दित हुए। उन्हें श्री देवचन्द्र जी के अन्दर विराजमान धाम धनी की पहचान हो गयी। इसलिये उन्होंने श्री देवचन्द्र जी को साक्षात् अक्षरातीत माना और उन्हें आग्रहपूर्वक अपने घर ले आये और उसी भाव से सेवा करने लगे। अब गांगजी भाई के घर चर्चा सुनने के लिये लोग आने लगे। इस प्रकार सुन्दरसाथ की संख्या बढ़ती गयी और परमधाम का ज्ञान फैलता चला गया।

भावार्थ– सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से

अखण्ड व्रज–रास और परमधाम के ज्ञान की चर्चा सुनकर गांगजी भाई को उनके स्वरूप की पहचान हो गयी। इसे प्रकटवाणी में इस प्रकार व्यक्त किया गया है–

कर विचार पूछे वचन, नीके अर्थ लिए जो इन।
जब समझाई पार की बान, तब धनी की भई पहचान।।
अपने घरों लिए बुलाए, सेवा करी बोहोत चित्त ल्याए।
सनेह सों सेवा करी जो घनी, पेहेचान के अपना धाम धनी।।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३७/८०–८१

एक से सुनी दूसरे, तहां से मिला साथ।
सोई आवे दीदार को, जाके धनिए पकड़े हाथ।।५२।।

श्री गांगजी भाई के घर होने वाली चर्चा की बात एक से दूसरे तक फैलती गयी, जिसके परिणामस्वरूप

सुन्दरसाथ की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के अन्दर परब्रह्म का आवेश ही लीला कर रहा था। उनका दर्शन करने तो वही आयेगा, जिस पर साक्षात् धाम धनी की कृपा होगी।

महामति कहे ए साथ जी, ए अपनी बुनियाद।
अब तुम्हें आगे कहों, ताको करो याद।।५३।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! तारतम ज्ञान का अवतरण तथा गांगजी भाई के घर पर चर्चा होना जागनी लीला की नींव है। इसके बाद जो लीलायें हुई, उसका मैं अब वर्णन करने जा रहा हूँ। उन्हें अच्छी तरह से याद रखना।

प्रकरण ।।६।। चौपाई ।।३४१।।

संक्षिप्त जीवन वृत्त

इस छोटे से प्रकरण में सम्पूर्ण बीतक को दर्शा दिया गया है, अर्थात् इसमें तीनों स्वरूपों – सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी एवं महाराजा छत्रसाल जी– का संक्षिप्त विवरण प्राप्त हो जाता है।

साल नव सौ नब्बे मास नव, हुए रसूल को जब।
रूह अल्ला मिसल गाजियों, मोमिन उतरे तब।।१।।

मुहम्मद (सल्ल.) को अन्तर्धान (देह त्याग किये) हुए जब ९९० वर्ष और ९ माह हो गये, तब अक्षरातीत परब्रह्म की आनन्द शक्ति श्यामा जी परमधाम की आत्माओं के साथ इस नश्वर जगत में अवतरित हुईं। वे आत्मायें धर्म एवं अपने प्राणेश्वर पर सर्वस्व न्योछावर करने वाली हैं।

भावार्थ– १००० वर्षों में से ९९० वर्ष घटाने पर दस वर्ष बचते हैं, जिसमें से ९ माह कम करने पर ९ वर्ष और ३ माह शेष रहते हैं। अर्थात् दसवीं सदी के पूर्ण होने में जब सवा नौ वर्ष बाकी थे, तब श्यामा जी आत्माओं के साथ इस मायावी जगत में आयीं।

सम्वत सोलह सै अड़तीसा, आसो सुदि चौदस में।
जनम दिन श्री देवचन्द्र जी, प्रगटे इन समें।।२।।

वि.सं.१६३८ में आश्विन मास की शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी के दिन उमरकोट में श्री देवचन्द्र जी का जन्म हुआ और उनमें श्यामा जी की आत्मा ने प्रवेश किया (प्रकट या विराजमान हुई)।

देस मारवाड़ में, उमरकोट है गाम।

मत्तू मेहता कुंवरबाई, श्री देवचन्द्र प्रगटे इस ठाम।।३।।

मारवाड़ प्रान्त के उमरकोट नामक गांव में श्री देवचन्द्र जी का जन्म हुआ। उनके पिता का नाम मत्तू मेहता तथा माता का नाम कुँवरबाई था।

तहां से आए कच्छ देस में, बीच महम्मदें दिया दीदार।

पहुंचाय मजल को, किए खबरदार।।४।।

अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासाओं के समाधान के लिये श्री देवचन्द्र जी कच्छ में आये। वहाँ मार्ग में श्री राज जी ने मुहम्मद (सल्ल.) के रूप में दर्शन दिया और उन्हें गन्तव्य तक पहुँचा दिया। उन्होंने इस बात से सावधान भी कर दिया कि मैं तुमसे एक पल के लिये भी अलग नहीं हूँ।

कच्छ देस में आय के, खोज बड़ी करी।

जब भोजनगर आय पहुंचे, तब वही इलाही उतरी।।५।।

कच्छ देश में आने के पश्चात् श्री देवचन्द्र जी ने बहुत अधिक खोज की। जब वे भोजनगर पहुँचे तो उन्हें अखण्ड की सम्पदा प्राप्त हुई, अर्थात् अखण्ड व्रज में उनकी सुरता पहुँची तथा बाल कृष्ण के रूप में उन्होंने अपने धाम धनी को देखा।

हरवंस जी हरिदास के, रहे कोइक दिन।

ता पीछे नौतनपुरी, सुना भागवत होय मगन।।६।।

हित हरिवंश हरिदास जी के यहाँ कुछ समय तक रहे। उसके पश्चात् नवतनपुरी आये, जहाँ उन्होंने कान्हजी भट्ट से मग्न होकर भागवत कथा का श्रवण किया।

चौदह वर्ष लों नेष्टाबंध, बचन ग्रहे सब सार।

चालीस वर्ष की उमर में, हकें दिया दीदार।।७।।

चौदह वर्ष तक उन्होंने निष्ठावद्ध होकर भागवत के वचनों का सार तत्व ग्रहण किया। जब उनकी उम्र ४० वर्ष की हो गयी तो साक्षात् पूर्ण ब्रह्म अक्षरातीत श्री राज जी ने उन्हें श्याम जी के मन्दिर में दर्शन दिया।

सुनत भागवत देहुरे, तहां कहा तारतम।

तुम आये हो अरस से, जगाओ अपनी आतम।।८।।

श्री देवचन्द्र जी जब श्याम जी के मन्दिर में भागवत कथा का श्रवण कर रहे थे, तब धाम धनी ने उन्हें दर्शन दिया, और अपनी पहचान बताने के पश्चात् उनके धाम हृदय में विराजमान होकर उनके मुख से तारतम ज्ञान की एक चौपाई कहलवायी। श्री राज जी ने उन्हें बताया कि

तुम परमधाम से आये हो, इसलिये अपनी आत्मा को जाग्रत करो।

द्रष्टव्य– तारतम का तात्पर्य केवल एक चौपाई से ही नहीं लेना चाहिए, बल्कि धनी की पहचान को ही यथार्थ रूप से तारतम मानना चाहिए।

तुम आए ब्रज रास में, फेर तुम आए इत।
रही खेल देखन की, तुमको इच्छा तित।।९।।

पहले तुम व्रज–रास में आये थे। उसके पश्चात् तुम पुनः इस जागनी ब्रह्माण्ड में आए हो। तुम्हारे अन्दर माया का खेल देखने की कुछ इच्छा बाकी रह गयी थी।

तिस वास्ते इंड तीसरा, रचा तुम कारण।
ए भागवत तुम को खुले, तुम ही करो रोसन।।१०।।

इसलिये जागनी का यह तीसरा ब्रह्माण्ड तुम्हारे लिये बनाना पड़ा। इस भागवत ग्रन्थ के वास्तविक रहस्य केवल तुम्हें ही मालूम होंगे और एकमात्र तुम्हीं उसे प्रकाशित करोगे।

भावार्थ– परमधाम की ब्रह्मसृष्टियां श्यामा जी की अंगरूपा हैं। यदि वे अपने धाम हृदय में धनी की शोभा को बसा लेती हैं, तो उन्हें भी भागवत आदि सभी धर्मग्रन्थों के रहस्यों को जानने और उन्हें उजागर करने की शोभा प्राप्त हो सकती है।

बुलाय ल्याओ सैंयन को, अपने वतन निजधाम।
इनको इत जगाय के, पूरो मनोरथ काम।।११।।

अपने मूल घर परमधाम की बिछुड़ी हुई आत्माओं को तारतम ज्ञान के प्रकाश में बुलाकर लाओ अर्थात् एकत्रित

करो। उनकी आत्मा को जाग्रत करो, जिससे उनकी सारी इच्छायें पूर्ण हो जायें।

भावार्थ– तारतम ज्ञान के प्रकाश में परमधाम की आत्मायें अपने मूल सम्बन्ध तथा घर की पहचान कर लेती हैं। जब उनके धाम हृदय में युगल स्वरूप की छवि बस जाती है, तो वे जाग्रत हो जाती हैं तथा संसार को मात्र द्रष्टा के रूप में देखती हैं। इस प्रकार उनकी सारी इच्छायें पूर्ण हो जाती हैं, अर्थात् माया को भी देख लेती हैं और अपने प्रियतम को भी।

मोको फेर न देखोगे, इन भाँत इन नैन।
अन्दर तुम्हारे आऊंगा, पूछ लेओ अब बैन।।१२।।

जिस तरह से तुम मुझे अपने पंचभौतिक नेत्रों से देख रहे हो, उस तरह से अब पुनः नहीं देख पाओगे। इसलिये

तुम्हें जो कुछ भी पूछना हो, पूछ लो। इसके पश्चात् मैं तुम्हारे धाम हृदय में आकर विराजमान हो जाऊँगा।

हुकुम हक सुभान का, मूल श्री देवचन्द्रजी पर।

ए जो खेल देखन को, साथ धामसे आए उतर।।१३।।

अक्षरातीत श्री राज जी ने सर्वप्रथम श्री देवचन्द्र जी (श्यामा जी) को यह आदेश दिया कि माया का खेल देखने के लिये परमधाम से जो आत्मायें इस संसार में आयी हैं।

तिनको बुलावने, मैं भेजे तुम को।

खेल से जगाय के, प्यार करो इन सों।।१४।।

उन्हें जगाकर परमधाम लाने के लिये ही मैंने तुम्हें भेजा है। उन्हें माया की नींद से जाग्रत करो और उनसे

आत्मिक दृष्टि से प्रेम करो।

सम्वत सौलह सै अड़तीसे, आसो सुदि चतुर्दसी के दिन।
प्रगटे देस मारवाड़ में, गांव उमरकोट उतपन।।१५।।

इस कार्य को पूर्ण करने के लिये, सम्वत् १६३८ में जब आश्विन मास था, शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी के दिन, मारवाड़ प्रान्त के उमरकोट ग्राम में श्री देवचन्द्र जी का जन्म हुआ, जिनके तन में श्री श्यामा जी का प्रकटन हुआ।

सम्वत सत्रह सै बारोत्तरे, भादो मास उजाला पख।
चतुर्दसी बुधवारी भई, हुए धनी अलख।।१६।।

संवत् १७१२ के भादों मास में शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को जब बुधवार का दिन था, उस समय धाम धनी ने श्री देवचन्द्र जी के तन का परित्याग कर दिया, अर्थात् सद्गुरु

धनी श्री देवचन्द्र जी का धाम गमन हो गया।

बरस चौहत्तर में, न्यून भया एक मास।

तब सौंप चले श्री मेहेराज को, उमत खासल खास।।१७।।

सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की उम्र ७४ वर्ष में १ माह कम, अर्थात् ७३ वर्ष ११ माह की हुई। अपने अन्तर्धान से पूर्व उन्होंने ब्रह्मसृष्टियों की जागनी का सारा उत्तरदायित्व श्री मिहिरराज जी को सौंप दिया।

सम्वत सोलह सै पचोतरा, भादो वदि चौदस नाम।

पहर दिन चढ़ते बार रवि, प्रगटे धनी श्री धाम।।१८।।

वि.सं. १६७५ के भादो मास में कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को रविवार का वह स्वर्णिम दिन था, जब प्रहर दिन चढ़ते अर्थात् प्रातः ९ बजे श्री मिहिरराज जी का जन्म

हुआ। इसी तन में विराजमान होकर पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द ने लीला की।

सम्वत सत्रह सै इक्यावना, सावन वदि चौथ में।
रात पीछली घड़ी दोय में, आया फिरस्ता धाम सें।।१९।।

जब वि.सं.१७५१ चल रहा था, श्रावण मास में कृष्ण पक्ष की चतुर्थी थी, पिछली रात में दो घड़ी बाकी थी, उस समय परमधाम से फरिश्ता आया, अर्थात् मूल स्वरूप श्री राज जी की ओर से श्री महामति जी के तन से होने वाली लीला को छिपा देने (अन्तर्धान होने) का आदेश आया।

तीज भई रात घड़ी चौद लों, उपरान्त चौथ भई जब।
दोय घड़ी रात बाकी रही, समय अन्तर्ध्यान को तब।।२०।।

तृतीया (तीज) की रात व्यतीत हो रही थी। उसमें अर्धरात्रि के बाद १४ घड़ी भी व्यतीत हो गयी थी। चतुर्थी (चौथ) के प्रारम्भ होने में तृतीया की रात्रि की मात्र दो घड़ी शेष थी, वही समय श्री जी के अन्तर्धान का था।

भावार्थ– एक दिन (२४ घण्टे) में ८ प्रहर या ६४ घड़ी का समय होता है। एक घड़ी में साढ़े बाइस मिनट होते हैं। इस प्रकार दिन के १२ घण्टों में ४ प्रहर या ३२ घड़ी और रात्रि के १२ घण्टों में ४ प्रहर या ३२ घड़ी का समय होता है। जब तृतीया की रात्रि के समाप्त होने में मात्र २ घड़ी का समय बाकी था, अर्थात् आधी रात से पहले की १६ घड़ी और उसके बाद की १४ घड़ी व्यतीत हो चुकी थी, उस समय आधुनिक गणना के अनुसार प्रातः सवा पाँच बजे का समय था, जब श्री

महामति का अन्तर्धान हुआ, अर्थात् श्री महामति जी समाधि की उस गहन अवस्था में चले गये जिसमें शरीर पूर्णतया जड़ हो जाता है, और ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे मरणासन्न अवस्था हो गयी हो।

वस्तुतः प्रकृति की मर्यादा को निभाने के लिये ही श्री जी ने ऐसी लीला की, अन्यथा यदि उनका देह त्याग हो गया होता, तो छत्रशाल जी का हाथ पकड़ कर आत्महत्या करने से कौन रोकता? यह बात इसी प्रकरण की २४वीं चौपाई में दर्शायी गयी है। पुनः १ वर्ष तक सभी को प्रत्यक्ष दर्शन देकर कौन बातें करता? किन्तु सुन्दरसाथ को लीला रूप में भी श्री जी से अलग हो पाना असह्य था, इसलिये बहुत से सुन्दरसाथ ने विरह में अपना तन छोड़ दिया।

बार था इत सुकर, रहे इत एक दिन।

ता पीछे मन्दिर मिने, पधराए मोमिन।।२१।।

चतुर्थी को शुक्रवार का दिन था। श्री महामति जी उसी तरह समाधिस्थ अवस्था में बैठे रहे। उसके पश्चात् पंचमी को श्री गुम्मट जी मन्दिर के तहखाने में स्थित झूले के सिंहासन पर श्री महामति जी को ब्रह्ममुनियों ने पधराया।

भावार्थ– महाराजा छत्रशाल जी शुक्रवार (चतुर्थी) को ही श्री जी के दर्शनार्थ पधारे। पंचमी को श्री महामति जी समाधि अवस्था में झूले के सिंहासन पर विराजमान हो गये, और ऊपर श्री जी की प्रेरणा से तारतम वाणी को उनका वाङ्मय कलेवर मानकर पधराया और सेवा–पूजा प्रारम्भ की गयी।

बरस छेहत्तर में, कम दो मास दस दिन।

देखा खेल यहाँ लों, फिरे तरफ वतन।।२२।।

श्री महामति जी की आत्मा ने श्री मिहिरराज जी के तन से ७६ वर्ष में २ मास और १० दिन कम, अर्थात् ७५ वर्ष ९ माह और २० दिन, तक इस खेल को देखा। इसके पश्चात् अपनी सुरता परमधाम की ओर कर ली।

साथ सौंप्या आप श्री राज को, जाहिर में श्री महाराज।

अब हम फिरत धाम को, तुम रहो सावचेत आज।।२३।।

श्री महामति जी ने सुन्दरसाथ की जागनी का उत्तरदायित्व गुह्य (बातिन) रूप से धाम धनी को सौंप दिया और बाह्य रूप से महाराजा छत्रसाल जी को। उन्होंने सुन्दरसाथ को कह दिया कि अब मेरी आत्मा परमधाम में डूबी रहना चाहती है, इसलिये आप सभी

माया से सावधान होकर धनी के प्रेम में डूबे रहना।

भावार्थ– यह संशय होता है कि जब क.हि. २३/२९ में स्पष्ट कहा गया है कि "पौढ़े भेले जागसी भेले", तो यहाँ श्री महामति जी के द्वारा क्यों कहा गया है कि मैं केवल परमधाम की ओर ही रहना चाहती हूँ। इससे पूर्व की चौपाई के चौथे चरण में भी कहा गया है कि "फिरे तरफ वतन।" इसका क्या आशय है?

वस्तुतः जाग्रत आत्मा धनी के अतिरिक्त संसार को नहीं देखना चाहती। श्रृंगार ११/२० में कहा गया है–

जिन देख्या हक हैड़ा, क्यों नजर फेरे तरफ और।

वाको उसी सूरत बिना, आग लगे सब ठौर।।

इस प्रकार वह केवल धाम धनी एवं परमधाम को ही देखते रहना चाहती है। जीव के सूक्ष्म शरीर पर विराजमान आत्मा, स्थूल शरीर से सम्बन्ध टूट जाने के

बाद, अपने धाम हृदय में परमधाम का सारा सुख लेती रहती है। वैसे तो यह निर्विवाद सत्य है कि परात्म में सबकी जागनी एक साथ ही होगी, किन्तु इस खेल में आत्मा जाग्रत होकर जब संसार से सम्बन्ध तोड़कर केवल परमधाम की ओर ही दृष्टि बनाये रखती है, तो इसे धाम की ओर लौटना या फिरना कहते हैं। मूल स्वरूप श्री राज जी ने श्री महामति जी को जागनी का उत्तरदायित्व दे रखा है। "सारों के सुख कारने, तूं जाहेर हुई महामत" क.हि. ९/३८ का यह कथन यही संकेत करता है।

उस तन की लीला के पूर्ण होने के बाद श्री इन्द्रावती जी का कहना यह है कि हे धाम धनी! आपके आदेश को शिरोधार्य करके, मैंने अपनी सेवा पूरी कर दी है। आगे अन्य तनों से आप अपनी इच्छानुसार सेवा लीजिए।

जागनी ब्रह्माण्ड में श्री महामति जी को ही अक्षरातीत कहलाने की शोभा मिली है तथा जागनी का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व भी श्री महामति जी का ही है, किन्तु बाह्य रूप से श्री महामति जी ने ऐसी भावना व्यक्त की है। इसी प्रकार जागनी लीला को बाह्य रूप से संचालित किये रहने की प्रथम सेवा महाराजा छत्रशाल जी को दी गयी है, जिसे इस चौपाई में "जाहिर में श्री महाराज" कहा गया है।

महाराज जी सों कहा, मैं देखत हों एक तुम।
तिस वास्ते सेवा साथ की, सौंप चलत हैं हम।।२४।।

श्री जी ने महाराजा छत्रशाल जी से कहा कि समस्त सुन्दरसाथ के बीच में जागनी के उत्तरदायित्व को यथार्थ रूप से संभालने वाला एकमात्र आपको ही देख रहा हूँ।

इसलिये मैं सुन्दरसाथ की जागनी की सेवा का भार आपको सौंपता हूँ।

भावार्थ– इस चौपाई का कथन उस समय का है, जब चतुर्थी (चौथ) के दिन लीला रूप में श्री महामति जी का अन्तर्धान हो चुका है। विरह में अनेकों सुन्दरसाथ ने भी अपना तन छोड़ दिया है। छत्रशाल जी आकर जब पुकारते हैं, तो श्री जी के न बोलने पर वे अपनी तलवार निकाल लेते हैं। जैसे ही वे स्वयं आत्मघात् करना चाहते हैं, वैसे ही श्री जी उनका हाथ पकड़ लेते हैं तथा केन नदी से पार कराने का वृत्तान्त बताते हुए जागनी का भार उनको सौंप देते हैं, और पुनः ध्यानावस्थित हो जाते हैं। जिन सुन्दरसाथ में श्री जी का धाम गमन मानने की प्रवृत्ति है, उन्हें इस पर चिन्तन करना चाहिए। श्रद्धा, समर्पण, सेवा, और आस्था के क्षेत्र में महाराजा छत्रशाल

अनुपम हैं और उन्हें "अमीरूल मोमिनीन" (सर्वोपरि ब्रह्ममुनि) की शोभा भी प्राप्त है, इसलिये श्री जी ने जागनी का भार उन्ही के कन्धों पर डाला।

अब हुकुमें द्वारा खोलिया, लिया अपने हाथ हुकुम।
दिल मोमिन के आयके, अरस कर बैठे खसम।।२५।।

अब धाम धनी ने तारतम वाणी के द्वारा परमधाम के प्रेम का द्वार खोल दिया है, और श्री महामति जी को जो हुक्म दिया था, उसे अपने हाथ में ले लिया है। उन्होंने ब्रह्मसृष्टियों के हृदय को अपना धाम बनाया है और उसमें आकर विराजमान हो गये हैं।

भावार्थ– ब्रह्मवाणी के अवतरण से सुन्दरसाथ को अपने धाम हृदय में अपने प्राणेश्वर को बसाने का मार्ग प्राप्त हो गया। साथ ही धनी के दिल में डूबकर एकत्व प्राप्त करने

की स्थिति भी प्राप्त हो गयी। श्री महामति जी के तन से यही प्रमुख कार्य कराना था। यहाँ इसे ही धनी का हुक्म कहा गया है। इसके पश्चात सुन्दरसाथ को वह मार्ग प्राप्त हो गया, जिस पर चलकर अध्यात्म जगत के शिखर पर पहुँचा जाता है। इसे ही अपने हाथ में हुक्म लेना कहा जाता है।

अब साथ अगले और बीचके, और आखर की बीतक।
सो अब जाहिर होत है, कहावत हुकम हक।।२६।।

अब श्री राज जी के आदेश से उन सुन्दरसाथ का सम्पूर्ण घटनाक्रम वर्णित होने जा रहा है, जो सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी और श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप से होने वाली लीला में थे, या जिन्होंने अन्तर्धान लीला के बाद समर्पण एवं त्याग की विशेष भूमिका निभायी।

भावार्थ– प्रकास हिन्दुस्तानी ३४/२० में कहा गया है–

पिछला साथ आवेगा क्यों कर, प्रकास वचन हिरदे में धर।
चरने हैं सो तो आए सही, पर पीछले साथ कारन ए बानी कही।।

इस आधार पर पिछले साथ का तात्पर्य है, अन्तर्धान लीला या छठें दिन की लीला में भाग लेने वाले सुन्दरसाथ। बीतक प्र. ८ और ९ में उन सुन्दरसाथ के नाम आये हैं, जिन्होंने श्री जी के साथ जागनी लीला का आनन्द लिया और अन्तर्धान लीला के बाद स्वयं भी शरीर को छोड़ दिया। इसी प्रकार प्र. १० तथा ११ में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी तथा श्री प्राणनाथ जी की जागनी लीला में सहभागी रहे सुन्दरसाथ के नाम दिये गये हैं। इन्हें अगले और बीच के सुन्दरसाथ कहा गया है। आगे इन सबका विशेष वर्णन होगा, अभी चार प्रकरणों में

इनका संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

प्रकरण ।।७।। चौपाई ।।३६७।।

अन्तर्धान और बलिदान

अब तुम सुनियो मोमिनों, देखो अपने कदम।
साथ चले जिन भांत सों, देत नसीहत आतम।।१।।

हे साथ जी! अब आप उन ब्रह्ममुनियों का प्रसंग सुनिए, जिन्होंने अपने प्रियतम के विरह में अपना शरीर छोड़ दिया। उनका यह त्याग हमें भी धनी पर न्योछावर होने की शिक्षा दे रहा है। इस लीला को देखकर हमें अपने आचरण की समीक्षा करनी चाहिए।

भावार्थ– इस सम्बन्ध में छोटा कयामतनामा १/४५ की यह चौपाई देखने योग्य है–

देख बिछोहा हादी का, पीछा साबित राखे पिण्ड।
धिक धिक पड़ो तिन अकलें, सो नहीं वतनी अंखड।।

वर्तमान समय में हमें आत्ममन्थन की आवश्यकता है कि अन्तर्धान लीला के समय तो अनेकों सुन्दरसाथ ने अपना तन छोड़ दिया था, किन्तु हम तो जागनी लीला का सुख लेते हुए भी विषय भोगों, झूठे अहं, तथा प्रतिष्ठा के मोह को छोड़ने के लिये तैयार नहीं हैं। हमारी यही प्रवृत्ति हमें हकीकत एवं मारिफत (सत्य एवं परम सत्य) के मार्ग पर चलने से रोक रही है।

कूच किया श्री बाई जी ने, आगे श्री जी साहिब।
जीत चली सब साथ में, सब धन-धन कहें अब।।२।।

श्रीजी की अन्तर्धान लीला से पूर्व ही श्रीबाईजी (तेज कुँवरी जी) ने अपना तन छोड़ दिया और समर्पण के क्षेत्र में सबसे आगे हो गयीं। अब तो प्रत्येक सुन्दरसाथ उन्हें धन्य-धन्य कह रहा है।

भावार्थ– भारतीय संस्कृति में पतिव्रता का गौरव इसी में माना जाता है कि वह अपनी आँख से अपने प्रियतम का देह त्याग न देखे। इसी आदर्श को अपनाते हुए श्रीबाईजी ने भी अपना तन छोड़ दिया। उनके इस अपूर्व त्याग की महिमा आज भी गायी जाती है।

सम्वत सतरह सौ पचास में, बैसाख सुदि अष्टमी।
वार बुध पोहोर दिन, चढ़ते ठौर अपने जाय जमी।।३।।

वि.सं. १७५० के वैशाख मास में जब शुक्ल पक्ष की अष्टमी थी, बुधवार के दिन प्रातः काल ९ बजे के समय, श्रीबाईजी ने अपने नश्वर तन का परित्याग कर दिया तथा अपने प्राणेश्वर के चरणों में जा मिली।

सम्वत सत्र सौ इक्यावन, असाढ़ के महिने।

दिन चौथ पीछली रात में, धनी पहुंचे धाम अपने।।४।।

इसी प्रकार वि.सं. १७५१ के असाढ़ मास (सावन मास) में कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को पिछली रात में , अर्थात् तृतीया की रात्रि को, प्रातः सवा पांच बजे श्रीजी की अन्तर्धान लीला हुई।

भावार्थ– ज्योतिषीय गणना के भेद से उत्तर भारत में जब सावन का माह माना जाता है, तब गुजरात में अषाढ़ का माह होता है। इस प्रकार मूल तिथि एक निश्चित समय पर ही होती है। इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "धनी पहुंचे धाम अपने" का भाव यह है कि श्री महामति जी की आत्मा अन्तर्धान लीला के पश्चात् परमधाम की अखण्ड समाधि में लीन हो गयी , तथा उनके धाम हृदय में विराजमान युगल स्वरूप छठें दिन

की लीला में ब्रह्मसृष्टियों के धाम हृदय में शोभायमान हो गये। इस प्रकरण से पूर्व के प्रकरण की २५वीं चौपाई में कथित "दिल मोमिन के आए के, अरस कर बैठे खसम" का यही भाव है।

बार सुकर जुम्मे का, पीछली रात घड़ी दोय।
पहुंचे अर्स अजीम को, दारूल बका कह्या सोय।।५।।

उस दिन (चतुर्थी को) शुक्रवार (जुम्मा) का दिन था। उसके पूर्व तृतीया की रात्रि को व्यतीत होने में जब २ घड़ी का समय बाकी था, अर्थात् सवा ५ बजे, श्रीजी अखण्ड परमधाम पहुँचे।

भावार्थ– इस चौपाई के बाह्य शब्दों के आधार पर यह नहीं मान लेना चाहिए कि श्री प्राणनाथ जी (श्रीजी) बेहद से परे वाले परमधाम चले गये। यदि वे नूरी

परमधाम में चले गये, तो श्रीमुखवाणी के इस कथन का क्या आशय होगा–

जब मुसाफ हादी गिरो चली, पीछे दुनी रहे क्योंकर।
ए खेल किया जिन वास्ते, सो जागे अपनी सरत पर।

खुलासा २/३३

जब तक यह जगत अस्तित्व में है, तब तक यही मानना चाहिए कि ब्रह्मसृष्टियां भी हैं तथा उनके प्रियतम अक्षरातीत भी यहीं हैं।

यहाँ जिस परमधाम की बात कही गयी है, वह ब्रह्मात्माओं का दिल है। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी के ये कथन बहुत ही महत्वपूर्ण हैं–

ऊपर तले अर्स ना कह्या, अर्स कह्या मोमिन कलूब।

श्रृंगार २३/७६

अर्स तुमारा मेरा दिल है, तुम आए करो आराम।

सागर ८/१

यदि यह संशय किया जाय कि अन्तर्धान लीला से पहले क्या ब्रह्मात्माओं के धाम हृदय में धनी की बैठक नहीं थी, तो इसका समाधान यह है कि मूल सम्बन्ध से धाम धनी सबके हृदय में विराजमान थे, किन्तु तारतम ज्ञान का यथार्थ प्रकाश न होने के कारण किसी को भी उसकी अनुभूति नहीं थी। स्वयं श्री देवचन्द्र जी को भी ४० वर्ष (वि.सं. १६७८) से पहले नहीं मालूम था। यहाँ तक कि हब्से से पूर्व श्री मिहिरराज जी को भी नहीं मालूम था कि धाम धनी उनके धाम हृदय में १७१२ से ही लीला करने के लिये विराजमान हो चुके हैं। यद्यपि उनके या अन्य सभी के हृदय में धाम धनी विराजमान होने पर भी जब तक आत्मा युगल स्वरूप का दीदार नहीं कर लेती, तब तक उसकी दृष्टि संसार में ही

भटकती रहती है और उसे नींद में डूबा हुआ माना जाता है।

यद्यपि अन्तर्धान लीला के पश्चात् भी पाँचों शक्तियों के साथ युगल स्वरूप श्री महामति जी के धाम हृदय में ही विराजमान हैं। हाँ, श्री महामति जी को इस जागनी ब्रह्माण्ड में अक्षरातीत कहलाने की शोभा प्राप्त है। "नाम सिनगार शोभा सारी, मैं भेख तुमारो लियो" किरंतन ६२/१५ का कथन यही सिद्ध करता है।

किन्तु सभी के हृदय में उनके विराजमान होने की बात भावात्मक है। यद्यपि छठें दिन की लीला में अन्य किसी को भी अक्षरातीत कहलाने की शोभा नहीं मिल सकती, किन्तु हर ब्रह्मात्मा को यह अधिकार है कि वह तारतम वाणी को आत्मसात् करके प्रेम द्वारा अपने धाम हृदय में युगल स्वरूप को बसा सकती है और अध्यात्म जगत के

सर्वोच्च पद परम सत्य (मारिफत) तक पहुँच सकती है, जहाँ प्रिया–प्रियतम (आशिक–मासूक) में कोई भेद नहीं रह जाता।

जिन मोमिन को पहिचान, तिन बांधी कमर।
सोंपी आतम कदमों, हुए सब ऊपर।।६।।

जिन ब्रह्मसृष्टियों ने श्री प्राणनाथ जी को अक्षरातीत के रूप में पहचाना, उन्होंने उनके विरह में इस संसार का त्याग करने के लिये स्वयं को तैयार कर लिया, और अपनी आत्मा धनी के चरणों में सौंप दी अर्थात् तन छोड़ दिया। सुन्दरसाथ में इनकी महिमा सर्वोपरि है।

जिन ढील खिन एक न करी, सुनके पानी किया हराम।
हम पहुंचे सेवा मिनें, और न कोई काम।।७।।

ऐसे भी ब्रह्ममुनि थे, जिन्होंने श्रीजी का अन्तर्धान होना सुनकर पानी पीना भी पाप समझा और एक क्षण की देर किये बिना अपना तन छोड़ दिया। श्री लालदास जी कहते हैं कि मैं भी उस समय वहाँ था, किन्तु धाम धनी ने मुझे ऐसी सेवा में लगा रखा था कि उसे छोड़कर देह-त्याग जैसा अन्य कोई कार्य नहीं कर सका।

द्रष्टव्य- इस चौपाई में "हम" शब्द का प्रयोग निःसन्देह श्री लालदास जी के लिये ही किया गया है। यही स्थिति चौपाई ९, १२, १३ और १४ में भी है।

स्वास न खाया बीच में, छोड़ी ना साइत।
उठे धाम वतन में, ए फरदा रोज क्यामत।।८।।

उन ब्रह्ममुनियों ने धनी के विरह में सांस भी नहीं लिया तथा एक पल भी देर किए बिना अपना तन छोड़ दिया

और वे निजधाम में उठ बैठे। इस लीला को १२ वीं सदी में होने वाली कियामत कहते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई में शब्दों के बाह्य अर्थ से परात्म में जागने का भाव नहीं लेना चाहिए। वस्तुतः परात्म में सबकी जागनी तो एक साथ ही होगी, क्योंकि "पौढ़े भेले जागसी भेले" क. हि. २३/२९ का कथन यही संकेत कर रहा है।

श्रृंगार २/२,६ में कहा गया है–

हक अर्स दिल मोमिन, और अर्स हक खिलवत।
वाहेदत बीच अर्स में, है अर्स में अपार न्यामत।।

सब बातें हैं अर्स में, और अर्स में वाहेदत।
हौज जोए बाग अर्स में, अर्स में हक खिलवत।।

श्रृंगार के इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि जब आत्मा को अपने धाम हृदय में युगल स्वरूप एवं अपनी

परात्म सहित सम्पूर्ण परमधाम दिखायी देने लगता है, तो वह जाग्रत हो जाती है और उसे ऐसा अनुभव होता है कि वह केवल परमधाम में ही है, संसार तो है ही नहीं। जागनी लीला में इसे ही परमधाम में उठना अर्थात् अपनी आत्मा के धाम हृदय में परमधाम को देखना कहते हैं।

जिन सुन्दरसाथ ने श्री महामति जी के धाम हृदय में युगल स्वरूप की छवि को देखा, उन्होंने उनके विरह को सहन न कर पाने के कारण अपना तन अवश्य छोड़ दिया, किन्तु उन्हें ऐसा लगा कि जैसे वे अभी भी धनी के सम्मुख बैठे हैं, संसार तो है ही नहीं, क्योंकि उन्हें पल-पल अपने सामने श्री प्राणनाथ जी का स्वरूप नजर आ रहा था, जिनमें सब कुछ समाहित था।

हम साथ देखत रहे, जिन घेर लिया घेन।

जब आँखे खुली, ताय क्योंए ना पड़े चैन।।९।।

मैंने ऐसे भी सुन्दरसाथ को देखा, जिन्हें माया के अन्धकार ने पहले घेर रखा था और उन्हें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की वास्तविक पहचान नहीं हो सकी थी, किन्तु अन्तर्धान लीला के बाद जब उनकी आँखे खुली अर्थात् श्रीजी के स्वरूप की पहचान हुई, तो विरह में उनका भी तड़पना स्वाभाविक था, भला उन्हें चैन कैसे आ सकता था?

दरद न आया धनी का, बिछुड़ते न उड़ी अरवाहे।

साथ मिने तिनका, मुख ऊंचा होवे क्यों ताए।।१०।।

अन्तर्धान लीला में जिन्हें धनी के विरह का दुःख नहीं हुआ और जो अपनी आत्मा को उनके प्रेम में सौंप नहीं

सके (तन नहीं छोड़ सके), सुन्दरसाथ में उनका मुख भला ऊंचा कैसे हो सकता है?

जीती बाजी हार दई, ए दरद बड़ा मोमिन।
ए कहने में न आवत, बहुत भारी होसी रोसन।।११।।

ऐसे सुन्दरसाथ ने जीती हुई बाजी भी हार दी। ब्रह्मसृष्टियों के लिये धनी का वियोग बहुत ही कष्टकारी है। इसका वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता। परमधाम में जागने पर उन ब्रह्ममुनियों के प्रेम-समर्पण की बहुत अधिक गरिमा के साथ चर्चा होगी, जिन्होंने विरह में अपना तन छोड़ दिया।

भावार्थ- उपरोक्त दोनों चौपाइयों से यही निष्कर्ष निकलता है कि धनी के विरह में प्रत्येक ब्रह्मात्मा को अपना तन छोड़ देना चाहिए। किन्तु उस समय भी

लगभग २६ सुन्दरसाथ ने ही अपना तन छोड़ा। ऐसी अवस्था में क्या सबको अपराधी या पाप का भागी माना जायेगा?

सामान्यतः मृत्यु का तात्पर्य है, संसार और शरीर के प्रति मोह को समाप्त कर देना। जिसने स्थूल शरीर भले ही छोड़ दिया हो, किन्तु चित्त में वासनाओं का ढेर जमा है, वह मर जाने पर वासनामय शरीर से जीवित रहता है, किन्तु जिन्होंने स्थूल शरीर के रहते-रहते सम्पूर्ण वासनाओं का क्षय करके शरीर और संसार से मोह का बन्धन समाप्त कर दिया है, वे जीवित रहकर भी मरे हुए ही हैं। श्रृंगार २४/९५ में इसे इस प्रकार कहा गया है-

जो पेहेले आप मुरदे हुए, तो दुनियां करी मुरदार।
हक तरफ हुए जीवते, उड़ पोहोंचे नूर के पार।।

श्रीजी के चरणों की सान्निध्यता में रहने वाले प्रत्येक

ब्रह्ममुनि ने यह अवस्था प्राप्त कर ली थी। वे तो अध्यात्म की उस स्थिति में थे कि "ओ खेलत प्रेमे पार पियासों, देखन को तन सागर मांहीं" (किरंतन ९/४)।

यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि "दोऊ तन तले कदम के, आतम परआतम" (खिलवत १०/४५)। शरीर का छूटना या न छूटना मूल स्वरूप की इच्छा पर है। श्री लालदास जी ने अपना शरीर छोड़ना चाहा, लेकिन बीतक की रचना से पहले उन्हें सफलता नहीं मिली। यही स्थिति केशवदास जी की भी रही।

हाँ! इतना अवश्य है कि धनी के अन्तर्धान होने के बाद, जो सुन्दरसाथ सांसारिक तृष्णाओं के जाल में फँसे रहे, उन्हें गुनाह (पाप) अवश्य लगेगा।

ना तो सिरदार सिरोमनि, थी बेसक पहिचान।
पर आखर बखत फल समै, हाय हमें कछु न रह्या ईमान।।१२।।

अन्यथा मैं भी सुन्दरसाथ में शिरोमणि और प्रमुख कहा जाता था, श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की मुझे पूर्ण पहचान भी थी, किन्तु हाय! हाय! अन्तर्धान लीला के समय जब मुझे अपने विश्वास और प्रेम को प्रमाणित करना था, खेद के साथ कहना पड़ता है कि मेरे अन्दर कुछ भी विश्वास (ईमान) नहीं रह गया था।

भावार्थ– यह चौपाई अतिशयोक्ति (किसी बात को बहुत बढ़ाकर कहना) अलंकार में कही गयी है। श्री लालदास जी के अन्दर ईमान कम हो जाना असम्भव है, किन्तु इस प्रकार की भाषा प्रायश्चित के रूप में बोली जाती है।

निसबत हमारी ना रही, ना तो वतन हमारो श्री धाम।
तिन समे ना देखिया, सो छुड़ाया दज्जाल ने ठाम।।१३।।

यद्यपि परमधाम ही मेरा मूलघर है, फिर भी हमने ऐसा व्यवहार किया जैसे श्रीजी से हमारा कोई सम्बन्ध ही न हो। मैंने धनी से अपने मूल सम्बन्ध को नहीं देखा (निभाया)। माया के अन्धकार ने मूल सम्बन्ध के प्रेम को मुझसे अलग किए रखा।

ऐसा पसु भी ना करे, जिन माया की प्रीत।
हमसे कछू ना हुआ, कछू ना आई रीत।।१४।।

मायावी बन्धनों में बंधे हुए अज्ञानी पशु भी इतनी बड़ी भूल नहीं करते। धनी के प्रति प्रेम और समर्पण के नाम पर मैंने कुछ भी नहीं किया। मैंने परमधाम की प्रेममयी रीति का कुछ भी पालन नहीं किया।

भावार्थ– कई प्रकार के सांसारिक पशु–पक्षी हैं, जिनके जोड़े में से यदि एक का भी शरीर छूट जाता है, तो दूसरा भी उसी क्षण प्राण छोड़ देता है। श्री लालदास जी का आशय यही है कि प्रेम की दृष्टि से हम पशु–पक्षियों की झूठी प्रीति से भी बहुत पीछे रह गये।

ए रहे श्रीराज के हुकमें, और न कोई उपाय।
जान सिरोमनि क्यों रहे, पर हुकमें कछू न बसाय।।१५।।

धनी के स्वरूप की पहचान होने के बाद शिरोमणि सुन्दरसाथ (केशवदास जी, लालदास जी, छत्रसाल जी, आदि) के लिये अपने तन को विरह में रख पाना अन्य किसी भी प्रकार से सम्भव नहीं है। लेकिन श्री राज जी की इच्छा के सामने किसी का भी वश नहीं चलता। इस समय जिसका भी तन है, वह श्री राज जी के आदेश से

ही है।

कहाँ लों कहूं मैं इनकी, धिक–धिक हुआ आकार।
अब कहूं मैं तिनकी, जो संग चले साथ सिरदार।।१६।।

धनी के हुक्म से शरीर न छोड़ पाने वाले सुन्दरसाथ की मनोदशा का मैं कहाँ तक वर्णन करूँ? प्रायश्चित के रूप में अपने शरीर को धिक्कारते भर रह गये, किन्तु छोड़ न सके। अब मैं उन सुन्दरसाथ का प्रसंग वर्णन कर रहा हूँ, जिन्होंने श्रीजी के अन्तर्धान की बात सुनते ही अपने नश्वर तन को छोड़ दिया।

संकर हजूरी चले, और चले लालमन।
और नारायनदास जो, कहे खास मोमिन।।१७।।

अन्तर्धान की विरह–ज्वाला में श्रीजी के अनन्य भाव से

सेवा करने वाले श्री शंकर हजूरी, लालमन, और नारायण दास जी ने अपना तन छोड़ दिया। ये परमधाम के ब्रह्ममुनि थे।

गोदावरी और किसनी, संग दिया धनजी नें।
भए आसिक दीन इसलाम पर, धाम मेले अपने।।१८।।

गोदावरी और किसनी ने धनी के विरह में अपना शरीर छोड़ दिया। इनके साथ धनजी भाई ने भी वही राह अपनायी। ये ब्रह्ममुनि शाश्वत शान्ति के मार्ग के प्रेमी बने और शरीर छोड़कर धनी के चरणों में पहुंचने वालों के समूह में सम्मिलित हो गये।

भावार्थ– दीन–ए–इस्लाम का अर्थ है, शान्ति का धर्म अर्थात् मार्ग। इसे दूसरे शब्दों में निजानन्द मार्ग या धर्म भी कहते हैं। आनन्द में ही शान्ति का निवास होता है,

इसलिये निजानन्द और दीन–ए–इस्लाम एकार्थवाची हैं।

बड़ा जस लिया जसिया, जिन छोड़े न राज कदम।
साथ में धन–धन सबों कही, जाग पहुँची आतम।।१९।।

जसिया ने धनी के चरणों को नहीं छोड़ा। धनी के अन्तर्धान की बात सुनते ही उन्होंने अपना तन छोड़ दिया और सुन्दरसाथ में महान यश के भागी बने। उनकी आत्मा जाग्रत रूप में धनी के चरणों में पहुँची। उनकी समर्पण भावना (कुर्बानी) को देखकर सब सुन्दरसाथ ने उन्हें धन्य–धन्य कहा।

और अम्बो बाई चलीं, थी इस्क में गरक।
इन ऊपर मेहर मेहबूब की, पहुंची कदमों हक।।२०।।

अम्बो बाई प्रियतम अक्षरातीत के अनन्य प्रेम में हमेशा

ही डूबी रहती थीं। इनके ऊपर धनी की बहुत बड़ी कृपा (मेहर) थी। ये भी अपने नश्वर तन को छोड़कर धनी के चरणों में पहुँच गयी।

और जो रतनबाई, चली राज के साथ।

साँची रहे सेवा मिने, तो धनिये पकड़े हाथ।।२१।।

रतनबाई अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत की सेवा में सच्चे हृदय से समर्पित थी। धाम धनी ने इन्हें अपनी मेहर की छाँव तले रखा था, इसलिये धनी की अन्तर्धान लीला के समय इन्होंने भी अपना तन छोड़ दिया।

राम बाई आपा डारिया, थी सेवा में आसिक।

जान के तो अपना, साथ रखी हक।।२२।।

अपने धाम धनी की सेवा में रामबाई ने अपना सर्वस्व

न्योछावर कर दिया था, क्योंकि उन्हें श्रीजी की सेवा से बहुत प्रेम था। इसलिये धाम धनी ने भी उन्हें मूल सम्बन्ध से अपने साथ ही रखा, अर्थात् उन्होंने भी विरह में अपना तन त्याग दिया।

ए साथ जो संग चले, जिन सिर ऊंचा किया मोमिन।
संसार में धन-धन हुए, जिनके दिल रोसन।।२३।।

परमधाम के इन ब्रह्ममुनियों का हृदय ब्रह्मवाणी के ज्ञान और धनी के अखण्ड प्रेम से प्रकाशित था। इन ब्रह्मसृष्टियों ने श्रीजी के अन्तर्धान की बात सुनते ही अपना तन छोड़ दिया और ब्रह्मात्माओं के त्याग, प्रेम, एवं समर्पण भावना को दर्शाकर संसार में उनकी महिमा फैलायी। आज सारा संसार इन ब्रह्मात्माओं को धन्य-धन्य कह रहा है।

श्री महामति कहे ऐ मोमिनो, देखो साथ कदम।

अब इनको देख के, जगाओ अपनी आतम।।२४।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! अन्तर्धान लीला के समय जिन ब्रह्ममुनियों ने प्रेम, समर्पण, और एकत्व (वहदत) की राह पर चलकर स्वयं को झोंक (न्योछावर कर) दिया, आपको भी इनसे प्रेरणा लेकर इनकी राह का अनुगामी बनना चाहिए तथा अपनी आत्मा को जाग्रत करना चाहिए।

प्रकरण ।।८।। चौपाई ।।३९१।।

मोमिनों की कुर्बानी

अब कहूं मोमिन की, जो फिदा हुए ऊपर हक।

इनकी सिफत न आवे सब्द में, नेक कहूं अपनें माफक।।१।।

अब मैं उन ब्रह्ममुनियों के विषय में बता रहा हूँ जो धाम धनी के ऊपर पूर्ण रूप से समर्पित हुए। यद्यपि इनकी महिमा को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता, फिर भी अपनी बुद्धि के अनुकूल थोड़ा सा वर्णन करता हूँ।

चलना राज के पीछल, किया अपना कुरबान।

भयो गौवच्छपद कहिवे को, जाय लगे ब्रह्म बान।।२।।

जिन सुन्दरसाथ ने ब्रह्मवाणी को आत्मसात् कर लिया, उन्होंने श्री प्राणनाथ जी को अक्षरातीत के स्वरूप में पहचाना और अपना सर्वस्व उनके चरणों में समर्पित कर

दिया। उनके लिये यह भवसागर गाय के बछड़े के खुर से बने गड्ढे में स्थित जल के समान हो गया, जिसे उन्होंने बहुत ही सरलता से पार कर लिया।

भवजल मोह सागर, पार न आवे कोय।
वास्ते दीन इस्लाम के, नजरों आया सोय।।३।।

यह संसार रूपी सागर मोह (अज्ञान) का वह अनन्त सागर है, जिसे कोई भी पार नहीं कर पाता। निजानन्द की राह पर चलने वाले ब्रह्ममुनियों ने इसे सरलता से समझ लिया और इसका परित्याग कर दिया।

सूर कई संसार में, होत तरवारों टूक टूक।
पर इनकी तौल न आवहीं, जो हक वास्ते हुए भूक भूक।।४।।

यद्यपि संसार में बड़े-बड़े योद्धा होते हैं जो युद्ध में

तलवारों से अपने शरीर को टुकड़े-टुकड़े करवा लेते हैं, किन्तु जिन ब्रह्ममुनियों ने धनी के प्रेम की राह में स्वयं को न्यौछावर (चूर्ण) कर दिया, उनके समक्ष ये संसारी वीर कही भी नहीं ठहरते।

आकार अपना डारते, जरा न करी सक।
साबित हुए मोमिन, पहुंचे कदमों हक।।५।।

धनी के प्रेम में अपने शरीर का त्याग करते समय जिन्होंने अपने मन में जरा भी संशय नहीं किया, उन्होंने अपने बलिदान से यह सिद्ध कर दिया कि वे परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं। इस प्रकार वे धनी के चरणों में पहुंच गये।

इनको पीछे फेरन को, बहुत करी अन्तराय।
पर जिनकी नजर धाम में, ताको कौन फिराय।।६।।

माया ने इन्हें धनी से दूर करने के लिये बहुत प्रयास किया, किन्तु जिनकी दृष्टि परमधाम में होती है, भला धनी की राह से उन्हें कौन डिगा सकता है?

पुकार करी इनों बहुतक, सबों को दिया पैगाम।
बिना हक के हुकुमें, क्यों पहुंचे इसलाम।।७।।

यद्यपि इन ब्रह्ममुनियों ने अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की महिमा का बहुत अधिक गायन किया और उनके प्रकट होने का सन्देश भी सभी को दिया, किन्तु बिना श्री राज जी के आदेश के कैसे कोई निजानन्द की अलौकिक राह को पा सकता है?

कूच सुनत धनीय का, विरह न किया याद।
सोतो नहीं मोमिन, अरस अजीम की बुनियाद।।८।।

श्रीजी की अन्तर्धान लीला सुनकर जिसे अपने प्राणेश्वर का विरह नहीं आया, निश्चित रूप से उसे ब्रह्मसृष्टि नहीं कहा जा सकता। परमधाम में उसके मूल तन होने का प्रश्न ही नहीं है।

सुनते सब्द धनीय का, तब ही अरवाह उड़ जाय।
ताको कहिए मोमिन, सुनते विरह उड़ जाय।।९।।

प्रियतम अक्षरातीत की वाणी को सुनते ही जिसकी आत्मा इस संसार की ओर देखना बंद कर दे तथा विरह में उसे शरीर का जरा भी आभास न रहे, एकमात्र वही ब्रह्मसृष्टि कहलाने का अधिकारी है।

भावार्थ– ज्ञान या विरह की अवस्था में शरीर छोड़ देने का वर्णन अतिशयोक्ति अलंकार में किया गया है। तृष्णाओं से पूर्णतः परे होकर शरीर का आभास न रहे,

तो वह भी शरीर छूटने जैसा ही है।

पीछे रखे आकार को, लालच वजूद के।

सो क्यों बैठे सैंयन में, बात कहनें को ए।।१०।।

अन्तर्धान लीला के बाद जिसने मात्र सांसारिक सुखों के लालच में अपने शरीर को रखा, वह किस मुख से सुन्दरसाथ के बीच में बैठकर उस लीला की चर्चा कर सकता है?

भावार्थ– जिस प्रकार पतंगा दीपक की व्याख्या नहीं कर सकता, उसी प्रकार परमधाम के ब्रह्ममुनि श्रीजी की अन्तर्धान लीला के विरह की व्याख्या नहीं कर सकते।

मोमिन ऐसी न करे, जो कछू होय पहिचान।

अरवाह सो उड़ावहीं, जाको होय ईमान।।११।।

परमधाम की जिस ब्रह्मसृष्टि को धनी के स्वरूप श्री प्राणनाथ जी की जरा भी पहचान हो जायेगी, वह उनके अन्तर्धान होने के बाद अपने नश्वर तन को नहीं रखना चाहेगी। जिसे अपने प्राणवल्लभ पर अटूट विश्वास है, वह उनके ऊपर अपनी आत्मा को न्योछावर कर देगी।

धिक धिक पड़ो तिन को, जो ए बात सुने कान।
बिछोहा धनी धाम सों, जाको कछू नहीं पहिचान।।१२।।

उस तन को धिक्कार है, जो अपने प्राण प्रियतम के वियोग की बातों को चुपचाप सुनता रहता है। जिसे धाम धनी की थोड़ी सी भी पहचान नहीं है, एकमात्र वह ही धाम धनी के वियोग को सहन कर सकता है।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाई को पढ़कर उन सुन्दरसाथ को आत्म–मंथन करना चाहिए, जो श्री प्राणनाथ जी को

सन्त, शिष्य, कवि, और आचार्य की श्रेणी में रखते हैं।

तिन सनमंध अपना तोड़िया, जो था बीच बका।
अब क्यों मुख दिखावहीं, जो बीच बजूद थका।।१३।।

जो श्रीजी के अन्तर्धान होने के बाद अपने शरीर को पालते रहे और श्री प्राणनाथ जी को भुलाये रहे, उन्होंने तो एक प्रकार से परमधाम के अखण्ड प्रेम सम्बन्ध को ही तोड़ दिया। इस खेल के समाप्त होने के बाद जब वे अपनी परात्म में उठेंगे, तो सबके बीच में कैसे अपना मुख दिखायेंगे?

ले बैठे आकार को, विरह सुनत हैं कान।
तिनको ईमान जिन कहो, कहा रही इत जान।।१४।।

जो अभी भी अपने तन को लिये बैठे हैं और अपने

कानों से धनी के विरह की बातें सुनते रहते हैं, उनमें धाम धनी का ईमान कैसे कहा जा सकता है, कदापि नहीं। उनमें तो अब मूल सम्बन्ध का प्रेम ही कहाँ रह गया?

जो रहे सोहबत में, आठ पहर एक ठौर।
तो पीछे क्यों कर रहे, जाको बात न दिल में और।।१५।।

जो सुन्दरसाथ आठों पहर श्री प्राणनाथ जी अक्षरातीत के साथ ही एक जगह रहा करते थे और जिनके हृदय में परमधाम तथा युगल स्वरूप के अतिरिक्त अन्य कोई बात ही नहीं आती थी, वे भी धनी के अन्तर्धान होने के बाद देह त्यागने में पीछे कैसे रह गये हैं?

भावार्थ– उपरोक्त चौपाई विरह के भावातिरेक (भाव की अधिकता) में कही गयी है। ऐसा कहने का आशय धनी

के प्रति अपने प्रेम को अखण्ड करना है। जब इस माया के पशु-पक्षी और मनुष्य आदि अपने प्रेमास्पद का वियोग सहन नहीं कर पाते, तो परमधाम के ब्रह्ममुनि अपने प्राणेश्वर के बिना कैसे रह रहे हैं, यही आश्चर्य का विषय है?

पर ए बात हुकम की, सो तो हाथ है हक।
ऐसा जान बूझ क्यों करें, जिनों नहीं दिल में सक।।१६।।

किन्तु ऐसा होना भी श्री राज जी के आदेश पर ही निर्भर करता है और वह धाम धनी के हाथ में है। अन्यथा उनके तन को रखने के लिये यदि श्री राज जी का आदेश नहीं होता, तो जिनके हृदय में श्री प्राणनाथ जी के अक्षरातीत होने का रंच मात्र (नाममात्र) भी संशय नहीं था, वे जान-बूझकर क्यों अपने तन को रखते?

जो रहे सो हुकमें, और चले बीच इजन।

मोमन रखे जिन वास्ते, मजल जाहिर सबों रोसन।।१७।।

श्री प्राणनाथ जी के अन्तर्धान होने के बाद भी जिन्होंने इस संसार में अपने शरीर को रखा, वह श्री राज जी के आदेश से ही सम्भव हो सका। उनके शरीर का त्याग भी श्री राज जी के आदेश से ही हुआ। यह बात तो सब में प्रकट है कि धाम धनी को जिस तन से जो सेवा लेनी थी, उसके लिये ही उन्होंने उनके तन को (अपने हुक्म से) बनाये रखा।

भावार्थ– महाराजा छत्रसाल को जागनी, श्री लालदास जी को बीतक लिखने, श्री केशवदास जी को तारतम वाणी के संकलन, तथा मुकन्ददास जी पर धर्म प्रचार का उत्तरदायित्व था। इसलिये इनके तनों को धाम धनी ने विरह की अग्नि से होने वाले देह त्याग से बचाये रखा।

सम्वत् सत्रह सै इक्यावना, भादों वदी चतुर्दसी के दिन।
प्रणाम कर सब साथ को, पहुंचे हक कदमों मोमिन।।१८।।

संवत् १७५१ में भादो मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तक सुन्दरसाथ धनी के विरह में सबको प्रणाम करते हुए अपने तन को छोड़ते रहे और धाम धनी के चरणों में पहुँचते रहे।

भावार्थ– सामान्यतः यह माना जाता है कि श्री लालदास जी ने सावन की पंचमी से बीतक का लेखन कार्य प्रारम्भ किया और भादों की अष्टमी तक उसे पूरा कर लिया। तत्पश्चात् उन्होंने श्री गुम्मट जी में धनी के चरणों में प्रणाम किया तथा शरीर को छोड़ दिया, किन्तु यह कथन तभी सार्थक होगा, जब यह माना जाय कि बीतक की रचना में एक वर्ष का समय लगा हो और उनका धाम गमन वि.सं. १७५२ में भादो मास के कृष्ण

पक्ष की अष्टमी को हुआ हो। यदि वि.सं. १७५१ में भादो मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को ही श्री लालदास जी का धाम गमन मानेंगे तो प्रश्न यह होगा कि चतुर्दशी के दिन तक तन छोड़ने वाले सुन्दरसाथ का नाम बताने वाली चौपाइयाँ किसने लिखीं?

किन्तु कहीं भी श्री लालदास जी के धाम गमन की तिथि का यथार्थ विवरण उपलब्ध नहीं है। "तारतम की बीतक" नामक ग्रन्थ के पृष्ठ ६४९ में बहुरंग जी विरचित बीतक १८/१ में कहा गया है कि श्री नवरंग स्वामी वि.सं. १७५५ तक पन्ना जी में सेवा कार्य हेतु रहे तथा सारा कार्यभार श्री लालदास जी को सौंपकर ५०० सुन्दरसाथ के साथ जागनी कार्य हेतु राजस्थान की ओर चले गये। इस प्रकार १७५८ तक श्री लालदास के तन का रहना सिद्ध होता है। इस सम्बन्ध में "तारतम की

बीतक" ग्रन्थ के पृष्ठ २५५ चौपाई १३ में कहा गया है–

नव सै नब्बे मास नव मास से, रूह अल्ला जनम का नाम।
तहां से एक सौ बीस बरस लों, लड़ाई करी तमाम।।

मैं कहूं नाम तिनके, जिन सुनत होइए पाक।
उड़ाय बजूद अपना, थे हक कदमों खाक।।१९।।

अब मैं उन ब्रह्ममुनियों के नाम बता रहा हूँ, जिनको सुनने मात्र से ही हृदय पवित्र हो जाता है। ये ब्रह्ममुनि धाम धनी के चरणों में पूर्णतया समर्पित थे और उन्होंने धनी के विरह में अपने तन का परित्याग कर दिया।

बल्लभदास एक इनमें, दूजे हैं केसवदास।
तीसरा था मथुरा, ए तीनों मोमिन खास।।२०।।

इनमें एक वल्लभदास जी हैं, दूसरे केशवदास जी हैं, और तीसरे मथुरा हैं। ये तीनों परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं।

राम कुंवर केसव संग, प्रसादी इनके संग।
हमीरा स्त्री इनकी, थी धाम धनी के अंग।।२१।।

केशव जी के साथ रामकुँवर जी, और प्रसादी भी हैं। प्रसादी जी की धर्मपत्नी हमीरा ने भी साथ में तन छोड़ दिया। ये सभी धाम धनी के अंग थे।

और जो था साहमन, पाचवां नरसिंहदास।
सन्तदास जो इन संग, ए छेहू मोमिन खास।।२२।।

चौथे शाहमन, पाँचवे नरसिंह दास, और छठे सन्तदास जी ने अपने प्रियतम के विरह में शरीर छोड़ दिया। ये छहों सुन्दरसाथ परमधाम के ब्रह्ममुनि थे।

पूरबाई और खड़गो, और केसरबाई नाम।

कासी चल्या तीसरे दिन, चल्या असऊ पीछे इन काम।।२३।।

पूरबाई, खड़गो, और केशरबाई ने अपना तन छोड़ दिया। श्रीजी के अन्तर्धान होने के तीसरे दिन काशी का भी धाम गमन हो गया। इसके पश्चात् असऊ ने भी तन को त्याग दिया।

श्री महामति कहे ए मोमिनों, धरों कदमों पर कदम।

तुम आय धाम धनी से, जगाओ अपनी आतम।।२४।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! आप अक्षरातीत के परमधाम से आये हैं, इसलिये आपका यह परम कर्त्तव्य है कि आप उन ब्रह्ममुनियों के दर्शाये हुए मार्ग पर चलें तथा अपनी आत्मा को जाग्रत करें।

प्रकरण ।।९।। चौपाई ।।४१५।।

श्री देवचन्द्र जी परिवार प्रसंग

इस प्रकरण में श्री देवचन्द्र जी के उन लौकिक सम्बन्धियों का वर्णन किया गया है, जिन्होंने कालान्तर में तारतम ज्ञान के प्रकाश में धनी के चरणों में स्वयं को लगा दिया।

पहिले कहों श्री देवचन्द्र जी, कबीले के नाम।
जो कोई कदमों लगे, भये दाखिल निज धाम।।१।।

अब मैं सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के उन सगे – सम्बन्धियों का वर्णन कर रहा हूँ, जिन्होंने श्री राज जी के चरणों से अपना सम्बन्ध जोड़ा और परमधाम का मार्ग अपनाया। शन्तनु के भाई देवापि और इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न हुए राजा मरु इस समय हिमालय के कलाप ग्राम में निवास कर रहे हैं और वे दोनों महान योगबल से

युक्त हैं।

देवापि सन्तनोभ्राता मरुश्चेक्ष्वाकु वंशजः।

कलाप ग्राम आसाते महा योग बलान्वितः।।

श्रीमद्भागवत् के इस कथन में वह भविष्यवाणी की गयी है, जिसके अनुसार कलियुग में देवापि के द्वारा धारण किये गये तन (श्री देवचन्द्र जी) में श्यामा जी की आत्मा विराजमान होगी तथा राजा मरु के द्वारा धारण किये गये तन (मिहिरराज) के अन्दर श्री इन्द्रावती जी का प्रकटन होगा। अक्षरातीत परब्रह्म इन दोनों तनों (श्री देवचन्द्र जी और श्री मिहिरराज) में विराजमान होकर लीला करेंगे।

मूल श्री देवचन्द्र जी, उतरे हैं अरस से।

वास्ते खास उम्मत के, विहार किया साथ में।।२।।

श्री देवचन्द्र जी के हृदय में श्री श्यामा जी की आत्मा है,

जो परमधाम से ब्रह्मसृष्टियों को जगाने के लिये आयी हैं। उन्होंने सुन्दरसाथ में जागनी लीला की।

सनमंध जाहिर का, हुआ लीलबाई से।
सेवा करी सनेह सों, सोभा दई राजें इनें।।३।।

श्री देवचन्द्र जी का विवाह (लौकिक सम्बन्ध) लीलबाई जी से हुआ था। इन्होंने प्रेमपूर्वक अपने पति की सेवा की। धाम धनी ने इन्हें विशेष शोभा दी।

भावार्थ– लीलबाई को अपने देह त्याग के दिन श्री राज जी का (श्री कृष्ण रूप में) दर्शन हुआ। लीलबाई जी ने सब सुन्दरसाथ को दर्शन देने के लिये उनसे आग्रह किया, जिसके परिणामस्वरूप सब सुन्दरसाथ को एक साथ ही दर्शन हो गये। यह शोभा धाम धनी ने उन्हें दी है।

तिनके उदर प्रगट भये, बिहारी जी है नाम।

सफर किया स्त्रीय नें, पहुंची अपने ठाम।।४।।

लीलबाई जी के तन से बिहारी जी का जन्म हुआ। इसके पश्चात् लीलबाई जी की आत्मा ने अपने नश्वर तन को छोड़ दिया और धनी के चरणों में पहुँच गयी।

जमुना बहिन कहियत हैं, थारो मेघो भाई दोय।

जोरू ठकुरानी थारे की, नाग जी बेटा कह्या सोय।।५।।

बिहारी जी की बहन का नाम यमुना है। थारा और मेघा नामक दो भाई रहते थे। थारा भाई की पत्नी का नाम ठकुरानी था और उनके पुत्र का नाम नागजी भाई था।

विशेष– बिहारी जी ने नागजी भाई को दत्तक पुत्र के रूप में गोद ले रखा था।

धनियानी मेघेय की, भाईत्रि याको नाम।

जमुनाबाई दीकरी, श्री देवचन्द्र जी की इस ठाम।।६।।

थाराभाई के भाई मेघाभाई की पत्नी का नाम भायत्री था। श्री देवचन्द्र जी की सुपुत्री यमुना बाई भी इसी परिवार में रहा करती थी।

कृष्णा स्त्री बिहारीजीय की, धनयानी घर जोय।

नागजी की जोरू, रंगबाई कही सोय।।७।।

बिहारी जी की पत्नी का नाम कृष्णा था, जो घर की स्वामिनी (मालकिन) थी। नागजी भाई की पत्नी का नाम रंगबाई था।

यह कबीला लौकिक, और अलौकिक कहों इत।
जो कोई ल्याया ईमान, करने को खिजमत।।८।।

यह तो सांसारिक सम्बन्धियों का वर्णन हुआ है। अब मैं उन अलौकिक (आध्यात्मिक) सम्बन्धियों का वर्णन कर रहा हूँ, जिन्होंने तारतम ज्ञान के प्रकाश में अक्षरातीत की सेवा-भक्ति करने के लिये विश्वास धारण किया।

प्रथम कहों हरिदास की, राधावल्लभी नाम।
उनकी पहले खिजमत, श्री देवचन्द्र जी किये काम।।९।।

सबसे पहले राधावल्लभ मत के श्री हरिदास जी का नाम आता है। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने अखण्ड ज्ञान की खोज में उनकी सेवा की थी।

जब भई इन्हें पहिचान, तब फेर ग्रहे कदम।

सुख दिया सेवा मिने, सौंप दई आतम।।१०।।

जब श्री हरिदास जी को श्री निजानन्द स्वामी के स्वरूप की वास्तविक पहचान हो गयी, तो वे उनके चरणों में आये और उन्होंने स्वयं को सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में सौंप दिया।

भावार्थ– यह एक अनहोनी घटना है कि जो पहले गुरु था, वह बाद में शिष्य बन जाय, किन्तु यह घटनाक्रम एक बहुत बड़ी शिक्षा देता है कि तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिये किसी के भी सामने झुक जाना चाहिए। इसमें लौकिक सम्बन्धों को बाधक नहीं बनने देना चाहिए।

माता वृन्दावन की, धनियानी हरिदास।

वृन्दावन ईमान ल्याइया, करी सेवा खास।।११।।

हरिदास जी की पत्नी तथा पुत्र वृन्दावन ने भी तारतम ज्ञान ग्रहण किया। वृन्दावन ने सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की विशेष सेवा की।

मूली वृन्दावन की, नातो जोरू खसम।
एह आई साथ में, जाग खड़ी आतम।।१२।।

वृन्दावन की पत्नी का नाम मूलीबाई था। वह तारतम ज्ञान ग्रहण करके सुन्दरसाथ के समूह में शामिल हुई तथा उसकी आत्मा जाग्रत हो गयी।

बेटा वृन्दावन का, कह्या नाम नरहर।
और माता वृन्दावन की, कछु इनको भई खबर।।१३।।

वृन्दावन के पुत्र का नाम नरहरि था। वृन्दावन की माता जी को श्री राज जी की थोड़ी सी ही पहचान हो सकी

थी।

महामति कहे ऐ मोमिनों, ए साथ बड़ो विस्तार।

पर कछुक कहों हुकुमें, मेहर धनी निरधार।।१४।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! यद्यपि सुन्दरसाथ की संख्या बहुत अधिक है, फिर भी धाम धनी की मेहर और हुक्म (कृपा एवं आदेश) से कुछ का वर्णन करता हूँ।

प्रकरण ।।१०।। चौपाई ।।४२९।।

सुन्दरसाथ आगमन

इस प्रकरण में श्री निजानन्द स्वामी द्वारा जाग्रत हुए सुन्दरसाथ का विवरण दिया गया है।

पहिले दीन इस्लाम में, गांग जी भाई धरे कदम।

सेवा करी श्री देवचन्द्र जी की, कदमों सौंपी आतम।।१।।

सबसे पहले गांगजी भाई ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और श्री निजानन्द सम्प्रदाय में सम्मिलित हुए। उन्होंने सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी को साक्षात् अक्षरातीत माना तथा अपनी आत्मा को उनके चरणों में सौंपकर उनकी सेवा की।

कहों तिनका कबीला, जो दाखिल हुए निजधाम।

दीदार श्री देवचन्द्र जी के, खिज़मत के किये काम।।२।।

अब मैं उनके परिवार के उन लोगों के नाम बता रहा हूँ, जिन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और निजानन्द के मार्ग पर चले। इन्होंने श्री देवचन्द्र जी के दर्शन एवं सेवा में अपने जीवन को लगा दिया।

माता गांगजी भाई की, गंगाबाई है नाम।
श्री देवचन्द्र जी तिनके, किए पूरे मनोरथ काम।।३।।

गांगजी भाई की माता का नाम गंगाबाई है। सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी ने उनकी सम्पूर्ण लौकिक और पारलौकिक इच्छाओं को पूर्ण किया।

भानबाई धनियानी, रहे गांगजी के घर में।
श्री देवचन्द्र जी की सेवा, पूछ करे उनसे।।४।।

गांगजी भाई की पत्नी का नाम भानबाई था। उसमें श्री

निजानन्द स्वामी के प्रति कुछ भी श्रद्धा भावना नहीं थी। वह पूछ-पूछ कर अनमने ढंग से श्री देवचन्द्र जी की सेवा किया करती थी।

भावार्थ- गांगजी भाई को विदित था कि मेरी पत्नी सद्गुरु महाराज की सेवा बोझ मानकर करती है। लीलबाई जी के धामगमन के पश्चात् गांगजी भाई की पत्नी ने बिहारी जी एवं यमुना के पालन-पोषण में असमर्थता व्यक्त की। गांगजी भाई किसी भी स्थिति में श्री निजानन्द स्वामी की सेवा छोड़ना नहीं चाहते थे, इसलिये उन्होंने अपनी पत्नी को उसके मायके भेज दिया और दुबारा लेने नहीं गये। इस घटनाक्रम को प्रकास हिन्दुस्तानी ५/११,१२ में संकेत के द्वारा व्यक्त किया गया है-

साथ सो हेत कियो अपार, धंन धंन धनबाई को अवतार।
कछुक लेहेर लागी संसार, ना दई गिरने खड़ी राखी आधार।।

बेहेवट पूर सहयो न जाए, कर पकर के दई पोहोंचाए।
तो भी सुध न भई आपन, क्योंए न छूटे मोह जल गुन।।

बेटा कहिए स्यामजी, कछु न बोय ईमान।
चरचा सुनता बहुतक, बिना अंकूर न भई पहिचान।।५।।

गांगजी भाई के बेटे का नाम श्याम जी था। उसमें जरा भी धनी के प्रति विश्वास नहीं था। उसने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से चर्चा तो बहुत सुनी, किन्तु परमधाम का अंकुर न होने से वह श्री निजानन्द स्वामी के स्वरूप की पहचान नहीं कर सका।

बहू भानबाई की, अजबाई है नाम।
सेवा लई सिर ऊपर, करे हमेसा काम।।६।।

भानबाई की बहू अर्थात् श्याम जी की पत्नी का नाम अजबाई था। उसने सद्गुरु महाराज की सेवा सच्चे मन से निभायी (शिरोधार्य किया)।

बेटा दूजा मानजी, करता था खिजमत।
गाँगजीभाई के वास्ते, हाजर रहवे इत।।७।।

गांगजी भाई के दूसरे पुत्र का नाम मानजी था। गांगजी भाई के अन्य कार्यों में व्यस्त रहने पर सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की सेवा में वह उपस्थित रहता था।

हीरबाई का बेटा, धनजी उनका नाम।
बहिन जो है बालबाई, ए थी बीच इसलाम।।८।।

हीरबाई के बेटे का नाम धनजी था। गांगजी भाई की बहन का नाम बालबाई था। इन्होंने श्रद्धापूर्वक तारतम

ज्ञान ग्रहण किया था।

भौजाई थी हीरबाई, रहे सेवा में सनमुख।
कै विध सेवा करके, इनों लिया अति सुख।।९।।

गांगजी भाई की भाभी का नाम हीरबाई था। वह हमेशा सेवा में लगी रहती थी। इन्होंने धाम धनी की अनेक प्रकार से सेवा करके बहुत अधिक सुख लिया।

भाई गोविन्दजी रहे, ना दाखिल निज धाम।
जुदा रहे सबसे, आवे न किसी काम।।१०।।

गांगजी के एक भाई और थे, जिनका नाम गोविन्दजी था। इन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण नहीं किया। इनका स्वभाव सबसे अलग था। ये धर्म के किसी कार्य में नहीं लगे।

विशेष– गांगजी भाई के एक भाई का नाम खेता भाई था, जो अरब देश में बस गये थे। इनकी पत्नी का नाम हीरबाई था।

जीवराज साथी साथ में, वासना बाई तान।
माता उनकी बछाई, भई पूरी पहिचान।।११।।

सुन्दरसाथ में एक साथी जीवराज जी भी थे, जिनके अन्दर तानबाई की वासना थी। उनकी माता का नाम बछाई था। उन्हें धनी श्री देवचन्द्र जी की पूरी पहचान थी।

सालो रहे सामिल, गणेस उनका नाम।
धनियानी रहे गोमती, करी सेवा इस ठाम।।१२।।

गांगजी भाई के साले गणेश जी भी यहीं रहते थे। उनकी

पत्नी का नाम गोमती था। उन्होंने अच्छी प्रकार से धनी की सेवा की।

हीरबाई की बेटी, जसोदा है नाम।

बेटी की बेटी, राजबाई इस ठाम।।१३।।

खेता भाई की पत्नी हीरबाई की बेटी का नाम यशोदा था और यशोदा की बेटी राजबाई थी। वे भी इसी परिवार में रहा करती थी।

देवर मानबाई का, पारप्यो है नाम।

देवरानी जसोदानी, करे सेवा का काम।।१४।।

भानबाई के देवर का नाम पारप्यो था। उनकी देवरानी यशोदा थी, जो समर्पण भाव से सेवा किया करती थी।

दो बेटी स्यामजी की, हरबाई लाड़बाई।

पावत नित दीदार, आगे खिलौने सुखदाई।।१५।।

श्याम जी की दो बेटियां थीं– हरबाई और लाड़बाई। वे प्रतिदिन सद्गुरु महाराज का दर्शन करती थीं तथा खिलौनों की तरह खेल करके सबको आनन्दित करती थीं।

मानजी का बेटा, सुखबाई की वासना।

परखी श्री देवचन्द्रजी ने, जान घर अपना।।१६।।

मानजी के बेटे में सुखबाई की वासना थी। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने अपना विशेष सम्बन्ध जानकर उनकी परात्म का नाम परखा था।

भावार्थ– सनंध ३९/४ में कहा गया है–

खेल में मेंहदी तोतला, जुबां कजा ए ठौर।

आगे तो नूर तजल्ला, तहां जुबा बोल है और।।

इस प्रकार परमधाम में किसी भाषा विशेष का बन्धन होना सम्भव नहीं है। वहां की भाषा आत्मिक है, जो इस जगत की भाषा में नहीं आती। तारतम वाणी या बीतक में जिन ब्रह्मात्माओं के नामों का उल्लेख किया गया है, वह यहाँ के भावों तथा भाषा के आधार पर किया गया है। षटऋतु ८/३९ में श्री इन्द्रावती जी ने स्पष्ट कहा है कि "वासना सकलने तमे परखो छो, जोई सर्व ना चेहेन रे।" अर्थात् हे धाम धनी! आपने यहाँ सुन्दरसाथ की परात्म के जो नाम बताये हैं, वह उनके गुणों के आधार पर ही हैं। एक विशेष तथ्य यह भी है कि नाम के साथ बाई शब्द का प्रयोग अधिकतर गुजरात, राजस्थान, तथा सिन्ध प्रान्तों में ही होता है। उ.प्र., पश्चिम बंगाल, बिहार,

पंजाब, आदि में स्त्रीवाचक शब्द के साथ बाई का प्रयोग नहीं होता, तो क्या इन प्रान्तों में ब्रह्मसृष्टियां नहीं हैं?

समय श्री देवचन्द्रजी, चरचा करते जब।
इत काहू को बोलने की, ताकत न रहवे तब।।१७।।

जब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी चर्चा करते थे, तो उस समय उनका ऐसा अलौकिक प्रभाव होता था कि किसी के भी पास ऐसा साहस नहीं था कि बीच में कुछ बोल दे।

चरचा जोस में करें, कहें भाव से मुख।
या समै इन साथ को, कह्यो न जाय सुख।।१८।।

अक्षरातीत के जोश में डूबकर वे चर्चा करते थे। प्रसंगानुसार अपने मुख से भावों को भी व्यक्त करते थे। उस समय सुन्दरसाथ को जो सुख मिलता था, उसका

वर्णन हो पाना सम्भव नहीं है।

भावार्थ– आजकल उत्तेजित भाषा के प्रयोग को जोश में बोलना कहा जाता है, किन्तु यह बहुत बड़ी भूल है। इस तरह का जोश क्रोध या उसके मूल तमोगुण का जोश होता है। जब तक हृदय में धनी की शोभा न बसे, तब तक जोश की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में अक्षरातीत का आवेश विराजमान था। जब वे चर्चा करते थे, तो उनके मुखमण्डल पर एक अलौकिक आभा, तेज, और सौन्दर्य क्रीड़ा करता था, न की क्रोध की तमतमाहट।

भाव काढ़ दिखावहीं, सब चरचा को रूप।

बरनन करें श्री राज को, सुन्दर रूप अनूप।।१९।।

वे चर्चा के अलग–अलग प्रसंगों को उस प्रकार के भावों

के द्वारा ही व्यक्त करते थे। सुन्दरसाथ की आत्मा को जाग्रत करने के लिये वे श्री राज जी के अनुपम सुन्दर स्वरूप का वर्णन किया करते थे।

भावार्थ– भाव निकालकर व्यक्त करने (दिखाने) का आशय यह है कि जब किसी करुण प्रसंग का वर्णन चल रहा हो, तो चेहरे की भावभंगिमा तथा आवाज भी घटना के अनुकूल ही होनी चाहिए। इसी प्रकार, किसी हास्य रस का वर्णन करते समय चेहरे एवं आवाज में उदासी नहीं झलकनी चाहिए।

ब्रज रास लीला को, बड़ो दिखावें बोझ।

सब्द साखी सास्त्र सब, रहस्य दिखावें कर खोज।।२०।।

श्री निजानन्द स्वामी अखण्ड व्रज–रास की लीला के महत्व को बहुत सुन्दर ढंग से व्यक्त करते थे। वे सन्तों के

वचनों (शब्दों), साक्षियों, तथा सभी शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों को खोज-खोज कर चर्चा में प्रकट करते थे।

अंग में बड़ो उमंग, साथ मिलावन को।
एक नया कोई जो आवत, तो उमंग न मावे अंग मो।।२१।।

सुन्दरसाथ को एकत्रित करने के लिये उनके हृदय में बहुत उल्लास रहता था। जब किसी नये सुन्दरसाथ की जागनी होती थी, तो उनके हृदय में अपार आनन्द उमड़ा करता था।

अब कहों कबीला श्री मेहराज का, करी श्री देवचन्द्रजी मेहर।
आवे नहीं हिसाब में, ए जो करी फेर फेर।।२२।।

अब मैं श्री मिहिरराज जी के परिवार का वर्णन करता हूँ, जिस पर सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने बार-बार इतनी

कृपा की है कि उसका माप (आंकलन) नहीं हो सकता।

भावार्थ– "सुन्दरी च इन्दिरां नामाभ्यां चन्द्र सूर्ययोः" पुराण संहिता के इस कथन के अनुसार श्यामा जी चन्द्र नाम वाले तन को धारण करेंगी तथा इन्द्रावती जी की आत्मा सूर्य नाम वाले तन को।

संस्कृत में "मिहिर" का अर्थ सूर्य होता है, जबकि मेह का अर्थ "बादल" होता है। इस प्रकार शुद्ध साहित्यिक नाम "मिहिरराज" होगा, "मेहेराज" अपभ्रंश शब्द होगा।

केसो ठाकुर पिता कहियत, माता बाई धन।
श्री इन्द्रावती बाई की वासना, सौंपा धन तन मन।।२३।।

श्री मिहिरराज जी के पिता का नाम श्री केशव ठक्कर (ठाकुर) तथा माता का नाम धनबाई था। उनके तन में परमधाम की श्री इन्द्रावती जी की आत्मा ने प्रवेश किया।

उन्होंने अपना तन, मन, और धन अपने सद्गुरु महाराज पर न्योछावर कर दिया।

स्त्री घरों फूलबाई, दूजी बाई श्री तेज।
श्रीजी साहिबजी धाम धनीयको, इनने पाया सहेज।।२४।।

श्री मिहिरराज जी की पहली धर्मपत्नी का नाम श्री फूलबाई जी था तथा दूसरी का नाम श्री तेजबाई। इन्होंने बहुत ही सरलता से अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को श्री मिहिरराज जी के तन में प्राप्त कर लिया।

भावार्थ- श्री फूलबाई जी के अन्दर परमधाम की अमलावती जी की वासना थी। उनके असमय देह त्याग के पश्चात् श्री अमलावती जी ने श्री तेजकुँवरी (तेजबाई) का तन धारण किया, जिन्हें श्री मिहिरराज जी ने अर्धांगिनी के रूप में स्वीकार किया।

भाई गोवर्धन कह्या, जासों पहिले श्री देवचन्द्रजी सों मिलाप।
भई प्राप्त श्री मेहेरराज को, हकें मेहर करी आप।।२५।।

श्री मिहिरराज जी के बड़े भाई का नाम गोवर्धन था, जिन्होंने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से तारतम ज्ञान ग्रहण कर रखा था। धाम धनी की कृपा से श्री गोवर्धन जी के माध्यम से ही श्री मिहिरराज जी को श्री निजानन्द स्वामी के चरणों में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

वासना ठाकुर गोवर्धन की, गुणवन्ती बाई नाम।
और भाई ऊधवजी, गोविन्दजी इस ठाम।।२६।।

गोवर्धन जी की परात्म का नाम गुणवन्ती बाई था। श्री मिहिरराज जी के छोटे भाई ऊद्धव जी थे और उनके एक चचेरे भाई गोविन्दजी भी थे।

और चतुर्भुज कह्या, घर धनियानी पदमा।

वे आए हैं साथ में, थे कबीले बीच जमा।।२७।।

इस परिवार में चतुर्भुज जी भी रहते थे, जिनकी पत्नी का नाम पद्मा था। ये सुन्दरसाथ में सम्मिलित हो गये थे और श्री मिहिरराज जी के परिवार से जुड़े हुए थे।

भावार्थ– श्री केशव जी के पांच ही पुत्र थे– १. हरिवंश २. श्यामल ३. गोवर्धन ४. मिहिरराज ५. ऊद्धव। सम्भवतः गोविन्द जी और चतुर्भुज जी उनके परिवारिक सम्बन्धी थे, सगे भाई नहीं, क्योंकि इस चौपाई का चौथा चरण यही संकेत करता है। श्री मिहिरराज जी के अन्य भाईयों के नाम से पूर्व "भाई" शब्द जुड़ा हुआ है, जबकि गोविन्द जी या चतुर्भुज जी के साथ नहीं।

स्त्री ऊधवजीय की, नाम बाई भान।

ए साथ में आई नहीं, कर ना सकी पहिचान।।२८।।

उद्धव जी की पत्नी का नाम भानबाई था। भानबाई ने तारतम ज्ञान भी ग्रहण नहीं किया। इस प्रकार, वह श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की जरा भी पहचान नहीं कर सकी।

और भाई ठाकुर श्री स्यामलजी, ए पीछे ल्याए ईमान।

सीताबाई सेवा मिने, है प्रेमजी को पहिचान।।२९।।

हब्शे की घटना के पश्चात् मझले भाई श्यामल जी को श्री धाम धनी पर आस्था हो गयी। उनकी पत्नी का नाम सीताबाई था। श्यामल जी के दो पुत्र थे- प्रेम जी और विष्णु जी। प्रेम जी को श्रीजी के स्वरूप की पहचान हो गयी थी।

और बाई सवीरा, यह आई साथ मिने।

प्रेमजी की सोहबत से, फल पाया इनने।।३०।।

प्रेम जी की पत्नी का नाम सबीराबाई था। इन्हें अपने पति की संगति का लाभ यह मिला कि तारतम ज्ञान ग्रहण कर सुन्दरसाथ कहलाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

विस्नु जी भाई प्रेमजीयका, आया नहीं साथमें।

पर पाया दीदार, श्रीजी की सोहबत से।।३१।।

प्रेमजी के भाई विष्णु जी थे, किन्तु ये सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित न हो सके। श्रीजी की संगति से ये सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के दर्शन का लाभ प्राप्त कर सके।

विशेष– सम्भवतः विस्नु जी अपभ्रंश प्रतीत होता है। इसका शुद्ध रूप विष्णु जी होना चाहिए।

और आई पूरबाई, साथ बेटा पीताम्बर।

बेटे कानजी नानजी तिनके, हुए कुरवान श्रीजी पर।।३२।।

विष्णु जी की पत्नी का नाम पूरबाई था। उनके पुत्र हुए पीताम्बर जी। उनके दो पुत्र हुए– कान्हजी तथा नान्हजी। वे दोनों ही श्रीजी के ऊपर न्यौछावर थे।

माता कानजी नानजी की, बाई कही रतन।

आई परना बीचमें, कहावत है मोमिन।।३३।।

कान्हजी तथा नान्हजी की माताजी का नाम रतनबाई था। वे परमधाम की ब्रह्मसृष्टि थीं। श्रीजी की सेवा करने के लिये वे पन्ना जी तक आयीं।

हरवंश के घरमें, मेघबाई है नाम।

हरखबाई की वासना, श्री देवचन्द्रजी कही इस ठाम।।३४।।

श्री मिहिरराज जी के सबसे बड़े भाई हरिवंश जी की पत्नी का नाम मेघबाई था। सद्गुरु श्री निजानन्द स्वामी ने उनकी परात्म का नाम हरखबाई रखा था।

गोकुलदास चलिया, आया था साथ में।

ए श्रीजी का कबीला, जो लगा था इनसें।।३५।।

यद्यपि गोकुलदास सुन्दरसाथ में सम्मिलित हो गये थे, किन्तु असमय में उनका धाम गमन हो गया था। उपरोक्त सभी नाम श्री मिहिरराज जी के परिवार के हैं।

रहे रुद्रो जूनागढ़ में, था ए दूकानदार।

करी सेवा श्री देवचन्द्रजी की, जान के धनी निरधार।।३६।।

जूनागढ़ में "रूद्र" नामक एक दुकानदार रहा करते थे। उन्होंने धनी श्री देवचन्द्र जी को साक्षात् धाम धनी मानकर सच्चे हृदय से सेवा की।

कानजी और थावर, और पदमसी जीवा नाम।

जसोदा और कानबाई, पहुँचे ए निजधाम।।३७।।

कान्हजी भाई, थावर, पदमसी, जीवा, यशोदा, और कानबाई ने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में तारतम ज्ञान ग्रहण करके निजधाम की राह अपनायी।

डोसा और नैन बाई, मेनबाई और मानबाई।

करी सेवा श्री देवचन्द्र जी की, सादी दीदार भी पाई।।३८।।

डोसा, नैनबाई, मेनबाई, और मानबाई ने सद्गुरु महाराज की समर्पण भाव से सेवा की। इन्हें श्री निजानन्द स्वामी के स्वरूप में अक्षरातीत के दर्शन का आनन्द प्राप्त हुआ।

एक भाई महावजी, और जो परसोत्तम।

रामजी कोठारीयके, इन्हों जाना महातम।।३९।।

महावजी भाई, पुरुषोत्तम, और रामजी कोठारी ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और आड़िका लीला के माध्यम से सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की अपार महिमा को जाना।

और भाई जयमल कह्या, और जोरू इनकी।

ए पीछे आए साथ में, सेवा बिहारीजी की करी।।४०।।

जयमल भाई तथा इनकी पत्नी ने सद्गुरु महाराज की अन्तर्धान लीला के बाद तारतम लिया और गादीपति बिहारी जी की सेवा की।

और लछो कायथ, ए ल्याई ईमान।

चरचा सुनने आवत, ना इन्हें भई पहिचान।।४१।।

कायस्थ कुल की लच्छोबाई भी श्री देवचन्द्र जी पर निष्ठा लाई। उसने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और चरचा सुनने भी आया करती थी, पर इन्हें धनी के स्वरूप की पहचान नहीं हुयी।

नारायन सोनी साथ में, और आये लीलाधर।

ए सेवा में आवत, रस पीवत श्रवनों कर।।४२।।

इनके साथ नारायण सोनी और लीलाधर ने भी तारतम ज्ञान ग्रहण किया। ये सद्गुरु महाराज की सेवा में उपस्थित रहते तथा अपने कानों से अमृतमयी चर्चा का रसपान करते थे।

भाटिया एक भीमजी, था जोरू समेत।

ए ल्याया ईमान, चरचा नित सुनत।।४३।।

भीमजी भाटिया ने अपनी पत्नी समेत तारतम ज्ञान ग्रहण किया। वे प्रतिदिन सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से चर्चा सुनते थे।

मूलजी की धनियानी, राय कुंवरबाई नाम।

तारतम सुन्या तिनने, पूरे मनोरथ काम।।४४।।

मूलजी की पत्नी का नाम राय कुँवरबाई था। उन्होंने श्री निजानन्द स्वामी से तारतम ज्ञान ग्रहण किया। धाम धनी ने उनकी सारी इच्छाओं को पूर्ण किया।

गुगलन माँ दीकरी, हरबाई नाम तिन।

कदमों श्री देवचन्द्रजी के, थी दाखिल मोमिन।।४५।।

गुगलन माँ की बेटी का नाम हरबाई था। वह धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में आयी और ब्रह्मसृष्टियों के समूह में सम्मिलित हो गयी।

दीव में जो साथ हैं, एक कंसारा जयराम।

और धनियानी इनकी, थी दाखिल निज धाम।।४६।।

दीपबन्दर में रहने वाले भाई जयराम कंसारा, जो बर्तन बनाया करते थे, सपत्नीक श्री निजानन्द स्वामी के चरणों में आये और निजधाम ले जाने वाला मार्ग ग्रहण किया।

गणेस और स्त्री इनकी, भोजबाई बाई देव।

भोज मूजो गंगाबाई, इनों करी बड़ी सेव।।४७।।

गणेश और इनकी पत्नी भोजबाई, देवबाई, भोज, मुंजो, और गंगाबाई सभी पोरबन्दर के ही रहने वाले थे। इन्होंने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की बहुत अधिक सेवा की।

जीवो गंगो और ग्वाल, इनों सौंपी आतम।

ए दीव में का साथ था, जिनों सुन्या तारतम।।४८।।

जीवा, गंगा, और ग्वाल भी दीपबन्दर में ही निवास किया करते थे। इन्होंने सदगुरु महाराज से तारतम ग्रहण किया तथा अपनी आत्माओं को उनके चरणों में सौंप दिया।

मूलो पुहोकरना ब्राह्मण, हाँसबाई बाई बेन।

ए चरचा में आवत, श्री देवचन्द्रजी निरखे नैन।।४९।।

पुष्करण ब्राह्मण मूलो, हाँसबाई, तथा बेनबाई श्रद्धापूर्वक चर्चा में आते थे। ये लोग अति प्रेमपूर्वक नेत्रों से सद्गुरु महाराज का दर्शन करते थे।

भावार्थ– जिस प्रकार सरयूपारीण, गंगापारीण, आदि ब्राह्मण होते हैं, उसी प्रकार जन्मजात ब्राह्मणों का एक

वर्ग पुष्करण भी है, जो पुष्कर क्षेत्र से जुड़ा हुआ है।

और कायस्थ अखई, रहे नौतनपुरी मिने।
मल्लो प्राग मंडई मिने, हरबीर कबीले समेत अपने।।५०।।

अखई कायस्थ नवतनपुरी के सुन्दरसाथ हैं। मल्लो, प्राग, तथा हरबीर जी अपने सम्पूर्ण परिवार समेत मण्डई में निवास करते हैं।

और दूसरा हरबीर, आया अपने कुटुंब परिवार।
तारतम सुन्या तिनने, पहुँचा परवरदिगार।।५१।।

एक दूसरे और हरबीर जी थे, जिन्होंने अपने सम्पूर्ण परिवार सहित तारतम ज्ञान ग्रहण किया और धाम धनी को पा लिया।

राधा बाई सोम बाई, सोम आई मंडई मिने।

और बाई कुँअर, सामिल कबीले से।।५२।।

राधाबाई, सोमबाई, तथा सोम ने मंडई में तारतम ग्रहण किया। इसी प्रकार कुंवरबाई ने अपने सम्पूर्ण परिवार के साथ धनी के चरणों से अपना सम्बन्ध जोड़ा।

और नाथा जोशी ठट्ठे मिने, संग बड़ा महावजी ये।

और लाला कायस्थ, और कायस्थ धना उसके।।५३।।

ठट्ठानगर के रहने वाले नाथा जोशी, बड़े महावजी, लाला कायस्थ, तथा धना भाई कायस्थ ने भी अपनी आत्मा को धनी के चरणों में सौंप दिया।

और साथ बहुत हैं, गाम सहर और और।

मैं थोड़े नाम लिखे, इनों कहे जायेंगे और ठौर।।५४।।

यद्यपि गाँव –गाँव और नगर–नगर में बहुत से सुन्दरसाथ हैं, जिनके नाम लिखे नहीं जा सके। यहाँ पर तो नाम मात्र के ही नाम लिखे गये हैं। जब हम परमधाम में जागेंगे, तब वहां पर सभी के नामों की चर्चा हो सकेगी।

श्री महामति कहे ए साथजी, इन साथ की सिफत।

सोतो आगे होयेगी, बखत रोज क्यामत।।५५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! इन सुन्दरसाथ की महिमा को इस संसार में मैं कैसे बताऊँ? इनकी महिमा तो कियामत के दिन जानी जायेगी, जब सभी प्राणी योगमाया के ब्रह्माण्ड में अखण्ड किये जायेंगे।

भावार्थ– कियामत दो प्रकार की है–

१. ज्ञान द्वारा जो बारहवीं सदी (फर्दा रोज़) में हो चुकी है, अर्थात् सभी प्राणियों को अखण्ड मुक्ति देने वाले ज्ञान के प्रकटीकरण का समय।

२. योगमाया के ब्रह्माण्ड में स्वरूप द्वारा अखण्ड किये जाने की लीला के समय संसार को यह पता चल जायेगा कि इन ब्रह्ममुनियों के कारण ही हमें अखण्ड मुक्ति का शाश्वत आनन्द प्राप्त हो सका है।

प्रकरण ।।११।। चौपाई ।।४८४।।

कुरान पुराण की साक्षी

इस प्रकरण में कुरआन तथा श्रीमद्भागवत् (पुराण) की साक्षी देकर श्री देवचन्द्र जी तथा प्राणनाथ जी के स्वरूप को उजागर किया गया है।

सिपारे बारमें मिने, पाने चौबीस में।
तफसीर के तीन सौ एक, तुम देखियो तिनसें।।१।।

हे साथजी! कुरआन के १२ वें सिपारें पृष्ठ २४ तथा तफसीर–ए–हुसैनी के पृष्ठ ३०१ में आप देखना। इनमें इमाम के जहूर पर प्रकाश डाला गया है।

श्री देवचन्द्रजी सरूप को, हकें दिया तारतम नूर।
तिनका विस्तार कयामतें, होयेगा बड़ा मजकूर।।२।।

श्री देवचन्द्र जी को अक्षरातीत श्री राज जी ने प्रकट होकर प्रत्यक्ष दर्शन दिया तथा अपनी पहचान देकर उनके धाम हृदय में विराजमान हो गये। तत्पश्चात् उनके धाम हृदय में जो तारतम ज्ञान का प्रकाश किया, उसका विस्तार तारतम वाणी के रूप में कियामत के समय में होगा। यह बहुत बड़ी गरिमा वाली बात है।

भावार्थ– तारतम वाणी में ग्यारहवीं तथा बारहवीं सदी में कियामत के आने का प्रसंग है–

कारैं सदी में कयामत, लिखी मझ कुरान।

सनंध ३५/२८

सौंह करी साहेब आसमान, ए इसारत बारहीं सदी में निदान।

बड़ा क्यामतनामा २१/१

इसी तरह तारतम वाणी का अवतरण भी वि.सं. १७१२–१७४८ तक होता है, जो ग्यारहवीं तथा

बारहवीं सदी के अन्तर्गत माना जाता है। तारतम वाणी का विस्तृत उजाला दूसरे तन में होता है। इस सम्बन्ध में कहा गया है–

एक मेंने उपज्या तारतम, दूजे मिने उजास।

प्रकाश हि. ३१/१२७

तारतम का जो तारतम, अंग इन्द्रावती विस्तार।

पैए दिखावे पार के, तिन पार के भी पार।।

कलस हि. २३/७२

मूल वेद कतेब की, साहिदियां लिखी सबन।

सो आय मिली सब इतहीं, ताय मोमिन करें रोसन।।३।।

मूल हिन्दू धर्मग्रन्थों तथा कतेब ग्रन्थों में जो साक्षियां लिखी थीं, वे सभी इन दोनों स्वरूपों में घटित होती हैं,

जिन्हें मात्र ब्रह्मसृष्टियां ही प्रकाश में ला सकती हैं।

कागद जो भागवत का, ले आया सुक मुनी।

इनका अर्थ ब्रह्मसृष्टि, खोलें जान अपनी।।४।।

शुकदेव मुनि श्रीमद्भागवत् के रूप में व्रज -रास की लीला का ज्ञान लेकर आये, किन्तु इसके रहस्य को मात्र ब्रह्मसृष्टियां ही खोल सकती हैं क्योंकि व्रज -रास की लीला में वे स्वयं थीं।

द्रष्टव्य- वर्तमान समय में उपलब्ध भागवत के केवल दशम स्कन्ध से हमारा सम्बन्ध है। शेष अन्य स्कन्धों में बहुत सी वेद विरुद्ध बातें हैं, जो शुकदेव और व्यास जी के मन्तव्यों से मेल नहीं खातीं।

और कागद ल्याइया, महम्मद अलेहसलाम।

सो बीतक श्री देवचन्द्रजीकी, लिखी अल्ला कलाम।।५।।

इसी प्रकार मुहम्मद सल्लिलाहु अलैहि वसल्लम अरब में कुरआन का ज्ञान लेकर अवतरित हुए। उस कुरआन में कथानकों के रूप में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी का प्रसंग वर्णित है।

जनम से आखर लग, जो लों मोमिन पहुँचे धाम।

सो सारी हकीकत इनमें, सब पूरे मनोरथ काम।।६।।

कुरआन में श्री देवचन्द्र जी के जन्म से लेकर दूसरे तन (श्री मिहिरराज) से होने वाली लीला तथा ब्रह्मसृष्टियों के परमधाम पहुँचने तक की सारी वास्तविकता का वर्णन है। इसमें यह भी दर्शाया गया है कि परब्रह्म आत्माओं की सभी इच्छाओं को पूर्ण करके निजधाम ले जायेंगे।

भावार्थ– कुरआन में छः दिन की लीला (व्रज, रास, अरब, सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी, और ब्रह्ममुनियों के द्वारा) का वर्णन दूसरे, सोलहवें, तथा ३०वें पारे में किया गया है। इसी प्रकार ८वें पारे में ७ सात दिनों की लीला का वर्णन किया गया है, जिसमें परमधाम जाने का भी प्रसंग सम्मिलित है।

एक सौ बीस बरस लों, करी दज्जाल सों जोर।
यहां लों इनसे लड़ा, करके बड़ा सोर।।७।।

कुरआन में यह भी वर्णित है कि दज्जाल १२० वर्षों तक खूब शोर-शराबे के साथ सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी, और ब्रह्ममुनियों (ईसा रूह अल्लाह, इमाम मुहम्मद महंदी, तथा मोमिनों) से लड़ा।

भावार्थ– १२० वर्ष के समय का आशय वि.सं.

१६३८–१७५८ तक है, जिसमें जागनी लीला के १२० वर्ष आते हैं। इसमें तीनों स्वरूपों (श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी, तथा महाराजा छत्रशाल जी या अन्य ब्रह्ममुनियों) के द्वारा जो जागनी कार्य किया गया, उसमें माया (अज्ञान) के द्वारा कदम–कदम पर विरोध किया जाता है। इसे ही दज्जाल (अज्ञान, कलियुग) से लड़ना कहा गया है। दज्जाल से युद्ध का वर्णन २५, २२ तथा २७ वें पारे में किया गया है।

पहिली लड़ाई महम्मद सों, फेर उनके यार।
ता पीछे श्री देवचन्द्रजी सों, करी खबर परवर दिगार।।८।।

दज्जाल (अज्ञानता से ग्रसित लोगों) ने सर्वप्रथम मुहम्मद साहिब से लड़ाई की, इसके पश्चात् उनके साथियों से। जागनी लीला में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी

से दज्जाल (अज्ञानी लोगों) का युद्ध हुआ। ऐसी अवस्था में प्रियतम परब्रह्म ने उनकी सुधि ली।

भावार्थ– मुहम्मद साहब को मक्का वालों के खूनी विरोध को झेलना पड़ा और अपनी प्राण रक्षा के लिये गुफा में छिपना पड़ा। तत्पश्चात् छिपकर मदीने पहुँचे। इसी प्रकार हज़रत अली का कत्ल हुआ और उनके दोनों बेटों हसन व हुसैन को भी अत्याचारी मुआविया के कारण अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। कर्बला का रक्त रंजित इतिहास इस सम्बन्ध में बहुत कुछ कहता है।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी को बचपन से ही अनेकों कठिनाइयों से जूझते हुए धनी की खोज में लगना पड़ा। नवतनपुरी में भी बल्लभ मत के कट्टरपन्थियों से उन्हें जूझना पड़ा। जागनी लीला में उन्हें कई प्रकार के विरोधों को झेलना पड़ा।

श्रीजी साहिबजी और गिरोह सों, लड़ा इन दरम्यान।

बीच बिहारीजी के बैठके, किया बड़ा कुफरान।।९।।

इस जागनी लीला में दज्जाल ने श्री प्राणनाथ जी और ब्रह्ममुनियों से बहुत अधिक लड़ाई की। गादीपति बिहारी जी के अन्दर बैठकर उसने बहुत अधिक अत्याचार किया।

भावार्थ– श्रीजी जागनी कार्य के लिए जहाँ भी गये, वहाँ स्थानीय कथावाचक पण्डितों, मौलवियों, या मुगल सेना का विरोध झेलना पड़ा। दीपबन्दर, मस्कत बन्दर, अब्बासी, मेड़ता, उदयपुर, दिल्ली, मन्दसौर, औरंगाबाद, रामनगर में होने वाली घटनायें इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। अधिकतर स्थानों पर तो उन्हें भूख–प्यास से भी जूझना पड़ा। कई जगहों पर भिक्षा के अन्न पर अपना गुजारा करना पड़ा, वहीं वृक्षों के नीचे अपनी रातें

गुजारनी पड़ी। बिहारी जी ने खंभालिया के राजा से चुगली करके श्री मिहिरराज जी के प्राण ही संकट में डाल दिये थे। इसी प्रकार उनकी और बालबाई जी की कृपा से श्री मिहिरराज जी को अरब से आते समय और हब्से के प्रसंग में कारागार में रहना पड़ा।

इन सारों की साहिदी, लिखी अल्ला-कलाम।
सो मोमिन बीतक अपनी, आगे खोले खलक आम।।१०।।

इन सभी घटनाओं की साक्षी कुरआन में संकेतों द्वारा, कथानकों के रूप में, लिखी है। इन रहस्यों को मात्र ब्रह्ममुनि ही जानते हैं और अपने इन घटनाक्रमों का वर्णन वे संसार के लोगों के सामने करेंगे।

विरोध सारा विश्व का, भागत इन बीतक।

सबको पहिचान होवहीं, पहुँचे कदमों हक।।११।।

इन घटनाक्रमों के स्पष्ट हो जाने से सारे संसार का विरोध समाप्त हो जायेगा। इससे सारे संसार के लोगों को एक सच्चिदानन्द परब्रह्म की पहचान हो जायेगी और वे एकमात्र उनकी ही शरण में जायेंगे।

भावार्थ– वेश–भूषा, भाषा, और रीति–रिवाजों के कारण ही संसार में विरोध बना रहता है। इसकी ओट में धर्म का सहारा लिया जाता है, जबकि संसार के सभी मूल धर्मग्रन्थों का सिद्धान्त एक है। एक अद्वैत ब्रह्म, ध्यान, प्रेम, समर्पण, आदि के सम्बन्ध में प्रायः सभी धर्मग्रन्थों का दृष्टिकोण लगभग एक जैसा ही है, किन्तु उनकी विकृत व्याख्या करके संसार को धर्म के नाम पर युद्धों की अग्नि में झोंक दिया जाता है। यदि वेद और

कतेब का एकीकरण हो जाय, अर्थात् हिन्दू तन में आने वाले श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी, तथा अन्य ब्रह्ममुनियों की साक्षी कतेब ग्रन्थों में भी मिल जाय, तथा निष्पक्ष हृदय से अन्तरात्मा की आवाज को सुना जाय, तो सम्पूर्ण विश्व को एक आंगन में आने (एकता स्थापित होने) में जरा भी देर नहीं लगेगी।

सेवे सब मोमिन को, पहिचान के निसबत।
भूल माने अपनी, बखत हुआ क्यामत।।१२।।

अब अखण्ड ज्ञान (तारतम) के प्रकाश के फैलने का समय आ गया है। सभी मत-मतान्तरों के अनुयायी तारतम ज्ञान के प्रकाश में अपने मिथ्या सिद्धान्तों का परित्याग करके अपनी भूल मान रहे हैं। उन्होंने अक्षरातीत से अपना सम्बन्ध जोड़ा है और परमधाम के

ब्रह्ममुनियों की सेवा कर रहे हैं।

सिताबी चारों खूटमें, पसर गई पहिचान।
तब सब कोई दौड़िया, ले ले के ईमान।।१३।।

अब तारतम वाणी के प्रकाश में चारों दिशाओं में स्वलीला अद्वैत सच्चिदानन्द परब्रह्म की पहचान फैल गयी है, जिससे सभी लोग एक परब्रह्म पर अटूट आस्था लेकर उन्हें पाने के लिये प्रेम लेकर दौड़ लगा रहे हैं।

श्री देवचन्द्रजी सरूपकी, मूल जनम की बीतक।
सम्वत सोलह सै अड़तीसे, सो सत्रह सौ बावन लों हक।।१४।।

वि.सं. १६३८ में श्री देवचन्द्र जी के जन्म से लेकर वि.सं. १७५२ तक परब्रह्म की लीला हुई।

भावार्थ– यद्यपि वि.सं. १७५१ में श्रीजी की अन्तर्धान लीला हो चुकी थी, फिर भी गुम्मट जी के तहखाने में वे ब्रह्ममुनियों को प्रत्यक्ष दर्शन देकर वार्ता करते रहे। इस प्रकार, वि.सं. १७५२ तक श्रीजी की प्रत्यक्ष लीला मानी जाती है।

मास आसो सुदि चतुर्दसी, इत माह सुदि चौदस।
बरस एक सौ दस, ऊपर मास चार सरस।।१५।।

वि.सं. १६३८ के आश्विन मास में शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी से लेकर माघ वि.सं. १७४८ के मास में शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी तक ११० वर्ष और ४ महीने होते हैं।

सो सबमें जाहिर भई, छिपी न रही लगार।
दिन क्यामत के इनसे, करी जाहिर परवरदिगार।।१६।।

इन दोनों स्वरूपों के द्वारा होने वाली ब्रह्मलीला का प्रकाश चारों ओर फैल गया। कहीं भी किसी प्रकार से यह लीला छिपी नहीं रही। कियामत के जाहिर होने, अर्थात् अखण्ड मुक्ति देने वाले ज्ञान के फैलाव, का यही समय था। प्रियतम परब्रह्म ने इन दोनों तनों के द्वारा अपनी लीला दर्शायी।

मसरक और मगरव से, दौड़ी आवत खलक।

ताको नीयत माफक, दीदार पावत हक।।१७।।

पूर्व और पश्चिम से, अर्थात् वेद-कतेब दोनों के अनुयायी, इन स्वरूपों का दर्शन करने के लिये आये। उनकी आस्था एवं विश्वास के अनुसार धाम धनी ने उन्हें दर्शन दिया।

भावार्थ- यद्यपि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही श्री

प्राणनाथ जी के चरणों में आये, किन्तु जिनके दिल में जैसा भाव था, उसी के अनुसार उन्हे दर्शन मिला। भीमभाई, लालदास, शेखबदल, और जहान मुहम्मद का श्रीजी पर अटल विश्वास था, जिसके कारण उन्होंने उनके स्वरूप में परब्रह्म का दर्शन किया।

जो जैसा मनोरथ, करत है मनमें।

पूरन सबही होत है, सोहबत मोमिनों से।।१८।।

जिसके मन में जैसी इच्छा होती है, वह जागनी लीला में भाग लेने वाले इन ब्रह्ममुनियों की सान्निध्यता से अवश्य ही पूर्ण होती है।

श्री महामति कहे ऐ साथजी, ए मेहर है हक।

जैसा ईमान जिनका, होत तिन माफक।।१९।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! जिसके मन में जिस तरह का ईमान (विश्वास) होता है, धाम धनी की मेहर (कृपा) से वह उसी प्रकार पूर्ण होता है।

प्रकरण ।।१२।। चौपाई ।।५०२।।

दोनों स्वरूपों का मिलाप

इस प्रकरण में सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी तथा श्री मिहिरराज जी के मिलन का प्रसंग दर्शाया गया है।

श्री देवचन्द्रजी के अमलमें, साथ को सुख हुआ अंग।
तिनकी चरचा सुनते, मावत नाहीं उमंग।।१।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के द्वारा की गई जागनी लीला से सुन्दरसाथ के दिल में बहुत अधिक आनन्द का अनुभव हुआ। उनकी चर्चा सुनने पर इतना उमंग आता था कि उसका वर्णन नहीं हो सकता।

गांगजी भाई सेवहीं, उच्छव रसोई नित।
नई नई भातों सेवहीं, हुआ अंग में उमंग इत।।२।।

श्री गांगजी भाई के मन में सुन्दरसाथ की सेवा करने के लिये अपूर्व उत्साह रहता था। वे नये-नये तरीकों से प्रतिदिन तरह-तरह के व्यंजन बनवाकर सुन्दरसाथ को खिलाते थे।

कोई नया जो आवहिं, बीच इन निज धाम।
तो श्री देवचन्द्रजी सुख पावहीं, सो केता कहों इस ठाम।।३।।

जब कोई नया सुन्दरसाथ तारतम ज्ञान ग्रहण करके श्री राज जी के चरणों में आता था, तो श्री देवचन्द्र जी को इतनी अधिक प्रसन्नता होती थी कि इस संसार में उसका वर्णन हो पाना सम्भव नहीं है।

कोई नए साथी को ल्यावहीं, समझाय के दीन में।
तिन ऊपर राजी होवहीं, क्या नेकी करों इन सें।।४।।

यदि कोई सुन्दरसाथ किसी नये व्यक्ति को ज्ञान द्वारा समझाकर धनी के चरणों में लाता था, तो श्री निजानन्द स्वामी उस पर बहुत अधिक प्रसन्न होते थे कि मैं इस व्यक्ति का कौन सा उपकार करूँ?

दिलमें साथ आवन का, करे मनोरथ मन।
आदर होवे तिनका, ए धाम की सैंयन।।५।।

धनी श्री देवचन्द्र जी के हृदय में यह प्रबल इच्छा थी कि अधिक से अधिक सुन्दरसाथ की शीघ्र जागनी हो। परमधाम की जो भी ब्रह्मसृष्टि जाग्रत होकर धनी के चरणों में आती थी, उसका वहाँ (गांगजी भाई के घर पर) बहुत अधिक सम्मान होता था।

इन भोम में देखिया, साथ धनी श्री धाम।

कौन ब्रत इनसों करों, पूरों मनोरथ काम।।६।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी हमेशा यही विचार किया करते थे कि मैंने इस संसार में परमधाम से आये हुए धनी के लाडले सुन्दरसाथ को देखा है। मैं इनसे किस प्रकार का व्यवहार करूँ कि इनकी सारी इच्छायें पूर्ण हों।

इनको राजें भेजिया, देऊं धाम–न्यामत।

ए कौन भांतों सुख पावहीं, सोई करों मैं इत।।७।।

धाम धनी ने इन्हें संसार में भेजा है, इसलिये मुझे इन्हें परमधाम की सम्पदा (ज्ञान, प्रेम, शोभा, लीला, आदि का रस) देना चाहिए। मुझे वही कार्य करना चाहिए जिससे ये सुखी रह सकें।

ए श्री धाम से आये, खेल माया का देखन।

इनको खबर कछू नहीं, पर मैं पहिचानत सैंयन।।८।।

ये सुन्दरसाथ परमधाम से माया का खेल देखने के लिये आये हुए हैं। यद्यपि इन्हें परमधाम या अक्षरातीत की कोई भी जानकारी नहीं है, किन्तु मैं तो इन्हें अच्छी तरह से पहचानता हूँ।

ए पड़े माया मिने, होय गये परबस।

इनको समझावने, कौन लेवे जस।।९।।

ये सुन्दरसाथ इस मायावी जगत में आकर दूसरों (सांसारिक सम्बन्धों, लौकिक आवश्यकताओं, प्रकृति के नियमों, आदि) के वशीभूत हो गये हैं। इनको ज्ञान का प्रकाश देकर माया से निकालने का यश मेरे अतिरिक्त और कौन लेगा?

मैं बाहिर निकसों, ढूंढ के काढ़ों साथ।

मोकों श्री धाम धनीयने, इनके पकड़ाये हाथ।।१०।।

मेरा यह कर्त्तव्य है कि मैं नवतनपुरी से बाहर के क्षेत्र में भ्रमण करूँ और जगह-जगह जाकर सबको जाग्रत करके माया से निकालूँ। धाम धनी ने मुझे इनका हाथ पकड़ाया है, अर्थात् इन्हें जाग्रत करने का सारा उत्तरदायित्व मुझे दिया है।

तो यह मेहनत, मोकों करनी जरूर।

तिस वास्ते साथ के आगे, चरचा का चलावें पूर।।११।।

इसलिये परमधाम की इन आत्माओं को जगाने के लिये मुझे परिश्रम करना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये वे सुन्दरसाथ को अपनी अमृतमयी चर्चा का बहुत अधिक रसपान कराते थे।

नित्याने चरचा होत है, सो केती कहों वीतक।

साथ रहे नजर में, आज्ञा दई मोहे हक।।१२।।

गांगजी भाई के घर में प्रतिदिन इस प्रकार की रसमयी चर्चा होती रहती थी, जिसके आनन्द का वर्णन कर पाना मेरे लिये सम्भव नहीं है। धाम धनी की आज्ञा मानकर सद्गुरु महाराज इस बात पर हमेशा अपना ध्यान केन्द्रित किए रहते थे कि मुझे अधिक से अधिक संख्या में सुन्दरसाथ को जगाना है।

अजबाई भतीजी मेघबाई की, रहे गांगजी के घर में।

स्यामजी को ब्याही थी, हुई बातें इनसे।।१३।।

मेघबाई की भतीजी अजबाई थी, जो गांगजी भाई के बेटे श्याम जी से ब्याही थी। वह अपने (गांगजी भाई के) घर में होने वाली आड़िका लीला की बातें श्री मिहिरराज

के घर आकर बताने लगी।

मेघबाई हरवंश के, आवे अजबाई।

देखे गाँगजी के घरमें, राज की मेहरबानगी आई।।१४।।

हरिवंश ठाकुर की पत्नी मेघबाई थी, जो अजबाई की बुआ लगती थी। वह अपनी बुआ से वहाँ की सारी बातें करती थी कि किस प्रकार वहाँ धाम धनी की कृपा से अलौकिक लीलायें हो रही हैं।

राज नित देवें दीदार, आरोगे बेर तीन।

वस्ता मांगे आरोगते आज, क्यों फीकी खारी कीन।।१५।।

अजबाई अपनी बुआ मेघबाई से कहती है कि हे बुआ! मेरे घर जब सद्गुरु महाराज चर्चा करते हैं, तो श्री राज जी प्रतिदिन श्री कृष्ण जी के रूप में प्रकट हो जाते हैं

और दर्शन देते हैं। तीन बार भोजन भी करते हैं। भोजन करते समय खाने की अपनी इच्छित वस्तु भी मांगते हैं। यदि कोई वस्तु फीकी या अधिक खारी होती है, तो उसके बारे में भी कहते हैं कि यह फीकी लग रही है या इसमें अधिक नमक डाल दिया गया है।

भावार्थ– जब सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के तन से जागनी लीला प्रारम्भ होती है, उस समय परमधाम की वाणी का अवतरण नहीं हुआ था। इसलिये सुन्दरसाथ को व्रज–रास की लीलाओं के माध्यम से एकत्रित करने तथा उन्हें यह याद दिलाने के लिये कि व्रज –रास में आप सभी मेरे साथ थे, धाम धनी ने आड़ीका लीला प्रारम्भ की। यह कोई चमत्कारिक लीला नहीं थी, बल्कि धाम धनी का आवेश ही श्री कृष्ण जी के रूप में प्रकट होकर भोजन आदि करने की लीला करता था। उन

लीलाओं को देखकर सुन्दरसाथ को यह विश्वास हो गया कि निश्चित रूप से हम ही व्रज-रास में थे तथा हमें परमधाम ले जाने के लिये धाम धनी सद्गुरु रूप में प्रकट हुए हैं।

तंबोल दे आरोगते, और मिठाई कै भांत।
जमुना जल अलाखल, चल दिखावे एकान्त।।१६।।

वे अनेक प्रकार की मिठाइयां आदि ग्रहण करते हैं तथा भोजन के पश्चात् पानों का बीड़ा भी लेते हैं। एकान्त में सुन्दरसाथ को ले जाकर यमुनाजी का खलखलाता हुआ अति स्वच्छ जल भी दिखाते हैं।

सैंयन को कंचन की, एक दिन कंसेड़ी दई।
कोई दिन कछु देवहीं, यों करे नित सादी।।१७।।

एक दिन उन्होंने सुन्दरसाथ को सोने की भगौनी (कंसेड़ी) भी लाकर दी। किसी दिन कुछ लाकर किसी को देते हैं, तो किसी दिन कुछ। इस प्रकार नित्य ही आनन्द की नयी-नयी लीलायें करते हैं।

अजबाई नित बातें करें, दीदार धनी निरधार।
हमतो नित देखत हैं, तुमहूं करो दीदार।।१८।।

अजबाई अपनी बुआ के घर प्रतिदिन आकर श्री राज जी के दर्शन की बातें करती थी। वह अपनी बुआ से आग्रह भी करती थी कि हे बुआ! हम लोग तो प्रतिदिन श्री कृष्ण जी का दर्शन करते हैं, तुम भी चल कर दर्शन करो।

तब मेघबाई ने कही, जाओ गोवर्धन तुम।

ल्याओ खबर इनकी, फेर बुलाये ले जाओ हम।।१९।।

तब मेघबाई ने अपने देवर गोवर्धन जी से कहा– गोवर्धन! तुम गांगजी भाई के घर जाकर देखो कि वहाँ क्या हो रहा है? वहाँ की सारी सूचना मुझे दो और यदि अजबाई की बातों में सच्चाई लगती है तो हमें भी वहाँ ले चलो।

पद्मा स्त्री गोवर्धन की, सो पहिले गई सोहबत।

तिन भी आये बातें करी, मैं देखी लीला इत।।२०।।

गोवर्धन जी स्वयं न जाकर अपनी पत्नी पद्मा को वहाँ भेज देते हैं। वह सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में जाती है और वहाँ होने वाली दर्शन लीला को प्रत्यक्ष देखती है। घर आकर पद्मा ने दर्शन लीला की सारी बातें

बतायीं कि यह बात बिल्कुल सच है कि वहाँ श्री कृष्ण जी प्रतिदिन दर्शन देते हैं, भोजन करते हैं। यह सारा दृश्य मैंने अपनी आँखों से देखा है।

तब गोवर्धन गये, जाय के लगे कदम।
मैं सरन तुम्हारे आइया, जगावने आतम।।२१।।

तब गोवर्धन जी गांगजी भाई के घर जाकर सदगुरु महाराज के चरणों में शीश झुकाकर बोले – हे सद्गुरु महाराज! मैं आपकी शरण में अपनी आत्मा की जाग्रति के लिये आया हूँ।

सम्वत सोलह सौ सतासिया, ए कार्तिक में मजकूर।
यहां सेती उदय भई, उदया मूल अंकूर।।२२।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में श्री गोवर्धन जी

वि.सं. १६८७ में कार्तिक मास में गये। यहाँ से श्री केशव जी के परिवार में ब्रह्मज्ञान का प्रकाश फैलना शुरू हुआ, तथा गोवर्धन, मिहिरराज, एवं उद्धव जी की आत्मा जागनी की राह पर चल पड़ी।

भावार्थ– अंकूर शब्द का तात्पर्य आत्मा से है। मूल अँकूर के जाग्रत होने का तात्पर्य अपने परआत्म स्वरूप का बोध होना है।

अन्तस्करन आतम के, जब ये रह्यो समाए।

तब आतम परआतम के, रहे न कछू अन्तराए।।

सागर ११/४४

किन्तु यह अवस्था खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार के अवतरण के पश्चात् ही प्राप्त हो सकती है। बीतक की उपरोक्त चौपाई के चौथे चरण में कथित "उदया मूल अंकूर" का तात्पर्य तारतम ज्ञान द्वारा परात्म के बोध से

सम्बन्धित है।

चुगली खाई कोतवाल सों, एक कायस्थ के घर।
जोरू मर्द बैठत हैं, तुम क्यों न लेत खबर।।२३।।

एक दिन किसी चुगलखोर ने नगर कोतवाल से चुगली की कि इस नगर में देवचन्द्र जी एक कायस्थ हैं, जिनके यहाँ स्त्री–पुरूष एक साथ बैठते हैं और वहाँ प्रेम की चर्चा होती है। आप इसकी जाँच क्यों नहीं करते कि आखिर वहाँ क्या हो रहा है?

भावार्थ– पूर्व में दर्शाया जा चुका है कि गांगजी भाई की पुत्रवधू (श्याम जी की पत्नी) अजबाई, हरिवंश की पत्नी मेघबाई की भतीजी थी। इस प्रकार से गांगजी भाई का क्षत्रिय परिवार होना सिद्ध होता है। बीतक की चौपाई के दूसरे चरण में जिस कायस्थ के घर चर्चा होने की बात

कही गई है, वे सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ही हैं। सम्भवतः ऐसा प्रतीत होता है कि श्री गांगजी भाई ने अपने वृहद् निवास में से एक भाग सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के निवास के लिए निश्चित कर दिया था। इसलिये इस चौपाई के दूसरे चरण में कायस्थ का घर कहकर सम्बोधित किया गया है।

दोय चोपदार पठवाय दिये, तुम जाय ल्याओ बात।
मोसों आय जाहिर करो, जो कछू होय विख्यात।।२४।।

नगर कोतवाल ने दो सिपाहियों को इस उद्देश्य से भेज दिया कि तुम वहाँ जाकर वास्तविकता की जाँच करो और मुझे आकर सारी सूचना दो कि सत्य क्या है?

सो चुगल दिखाय पीछे फिरा, ए चले जायें सामे दीपक।
छेह न आवे तिनका, जहाँ लगे मन सक।।२५।।

वह चुगलखोर दूर से श्री देवचन्द्र जी का निवास दिखाकर वापस लौट गया। एक सिपाही जब श्री देवचन्द्र जी (गांगजी भाई) के निवास को लक्ष्य करके आगे बढ़ा, तो धाम धनी ने ऐसी लीला की कि सिपाही पूरी रात चलता तो रहा, लेकिन उसके और दीपक के बीच की दूरी का अंत नहीं हो पाया अर्थात् वह गांगजी भाई के भवन तक पहुँच नहीं पाया। जब तक वह चलता रहा, उसको गांगजी भाई के घर पर दीपक सामने जलता हुआ दिखाई देता रहा और उसके मन में शक गहराता गया कि देखने में तो लगभग दो फर्लांग की दूरी है, लेकिन मैं वहाँ पहुँच क्यों नहीं पा रहा हूँ?

एक फिरा कुँए पर, चार पहर रात।

दूजा बारह कोस का, पन्थ किये जात।।२६।।

चुगलखोर के दिये हुये निर्देश पर गांगजी के भवन तक पहुँचने के प्रयास में एक सिपाही तो पूरी रात एक कुंए के चारों ओर परिक्रमा देता रहा और दूसरा सिपाही दीपक के पीछे-पीछे १२ कोस (२४ मील या ३८.४ कि.मी.) तक चला गया।

जाय निकसा धरोल में, तहाँ भई फजर।

पूछा पनिहारी को, मैं कौन गाँव देखत नजर।।२७।।

चलते-चलते वह धरोल तक पहुँच गया। जब वह धरोल में पहुँचा, तो उस समय प्रातः काल का उजाला फैल चुका था। उसने पानी भरने वाली एक स्त्री से पूछा कि अरे भाई! मैं तो जामनगर (नवानगर) में गांगजी भाई

का मकान ढूँढ रहा था, ये कौन–सा गाँव मैं देख रहा हूँ?

कैसी बात कहत है, के ज्यों होत दिवाना।

सहर मोहवड़जीय का, तैने जान्या अपना।।२८।।

वह पानी भरने वाली महिला कहने लगी कि अरे भाई! तुम पागलों जैसी बहकी–बहकी बातें क्यों कर रहे हो? ये तो मोहबड़ जी का नगर है। तुम इसे नवानगर क्यों मान रहे हो?

खिसियाय के पीछे फिरा, आया मुरक के घर।

घर में बड़ी दुचिताई, लगी लड़ाई लग फजर।।२९।।

यह सुनकर क्रोध में तमतमाता हुआ वह सैनिक अपने घर वापस लौट आया। रात्रि में दोनों सैनिकों के अपने घर न पहुँच पाने के कारण बहुत अधिक चिन्ता का

वातावरण था, और उनकी पत्नियों में उजाला होने तक झगड़ा चलता रहा।

भावार्थ– दोनों पत्नियों में झगड़ा होने का मूल कारण यह था कि दोनों एक–दूसरे पर यह संशय कर रही थीं कि उसे मेरे पति के बारे में अवश्य पता है, लेकिन वह बताना नहीं चाहती। जबकि वास्तविकता यह थी कि दोनों में से किसी को भी मालूम नहीं था।

दोनों के घरमें, बड़ा जो पड़िया सोर।

एक दूजे को पूछत, कहो खबर कछू और।।३०।।

सैनिकों के घर न पहुँच पाने के कारण दोनों के घर में बहुत कोलाहल हो रहा था। दोनों घरों के लोग एक–दूसरे से पूछते फिर रहे थे कि क्या तुम्हारे घर वाले (सिपाही) आ गये? उनके आने की कुछ सूचना

बताओ।

फजर को आय के, दोनों कही वीतक।
इन चुगलें हमको मारिया, ल्याया दिलमें सक।।३१।।

सबेरे-सबेरे आकर उन दोनों सिपाहियों ने अपनी आप-बीती बताई कि किस तरह वे कुंए के चारों तरफ घूमते फिरे थे और चलते-चलते धरोल तक पहुँच गये थे। चुगलखोर ने तो हमें मार ही दिया होता। इसकी झूठी बातें में फँसकर हम श्री देवचन्द्र जी पर शक कर बैठे थे।

आये कोतवाल से कह्या, बातें करी बनाय।
जो चुगल हम को मिले, तो मारें गरदन ताय।।३२।।

दोनों सैनिक कोतवाल से आकर मिले और रात्रि को घटित हुई सारी बातें बताई तथा क्रोधपूर्वक कहने लगे

कि यदि वह चुगलखोर आज मिल जाये, तो हम उसकी गर्दन उड़ा देंगे।

हमको इन चुगल ने, मार डारे आज।
जागा ऐसी बताई, सूझे न कोई काज।।३३।।

उस चुगलखोर ने तो आज हमें मरवा ही दिया होता। उसने ऐसी विचित्र जगह बता दी कि हमारी बुद्धि ही काम नहीं कर रही थी कि हम क्या करें? हमें देवचन्द्र जी के भवन पर दीपक जलता हुआ तो दिखता था, लेकिन सारे प्रयास करके भी हम उस तक पहुँच नहीं पाये। ऐसा चमत्कार हमने पहले कभी नहीं देखा था।

विशेष– श्री राज जी के द्वारा की गई इस चमत्कारिक लीला से दोनों सैनिकों के मन में डर बैठ गया कि हमने किसी महापुरुष के प्रति अपने मन में पाप का विचार ले

लिया था, जिसके कारण हमें ये दिन देखना पड़ा। हमारा कहीं अनिष्ट न हो जाये।

इन भांत कै माजिजे, और लाखों दिये निसान।
पर साथ कोई न समझे, कछू न हुई पहिचान।।३४।।

इस प्रकार बहुत सी चमत्कारिक लीलायें हुईं। श्री देवचन्द्र जी के तन से धाम धनी ने आड़िका लीला के माध्यम से अनेकों प्रकार से अपनी पहचान दी कि मैं श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में विराजमान होकर लीला कर रहा हूँ, किन्तु परमधाम की वाणी का अवतरण न होने के कारण सुन्दरसाथ उन लीलाओं में रसमग्न तो हो गया लेकिन धनी के स्वरूप की कुछ भी पहचान नहीं कर सका।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में लाखों शब्द का

प्रयोग अतिश्योक्ति अलंकार के रूप में हुआ है। चमत्कार और आड़िका लीला से थोड़ी देर के लिये सम्मोहन तो होता है, किन्तु इससे स्थिरता वाली वास्तविक जागनी नहीं हो सकती। आत्म–जाग्रति के लिए तारतम ज्ञान का प्रकाश और प्रेम अनिवार्य है। यही कारण है कि सृष्टि के प्रत्येक मनीषी ने चमत्कारिक लीलाओं को आत्म–साक्षात्कार में बाधक माना है। ऐसा माना जाता है कि चुगली वाली इस घटना के पश्चात्, सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने गांगजी भाई का घर छोड़कर नगर के बाहर एक बाग में अपना निवास बना लिया और वहीं पर अपनी अमृतमयी वाणी का रसपान कराने लगे। किन्तु चर्चा के अतिरिक्त समय पर उनका निवास गांगजी भाई का घर ही रहा।

"जिन थम्भों कर धनी अपने, जुगते दिए बंध।" प्रकाश

हिन्दुस्तानी २३/६ के कथन से यह बात स्पष्ट होती है। बिहारी जी की गादी के बंद हो जाने के पश्चात्, महाराजा छत्रशाल जी ने इसी स्थान की देखभाल के लिए केशरबाई और तेजस्वी बाबा को भेजा था। बाद में यह स्थान खीजड़ा मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। केशरबाई के जाने से पूर्व वहाँ किसी भी भवन का निर्माण नहीं हुआ था। इस बात की साक्षी लल्लू भट्ट कृत "बीतक" में इस प्रकार दी गयी है–

आहीं मंदिर आगल थाशे, सत्तर एकावन पार।
त्यां सुधी परदेशमां, वर्ताशे बेहेवार।।
बीज बोयुं आ घड़ी, ते आगल थासे वृक्ष।
साकुण्डल ज्यारे जांगशे, त्यारे पूर्ण कारसे पक्ष।।

लल्लू भटट् कृत वर्तमान दीपक २१/१४,१५

सम्बत सौलह सौ पचहत्तरा, भादों वदि चौदस नाम।

प्रथम जाम और वार रवि, प्रगटे धनी श्री धाम।।३५।।

वि.सं. १६७५ में भादों मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को रविवार के दिन प्रातः काल ९ बजे श्री मिहिरराज जी का जन्म हुआ, जिसमें अक्षरातीत श्री राज जी ने विराजमान होकर लीला की।

हलार देस पुरी नौतन, उदर बाई धन।

केसव ठाकुर पिता कहियत, तहां श्री राज प्रगटन।।३६।।

हलार प्रान्त में नवतनपुरी नगर में श्री मिहिरराज के पिता केशव ठक्कर और उनकी माता धनबाई का निवास था। इन्हीं मिहिरराज जी के धाम हृदय में विराजमान होकर अक्षरातीत श्री राज जी ने लीला की।

भावार्थ– उपरोक्त ३५ व ३६ चौपाई के चौथे चरण में

"प्रगटे धनी श्री धाम" तथा "तहां श्री राज प्रगटन" लिखा है। इसका आशय यह है कि श्री मिहिरराज जी के धाम हृदय में अक्षरातीत श्री राज जी ने प्रकट होकर लीला की। अक्षरातीत माता के गर्भ में नहीं आ सकते, इसलिए मिहिरराज जी के जन्म को अक्षरातीत का प्रकटन नहीं माना जा सकता है। गर्भ से जीव के बाहर आने पर ही आत्मा उसमें प्रविष्ट होती है, जैसे- व्रज में युवा कन्याओं के तन में ब्रह्मांगनाओं ने प्रवेश किया तथा जागनी ब्रह्माण्ड में तेजबाई के किशोरावस्था के तन में अमलावती की आत्मा ने प्रवेश किया।

जब आत्मा प्रेम में डूबकर अपने प्राणेश्वर को पुकारती है, तो अक्षरातीत जागनी लीला करने के लिए आवेश स्वरूप से उसके धाम हृदय में विराजमान हो जाते हैं। यद्यपि बातिन (गुह्य) रूप से मूल सम्बन्ध के कारण राज

जी हर आत्मा के धाम हृदय में विराजमान हैं, लेकिन लीला रूप में उन्हें आवेश स्वरूप में विराजमान होना पड़ता है। जैसे- वि. सं. १६७८ में श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में तथा वि. सं. १७१५ में श्री इंद्रावती जी के धाम हृदय में विराजमान हुये हैं। "प्रगटे धनी श्री धाम" तथा "तहां श्री राज प्रगटन" का यही भाव है।

सब भाई भेले रहत हैं, सामलजी तिनमें सिरदार।
बड़ा गोवर्धन कह्या, जो धामलीला में खबरदार।।३७।।

श्री केशव ठक्कर जी के पाँचों पुत्र एक ही संयुक्त परिवार में रहा करते थे। हरिवंश जी के कपाईया चले जाने के कारण, सभी भाइयों में श्यामल जी प्रमुख थे। गोवर्धन जी श्री मिहिरराज जी से बड़े थे और वे हमेशा परमधाम की लीला के चिंतन मे डूबे रहते थे।

श्री देवचन्द्रजी पुरी नवतन, आये इहाँ बसत।

सेवा गोवर्धन करें, पहुँचा नजीक बखत कयामत।।३८।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी नवतनपुरी में आकर निवास करने लगे। उनकी सेवा में गोवर्धन जी हमेशा तत्पर रहते थे। गोवर्धन जी धनी श्री देवचन्द्र जी की सेवा पूरी निष्ठा के साथ करते थे। उन्हें ऐसा लगता था कि जैसे उनकी आत्म–जाग्रति का समय बहुत ही निकट है।

पहिले मिलाप गोवर्धन का, श्री देवचन्द्र जी से।

तहां श्री राजके दीदार की, बातें करे घरमें।।३९।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में गोवर्धन जी बहुत पहले जा चुके थे। जब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी चर्चा करते थे, तो उनके धाम हृदय में विराजमान श्री राज जी, श्री कृष्ण जी के रूप में प्रकट होकर सबको

दर्शन देते थे। गोवर्धन जी उस लीला का वर्णन घर आकर सबके सामने सुनाते थे।

तब कह्या गोवर्धन को, मोहे ले जाओ तुम।
कह्या ए मोसों न होवहीं, बिना श्री देवचन्द्रजी के हुकुम।।४०।।

एक दिन श्री मिहिरराज जी ने गोवर्धन जी से कहा कि मुझे भी वहाँ ले चलो। यह सुनकर श्री गोवर्धन जी ने स्पष्ट मना कर दिया कि बिना सद्गुरू महाराज के आदेश के, मैं तुम्हे वहां नहीं ले चल सकता।

तब गोवर्धन के संग, चले श्री मेहेराज।
तहाँ हाथ छुड़ाय के गये, तित रोये गिरे इन काज।।४१।।

एक दिन गोवर्धन जी के पीछे-पीछे श्री मिहिरराज जी सद्गुरु महाराज से मिलने के लिए चल पड़े। गोवर्धन जी

ने उन्हें बहुत मना किया, लेकिन वह जबरन रोते हुए उनके पीछे–पीछे चले गए।

भावार्थ– "हाथ छुड़ाकर जाना" एक मुहावरा है, जिसका तात्पर्य है– रोके जाने पर भी बलपूर्वक चले जाना। श्री मिहिरराज जी का हृदय सद्गुरु जी से मिलने के लिए इतना तड़प रहा था कि भाई के मना करने पर भी वे उनके पीछे–पीछे रोते हुए जबरन चले गये, इसी को कहते हैं "हाथ छुड़ाकर जाना।"

अरज करी गोवर्धनने, श्री देवचन्द्रजी सों आए।

आज रोय के पीछे लगे, तब भाग के आया धाय।।४२।।

सद्गुरु महाराज के चरणों में पहुंचकर श्री गोवर्धन जी ने उनसे प्रार्थना की– हे सद्गुरू महाराज! मेरा भाई आपके दर्शन करना चाहता है और वह पिछले कई दिनों से यहां

आने की लिए जिद कर रहा था। मेरे मना करने पर भी आज वह रोते-रोते मेरे पीछे भाग कर आ गया है।

तब आज्ञा दई श्री देवचन्द्रजी ने, ल्याओ बुलाय श्री मेहराज।
बाल वय वस्त आवत, सो होवे पूरन काज।।४३।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने आज्ञा दी कि तुम अभी मिहिरराज को बुलाकर अंदर लाओ। बाल्यावस्था में हृदय निर्मल होने से अखंड ज्ञान बहुत सरलता से प्रविष्ट हो जाता है, जिससे धाम धनी को पाने का काम बहुत आसान हो जाता है।

भावार्थ- बाल्यावस्था में हृदय की कोमलता, भावुकता और प्रेम की अधिकता होती है। ऐसी अवस्था में ज्ञान स्वाभाविक रूप से आत्मसात् हो जाता है। किन्तु उम्र के बढ़ने पर विकारों की भी वृद्धि होती जाती है और प्रीतम

के साक्षात्कार का मार्ग कठिन हो जाता है।

ध्रुवको चरन भगवानके, भये पांच बरस सों प्रापत।
तिस वास्ते श्री मेहेराज को, आवन देओ तुम इत।।४४।।

बालक ध्रुव ने केवल पाँच वर्ष की उम्र में भगवान विष्णु के चरणों को प्राप्त कर लिया था। इसलिए तुम मिहिरराज को आने से न रोको। उसे मेरे पास शीघ्र ले आओ।

तब गोवर्धन श्री मेहेराज को, लेके चले साथ।
तब आय चरनों लगे, सिर पर धरे हाथ।।४५।।

तब गोवर्धन जी श्री मिहिरराज जी को अपने साथ लेकर सद्गुरु जी के चरणों में आये। जब श्री मिहिरराज जी ने श्री निजानंद स्वामी के चरणों में प्रणाम किया, तो उन्होंने उनके सिर पर अपना वरद्-हस्त रख दिया।

बारह बरस महिना दोय, ता ऊपर भये दस दिन।
तब श्री देवचन्द्रजी सों मिलें, उन पहिचाने मोमिन।।४६।।

जब श्री मिहिरराज सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में आये, उस समय उनकी उम्र १२ वर्ष २ महीने और १० दिन की थी। श्री मिहिराज को देखते ही श्री निजानंद स्वामी पहचान गये कि इस तन में तो इंद्रावती की आत्मा विराजमान है।

मिलाप श्री देवचन्द्रजी का, सोहबत श्रीजी साहिब।
सम्वत सोलह सै सतासियमें, सो सत्रह सौ बारोत्तरलों अब।।४७।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी और श्री मिहिरराज जी का मिलन वि. सं. १६८७ में हुआ था। वि. सं. १७१२ में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी का अन्तर्धान हुआ और उसके पश्चात् उनके धाम हृदय में विराजमान युगल

स्वरूप श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में विराजमान हो गये और अब तक लीला कर रहे हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में श्री मिहिरराज जी के स्थान पर जो "श्री जी साहिब" शब्द का प्रयोग हुआ है, उसका आशय श्री लालदास जी के द्वारा उस तन पर श्रद्धा व्यक्त करना है जिस पर श्री अक्षरातीत ने लीला की। अन्यथा "श्री जी साहिब" का अर्थ पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द होता है। यह व्यक्ति मूलक नहीं, भाव मूलक है। तारतम वाणी में तीन स्थानों पर "श्री जी" शब्द का प्रयोग हुआ है।

१– लई तारतम अजवालूं सार, वली श्रीजी आव्या आवार।

प्रकास गु. ११/६

अर्थात् तारतम ज्ञान का उजाला लेकर देवचन्द्र जी के धाम हृदय में जो अक्षरातीत (श्रीजी) विराजमान थे, वही

अब श्री मिहिरराज जी के धाम हृदय में विराजमान हो चुके हैं।

२- श्रीजीना वचन में विचारिया, निध लीधी वचनोनी सार।

खटरुती ८/४२

श्री इन्द्रावती जी कहती हैं कि मैंने सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में विराजमान श्री राज जी (श्रीजी) के वचनों का विचार किया और उसका सार तत्व ग्रहण किया है।

३- श्री श्रीजीने चरण पसाए, जसिया हमची गाएं।

थोड़े दिनमां चौदे लोकें, आ निध प्रगट थाय।।

किरन्तन १२४/११

जसिया सुन्दरसाथ आनन्द में भरकर कहते हैं कि श्री राज जी (श्रीजी) के चरणों की कृपा से थोड़े दिनों में ही चौदह लोकों में वाणी का फैलाव हो जायेगा।

श्रीमुखवाणी के उपरोक्त तीनों उदाहरणों में "श्रीजी" का प्रयोग अक्षरातीत श्री राज जी के लिए किया गया है। इसलिए "श्रीजी" शब्द को श्री मिहिरराज के पंचभौतिक तन के साथ जोड़ना और उसके समानार्थक मानना बड़ी भूल है। इस चौपाई के चौथे चरण में "अब" शब्द का प्रयोग है, वह यह दर्शा रहा है कि युगल स्वरूप अब श्री महामति जी के तन में विराजमान होकर लीला कर रहे हैं।

सम्वत सोलह सो सतासिया, मागसर सुदि नौम।
मिलाप श्री देवचन्द्रजी सों, भए दाखिल कौम।।४८।।

वि.सं. १६८७ में अगहन मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को श्री मिहिरराज जी सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में आये और तारतम ज्ञान ग्रहण कर सुन्दरसाथ

के समूह में शामिल हुये।

बारह बरस मास दोय, ऊपर भये दिन चार।

तबसे मिलाप का, बातून हुआ विचार।।४९।।

जब श्री मिहिरराज की उम्र बारह वर्ष दो माह और चार दिन की थी, तभी से गोवर्धन जी की बातें सुनकर सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से मिलने का तीव्र विचार बन रहा था, अर्थात् लगभग पाँच दिन तक सद्गुरु से मिलने के चिंतन में डूबे मिहिरराज छठवें दिन उनके चरणों में पहुँच गये।

आयके चरनों लगे, तबहीं दई निध।

ततखिन हिरदे मिने, आय बैठी जागृत बुद्धि।।५०।।

श्री मिहिरराज ने जैसे ही धनी के चरणों में आकर

प्रणाम किया, सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने उन्हें तारतम ज्ञान प्रदान किया। उसी क्षण उनके हृदय में जाग्रत बुद्धि भी विराजमान हो गई।

साकुण्डल साकुमार ढूंढ़न की, एकान्त होय सुनाई बात।
मूल सरूप उनके हंसत हैं, ओ खेल में हैं अपनी जात।।५१।।

एक दिन एकांत में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने उन्हें बताया कि मिहिरराज! परमधाम की दो आत्मायें सकुण्डल और सकुमार इस खेल में आई हुई हैं। परमधाम में उनके मूल तन हँस रहे हैं। इसका तात्पर्य यह है कि वे दोनों राजघराने में आई हुई हैं। तुम्हे उन्हें जाग्रत करना है। उनके जाग्रत होने में जितना समय लगेगा, उसमें सभी आत्माओं की जागनी हो जायेगी।

तब ए चित में ग्रह लई, इसारत उन बखत।

और बीज कुरान का, सो देखी श्रीदेवचन्द्र जी में तित।।५२।।

यह सुनकर श्री मिहिरराज जी ने संकेतों मे कही हुई इन बातों को अपने हृदय में ग्रहण कर लिया। श्री मिहिरराज जी ने यह भी अनुभव किया कि सद्गुरु महाराज के अन्दर कतेब परंपरा का ज्ञान भी बीज रूप में विद्यमान है।

खोजी बाई यवन को, कही रई बाई वासना जात।

तब पूछी श्री जी साहिबजी यें, क्या इन में अपनी है बात।।५३।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने खोजीबाई नामक एक मुस्लिम महिला को भी तारतम दिया और उसके अंदर रईबाई की वासना बताई। इसे देखकर श्री मिहिरराज जी ने श्री निजानंद स्वामी जी से पूछा कि क्या मुसलमानों में भी परमधाम की ब्रह्मसृष्टियां हैं?

भावार्थ– ऐसी मान्यता है कि खोजीबाई मुस्लिम पन्थ के खोजा सम्प्रदाय की अनुयायी थी। इसलिये बोलचाल में उनका नाम खोजीबाई पड़ गया था।

तब श्री देवचन्द्रजीयें कह्या, यामें कोई कोई वासना जान।
और इनके कुरान में, हैं अपनी पहिचान।।५४।।

तब श्री देवचन्द्र जी ने कहा – इनमें बहुत कम ब्रह्मसृष्टियां हैं, किन्तु इनके धर्मग्रन्थ कुरआन में ब्रह्मसृष्टियों की, परमधाम की, तथा अक्षरातीत की पूर्ण पहचान है।

हम तो इन कुरान को, बहुत किया पढ़न।
पर जाहिरी लोक जो, हमको न देवे लेवन।।५५।।

मैंने कुरआन को पढ़ने का बहुत प्रयास किया, किन्तु

कर्मकाण्डी लोगों ने मुझे कुरआन पढ़ने नहीं दिया।

तुम्हारे आगे कहत हों, याके वास्ते सब।

ए बात तुमसे होयेगी, लीला आगे होय जब।।५६।।

तुमसे एकांत में सारी बात मैं इसलिए कह रहा हूँ कि अक्षरातीत धाम धनी जब तुम्हारे धाम हृदय में विराजमान होकर लीला करेंगे, तो तुम्हारे तन से परमधाम की वाणी अवतरित होगी और सभी हिंदू धर्मग्रन्थों तथा कुरआन के गुह्य भेद तुम्हारे तन से खुलेंगे।

और इसारतें कई धाम की, सो सुनके ग्रह लई तब।

बीज मात्र इन लीला को, सो पायो उस बखत सब।।५७।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने परमधाम की शोभा तथा

लीला से सम्बन्धित बहुत सी बातें संकेतों में कहीं, जिन्हें श्री मिहिरराज जी ने अपने हृदय में बसा लिया। इस प्रकार उन्होंने श्री निजानंद स्वामी से परमधाम की सम्पूर्ण लीला का बीज रूप ज्ञान अपने हृदय में आत्मसात् कर लिया।

भावार्थ– सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने हौजकौसर, माणिक पहाड़, चाँदनी चौक के चार चबूतरे, सागर, आदि की शोभा तथा अष्ट प्रहर की लीला का वर्णन बहुत संक्षिप्त रूप से बताया। इसलिए चौपाई के पहले चरण में संकेतों में कहने की बात दर्शायी गई है। इसका पूरा विवरण तो श्री महामति जी के धाम हृदय से अवतरित होने वाली श्री तारतम वाणी से ही प्राप्त हो सकता है।

नित यों चरचा सुनत हैं, मिलके दोऊ भ्रात।

दोऊ प्रेम में भीगे रहें, करे मूल निसबत विख्यात।।५८।।

इस प्रकार दोनों भाई (श्री गोवर्धन और श्री मिहिरराज) प्रतिदिन सद्गुरु महाराज के चरणों में आकर के चर्चा सुनते हैं। दोनों ही अक्षरातीत से अपने मूल सम्बन्ध को जानकर उनके प्रेम में हमेशा डूबे रहते थे।

घरसे चले दोऊ मिलके, आवे मिलकर साथ।

बांध्यो चित अति हेतसों, दो नाते की बात।।५९।।

दोनों ही सद्गुरु महाराज की चर्चा सुनने के लिए घर से एक साथ मिलकर चलते थे और एक साथ वापस आते थे। उन दोनों का हृदय एक दूसरे से बंध गया था, क्योंकि उनमें दो सम्बन्ध थे– परमधाम की दृष्टि से उनमें आत्मिक सम्बन्ध था और लौकिक दृष्टि से वे सगे भाई

भी थे।

तो एक दिन आये घरमें, बड़ा भाई करत अस्नान।
कह्या तुम बिगड़े दोऊ भाई, भये काम काज से अजान।।६०।।

एक दिन वे कथा सुनकर जब घर आये, तो देखते हैं कि बड़े भाई श्यामल जी स्नान कर रहे हैं। अचानक ही श्यामल जी क्रोध से आग–बबूला हो गये और कहने लगे कि तुम दोनों भाई बिगड़ चुके हो। तुम दोनों को तो घर के किसी काम से कोई सम्बन्ध ही नहीं रह गया है।

सो सोहबत गांगजी से, और गुरु सोहबत।
दोनों को निकालें सहर से, तब तुम सुधरो इत।।६१।।

तुम दोनों गांगजी भाई और अपने गुरु देवचन्द्र जी की संगति में बिगड़े हो। उन दोनों को पिता जी से कहकर

जब मैं नगर से बाहर निकलवा दूँगा, तभी तुम सुधरोगे।

तब गुस्से होय दौड़े मारनें, मिलके भाई दोय।
छिपाए माता ने घर में, सुनी आय पिता ने सोय।।६२।।

अपने सद्गुरु के प्रति अपमानजनक शब्द सुनकर दोनों भाइयों को बहुत क्रोध आ गया और श्यामल जी को मारने के लिए दौड़ पड़े। संयोगवश माता धनबाई सामने आ गईं और उन्होंने श्यामलजी को घर में छिपाकर उनकी रक्षा की। रात्रि को जब पिताश्री आये तो उन्हें इस विवाद का सारा विवरण प्राप्त हुआ।

तब कही केसव ठाकुरने, जिनकी तुम चरचा सुनत।
तिन सुनी कानजी भट्ट से, बाँचे स्यामजी मन्दिर जित।।६३।।

पिताश्री केशव ठक्कर ने दोनों भाइयों को बुलाकर कहा

कि जिन श्री देवचन्द्र जी से तुम चर्चा सुनने जाते हो, उन्होंने तो स्वयं श्यामजी के मंदिर में कान्हजी भट्ट से चौदह वर्षों तक श्रीमद्भागवत् की चर्चा सुनी थी।

विशेष– सद्गुरु की निंदा सुनना भी एक अपराध होता है, इसलिए दोनों भाइयों को क्रोध आया था, अन्यथा श्यामल जी की किसी बात से व्यक्तिगत रूप से उन्हें कोई आपत्ति नहीं हो सकती थी।

उतहीं चलके तुम सुनो, तब दियो जवाब इन इत।
जो पूछें ताको देय जवाब, तो हम हमेसा बैठें तित।।६४।।

इसलिये तुम दोनों श्याम जी के मंदिर चलकर कथा सुनो। तब उन दोनों भाइयों ने उत्तर दिया कि यदि भट्ट जी हमारे प्रश्नों का उत्तर दे दें, तो हम हमेशा उन्हीं से चर्चा सुना करेंगे।

तब पिता ले चले तिन पे, वे बैठे जाय के ताहिं।

कही भट्ट लड़के कछु पूछत, देयो जवाब चित दे आहिं।।६५।।

तब श्री केशव ठक्कर जी अपने दोनों पुत्रों को श्याम जी के मंदिर में ले गये। वे भी सभा में जाकर बैठ गये। उचित समय पर श्री केशव जी ने भट्ट जी से कहा कि मेरे ये दोनों पुत्र आपसे कुछ प्रश्नों का उत्तर चाहते हैं। कृपया आप सावधानी से इसके प्रश्नों का यथोचित्त उत्तर दीजिए।

तब पूछी दोऊ भाई ने, भट्ट कितने गुन के लोक।

तत्व कहो कितने सही, कितने प्रलय अलोक।।६६।।

तब दोनों भाइयों ने पूछा कि हे भट्ट जी! कितने गुण हैं? कितने लोक हैं? आप यह बताइये कि तत्वों की संख्या कितनी है? प्रलय के कितने भेद हैं?

तीन गुन ते चौथो गुन नहीं, पाँच तें छठो न तत्व।

चौदह तें लोक नहीं पन्द्रहमों, और प्रलय चार हैं सत।।६७।।

कान्हजी भट्ट ने उत्तर दिया कि सत्व, रज, तम से भिन्न कोई चौथा गुण नहीं है। आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी तत्व के अतिरिक्त छठवां कोई तत्व नहीं है। भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक, अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल लोक ये चौदह लोक हैं। इनके अतिरिक्त कोई पन्द्रहवां लोक नहीं है। चार प्रकार की प्रलय है– नित्य प्रलय, नैमितिक प्रलय, प्राकृतिक प्रलय और महाप्रलय।

तो कहो पारब्रह्म रूप जो, सो रहत कौन ठौर।

कही क्षीर समुद्र अक्षयवट पर, रहे अंगुष्ट मात्र न और।।६८।।

अब दोनों भाइयों ने प्रश्न किया कि जब महाप्रलय में सब कुछ नष्ट हो जाता है, तो परब्रह्म का स्वरूप कहाँ रहता है? कान्हजी भट्ट ने उत्तर दिया कि उस समय परमात्मा क्षीर सागर में अक्षय वट वृक्ष के ऊपर अंगूठे के बराबर रूप धारण करके विराजमान रहता है।

चौथो गुण तुम न कह्यो, छठो तत्व न होय।
लोक कह्यो नहीं पन्द्रहमों, रहे कौन ठौर वह सोय।।६१।।

दोनों भाइयों ने पुनः प्रश्न किया कि हे भट्ट जी ! आपने तीन गुणों से भिन्न चौथा गुण कोई बताया नहीं। पांच तत्व से भिन्न कोई छठा तत्व नहीं कहा। चौदह लोकों से अलग आपने किसी पन्द्रहवें लोक का विवरण नहीं दिया। ऐसी स्थिति में आप यह बताने का कष्ट करें कि परमात्मा रहेगा कहाँ?

तब भट्ट की सुध बुध गई, कही ए जवाब ब्रह्मा से न होय।
तब कही तहाँ पिता नें, तुम्हारे चित्त आवे करो सोय।।७०।।

यह सुनकर कान्हजी भट्ट की बुद्धि चकरा गयी। उन्होंने कुछ देर तक सोचकर स्पष्ट कह दिया कि इस प्रश्न का उत्तर ब्रह्मा जी तक नहीं दे सकते। कान्हजी भट्ट के द्वारा उत्तर न दिये जाने पर पिताश्री ने दोनों भाइयों से कहा कि अब तुम्हारे मन में जो इच्छा हो वह करो।

भावार्थ– पौराणिक मान्यताओं में क्षीर सागर के अंदर अक्षय वट वृक्ष के ऊपर अंगुष्ठ मात्र रूप धारण करके परमात्मा के विराजमान होने की बात रूपक अलंकार के माध्यम से दर्शायी गई है। क्षीरसागर ही वह मोहसागर है, जिससे संसार रूपी वह अक्षय वट वृक्ष पैदा होता है। यह संसार चेतन–अचेतन पदार्थों के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। "चैतन्य" मानव, शरीर के अंदर अंगूठे के परिमाण के

बराबर होता है। स्थूल हृदय के अंदर कारण शरीर (अन्तःकरण) विद्यमान रहता है। उस अन्तःकरण के भी अन्दर अति सूक्ष्म चैतन्य जीव का वास होता है। इसी तथ्य को "हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु" यजु. ३४/८ तथा "हृदि हि एषः आत्मा" प्रश्नोपनिषद ३/६ में कहा गया है।

जिस प्रकार जब किसी ग्राम के लोग खूब हँस रहे हों तो आलंकारिक रूप से कहा जाता है कि ग्राम हँस रहा है। उसी प्रकार अंगुष्ठ मात्र परिणाम वाले हृदय के अंदर, उस अति सूक्ष्म जीव का वास होता है, जिसका परिमाण श्वेताश्वर उपनिषद् में बाल की नोक के दस हजारवें भाग से भी अधिक सूक्ष्म बताया गया है-

बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च।
भागो जीवः स विज्ञेयः च चानन्त्याय कल्पते।।

श्वेता. ५/९

उपनिषदों की मान्यता के अनुसार उस अतिसूक्ष्म जीव के अंदर भी अन्तर्यामी रूप से परमात्मा का वास माना गया है। इस सम्बन्ध में बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा गया है–

य आत्मनि तिष्ठन्नात्मनोऽन्तरो यमात्मा न वेद यस्यात्मा शरीरम्।

– श. ब्रा.१४/५/५/३०

इस तथ्य को यथार्थ रूप से न समझने के कारण कान्हजी भट्ट ने इसे महाप्रलय के बाद की स्थिति से जोड़ दिया है। पौराणिकों ने उपनिषदों के इस आलंकारिक कथन का आशय समझा ही नहीं कि आकाश से भी अति सूक्ष्म परमात्मा को अंगुष्ठ मात्र क्यों कहा गया है?

कठोपनिषद् में कहा गया है–

अंगुष्ठमात्रः पुरुषो ज्योतिरिवा धूमकः।
ईशानो भूतभव्यस्य स एवाद्य स श्वः एतद्वै तत्।।

–कठोपनिषद् अध्याय २ वल्ली १ मन्त्र १३

जब जीव का परिमाण ही बाल की नोक के दस हजारवें भाग से छोटा है, तो अंगूठे के बराबर आकृति वाले स्थूल हृदय के बराबर परमात्मा की आकृति कैसे हो सकती है?

तारतम ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण कान्हजी भट्ट निराकार से परे की उस गुत्थी को नहीं सुलझा सके और महाप्रलय के बाद परमात्मा के स्वरूप और धाम की स्थिति का वर्णन नहीं कर सके। अन्यथा श्रीमद्भागवत् १०/४ में स्पष्ट वर्णन है कि महाप्रलय में जब पंचभूत , सूक्ष्मभूत और तीनों गुण रहते ही नहीं, तो किसी स्थूल वृक्ष का अस्तित्व कैसे रह सकता है?

या भांत नवतन पुरी में भई, दोऊ भाई से चरचा कै ठौर।

सो बीतक कहाँ लों कहों, भयो प्रेम दोऊ में जोर।।७१।।

इस तरह से नवतनपुरी में दोनों भाइयों से कई जगहों पर अनेक लोगों से ज्ञान की चर्चा हुई, जिसका वर्णन मैं कहाँ तक करूँ। दिन–प्रतिदिन दोनों भाइयों का प्रेम और अधिक गहराता गया।

बरस चौबीस मास दस, ऊपर भये पाँच दिन।

तहाँ लो सोहबत रहे, बीच गिरोह मोमिन।।७२।।

जब श्री मिहिरराज जी की उम्र २४ वर्ष १० महीना ५ दिन की थी, तब उनके भ्राता गोवर्धन जी का धामगमन हो गया। सुन्दरसाथ के समूह में श्री मिहिरराज जी अपनी इतनी अवस्था तक अपने भ्राता गोवर्धन जी के सम्पर्क में रहे।

सम्वत सत्रह सौ बारोत्तरे, भादों मास उजाला पख।
चतुर्दसी बुधवार की, हुये दृष्टें अलख।।७३।।

वि.सं. १७१२ में भादों मास की शुक्ल पक्ष में चतुर्दशी तिथि को जब बुधवार का दिन था, उस समय सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी का भी धामगमन हो गया।

रहे लौकिक काम में, थे वजीर के कामदार।
लौकिक में से जुदे हुये, रहे तरफ परवरदिगार।।७४।।

सद्गुरु निजानन्द स्वामी के अंतर्धान से पूर्व श्री मिहिरराज जी राजा कलाजी के मंत्री के प्रबंधक थे। जब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के निर्देश पर बालबाई उन्हें बुलाने के लिये आईं, तो श्री मिहिरराज ने लौकिक कामों से नाता तोड़ लिया और धाम धनी का आदेश मान कर जागनी कार्य में निकल पड़े।

श्री महामति कहे ऐ मोमिनों, जिन पर हुआ म्याराज।
सो खासल खास उम्मत हैं, तन मार डारत हक काज।।७५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! जिन्हें धाम धनी का प्रेम भरा दर्शन प्राप्त होता है, वे निश्चित रूप से परमधाम के ब्रह्ममुनि होते हैं और धनी के आदेश पर ब्रह्मसृष्टियों के जागनी कार्य में अपने शरीर को न्यौछावर कर देते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई का संकेत श्री मिहिरराज जी की तरफ है, जिन्हें वि.सं. १७१५ में हब्से के अंदर युगल स्वरूप का प्रत्यक्ष दर्शन (मे'अराज) प्राप्त होता है, परमधाम की वाणी का अवतरण होता है, और श्री मिहिरराज जी जागनी के चरम लक्ष्य को पाने के लिए अपने शरीर को न्यौछावर कर देते हैं।

प्रकरण ।।१३।। चौपाई ।।५७८।।

कसौटी

तेरह वर्ष माया मिने, था ऊपर लौकिक बोझ।

श्री राज तरफ रहत हैं, रमें बीच कौसर हौज।।१।।

बारह वर्ष कि आयु में तारतम लेने के पश्चात् श्री मिहिरराज जी अपनी पच्चीस साल की आयु तक अपने भाई गोवर्धन जी के साथ चर्चा का रसपान किया करते थे। किन्तु इसके साथ ही लौकिक उत्तरदायित्वों का भी निर्वाह करते थे। गोवर्धन भाई के देह त्याग के पश्चात् श्री मिहिरराज जी का मन संसार से पूरी तरह से हट गया। दिन–रात धाम धनी श्री राज जी और हौज कौसर की शोभा के चिंतन में डूबे रहने लगे।

भावार्थ– इस चौपाई के प्रथम चरण में कथित तेरह वर्षों तक माया में उलझे रहने का आशय यह है कि

यद्यपि श्री मिहिरराज जी के दिल में धाम धनी के लिये प्रेम तो था, किन्तु एकनिष्ठ प्रेम नहीं था। अपने भाई गोवर्धन जी से उनको बहुत लगाव था। वि.सं. १६९५ माघ मास में शुक्ल पक्ष की पँचमी को फूलबाई जी के साथ श्री मिहिरराज जी का विवाह भी हुआ था। यद्यपि फूलबाई और गोवर्धन जी दोनों में परमधाम की आत्मा थी और उनसे प्रेम रखना कोई अपराध नहीं था, फिर भी एकनिष्ठ प्रेम की दृष्टि से इस तेरह साल के कार्यकाल को माया से सम्बन्धित कर दिया गया है।

गोवर्धन जी के धामगमन के पश्चात् श्री मिहिरराज जी चितवनि की गहन साधना में लग गये, किन्तु इसके पूर्व नहीं। श्री मिहिराज जी के विराट व्यक्तित्व की सफेद चादर में सुई की नोक के बराबर एक भूल ने तेरह वर्ष माया से जुड़े रहने का कलंक लगा दिया। वि.सं. १७००

के बाद के उनके कठोर साधनामय जीवन और उनके पूर्व के लौकिक सम्बन्धों के जुड़े रहने में कुछ अंतर है, जो उनके माया से जुड़े रहने का संकेत देता है। एकदम सामान्य सुन्दरसाथ तो अध्यात्म के इतने ऊँचे स्तर तक सोच भी नहीं सकता, किन्तु जिस तन में अक्षरातीत को लीला करनी है, उस तन से होने वाली नाम मात्र की भी भूल पर प्रत्येक समीक्षक की दृष्टि का जाना स्वाभाविक है।

चर्चा नित विचारहीं, मन में बड़ो विलास।
नित प्रते श्री राज सों, करत विनोद कै हाँस।।२।।

श्री मिहिरराज जी सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारबिन्द से होने वाली चर्चा का नित्य ही चिन्तन करते हैं और मन में बहुत अधिक आनन्दित होते हैं। श्री

देवचन्द्र जी को श्री राज जी का साक्षात् स्वरूप मानकर विनोदपूर्ण तरीके से हँसी भी करते हैं।

एक दिन श्री मेहेराज को, दिल उपजो एह विचार।
हम आये हैं अरस से, भेजे परवरदिगार।।३।।

एक दिन श्री मिहिरराज जी के मन में यह बात उपजी कि हम परमधाम से आये हैं और हमें धाम धनी ने इस मायावी खेल में भेजा है।

तो हमारी हुज्जत राज सों, कछु न चलत।
हम क्यों न देखें धाम को, अपनी जो वीतक इत।।४।।

तो क्या हमारा धाम धनी पर इतना भी अधिकार नहीं है कि हम इस खेल में उस परमधाम को देख सकें, जहाँ हम अनादि काल से लीला कर रहे हैं?

श्री देवचन्द्रजी देखत, श्री धाम के निसान।

सो हमारे आगे कहत हैं, कर देत पहिचान।।५।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी परमधाम के पच्चीस पक्षों की शोभा को प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं और उसका विवरण देते हुये हमारे सामने उसका वर्णन करते हैं।

हमारा धनी धाम का, क्या तिनसे ए न होय।

हमें अरस अजीम की, ठौर दिखावें सोय।।६।।

हमारे प्राणवल्लभ अक्षरातीत परमधाम के सर्वेश्वर हैं। क्या उनसे इतना भी नहीं हो सकता कि वे हमें परमधाम का साक्षात् दर्शन करा दें?

सो हमारा खेलमें, इतना भी ना चलत।

तो क्यों कहिए हम धाम के, अपनी न देखें बीतक इत।।७।।

जब इस मायावी जगत में हमें इतना भी अधिकार नहीं है कि हम अपने निजघर की शोभा एवं लीला को देख सकें, तो हमें परमधाम की ब्रह्मसृष्टि कहलाने का क्या अधिकार है?

पर हममें है अवगुन, तिस वास्ते अन्तराय।

जब अवगुण हम काढ़ही, तब क्यों न देखें हम ताय।।८।।

परमधाम दिखाई न देने का मूल कारण यह है कि हमारे अन्दर माया के विकार भरे हुए हैं। जब हम अपने विकारों (अवगुणों) को अपने हृदय से निकाल देंगे तो हम अपने परमधाम को क्यों नहीं देखेंगे?

तिस वास्ते अवगुन को, ढूंढन लगें जब।

नजरों जो ही आइया, काढ़ दिए तब सब।।९।।

इसलिये अपने अवगुणों को निकालने के लिये श्री मिहिरराज जी एकान्त में बैठकर सोचने लगे। उनकी दृष्टि में जो भी अपने अन्दर मनोविकार दिखाई दिया, उसको उन्होंने दृढ़तापूर्वक निकाल दिया।

श्री देवचन्द्रजी के आगे, आय अरज करते ए।

मेरे अवगुण मुझको, काढ़ देओ सब इन्द्रीयन के।।१०।।

इसके पश्चात् श्री मिहिरराज जी सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के आगे जाकर प्रार्थना किया करते कि हे सद्गुरु महाराज! मेरे मन और इन्द्रियों में जो विकार हैं, उसे आप अपनी कृपा दृष्टि से निकाल दीजिये।

तब देते उत्तर, तुम में न कोई अवगुन।

तूं निरमल आतम धाम की, इन्द्रावती उत्पन्न।।११।।

सद्गुरु महाराज हमेशा यही उत्तर देते हैं कि मिहिरराज! तुम्हारे में कोई भी अवगुण नहीं है। तूँ पूर्णतया निर्मल है, तुम्हारे अन्दर तो परमधाम की इन्द्रावती की आत्मा है, जिसके ऊपर जागनी का सारा उत्तरदायित्व है।

फेर अपने दिलमें, करते एह विचार।

श्री धाम धनी यों कहत हैं, मोहे चलना इन पर।।१२।।

ऐसा सुनकर श्री मिहिरराज जी पुनः अपने मन में ऐसा विचार करते हैं कि सद्गुरु जैसा कह रहे हैं, मुझे उसी का अनुसरण करना चाहिए।

सुनत श्री मुख चरचा, श्री देवचन्द्र जी की जब।

चरचा की चरचा, करत साथ आगे सब।।१३।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से वे परमधाम की जो भी चर्चा सुनते हैं, तो पुनः उस चर्चा को स्वयं अपने मुख से सुन्दरसाथ को सुनाते हैं।

बचन वर्णन करत हैं, लेत हैं अपने सिर।

ए मोकों जो कहत हैं, मोहे चलना इन पर।।१४।।

वे सुन्दरसाथ के सामने सद्गुरु महाराज के द्वारा कहे गये वचनों का वर्णन करते हैं और उन वचनों को अपने लिये कहा हुआ मानते हैं कि धाम धनी ने यह सिखापन मेरे लिये दिया है। वे अपने अन्तर्मन में पुनः विचार करते हैं कि सद्गुरु महाराज ने मुझे जो सिखापन दिया है, उसे मुझे अपने आचरण में अवश्य लाना है।

यह विचार करके, साथ को दिखावत।

अपने दिल विचारत, ए मोहे करना इत।।१५।।

अपने मन में ऐसा विचार कर वे सुन्दरसाथ को भी इसका अनुसरण करने के लिये प्रेरित करते हैं। वे अपने मन में ऐसा सोचते थे कि मुझे तो सदगुरु के वचनों को अवश्य ही आचरण में लाना है।

तिस वास्ते अपने मन पर, करते बड़ा जुलम।

कस्त अपने आकार को, जगावें अपनी आतम।।१६।।

इसलिये अपनी आत्मा को जगाने के लिये वे अपने मन को बहुत अधिक कठोर साधना की अग्नि में तपाने लगे और अपने शरीर को भी कष्ट देने लगे।

भावार्थ– मन अपनी पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) रूपी लौकिक सुखों

का भोग करता है। मन को निर्विकार बनाने हेतु उसे लौकिक सुखों से बलपूर्वक पूर्णतया रहित कर देना ही इस चौपाई के दूसरे चरण में "जुलम कर देना" या "अत्याचार करना" कहा है। इसका कारण यह है कि यह हठ योग का मार्ग है, जिसके द्वारा परमतत्व की उपलब्धि नहीं हो सकती। जब तारतम ज्ञान के प्रकाश में प्रियतम का विशुद्ध विरह-प्रेम जाग्रत हो जाता है, तो लौकिक सुखों से आसक्ति स्वतः ही समाप्त हो जाती है और मन भी निर्विकार हो जाता है। किन्तु प्रेम (ध्यान) से रहित होकर हठयोग की शुष्क साधनाओं से मन को कभी भी निर्विकार नहीं किया जा सकता। गौतम बुद्ध से भी यही भूल हुई थी। इसलिये श्रीकृष्ण जी ने गीता में युक्त आहार-विहार का उपदेश दिया है।

उतरता आहार घटाइया, रह्या पैसे भर दोए।

बल घटा इन्द्रियन को, सूक चला आकार सोए।।१७।।

धीरे-धीरे उन्होंने अपना आहार घटाना शुरु कर दिया। उनके आहार की मात्रा मात्र दो पैसे वजन के बराबर रह गयी। उनकी इन्द्रियों की शक्ति समाप्त हो गई और शरीर सूखकर हड्डियों का ढाँचा मात्र रह गया।

नैनों नीर झरत हैं, जब लों चरचा धाम।

रंग जरदी का आइया, और न सूझे काम।।१८।।

जब तक वह सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से चर्चा सुनते हैं, तब तक उनके नेत्रों से आँसुओं की धारा बहती रहती है। धनी के विरह में उनका रंग पीला पड़ गया था। धनी के चिन्तन के सिवाय उनको और कोई काम दिखाई नहीं देता था।

ढूँढ़त फिरे अवगुन को, अजुं मेरे रहे और।

यह मेरे घर में रह्या, पहुँचाऊं हादी ठौर।।१९।।

वे हमेशा अपने अन्दर अवगुणों की खोज करते रहते थे कि मेरे अन्दर कितने अवगुण शेष रह गये हैं। अपने घर में कीमती वस्तुओं को रखना एक प्रकार की आसक्ति है, ऐसा मानकर वे यही सोचते थे कि इसे भी मैं सद्गुरु महाराज के चरणों में पहुँचा आऊँ।

तब घर के भूखन, कोई रह्या स्त्री के पास।

सो भी चित्त में अवगुन, आया दिल में खास।।२०।।

श्री मिहिरराज जी के दिल में यह बात उपजी कि मेरी पत्नी फूलबाई के पास जो सोने-चाँदी के आभूषण हैं, वे भी माया के ही स्वरूप हैं और वे मेरे चित्त में आसक्ति के विकार पैदा करते हैं। इसलिये मुझे उन्हें सद्गुरु को सौंप

देना चाहिये।

तिनको भी काढ़ के, अरज करे आगे हादी।

तब अवगुन काढ़ के, ए दिल आवे साहिदी।।२१।।

ऐसा सोचकर उन्होंने फूलबाई से सभी आभूषण ले लिए और सदगुरु महाराज के चरणों में न्यौछावर करते हुए बोले कि हे सदगुरु महाराज! मेरे अवगुणों को बताइये। आभूषण रूपी अपने अवगुणों को निकालकर उन्होंने मन में मान लिया कि मेरा मन निर्मल होने की साक्षी दे रहा है।

मेरे आगे मनकी, मैं देखों परख।

बाजार ही में चलते, ए कहूं चले ले हरख।।२२।।

श्री मिहिरराज अपने मन की पवित्रता की परख करने

लगे कि मैं देखूँ कि यह कितना निर्मल हो गया है ? बाजार में चलते समय वे अपने मन के बारे में सोचते हैं कि मैं देखूँ कि मेरा मन संसार की सुख देने वाली वस्तुओं के पीछे कहाँ तक भागता है?

परख ऐसी करें मन की, खीजे बहु बचन।
अजहूं रही सरीखी, मान रे चण्डाल मन।।२३।।

वे अपने मन की पवित्रता की परख अनेक प्रकार से करते थे। वे प्रबोधित करने वाले अनेक वचनों के द्वारा अपने मन को फटकारते थे– रे मेरे चण्डाल मन! तू अब भी मान जा। तू माया में भटक कर अभी भी माया जैसा क्यों होता जा रहा है?

इन भांत अंग को, देत कसौटी जोर।

अरज करते अंगकी, चित्त न हुआ मरोर।।२४।।

इस प्रकार अपने अन्तःकरण को पवित्रता की तीव्र कसौटी पर परखने का निरन्तर प्रयास करते हैं। उसे पवित्र करने के लिये सदगुरु महाराज से प्रार्थना करते हैं। वे उनसे हमेशा यह कहते हैं कि मेरा चित्त अभी भी माया से हटकर राज जी की तरफ पूरी तरह से क्यों नहीं लग पा रहा है?

राह माहें चलते, कोई सामें मिल्या यार।

तो मुंह फिराय के चलें, जिन बीच पड़े परवरदिगार।।२५।।

यदि रास्ते में चलते समय सामने से कोई परिचित मित्र आ जाता, तो उससे नजर बचाकर कहीं दूसरी तरफ चल देते थे, ताकि उनके और धनी के प्रेम के बीच में

लौकिक आसक्ति बाधक न बन जाए।

तब श्री धाम मुंह आगे, फिरवल्या है गिरद।
अपना आपा देखिया, किया आकार को रद।।२६।।

इस प्रकार साधना की कठोर अवस्थाओं से गुजरने पर उनका शरीर पूर्णरूप से जर्जर हो गया, किन्तु उनकी आत्मिक दृष्टि ने परमधाम के पच्चीस पक्षों की एक झलक पा ली और मूल–मिलावे में बैठी अपनी परात्म को देख लिया।

भावार्थ– धाम धनी ने श्री मिहिरराज जी के तन से ऐसी लीला कराकर हमें यह शिक्षा दी है कि परमधाम और अपने स्वरूप का साक्षात्कार करने के लिये उम्र की कोई विशेष सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। श्री मिहिरराज जी ने २७ वर्ष की उस अवस्था में, जब

यौवन अपने चरम पर होता है, सांसारिक सुखों को ठुकरा दिया। अपनी परात्म तथा संपूर्ण परमधाम की झलक पा लेना यही दर्शाता है कि हर सुन्दरसाथ को अक्षरातीत का दर्शन करने के लिये न तो हुक्म का बहाना बनाना चाहिए और न चालीस वर्ष आने की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

इससे पूर्व भी सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने मात्र २४ वर्ष की अवस्था में ध्यान द्वारा अखण्ड व्रज में जाकर धनी का दर्शन कर लिया था। ये दोनों घटनायें उन निठल्ले और अकर्मण्य लोगों के लिए एक सीख है, जो समाज को चितवनि से दूर कर कर्मकाण्ड और शोर-तमाशे की अन्धेरी गलियों में भटकाए रखते हैं।

तब बालबाई आए के, कह्या आगे श्री देवचन्द्रजी।
श्री मिहिराज के आकार की, अरज आए करी।।२७।।

श्री मिहिरराज जी के शरीर की जर्जर अवस्था को देख कर बालबाई ने सद्गुरु महाराज से प्रार्थना की कि हे सद्गुरु महाराज! श्री मिहिरराज जी के शरीर की दशा तो देखिये।

एक भाई पहिले चलिया, अब यह हुआ तैयार।
तुम क्यों न कहत हो, डर नहीं लगत लगार।।२८।।

गोवर्धन जी ने तो पहले ही अपना शरीर छोड़ दिया है, अब इन्होंने भी अपने शरीर के त्याग की तैयारी कर ली है। आप इन्हें कुछ समझाते क्यों नहीं ? आप को मिहिरराज के तन छोड़ देने का भय क्यों नहीं है?

तब श्री देवचन्द्रजीयें, सवाल किया मेहेराज।

क्या है तेरे दिलमें, सो मुझे कहो आज।।२९।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने श्री मिहिरराज जी से पूछा- मिहिरराज! तुम्हारे हृदय में क्या है? आज मुझे स्पष्ट बताओ।

मेरे अवगुन मुझको, दिखाए देओ तुम।

तब कह्या मुझको, क्या पहिचानत आतम।।३०।।

श्री मिहिरराज जी बोले- हे सदगुरु महाराज! आप मुझे यह बताने का कष्ट करें कि मेरे अंन्दर अभी कौन-कौन से अवगुण हैं? तब सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने कहा- मिहिरराज! मेरे आत्मस्वरूप की तुमने क्या पहचान की है?

भावार्थ- सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के कथन का

तात्पर्य यह था कि मिहिरराज ने मेरे बाह्य तन को देखकर केवल सद्गुरु रूप में ही माना है या मेरी आत्मा के धाम हृदय में विराजमान युगल स्वरूप की भी पहचान की है?

ब्रजकी बातें सुनते, पानी झरत है नैन।

तब श्रीदेवचन्द्रजी कह्या, क्यों रहे तन सुनते बैन।।३१।।

यह सुनकर श्री मिहिरराज जी कहते हैं कि जब आप व्रज लीला का वर्णन करते हैं, तो मेरे नेत्रों से प्रेम के आँसू बहते हैं। तब श्री देवचन्द्र जी कहते हैं कि मिहिरराज! मेरी वाणी के सुनने के बाद तुम्हें अपने तन का आभास (प्रतीत) क्यों रहता है?

भावार्थ– श्री मिहिरराज जी व्रज लीला का वर्णन सुनकर अपनी विरह अवस्था को जब दर्शाते हैं तो सद्गुरु

धनी श्री देवचन्द्र जी का आशय यह है कि तुम्हें विरह में इतना डूब जाना चाहिए कि शरीर का आभास ही न हो। आँसुओं का आभास तो तब होगा जब शरीर का आभास हो। इस प्रकार से श्री देवचन्द्र जी आध्यात्मिक प्रगति के लिए विरह की और गहन अवस्था का वर्णन कर रहे हैं। इस चौपाई के चौथे चरण का आशय तन छोड़ने से नहीं समझना चाहिए।

कह्या मेरे आगे धामकी, बात करो जब तुम।
तब पानी नैना झरे, सुख पाऊं इन हुकम।।३२।।

श्री मिहिरराज जी कहते हैं कि जब आप मेरे सामने परमधाम की बातें करते हैं, तब भी मेरे नेत्रों से विरह-प्रेम के आँसू गिरते हैं। इस प्रकार आपकी चर्चा तथा आपकी आज्ञा-पालन से मुझे बहुत आनन्द मिलता है।

तब बालबाई ने कह्या, क्या पहिचाने धनी धाम।

जा ए बात लौकिक है, तिनसे होवे पूरन मनोरथ काम।।३३।।

तब बालबाई ने कहा कि मिहिरराज! तुमने धाम धनी को किस रूप में पहचाना है? यदि तुम्हारी कोई लौकिक इच्छा होती तो आसानी से पूरी हो जाती, किन्तु जिस परमधाम और अक्षरातीत को तुम देखना चाहते हो, वह इतना सरल कार्य नहीं है।

भावार्थ– बालबाई के कहने का अभिप्राय यह है कि मिहिरराज ने सद्गुरू महाराज के केवल बाह्य रूप को देखा है। तू इनके आन्तरिक स्वरूप को जरा भी नहीं पहचानता कि इनके अंदर बैठकर कौन लीला कर रहा है? जिस अक्षरातीत को देखने के लिये तूने इतनी कठोर साधना की है, वह अक्षरातीत तो सद्गुरु महाराज के धाम हृदय में विराजमान हैं, जिनसे तू मुँह फेरे हुये है।

जो पहिचान होवे सरूप की, तो पलक न रहवे नैन।

प्रदक्षिना फिरता रहे, और मुख न निकसे बैन।।३४।।

यदि तुम्हें सद्गुरु महाराज के अन्दर विराजमान श्री राज जी के आवेश स्वरूप की पहचान हो गई होती, तो पल भर के लिये भी अलग नहीं होते और मुख से बिना कुछ बोले हुये इनकी परिक्रमा करते रहते।

जो मुझे देखे धनी धाम का, तो पलक न फेरे नैन।

रात दिन दे प्रदक्षिना, मुख ना निकसे बैन।।३५।।

अब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी कहते हैं कि मिहिरराज! यदि तूने मुझे धाम धनी के रूप में पहचान लिया होता, तो पल भर के लिये भी अपनी दृष्टि मुझसे नहीं हटाता और बिना कुछ बोले रात-दिन मेरी परिक्रमा करता रहता।

भावार्थ– "पल भर के लिये भी आँखों से ओझल न होना" और "रात दिन परिक्रमा करना" आलंकारिक उदाहरण हैं। सामीप्यता की गहन स्थिति में इस तरह के शब्द कहे जाते हैं। प्रियतम की छवि जब हृदय में अखण्ड रूप से बस जाती है, तो बाह्य रूप से अलग रहने पर भी ऐसा प्रतीत होता है कि पल–पल मेरी अन्तर्दृष्टि इनको देख रही है और परिक्रमा कर रही है।

ए अवगुन नहीं तेरे, क्या कहत ए सुख।
अगिनत देखे अवगुन, कह्यो न जाय या मुख।।३६।।

तुम्हारे अन्दर कोई भी अवगुण नहीं है। चर्चा सुनने से होने वाले सुख के विषय में तुम क्या कहते हो? यदि तुम्हारे अन्दर अवगुण होते तो तुम्हें इस तरह की अनुभूति ही नहीं होती। यह सुनकर श्री मिहिरराज जी

कहते हैं कि हे सद्गुरु महाराज ! मुझे तो अपने अंन्दर अनगिनत अवगुण दिखाई दे रहे हैं और मैं अपने मुख से इनका वर्णन कर ही नहीं सकता।

श्री देवचन्द्रजी पूछिया, क्या है तेरे मन में।
तुम देखो मैं क्यों न देखूँ, सो क्यों न होए मुझ सें।।३७।।

यह सुनकर श्री देवचन्द्र जी ने पूछा, अच्छा यह बताओ कि तुम्हारे मन में क्या चल रहा है? श्री मिहिरराज जी कहते हैं कि आपको परमधाम दिखाई देता है, मुझे क्यों नहीं? आप परमधाम की शोभा का जिस प्रकार से वर्णन करते हैं, उस प्रकार का वर्णन मेरे तन से क्यों नहीं होता?

यह वस्त हुकम की, सो होवे एक ही ठौर।

मोहे उठाय तुम बैठो, पर ना होवे कहूं और।।३८।।

मेरे तन से होने वाली यह ब्रह्मलीला श्री राज जी के आदेश से हो रही है और एक समय में एक ही तन से हो सकती है, एक साथ दो तनों में नहीं। मेरे तन से होने वाली इस लीला के समाप्त होने के बाद, जब धाम धनी तुम्हारे हृदय में विराजमान होंगे तो तुम्हें भी परमधाम का अनायास दर्शन होने लगेगा। किन्तु मेरे तन के रहते यदि अभी चाहते हो, तो मुझे इस तन को त्यागना पड़ेगा। तभी तुम मेरी जगह बैठ सकते हो, अर्थात् तुम्हारे तन से लीला हो सकती है।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे और तीसरे चरण का भाव बाह्य शब्दों के आधार पर इस प्रकार लिया जाता है कि श्री राज जी सद्गुरु महाराज की गादी में विराजमान

थे, किन्तु यह ध्यान रखने योग्य तथ्य है कि यहाँ ठौर शब्द का तात्पर्य स्थानपरक नहीं है , व्यक्तिपरक है। सम्पूर्ण तारतम वाणी में अक्षरातीत के धाम में ही विराजमान होने का वर्णन है, किसी स्थान विशेष में नहीं। गुम्मट जी में भी श्री राज जी, महामति जी के धाम हृदय में ही विराजमान हैं। इसलिए वाणी कहती है–

ऊपर तले अर्स न कह्या, अर्स कह्या मोमिन कलूब।

सिनगार २३/७६

बीतक की उपरोक्त चौपाई के तीसरे चरण का बाह्य अर्थ करके यह कहा जाता है– "श्री देवचन्द्र जी यह कहते हैं कि मिहिरराज! मुझे इस गादी से उठाकर बैठ जाओ, तो तुम्हें परमधाम दिखने लगेगा।" यहाँ प्रश्न यह होता है कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के धामगमन के पश्चात् बिहारी जी को उन्हीं की गादी पर बैठाया गया, किन्तु वह

परमधाम के बारे में एक वाक्य भी क्यों नहीं सुना सके? आखिर उस समय श्री राज जी कहाँ चले गये थे? बीतक में तो यही वर्णन मिलता है कि सद्गुरु देवचन्द्र जी की गादी से दूर रहकर भी श्री मिहिरराज जी के तन से परमधाम की वाणी का अवतरण होता रहा और सुन्दरसाथ को श्री मिहिरराज के धाम हृदय में ही युगल स्वरूप के दर्शन होते रहे। इस सम्बन्ध में किरन्तन का यह कथन देखने योग्य है–

सुर असुर सबों को ए पति, सब पर एकै दया।
देत दीदार सबन को सांई, जिनहूं जैसा चाहया।।

किरन्तन ५९/७

उपरोक्त विवेचना यही दर्शाती है कि रुई की बनी हुई गादी में श्री राज जी विराजमान नहीं होते हैं, बल्कि वह ब्रह्मात्माओं के धाम हृदय में विराजमान होते हैं। हाँ,

इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि कोई महापुरुष जिस उच्च आसन पर बैठते हों, उन पर बिना उनकी स्वीकृति के बैठने का प्रयास नहीं करना चाहिये। जड़ गादी की आरती या पूजन करना तारतम वाणी के पूर्णतः विपरीत है।

तब चित पीछा पड़ा, हुआ मनोरथ भंग।

फेर के विचार किया, श्री देवचन्द्रजी संग।।३९।।

यह सुनकर श्री मिहिरराज जी का मन कठोर साधना से विमुख हो गया और उनके मन में जो परमधाम को देखने की तीव्र इच्छा थी, वह भी मिट हो गई। बालबाई ने सदगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के साथ मिलकर श्री मिहिरराज के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया।

इन्हें काम दीजे माया का, तब पीछे हटे चित।

कह्या मैं हुकम करत हों, जाओ श्री मेहेराज तित।।४०।।

बालबाई कहती हैं कि हे सद्गुरु महाराज ! आप मिहिरराज को किसी सांसारिक कार्य में लगा दीजिये, जिससे उनका मन कठोर साधना से हट जाये। बालबाई जी की यह बात सदगुरु महाराज को भा गई और उन्होंने मिहिरराज जी को अहमदाबाद जाने का आदेश दिया।

तब गुजरात भेजिया, एक बहाना ले।

जब चले गुजरात को, जोस फिरा तिन से।।४१।।

सद्गुरु महाराज ने पुराण संहिता, माहेश्वर तंत्र, सनत्कुमार संहिता, आदि ग्रन्थों को खोजकर लाने के बहाने श्री मिहिरराज जी को गुजरात भेजा। जब श्री मिहिरराज जी अहमदाबाद की ओर चले, तो उनके मन

में कठोर साधना करने का जो उत्साह था, वह समाप्त हो गया।

महामत कहे ऐ मोमिनों, सुनियो यह बीतक।
आगे फेर कहत हों, जो आज्ञा है हक।।४२।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! श्री मिहिरराज जी के साधना सम्बन्धी इस वृत्तान्त को ध्यानपूर्वक सुनना। इसके बाद जो भी घटना होती है, उसे मैं श्री राज जी के आदेश से कहने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।१४।। चौपाई ।।६२०।।

खेता भाई के कार्य हेतु अरब को गये

सम्वत सत्रह सौ तिलोत्तरे, हुकम हुआ श्री राज।
गांगजी भाई के काम को, तुम जाओ श्री मेहेराज।।१।।

विक्रम सम्वत् १७०३ में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने श्री मिहिरराज जी को आदेश दिया कि मिहिरराज! गांगजी भाई का एक अति आवश्यक कार्य है, जिसके लिये तुम्हें अरब जाना होगा।

खेता भाई गांगजीय का, गया है बरारब।
पच्चीस वर्ष इनको भये, तुम सिताब जाओ अब।।२।।

खेताभाई गांगजी भाई के सगे भाई हैं। उनको अरब गये हुये २५ वर्ष हो चुके हैं। इसलिये अब तुम्हें शीघ्र अरब जाना होगा।

जो ए आवे साथ में, तो सेवा होये श्री राज।

सो शोभा होय तुमको, पूरे होएं सब काज।।३।।

यदि खेताभाई सुन्दरसाथ में शामिल हो जाता है, तो उसके धन से श्री राज जी के जागनी कार्य में सेवा हो सकती है। इस बड़े कार्य की शोभा का श्रेय तुमको प्राप्त होगा और खेताभाई के धन से कई अधूरे पड़े हुये कार्य पूरे हो जायेंगे।

भावार्थ– गांगजी भाई के यहाँ चर्चा–वाणी होने से सुन्दरसाथ का आवागमन बना रहता था। उन सुन्दरसाथ के खाने–पीने का सारा खर्च गांगजी भाई ही वहन करते थे। इसलिये ऐसा सोचा गया कि यदि खेताभाई का धन आ जाता है, तो गांगजी भाई का आर्थिक बोझ कुछ कम हो जायेगा।

श्री देवचन्द्र जी ने कह्या, सो मान लिया हुकम।

नाव चलत बरारब, तामें बैठो तुम।।४।।

श्री मिहिरराज जी ने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के आदेश को शिरोधार्य किया। इसके बाद सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी ने कहा कि जल्दी ही अरब के लिये नाव जाने वाली है, उसमें तुम बैठ जाओ।

माह फागुन के बीच में, नाव चले जब।

सो चालीस दिन में पहुंचही, जाए बरारब तब।।५।।

फाल्गुन मास के मध्य में श्री मिहिरराज नाव पर सवार हुए और चालीस दिन की यात्रा करके अरब की धरती पर अपने चरण कमल रखे।

खेते को आए मिले, दई पाती हाथ।

बहुत सुख पाइया, राखे अपने साथ।।६।।

श्री मिहिरराज जी खेता भाई से आकर मिले और उन्होंने गांगजी भाई के हाथ का लिखा हुआ पत्र खेता भाई को दिया। श्री मिहिरराज जी से मिलकर खेता भाई बहुत प्रफुल्लित हुआ और उन्हें हमेशा अपने साथ रखने लगा।

कारभार बखार का, सारा सौंप दिया।

तुम नवतनपुरी को चलो, दुनी बहुतक जमा किया।।७।।

खेता भाई ने अपने गोदाम के लेन-देन का सारा कार्यभार श्री मिहिरराज जी के हाथ में सौंप दिया। श्री मिहिरराज जी ने खेताभाई से कहा- खेताभाई! तुमने अब तक बहुत धन कमा लिया है, अब तुम नवतनपुरी में

विराजमान सद्गुरु महाराज के चरणों में चलो, ताकि तुम्हें शाश्वत शांति मिले।

भावार्थ– "बखार" अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता है "व्यापार करना"। फारसी में इसे तिजारत करना और उर्दू में कारोबार करना कहते हैं।

श्री तारतम की बातें, सुनाई बहुतक।
उनको छाँट न लागहीं, सब कही अपनी बीतक।।८।।

श्री मिहिरराज जी ने खेता भाई को तारतम ज्ञान की चर्चा सुनाई, लेकिन चिकने घड़े की तरह उन पर जरा भी असर नहीं हुआ। वह केवल अपने लेन–देन की ही बातें करता रहता था।

इनको उत त ले चलों, तो सेवा होय श्री राज।

भाई है गाँगजीय का, इनसे होत है काज।।९।।

श्री मिहिरराज जी अपने मन में विचार करते हैं कि खेता भाई को यदि मैं नवतनपुरी ले चलता हूँ, तो सद्गुरु महाराज की आज्ञा पालन की मेरी सेवा हो जायेगी। यह खेता भाई गांगजी भाई के छोटे भाई हैं, इनके चलने से इनके धन द्वारा जागनी कार्य की सेवा होगी।

चार बरस परवारते, रहे बरारब जब।

खेता पहुंचा अपने ठौर को, मौत हुआ तब।।१०।।

श्री मिहिरराज अरब की धरती पर चार वर्ष तक खेता भाई के व्यापार को समेटने और दूसरों को दिये हुये धन को वापस लेने में लगे रहे। दुर्भाग्यवश, खेताभाई अस्वस्थ हो गये और उनका देहावसान हो गया।

माल मता बखार पर, हुई हाकिम की मोहोर।

तो रहे बाहिर, किया हाकिम ने जोर।।११।।

खेता भाई के गोदाम से सम्पूर्ण धन–सम्पत्ति पर वहाँ के अधिकारी ने अपना अधिकार कर लिया। श्री मिहिरराज जी उस समय बाहर गये हुये थे। उधर वहाँ के अधिकारी शेख सल्लाहु की नीयत सम्पूर्ण धन–सम्पत्ति हड़पने की थी।

तब उन हाकिम ने, बुरी करी नजर।

टरे पीछली रात को, पहाड़ में भई फजर।।१२।।

तब श्री मिहिरराज को अपनी राह में बाधक मानकर अधिकारी शेख सल्लाहु के मन में पाप दृष्टि हो गई। इसलिये श्री मिहिरराज पिछली रात को ही वहाँ से चल पड़े और जब वे पहाड़ी स्थान पर पहुँचे तो उजाला फैल

चुका था।

भावार्थ– हाकिम शेख सल्लाहु एक कट्टरपंथी मुस्लिम था। उसको यह सहन नहीं था कि कोई गैर –मुस्लिम उसके देश से अपनी सम्पत्ति हिन्दुस्तान ले जाये। श्री मिहिरराज जी ने यह घोषित किया था कि वे खेता भाई के भाई हैं, इसलिये उनकी सम्पत्ति उन्हें मिलनी चाहिये। हाकिम शेख सल्लाहु सम्पत्ति हड़पने के मार्ग में श्री मिहिरराज जी को बाधक मानता था, इसलिये श्री मिहिरराज जी पर उसकी पाप दृष्टि हो गई। ऐसी अवस्था में श्री मिहिरराज जी का वहां से चलकर बादशाह से शिकायत करना अति आवश्यक था।

इहाँ सेती जाय के, पहुंचे सुल्तान इमाम।

फरियाद करी दो मास लों, बीच खेते के काम।।१३।।

यहाँ से चलकर श्री मिहिरराज जी मस्कत पहुँचे। वहाँ उस समय के इस्लाम के सर्वोच्च अधिकारी खलीफा (सुल्तान) रहा करते थे। श्री मिहिरराज जी ने वहाँ दो महीने तक खेता भाई की सम्पत्ति वापस दिलाने के सम्बन्ध में निवेदन किया, लेकिन किसी ने भी उस पर ध्यान नहीं दिया।

भावार्थ– मुहम्मद साहिब के देह त्याग के पश्चात् इस्लामिक जगत की आध्यात्मिक सत्ता खलीफाओं (अबू बकर, उमर, उस्मान, अली) के हाथों में केन्द्रित हो गई।

मुहम्मद साहिब की भविष्यवाणी के अनुसार साढ़े २९ साल में हजरत अली का बलिदान हो गया। इसके छः महीने के पश्चात् मुआविया के विरोध के कारण इमाम हुसैन ने इस्तीफा दे दिया, क्योंकि इससे मुस्लिम समाज

में रक्तपात बढ़ने की सम्भावना थी। फिर भी होनी होकर ही रही। इसके पश्चात् मुआविया के पुत्र मजीद ने हज़रत अली के पुत्र इमाम हुसैन और उनके साथियों का कत्ल कर दिया।

हजरत अली के पुत्र इमाम हुसैन की शहादत के पश्चात् मुआविया का वर्चस्व हो गया। इस प्रकार खलीफा का पद भिन्न-भिन्न वंशों के व्यक्तियों के हाथों में जाने से धार्मिक केन्द्र भी बदलते रहे। मक्का, मदीना, बसरा, बगदाद, और मस्कत में इस्लामिक जगत के सर्वोच्च धर्माधिकारियों का निवास रहा। जब श्री मिहिरराज जी अरब पहुँचे थे, तो उस खलीफा का निवास मस्कत बंदर था।

जब उत से पीछे फिरे, एक मिला आरब।

तिन आगे बीतक कही, तिन लिख दिया तब।।१४।।

जब श्री मिहिरराज जी अपनी असफलता से निराश होकर लौट रहे थे, तो मार्ग में एक आरब (अरब वासी) से भेंट हुई। परिचय के पश्चात् श्री मिहिरराज जी ने उन्हें अपने ऊपर घटित सारी बात बताई कि किस प्रकार वह दो माह से भटक रहे हैं और किसी ने उनकी फरियाद नहीं सुनी। यह सुनकर उस आरब ने उन्हें एक पत्र लिखकर दिया और यह कहा कि–

द्रष्टव्य– वह आरब कोई गैर नहीं था, बल्कि स्वयं श्री राज जी के जोश ने ही आरब का भेष धारण कर लिया था।

हिम्मत करके कहियो, जब निकसे सुलतान।
तब छेड़ा पकड़ के, ए सुनाइयो कान।।१५।।

जब इधर से बादशाह निकले तो आप डरना नहीं, बल्कि साहसपूर्वक उनका छेड़ा (दामन या किनारा) पकड़कर यह बात बताना।

मेरे गले में थी, सो मैं डालत हों गले तुम।
लेऊं हिसाब रोज ईद के, जब होवे हक हुकम।।१६।।

मेरे ऊपर खेता भाई का जो उत्तरदायित्व था, वह मैं आपके ऊपर छोड़ रहा हूँ। यदि आप सही न्याय नहीं करते हैं, तो अल्लाह तआला जब रोज-ए-महसर (न्याय) के दिन अरफ़ात के मैदान में न्याय के तख्त पर बैठेंगे, तो उस दिन मैं अवश्य अल्लाह तआला के हुकम से न्याय पा लूँगा।

जब चला सुल्तान निमाज को, ए खड़े रहे बीच राह।

धाए के दावन झटका, टूट गई कस ताह।।१७।।

जब बादशाह नमाज पढ़ने के लिये मस्जिद जा रहा था, उस समय मिहिरराज मार्ग में खड़े थे। उन्होंने दौड़कर बादशाह के जामे का दावन झटक दिया, जिससे जामे की कस (तनी) टूट गई।

था इतमाम जोरावर, सब बरजे सुल्तान।

ए कहो हकीकत अपनी, मैं सुनो अपने कान।।१८।।

बादशाह की सुरक्षा व्यवस्था बहुत ही कठोर थी। सभी सैनिक मिहिरराज जी की तरफ दौड़ पड़े। बादशाह ने उन सबको रोक दिया और मिहिरराज से कहने लगे, तुम अपनी समस्या बताओ कि तुमने ऐसा क्यों किया? मैं स्वयं अपने कानों से सुनना चाहता हूँ।

ला तखोफ या बनी, कहो सब तेरी बात।

तब रूक्का दिया हाथ में, कही सब विख्यात।।१९।।

बेटे! डरो नहीं! तुम अपनी सारी बात कहो। तब श्री मिहिरराज जी ने आरब का दिया हुआ पत्र बादशाह को दे दिया और सारी घटना बता दी कि किस तरह से उनके दरबार में दो माह तक भटकने के बाद भी कोई न्याय नहीं मिला।

मैं अपने गले का बोझ, सो डारत हों गले तुम।

लेऊं हिसाब तुमसों, खुदाए के हुकम।।२०।।

मेरे ऊपर खेता भाई का न्याय कराने का जो उत्तरदायित्व था, वह मैं आपके ऊपर सौंप रहा हूँ। बादशाह यदि तुमने सच्चा न्याय नहीं किया, तो अल्लाह तआला के हुक्म से मैं आपसे अवश्य इसके प्रतिफल का

हिसाब लूँगा।

जब हाथ तुम्हारा हाथ में, होवेगा खुदाय के।

इन्सा अल्ला-ताला रोज ईद के, तब लेऊं दावन झटक के।।२१।।

जब अल्लाह तआला न्याय के दिन सारी सृष्टि का न्याय करेगा, उस समय आप भी खुदा की दृष्टि में एक अपराधी के रूप में होंगे और मैं अल्लाह तआला की इच्छा से उन के सामने आपका दावन झटककर अपना न्याय करवाऊँगा।

तब जवाब सुलतान नें, दिया यों कर इत।

यह कलाम दुर्लभ, है बखत रोज क्यामत।।२२।।

यह सुनकर बादशाह ने उत्तर दिया कि इस तरह के वचन बहुत खुशनसीबी से सुनने को मिलते हैं। ऐसा

लगता है कि क्यामत का समय आ गया है।

छेड़ा झटका अपनो, देखा तरफ खुदाए।

यह सुकन मुझको कबहूँ, किनहूँ न सुनाए।।२३।।

उसने अपना दावन झटककर आकाश की तरफ देखा और अल्लाह तआला से अर्जी करते हुए कहने लगा– या अल्लाह! क्यामत के दिन की इतनी ऊँची बातें (इलाही कलाम) आज तक किसी ने मुझको कभी नहीं कही थी।

भावार्थ– जब श्री मिहिरराज के दावन झटकने से उसकी कस टूटी, तभी श्री मिहिरराज बादशाह से अलग हो गए थे। इतनी बातें होने के पश्चात् यह कदापि सम्भव नहीं था कि श्री मिहिरराज जी बादशाह के दावन को पकड़कर ही खड़े रहे हों। इसलिये इस चौपाई के प्रथम चरण में "छेड़ा झटकने" का भाव अपने को उनसे अलग

करना था, गला छुड़ाना नहीं था, क्योंकि उस समय बादशाह को नमाज पढ़ने के लिये देरी हो रही थी। "छेड़ा झटकना" एक मुहावरा भी है, जिसका भाव होता है– स्वयं को अलग करना।

मैं एता तुमको ना कहता, पर मुझ पर हुआ जुलम।
मैं बहुत भटका, तब फरियाद करी आगे तुम।।२४।।

श्री मिहिरराज जी कहने लगे कि हे बादशाह! मैं आपसे इतनी बातें नहीं कहना चाहता था, लेकिन मेरे ऊपर अत्याचार हुआ है। मैं आपके दरबार में भी दो माह तक भटकता रहा हूँ। जब किसी ने मेरी बात नहीं सुनी, तो मुझे मजबूर होकर आपके आगे फरियाद करनी पड़ी।

इन्सा अल्ला ताला करे, मैं करों तेरा इन्साफ।
तेरा तुझको दिलाऊं, कर दिया तोहे सब माफ।।२५।।

बादशाह ने कहा अल्लाह तआला के हुक्म (इच्छा) से मैं तुम्हारा इन्साफ अवश्य करूँगा। तुम्हारे भाई का धन तुम्हें अवश्य दिला दूँगा। तुमने दावन झटकने का जो गुनाह किया, उसे भी मैंने माफ कर दिया।

ओ तो गया निमाज को, फेर ए आये अपने घर।
हुआ बखत फजर का, भेजे चोपदार याद कर।।२६।।

बादशाह नमाज़ पढ़ने चला गया और श्री मिहिरराज जी अपने निवास पर आ गये। जब प्रातःकाल हुआ, तो बादशाह को याद आई कि मैं तो उस व्यक्ति का पता ही नहीं ले पाया था। इसलिये श्री मिहिरराज जी की खोज में उसने दो सैनिकों को भेज दिया।

ल्याओ उस सख्स को, जिन दावन झटका बीच राह।
इनका इन्साफ पहिले करों, ए है वास्ता खुदाए।।२७।।

बादशाह ने उन सैनिकों को यह कहा कि उस व्यक्ति को ले आओ, जिसने नमाज़ पढ़ने के लिये जाते समय मार्ग में ही मेरा दावन झटक दिया था। मैं सबसे पहले उस व्यक्ति का ही न्याय करूँगा क्योंकि उसने न्याय के लिये खुदा का वास्ता दिया था।

चोपदार पुकारता, कौन वह सख्स निसान।
जिन इमाम को पकड़ा, फरियाद सुनाई कान।।२८।।

दोनों सैनिक सड़क पर उच्च स्वर में मुनादी (पुकार) कर रहे थे कि बादशाह का दावन झटकने वाला व्यक्ति कौन है?

श्री जी आप खड़े हते, कह्या वह शख्स हैं हम।

दोऊ बाजू दो पकड़ के, खड़े किए तले हुकम।।२९।।

श्री मिहिरराज जी वहीं पर खड़े थे। उन्होंने सैनिकों को बताया कि बादशाह का दावन उन्होंने ही झटका था। यह सुनकर दोनों सिपाहियों ने श्री मिहिरराज जी के दोनों बाजुओं को पकड़कर बादशाह के सामने उपस्थित किया।

विशेष– इस चौपाई के प्रथम चरण में श्रीजी शब्द का प्रयोग श्री लालदास जी के द्वारा सम्मान प्रकट करने के भाव में प्रयुक्त हुआ है, अन्यथा इस शब्द का अर्थ अक्षरातीत होता है और इसका प्रयोग केवल हब्से के बाद किया जाना चाहिये।

पहुँचे हजूर सूल्तान के, पूछी बात हिन्दुस्तान।

हकीकत पूछी इसलाम की, यों कर कहे सुल्तान।।३०।।

श्री मिहिरराज जी जब बादशाह के सामने उपस्थित हुये, तो उसने उनसे हिन्दुस्तान का समाचार पूछा। बादशाह ने उनसे भारत में इस्लाम धर्म की गतिविधियों के बारे में भी जानकारी हासिल की।

राजी होए बातें करी, तें क्यों फरियाद न करी दीवान।

तब बचाया तिन को, मैं न सुनाई कान।।३१।।

बादशाह ने बहुत ही विनम्र भाषा में श्री मिहिरराज जी से बातें की। बादशाह ने कहा कि मिहिरराज! आपने मेरे दीवान से क्यों नहीं अर्जी की? तब श्री मिहिरराज जी ने दीवान की सुरक्षा के लिये कह दिया कि मैंने उनसे कुछ भी बात की ही नहीं थी।

भावार्थ– श्री मिहिरराज जी को मालूम था कि मेरी अर्ज़ी को नकारने के कारण दीवान को दण्ड भुगतना पड़ेगा। इसलिये दया के सागर श्री मिहिरराज जी ने अपनी बात बदल दी। इस बात से बादशाह बहुत प्रभावित हुआ कि इस हिन्दुस्तानी ने मेरे दीवान को बचाने के लिये बात बदल दी है, क्योंकि उसे मालूम था कि इस व्यक्ति ने तो कल ही कहा था कि मैं दो महीने तक आपके दरबार के चक्कर काटता रहा लेकिन किसी ने मेरी फरियाद नहीं सुनी।

तब बहुत राजी भये, सेख सल्ला की करी फरियाद।
उसी बखत हुकम हुआ, जाहिर उखाडूं बुनियाद।।३२।।

श्री मिहिरराज जी की दया–भावना से भरी इस बात को सुनकर बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। श्री मिहिरराज जी ने

बादशाह से शेख सल्लाहु की फरियाद की। सब कुछ सुनकर बादशाह ने अपना हुक्मनामा लिख दिया कि इनका कार्य न करने पर शेख सल्लाहु को जड़ से मिटा दिया जायेगा।

सब मता इनका, सुनत दीजियो तुम।
नातो मार उखाड़ों जड़मूल से, जो फेरे मेरा हुकम।।३३।।

ऐ शेख सल्लाहु! मेरा यह हुक्मनामा पाते ही मिहिरराज जी का सारा धन वापस कर देना। यदि तुमने मेरे हुकम को नहीं माना, तो तुम्हें जड़ से उखाड़ डालूंगा (नष्ट कर डालूँगा)।

इन भाँत लिख करके, दिया एक चोपदार।
आये आगे खड़े रहे, सेख सल्ला के द्वार।।३४।।

इस तरह से हुक्मनामा लिखकर बादशाह ने मिहिरराज जी को दे दिया और साथ में एक सैनिक भी कर दिया। श्री मिहिरराज इस सैनिक और हुक्मनामे को लेकर शेख सल्लाहु के पास पहुंचे।

कागद दिया हाथमें, करियो इत सिताब।
हुकम हुआ मुझको, इन सख्स के बाब।।३५।।

उस सैनिक ने वह हुक्मनामे का कागज शेख सल्लाहु के हाथ में पकड़ा दिया और कह दिया कि बादशाह का मुझे हुक्म है कि इन मिहिरराज जी का सारा कार्य अपने सामने शीघ्र करवाना।

तुरत कुंजी बखार की, और सामा सब।
काढ़ के हाथों दई, ढील न करी तब।।३६।।

यह सुनकर शेख सल्लाहु ने बादशाह के डर से गोदाम की चाबी दे दी और बिना देखे जब्त की हुई सारी सम्पत्ति लाकर श्री मिहिरराज जी को सौंप दी।

भावार्थ– शेख सल्लाहु ने सम्पत्ति तो वापस कर दी, लेकिन उसके मन का पाप नहीं गया। उसने रात्रि में अपने आदमियों से उसमें आग लगवा दी , जिसके परिणामस्वरूप सारी सम्पत्ति जलकर राख हो गई। शेख सल्लाहु ने ऐसा करके अपने मन में सन्तोष माना।

सुनी बात श्री देवचन्द्रजी, भेजे बिहारीजी स्याम।
पहुँचे आये बरारब, मुलाकात करी इस ठाम।।३७।।

खेता भाई के देह त्याग की बात को सुनकर सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने बिहारी जी और श्याम जी को मिहिरराज जी की सहायता के लिये अरब भेजा। वे दोनों

अरब पहुँचे और श्री मिहिरराज जी से आकर मिले।

तब लेखा दिया हाथ में, पहुँची सब सामा।
रोजनामा आगे रखा, जो लिखा था नामा।।३८।।

तब श्री मिहिरराज जी ने उन दोनों को बची हुई सम्पत्ति के साथ सारा हिसाब–किताब सौंप दिया। वह प्रतिदिन जो लेन–देन करते थे, उसे भी उन्होंने उनके सामने रख दिया ताकि वे सारे धन की वास्तविक जाँच कर सकें।

सब मेहनत अपनी, कर दिखाई बात।
पर इनों का कुफर, क्योंये कर न जात।।३९।।

बातचीत के क्रम में ही उन्होंने सारी बात बताई कि किस तरह से उन्होंने खेताभाई के धन को संग्रहीत किया और मस्कत के खलीफा के पास जाकर शेख सल्लाहु के

द्वारा जब्त की हुई सम्पत्ति छुड़ाई, लेकिन इन दोनों के मन में पाप भरा था। वे दोनों मिहिरराज जी से हमेशा द्वेष ही रखते रहे।

भावार्थ– "वृतान्त मुक्तावली" तथा अन्य बीतकों में ऐसा लिखा है कि श्री मिहिरराज जी से धन लेकर बिहारी जी और श्याम जी जब नवतनपुरी आये, तो उन्होंने उस धन को स्वयं छिपा लिया तथा गांगजी भाई को कुछ नहीं बताया। अपना दोष छिपाने के लिये उन्होंने सद्गुरु महाराज के सामने सारा आरोप मिहिरराज पर मढ़ दिया कि उन्होंने हमें कुछ दिया ही नहीं। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी और गांगजी भाई दोनों ही श्री मिहिरराज जी के उज्ज्वल चरित्र को जानते थे, इसलिये उन्होंने बिहारी जी और श्याम जी की झूठी बातों पर जरा भी विश्वास नहीं किया।

उधर श्री मिहिरराज जी ने खेताभाई की सम्पत्ति को एकत्रित कर नवतनपुरी की ओर प्रस्थान किया। इसकी सूचना जब बिहारी जी और श्याम जी को मिली, तो उन्होंने अपना पाप छिपाने के लिये गांगजी भाई की बहन बालबाई को उकसाया। चंचल बुद्धि वाली बालबाई ने जाम राजा के यहाँ शिकायत कर दी कि मिहिरराज मेरे भाई का धन हड़प कर ला रहे हैं। वह धन किसी भी स्थिति में मिहिरराज को नहीं मिलना चाहिये। या तो यह गांगजी भाई को मिले या खजाने में चला जाये। जैसे ही मिहिरराज नवतनपुरी उतरे, राजा के सैनिकों ने उन्हे बंदी बना लिया और सारा धन राजकोष में जमा कर मिहिरराज को मुक्त कर दिया।

नौतनपुरी की बीतक

इहाँ सेती फेरके, आये पुरी नवतन।
चुगली बालबाई करी, सुनाई जाम के कान।।४०।।

जब श्री मिहिरराज अरब से खेता भाई की शेष सम्पत्ति लेकर नवतनपुरी आए, तब बिहारी जी के बहकावे में आई हुई बालबाई ने जाम राजा से चुगली कर दी कि मिहिरराज जी के पास अरब से आई हुई जो सम्पत्ति है, वह मेरे भाई की है, मिहिरराज की नहीं है।

सम्वत सत्रह सै अठोत्तरे, हुआ यह मजकूर।
सब सामा गई रावर में, जिनको लिखी अंकूर।।४१।।

यह घटना विक्रम सम्वत् १७०८ की है। श्री मिहिरराज जी के द्वारा लाई हुई सारी सम्पत्ति राजकोष में जमा हो

गई। वह सेवा के काम में नहीं आ सकी, क्योंकि वह खेता भाई की पवित्र कमाई नहीं थी।

भावार्थ– विक्रम सम्वत् १७०८ में राजा के द्वारा जाँच कराये जाने पर जब श्री मिहिरराज जी पूर्णतया निर्दोष निकले, तो उन्हें मुक्त कर दिया गया। अब बालबाई को भय सताने लगा कि यदि मिहिरराज सद्गुरु महाराज के पास आ जायेंगे, तो सारी वास्तविकता स्पष्ट हो जायेगी और वह उनकी दृष्टि में गिर जायेगी। इसलिये स्वयं को अच्छा साबित करने कि लिये बालबाई ने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से कहा कि मिहिरराज ने मेरे भाई की सम्पत्ति हरण कर ली है। यदि आपने उनका प्रणाम स्वीकार किया, तो मैं कुँए में छलांग लगाकर अपने प्राण त्याग दूँगी। श्री लल्लू भट्ट जी कृत "वर्तमान दीपक" में यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है–

आ समये जो एम ने, पीऊ करसे प्रणाम।

मरूं पडीने कूपमां, तो बाल बाई मांरू नाम।।

वर्तमान दीपक २३/१३

जब श्री मिहिरराज जी सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में प्रणाम करने आते हैं, तो उन्होंने बालबाई के दबाव में श्री मिहिरराज का प्रणाम स्वीकार नहीं किया और स्वयं को चादर से ढक लिया। यह प्रसंग षट्ऋतु ५/२ में इस प्रकार दर्शाया गया है–

तमें पडदा पाछा कीधा पछी, वली आवी ते आ वसंत।।

इहां नौतनपुरी मिने, रहे बरस दोय।

गये न श्री देवचन्द्र जी पास, हरख मिलने को बड़ो होय।।४२।।

श्री मिहिरराज जी नवतनपुरी में दो वर्ष तक रहे। उनके मन में सद्गुरु महाराज से मिलने की प्रबल आकांक्षा थी,

फिर भी वे मिलने के लिये नहीं गये।

भावार्थ– श्री मिहिरराज के मन में एक पीड़ा थी कि भले ही बिहारी जी या बालबाई मेरे ऊपर निराधार आरोप लगाते रहें, लेकिन सद्गुरु महाराज को तो मेरे ऊपर विश्वास करना चाहिए था। जब मेरा तन, मन उनके लिये समर्पित था, फिर भी बालबाई के दबाव में उन्होंने मेरा प्रणाम स्वीकार क्यों नहीं किया? इसलिये जब तक सद्गुरु महाराज स्वयं नहीं बुलायेंगे, तब तक मैं नहीं जाऊँगा।

भांत भांत बिलखे वहां, घर के बीच में आप।

न वे बुलावे न ए जाय, तो क्यों कर होय मिलाप।।४३।।

नवतनपुरी में अपने घर पर रहते हुये सद्गुरु के वियोग में अनेक प्रकार से विलाप करते रहे, किन्तु श्री निजानन्द

स्वामी की तरफ से कोई बुलावा नहीं आ रहा था, इसलिये ये भी नहीं जा रहे थे। ऐसी स्थिति में दोनों का मिलन कैसे संभव हो सकता था?

देखो जोर ए माया को, दिखावे धनी धाम।
हल्की याको जिन गिनो, याके रंग में बहो न ठाम।।४४।।

हे साथ जी! धाम धनी ने हमें जिस माया का खेल दिखाया है, वह बहुत शक्तिशाली है। इस माया को हल्के में नहीं लेना चाहिये। इसके रंग में बह जाने पर, अर्थात् माया में डूब जाने पर, शांति का कोई ठिकाना नहीं रहता।

भावार्थ– माया की शक्ति का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि जिस तन में स्वयं अक्षरातीत विराजमान होकर लीला कर रहे हों और सब सुन्दरसाथ

को साक्षात् दर्शन दे रहे हों, वही तन बालबाई के दबाव में श्री मिहिरराज जी का प्रणाम तक स्वीकार नहीं करता है। सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ अक्षरातीत की लीला निष्पक्ष न्याय न कर पाने के कारण कलंकित हो जाती है।

खट ऋतु में साथ को, कह्या सभी ए खोल।
सिखापन विध-विध के, साथ वास्ते कहे बोल।।४५।।

षट्ऋतु की वाणी में श्री इन्द्रावती जी की आतम ने सद्गुरु से अपने वियोग की पीड़ा को अनेक रूपों में व्यक्त किया है और सुन्दरसाथ के लिये अनेक प्रकार की शिक्षा भी दी है, ताकि कोई माया के प्रभाव में बहने न पाये।

एक दिन भौजाई के, वचन ताने के जोर।

तब प्रात उदास होए के, गए धरोल आप कर जोर।।४६।।

एक दिन उनकी भाभी (श्यामल जी की पत्नी) ने अपने कटु वचनों के तानों से उनके हृदय को बींध दिया। इस ताने ने श्री मिहिरराज के स्वाभिमान को जाग्रत कर दिया और वे अत्यधिक उदास होकर प्रातःकाल दृढ़ संकल्प के साथ धरोल के लिये चल दिये।

भावार्थ– शब्दों के घाव तलवार के घाव से भी ज्यादा तीखे होते हैं। जब शाम के समय श्री मिहिरराज जी ने प्रवेश किया तो श्यामल जी की पत्नी सीता ने व्यंग्यपूर्वक बोल दिया कि मिहिरराज अपने जिस गुरु के नाम पर आप अपने सगे भाई को मारने चले थे, यदि वह भाई आज नहीं होता तो आप कहाँ रहते? आखिर अपना भाई ही तो काम आया। इन दो वर्षों में तुम्हारे गुरुदेव ने

तो तुम्हारी खबर नहीं ली।

इहां सेती फेरके, गये कलाजी पास।

तहाँ जाए रोजगार की, दिलमें राखी आस।।४७।।

नवतनपुरी से श्री मिहिरराज धरोल में कल्ला जी के पास रहे। वहाँ जाकर उन्होंने कल्ला जी से अपने लिये व्यवसाय की चाहना प्रगट की।

कलाजी के पास, रहे बरस दोय।

या उपरान्त गुजरात, आठ महिने रहे सोय।।४८।।

कल्ला जी के पास श्री मिहिरराज जी राज्य के प्रबंधन कार्य में दो वर्ष तक रहे। इसके पश्चात् कर चुकाने के लिये अहमदाबाद में उन्हें ८ महीने रहना पड़ा।

फेर आये गुजरात से, कलापे मांगी बखसीस।

सम्बत सत्रह सै बारोत्तरे, अब मैं पाऊं सीख।।४९।।

अहमदाबाद से लौटकर जब श्री मिहिरराज गुजरात से धरोल आये, तो उस समय विक्रम सम्वत् १७१२ का समय चल रहा था। उनका मन संसार से अलग हो चुका था। उन्होंने धरोल के राजा कल्ला जी से अपनी सेवा से छुट्टी चाही।

भावार्थ– जब श्री मिहिरराज जी को धरोल राज्य की तरफ से कर चुकाने हेतु अहमदाबाद जाना पड़ा था, उस समय उन्हें बहुत कटु अनुभव हुआ। उन्होंने सोचा कि मुस्लिम शासकों को धन देने पर भी झुक–झुक कर सलाम करना पड़ता है, इससे अच्छा तो यही है कि मैं सद्गुरु महाराज के चरणों में क्यों न अपना शीश झुकाऊँ। यहीं से उन्होंने राज्य व्यवस्था छोड़ने का मन बना

लिया।

अब मोसों दुनियां का, होय नहीं बेवहार।

एक दिल एकान्त में, सेवों धनी निरधार।।५०।।

श्री मिहिरराज जी अपने मन में सोचते हैं कि मुझसे दुनिया का लौकिक व्यवहार नहीं हो सकता। अब तो मैं एकान्त में रहकर अपने दिल में धनी को बसाकर उन्हें रिझाना चाहता हूँ।

तब कलाजी ने कह्या, तेरा है अखत्यार।

जिन्हें जानो तिन्हें सौंप दयो, सो चलावे कार वेहेवार।।५१।।

तब धरोल के राजा कल्ला जी ने कहा कि मिहिरराज! राज्य प्रबंधन की सम्पूर्ण सेवा का उत्तरदायित्व आपके ऊपर है। आपको जो व्यक्ति उचित प्रतीत हो, जो आपके

स्थान पर सेवा कार्य को निभा सके, उसको आप अपना पद सौंप सकते हैं।

इन समै श्री देवचन्द्रजी की, फिरी सुरत निजधाम।
बुलाय ल्याओ श्री मेहेराज को, मेरे हजूर इस ठाम।।५२।।

इस समय सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की सुरता परमधाम की ओर मुड़ने लगी, अर्थात् उनके धामगमन का समय निकट आ गया। उन्होंने बार-बार सुन्दरसाथ से कहना शुरु किया कि मिहिरराज जी को मेरे पास यहां बुलाकर ले आओ।

आई बालबाई बुलावने, तिनको दिया जवाब।
मैं काम छुड़ाय के, आवत हों सिताब।।५३।।

बालबाई श्री मिहिरराज जी को बुलाने के लिये आईं।

श्री मिहिरराज जी ने उत्तर दिया कि मैं राज्य की कार्य व्यवस्था दूसरे को देकर शीघ्र ही सद्गुरु महाराज के चरणों में आ जाऊँगा।

फेर बिहारी जी आए, मांगी अम्बर कस्तूरी।
सुन बिहारीजी की बात, दिल बीच धरी।।५४।।

पुनः सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने बिहारी जी को भेजा। बिहारी जी ने कहा कि सद्गुरु महाराज का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है, उन्होंने अम्बर (इत्र) और कस्तूरी मंगाई है। श्री मिहिरराज जी ने बिहारी जी से पूछा, क्या सद्गुरु महाराज ने मुझे याद किया है? बिहारी जी ने उत्तर दिया कि नहीं, मिहिरराज तुम्हें वहाँ कोई भी याद नहीं करता। सबकी जुबान में एक ही बात रहती है कि तुमने गांगजी भाई का पैसा हड़प लिया है। बिहारी जी

की इस बात को चुपचाप सुनकर श्री मिहिरराज जी ने अपने हृदय में रख लिया।

भावार्थ– "इत्र" और "अभ्रक" को "अम्बर" कहते हैं। औषधि के रूप में अभ्रक भस्म तो उपयोग में लाई जा सकती है, किन्तु सीधे अभ्रक नहीं। इसलिये यहाँ अम्बर शब्द में से इत्र का ग्रहण किया जायेगा। "कस्तूरी" हिरण की नाभि से निकलने वाला एक सुगन्धित पदार्थ है, जिसके सेवन से शरीर में बहुत अधिक शक्ति पैदा होती है। बिहारी जी के मन में यह डर था कि यदि श्री मिहिरराज सद्गुरु महाराज के चरणों में पहुँच जाते हैं, तो निश्चय ही वे मिहिरराज को अपना पद और आशीर्वाद प्रदान कर देंगे। इसलिये वह किसी भी स्थिति में यह नहीं चाहते थे कि मिहिरराज मेरे पिता के चरणों में पहुँच पायें।

मंगाय कस्तूरी अम्बर, ले करी हाजर।

मैं भी कदमों तले, आवत हों फजर।।५५।।

श्री मिहिरराज जी ने कस्तूरी और अम्बर लाकर बिहारी जी को सौंप दिया और कहा– संभवतः मैं भी सद्गुरु महाराज के चरणों में प्रातःकाल तक पहुँच जाऊँगा।

अपना काम काज सब, किया छोड़ने का उदम।

मैं इहाँ से फारक होय के, पहुंचों आय कदम।।५६।।

मैंने यहाँ राजकीय प्रबंधन का सारा कार्य छोड़ने का निर्णय ले लिया है। मैं यहां से छुट्टी लेकर शीघ्र ही सद्गुरु महाराज के चरणों में पहुँचता हूँ।

यों करते बिहारीजी को, फेर के भेजे श्रीराज।

तुम सिताबी जायके, ल्याओ बुलाए श्री मेहेराज।।५७।।

किन्तु श्री निजानन्द स्वामी श्री मिहिरराज जी के आने की बाट देखते हुये बहुत व्याकुल थे। उन्होंने बिहारी जी को बुलाने के लिये पुनः भेजा कि तुम शीघ्र जाकर श्री मिहिरराज को बुलाकर मेरे पास लाओ।

वे कहते सैयन को, सिंध की भाषा मों।

मुंह-मुंह कोड़ मत्थन, मैं बातें करों तिन सों।।५८।।

मैं अपने उस मिहिरराज से मिलना चाहता हूँ, जो सुन्दरसाथ को सिंधी भाषा में "मेरे एक-एक सिर में करोड़ों मुख हों" वाला भजन बनाकर सुनाया करते थे। मैं उनसे बात करना चाहता हूँ।

जान हुन कोड़ धड़, धड़ धड़ कोड़ मत्थन।

मत्था मत्था कोड़ मुंह, मुंह मुंह कोड़ जिभ्भन।।५९।।

वे कहा करते थे कि यदि मेरे करोड़ों धड़ हों, एक–एक धड़ में करोड़ों सिर हों, एक–एक सिर में करोड़ों मुख हों, और एक–एक मुख में करोड़ों जिह्वायें हों।

हितरा मिडी तोहिजा, तांजे गुण गिनन।

भाल तोहिजो हिकड़ी, पुजी ते न सगन।।६०।।

इतनी जिह्वायें मिलकर भी यदि आपके गुणों को गिनना चाहें, तो भी वे एक गुण को भी गिनने में समर्थ नहीं हो सकतीं।

आये बिहारीजी फेरके, बात कही इसारत।

बाप को दुखत है, कछु औषधि चाहिए इत।।६१।।

बिहारी जी पुनः दूसरी बार आये और उन्होंने बहुत संक्षिप्त रूप से यह बात कही कि पिता जी का स्वास्थ्य खराब है। कुछ औषधि की आवश्यकता है।

तब कह्या श्री मेहेराज ने, मैं आवत हों उत।

कछुक काम रह्या है, मैं उसके गले डालत।।६२।।

तब श्री मिहिरराज जी ने बिहारी जी से कहा कि कुछ राजकीय कार्य अभी भी बाकी रह गया है। मैं उसे किसी और को सौंपकर शीघ्र ही सद्गुरु महाराज के चरणों में आ रहा हूँ।

श्री देवचन्द्रजी के दिल में, रही बात अटक।

फेर फेर कहे बुलाओ, श्री मेहेराज रहे खटक।।६३।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के दिल में केवल मिहिरराज जी की ही याद आ रही थी। वे बार-बार यही कह रहे थे कि कोई मिहिरराज को बुलाकर लाये।

तब बिहारी जीएं कह्या, तुम फेर फेर करत याद।

हम तो कहि कहि थके, तुम फेर फेर करत बाद।।६४।।

तब बिहारी जी ने कहा कि पिता जी! आप बार-बार उनको याद करते हैं। मैंने तो मिहिरराज जी को आपके पास चलने के लिये बार-बार कहा है, लेकिन वे किसी भी कीमत पर आना ही नहीं चाहते, जबकि आप बार-बार उन्हीं की याद करते रहते हैं (रट लगाते रहते हैं)।

तब बिहारीजी को कह्या, तुम बुलाये ल्याओ इन।
मैं धाम दरवाजे पैठ ना सकों, ठाढ़ी इन्द्रावती करे रुदन।।६५।।

तब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने बिहारी जी से कहा कि इन्द्रावती की आत्मा धाम दरवाजे पर खड़े होकर विलाप कर रही है। मिहिरराज के आये बिना मैं धाम नहीं जा सकता।

भावार्थ– श्री मिहिरराज और सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के बीच ९ वर्षों (विक्रम सम्वत् १७०३–१७१२ तक) का वियोग रहा। बालबाई के दबाव के कारण सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी श्री मिहिरराज जी का प्रणाम स्वीकार नहीं कर पाये। इससे श्री मिहिरराज जी का हृदय बहुत ही व्यथित (दुःखी) था। इसी को इन्द्रावती जी का विलाप करना कहा गया है। श्री देवचन्द्र जी के तन में श्री युगल स्वरूप (श्री राज जी और श्यामा जी)

विराजमान थे। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के देह त्याग के पश्चात् श्री युगल स्वरूप को श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में ही विराजमान होना था। इसी को "धाम में बैठना" कहा गया है।

जिस प्रकार किसी भवन में प्रवेश करने के लिये द्वार से होकर जाना पड़ता है, उसी प्रकार जब तक श्री मिहिरराज जी का हृदय दुःखी रहेगा, तो उस तन में श्री युगल स्वरूप कैसे बैठ सकते हैं? इसी को धाम दरवाजे पर श्री इन्द्रावती जी के रोने के कारण धाम में प्रवेश न करने की बात कही है।

यह बचन सुनके, बालबाई पहुँची धाय।
मेहेराज तुम्हें क्या हुआ, एते बुलावने आय।।६६।।

श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से इस तरह के वचन

सुनकर बालबाई शीघ्रतापूर्वक श्री मिहिरराज जी के पास पहुँची। तुम्हारे लिये इतने बुलावे आ गये, फिर भी तुम चलते क्यों नहीं हो?

श्री देवचन्द्र जी तुमको, याद करें फेर फेर।
मैं धाम जाय ना सकों, रह्या इन खातर।।६७।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी बार–बार तुमको याद कर रहे हैं और वे यही कह रहे हैं कि मिहिरराज के आये बिना मेरा धामगमन नहीं हो सकता।

तब श्री मेहेराज ने कह्या, मोसों कही न किन ए बात।
मैं तो तब हीं आवत, जो एती जानों विख्यात।।६८।।

तब श्री मिहिरराज जी ने कहा कि आपके अतिरिक्त मुझसे तो ऐसा किसी ने कहा ही नहीं। बिहारी जी दो बार

आये और दोनो बार उन्होंने कहा कि पिताजी का स्वास्थ्य खराब है, कुछ दवा चाहिये। यदि मैं जानता कि सद्गुरु महाराज मुझे याद कर रहे हैं, तो मैं उसी क्षण चल देता।

भावार्थ– षटऋतु में इसी बात को "उधव तें तो अक्रूर पर इंडु रे चढ़ाव्यो" (बारे मास ७/४) कहा गया है। अर्थात् गोपियां कहती हैं कि हे उद्धव ! अक्रूर हमारे कन्हैया को मथुरा ले गये थे तो हमें इतना दुःख नहीं हुआ, जितना दुःख तुम्हारी इस बात से हो रहा है कि तुम हमसे कन्हैया को छोड़कर निराकार परमात्मा की योग–साधना करने को कह रहे हो।

षटऋतु के इस प्रसंग में अक्रूर बिहारी जी हैं और उद्धव बालबाई हैं। बिहारी जी की यह बात कि "सद्गुरु महाराज तुमसे मिलना ही नहीं चाहते" ने मिहिरराज जी को इतना

दुःखी नहीं किया, जितना इस बात ने दुःखी किया कि "सद्गुरु महाराज तुमको बुला रहे हैं और तुम चल नहीं रहे हो।"

तब कारभार सब डारके, हुये बिदा सिताब।
आप रहते थे जिनके, तिनको दे आये जवाब।।६९।।

तब श्री मिहिरराज जी ने राज्य प्रबंध का सारा कार्य छोड़ दिया और तुरंत बालबाई के साथ चले गये। राजा कल्ला जी के पास जाकर वे उनको स्पष्ट कह आये कि अब मेरे से प्रबंधन कार्य नहीं हो सकेगा। मैं सद्गुरु महाराज की शरण में जा रहा हूँ।

सम्वत सत्रह सै बारोत्तरे, श्रावन वदि अस्टमी।
मिलाप श्री देवचन्द्रजी सों, कहों बात जमी।।७०।।

विक्रम सम्वत् १७१२ में श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी एवं श्री मिहिरराज जी का मिलन हुआ। इस प्रसंग की सारगर्भित बातों को मैं आपके आगे कहता हूँ।

महामति कहे ए साथजी, ए नवतनपुरी की बीतक।
याद करो इन समय को, सो भान देऊं सब सक।।७१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! यह नवतनपुरी में उस समय होने वाली घटनाओं का विशेष वर्णन है। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की अन्तर्धान लीला के इस महत्वपूर्ण समय को याद कीजिये। इस घटनाक्रम में होने वाले सारे संशयों को अब मैं समाप्त कर दूँगा।

प्रकरण ।।१५।। चौपाई ।।६९१।।

सद्गुरु अन्तर्धान लीला

इस प्रकरण में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की अन्तर्धान लीला को दर्शाया गया है।

आय के मुलाकात करी, लगे श्री देवचन्द्रजी के कदम।
तब पूछा ए कौन है, कह्या श्री मेहेराज की आतम।।१।।

श्री मिहिरराज जी ने आकर सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में प्रणाम किया। उस समय श्री देवचन्द्र जी पलंग पर लेटे हुये थे। उन्होंने लेटे ही लेटे पूछा कि कौन है? उत्तर में श्री मिहिरराज जी ने कहा कि मैं मिहिरराज।

भावार्थ- यद्यपि इस चौपाई के चौथे चरण में "श्री मिहिरराज की आतम" कहा गया है, किन्तु यह ध्यान रखने योग्य तथ्य है कि मिहिरराज जी पूछने पर अपने शरीर के नाम से ही परिचय देंगे। प्रकाश एवं षट्ऋतु में

जिस आत्मिक भाव से उन्होंने सद्गुरु को माना है, उसी आत्मिक भाव से वे सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में गये थे। इस भाव को सद्गुरु निजानन्द स्वामी जी भी अच्छी तरह से जानते हैं। यह गुह्य रहस्य केवल उन दोनों के लिये है, व्यवहारिक रूप में परिचय देने के लिये केवल मिहिरराज नाम ही उपयुक्त होगा। मरू के द्वारा धारण किये गये मिहिरराज के तन में इन्द्रावती की आत्मा है। इस प्रकार भी लालदास जी ने आन्तरिक और बाह्य दोनों भावों को प्रकट कर दिया है।

नाम सुनत श्री मेहेराज को, बड़ो जो पायो सुख।
पूछा मेहेराज आये तुम, बात करने लगे मुख।।२।।

मिहिरराज का नाम सुनते ही सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी को बहुत आनन्द हुआ। उन्होंने प्रसन्नता के आवेग में

पूछा– मिहिरराज, आ गये तुम। इस प्रकार वे उनसे बातें करने लगे।

दई दिलासा नरमी से, मुखतें कहे सुकन।

मैं बहुत बेर याद किया, तुम तरफ पठाये मोमिन।।३।।

अपने मुख से बहुत मधुर शब्द बोलते हुए उन्होंने मिहिरराज जी को सांत्वना दी। मिहिरराज! मैं तो तुम्हें बार–बार याद कर रहा था और तुम्हें बुलाने के लिये मैंने बार–बार सुन्दरसाथ (बिहारी जी एवं बालबाई) को भेजा।

तब जवाब श्री मेहेराज ने, दिया श्री देवचन्द्र को।

था काम लौकिक का, डाला गले और के मों।।४।।

तब श्री मिहिरराज जी ने सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी से कहा

कि राज्य का प्रबंधन सम्बन्धी कुछ लौकिक कार्य था, जिसका उत्तरदायित्व मैं दूसरों के ऊपर डाल कर आपके चरणों में आया हूँ।

मोकों बुलावने का, किने न कह्या वचन।
जब मैं सुना सुकन, तब देखे कदम रोसन।।५।।

मुझे आपके चरणों में आने के लिये तो बिहारी जी ने कभी कहा ही नहीं। जब बालबाई जी ने कहा कि सद्गुरु महाराज तुम्हें याद कर रहे हैं, तो मैं तुरन्त आपके चरणों के दर्शन के लिये आ गया।

अब तो फेर न जाओगे, लौकिक काम ऊपर।
के फेर जायके आओगे, काम इसलाम पर।।६।।

श्री देवचन्द्र जी कहते हैं अब उस लौकिक कार्य को पूरा

करने के लिये तुम्हें पुनः जाने की आवश्यकता तो नहीं है, या जाकर धर्म का कार्य करने के लिये फिर आओगे?

मैं तुमको इस वास्ते, फेर फेर किया याद।

जो इन्द्रावती ठाढ़ी रोवती, देखी ऊपर बुनियाद।।७।।

मैं तुम्हें बार-बार इसलिये याद कर रहा था कि मुझे (युगल स्वरूप) अब देह त्याग के पश्चात् तुम्हारे ही धाम हृदय में विराजमान होना है। नौ सालों से वियोग के कारण तुम्हारा हृदय दुःखी था। मैंने देखा कि तुम्हारी परात्म परमधाम में रो रही है।

मैं पैठ ना सकों धाम में, तहाँ इनको रोवती देख।

तिस वास्ते मैं तुम को, बुलाया कर विसेख।।८।।

तुम्हारी परात्म को रोता देखकर मैं धाम में नहीं जा

सकता था। इसलिये मैंने तुम्हें विशेष रूप से बुलाया है।

भावार्थ– आत्मा दुःख–सुख तथा मान–अपमान के बन्धन में नहीं आती। बालबाई जी की चुगली और दबाब के कारण सद्गुरु महाराज द्वारा प्रणाम स्वीकार न किये जाने पर, श्री मिहिरराज जी के जीव का हृदय (दिल, अन्तःकरण) ही व्यथित हुआ। श्री इन्द्रावती जी की आत्मा का दिल तो इस व्यथा की पीड़ा को द्रष्टा होकर देख रहा है। इस प्रकार श्री मिहिरराज जी के जीव का दिल ही वह द्वार है, जिसके (माध्यम से) आगे श्री इन्द्रावती जी के रोने की बात कही गयी है।

अपने सद्गुरु स्वरूप धाम धनी के विरह में श्री इन्द्रावती जी के जीव का दिल जिस पीड़ा का अनुभव कर रहा है, आत्मा भी द्रष्टा होकर इस लीला को देख रही है। जीव और आत्मा की अंगना रूप में ऐक्य भावना होने के

कारण, जीव के रोने की प्रक्रिया को आत्मा के साथ जोड़कर वर्णित किया गया है।

इसे दूसरे रूप में इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने सकुण्डल तथा सकुमार की परात्म को हँसते हुए वर्णित किया है, क्योंकि इनकी सुरता राजघराने में उतरी थी और अभी तक दुःख की लीला को नहीं देख सकी थी। बीतक साहिब १३/५१ में यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है–

साकुण्डल सकुमार ढूंढन की, एकान्त होए सुनाई बात।
मूल सरूप उनके हंसत हैं, ओ खेल में है अपनी जात।।

बी. सा. १३/५१

इसे इस दृष्टान्त द्वारा समझा जा सकता है कि जिस प्रकार किसी बिच्छू के डंक मारने पर पीड़ा से तड़पने वाले व्यक्ति को देखकर उसका निकटवर्ती व्यक्ति भी

द्रवित हो जाता है, उसी प्रकार जीव की सुख–दुःख से भरी लीला को देखकर आत्मा और परात्म भी कुछ द्रवित सी हो जाती है। इसे ही संसार की भाषा में हँसना या रोना कहा गया है। वस्तुतः अपने शुद्ध स्वरूप में जीव भी कूटस्थ द्रष्टा ही है। वह तो अपने अन्तःकरण के माध्यम से सुख–दुःख एवं मान–अपमान को द्रष्टा होकर देखा करता है।

इस प्रकार श्री मिहिरराज जी के जीव के साथ घटित होने वाली विरह, अपमान एवं मिथ्या आरोपों की पीड़ा से आत्मा तथा परात्म के दिल का द्रवित होना स्वाभाविक है। जब परात्म का दिल इस लीला से द्रवित हो रहा है, तो उसकी सुरता रूप आत्मा के धाम हृदय में युगल स्वरूप विराजमान होकर कैसे लीला कर सकते हैं? धाम दरवाजे पर रोने का भी वही भाव है।

"दरवाजे" का तात्पर्य यहां लौकिक द्वार या रंगमहल के द्वार से नहीं है, बल्कि वह वस्तु (जीव का दिल) जिसके माध्यम से परात्म का दिल दुःख-सुख का अनुभव कर सके, द्वार कहलाता है। श्रीमुखवाणी में इसे इस तरह दर्शाया गया है-

मोहे चलते बखत बुलाए के, जाहेर करी रोसन।

धाम दरवाजे इन्द्रावती, ठाढ़ी करे रूदन।।

किरंतन ९६/११

अब तो भला भया, तुम आये जो इत।

मोकों अति सुख उपजा, अब मैं हुकम करत।।९।।

अब तो अच्छा हुआ जो तुम मेरे पास आ गये। तुम्हारे आने से मेरे हृदय में बहुत आनन्द हो रहा है। अब मैं तुम्हें आदेश देता हूँ कि तुम जागनी कार्य को आगे

बढ़ाओ।

फेर थाल प्रसाद सों भराय के, धराया आगे आन।
तब श्रीजी ने किया, बिहारीजी का सम्मान।।१०।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी थाल में भोजन परोसवाकर मिहिरराज जी के आगे रखते हैं। तब श्री मिहिरराज जी ने बिहारी जी का सम्मान करते हुये उन्हें भी साथ में भोजन ग्रहण करने के लिये आग्रह किया।

आओ बिहारीजी तुम, बैठो मुझ भेले।
एक ठौर प्रसाद लीजिये, बैठ के एकठे।।११।।

श्री मिहिरराज जी ने बिहारी जी से कहा कि बिहारी जी! मेरे साथ बैठिए और एक ही थाल में इकट्ठे भोजन कीजिये।

तब बिहारी जी ने कह्या, मैं न बैठों संग तुम।

श्री जी ने फेर कह्या, अरज तलबी हुकम।।१२।।

तब बिहारी जी ने कहा कि मैं तुम्हारे साथ किसी भी स्थिति में नहीं बैठूंगा। तब श्री मिहिरराज जी ने पुनः कहा और सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से प्रार्थना की कि मेरी इच्छा है कि आप बिहारी जी को मेरे साथ बैठकर खाने के लिये आदेश दें।

तब श्री देवचन्द्रजी ए कह्या, आप श्रीमुख सुकन।

क्या रद बदल होत है, आपस में सैंयन।।१३।।

तब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने अपने मुखारविन्द से कहा कि परमधाम की दोनों ब्रह्मात्माओं में क्या बातें हो रही हैं?

तब श्री जी ए कह्या, बिहारीजी और हम।

एक ठौर प्रसाद लेवें, ऐसा करो हुकम।।१४।।

तब श्री मिहिरराज जी ने कहा कि सद्गुरु महाराज! आप बिहारी जी को ऐसा आदेश दीजिये कि मेरे साथ बैठकर एक थाल में भोजन करें।

तब श्री देवचन्द्रजी ए कहा, क्यों न भेले बैठो तुम।

जो श्री मेहेराज बुलावहीं, क्यों न होय एक आतम।।१५।।

तब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने बिहारी जी से कहा कि जब मिहिरराज तुम्हें एक साथ बैठकर भोजन करने के लिये कह रहे हैं, तो तुम क्यों नहीं करते और भेदभाव से रहित होकर एकरस क्यों नहीं हो जाते?

तब बिहारी जी आय बैठे, श्रीजी के भेले।

प्रसाद लिया एकठे, बातें करने लगे।।१६।।

तब बिहारी जी ने अधूरे मन से श्री मिहिरराज जी के साथ बैठकर भोजन किया, किन्तु उनके मन का कड़वापन अब भी नहीं गया। भोजन करने के पश्चात् श्री मिहिरराज जी सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से बातें करने लगे।

भावार्थ– बिहारी जी ने भले ही साथ बैठकर भोजन किया, लेकिन उनके मन की कटुता में जरा भी अन्तर नहीं आया। उन्होंने थाली में भोजन सामग्री के दो भाग कर दिये। यह प्रसंग लल्लू भट्ट कृत् "वर्तमान दीपक" में इस प्रकार लिखा है–

एक थाली में बैठा खरा, पण मन थिर ताने केम।

शोधे छे सवलुं थवा, पछी उद्यम कीधो एम।।

कहे लाल सामग्री थालनी, तेनी मध्ये कीधो भाग।
जमी गया जुगते करी, पोत पोतानों भाग।।

वर्तमान दीपक २४/१७,१८

श्री देवचन्द्र जी धनी सों, बातें करी श्रीजी साहिब।
अपनी जो बीतक, बतावत गये तब।।१७।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से अपनी बातचीत के क्रम में श्री मिहिरराज जी ने अरब का सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। इसके साथ उन्होंने यह भी बताया कि किस प्रकार नवतनपुरी आने पर जाम राजा ने उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली थी, और आपके द्वारा प्रणाम स्वीकार न किये जाने पर बहुत दुःखी होकर अपने भाई के यहाँ चले गये थे, और तत्पश्चात् कल्ला जी के यहाँ प्रबन्धन कार्य संभालने लगे थे।

सुनके उत्तर दिया, भला किया अब तुम।

काम माया का छोड़के, आये तले हुकम।।१८।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने उनकी सारी बातों को सुनकर उत्तर दिया कि मिहिरराज! तुमने बहुत अच्छा किया जो माया का काम छोड़कर श्री राज जी के जागनी कार्य की सेवा में आ गये।

इन समें इहाँ दिन बाइस, रहे साथ मिने।

फेर नजर करी धाम को, साथ छोड़े इन समें।।१९।।

इस समय सुन्दरसाथ के बीच में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी बाइस दिन तक रहे। तत्पश्चात् उन्होंने अपनी सुरता परमधाम में कर ली, अर्थात् श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में विराजमान हो गये (धामगमन हो गया) और सुन्दरसाथ को असहाय अवस्था में छोड़ गये।

भावार्थ– इन बाइस दिनों में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने मिहिरराज जी को आध्यात्मिक ज्ञान की अति ऊँची बातें बताई और भविष्य में उनसे होने वाली सारी जागनी लीला के बारे में भी बता दिया।

साथ को इन समें, कछु नहीं पहिचान।
धाम नाता किने ना देखा, अपने ठौर इहां ईमान।।२०।।

परमधाम की वाणी का अवतरण न होने से सुन्दरसाथ को राज जी के स्वरूप की वास्तविक पहचान न हो सकी थी। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में विराजमान श्री राज जी से अपने मूल सम्बन्ध को उन्होंने पहचाना ही नहीं था। उनका ईमान (विश्वास) सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के तन के नाम, गादी और आड़ीका लीला पर ही केन्द्रित रहा।

भावार्थ– जब तक तारतम वाणी के प्रकाश में आत्मा को धनी से अखण्ड सम्बन्ध का बोध न हो, तब तक आड़िका लीला की चकाचौंध में होने वाली श्रद्धा भावना को ही जागनी नहीं माना जा सकता। यही कारण है कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के अन्तर्धान होते ही सभी सुन्दरसाथ पुनः माया में रल (मिल) गये।

ए आज्ञा यों ही हती, करी हक सुभान।
लिखा लोह मौफूज में, भई तेती त्यों पहिचान।।२१।।

इस प्रकार सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के जाने के बाद पुनः फरामोसी का हो जाना मूल स्वरूप श्री राज जी के आदेश से ही हुआ। मूल स्वरूप ने अपने दिल में जो ले लिया था (लोहे की तख्ती पर लिख दिया था), वैसा तो होना ही था। उसके अनुसार सुन्दरसाथ को वैसी ही

पहचान होनी थी।

भावार्थ– इस्लामिक धर्मग्रन्थों में ऐसा लिखा है कि परमधाम और अक्षरधाम के बीच में "लोहे महफूज" एक ऐसा स्थान है, जो कभी नष्ट नहीं होता। वहीं पर लोहे की तख्ती पर कुरआन की आयतें लिखी रहती थीं, जिन्हे लाकर जिबरील मुहम्मद साहब को देता था।

इसका बातिन (गुह्य) अर्थ यह है कि अक्षरातीत की ज्ञानधारा सत्य है, अनादि है और अखण्ड है। जिबरील, जो राज जी के जोश का स्वरूप है, अक्षरातीत की ज्ञानधारा की अनमोल गुत्थियों को मुहम्मद साहिब के हृदय तक पहुँचा देता था। अक्षरधाम व परमधाम तो मिले हुये हैं, इसलिये स्वलीला अद्वैत वाहेदत में किसी सांसारिक लोहे की पट्टी की कल्पना नहीं की जा सकती, जिस पर लिखा जा सके। वस्तुतः यह भावात्मक है और

आलंकारिक भाषा में व्यक्त किया गया है।

बात जो इसलाम की, रही न दिल में किन।
आप अपने घरों, सब बैठ रहे मोमिन।।२२।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के अन्तर्धान के बाद चर्चा, चितवनि का कार्यक्रम बंद हो गया। सब सुन्दरसाथ अपने-अपने घरों में चुपचाप बैठे रहे। जिसका परिणाम यह हुआ कि निजानन्द की राह दिखाने वाले तारतम ज्ञान का प्रकाश किसी के हृदय में नहीं रहा।

केतेक दिन पीछे, बालबाई इत आई।
श्री मेहेराज के घरों आये, ये खबर ल्याई।।२३।।

कुछ दिनों के पश्चात् श्री मिहिरराज जी के घर पर बालबाई आईं और उन्होंने सुन्दरसाथ का सारा समाचार

कह सुनाया कि किस तरह से सब सुन्दरसाथ माया में श्री राज जी को भुला बैठा है।

श्री मेहेराज सों मसलहत, करने बैठी जब।

अब क्या करना है तुम्हें, रह्या काम धाम का सब।।२४।।

उन्होंने श्री मिहिरराज जी से इस विषय पर गहन विचार–विमर्श किया कि सुन्दरसाथ की जागनी का कार्य बंद हो चुका है। इस विषय पर तुम्हें क्या करना है?

मसनन्द श्री देवचन्द्रजी की, सोतो बड़ी बुजरक।

सो खाली क्यों रहे, देखो हुकम सामने हक।।२५।।

जिस गादी पर स्वयं अक्षरातीत ने सद्गुरु के स्वरूप में विराजमान होकर लीला की हो, उसकी महिमा बहुत बड़ी है। वह खाली नहीं रहनी चाहिये। श्री राज जी के

आदेश को ध्यान में रखकर आप इस पर विचार कीजिये।

कोई उत आवत नहीं, भूल गए सगाई।
काहू को निजधाम की, रही नहीं असनाई।।२६।।

सद्गुरु महाराज के धामगमन के पश्चात्, अब वहाँ कोई भी नहीं आता है। सभी धनी से अपने सम्बन्ध को भुला बैठे हैं। किसी के अन्दर परमधाम का प्रेम भाव भी नहीं रहा।

किनको बिठावें इन पर, किन का करे अखत्यार।
निसबत नसल से करें, बिहारी जी हैं सिरदार।।२७।।

अब आप ही बताइये कि सद्गुरु महाराज की गादी पर किसको बैठाया जाये? धार्मिक क्षेत्र का अधिकार एवं

उत्तरदायित्व किसको सौंपे? यदि रक्त सम्बन्ध (वंश दृष्टि) से देखते हैं, तो बिहारी जी सर्वोपरि (प्रमुख) नज़र आते हैं।

तब श्री मेहेराज ने कह्या, येही बात है सिरे।
सब साथ मिल के, ये ही काम करें।।२८।।

तब श्री मिहिरराज जी ने कहा कि हां! आपकी यह बात सबसे अच्छी है। हम सब सुन्दरसाथ को मिलकर बिहारी जी को गादी पर बैठाना चाहिये।

यह बात बैठी दिलमें, यह काम करना जरूर।
साथ सों भली भाँत सों, मैं करों मजकूर।।२९।।

श्री मिहिरराज जी के दिल में यह बात आ गई कि मुझे यह कार्य अवश्य करना चाहिये। श्री बिहारी जी को गादी

पर बैठाने के लिये सब सुन्दरसाथ को अच्छी तरह से समझाना–बुझाना होगा, तभी यह कार्य संभव हो पायेगा।

भावार्थ– श्री मिहिरराज जी को यह बात अच्छी तरह से मालूम थी कि बिहारी जी को गादी पर बैठाने के लिये सुन्दरसाथ राजी नहीं होगा। इसलिये उन्होंने सबको समझा–बुझाकर इस बात के लिये राजी किया कि वे बिहारी जी को गादी पर बैठाने का विरोध न करें।

इस सम्बन्ध में सनेह सखी कृत "लीला रस सागर" के ४६वें प्रकरण की चौपाई १६, १९ व २२ में लिखा है–

हमें आज्ञा धनिये दई, सोई करें हम काम।

और बात माने नहीं, बिना हुकम धनी धाम।।१६।।

कही श्री देवचन्द्र जी जागनी, है श्री इन्द्रावती के हाथ।

सो इनको सब साथ के, हाथ सौंपे श्री प्राणनाथ।।१९।।

ताथें आज्ञा धनीय की, हमसे होय न लोप।
कही धनी इन्द्रावती में, हम बैठे होय गोप।।२२।।

पहिले श्री बिहारीजी को, मैं बैठाऊं इत।
कदमों लाग सेजदा करूं, तब साथ भी आवे तित।।३०।।

सबसे पहले यदि मैं बिहारी जी को गादी पर बिठाकर उनके चरणों मैं प्रणाम करूँ, तो निश्चित है कि सुन्दरसाथ भी उनका सम्मान करेंगे।

एह मसलहत करके, आई बालबाई अपने घर।
समय दिन देखके, पहुँचे उस काम ऊपर।।३१।।

श्री मिहिरराज जी से इस प्रकार विचार-विमर्श कर बालबाई जी अपने घर आईं। श्री बिहारी जी महाराज को

गादी पर बिठाने के लिये एक उचित दिन निश्चित कर उस कार्य में लग गये, अर्थात् सबको समझाने-बुझाने एवं गादी अभिषेक की तैयारी में लग गये।

आये के बिहारीजी को, बैठाये ऊपर मसनन्द।
कदमों लाग के बैठे, फेर घर में भया आनन्द।।३२।।

श्री मिहिरराज जी ने बिहारी जी को गादी पर बैठाया और उनका सम्मान करने के लिये उनके चरणों में प्रणाम करके सबसे आगे बैठ गये। तब बिहारी जी के निवास (गांगजी भाई के घर) में चारों तरफ आनन्द छा गया।

महामति कहें ये सैंयनो, ए बीतक पुरी नवतन।
अब आगे की कहों, याद करो मोमिन।।३३।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! यह सारा

घटनाक्रम नवतनपुरी का है। अब आगे जो घटना होती है, उसका मैं वर्णन करने जा रहा हूँ। आप उसे याद कीजिये।

प्रकरण ।।१६।। चौपाई ।।७२४।।

तारतम वाणी अवतरण

इस प्रकरण में तारतम वाणी के अवतरण के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक दर्शाया गया है।

सम्बत सत्रह सौ बारोत्तरे, आसो महिने में।
सब साथ को खबर, पहुंची श्री मेहेराज से।।१।।

विक्रम सम्वत् १७१२ में आश्विन (क्वाँर) महीने में मिहिरराज जी ने पत्र के माध्यम से सूचना भिजवा दी कि श्री बिहारी जी महाराज को गादी पर विराजमान किया गया है।

सबसो चरचा करके, चित को दिया मरोर।
तुम आय सब सेजदा करो, कर खण्डनी कह्या जोर।।२।।

सब सुन्दरसाथ के एकत्रित होने पर श्री मिहिरराज जी ने उन्हें चर्चा सुनाई तथा उनके हृदय में बिहारी जी के प्रति श्रद्धा भावना प्रकट की। जो सुन्दरसाथ बिहारी जी पर श्रद्धा भावना नहीं रखते थे, उनको श्री मिहिरराज जी ने तीखे शब्दों से खण्डनी करके समझाया और कहा कि आप सभी जाकर बिहारी जी महाराज के चरणों में प्रणाम करो।

सब साथ ता दिन से, आए हुकम तले निजधाम।
चरचा प्रात संझा को, करने लगे इस ठाम।।३।।

उस दिन से सब सुन्दरसाथ परमधाम की राह पर अग्रसर होने लगे। बिहारी जी महाराज गादी पर विराजमान होकर दोनों समय, प्रातः और सायं, चर्चा करने लगे।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "निजधाम के हुक्म तले आने" का भाव है परमधाम की चर्चा एवं चितवनि में लग जाना , क्योंकि चर्चा और चितवनि से ही हमारी आत्मा धनी की तरफ अग्रसर होती है और इन्हें छोड़ देने पर माया में डूबने लगती है।

जहां तहां साथ में, बात भई जाहिर।

चरचा श्री धाम की, करे बिहारीजी बाहिर।।४।।

चारों ओर सुन्दरसाथ में बिहारी जी के गादी पर विराजमान होने की बात फैल गयी। परमधाम की चर्चा के नाम पर बिहारी जी लौकिक बातों की चर्चा सुनाया करते थे।

भावार्थ– बिहारी जी में तारतम ज्ञान का यथार्थ प्रकाश नहीं हो पाया था, क्योंकि उन्होंने कभी भी निष्ठाबद्ध

होकर सद्गुरु महाराज के मुखारविन्द से चर्चा नहीं सुनी थी। अक्षरातीत और परमधाम के बारे में सामान्य बातें ही उन्हें मालूम थीं। उसको लौकिकता के साथ जोड़कर वे चर्चा किया करते थे, जिससे सुन्दरसाथ को चर्चा का कोई भी रस नहीं मिलता था। इस सम्बन्ध में सनेह सखी कृत लीलारस सागर ग्रन्थ के ये कथन देखने योग्य हैं–

पर जब चर्चा बिहारी जी करहीं, सो साथ कोई चित न धर हीं।
जबही श्री जी साहेब आवें, तबही सकल साथ सुख पावे।।
बैठे सबे बिहारी जी पास, पर उन आए होय बड़ो उलास।
जब वे आएके चर्चा करहीं, तब सब साथ उमंग अंग धरहीं।।
तब इत बोले नागजी बालबाई, बिहारी जी से बात इन ठाही।
जो कोई साथ प्रश्न तुमसे पूछे, तब जबाब न पावे ओ जाने छूछू।।

उनसे एक बात पूछे जाई, तो वे देय दश गुनी बताई।
और इनको हाथ सौंपे सब साथ, सबही देखत श्री प्राणनाथ।।

लीलारस सागर ४७/४,५,३८,३९

द्रष्टव्य– वृत्तान्त मुक्तावली प्रकरण ४१ तथा लीलारस सागर प्रकरण ४९ में वर्णित है कि नवतनपुरी से दो कोस की दूरी पर एक सुन्दरसाथ रहा करता था। वह दोनों समय, प्रातः और सायं, बिहारी जी के दर्शन के लिये आया करता था। किसी पारिवारिक संकट के कारण उसने बिहारी जी से विनती की कि मुझे केवल एक वक्त आने की स्वीकृति मिले, क्योंकि इतनी दूर से आना–जाना बहुत कठिन होता है। यह बात सुनते ही बिहारी जी को बहुत क्रोध आ गया और उन्होंने स्पष्ट रूप से कह दिया कि तुम्हें एक बार क्या , दोनों बार आने की आवश्यकता नहीं है। मैंने तुम्हें सुन्दरसाथ से निकाल

दिया है, अब यहाँ कभी भी नहीं आना।

वह सुन्दरसाथ ७ दिन तक द्वार पर भूखा बैठा रहा, लेकिन बिहारी जी नहीं पसीजे। अन्त में वह निराश होकर श्री मिहिरराज जी के घर गया। उस समय मिहिरराज जी दरबार गये हुये थे, इसलिये फूलबाई जी ने उस सुन्दरसाथ को प्रेमपूर्वक भोजन कराया। यह बात सुनकर बिहारी जी बहुत क्रोधित हुये और उन्होंने द्वारपाल से कह दिया कि मिहिरराज को अन्दर नहीं आने देना।

संध्या समय जब मिहिरराज जी आये और उन्हें द्वारपाल के द्वारा रोका गया, तो वे आश्चर्य में पड़ गये। कारण पूछने पर बिहारी जी ने अन्दर बुलाया और स्पष्ट रूप से कह दिया कि आपकी पत्नी फूलबाई ने उस सुन्दरसाथ को भोजन कराया, जिसको मैंने बहिष्कृत

कर दिया था। इसलिये अब आपको मुझे या अपनी पत्नी में से किसी एक को चुनना होगा। बिहारी जी का आदेश मानकर श्री मिहिरराज जी घर पर नहीं गये। जब फूलबाई को यह पता चला तो उन्होंने भोजन त्याग दिया और छः महीने में अपना तन छोड़ दिया। किन्तु तन छोड़ने से पूर्व उन्होंने श्री मिहिरराज जी से यह प्रार्थना की थी कि मेरी चिता की राख पर अपने चरण कमल रख देना। श्री मिहिरराज जी ने उनके धामगमन के पश्चात् ऐसा ही किया। फूलबाई के अंदर अमलावती बाई की वासना थी, जो तेजकुँवरी जी के युवा तन में प्रविष्ट हो गई। धौरा जी जाते समय श्रीजी से इन्ही तेजकुँवरी जी का विवाह हुआ।

श्री फूलबाई जी का जन्म कुतियाना गांव में हुआ था। इनके पिता का नाम प्रेमजी था। वर्तमान दीपक में उनका

धामगमन वि.सं. १७०८ तथा लीलारस सागर में वि.सं. १७२० लिखा है, जो उचित नहीं है। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी का धामगमन वि.सं. १७१२ में होता है, तो सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के तन रहते बिहारी जी गादी पर नहीं बैठ सकते थे। जबकि यह सर्वविदित है कि बिहारी जी के हठ और दुराग्रह के कारण ही श्री फूलबाई जी को देह छोड़ना पड़ा।

इसी प्रकार जब वि.सं. १७१९ में कुतुबखान जामनगर पर आक्रमण कर देता है, तो श्रीजी दिन-रात जामनगर में अपने सहयोगियों के द्वारा कर वसूलने में लगे रहते हैं। ऐसी स्थिति में उनके लिये जामनगर से कई सौ कि.मी. दूर धौराजी में जाकर विवाह करना संभव नहीं है।

सबसे बड़ी बात यह है कि जब वि.सं. १७१६ में जूनागढ़ जाते समय श्रीजी का विवाह तेजकुँवरी जी से

होता है, तो फूलबाई के रहते तेजकुँवरी जी से विवाह होने का प्रश्न ही नहीं है।

सर्वोतम यही है कि वि.सं. १७१३ में फूलबाई जी का धामगमन माना जाये।

इसी प्रकार वि.सं. १७०८ में फूलबाई जी का धामगमन मानकर वि.सं. १७०८ में ही तेजकुँवरी जी का जन्म मानना उचित नहीं लगता है। ऐसा जो वर्तमान दीपक में लिखा है, वह लौकिक ज्ञान दृष्टि से लिखा गया है, आध्यात्मिक रीति से नहीं।

ऐसा प्रतीत होता है कि तेजकुँवरी जी की अवस्था ८ वर्ष की सिद्ध करने के लिये फूलबाई जी का धाम गमन वि.सं. १७०८ में बताया है।

सब उच्छव कीर्तन, हुआ साथ मिने।

सरम पड़ी सबको, जान धाम अपने।।५।।

सब सुन्दरसाथ में चर्चा के साथ-साथ सामूहिक भोज तथा कीर्तन आदि के कार्य होने लगे। ज्ञान का प्रकाश फैलने से सबको परमधाम के सम्बन्ध का पता चलने लगा और अपनी होने वाली भूल से सबको लज्जा महसूस हुई। सभी लोग नियमित रूप से चर्चा में आने लगे।

ज्यादा किया दीन को, एहिया ने इस ठाम।

साथ की सुरत फेर के, लगाई इसलाम।।६।।

कुरआन के पारा ३ सूरा ३ आयत ३६-४१ में वर्णित है कि जिकरिया के पुत्र एहिया ने धर्म की वृद्धि की , अर्थात् सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के नजरी पुत्र (धर्म पुत्र) श्री मिहिरराज जी ने तारतम ज्ञान के प्रकाश से

जागनी की महान लीला की। उन्होंने सुन्दरसाथ की सुरता को माया से हटाकर परमधाम की तरफ लगाया, जिससे सबको अखण्ड शांति मिली।

आगे सबके श्री मेहेराज, बैठे चरचा सुनने को।
सबों खण्डनी कर समझावहीं, इन साथ के मों।।७।।

बिहारी जी की चर्चा सुनने के लिये श्री मिहिरराज जी सबसे आगे बैठते थे। सुन्दरसाथ में जो भी बिहारी जी की चर्चा नहीं सुनना चाहता था, उनको खण्डनी करके समझाते थे।

भावार्थ– यद्यपि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के धामगमन के पश्चात् युगल स्वरूप श्री मिहिरराज जी के धाम हृदय में विराजमान हो चुके हैं, फिर भी श्री मिहिरराज जी को उसके बारे में पता नहीं था। इस

सत्यता का बोध उन्हें हब्से में हुआ।

इस प्रकार वि.सं. १७१२-१७१५ के बीच श्री मिहिरराज के तन से "किरंतन" के कुछ अंश उतरते रहे। श्री मिहिरराज जी के मुखारबिन्द से चर्चा सुनकर सब सुन्दरसाथ को यह बोध हो गया कि श्री मिहिरराज जी के धाम हृदय में ही साक्षात् सद्गुरु महाराज आकर विराजमान हो गये हैं। "तेहज वाणी ने तेहज चर्चा, प्रेम तणी रसाल।" रास का यह कथन इसी सन्दर्भ में है। जिन सुन्दरसाथ ने मिहिरराज जी के धाम हृदय में सद्गुरु महाराज (युगल स्वरूप) की पहचान कर ली, वे बिहारी जी की चर्चा में जरा भी रूचि नहीं रखते थे। श्री मिहिरराज उन्हें खण्डनी के वचनों से समझाते थे कि बिहारी जी महाराज गादी पर बैठे हैं, इसलिये उनके सम्मान में आपको उनकी चर्चा सुननी चाहिये।

चरचा की चरचा, करें एकान्त एक ठौर।

धाम धनी साथ बिना, ना दिखावें और।।८।।

बिहारी जी की चर्चा सुनने के पश्चात् श्री मिहिरराज जी सुन्दरसाथ को कहीं एकान्त स्थान में ले जाकर परमधाम की चर्चा सुनाते थे, जिसमें युगल स्वरूप और सुन्दरसाथ के अलावा और किसी की चर्चा नहीं होती थी।

यों नित्याने चरचा करते, खुली आंकड़ी अन्तरजामी।

सब आई दिलमें, खुसबोय इसलामी।।९।।

इस प्रकार प्रतिदिन चर्चा करते-करते श्री मिहिरराज जी की अन्तर्दृष्टि जाग्रत हो गई, जिससे प्रियतम की पहचान से सम्बन्धित गुत्थियां खुल गईं। उनके हृदय में परमधाम की अखण्ड शान्ति की सुगन्धि आने लगी।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "अन्तरजामी" शब्द का तात्पर्य प्रियतम अक्षरातीत से है। धाम हृदय में युगल स्वरूप के विराजमान होने से उनकी अन्तर्दृष्टि का जाग्रत होना स्वभाविक था, जिससे उन्हें ज्ञान रूप से धनी की पहचान हो गयी। यद्यपि पूर्ण जाग्रति हब्से में ही होती है, जहाँ उन्होंने आत्म–चक्षुओं से युगल स्वरूप का दर्शन किया और वाणी का उतरना प्रारम्भ हुआ।

इस्लामिक सुगन्धि का तात्पर्य परमधाम की शाश्वत् शांति और आनन्द की सुगन्धि (अनुभव) से है।

हम तो हैं धाम में, ए खेल नहीं रंचक।

हम सेहेरग से नजीक, बैठे आगे हक।।१०।।

श्री मिहिरराज जी को अब यह अनुभव होने लगा कि

यह माया का खेल तो कुछ है ही नहीं। हम तो मूल-मिलावे में धनी के चरणों में बैठे हैं और अक्षरातीत हमसे प्राण की नली से भी अधिक निकट हैं।

एह खुसाली दिल में, उठत कै तरंग।
हमारे धाम नजीक, हक सुभान की अरधंग।।११।।

श्री मिहिरराज जी के धाम हृदय में आनन्द की तरंगे उठने लगीं। उन्हें यह बोध होने लगा कि परमधाम हमारे अति निकट है, अर्थात् हमारा दिल ही धाम है और सब सुन्दरसाथ अक्षरातीत की अर्धांगिनी हैं।

साथ आगे खोलनें, दिल हुआ रोसन।
त्यों चरचा ज्यादा करें, खुसाल होय सैंयन।।१२।।

सुन्दरसाथ के आगे परमधाम के गुह्य रहस्यों को स्पष्ट

करने के लिये, धाम धनी की कृपा से श्री मिहिरराज जी के ज्ञान में उत्तरोतर वृद्धि होती गयी और वे अधिक रस भरी चर्चा करने लगे, जिससे सुन्दरसाथ में आनन्द की वृद्धि होती गई।

सेवा करों सैंयन की, यह मनोरथ उपजत।
कौन भाँत कीजिये, इनों की सेवा इत।।१३।।

उनके मन में यह इच्छा उत्पन्न होने लगी कि मुझे सुन्दरसाथ की सेवा करनी चाहिये। यह सेवा का सुनहरा अवसर मिला है, इसलिये मैं किस तरह से इनकी सेवा करूँ, जिससे ये आनन्दित रहें।

इन भाँत बंदगी के, लगे करने विचार।
गोविन्द भेड़े के काम में, उहाँ ही खबरदार।।१४।।

इस प्रकार श्री मिहिरराज जी के अन्दर सुन्दरसाथ की सेवा के विचार उठने लगे। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये उन्होंने सावधानीपूर्वक लौकिक कार्य के द्वारा धन उपार्जन का निश्चय किया।

भावार्थ– यह सारा संसार गोविन्द पटेल की बनाई हुई भूत नगरी के समान मिथ्या है। परब्रह्म के ज्ञान और प्रेम की राह को छोड़कर संसार के हर कार्य का फल नश्वर ही होता है, किन्तु अर्थोपार्जन एवं अन्य कार्यों के लिये इससे सम्बन्ध रखना ही पड़ता है। अज्ञानी लोग जहां इसमें बुरी तरह फँस जाते हैं, वही तारतम ज्ञान के प्रकाश से द्रष्टा होकर संसार के कर्मों को करते हुए भी माया से पूर्णतया अलग रहा जाता है।

यही भाव इस चौपाई में दर्शाया गया है कि श्री मिहिरराज जी ने मन्त्री के सचिव (वजीर के दीवान) पद

का कार्यभार सम्भाला, जिससे सुन्दरसाथ की सेवा हो सके। अनासक्त भाव से यह कार्य करने के कारण, वे गोविन्द भेड़े के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त थे, इसलिये इस चौपाई के चौथे चरण में खबरदार (सावधान) शब्द का प्रयोग किया गया है।

तहाँ से कमाए के, तब सेवा होए सब साथ।
करी मसलहत बिहारी जी सों, लई दिवानगिरी वजीरी हाथ।।१५।।

श्री मिहिरराज जी ने अपने मन में सोचा कि यदि मैं अर्थोपार्जन करूँ, तो सब सुन्दरसाथ की अच्छी तरह से सेवा हो सकेगी। इसलिये उन्होंने इस सम्बन्ध में बिहारी जी से विचार-विमर्श किया। तत्पश्चात् उन्होंने जामनगर के मंत्री का सचिव पद ग्रहण करने का निर्णय लिया।

बात लगाई वजीर सों, जाए तिनका लिया काम।

कोई वखत आवे साथ में, दीदार को इस ठाम।।१६।।

श्री मिहिरराज जी ने जामनगर के मंत्री से इस सम्बन्ध में बातचीत की और उनके सचिव पद का कार्य सम्भाला। श्री मिहिरराज जी सुन्दरसाथ से मिलने और श्री बिहारी जी के दर्शन करने, प्रातः-सायं दोनों समय अवश्य आते थे।

आया बोझ लौकिक का, सिर के ऊपर सब।

चरचा के करन को, अन्तर पड़या तब।।१७।।

श्री मिहिरराज जी के ऊपर दीवानगिरी के लौकिक कार्य का बोझ बढ़ गया था। इसलिये सुन्दरसाथ में चर्चा करने की उनकी सेवा में कुछ व्यवधान पड़ने लगा।

तब कसाला करके, चूके न बखत सुनन।

धरम लगे पालने, सांचा है मोमिन।।१८।।

तब अपने शरीर को कष्ट देकर भी वे बिहारी जी की चर्चा सुनने से नहीं चूकते थे और एक सच्चे ब्रह्ममुनि के धर्म का पालन करके सबको प्रेरणा देते थे।

उठे पीछली रातको, करने को दीदार।

बिहारी जी के पास आय के, सुने चरचा परवरदिगार।।१९।।

वे रात्रि को पिछले प्रहर उठ जाते तथा नित्य क्रिया से निवृत्त होकर बिहारी जी महाराज का दर्शन करते तथा उनके मुखारविन्द से धाम धनी की चर्चा सुनते।

सरूप चरचा सुनके, तब आवें दरबार।

कारभार चलावें लौकिक, होय के खबरदार।।२०।।

श्री मिहिरराज जी श्री बिहारी जी महाराज के द्वारा की जाने वाली राज जी के स्वरूप की चर्चा सुनकर राजा के दरबार में आते हैं और बहुत सावधानीपूर्वक अपना राजकीय प्रबंधन सम्बन्धी सारा कार्य करते हैं।

भावार्थ– मन में यह जिज्ञासा होती है कि श्री बिहारी जी राज जी के स्वरूप की जो चर्चा सुनाते थे, वह कौन सी चर्चा थी। कुछ सुन्दरसाथ के मतानुसार किरन्तन प्रकरण ११२/१ में वर्णित "सरूप सुन्दर सनकूल सकोमल" की चर्चा करते थे। कुछ के मतानुसार सेवा–पूजा में वर्णित प्रातःकाल की सेवा "श्री राज श्री ठकुरानी जी प्रथम भोम में विराजमान भये" की चर्चा करते थे। अब प्रश्न यह है कि वास्तविकता क्या है?

यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि "सरूप सुन्दर सनकूल सकोमल" किरंतन का प्रकरण है, जो श्री महामति जी के द्वारा उतरा था। इसलिये उस समय इस प्रकार की चर्चा किये जाने का प्रश्न ही नहीं है। हां, इस प्रकरण में जो भाव निहित है, उस भाव को बिहारी जी चर्चा में अवश्य वर्णन करते होंगे।

इसी प्रकार सेवा-पूजा भी नवरंग स्वामी, मुकुन्द दास जी, अहदी परमानन्द, प्रेम सखी, आदि अनेक परमहंसों के द्वारा निर्मित है। इसलिये यह भी नहीं कहा जा सकता कि प्रातःकाल के स्वरूप को शब्दशः ही सुनाते होंगे।

सम्भावना यही की जा सकती है कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने राज जी का जो श्रृंगार वर्णन किया करते थे, वह प्रातःकाल के स्वरूप की तरह सुन्दरसाथ के द्वारा लिपिबद्ध कर लिया गया हो या बिहारीजी ने उसको

कण्ठस्थ कर लिया हो। बीतक प्रकरण ११ चौपाई १९ में कहां गया है–

भाव काढ़ दिखावहीं, सब चरचा को रूप।
बरनन करें श्री राज को, सुन्दर रूप अनूप।।

यद्यपि सेवा–पूजा में वर्णित प्रातःकाल का स्वरूप बिहारी जी द्वारा सुनाये जाने वाले सरूप के बहुत निकटस्थ प्रतीत होता है।

यह काम बेवहार करते, रह्या चार घड़ी पीछला दिन।
तब वहाँ से उठके, आय बैठे जमात सैयन।।२१।।

राज्य–व्यवस्था को संभालते हुये जब संध्या समय के साढ़े चार बजे का समय होता था, तब श्री मिहिरराज जी राजमहल से उठकर सुन्दरसाथ के समूह में आते थे।

तहां चितवनी धाम की, करत हैं सब कोय।

सरूप वस्तर बरनन, होने लगा सोय।।२२।।

वहाँ सब सुन्दरसाथ परमधाम की चितवनि करते हैं। श्री मिहिरराज जी सब सुन्दरसाथ को युगल स्वरूप के वस्त्र और आभूषणों सहित सम्पूर्ण नख से शिख तक की शोभा का वर्णन सुनाते हैं।

आहार इसलाम करके, रूह को पहुँचावें खुराक।

इस बेर इसलाम की, बुजरक जानी खाक।।२३।।

चितवनि शाश्वत शान्ति का साधन है। इसे करके सुन्दरसाथ अपनी आत्मा को निजानन्द रूपी आहार देने लगे। इस समय श्री मिहिरराज जी सब सुन्दरसाथ को निजानन्द रूपी आहार देकर भी स्वयं को धूलि के समान मानने में ही अपना गौरव समझते थे।

भावार्थ– युगल स्वरूप की चितवनि ही वह साधन है जिसके द्वारा अपने शाश्वत् निजानन्द को पाया जा सकता है। यही हमारी आत्मा का आहार भी है। श्री मिहिरराज जी सब सुन्दरसाथ को युगल सरूप की चितवनि में लगाते थे।

जागनी का यह कार्य युगल स्वरूप की प्रेरणा से हो रहा था। एक जाग्रत आत्मा ही अपने अहं का पूर्णतया विसर्जन कर स्वयं को धूल के समान मान सकती है। इसलिये किरन्तन में इन्ही भावों को प्रस्तुत किया गया है–

अब जो रहो साथ चरने, होए रहियो तुम रेनु समान।
इत जागे को फल एही है, चेत लीजो कोई चतुर सुजान।।

किरन्तन ८९/११

यह ध्यान देने योग्य विशेष बात है कि सुन्दरसाथ को

केवल श्री मिहिरराज जी ही चितवनि कराते थे। बिहारी जी को चितवनि से सम्बन्धित कोई भी ज्ञान नहीं था और न उन्होंने कभी चितवनि की थी। यदि बिहारी जी चितवनि करते होते, तो माया में कभी भी फँस नहीं सकते थे और न कभी श्री मिहिरराज जी पर अत्याचार करते। उनकी चर्चा का मुख्य आधार राज जी के स्वरूप का कुछ वर्णन मात्र था, जो उन्होंने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के मुख से सुन रखा था। उसके साथ कुछ किस्से-कहानियों की बात जोड़ लिया करते थे। यही कारण है कि उनकी चर्चा में कोई रस नहीं था और सुन्दरसाथ उसे सुनना नहीं चाहते थे।

अब मैं साथ इसलाम का, करों सबें एक ठौर।

उच्छव रसोई करके, सेवा करों अति जोर।।२४।।

श्रीजी के मन में यह भावना जोर करती गयी कि चितवनि द्वारा निजानन्द की राह पर चलने वाले सब सुन्दरसाथ को मैं एक जगह एकत्रित करूँ, और उन्हें अच्छी तरह से प्रेमपूर्वक भोजन भी कराऊँ, तथा बहुत अधिक भाव के साथ सेवा भी करूँ।

भावार्थ– यह कहा जाना कि मिहिरराज जी अपने सद्गुरु का भण्डारा करना चाहते थे, उचित नहीं है। यदि वह अपने सद्गुरु के नाम का भण्डारा करते, तो बिहारी जी को भी उसमें सहयोग देना पड़ता। इस बीतक के अतिरिक्त वृत्तान्त मुक्तावली तथा लीला रस सागर में भी श्री देवचन्द्र जी के नाम का भण्डारा करने का कोई उल्लेख नहीं है, बल्कि केवल सेवा की बात कही गयी है।

श्री मिहिरराज जी धन संग्रह करके कपड़े, अन्न, घी, आदि मँगवा रहे थे। उनका एक ही उदेश्य था कि

सुन्दरसाथ अपने लौकिक कार्यों में कम समय दें और यहीं रहकर दिन-रात चर्चा-चितवनि में डूबे रहें। यही भाव आगे २५ से २८ चौपाइयों में दिया हुआ है।

आत्म-जाग्रति का आधार चर्चा और चितवनि है। शोभा यात्राओं, नाच-तमाशों वाले खर्चीले भण्डारों के द्वारा कभी भी जागनी के लक्ष्य को नहीं पाया जा सकता।

वस्तर भूखन पहेराए कें, सेवा करों सब साथ।
मोकों धाम धनीय ने, इनके पकड़ाये हाथ।।२५।।

चर्चा-चितवनि से जुड़े रहने वाले सब सुन्दरसाथ को वस्त्रों और आभूषणों से मैं सुसज्जित रखूँ तथा इनकी हर प्रकार से सेवा करूँ, क्योंकि धाम धनी ने इनकी जागनी का उत्तरदायित्व मेरे हाथों में सौंपा है।

माया मिने बैठ के, लाहा लेने अब।

धाम में जागे पीछे, एह ना होवे कब।।२६।।

इस मायावी जगत में हम खेल देखने आये हैं। इसलिये सुन्दरसाथ की सेवा का यही सुनहरा अवसर है। परमधाम में जाग्रत होने के बाद सेवा करने का कभी अवसर मिलना ही नहीं है।

तिस वास्ते इस बात की, लूट होय करनी।

इनसे प्रीत कीजिये, सगाई जान धाम अपनी।।२७।।

इसलिये सुन्दरसाथ की सेवा करने का सुनहरा अवसर नहीं गँवाना चाहिये। परमधाम के मूल सम्बन्ध से मुझे इनसे हमेशा प्रेम करना चाहिये।

सो सबे जाहिर में, करों मनोरथ सब।

लाभ लेऊँ माया मिने, धाम में बातें होवे तब।।२८।।

इसलिये सेवा करने की अपनी इस इच्छा को पूर्ण करने के लिये मुझे ऐसा कार्यक्रम करना होगा, जिसमें सुन्दरसाथ को चर्चा और चितवनि का सुख मिले। यदि मैं इस मायावी जगत में सुन्दरसाथ की सेवा का लाभ प्राप्त कर लेता हूँ, तो परमधाम में जाग्रत होने के बाद श्री राज जी के सम्मुख सब सुन्दरसाथ के बीच में मेरी बातें होंगी।

एह अजमाइस साथ की, करत हक सुभान।

मोमिन की माया मिने, होत है पहिचान।।२९।।

धाम धनी तो इस मायावी जगत में हमारी परीक्षा ले रहे हैं कि हम युगल स्वरूप और सुन्दरसाथ के प्रति प्रेम

और सेवा की कैसी भावना रखते हैं। इस माया के संसार में ब्रह्मसृष्टि की पहचान यह है कि वह प्रेम और सेवा के क्षेत्र में अग्रणी रहे।

ऐसा जान के दिल में, सेवा लगे करनें।
रखा अपने पास ही, जान धाम सगाई अपने।।३०।।

अपने दिल में ऐसा मानकर श्री मिहिरराज जी सुन्दरसाथ की सेवा के इस महान कार्य में लग गये। इस कार्य में सहायता करने के लिये उन्होंने, परमधाम के मूल सम्बन्ध से, एक सुन्दरसाथ को अपने पास ही रख लिया।

तिनको तब ए कह्या, जो हाथ चालाकी होय तुम।
सो साथ की सेवा करो, यह मेरा हुकम।।३१।।

उस सुन्दरसाथ को श्री मिहिरराज जी ने स्पष्ट कह दिया कि यदि तुम खुले हाथ से कुशलतापूर्वक खर्च कर सकते हो, तो सुन्दरसाथ की सेवा करो। इसे मेरा आदेश समझो।

भावार्थ– कार्य–कुशलता का सम्बन्ध हाथ और मस्तिष्क से जोड़ा जाता है। इस प्रकार "हाथ में चालाकी होना" का भाव यह है कि सुन्दरसाथ का प्रबंधन इस प्रकार हो कि उत्तम प्रकार की वस्तुएं उचित मूल्य पर खरीदी जायें तथा वे उचित समय पर सर्व सुलभ हो सकें तथा किसी को भी शारीरिक या मानसिक कष्ट न झेलने पड़े।

कछु न पीछा देखियो, करते खर्च मिने साथ।
मैं सब सौंप्या तुमें, दिया मुद्दा तेरे हाथ।।३२।।

सुन्दरसाथ में खर्च करते समय तुम किसी भी बात की चिन्ता न करो। सेवा का सारा उत्तरदायित्व तुम्हारे ऊपर है। इस सम्बन्ध में सारा अधिकार मैंने तुम्हें सौंप दिया है।

भावार्थ– "पीछा न देखना" एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य है– निश्चिन्त होना।

बिहारीजी को भूखन, रुच के दियो बनाइ।
वस्तर करो ऊँचे, प्रेम प्रीत दिल ल्याइ।।३३।।

श्री मिहिरराज जी ने उस सुन्दरसाथ को यह भी निर्देश दिया कि गुरु पुत्र बिहारी जी के लिये अपने दिल में बहुत प्रेम–भाव लेकर अति मूल्यवान वस्त्र तैयार करवाओ तथा उनके लिये अति सुन्दर आभूषण भी बनवाओ।

एक तो कहना साथ में, और दूजा पाया हुकम।

सो सेवा करने लगा, ज्यों सुख पावे आतम।।३४।।

श्री मिहिरराज जी के द्वारा परमधाम के सुन्दरसाथ की सेवा करना तथा उसमें खुले हाथ से खर्च करने की पूर्ण स्वीकृति मिल जाने पर, वह सुन्दरसाथ सच्चे हृदय से सेवा में लग गया। उसके मन में भी ऐसा आभास हुआ कि सेवा करने से उसकी आत्मा को अखण्ड आनन्द प्राप्त होगा।

नाग जी के हथियार, और वस्त्र भूखन।

ए सेवा साथ की, उस वखत करी मोमिन।।३५।।

श्री मिहिरराज जी के निर्देश पर उस सुन्दरसाथ ने नागजी भाई के लिये अति सुन्दर कटार, तथा वस्त्र और आभूषण बनवाये। उस समय सुन्दरसाथ की आवश्यकता

के अनुरूप अन्य वस्तुयें भी काफी मात्रा में मंगवाई गईं।

सब साथ के वास्ते, किया बुलावने का इलाज।
इन को इकट्ठें करके, उच्छव कीजे श्री राज।।३६।।

यह सारी तैयारी सुन्दरसाथ के लिये की गयी थी, ताकि सब सुन्दरसाथ को बुलाकर उन्हें चर्चा और चितवनि के रस में डुबोया जा सके। श्री मिहिरराज जी के मन में था कि मैं सब सुन्दरसाथ को एकत्रित करके श्री राज जी का उत्सव मनाऊँ।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "श्री राज के उत्सव" से अभिप्राय श्री देवचन्द्र जी के भण्डारे से नहीं लिया जा सकता। यदि श्री देवचन्द्र जी का भण्डारा मनाने का प्रसंग होता, तो अवश्य उसका वर्णन होता। यह श्री राज जी के नाम पर होने वाला ऐसा जागनी

उत्सव था, जिसमें दिन-रात परमधाम के ज्ञान की वर्षा होती और युगल स्वरूप की चितवनि कराई जाती। इसलिये इसे "जागनी उत्सव" का नाम तो दिया जा सकता है, किन्तु भण्डारे का नहीं।

भण्डारे की प्रक्रिया अलग होती है, जिसमें खाने-पीने और मेल-मिलाप की ही प्राथमिकता होती है, चर्चा-चितवनि की नहीं।

तिस वास्ते साथ को, किया बुलावने का हुकम।
मैदा, घीऊ, खाँड को, इकट्ठे करो तुम।।३७।।

इसलिये श्री मिहिरराज जी ने उस सुन्दसाथ को यह निर्देश दिया कि सब सुन्दरसाथ को यहाँ आने के लिये निमन्त्रण भेज दो तथा उनके भोजन के लिये प्रचुर मात्रा में मैदा, घी, शक्कर, आदि एकत्रित करो।

सामा लगे जोड़ने, धरें अपने घर में।

सामा जमा होने लगी, कपड़ा मंगाया उत सें।।३८।।

श्री मिहिरराज जी सुन्दरसाथ की सेवा के लिये अपने घर में हर तरह का सामान एकत्रित करने लगे। सुन्दरसाथ के लिये कपड़े तथा अन्य आवश्यक सामाग्री मँगवाकर रखी जाने लगी।

इन बात की चुगली, वजीर आगे गई।

उनने कछु ना विचारिया, बात दिल में लई।।३९।।

जामनगर के मंत्री के पास इन सारी बातों की चुगली की गयी। उसने बिना कुछ सोचे-विचारे अपने दिल में यह मान लिया कि सचमुच मिहिरराज जी ने राज्य की सम्पत्ति हड़पकर यह सारा सामान खरीदा है।

भावार्थ- बिहारी जी को सुन्दरसाथ के बीच में

मिहिरराज जी का बढ़ता हुआ प्रभाव सहन नहीं था। इसलिये द्वेष–वश उन्होंने जामनगर के मंत्री से मिहिरराज जी की झूठी शिकायत की। यह प्रसंग लीला रस सागर ग्रन्थ के प्रकरण ४६ की चौपाई ३८,३९,४०,४१,४२ में दिया गया है–

तब इत बोले नाग जी बालबाई, बिहारी जी से बात इन ठाही।
जो कोई साथ प्रश्न तुमसे पूछे, तब जबाब न पावे ओ आने छूछे।।३८।।
उनसे एक बात पुछे जाई, तो वे देय दश गुनी बताई।
और इनको हांथ सौंपे सब साथ, सबही देखत श्री प्राणनाथ।।३९।।
यों इनसे लग्यों है साथ सेहेर को, अब जो आवे और बाहेर को।
सो देखे इनकी चर्चा आई, सो तबही इनके हो जाई।।४०।।
एक ए उच्छव करे साथ बुलावे, दूजे वस्तर भूषन पहिरावे।
त्रीजे इनकी सुने चर्चा जबहीं, आपन को न पूछे साथ को कबही।।४१।।

ताथें बात उलटाय के दीजे, चुगली जाय बजीर से कीजे।
ए मनसूबा दिल में धरी, चुगली जाय वजीर से करी।।४२।।

ए तो कारज कारन, है धनी को करने।
तिस वास्ते माया का, हुआ धक्का इन समें।।४०।।

किन्तु देखा जाये तो यह सब कुछ धाम धनी की प्रेरणा से हुआ। मिहिरराज जी के द्वारा इस तरह का उत्सव किया जाना धनी को स्वीकार नहीं था, इसलिये यह लीला हुई और उन्हे माया का धक्का सहना पड़ा।

भावार्थ– अपने कार्य में असफल हो जाने को ही माया का धक्का लगना कहते हैं। ऐसा श्री धाम धनी की प्रेरणा से हुआ, क्योंकि हब्से में जाने पर ही तारतम वाणी का अवतरण होना था, जिसके बिना सुन्दरसाथ की जागनी नहीं हो सकती थी।

तब वजीर ने लेय के, बैठाये अपने घर।

सामा लई सरकार में, हुआ जोरा इन ऊपर।।४१।।

तब जामनगर के मंत्री ने श्री मिहिरराज जी को उनके भाई उद्धव और श्यामल दास जी के साथ अपने घर में नजरबन्द कर दिया और उनके घर का सारा सामान भी राजघराने में जमा कर दिया। एकत्रित की गई सारी सामग्री भी अधिग्रहीत करके राजघराने में जब्त कर दी गई। इस प्रकार उसने श्री मिहिरराज जी के साथ अनुचित व्यवहार किया।

सम्वत सत्रह सौ चतुरदसे, भई कुतुबखान की मुहिम।

जाम वजीर गये तिन पर, खड़ भड़ पड़ी इन कौम।।४२।।

वि.सं. १७१४ में गुजरात के मुगल सेनानायक कुतुबखान ने जामनगर के ऊपर आक्रमण कर दिया।

जामनगर के राजा, अपने मंत्री के साथ, उससे समझौता करने के लिये गये। श्री मिहिरराज जी के नजरबन्द होने से सुन्दरसाथ में हलचल मच गयी।

भावार्थ– उस समय मुगल सल्तनत के अधीन कुतुबखान पूरे गुजरात का सूबेदार था। छोटे–छोटे हिंदू राजाओं को उसे कर चुकाना पड़ता था। जामनगर राज्य की तरफ से समय पर कर न चुकाये जाने के कारण कुतुबखान ने आक्रमण कर दिया।

बैठे प्रबोधपुरी मिने, जाय हब्सा लिखा इत।

तहां विचार करने लगे, थे इसलाम काम पर तित।।४३।।

श्री मिहिरराज जी जिस कारागार (प्रबोधपुरी) में विराजमान थे, उसे कतेब ग्रन्थों में "हब्से" के नाम से वर्णित किया गया है। वह चिन्तन में डूबे रहने लगे कि मैं

तो निजानन्द की सच्ची राह पर था।

भावार्थ– हब्शे का आधुनिक नाम इथोपिया है। मक्के में विरोधियों के प्रबल होने के बाद मुहम्मद साहिब के कुछ अनुयायी हब्शा चले गये। उस समय वहाँ के बादशाह ने मुहम्मद साहिब के साथियों से पूछा कि आपकी मान्यता क्या है? मुहम्मद साहिब के साथियों ने तब कुरआन के सोलहवें सिपारे की सूरे मरियम को सुनाया। यह प्रसंग तफसीरे हुसैनी में ग्यारहवें पारे की व्याख्या में लिखा है।

इस कथानक का गुह्य भाव यह है कि परमधाम की आत्मा ब्रह्मवाणी का प्रकाश पाकर अक्षरातीत पर पूरी तरह से ईमान लाएगी। जिस प्रकार हब्शे के पातसाह को सोलहवां पारा सुनने के पश्चात् विरह–वेदना होती है, उसी प्रकार श्री मिहिरराज जी को अपने धाम–धनी का विरह तड़पाता है।

जामनगर के मंत्री ने जिस तरह उन्हें अपने घर में नज़रबन्द कर दिया था, उसको प्रबोधपुरी या हब्सा कहने का कारण यह है कि उन्हें भी हब्से के बादशाह की तरह अपने निजस्वरूप का प्रबोध हुआ तथा युगल स्वरूप का दर्शन हुआ। परमधाम की आत्माओं को प्रबोधित करने वाली वाणी इसी स्थान पर उतरी, इसलिये भी इस स्थान को प्रबोधपुरी कहा गया है।

क्यों ऐसा हम पर, पहुँचाया सख्त बखत।
हम तो बन्दगी में हते, क्यों ऐसा किया इत।।४४।।

किन्तु हमें इतने बुरे दिन क्यों देखने पड़ रहे हैं? मैं तो धनी की प्रेम-सेवा में लगा हुआ था, लेकिन ऐसा अनुचित व्यवहार हमारे साथ क्यों हो रहा है?

थी मेरे मनमें उम्मीद, ले जमात करों निजधाम।

और कछुये वास्ते, कछू ना लिया काम।४५।।

मेरे मन में मात्र एक ही इच्छा थी कि मैं सुन्दरसाथ को एकत्रित करके सबको निजधाम की राह दिखाऊँ अर्थात् चर्चा–चितवनि के रस में डुबोऊँ। किसी लौकिक कामना (मान, प्रभुत्व, आदि) के लिये तो मैं कुछ भी नहीं कर रहा था।

भावार्थ– श्री मिहिरराज इस चिन्तन में खोये–खोये विरह की गहन अवस्था में डूबते गये। छः माह तक उनकी यही अवस्था बनी रही। परिणामतः उनके धाम हृदय में विराजमान युगल स्वरूप उनके सामने प्रत्यक्ष हो गये और उन्हे सांत्वना देकर पुनः उनके धाम हृदय में विराजमान हो गये। तत्पश्चात् वाणी का अवतरण शुरू हो गया।

कलश हिन्दुस्तानी में इस घटनाक्रम को बहुत ही मनोरम शब्दों में वर्णित किया गया है–

विरहा ना देवे बैठने, उठने भी ना दे।
लोट पोट भी ना कर सके, हूक हूक सांस ले।।
एह विध मोहे तुम दई, अपनी अंगना जान।
परदा बीच टालने, ताथें विरहा परवान।।

क. हि. ५/१०,१२

जब आह सूकी अंग में, स्वांस भी छोड़यो संग।
तब तुम परदा टाल के, दियो मोहे अपनो अंग।।
जीवरा भी मेरा रख्या, तुम कारज भी कारन।
आस भी पूरी सोहागनी, और व्रध भी राख्यो विरहिन।।

क. हि. ८/८,१०

यह विचार करते, श्री देवचन्द्र जी बैठे दिल पर।

ठौर एकान्त करके, दिल हुआ विचार पर।।४६।।

इन्ही विचारों में डूबे-डूबे श्री मिहिरराज जी विरह की गहन अवस्था को प्राप्त हो गये। परिणामस्वरूप जो युगल स्वरूप श्री राजश्यामा जी श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में विराजमान थे, वही युगल स्वरूप श्री मिहिरराज जी के धाम हृदय में प्रत्यक्ष हो गये। एकान्त के इन क्षणों में श्री इन्द्रावती जी की आत्मा के धाम हृदय में महारास का सारा दृश्य घूमने लगा।

भावार्थ- इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "श्री देवचन्द्र जी" से तात्पर्य श्री युगल स्वरूप से है, क्योंकि श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में १७१२ से पहले युगल स्वरूप ही लीला कर रहे थे।

लगे चरचा करने, वरनन वानी सरूप।

यों करते दिल खुला, बैठे दिल सुन्दर रूप अनूप।।४७।।

श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में श्री राजश्यामा जी का अति सुन्दर अनुपम रूप विराजमान हो गया। उनके धाम हृदय में श्री राज जी के जोश–आवेश के विराजमान हो जाने से, उनके मुख से श्री तारतम वाणी का अवतरण प्रारम्भ हो गया, जिसमें महारास के युगल स्वरूप की शोभा का वर्णन उनके मुखारविन्द से होने लगा।

भावार्थ– श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय की दृष्टि जब संसार से हट गयी, जब श्री राजश्यामा जी को देखने लगी तथा महारास की एक–एक लीला प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होने लगी, तो उसे इस चौपाई के तीसरे चरण में "दिल का खुलना" कहा गया है।

श्री ठकुरानीजी का सिनगार, पहिले हुआ जो ये।

पीछे राज का सिनगार, जरूर करने के।।४८।।

सबसे पहले उनके मुखारविन्द से श्री श्यामा जी का महारास का श्रृंगार अवतरित हुआ। उसके पश्चात् श्री राज जी का श्रृंगार तो अवतरित होना ही था।

तब साथ का सिनगार, किया चाहिये इत।

ताको वरनन करत हैं, दिल खुला हुआ बखत।।४९।।

युगल स्वरूप का श्रृंगार अवतरित होने के पश्चात् सुन्दरसाथ के श्रृंगार के अवतरण का क्रम बना। श्री इन्द्रावती जी का हृदय माया से हटकर महारास की तरफ पूर्णतया उन्मुख (दृष्टिगत) है। इसलिये महारास में जो श्रृंगार था, उसका वर्णन करना है।

कछु रास की रामतें, साथ की भी करों रोसन।

एही सेवा साथ की, सुन सुख पावें सैंयन।।५०।।

इसके पश्चात् श्री राज जी के साथ होने वाली रास की रामतों का भी वर्णन हुआ। हे साथ जी! श्री इन्द्रावती जी की आत्मा के द्वारा सब सुन्दरसाथ के लिये की जाने वाली यह बातिनी (आत्मिक) सेवा है। इस तारतम वाणी को सुनने पर परमधाम की आत्माओं को अखण्ड सुख प्राप्त होगा।

भावार्थ– पहले श्री मिहिरराज जी सुन्दरसाथ को एकत्रित करके सेवा करना चाहते थे। इस तारतम वाणी के अवतरण की सेवा, जो उनके तन से ली गई, की महिमा अपार है।

दुःख मोसों जाता रह्या, आय अंग में उमंग।

रामत भई सब रास की, सुख पायो जो थे संग।।५१।।

श्री इन्द्रावती जी के शब्दों में युगल स्वरूप के दीदार तथा उनके धाम हृदय में विराजमान होने के पश्चात्, मेरे हृदय में अपार आनन्द छा गया। अब नजरबन्द होने का कोई भी दुःख नहीं है। अब मेरे तन से रास की रामतों का अवतरण हुआ। मेरे साथ उद्धव और श्यामल जी भी थे। उनको भी इसका सुख प्राप्त हुआ।

सामलिये बड़े भाई को, इत आया ईमान।

चरचा सुनी इन समें, कछुक भई पहिचान।।५२।।

श्री मिहिरराज जी के बड़े भाई श्री श्यामल जी उनके साथ नजरबन्द थे। जब उन्होंने वाणी का अवतरण देखा और रास की रामतों का प्रत्यक्ष दृश्य देखा, तो वह

समझ गये कि मिहिरराज जी के अन्दर परब्रह्म की शक्ति विराजमान हो गई है। वह श्री मिहिरराज के मुख से चौपाइयों का अवतरण सुनने लगे और समझ गये कि ये मिहिरराज नहीं बोल रहे हैं बल्कि परब्रह्म का आवेश बोल रहा है। इस प्रकार उन्होंने श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में विराजमान श्री अक्षरातीत की कुछ पहचान की।

अंजील किताब इन समें, उतरी कही फिरकान।
हब्से के पातसाह पर, ए बड़ा लिख्या निसान।।५३।।

इस समय अवतरित होने वाले रास ग्रन्थ को ईसाई मत में इंजील ग्रन्थ कहा गया है। ऐसे ही तफसीरे हुसैनी के ग्यारहवें पारे में हब्से के बादशाह के द्वारा अलौकिक ज्ञान के श्रवण का वर्णन है। इस प्रकार श्री मिहिरराज जी को हब्से का बादशाह माना गया है।

होते इन किताब से, नूर रोसनी जोर।

तब चित राज की तरफ को, छोड़ माया की मरोर।।५४।।

इस रास ग्रन्थ की वाणी को आत्मसात् करने से हृदय में तारतम ज्ञान का तीव्र प्रकाश प्रकट होता है। तब चित्त माया के बन्धनों को तोड़कर श्री राज जी की तरफ लग जाता है।

यों करते चरचा, जबराइलें किया जोर।

आया जोस इन समें, कछू न रही खोर।।५५।।

इस प्रकार वाणी के अवतरण के समय श्री राज जी के जोश (जिबरील) का प्रभाव श्री मिहिरराज जी के तन पर दिखाई पड़ा, जिससे वाणी के अवतरण में किसी भी प्रकार की कमी नहीं रह गई।

भावार्थ– मन, बुद्धि के धरातल पर बने हुये किसी भी

ग्रन्थ में कोई त्रुटि हो सकती है, किन्तु स्वयं परब्रह्म के जोश–आवेश के द्वारा जिसका अवतरण हुआ हो, उसमें न्यूनता (कमी) या त्रुटि का प्रश्न ही नहीं होता। इस चौपाई के चौथे चरण का यही आशय है।

और बानी निकसी मुखसें, सो कलाम जंबूर के।
ज्यों ज्यों आयतें उतरीं, उत्तमबाईयें लिखी ये।।५६।।

और श्री इन्द्रावती जी के मुखारविन्द से प्रकाश वाणी उतरी, जिसको कतेब परम्परा में जम्बूर ग्रन्थ कहा गया है। जैसे–जैसे चौपाइयां अवतरित होती गईं, उद्धव ठाकुर लिखते गये।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में आयत का भाव चौपाई से है। उत्तमबाई उद्धव ठाकुर की परात्म का नाम है, जो चौथे चरण में दर्शाया गया है।

ज्यों ज्यों उतरती गई, त्यों त्यों किये जमे।

फेर उहाँ से उतार के, ले पुस्तक चढ़ाये तिन से।।५७।।

जैसे–जैसे जोश से वाणी अवतरित होती गई, वैसे–वैसे उद्धव जी कोयले से दीवाल पर लिखते गये। पुनः उसे कागज पर उतारकर ग्रन्थ का रूप दे दिया गया।

ए दोय किताबें उतरी, अंजीर और जंबूर।

षटरूती भी इन समें, इस्क विरहा का उतर्या नूर।।५८।।

सबसे पहले रास और प्रकाश वाणी का प्रकटन हुआ। उसके पश्चात् श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में विरह–प्रेम का जो रस फूटा, वह षट्ऋतु की वाणी में प्रकट हुआ अर्थात् षट्ऋतु की वाणी भी अवतरित हुई।

कलश बीज इन समें, उठा इत अंकूर।

सो तबथें चढ़े दीप में, हुआ सूरत में मजकूर।।५९।।

इस समय कलश वाणी की दो चौपाइयां बीज रूप में हब्से के अंदर अवतरित हुई थीं। दीपबन्दर जाते समय कुछ अंश उतरे। सूरत में कलश (गुजराती) वाणी पूर्ण हुई।

बेहद बानी उतरी, दीव बन्दर जल में।

जब तैयार भई, तब जाने सिर लगा आसमान से।।६०।।

दीपबन्दर जाते समय जब श्रीजी नाव में विराजमान थे, तब प्रकाश गुजराती की बेहद वाणी अवतरित हुई। जब बेहद वाणी का अवतरण हुआ, तो उसमें छिपे हुये अध्यात्म के अति गूढ़ रहस्यों को देखकर श्री इन्द्रावती जी की आत्मा को अपार आनन्द हुआ।

भावार्थ– आसमान तक सिर होना या आसमान छूना एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य है सफलता के शिखर तक पहुँचना। बेहद वाणी में अध्यात्म के उन अनसुलझे रहस्यों को सुलझाया गया है, जो सृष्टि में किसी को नहीं मालूम थे। बेहद वाणी का प्रारम्भ ही इन कथनों से होता है–

बेहद के साथी सुनो, बोली बेहद बानी।
बड़े बड़े रे हो गये, पर काहू न जानी।।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३१/१

और रास की रामतें, हुआ मेरते में विवेक।
और कीर्तन वेदान्त के, राह में भये अनेक।।६१।।

रास की कुछ रामतों का अवतरण उस समय हुआ, जब श्रीजी मेड़ते में अखण्ड ज्ञान का प्रकाश कर रहे थे।

श्रीजी की जागनी यात्रा में मार्ग में अलग–अलग प्रसंगों के अनुकूल वेदांत के बहुत से कीर्तन उतरते रहे।

और किताब तौरेत, उतरी बीच सूरत।
ताको कह्या कलस, सनन्ध अनूप सहर बखत।।६२।।

कलश ग्रन्थ, जिसको कतेब परंपरा में "तौरेत" कहा जाता है, सूरत में पूर्ण हुआ। सनंध ग्रन्थ अनूपशहर में अवतरित हुआ।

गुजराती भाखा फेरके, करी भाख हिन्दुस्तान।
ए जो वास्ते ब्रह्मसृष्टि के, सुख पावे कर पहिचान।।६३।।

अनूपशहर में श्रीजी ने प्रकाश गुजराती एवं कलश गुजराती को हिन्दुस्तानी भाषा में रूपान्तरित किया, ताकि उत्तर भारत में जो ब्रह्मसृष्टियां गुजराती भाषा नहीं

समझती हैं, वे भी अपने मूल घर एवं धाम धनी की पहचान कर आत्मिक सुख ले सकें।

केतिक बाणी धनी की, रामनगर में भया मूल।
तहाँ से विस्तार भया, भया परना में बड़ा तूल।।६४।।

धाम धनी की कुछ वाणी, अर्थात् परिक्रमा और श्रृंगार का कुछ अंश, रामनगर में अवतरित हुआ। पद्मावतीपुरी धाम में इन दोनों बृहद् ग्रन्थों का विस्तारपूर्वक समापन हुआ।

और बानी फिरकान की, हदीसें महम्मद अलेह सलाम।
भई सो सारी परना मिने, बीच दीन इसलाम।।६५।।

ईसाइयों के धर्मग्रन्थ तथा मुहम्मद (सल्ल.) के द्वारा कहे हुए कुरआन एवं हदीसों के गुह्य रहस्यों का स्पष्टीकरण

खुलासा तथा मारिफत सागर ग्रन्थ में हुआ। ये दोनों ग्रन्थ, जो श्री निजानन्द सम्प्रदाय की अनमोल निधि हैं, पन्ना जी में अवतरित हुए।

जो प्रदक्षिना निजधाम की, सातों सरूप श्री राज।
सो सारे परना मिने, वास्ते सैंयन के सुख काज।।६६।।

ब्रह्मसृष्टियों को निजधाम का शाश्वत् आनन्द देने के लिये परमधाम की सातों परिक्रमा तथा श्री राज जी के सातों स्वरूपों का अवतरण श्री ५ पद्मावती पुरी धाम पन्ना जी में हुआ।

भावार्थ– श्री राज जी के सात स्वरूपों के विषय में मतभेद हैं, जिनकी समीक्षा यहां प्रस्तुत है–

१. कुछ के मतानुसार सात ग्रन्थों खुलासा, खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार, सिन्धी तथा मारिफत सागर का

अवतरण श्री पन्ना जी में हुआ है। इस प्रकार ये सातों ग्रन्थ ही श्री राज जी के सात स्वरूप हैं।

बड़ा कियामतनामा चित्रकूट में उतरा है जिसमें छत्रसाल जी की छाप है, किन्तु छोटा कियामतनामा पन्ना जी में उतरा है जिसमें महामति जी की छाप है। इसी प्रकार तीसरा कियामतनामा भी पन्ना जी में ही उतरा है। कियामतनामा को जोड़ने पर आठ ग्रन्थ हो जाते हैं। प्रश्न यह है कि सम्पूर्ण वाणी ही श्री राज जी का वाङ्मय कलेवर है। ऐसी स्थिति में केवल सात ग्रन्थों को ही श्री राज जी का स्वरूप क्यों माना जाय, १४ ग्रन्थों को क्यों नहीं?

२. कुछ के मतानुसार परमधाम की सातों परिक्रमा ही श्री राज जी की हकीकत का स्वरूप है, इसलिये इन्हें ही सात स्वरूप मानना चाहिए।

इसके सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि "सातों सरूप श्री राज" का कथन दूसरे चरण में हुआ है। पहले चरण का प्रसंग अलग है और दूसरे का अलग। पहले चरण में परिक्रमा ग्रन्थ का प्रसंग है तथा दूसरे चरण में श्री राज जी के स्वरूप।

३. सातों सरूप अखंड, मैं बरनन किए सिर ले।
दो रास पांच अर्स अजीम, बोझ दिया न सिर सरूपों के।।

कुछ सुन्दरसाथ श्रृंगार ३/५२ के इस कथन को यहाँ उद्धृत करते हैं, किन्तु यह प्रश्न उठता है कि रास के दोनों स्वरूप तो हब्शे में उतरे हैं, जबकि यहां पन्ना जी में उतरने वाले स्वरूपों का प्रसंग चल रहा है। इसलिये यह मानना उचित नहीं है।

४. तारतम वाणी के शब्दों में स्वरूप वह है, जिसमें युगल स्वरूप के नख से शिख तक की शोभा का वर्णन

किया जाय। जैसे– प्रातःकाल के स्वरूप "श्री राज जी श्री ठकुरानी जी प्रथम......." में युगल स्वरूप की शोभा अर्थात् श्रृंगार का वर्णन किया गया है।

इस प्रकार, एक बार नख से शिख तक के वस्त्र–आभूषणों से युक्त शोभा (श्रृंगार) वर्णन को एक स्वरूप कहते हैं। यदि श्री राज जी का श्रृंगार सात बार वर्णित किया जाय, तो उसे सात स्वरूप कहा जाना चाहिए।

सागर ग्रन्थ में तीन बार श्री राज जी के श्रृंगार का वर्णन किया गया है।

श्रृंगार ग्रन्थ के चार मंगलाचरण हैं और चार बार नख से शिख तक श्री राज जी की शोभा का वर्णन किया गया है। श्रृंगार ग्रन्थ का पहला प्रकरण ही मंगलाचरण से शुरू होता है। श्रृंगार ग्रन्थ में चारों मंगलाचरणों के साथ चारों स्वरूपों का वर्णन इस प्रकार वर्णित है–

प्रकरण १– मंगलाचरण (पहला)

प्रकरण ३– चरन

प्रकरण ५– चरन को अंग

प्रकरण ६– चरन हक मासूक के उपली शोभा

प्रकरण ७– चरन निसबत का प्रकरण अंदरतांई

प्रकरण ८– कदम परिक्रमा निसबत

प्रकरण ९– अर्स अन्दर निसबत चरण

प्रकरण १०– श्री राजजी की इजार

प्रकरण ११– खुले अंग छाती सिनगार छवि छाती

प्रकरण १२– मंगलाचरण (दूसरा)

प्रकरण १२– खभे कण्ठ मुखारविन्द शोभा समूह

प्रकरण १३– हक मासूक के श्रवण अंग

प्रकरण १४– हक मासूक के नेत्र अंग

प्रकरण १५– हक मेहेबूब की नासिका

प्रकरण १६– हक मासूक की जुबान की सिफत

प्रकरण १७– हक मासूक के वस्तर

प्रकरण १८– हक मेहेबूब के भूखन

प्रकरण १९– जोबन जोस मुख बीड़ी छवि

प्रकरण २०– मंगलाचरण (तीसरा)

प्रकरण २०– नख से शिख तक का वर्णन

प्रकरण २१– मंगलाचरण (चौथा)

प्रकरण २१– मुखकमल मुकुट छवि

एक खिलवत और सागर, केतिक बानी और।

सो हुई मोमिनों वास्ते, मजल परना ठौर।।६७।।

ब्रह्मात्माओं को अखण्ड सुख का रसपान कराने के लिये

खिल्वत और सागर ग्रन्थ, तथा कुछ और वाणी (कीर्तन ग्रन्थ के कुछ अंश तथा छोटा कियामतनामा) का अवतरण भी श्री पन्ना जी में हुआ।

महामति कहे ए मोमिनों, ए हादी मेंहेदी इमाम।
ताकी बीतक और कहों, जो नूर दीन इसलाम।।६८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! श्रीजी का यह स्वरूप हमारे लिये हादी या आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब्बुज्ज़मां का स्वरूप है। अब उनके द्वारा होने वाली लौकिक लीला का मैं वर्णन करता हूँ, जो श्री निजानन्द सम्प्रदाय का आधार है।

भावार्थ– हब्से में जब श्री इन्द्रावती जी की आत्मा के समक्ष युगल स्वरूप ने प्रत्यक्ष दर्शन दिया और जागनी के लिए उनको आदेश देकर उनके धाम हृदय में विराजमान

हो गये, तब से वे सबके प्राणनाथ, अक्षरातीत या धाम धनी हो गये। अब कभी भी उनके सम्बोधन में मिहिरराज जी शब्द का प्रयोग नहीं होगा।

प्रकरण ।।१७।। चौपाई ।।७९२।।

सुन्दरसाथ को प्रबोध

इस प्रकरण में हरिजी व्यास जी की जागनी के सम्बन्ध में प्रकाश डाला गया है।

अब फेर कहों हब्से की, जाको प्रबोधपुरी नाम।
तहाँ बारह महीना बीतक भई, सम्वत सत्रह सौ पन्द्रोतरे तमाम।।१।।

अब मैं पुनः हब्शे का प्रसंग वर्णित करता हूँ, जिसे प्रबोधपुरी भी कहते हैं। यहाँ नजरबन्दी की स्थिति में बारह माह व्यतीत हो गये। इस प्रकार, वि.सं. १७१५ का वर्ष यहीं पर पूरा हो गया।

कुतुब खाँ सों सलाह करके, वजीर आया नए नगर।
तब अन्दर कह्या महल में, क्यों ऐसा जुलम किया मेहेराज पर।।२।।

अहमदाबाद में कुतुब खां से सन्धि करके जब जामनगर का मन्त्री अपने महल में पहुँचा, तो उसकी पत्नियों ने उसे बताया कि आपने श्री मिहिरराज जी पर इस तरह से अत्याचार क्यों किया?

भावार्थ– जब तारतम वाणी (रास) का अवतरण हो रहा था, उस समय कारागार में दिव्य प्रकाश फैला हुआ था तथा रास का मनमोहक दृश्य भी दिखायी पड़ रहा था। मन्त्री की पत्नियों ने कारागार के द्वार के छिद्र से यह सारा दृश्य देख लिया था। उन्हें यह पूर्णतया विश्वास हो गया था कि श्री मिहिरराज जी के अन्दर कोई अलौकिक शक्ति विराजमान है। इसलिये उन्होंने अपने पति के आते ही श्रीजी को छोड़ने के लिये बहुत अधिक दबाब दिया।

एक तो घर लूट लिया, फेर बंध कर बैठाया।

बरस रोज होने आया, क्यों ऐसा जुलम पहुँचाया।।३।।

एक तो आपने इनके घर की सारी सम्पत्ति जब्त कर ली, दूसरा उन्हें बन्धन में डालकर नजरबन्द कर दिया। उनको अपने ही घर में नजरबन्द किये हुये एक वर्ष हो गया। आपने उनके ऊपर इतना अत्याचार क्यों किया?

सिताब छोड़ो इनको, और देओ दिलासा इन।

दे सिरोपाओ घरों पठाओ, ए दिलगीर होवे जिन।।४।।

आप शीघ्र-अतिशीघ्र इनको नरजबन्दी से मुक्त कीजिये, तथा अब तक होने वाले कष्ट के लिये इन्हें सांत्वना दीजिये, और इन्हें सिरोपाव पहनाकर सम्मानपूर्वक घर विदा कीजिये जिससे ये मानसिक रूप से दुःखी न हों।

भावार्थ– सिर से लेकर पैर तक की वह पूरी पोशाक जो राज दरबार से सम्मान के रूप में मिलती है, सिरोपाव कहलाती है।

सिताब वजीर बुलाय के, तबहीं किए खलास।
किताबें उतरी कादर से, बिन धाम न रही आस।।५।।

मंत्री ने श्रीजी को बुलावाकर उसी क्षण बन्धन मुक्त कर दिया। सर्वसमर्थ अक्षरातीत की कृपा से तारतम वाणी का अवतरण होना था, इसलिये श्रीजी इतने आनन्दित थे कि उन्हें धाम धनी के अतिरिक्त और किसी चीज की आशा ही नहीं थी।

ए किताबें लेय के, लगे बिहारीजी के कदम।
बातें बीतक की करीं, पाया सुख आतम।।६।।

इन तीनों ग्रन्थों को लेकर श्रीजी, श्री बिहारी जी के पास आये और उनके चरणों में प्रणाम किया। बिहारी जी को उन्होंने सारे घटनाक्रम की जानकारी दी कि किस प्रकार उनकी आत्मा को अक्षरातीत श्री धाम धनी की कृपा से अखण्ड सुख का अनुभव हुआ।

लगे बातें करने, अपनी जो बीतक।
यों किताबें उतरीं, हुई श्री मेहेराज पर हक।।७।।

अपने साथ घटित हुई वे सारी बातें श्री बिहारी जी से कहने लगे कि किस प्रकार श्री राज जी की मेहर (कृपा) उन पर हुई और रास, प्रकाश और षट्ऋतु की वाणी अवतरित हुई।

साथ सबों ने इन समें, देखी मेहर श्री राज।

बांह पकड़ाई साथ की, दई हकें हाथ श्री मेहेराज।।८।।

समस्त सुन्दरसाथ ने इस समय अनुभव किया कि धाम धनी की प्रत्यक्ष कृपा श्री मिहिरराज जी के ऊपर बरस रही है। श्री राज जी ने सबका हाथ श्री मिहिरराज जी के हाथ में सौंप रखा है अर्थात् सभी की जागनी का उत्तरदायित्व इन्हीं के ऊपर है।

इत बिहारीजी चमके, सुन खटरूती के सुकन।

इन तहकीक मुझसे लई, खास गिरोह सैयन।।९।।

षट्ऋतु की वाणी को सुनकर श्री बिहारी जी महाराज चौंक गये। उन्होंने मन ही मन सोचा कि इन्होंने तो ब्रह्मसृष्टियों के नेतृत्व का सारा अधिकार मुझसे छीन लिया है। ऐसी स्थिति में, मेरे लिये नाम मात्र का

गादीपति कहलाने से क्या लाभ है?

भावार्थ- "ए वाले अम बिना कोणे न कलियो" षट्ऋतु के इस कथन में श्री इन्द्रावती जी कहती हैं कि राज जी मेरे अतिरिक्त अन्य को भी नहीं मिले हैं। बिहारी जी को इसी बात से ज्यादा कष्ट था। यदि इन्द्रावती जी के अन्दर राज जी हैं, तो मेरे गादीपति होने का क्या औचित्य है? बल्कि होना तो यह चाहिये कि जो गादी पर बैठेगा, वही राज जी कहलायेगा।

इन तो सुकनों में कह्या, मैं लेऊं धनी अपना।
तो इत बाकी क्या रह्या, भई इन सुकनों की पहिचान।।१०।।

इन्होंने तो अपनी वाणी में कह रखा है कि मैंने अपने धाम धनी को ले लिया है। इन वचनों से तो इनके मानसिक भाव का पता चल रहा है कि ये अपने को ही

राज जी मान बैठे हैं। ऐसी स्थिति में मेरे गादी पर बैठे रहने का क्या औचित्य (महत्व) रह जाता है?

भावार्थ– प्रकाश गुजराती के अन्दर श्री इन्द्रावती जी के द्वारा धनी को अपने अंदर बसा लेने का दावा किया गया है। उसके शब्द इस प्रकार हैं–

सई तूं मेरा धनी ले बैठी, कोई और ना देखनहार।
देख तूं पिउ लेऊ अपना, तो तूं कहियो सोहागिन नार।।
इन्द्रावती कहे तूं सई मेरी, धनी मिले मुझे इत।
पीउ ने सब पूरन करी, जो मैं करी उमेदा तित।।
सई तूं मेरी बाई रतन, मोहे मिले छबीले लाल।
करी मुझे सोहागनी, अब मैं भई निहाल।।

प्रकाश हि. २८/९,१०,११

करने ना देऊं जाहिर, ए बानी साथ मिने।

दिल में जान ऐसा कह्या, क्यों एता विरह किया आपने।।११।।

अपने मन में ऐसा मानकर उन्होंने मन में निर्णय कर लिया कि मैं किसी भी हालात में इस वाणी को सुन्दरसाथ में फैलने नहीं दूँगा। उन्होंने अन्दर कड़वाहट रखते हुये, बाहर से दिखावटी प्रेम के साथ कहा कि मिहिरराज! तुम मुझे क्या मानते हो? श्री मिहिरराज जी ने उत्तर दिया कि आप तो गादी पर विराजमान साक्षात् मेरे धाम के धनी हैं। इस बात पर बिहारी जी कहते हैं कि मेरे लिये इतना विरह करने की क्या आवश्यकता थी?

मैं तो बैठा था एक सहरमें, तेरे आगे नजर।

तेरा विरह मुझ पर पड़ा, इन सुकन को देओ उत्तर।।१२।।

मैं तो इसी नवतनपुरी के अन्दर विराजमान था और तुम

भी इसी नगर में रह रहे थे। फिर भी जब तुम मेरे विरह में तड़पे, उसका दोष तो मुझे ही लगेगा। तुम्हें मेरे प्रश्न का उत्तर देना होगा कि तुमने मुझे दोषी क्यों बनाया?

अब ए बानी रहने देओ, ए चरचा सुनो साथ।
अपनों जो मारग है, सोई ग्रहो हाथ।।१३।।

इसलिये अब इस वाणी को यहीं रहने दो, इसका प्रचार नहीं करना है। जब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने कोई ग्रन्थ नहीं लिखा, तो तुम क्यों लिख रहे हो? सद्गुरु महाराज के द्वारा बताये गये मार्ग में तो ज्ञान की पोथी का कोई महत्व ही नहीं है। यहाँ पर मेरे द्वारा जो चर्चा होती है, सुन्दरसाथ उसी को सुनेगा और कहीं भटकने की आवश्यकता नहीं है।

बानी वहाँ न पसरी, वह सरत उस दिन।

इन्तजार थे मोमिन, पर सुन सके न एक सुकन।।१४।।

बिहारी जी महाराज की विशेष कृपा से उस समय नवतनपुरी में तारतम वाणी का प्रकाश नहीं फैल सका। यद्यपि सुन्दरसाथ उस वाणी को सुनने के लिये तड़प रहे थे, लेकिन बिहारी जी की संकीर्ण मानसिकता ने एक शब्द भी सुनने नहीं दिया।

द्रष्टव्य– व्यक्तिवाद, गादीवाद, और जड़तावाद के घने बादलों के बीच वाणी के प्रकाश का सूर्य छिप जाता है। परब्रह्म की कृपारूपी वायु ही इन बादलों को हटा सकती है। इसके बिना वाणी का प्रकाश फैलना सम्भव नहीं है।

सौभाग्वश, श्रीजी के आग्रह पर उन्होंने अवतरित वाणी को वापस कर दिया। उन्हें ऐसा लगा कि जब मिहिरराज जूनागढ़ जा रहे हैं तो उन्हें ग्रन्थ वापस करने में स्वयं को

कोई हानि नहीं होगी।

हरजी व्यास प्रसंग

यहाँ से फारक भये, सोलोत्तरे के साल।

वास्ते गाँव बसावने, आए जूनागढ़ के हाल।।१५।।

वि.सं. १७१६ में श्रीजी नवतनपुरी से गांव बसाने के लिये जूनागढ़ के पास सौरठ आये।

भावार्थ– जब श्रीजी जूनागढ़ जा रहे थे, तो रास्ते में धौराजी गांव के पास एक नदी किनारे ठहरे। उधर से वीरजी भाण जी की पुत्री तेजकुँवरी जी जल भरने के लिये आई हुई थीं। उन्होंने श्रीजी को सामने देखकर घूँघट कर लिया।

तेजकुँवरी जी के ऐसे व्यवहार से पिता को बहुत आश्चर्य हुआ, क्योंकि लड़की मात्र अपने पति के सामने घूँघट

निकाल सकती थी। वीरजी भाण जी के पूछने पर तेजकुँवरी जी ने स्पष्ट कह दिया कि ये मेरे पूर्वजन्म के पति हैं। आप जाकर इनसे पूछ आइये कि इनका नाम मिहिरराज और इनकी पत्नी का नाम फूलबाई था या नहीं। वीरजी भाण जी के द्वारा वास्तविकता का बोध होने पर उन्होंने श्री तेजकुँवरी जी को श्रीजी के हाथों में सौंप दिया। परमधाम के मूल सम्बन्ध से श्रीजी ने उन्हें स्वीकार कर लिया।

यहां एक विशेष रहस्यमयी बात यह है कि वि.सं. १७१२ में श्री देवचन्द्र जी के धामगमन के पश्चात् फूलबाई जी का धामगमन होता है। वि.सं. १७१६ में श्रीजी जूनागढ़ जा रहे होते हैं। फूलबाई जी के तन में विराजमान अमलावती की आत्मा ने तेजकुँवरी नामक युवा कन्या के तन में प्रवेश किया था। अन्यथा चार साल

की बालिका से कभी विवाह होने का प्रश्न ही नहीं हो सकता। अतः स्पष्ट है कि आत्मा कभी गर्भ में नहीं जाती, तन में प्रविष्ट होती है।

सत्रोत्तरे इहाँ रहे, अठारोत्तरे के बरस।
कानजीभाई यहाँ रहेवहीं, बानी सुने सरस।।१६।।

गाँव बसाने के उदेश्य से श्रीजी वि.सं. १७१७–१८ में जूनागढ़ रहे। कान्हजी भाई जूनागढ़ में रहा करते थे और श्रीजी की अलौकिक वाणी का रसपान करते थे।

हर जी व्यास एक ब्राह्मण, रहे तिनका चाकर होए।
जब वह दुखी पड़ा, भोम उतारा सोए।।१७।।

जूनागढ़ में हरिजी व्यास नामक एक विद्वान ब्राह्मण रहते थे। कान्हजी भाई उन्ही के यहाँ सेवा कार्य किया करते

थे। एक बार जब वह बहुत अस्वस्थ हो गये, तो मृत्यु को निकट जान उनके परिवार वालों ने उनको जमीन पर लिटा दिया।

लगे दान करावने को, तब भया सावचेत।
ए कैसा काम करत हो, मैं नहीं इन खेत।।१८।।

परिवार के लोग हरिजी व्यास को मरणासन्न मानकर दान कराने लगे, तब वह सावचेत हो गया और उसने परिवार के लोगो को मना किया कि वे दान न करें। तुम लोगों का यह कार्य उचित नहीं है। मैं इस ब्रह्माण्ड का नहीं हूँ।

क्यों मोहे दान करावत, जमपुरी का साधन।
मैं नाहीं इन इण्ड का, मेरा क्यों कलपाओ मन।।१९।।

तुम लोग मेरे नाम का दान–पुण्य क्यों करा रहे हो? यह यमपुरी का साधन है अर्थात् जन्म–मरण के चक्र में डाले रहता है। मैं इस क्षर जगत का नहीं हूँ। मुझे जन्म–मरण के चक्कर में डालकर क्यों दुःखी करना चाहते हो?

भावार्थ– यहाँ यह जिज्ञासा होती है कि धर्मग्रन्थों में तो दान की महिमा कही गई है, फिर हरिजी व्यास ने क्यों मना किया? इसके समाधान में यह कहा जा सकता है कि मरते समय जो दान दिया जाता है, उसका उद्देश्य पुण्य प्राप्ति करके स्वर्ग प्राप्त करना होता है। पुण्य क्षय होने के पश्चात् स्वर्ग प्राप्ति करने वाले को पुनः जन्म–मरण के चक्र में पड़ना पड़ता है। निष्काम भावना से, मानवता के कल्याण या सत्य के प्रचार के लिये दिया गया दान, स्वर्ग नहीं अपितु मोक्ष में सहायक होता है।

हरिजी व्यास जी का यही कथन है कि मुझे पुण्य प्राप्ति

करके स्वर्ग नहीं जाना है, क्योंकि मैं इस नश्वर जगत का नहीं हूँ।

दोय बात की दाझ इनमें से, लिये जात हों मैं।
जाको मैं हाँ कही, सो ना न कही किनने।।२०।।

मैं दो बातों की दाझ (अपूर्ण इच्छा) लेकर इस दुनिया से जा रहा हूँ। पहली बात तो यह है कि मैंने जिस बात को "हाँ" कह दिया तो उसे "न" कहने का साहस किसी में नहीं हो सका, अर्थात् यदि मैंने कह दिया कि परमात्मा निराकार है तो किसी में भी यह साहस नहीं हुआ कि उसे साकार रूप में सिद्ध कर सके।

जाको मैं ना कही, सो हाँ न कही किन।
इन दोय बात की दाझ, रह गई मेरे मन।।२१।।

किन्तु यदि मैंने "न" (नहीं) कह दिया, तो किसी ने भी मेरे सामने "हाँ" कहने की हिम्मत नहीं दिखायी। अर्थात् यदि मैंने परमात्मा को साकार कह दिया, तो कोई भी उसे निराकार के रूप में नही दर्शा सका। इन्हीं दोनों बातों की दाझ मेरे मन में है।

ए सुकन कानजी सुन के, बड़ी उपजी दाझ।
ए कैसे इनने कह्या, क्या ए है हमारे मांझ।।२२।।

हरिजी व्यास के वचनों को सुनकर कान्हजी भाई के मन में यह जिज्ञासा पैदा हुई कि इसने इस तरह की बात कैसे कह दी कि मैं इस ब्रह्माण्ड का नहीं हूँ, मेरे नाम से दान-पुण्य करवाकर स्वर्ग के जाल में क्यों फँसाना चाहते हो? कहीं यह ब्रह्मसृष्टियों में से तो नहीं है?

ए तो सुकन सो कहे, ज्यों कहे वासना धाम।

क्यों ए जीवता रहे, याके पूरें मनोरथ काम।।२३।।

इसने तो उसी तरह से बात कही है, जैसे ब्रह्मसृष्टि कहती है। राज जी की कृपा से यह किसी तरह से जीवित रह जाये, ताकि इसके मन की यह चाहना पूरी हो जाये कि मेरी बात को किसी ने खण्डित भी किया है।

भावार्थ– हरिजी व्यास जी के मन में यह बात रहती थी कि इस संसार में मेरी बात को कोई खण्डित करने वाला नहीं है। जब उसकी बात खण्डित हो जाये, तो स्वाभाविक है कि उसकी दाझ मिट जाती।

यों करते कानजी ने यह बात, श्रीजी आगे करी।

श्री जीएँ ये सुन के, दिल बीच धरी।।२४।।

इस प्रकार यह सारी बात कान्हजी भाई ने श्रीजी से

बतायी। कान्हजी भाई की सारी बात सुनकर श्रीजी ने यह दिल में ले लिया कि यह स्वस्थ हो जाय।

जो जीवता ए रहत है, कहूं चरचा के सुकन।
सब सकें भानों इनकी, तुम साख रहियो सैंयन।।२५।।

उन्होंने कान्हजी भाई से यह बात कही कि यदि धाम धनी की कृपा से यह जीवित रहता है, तो मैं उससे आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा अवश्य करूँगा तथा इसके सारे संशयों का निवारण अवश्य करूँगा। तुम इस बात की साक्षी दिये रहना कि इन्होंने मरणासन्न अवस्था में कहा था कि जिसको मैंने "हाँ" कहा उसको किसी ने "न" नहीं कहा और जिसको मैंने "न" कहा उसको किसी ने "हाँ" नहीं कहा।

फेर एही बात को उठाया, दूर होवे गुमान।

सेवा लगा कानजी करने, क्यों ये होए इन्हें पहिचान।।२६।।

श्रीजी के समक्ष कान्हजी भाई ने पुनः यह बात करी कि इसका अहंकार दूर होना चाहिये। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये कान्हजी भाई सच्चे हृदय से हरिजी व्यास की सेवा करने लगे, ताकि वह जीवित रह जाये और श्रीजी के अलौकिक ज्ञान से इसका अभिमान दूर हो जाय, तथा इसे श्रीजी के स्वरूप की पहचान हो जाये।

नित तरकारी ल्यावहीं, सोध के बागों से।

तब राजी होवे कानजी पर, कहों स्याबास मैं।।२७।।

वह प्रतिदिन स्वयं बाग से जाकर अच्छी-अच्छी ताजा सब्जियां लाता था और उन्हें अच्छी तरह पकाता था। कान्हजी भाई की स्वादिष्ट सब्जियों की सेवा से हरिजी

व्यास बहुत प्रसन्न हुए और उसे शाबाशी देकर प्रोत्साहित किया।

मांग जो कछु मांगना, सो मैं देऊं तुम।
तें राजी मुझे बहुत किया, इन सेवा के मों।।२८।।

हरिजी व्यास कान्हजी भाई से कहते हैं कि कान्हजी भाई! तुम्हें मुझसे जो कुछ मांगना हो मांग लो, मैं देने के लिए तैयार हूँ। तुमने स्वादिष्ट सब्जियों की अपनी सेवा से मुझे बहुत प्रसन्न कर दिया है।

जो हजार रुपया देवहीं, मैं राजी न तिन पर।
तेरी तरकारी की सेवा से, खुसाल हुआ इन पर।।२९।।

यदि कोई व्यक्ति दक्षिणा में मुझे हजार रूपये भी दे, तो भी मैं उस पर इतना खुश नहीं होता, जितना मैं शाक–

सब्जी की सेवा से खुश हूँ।

तब कह्या कानजीनें, मैं मांगूगा आगे तुम से।

तुम तो मोको देओगे, जो है मेरे मनमें।।३०।।

तब कान्हजी भाई उत्तर देते हैं कि व्यासजी! मैं भविष्य में उचित समय पर आपसे माँग लूँगा। मुझे विश्वास है कि मेरे मन में जो चाहना है, उसे आप अवश्य पूरी करेंगे।

यों करते नित्याने, होये बहुत राजी।

तब कानजी सों फेर कह्या, तेरी कौन करों कारजसाजी।।३१।।

इस तरह से प्रतिदिन व्यास जी और कान्हजी भाई में वार्ता चलती रहती थी। हरिजी व्यास कान्हजी पर दिन-प्रतिदिन और अधिक प्रसन्न होते गये। एक दिन प्रसन्नता के आवेग में उन्होंने कान्हजी भाई से पुनः आग्रह किया-

कान्हजी भाई! तुम्हीं बताओ कि तुम्हारी प्रसन्नता के लिये मैं क्या करूँ?

तब कानजी बोलिया, मैं मांगत हों एक वस्त।
एक साध को सुनाओ चरचा, यही पाँउ मैं कस्त।।३२।।

तब कान्हजी भाई ने कहा कि मैं आपसे एक ही वस्तु मांगता हूं। मेरे एक बहुत ही परिचित महात्मा हैं, जो आपसे अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासाओं का समाधान कराना चाहते हैं। कृपया आप मेरी खुशी के लिए उनसे आध्यात्मिक चर्चा करने का कष्ट करें।

स्याबास कानजी तुमको, क्या तुम मांग्या मुझ से।
एक तें राजी किया सेवा मिने, फेर चरचा सुनावने के।।३३।।

यह सुनते ही हरिजी व्यास जी और आनन्दित होकर

बोले, शाबाश कान्हजी! तुमने मुझसे कितनी अच्छी चीज मांगी है। एक तो तुमने मुझे अपनी सेवा से तृप्त कर दिया। दूसरा ज्ञान चर्चा सुनाने के लिये आग्रह किया। मुझ जैसे विद्वानों को तो चर्चा सुनाने में ही आनन्द आता है।

बुलाओ साध वे कहाँ है, मैं चरचा सुनाऊं ताए।
मैं तो बहुत राजी भया, जो कोई ऐसा आहार पहुँचाए।।३४।।

अपने उस महात्मा जी को बुला लाओ। वे कहाँ पर है? मैं उन्हें चर्चा सुनाना चाहता हूँ। चर्चा सुनाने से तो मुझे भी आत्मिक आनन्द मिलता है। मैं तुम्हारे इस कार्य से बहुत ही प्रसन्न हूँ।

तब कान जी ने श्रीजी सों, कराए दिया मिलाप।

मिलते ही सुख उपज्या, करनें चरचा लगे आप।।३५।।

तब कान्हजी भाई ने श्रीजी से हरिजी व्यास की भेंट करा दी। दोनों मिलकर आनन्दित हुये और आपस में स्नेहपूर्वक बातचीत करने लगे।

पूछी खबर इन उनको, कहाँ बसो तुम साध।

कह्या हम तो हैं परदेसके, सुन्या तुमारा मता अगाध।।३६।।

हरिजी व्यास जी ने श्रीजी से उनका परिचय पूछा कि महात्मा जी, आप कहाँ रहते हैं? श्रीजी ने उत्तर दिया कि मैं तो दूर परदेश का रहने वाला हूँ। आपके अगाध पाण्डित्य को सुनकर, मैं अपनी जिज्ञासाओं का समाधान कराने आया हूँ।

भले साध तुम आये, मैं चरचा सुनाऊं तुमको।

जो चरचा कहो सो करों, तुम्हें राजी करों तिनसों।।३७।।

यह सुनकर हरिजी व्यास जी ने उत्तर दिया। महात्मा जी! आप बहुत अच्छे हैं जो ज्ञान चर्चा सुनने आये हैं। मैं आपको चर्चा सुनाने के लिये तैयार हूँ। आप जिस भी ग्रन्थ के विषय में कहिये, मैं उस के विषय में चर्चा करके आपको आनन्दित करना चाहता हूँ।

ठौर दई उतरने, अपने बीच बाग में।

अब होने लगी चरचा, भागवत के वचनों से।।३८।।

हरिजी व्यास ने अपने बाग में बने हुये निवास में श्रीजी के ठहरने की व्यवस्था कर दी। दोनों के बीच श्रीमद्भागवत् के द्वारा चर्चा होने लगी।

द्रष्टव्य– हरिजी व्यास जी के द्वारा भागवत की चर्चा

किये जाने से ऐसा प्रतीत होता है कि उनका नाम "हरिजी व्यास" होना चाहिये क्योंकि "हरि" का अर्थ विष्णु होता है और "हर" का अर्थ शिव। बीतक साहब के अन्दर यही देखने में आता है कि ह्रस्व "इ" का प्रयोग कम हुआ है। जैसे, बीतक प्रकरण ३५ चौपाई ६६ में–

हर नाम की माला उर में, विष्णु गायत्री है गान।
विष्णु हंस रूप मंत्र है, ब्रह्मा आचारज प्रमान।।

इस चौपाई में स्पष्ट रूप से यह विदित होता है कि "हर नाम" की जगह "हरि नाम" होना चाहिये। यह चौपाई वैष्णवों के माध्वाचार्य सम्प्रदाय की पद्धति से ली गई है, जिसमें विष्णु गायत्री मन्त्र को प्राथमिकता दी गई है। विष्णु भगवान द्वारा हंस रूप धारण करके जो मंत्र दिया गया है, उसी को मुख्य मंत्र माना है। ऐसी अवस्था में जो वैष्णव शंकर जी का प्रसाद भी ग्रहण नहीं करते, वे अपने

हृदय में "हर" अर्थात् शंकर जी को कैसे बसा सकते हैं?

यदि निष्पक्ष दृष्टि से देखा जाये तो "हरि नाम की माला उर में" होना चाहिये, "हर नाम" की नहीं। इसी प्रकार श्रीमद्भागवत् के मर्मज्ञ का नाम "हरि जी व्यास" उचित है, "हर जी व्यास" नहीं।

सुनत मास दो हुए, दोऊ राजी भए मगन।
एक दिन ठौर नारायण की, ताके कहे वचन।।३९।।

श्रीमद्भागवत् की कथा को प्रारंभ हुये दो माह हो गये। श्रीजी और हरिजी व्यास कथा सुनने और कहने में मग्न थे। अचानक एक दिन हरिजी व्यास ने आदिनारायण के स्थान का विवरण सुनाया।

एक हीरे का मन्दिर, ताको बड़ो विस्तार।

चौरासी लाख जोजन, ताको करो विचार।।४०।।

८४ लाख योजन विस्तार वाला एक हीरे का मंदिर है, अर्थात् ८४ x ४ x २ x १५=१००८० कि.मी.। उसके बारे में विचार कीजिये।

एह ठौर है किनका, सो मोहे कहो सुकन।

तब जवाब व्यासें दिया, होय के दिल मगन।।४१।।

श्रीजी ने बहुत प्रेम से पूछा कि व्यास जी कृपा करके बताइये कि यह किसका स्थान है? तब हरिजी व्यास ने बहुत आनन्द में मग्न होकर उत्तर दिया कि यह आदिनारायण का स्थान है।

एह ठौर अक्षर का, लिखा सास्त्रों में।

तब कदमों लाग फेर कह्या, ए ठौर पाऊं तुमसें।।४२।।

शास्त्रों में लिखा है कि यह अक्षर का स्थान है। तब श्रीजी ने हरिजी व्यास के चरणों में प्रणाम करके फिर कहा, मैं तो केवल आप जैसे विद्वान की कृपा से ही जान सकता हूं कि यह किसका ठिकाना है?

एह ऊपर तले माहें बाहिर, के ए ब्रह्माण्ड तीत।

मो सों कहो समझाए के, ए जो ठौर अतीत।।४३।।

अक्षर का यह स्थान ब्रह्माण्ड से ऊपर है, नीचे है, अन्दर है, या बाहर है? या इस ब्रह्माण्ड से पूर्णतया परे है? हे व्यास जी! यह जो अक्षर ब्रह्म का त्रिगुणातीत स्थान है, उसके विषय में मुझे स्पष्ट रूप से समझाइये कि वह कहाँ है?

पाँच तत्व तीन गुन, और मूल प्रकृत।

इनको नास तुम कह्यो, यह ठौर अक्षर की कित।।४४।।

आप पहले चर्चा में कह चुके हैं कि महाप्रलय में पाँच तत्व, तीन गुण और मूल प्रकृति का लय हो जाता है। ऐसी स्थिति में अक्षर ब्रह्म का स्थान (ठिकाना) कहाँ है?

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "मूल प्रकृत" का तात्पर्य अव्याकृत या सत्स्वरूप की चैतन्य मूल प्रकृति नहीं, अपितु वह मोह सागर है जिससे सृष्टि का प्रकटन होता है।

हमसों अन्तर ना करो, यह बताओ तुम।

फेर फेर विनती करें, सुने तुम्हारे मुख हम।।४५।।

हे महाराज! मैं बार–बार आपसे यह प्रार्थना करता हूँ कि हमसे यह भेद न छिपाइये। मुझसे यह बात स्पष्ट रूप

से बताने का कष्ट करें। आपके मुख से ही मैं इसे सुनने की इच्छा करता हूँ।

तब जवाब व्यासें दिया, यह ठौर आद नारायण।
खीर सागर में रहत हैं, लिखी सास्त्रों में पहिचान।।४६।।

तब हरिजी व्यास ने उत्तर दिया कि यह आदिनारायण का स्थान है। शास्त्रों में इनकी पहचान लिखी है और यह क्षीर सागर के अन्दर रहते हैं।

तब श्री जी ए कह्या, ए तो कह्या मिने इण्ड।
ए महाप्रलय में ना रहे, उड़े त्रिगुन समेत ब्रह्माण्ड।।४७।।

तब श्रीजी ने कहा कि आपने तो चौदह लोकों के ब्रह्माण्ड में ही इस स्थान को कह दिया है, जबकि महाप्रलय में तो यह त्रिगुणात्मक ब्रह्माण्ड ही नहीं रहेगा।

फिर आदिनारायण का ठिकाना कहाँ होगा?

फेर फेर विनती करें, हम सों ना करो अन्तर।
हमें तुम बिना कौन समझावहीं, दिखावे पटन्तर।।४८।।

हरिजी व्यास से श्रीजी ने बार-बार प्रार्थना करके कहा- हे व्यास जी! हमसे जरा भी यह भेद न छिपाइये। आपके सिवाय भला इस संसार में दूसरा और कौन है, जो हमें इस रहस्य को बतलाये।

तब व्यासें झुक के कह्या, मोहे कहत तुम क्या।
सास्त्रों में ऐसा लिख्या, तो क्या उत्तर देऊं इनका।।४९।।

तब हरिजी व्यास कुछ विनम्रता के स्वर में बोलने लगे कि हे महात्मा जी! आप मुझसे ऐसी बात क्यों कहते हैं? जब शास्त्रों में ऐसा ही लिखा है, तो मैं आपको दूसरा

क्या उत्तर दूँ।

कह्या कटुक वचन अचारजों को, इनों ऐसे ही लिखे सुकन।
तो मैं इत क्या करों, क्या निसा करों मोमिन।।५०।।

अचानक ही हरिजी व्यास उत्तेजित हो गये और अनेक ग्रन्थों के रचनाकारों को कटु वचनों से सम्बोधित करने लगे। जब इन्होंने ऐसा ही ऊट–पटाँग लिखा है, तो मैं इसमें कर ही क्या सकता हूँ? फिर आपको संतुष्ट कैसे कर सकता हूँ?

तब कानजी ने कहा, कछु अक्षरातीत की पूछो बात।
क्या जवाब करत हैं, सुनें इनके मुख विख्यात।।५१।।

तब कान्हजी भाई ने कहा कि आप इनसे कुछ अक्षरातीत की बात भी पूछिये। देखा जाय कि यह क्या

उत्तर देते हैं? हम इनके मुख से अक्षरातीत के बारे में कुछ वचन सुनना चाहते हैं।

आया जोस श्री जीए को, दिया धक्का कर हाथ।

क्या इनको पूछें क्या है इनमों, थका छर के साथ।।५२।।

श्रीजी को जोश आ गया और उन्होंने अपने हाथों से कान्हजी भाई को दूर हटाते हुये कहा कि ये व्यास जी तो क्षर में ही थक गये। इनमें ज्ञान ही कहाँ है? मैं इनसे अक्षरातीत के बारे में क्या पूछूँ?

ए तो थका छरमें, सुध नहीं अछर।

अक्षरातीत की तिनको, ए क्या देवे उत्तर।।५३।।

ये तो क्षर में ही अटके पड़े हैं। अक्षर की जरा भी सुध नहीं है। ऐसी स्थिति में अक्षरातीत के बारे में ये क्या

उत्तर दे सकते हैं?

जब रीस करके कहा, श्रीजी ने यह सुकन।

तब व्यास की सुध गई, है ए बात सैंयन।।५४।।

जब श्री प्राणनाथ जी ने कुछ तेज स्वरों में यह बात कही तो उसे सुनकर व्यास जी को यह समझ आ गया कि इस तरह अखण्ड धाम की बात तो केवल परमधाम की ब्रह्मसृष्टि ही कर सकती है।

तब श्री जीयें कह्या, सुनो व्यास वचन।

जो मैं आया तुम पे, सुनने चरचा के सुकन।।५५।।

तब श्रीजी ने कहा, हे व्यास जी! मेरी बात सुनिये। आपके पास भागवत कथा का श्रवण करने जो मैं आया था, उसका विशेष कारण है।

तुम वचन अन्त समय, कहे थे मुख थें।

मैं नहीं इन इण्ड का, क्या दान करों मैं।।५६।।

जब आप मरणासन्न अवस्था में थे, तो आपने मुख से यह बात कही थी कि मैं इस ब्रह्माण्ड का नही हूँ। मेरे नाम से दान क्यों करवा रहे हो?

और जाको मैं हाँ कही, ताकी ना न कही किन।

तिस वास्ते गुमान भानने, मैं भेज्या तुम पर सैंयन।।५७।।

जिस बात के सम्बन्ध में मैंने "हाँ" कह दिया, उसे खण्डित करके "न" कहने का साहस किसी ने नहीं किया। इसलिये आपके ज्ञान के अहं को नष्ट करने के लिये, मैंने अपने आने की सूचना देने के लिये, कान्ह जी भाई को आपके पास भेजा था।

हमको पठाये हकनें, तुम को राखे तिन।

जिन पर मेहर भगवान की, गुमान भान करे रोसन।।५८।।

मुझे सच्चिदानन्द परब्रह्म ने आपके पास भेजा है और उन्हीं ने आपको जीवित रखा है। जिस पर परब्रह्म की कृपा होती है, वह उसके हृदय में छिपी हुई अज्ञानता का अन्धकार दूर करके ज्ञान का प्रकाश कर देते हैं।

तब व्यासें वचन कहे, हे भगत हे भगतराज।

मैं कह्या यों ही कर, मेरा अरथ था इन काज।।५९।।

तब हरिजी व्यास श्रीजी के चरणों में गिरकर कहने लगे, हे भक्तराज! ये सच है, मैंने ऐसा ही कहा था। मेरा उद्धेश्य भी यही था कि मैं क्षर जगत् में न फँसू। मुझे अखण्ड धाम का प्रकाश मिले।

कै गूलर लगे दरखत को, बहुत बेसुमार।

तामें जीव अनेक हैं, एक दूसरे न जानन हार।।६०।।

गूलर के एक वृक्ष में बहुत से गूलर के फल लगे होते हैं। एक फल के कीड़े दूसरे फल के कीड़ों के बारे में कुछ भी नहीं जानते।

भावार्थ– ज्ञान का समुद्र अगाध है। इसलिये मनुष्य को ज्ञान के क्षेत्र में बड़ी से बड़ी उपलब्धि होने पर भी अपने मन में कभी भी यह मिथ्या धारणा नहीं माननी चाहिये कि दुनिया में मेरे समान कोई ज्ञानी नहीं है। इस चौपाई में संसार को एक गूलर के पेड़ की उपमा दी गई है। किसी क्षेत्र विशेष में (गूलर के फल में) रहने वाले किसी विद्वान को यह नहीं समझना चाहिये कि उसके जैसा कोई और विद्वान है ही नहीं।

सच्चे ज्ञानी की पहचान ही यही है कि वह अपने ज्ञान का

जरा भी अहं न करे, बल्कि अपने को ज्ञान के सागर की एक बूंद माने और अपने अन्दर निहित ज्ञान को सकरात्मक दृष्टिकोण रखते हुये मानवता के कल्याण में लगाये, मिथ्या पाण्डित्य के प्रदर्शन में नहीं।

मैं जीव उन गूलर में का, नहीं मेरा और गूलर।
आगे पण्डित मैं सब जीते, हारा न काहू सरभर।।६१।।

मैं भी गूलर के एक फल में रहने वाले कीड़े के समान एक जीव हूँ। मुझे यह नहीं मालूम था कि मेरे जैसे और भी कीड़े अन्य फलों में रह रहे हैं। आपसे पहले मैंने हर विद्वान को अपनी विद्वता से जीता है और किसी से ज्ञान के क्षेत्र में कभी नहीं हारा।

सो आज मैं छोड़े हथियार, आगे तुम्हारे सब।

तुम तहकीक भेजे हकके, आये मेरे सबब।।६२।।

लेकिन आज मैंने आपके सामने अपने ग्रन्थों के ज्ञान का अहंकार छोड़ दिया है। निश्चित रूप से आपको सच्चिदानन्द परब्रह्म ने मेरे आत्म कल्याण के लिये ही भेजा है।

मोंको बताओ तुम, वह जो राह मुस्तकीम।

मैं तो कछु न जानत, मोहे दिखाओ अजीम।।६३।।

मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। आप कृपा करके अध्यात्म की सच्ची राह बताइये। अक्षर से भी परे जो अक्षरातीत है, उसका अनुभव कराइये।

भावार्थ– यह प्रसंग भागवत के दशम् स्कन्ध अध्याय ८१ श्लोक २२ से ६० तक वर्णित है। इसमें दर्शाया गया

है कि मरे हुये ब्राह्मण पुत्रों को लाने के लिये भगवान श्री कृष्ण, अर्जुन के साथ आदिनारायण के पास जाते हैं। श्लोक ४८ से ५२ तक उनके द्वारा भिन्न-भिन्न लोक-लोकान्तरों को इस प्रकार पार करने का वर्णन किया गया है।

सात समुद्रों को पार करके वे घोर अन्धकार में प्रवेश किये। इसके पश्चात् वे सुदर्शन चक्र के ज्योतिर्मय तेज से घने अन्धकार को पार किये। उस अन्धकार के बाद उन्होंने अनन्त ज्योति को देखा, जिसे देखकर अर्जुन की आँखें चौंधिया गईं। इसके पश्चात् उन्हें एक अनन्त जलराशि का दृश्य दिखाई दिया, जिसमें एक बहुत ही प्रकाशमान महल जगमगा रहा था। जिसमें हीरों के हजारों-हजारों थम्भे जगमगा रहे थे। इस सम्बन्ध में श्लोक ५३ में कहा गया है-

तत्राद्भुतं वै भवनं द्युतिमतम,
भ्राजन्मणिस्तम्भसहस्त्रशोभितम्।। भा. १०/८९/५३

आगे के श्लोक ५५ और ५६ में दर्शाया गया है कि उस महल में शेषशायी नारायण विद्यमान थे।

ददर्श तद्भुगसुखासनं विभुं महानुभावं पुरुषोत्तमोतमम्।
भा. १०/८९/५५

इसका गुह्य अभिप्राय यह है कि जब सातों समुद्रों को पार कर लिया, तो पृथ्वी पर आठवें समुद्र का वर्णन ही नहीं है। आगे जिस घोर अन्धकार का वर्णन किया गया है, वह निराकार मण्डल का अन्धकार है, जिसे भगवान श्री कृष्ण के ज्ञान रूपी सुदर्शन चक्र ने दूर किया और उन्हें अखण्ड बेहद मण्डल में प्रवेश कराया, जहाँ अनन्त ज्योति है।

यह ज्योति अक्षर ब्रह्म के योगमाया के ब्रह्माण्ड की है।

इसे ही भागवत श्लोक ५२ में "परं परं ज्योतिरनन्तपारम्" कहा गया है। इस अनन्त ज्योति के अन्दर हजारों थम्भों वाले जिस हीरे के महल का वर्णन हुआ है, वह वस्तुतः अव्याकृत के महाकारण में स्थित सुमंगला पुरुष का वर्णन है। इन्हीं का व्यक्त स्वरूप प्रणव ब्रह्म और रोधिनी शक्ति है। यही प्रणव प्रतिबिम्बत होकर मोहसागर में आदिनारायण के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

इस सम्बन्ध में पुराण संहिता में कहा गया है–

तस्मिन्विमोहजलधावशेत पुरुषो महान।

तस्मादेव समुतस्थो भूत्वा नारायणः स्वयम्।।

पु. सं. २४/२८

उस मोह सागर में अपने मन रूप से उस महान पुरुष ने शयन किंया। इस प्रकार वह स्वय नारायण रूप में होकर विराजमान हुआ।

पंचावयवसंयुक्तः स एव प्रणवाभिधः। पु. सं. २४/१९

पाँच अवयवों से संयुक्त वही प्रणव नाम से कहा जाता है।

यह रहस्य तारतम ज्ञान से ही विदित होता है। वस्तुतः जैसा स्वरूप बिम्ब का होता है, वैसा ही प्रतिबिम्ब का होता है। प्रणव ब्रह्म, सुमंगला पुरुष का ही व्यक्त सरूप (स्थूल रूप) है, जिसका स्वाप्निक सरूप आदिनारायण है। मांडूक्य तथा कठोपनिषद आदि में "ओऽम् इति एतद् अक्षरं" कहा गया है। इस प्रकार जो स्वरूप बिम्ब (प्रणव ब्रह्म) का होगा, वैसा ही स्वरूप प्रतिबिम्ब (आदिनारायण) का होगा।

अण्डे नारायणो भूत्वा प्रविश्यापश्यदक्षरः।

पु. सं. २४/८४

मोहमयी अण्डे में अक्षर ब्रह्म के मन अव्याकृत ने प्रवेश

करके स्वयं को नारायण के रूप में हुआ देखा।

नारायणेन रूपेण द्रष्टा दृश्यं प्रपश्यति।

तथापि मनुते स्वस्मिन्पश्यामीति विमोहितः।।

पु. सं. २४/८५

(अव्याकृत) ब्रह्म नारायण रूप में द्रष्टा होकर इस दृश्यमान जगत् को देखता है। फिर भी वह मोहित हुआ यह मानता है कि मैं अपने को वास्तविक रूप में ही देख रहा हूँ।

तारतम ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण हरिजी व्यास जी इस रहस्य को नहीं समझ पाये थे। श्रीमद्भागवत् के उक्त घटनाक्रम में कहीं अक्षरब्रह्म का वर्णन है, तो कहीं आदिनारायण का। इसलिये वे भ्रमवश श्रीजी को कभी अक्षरब्रह्म (ॐ) का महल बताते थे, तो कभी आदिनारायण का।

धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने जब सारे रहस्यों को उजागर कर दिया, तो वे उनके चरणों में नतमस्तक हो गये।

जेता अंकूर इनका, तहाँ लों भई सोहबत।
फेर तिनसे जुदे पड़े, आए नवतनपुरी तित।।६४।।

अपने अंकुर के अनुकूल हरिजी व्यास ने श्रीजी के चरणों का सान्निध्य लाभ लिया। पुनः वहां से चलकर श्रीजी नवतनपुरी आये।

सम्वत सत्रह सै उनइसे, देस पर आया कुतुबखान।
उत इल्हाम हुआ, थी ब्रह्मसृष्टि की पहिचान।।६५।।

वि.सं. १७१९ में कुतुबखान ने पुनः जामनगर पर आक्रमण कर दिया। उस समय श्री मिहिरराज जी के

धाम हृदय में विराजमान अक्षरातीत श्री राज जी ने प्रेरणा दी कि वे तुरन्त जामनगर पहुँचकर सुन्दरसाथ की रक्षा करें।

कसाला उत साथ को, देखा उत बैठे।
तब दौड़े आये बिहारीजी पे, आये बातें करी ए।।६६।।

जूनागढ़ में बैठे–बैठे श्रीजी ने अपनी दिव्य दृष्टि से देख लिया था कि जामनगर के सुन्दरसाथ पर संकट आ रहा है। तब सुन्दरसाथ की रक्षा के लिये वे अतिशीघ्र चलकर नवतनपुरी में बिहारी जी के पास आये और उनसे जामनगर के राजा के मंत्री का कार्य संभालने के बारे में बातचीत की।

फेर बीसोतरे जाम सत्ता की, लई दीवानगीरी सब।

सारा कसाला सिर पर, खेंच लिया तब।।६७।।

बिहारी जी की सहमति से वि.सं. १७२० में श्रीजी ने जामनगर राज्य के मंत्री के सचिव का पद ग्रहण किया और सब सुन्दरसाथ का कष्ट अपने ऊपर ले लिया।

भावार्थ– समय पर कर न चुका पाने के कारण गुजरात के सेनानायक कुतुबखान ने जामनगर पर आक्रमण कर दिया। श्रीजी ने कुतुबखान को विश्वास दिलाया कि उन्हें एक वर्ष का समय दिया जाये, वे बाकी सारा कर चुकता कर देंगे। लेकिन यहाँ की जनता में रक्तपात (खून-खराबा) न किया जाये।

इस घटना के पश्चात् कुतुबखान बिना रक्तपात किये अमदाबाद चला गया और श्रीजी ने राज्य कर्मचारियों की सहायता से जनता से कर वसूलना प्रारम्भ किया।

इहाँ से फेर गुजरात, गये बजीर संग जाम।

तहाँ से माया छोड़ के, लिया मोमिनों का सिर काम।।६८।।

जामनगर के वजीर के साथ चलकर श्रीजी पुनः अमदाबाद आये, ताकि कुतुबखान से कर के सम्बन्ध में बातचीत की जाये। इसके पश्चात् माया का काम छोड़कर ब्रह्मसृष्टियों की जागनी के कार्य में लग गये।

भावार्थ– जामनगर राज्य ने पिछले लगभग तीन वर्षों से कर चुकता नहीं किया था। उस समय जामनगर राज्य जैसे छोटे–छोटे हिन्दू राज्यों को मुगल सल्तनत के अधीन रहना पड़ता था और अपनी सुरक्षा के लिये उन्हे कर देना पड़ता था। श्रीजी जामनगर के मंत्री के साथ कर चुकता करने के लिये अमदाबाद गये। किन्तु वायदे के अनुसार पूरा कर चुकता नहीं किया जा सका। परिणामस्वरूप श्रीजी को कुतुबखान के कारागार में

बंधक के रूप में रहना पड़ा।

जब यह सूचना कान्हजी भाई को मिली, तो उन्होंने तेजकुँवरी जी से उनके वस्त्र माँग लिये और उन्हें पहनकर तेजकुँवरी जी के भेष में श्रीजी से मिलने पहुँच गये।

ब्रह्मसृष्टियों की जागनी की दुहाई देकर उन्होंने जबरन श्रीजी को अपने वस्त्र पहना दिये और स्वयं श्रीजी के वस्त्र धारण कर कारागार में बंद हो गये। श्रीजी , तेजकुँवरी जी के वस्त्र पहनकर अमदाबाद से निकले और दीपबन्दर पहुँच गये।

इधर श्रीजी को फाँसी की जो तिथि निश्चित थी, उस समय जब फाँसी के लिये कान्हजी भाई को ले जाया जाने लगा, तो लम्बे समय से कारागार में रहने से उनकी दाढ़ी बढ़ गई थी। धाम धनी की कृपा से जब उन्होंने

अपनी ओजस्वी वाणी में श्री राज जी के जोश से कियामत के दिन का वास्ता देकर अल्लाह के द्वारा होने वाली सजा की याद दिलायी, तो मुसलमान डर गये। काज़ी सहित सभी ने कान्हजी भाई को फाँसी के बन्धन से सम्मानपूर्वक मुक्त कर दिया और कान्हजी भाई अपने घर चले गये।

आए दीप गुजरात से, श्रीराज भये फारक।
माया पूरी दिखाय के, नजर करी तरफ हक।।६९।।

श्रीजी अमदाबाद से चलकर दीपबन्दर पहुँचे और उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब केवल जागनी कार्य करेंगे। इस प्रकार उन्होंने स्वयं को माया के कार्यों से अलग कर लिया। धाम धनी ने इस संसार में उन्हें माया अच्छी तरह से दिखायी। श्री मिहिरराज के अंदर

विराजमान श्री इन्द्रावती जी की आत्मा ने अब अपना सारा ध्यान राज जी की तरफ केन्द्रित कर लिया।

महामति कहे ब्रह्मसृष्टि को, माया में खेल की कही।
अब आगे की कहों, ए जो बीतक भई।।७०।।

श्री महामति जी परमधाम के सुन्दरसाथ से कहते हैं कि इस मायावी जगत में ब्रह्मसृष्टियों की जो जागनी लीला चल रही है, उसका वर्णन किया गया है। अब इसमें आगे जो घटनायें घटीं, उसके बारे में मैं बता रहा हूँ।

प्रकरण ।।१८।। चौपाई ।।८६२।।

तीन सृष्टि

इस प्रकरण में तीन प्रकार की सृष्टियों का वर्णन किया गया है।

तीन सृष्टि कही वेद ने, तीनों कही फिरकान।
और तीनों बानी साधों में, तामें सैयों पे पहिचान।।१।।

हिन्दू धर्मग्रन्थों में तीन प्रकार की सृष्टियों का वर्णन है– जीव सृष्टि, ईश्वरीय सृष्टि, ब्रह्मसृष्टि। कतेब परंपरा में भी तीन सृष्टियों का वर्णन है– आम, खास, खासल खास।

इसी प्रकार संतों की वाणी में भी तीन सृष्टियों का वर्णन है– बगुला, हंस, परमहंस। इस रहस्य का वास्तविक बोध केवल ब्रह्मसृष्टियों को ही होता है।

द्रष्टव्य– "फिरकान" की जगह यदि "फुरकान" हो, तो ज्यादा उचित है।

एक जीव ईस्वरी ब्रह्म की, तीनों के जुदे जुदे मुकाम।
आम खास खासल खास, कही बीच निजधाम।।२।।

इन तीनों सृष्टियों के अलग-अलग धाम है। जीव सृष्टि (आम) का घर वैकुण्ठ (मलकूत) होता है। ईश्वरीय सृष्टि (खास) का घर बेहद मण्डल (जबरूत) होता है, ब्रह्मसृष्टि (खासल खास) का मूल घर स्वलीला अद्वैत परमधाम (लाहूत) होता है।

सृष्ट ब्रह्म की साथ है, जाए महमद दिया पैगाम।
ल्याए कुंजी ईसा रूहअल्ला, दई सो हाथ ईमाम।।३।।

ब्रह्मसृष्टि हमेशा परब्रह्म के अंग-संग रहती हैं। मुहम्मद (सल्ल.) इनके लिये ही कुरआन के रूप में अल्लाह तआला का दिया हुआ पैगाम लेकर आये। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी वेद-कतेब के रहस्यों को उजागर करने के

लिये तारतम ज्ञान रूपी कुंजी लेकर आये और उन्होंने आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज़मां श्री प्राणनाथ जी के हाथों में सौंप दी।

करे विजयाभिनन्दन जाहिर, बुध जाग्रत अवतार।
कलंक मेट नेहेकलंक करे, अखण्ड किया संसार।।४।।

श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप श्री प्राणनाथ जी, जो जाग्रत बुद्धि के ज्ञान के साक्षात् स्वरूप हैं, ने इस संसार का कलंक मिटाकर उसे निष्कलंक कर दिया और इसे अखण्ड मुक्ति प्रदान की।

भावार्थ– आज तक इस संसार में किसी को भी अक्षरातीत परब्रह्म के धाम, स्वरूप, तथा लीला के बारे में नहीं पता था। इसे ही इस संसार का कलंक कहा गया है। तारतम वाणी के अवतरण से सबको परब्रह्म के धाम,

स्वरूप, तथा लीला का बोध हो गया, एवं धर्मग्रन्थों के रहस्य खुल जाने से इस बात की साक्षी भी मिली। इसे ही कलंक मिटाकर निष्कलंक करना कहा गया है।

एक साहिब वेद कतेब में, सब तिनकी लिखी मजकूर।
जो साहिदी नेक हुकमें, जाहिर किया नूर।।५।।

वेद और कतेब में एक ही परब्रह्म की पहचान अलग-अलग भाषाओं में लिखी हुई है। श्री राज जी के आदेश से तारतम ज्ञान के उजाले में सभी धर्मग्रन्थों की मूलभूत साक्षियों का एकीकरण हो गया है, जिससे सबको उस परम सत्य की पहचान हो गई है।

हकें भेजा मोमिनों पर, पैगम्बर जो आखरी।
सो लिखी हकीकत कुरान में, ब्रह्मसृष्टि दिलधरी।।६।।

श्री राज जी (अल्लाह तआला) ने ब्रह्मसृष्टियों के लिये आखिरी पैगम्बर (संदेशवाहक) के रूप में मुहम्मद (सल्ल.) को भेजा। यह सारी वास्तविकता कुरआन में यथार्थ रूप से लिखी हुई है, जिसको ब्रह्मसृष्टियों ने अपने दिल में बसा लिया है।

भावार्थ– मुहम्म्द साहिब का यह प्रसंग बातिनी रूप में श्री प्राणनाथ जी के लिये घटित होगा।

उनों आगूं लिया दिल में, आवें रूहें बीच इन्सान।
ए खेल किया इनों वास्ते, जाने इनको आवे ईमान।।७।।

मुहम्मद साहब ने अपने दिल में पहले से ही ले लिया था कि दसवीं सदी में परमधाम की आत्मायें अवतरित होंगी और वे मनुष्यों के दिल पर विराजमान होंगी। यह माया का खेल इनके लिये ही बनाया गया है। इनको एक

परब्रह्म अक्षरातीत (अल्लाह तआला) पर ईमान तभी आयेगा, जब ये कुरआन में वर्णित संकेतों को समझ जायेंगी।

महम्मद हक के नूर से, भई दुनियां महम्मद के नूर।
चाहे कायम तिन को करें, ईमान बका मजकूर।।८।।

अक्षर ब्रह्म श्री राज जी के नूर अंग हैं और यह सारा जगत अक्षर ब्रह्म के आदेश से बना है। आखिरी मुहम्मद हकी सूरत श्री प्राणनाथ जी इस संसार में अपने तारतम ज्ञान के प्रकाश से, अखण्ड परमधाम पर विश्वास दिलाकर, किसी को भी मुक्ति दे सकते हैं।

भावार्थ– अरब में मुहम्मद साहब का जो स्वरूप आया, उसमें अक्षर की आत्मा थी। अक्षरब्रह्म, अक्षरातीत के नूर अंग हैं। इस चौपाई के दूसरे चरण में नूर का तात्पर्य

हुक्म (आदेश) होता है। क्योंकि दिल की इच्छा ही नूर कहलाती है, इस प्रकार हुक्म भी नूर है।

इस चौपाई में "मुहम्मद" शब्द का मुस्तफा के तन से कोई सम्बन्ध नहीं है, बल्कि उस तन में विराजमान अक्षर की आत्मा से है, क्योंकि मुस्तफा के जन्म से पहले दुनियां चली आ रही है। इसलिये मुहम्मद शब्द से तात्पर्य अक्षर की आत्मा से लिया जायेगा।

इस सम्बन्ध में हदीसों के ये उदाहरण देखने योग्य हैं–

"अना मिन् नूरि अल्लाह कुल्ल शैंअ मिन्नूरी" अर्थात् मैं अल्लाह के नूर से हूँ और तमाम दुनिया मेरे नूर से है।

"अव्वल मा खलकुल्लाह नूरी" अर्थात् दुनिया बनाने से पहले मेरा नूर बनाया गया।

पैगम्बर का माजजा, देवें सबों ईमान।

एक दीन दुनी कर, किये जाहिर सातों निसान।।९।।

श्री प्राणनाथ जी का सबसे बड़ा चमत्कार है, एक सच्चिदानन्द परब्रह्म के प्रति सबको अटूट विश्वास दिलाना। सारे संसार में एक सत्य धर्म की स्थापना करके, इन्होंने कियामत के सारे निशानों को स्पष्ट कर दिया है।

रूहअल्ला की आवसी, खोलने बका द्वार।

अन्त सदी दसमीय के, सब होय बारहीं कार गुजार।।१०।।

हदीसों में लिखा है कि दसवीं सदी के अंत में रूह अल्लाह (श्यामा जी) इस संसार में आयेंगे और अखण्ड परमधाम का दरवाजा खोल देंगे अर्थात् परमधाम का अलौकिक ज्ञान सुनायेंगे। बारहवीं सदी में ज्ञान के प्रकाश

होने का सारा कार्य हो जायेगा।

मिलावा रूहन का, कहे गाजियों मिसल सोइ।
होवे खिलवत खाना जाहिर, बका पहिचान सबों होइ।।११।।

परमधाम की ब्रह्मसृष्टियों को धर्म पर सर्वस्व समर्पित करने वालों का समूह कहा जाता है। तारतम ज्ञान के प्रकाश में सबको अखण्ड परमधाम की पहचान होगी और मूल मिलावे का ज्ञान संसार में फैल जायेगा, जिससे ब्रह्मसृष्टियों की जागनी होगी।

ईस्वरी सृष्ट फिरस्ते कहे, सो पहुँचे नूर मकान।
और सृष्ट जीव की आम जो, पावें आठों भिस्त निदान।।१२।।

ईश्वरीय सृष्टि को कतेब की भाषा में फरिश्ते कहा गया है। वे अक्षरधाम अर्थात् बेहद मण्डल में सत्स्वरूप की

दूसरी बहिश्त में जायेंगे, और जीव सृष्टि जिसको कतेब की परम्परा में आम खलक कहा जाता है, वह अपने ईमान के अनुसार आठों बहिश्तों में अखण्ड हो जायेंगे।

मोमिन अरस अजीम के, बैठे खेल देखत।

मायने खोल जाहिर किये, एही बखत क्यामत।।१३।।

परमधाम से आई हुई ब्रह्मसृष्टियों के मूल तन मूल मिलावे में विराजमान हैं और वहीं से हुक्म की दृष्टि से (राज जी के आदेश से) सुरता द्वारा इस खेल को देख रही हैं। जब श्री प्राणनाथ जी वेद–कतेब के सारे रहस्यों को उजागर कर देंगे, तो समझ लेना चाहिये कि कियामत का समय आ गया है।

एही साइत हजूर की, तहाँ बेर नहीं लगार।

चार घड़ी दिन पीछला, ए जाने परवरदिगार।।१४।।

यह समय, ब्रह्मसृष्टियों और अक्षरातीत के इस खेल में आते समय, वहाँ परमधाम में जब दोपहर बाद का चार घड़ी दिन बाकी था अर्थात् ४:३० बजे का समय था। उस समय इस खेल में परमधाम की आत्मायें अपने प्रियतम के साथ आईं, किन्तु वहां एक पल भी नहीं बीता है। इस रहस्य को केवल अक्षरातीत धाम धनी ही जानते हैं।

महामति कहे ऐ मोमिनों, ए बेवरा तीनों का कह्या तुम।

कहूँ आगे और मजल की, जो दिखाया खेल हुकम।।१५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! तीनों सृष्टियों का विवरण मैंने आपसे बताया। धाम धनी ने अपने

आदेश से जो माया का खेल दिखाया है, उसमें ब्रह्मसृष्टियों की जागनी से सम्बन्धित होने वाली लीला में और जो भी घटनायें हुईं, उसका मैं वर्णन कर रहा हूँ।

प्रकरण ।।१९।। चौपाई ।।८७७।।

दीव बंदर की बीतक

इस प्रकरण में दीव बन्दर में जो घटनायें हुईं, उसका वर्णन किया गया है।

फेर कहों श्री जीय की, जो बीतक बीच इसलाम।
लड़ाई करी दज्जाल सों, सो कहों मुकाम और ठाम।।१।।

अब मैं पुनः श्रीजी के द्वारा शाश्वत् शान्ति की रसधारा प्रवाहित करने वाली जागनी लीला की उन मोहक घटनाओं का वर्णन करता हूँ, जिसमे उन्होंने माया से युद्ध किया। वे घटनायें कहाँ और कब हुईं, उसके विषय में बताता हूँ?

जब जाम वजीर बिदा दई, देख कसाला दुःख।
हुआ हुकम हक सुभान का, अब ए पावें सुख।।२।।

हब्से में वाणी अवतरण के पश्चात् जब जामनगर के मंत्री को अपनी भूल का एहसास हुआ, तो उसने श्रीजी को बहुत ही सम्मानपूर्वक विदा किया। इसके पश्चात् पुनः अमदाबाद के कारागार में कुछ कष्ट देखना पड़ा। अब मूल स्वरूप श्री राज जी का आदेश हुआ कि श्री इन्द्रावती जी की आत्मा को सुख का अनुभव कराना है।

तब गुजरात से आये दीपमें, भाई साथी जयराम के घर।
उठ मिले आनन्द सो, बड़ो सुख पायो देखकर।।३।।

जब अमदाबाद (गुजरात) से श्रीजी दीव बंदर में आये, तो सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में रहने वाले सुन्दरसाथ जयराम भाई के घर पहुँचे। श्रीजी को देखकर जयराम जी बहुत ही प्रफुल्लित हुये और उठकर आनन्दपूर्वक उनसे गले मिले।

लगा खेम कुसल पूछने, कहाँ से पधारे श्री मेहेराज।

हमसों कहो हकीकत, इत पधारे कौन काज।।४।।

जयराम भाई, श्रीजी से कुशल क्षेम पूछने लगे कि अचानक इस समय कहाँ से आना हुआ। आप हमसे सारी वास्तविकता बताइये कि यहाँ आने का क्या प्रयोजन है?

भावार्थ– बीतक की इस चौपाई में वर्णित "कुशल क्षेम" और गीता में कथित "योग क्षेम" का तात्पर्य एक ही होता है। दोनों का तात्पर्य मंगलमयी स्थिति से होता है।

इस प्रसंग में जयराम भाई श्रीजी से यह जानना चाहते थे कि सब मंगलमय है न? साधारण बोलचाल की भाषा में इसे "हाल–चाल सब ठीक है न" या "सब ठीक–ठाक है न" कहा जाता है।

तब जवाब दिया श्री जी नें, हम आए तुम्हारे काज।

हमको भेजा हक नें, हुकम दिया श्रीराज।।५।।

तब श्रीजी ने उत्तर दिया कि जयराम भाई! मैं तो तुम्हारे लिये आया हूँ, ताकि तुम्हें सावचेत कर सकूँ। यह धाम धनी का मेरे लिये आदेश है कि।

ढूंढ़ काढ़ो साथ को, माया करो खबर।

याद करो निजधाम को, चलो राह इसलाम पर।।६।।

सुन्दरसाथ को खोज-खोजकर माया से निकालूँ। माया से सचेत कर धनी के चरणों से जोड़ूँ। हे जयराम भाई! अब आप अपने मूल घर को याद कीजिए और निजानन्द की शाश्वत राह पर चलिये।

हुई चरचा इन समें, श्रीदेवचन्द्रजी सों लेके।

साथ की खबर पूछते, एते दिन दीपे में रहे ये।।७।।

इस समय श्रीजी और जयराम भाई के बीच में विस्तृत चर्चा हुई। श्रीजी ने उन्हें श्री देवचन्द्र जी के धामगमन से लेकर सुन्दरसाथ के अब तक के समाचार से अवगत कराया और कहा कि तुम्हें इतने दिन दीपबन्दर में रहते हुये हो गये।

कौन साथ तुम काढ़िया, किन को राह बताई।

तुम साथी श्री देवचन्द्र जी को, नूर रोसनी न दिल में ल्याई।।८।।

यह बताओ कि तुमने किस सुन्दरसाथ को माया से निकालकर परमधाम की राह बताई है। तुमने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से तारतम ज्ञान ग्रहण किया था, लेकिन तुमने अपने हृदय में तारतम ज्ञान को आत्मसात् नहीं

किया।

तुमको ऐसा ना चाहिए, कर बैठो एती अन्धेर।
श्री धाम धनी को देखके, तुमको सरम न आई फेर।।९।।

माया के घने अन्धकारों में इतना अधिक रहना तुम्हे शोभा नहीं देता। श्री देवचन्द्र जी के अंदर अपने धाम धनी की पहचान करके भी, तुम्हें जरा भी लज्जा नहीं आयी और माया में तुम उन्हें फिर भूले रहे।

एक पाती कबहूँ ना लिखी, के हमारो नातो श्री धाम।
श्रीदेवचन्द्र जी सफर किया, तुम कबहूँ न आये तिन ठाम।।१०।।

परमधाम के मूल सम्बन्ध से पहचान कर भी, तुमने उन्हें कभी एक पत्र तक नहीं लिखा। जब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी का धामगमन हुआ, उस समय से लेकर

आज तक तुम कभी नवतनपुरी भी नहीं आये।

बैठे बिहारी जी चाकले, ना गये तुम तित।
कबहूँ खबर न पूछो तिनकी, क्या हाल तुम्हारा बखत।।११।।

जब बिहारी जी गादी पर विराजमान हुये, उस समय भी तुम उस कार्यक्रम में नहीं आये। उनसे कभी यह समाचार भी नहीं पूछा कि इस समय आप किस स्थिति में रह रहे हैं?

मिल गये माया मिने, जाने अनादि के इत।
हम कबहूँ न जायेंगे, श्री धाम लीला मों तित।।१२।।

तुम तो माया में ऐसे मिल गये हो, जैसे लगता है कि तुम अनादि काल से यहीं के रहने वाले हो। लगता है तुमने यह मान लिया है कि हमें कभी परमधाम जाना नहीं है

और न वहाँ की लीला से हमारा कोई नाता है।

तुम को ऐसा न चाहिऐ, देखो अपनी बुनियाद।
तुम श्री देवचन्द्रजी के साथी, गिरोह पैगम्बर आद।।१३।।

हे जयराम भाई! तुम्हें माया में इस तरह से नहीं फँसना चाहिये। तुम अपने मूल स्वरूप को देखो, तुम मूल मिलावे में धनी के चरणों में बैठे हो। तुम सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में तारतम ज्ञान ग्रहण करके सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुये थे।

तिन सामें तुम ना देखया, के खाविन्द हमारा कित।
हम आये माया देखने, क्यों ऐसा भूलो इत।।१४।।

सद्गुरु महाराज के चरणों में रहकर भी तुमने यह विचार नहीं किया कि हमारा प्रियतम कहाँ है? जब हम माया

का खेल देखने के लिये आये हैं, तो क्या इसमें स्वयं को, धनी को तथा अपने मूल घर को इस तरह से भूल जाना उचित है?

यों वचन खण्डनी के, श्री जी कहे बेसुमार।
कै दृष्टान्त देके किया, जीवता खबरदार।।१५।।

इस प्रकार खण्डनी की बहुत सी बातें श्रीजी ने जयराम भाई को सुनाईं। अनेक प्रकार के दृष्टान्त देकर उन्हें माया से जगाया और जागनी के प्रति सावधान कर दिया।

कब लों कांसा कूटेगा, कब लों हथौड़ा एहरन।
कब लों घर में बैठेगा, आई सिर पर क्यामत रोसन।।१६।।

हे जयराम भाई! कब तक तुम अपने हथौड़े से एहरण पर कूट-कूट कर कांसे से बर्तन बनाते रहोगे? परमधाम

के अलौकिक ज्ञान का प्रकाश प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है। ऐसी स्थिति में कब तक इस माया के घर में बैठे रहोगे?

भावार्थ– जागनी लीला के प्रथम चरण में परमधाम के अलौकिक ज्ञान का प्रकाश फैलने से माया का अन्धकार दूर होने लगता है। इसे कियामत का सुगरा दौर कहते हैं।

एह मुरदार चौदह तबक, सो अब होत है नास।

कछु सरम न आई हक की, तुम कहावत गिरोह खास।।१७।।

चौदह लोकों का यह स्वाप्निक ब्रह्माण्ड महाप्रलय में लय हो जाने वाला है। तुम परमधाम की ब्रह्मसृष्टि कहलाते हो, लेकिन तुम्हें इस बात की लज्जा नहीं आती कि तुमने राज जी से मुख मोड़ रखा है।

बहुत दिन मुरदार में, तुम किया गुजरान।
अब केते दिन जीओगे, कछु घर की करो पहिचान।।१८।।

इस झूठी दुनिया में रहते-रहते तुम्हारे जीवन का एक लम्बा समय बीत चुका है। अब तुम्ही सोचो कि तुम्हे इस दुनिया में कितने दिन जिंदा रहना है? अपने परमधाम की कुछ तो पहचान करो।

कोई न अघाया इनमें, चचोड़त ठौर मुरदार।
श्री धाम धनी सुख छोड़के, क्या हमेसा होओगे ख्वार।।१९।।

आज तक इस झूठी दुनिया में किसी को भी तृप्ति नहीं मिली है। जिस प्रकार सूखी हड्डी को चूसने वाला कुत्ता अपने ही दाढ़ों से निकलने वाले अपने खून को पीकर सोचता है कि मैं हड्डी का खून पी रहा हूँ, उसी तरह तुम इस नश्वर संसार के मोह एवं सुखों के झूठे बन्धनों में

फँसकर अपने को सुखी मान रहे हो, यही तुम्हारी भूल है। श्री राज जी के अखण्ड सुखों को छोड़कर मृगतृष्णा के समान दिखाई देने वाले जिन लौकिक सुखों के पीछे तुम भाग रहे हो, इसके परिणामस्वरूप तुम्हें तिरस्कृत होना पड़ता है। यह सिलसिला कब तक चलता रहेगा?

भावार्थ– उम्र बढ़ने के साथ–साथ विषयों को भोगने वाली शक्ति तो क्षीण होती जाती है, लेकिन आकांक्षा पूर्ववत् बनी रहती है। ज्ञान, वैराग्य और विवेक के अभाव में यह आकांक्षा और बढ़ती जाती है। परिणामस्वरूप, संसार में अपने ही सगे–सम्बन्धियों से तिरस्कृत होना पड़ता है। श्रीजी का संकेत इसी तरफ है कि जयराम भाई, कब तक तुम यूँ ही अपमान का घूँट पीते रहोगे?

एह इन्द्रियन के स्वाद को, लगा सब संसार।

ए मोह के जीव रहेंगे मोह में, तुम को तो चाहिए विचार।।२०।।

संसार के सारे प्राणी तो अपनी इन्द्रियों के विषय भोगों में फँसे हुये हैं। बेचारे ये मायावी जीव तो माया में ही फँसे रहेंगे, लेकिन तुम ब्रह्मसृष्टि हो। तुम्हें इस बात पर विचार करना चाहिये कि मेरी राह इनसे अलग है।

तुम से माया जीव से, एता भी न होय फरक।

श्री धाम धनी की जिकर में, हुआ चाहिये गरक।।२१।।

यदि तुममें और माया के जीवों में इतना भी अन्तर नहीं हो सकता, तो यह बहुत ही खेद की बात है। तुम्हें तो रात-दिन अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत की चर्चा में डूबे रहना चाहिये था।

सो बोय न आवत तुममें, ना चरचा चितवन।

ना साथ मिलावा सैंयन, ना दिल को किया रोसन।।२२।।

लेकिन तुम्हारे अन्दर तो उसकी सुगन्धि भी नहीं है। न तो तुम चर्चा करते हो, और न परमधाम तथा युगल स्वरूप की चितवनि करते हो। न तो तुम सुन्दरसाथ को एकत्रित कर आत्म-जाग्रति का कोई कार्यक्रम करते हो, तथा न अपने दिल को धनी के प्रेम से भरने का प्रयास करते हो।

ए बचन सुनके रोइया, भूल मानी अपनी सब।

मुझसे कछु ना हुआ, करो धिक्कार आपको तब।।२३।।

श्रीजी के इन दिव्य वचनों को सुनकर जयराम भाई फूट-फूटकर रोने लगे और उन्होंने अपनी सारी भूल स्वीकार की। उन्होंने स्वयं को धिक्कारा और स्पष्ट कह

दिया कि अपनी आत्म–जाग्रति के लिये मैंने कुछ नहीं किया।

हम को इन माया मिनें, याद न आया धाम।
हम भूले तहकीक, आड़े माया के काम।।२४।।

इस मायावी जगत में निश्चित रूप से हमें अपने धाम की याद नहीं रही थी। माया के कामों में फँसकर हमारी स्थिति ऐसी हो गई कि हम अपने प्राणवल्लभ अक्षरातीत को भुला बैठे।

ना जानी हम निसबत, ना कछु भई पहिचान।
ना तो हम ऐसा क्यों करें, जो कछु बोए होती ईमान।।२५।।

न तो हमने धनी से अपने मूल सम्बन्ध को जाना और न ही उनके स्वरूप की पहचान की। यदि हमें अपने धाम

धनी के प्रति कुछ भी ईमान होता, तो हम इतनी बड़ी भूल क्यों करते?

अब मेहर देखी श्रीराज की, जो भेज दिये तुम को।
हमारी तरफ न देखिया, हम तो डूबे संसार मों।।२६।।

यह तो श्री राज जी की अपार मेहर है, जो उन्होंने मेरी सुधि लेने के लिये आपको यहाँ भेज दिया। हम तो संसार के मोह जाल में डूबे पड़े थे, किन्तु धाम धनी ने हमारे अवगुणों को न देखते हुये, आपके रूप में हमारी सुधि ली।

इन भाँत की चरचा भई, सब मिला घर का साथ।
सब आये चरनों लगे, जो धनीयें पकड़े हाथ।।२७।।

इस तरह श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा का अलौकिक

रस प्रवाहित होता रहा, जिसका रसास्वादन करने के लिये घर के सभी सुन्दरसाथ आकर बैठ गये। सभी ने आ-आकर श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया। ऐसा तभी होता है जब धाम धनी माया में हमारा हाथ पकड़ते हैं, अर्थात् धनी की असीम कृपा से ही कोई वाणी चर्चा सुनकर धनी से प्रेम कर सकता है, अन्यथा माया तो हर पल उसे फंसाने के लिये अपना जाल फैलाये रखती है।

आदर रसोई का किया, नहवाए श्री मेहेराज।
बैठाये रसोई मिने, अरुगाये श्री राज।।२८।।

जयराम भाई ने श्रीजी के लिये बहुत प्रेमपूर्वक भोजन तैयार करवाया। इसके पश्चात् उन्होंने श्रीजी को स्नान कराया और उन्हें धाम धनी का साक्षात् स्वरूप मानकर भोजनालय में बैठाकर अत्यधिक प्रीति से भोजन कराया।

विशेष– श्रीजी के मुखारविन्द की अलौकिक चर्चा ने जयराम भाई के हृदय को झकझोर दिया। उन्होंने स्पष्ट रूप से पहचान कर ली कि मिहिरराज के तन में सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी स्वयं चर्चा कर रहे हैं।

प्रसाद सबों ने लेय के, करी पौढ़ने की अरज।
हम ना आये पौढ़ने, हमारी तो और गरज।।२९।।

श्रीजी के भोजन के उपरान्त परिवार के अन्य सदस्यों ने भी भोजन किया और श्रीजी से आराम करने के लिये (लेटने की) प्रार्थना की। किन्तु श्रीजी ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि मैं यहाँ आराम करने के लिये नहीं आया हूँ। मेरे आने का उद्देश्य तो कुछ और है।

तुम्हें माया से काढ़ने, हम आये इन काज।

तुम छोड़ो मुरदार को, याद करो श्री राज।।३०।।

मेरे आने का एकमात्र उद्देश्य है, तुम्हें माया से निकालना। इसलिये अब तुम इस झूठी दुनिया को छोड़ो और अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को याद करो।

फेर बैठे चरचा करने, ब्रज को जो बरनन।

देखो पगले आपनें, क्यों कर भरे सैंयन।।३१।।

आप श्रीजी पुनः व्रज लीला के माध्यम से चर्चा करने लगे। श्रीजी ने कहा– देखो जयराम भाई! व्रज में किस तरह सभी ने धनी के प्रति प्रेम का मार्ग अपनाया था।

कैसा प्रेम तुम से, ब्रज में करते श्री राज।
कौन भाँत तुम चलते, करते माया का काज।।३२।।

इस बात को याद करो कि धाम धनी व्रज में तुमसे किस तरह प्रेम करते थे और आप सब सुन्दरसाथ माया के कार्यों में रहते हुए भी किस तरह से उनके प्रेम में डूबे रहते थे।

कुटुम्ब परिवार सब थें, रहते चित्त उदास।
तुम को एक श्री राज बिना, और ना रहती आस।।३३।।

यद्यपि सभी ब्रह्मसृष्टियां अपने परिवार में ही रहती थीं, फिर भी उनका चित्त माया में जरा भी नहीं लगता था (माया से उदास रहती थीं)। तुम्हें श्री राज जी के अतिरिक्त किसी और की आशा–चाहना ही नहीं रहती थी।

बैठे थे घर अपने, चित्त श्री राज के चरण।

हिरे फिरे टहल में, रहे प्रेमैं में मगन।।३४।।

वैसे तो सब सुन्दरसाथ अपने घरों में रह रहे थे, फिर भी उनका चित्त श्री राज जी में ही रहता था। घर के सारे काम करते हुये भी वे अपने धनी के प्रेम में मग्न रहती थीं।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाइयों में व्रज लीला करने वाले स्वरूप को कहने का आशय यह है कि उस (श्री कृष्ण के) तन में श्री राज जी का ही आवेश लीला कर रहा था। आवेश जहां भी लीला करेगा, उसे राज जी का स्वरूप माना जायेगा, चाहे वह व्रज हो, रास हो, या जागनी का ब्रह्माण्ड। इस सम्बन्ध में प्रकाश वाणी के ये कथन देखने योग्य हैं–

तो वचन तुमको कहे जाएं, जो तुम धाम की लीला मांहे।

बृजवालो पिउ सो एह, वचन आपन को केहेत है जेह।।

रास मिने खेलाए जिने, प्रकट लीला करी है तिने।
धनी धाम के केहेलाये, ए जो साथ को बुलावन आये।।
प्रकाश हि. २९/६१,६२

इस प्रकार श्री कृष्ण, श्री देवचन्द्र जी, एवं श्री मिहिरराज जी के तन में एक श्री राज जी के आवेश स्वरूप ने ही लीला की। किन्तु वर्तमान समय में एकमात्र श्री मिहिरराज जी के ही तन में श्री राज जी का आवेश लीला कर रहा है। इसलिये केवल इसी स्वरूप को अक्षरातीत कहलाने की शोभा है, अन्य किसी को नहीं।

श्री कृष्ण जी के तन से होने वाली अक्षरातीत श्री राज जी की लीलायें तो सबलिक के कारण और महाकारण में व्रज और रास की लीलाओं के रूप में अखण्ड हैं।

इस समय तो सनंध और किरन्तन के इन कथनों को आत्मसात् करना होगा–

कोई दूजा मरद न कहावहीं, एक मेंहेदी पाक पूरन।
खेलसी रास मिल जागनी, छत्तीस हजार सैंयन।।

सनंध ४२/१६

अर्थात् व्रज, रास में जिसने छत्तीस हजार सखियों के साथ लीला की थी, वही इस जागनी ब्रह्माण्ड में छत्तीस हजार सखियों के साथ प्राणनाथ जी के स्वरूप में लीला कर रहा है। इस प्रकार इस जागनी लीला में श्री प्राणनाथ जी (श्रीजी) के अतिरिक्त कोई दूसरा अक्षरातीत नहीं कहला सकता।

प्रगटे पूरन ब्रह्म सकल में, ब्रह्म सृष्टि सिरदार।
ईश्वरी सृष्टि और जीव की, सब आए करो दीदार।।

किरन्तन ५७/२

अर्थात् इस समय तीनों सृष्टियों के प्रीतम अक्षरातीत पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द श्री प्राणनाथ जी प्रकट हो चुके हैं।

सभी उनके चरणों में आकर उनका दर्शन लाभ प्राप्त करें।

उपरोक्त विवेचना यही दर्शाती है कि श्री कृष्ण जी, श्री देवचन्द्र जी, श्री मिहिरराज जी, ये शरीरों के नाम हैं और इन तनों में लीला करने वाले एक ही अक्षरातीत (श्री राज, श्री प्राणनाथ, श्रीजी) हैं।

कोई ना लगता तुमको, इन माया का नेम।
रहों सदा छके जोस में, आठों जाम इन प्रेम।।३५।।

आप सब सुन्दरसाथ को व्रज में माया का कोई भी बन्धन मोह में नहीं डाल पाता था और सभी आठों प्रहर अपने प्रियतम के प्रेम के जोश में डूबे रहते थे और आनन्द से तृप्त रहते थे।

तो फेर आए जब रास में, किया गौपद वच्छ संसार।

नजरों कछु न आइया, आड़े परवरदिगार।।३६।।

व्रज से रास में जाते समय तुम्हें यह संसार इतना छोटा लगा, जैसे बछड़े के खुर से बने हुये गड्ढे में रखा हुआ अल्पमात्रा वाला जल। धनी की राह में तुमने संसार को देखा ही नहीं और पल भर में योगमाया में प्रवेश कर लिया।

भावार्थ– यह भवसागर अथाह कहा जाता है, जिसको पार करने में बड़े–बड़े ऋषि, मुनि, योगी, यति भी असफल रह जाते हैं। व्रज की गोपियों में परमधाम की आत्मायें विराजमान थीं। वे धनी की प्रेम भरी बाँसुरी सुनकर इतनी भाव–विह्वल हो गईं कि उन्हें संसार दिखाई ही नहीं दिया और पल–भर में उन्होंने तन छोड़ दिया।

बछड़े का खुर बहुत छोटा होता है और उसमें पानी रख देने पर यदि उसकी तुलना अथाह भवसागर से की जाये, तो उस गड्ढे को पार करने में जितना समय और परिश्रम लगता है, उससे भी कम समय में गोपियों ने संसार को छोड़कर योगमाया में प्रवेश कर लिया था। यह उपलब्धि मात्र प्रेम के बल पर ही संभव है। इसे ही गौपद्वछ संसार को त्यागना कहा है।

क्योंकर जोगमाया मिने, बदले तुम आकार।
जोगमाया ने बीच में, नये क्यों कराये सिनगार।।३७।।

जयराम भाई! उस समय को तुम याद करो, जब तुम्हारी आत्मा व्रज में थी, और तुमने धनी के विरह में अपने पंचभौतिक तन का त्याग किया, तथा योगमाया का त्रिगुणातीत तन धारण किया। केवल ब्रह्म की

आह्लादिनी शक्ति आनन्द योगमाया ने किस प्रकार तुम्हें अति सुन्दर नया श्रृंगार कराया था।

तुम क्यों उथले किये राजसो, साम सामें बचन।
क्यों कर तुम को राज नें, दिखाय वृन्दावन।।३८।।

तुमने किस प्रकार अपने धाम धनी से उलाहने के वचनों का सामना किया (उत्तर दिया)। धाम धनी ने किस प्रकार अति प्रीतिपूर्वक तुम्हें नित्य वृन्दावन की शोभा दिखाई।

क्यों कर तित खेले तुम, मिलके ब्रज का साथ।
क्योंकर राज रमे तुमसों, क्यों खेले लेके बाथ।।३९।।

उस मधुर घड़ी को याद करो जब व्रज की सभी सखियों ने श्री राज जी के साथ रास की रामतें खेलीं और धाम

धनी ने आलिंगनबद्ध होकर तुमसे तरह–तरह की प्रेममयी लीलायें की।

क्योंकर तुम सुख में, होय गए मगन।
क्यों अन्तरध्यान होय के, विरह की दई अगिन।।४०।।

किस प्रकार तुम सभी रास लीला के अपार आनन्द में डूब गये। इसलिये धाम धनी ने तुम्हें वास्तविकता का बोध कराने के लिये, अन्तर्धान होकर, विरह की अग्नि में जलाया।

भावार्थ– रास में अन्तर्धान होने का प्रमुख कारण यह था कि अक्षर ब्रह्म को ऐसा लगने लगा था कि मैं परमधाम में ही लीला कर रहा हूँ। इस सम्बन्ध में प्रगटवाणी के ये कथन अवलोकनीय हैं–

फेर मूल सरूपें देख्या तित, ए दोऊ मगन हुए खेलत।
जब जोस लियो खेंचकर, तब चित्त चौंक भई अछर।।
प्रकास हि. ३७/४१

इस प्रकार इस अन्तर्धान लीला में अक्षर की आत्मा को बोध हो गया कि परमधाम की जिस प्रेममयी लीला को उन्होंने देखना चाहा था, वही लीला देख रहे हैं, और वह लीला परमधाम में नहीं बल्कि उनकी योगमाया के ब्रह्माण्ड में ही हो रही है।

इसके अतिरिक्त सखियों को भी विरह का रस देकर श्री राज जी परमधाम की पहचान कराना चाहते थे।

महामति कहे ए साथ जी, ए दीप की बीतक।
अजूं और बहुत है, सो कहों ग्रहे माफक।।४१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! यह दीप

बन्दर में होने वाली जागनी लीला का वृत्तान्त है। इस लीला का प्रकाश अभी और बहुत है, किन्तु मेरी बुद्धि जितना ग्रहण कर पा रही है, उतना ही मैं वर्णन कर रहा हूँ।

प्रकरण ।।२०।। चौपाई ।।९१८।।

दीव बंदर में उद्बोध

फेर कहे सुकन जयराम को, दीप में श्रीजीयें जब।

रास लीला याद करते, पहिले कह्या सनमन्ध को सबब।।१।।

दीव बन्दर में जब श्रीजी ने जयराम भाई को पुनः रास लीला का वर्णन सुनाया, तो उसके पहले अन्तर्धान से पूर्व प्रसंग तथा मूल कारण पर प्रकाश डाला।

फेर तुमही प्रगटे क्योंकर, क्योंकर भाना सोक।

फेर राजसों मिल के, करने लगे जोक।।२।।

पुनः किस प्रकार तुम्हारे बीच में राज जी प्रकट हो गये और सबका शोक समाप्त हो गया। पुनः धाम धनी के साथ मिलकर सबने कैसी रास लीला की। इसे श्रीजी ने अच्छे रूप से वर्णित किया।

क्योंकर जमुना त्रट, लगे थे करन झीलन।

क्योंकर सिनगार करके, याद करी बातें मोमिन।।३।।

किस प्रकार जमुना जी के किनारे सभी ने धाम धनी के साथ झीलना किया और वहाँ पर किस प्रकार सबने श्रृंगार किया? हे ब्रह्ममुनियों! तुम उन बातों को याद करो।

क्यों कर तुम आसन किया, तापर बैठे श्री राज।

क्यों घेर बैठे श्री राजको, अरुगावन के काज।।४।।

किस प्रकार तुमने अपने उतारे हुये वस्त्रों का आसन बनाकर धाम धनी को उस पर बैठाया था और किस प्रकार श्री राज जी को भोजन कराने के लिये सभी उनको घेर कर बैठ गयी थीं।

फेर झीलना करके, बैठे आरोगन जब।

बिरहा ताप याद आइया, इत सवाल किये हैं तब।।५।।

झीलना करने के बाद जब श्री राज जी भोजन करने के लिये बैठे, उस समय अन्तर्धान लीला के विरह के कष्ट की याद आई। तब तुमने श्री राज जी से प्रश्न पूछा।

भावार्थ- सखियों का प्रश्न यह था कि हमने तो वृन्दावन का एक-एक कोना छान डाला था, लेकिन आप कहीं नहीं थे। आप कहाँ चले गये थे?

बातें क्योंकर तुम करी, बैठे हिरदे विरह बचन।

क्यों पूछे प्रस्न श्री राजसों, क्यों उत्तर दिया रोसन।।६।।

तुमने किस प्रकार धाम धनी से बातें की? तुम्हारे हृदय में किस प्रकार विरह की बातें याद आईं? धाम धनी श्री राज जी से तुमने कैसे प्रश्न पूछे और उन्होंने उनका क्या

उत्तर दिया?

भावार्थ– श्री राज जी ने उत्तर में कहा था कि सखियों! मैं तो तुमसे एक पल के लिये भी अलग नहीं था। हमारे और तुम्हारे बीच में एक पेड़ आ गया था। मैं तो वहीं पर था, लेकिन उस पल भर की जुदायगी को तुमने बहुत अधिक माना। इसे रास ग्रन्थ में इस प्रकार दर्शाया गया है–

तमे कहो छो वनमां हुता, तो कां नव लीधी सार।
अमे वन वन हेठे विलखियो, त्यारे कां नव आव्या आधार।।
आपण रंग भर रमतां, वृख आड़ो आव्यो खिण एक।
तमे प्रेमे जाण्यूं कै जुग वीत्या, एम दीठां दुख अनेक।।
एक पल मांहे रे सखियो, कलप अनेक वितीत।
ए दुख मारो जीव जाणे, सखी प्रेमतणी ए रीत।।

रास ४७/२८,३६,३८

भई क्यों आज्ञा धाम चलने, क्यों रहे मनोरथ तुम।
क्योंकर भाग्या सुपना, क्यों तुम पर हुआ हुकम।।७।।

श्री राज जी ने तुम्हें परमधाम चलने की आज्ञा कैसे दी? महाप्रलय में इस स्वप्नमयी जगत के लय हो जाने के कारण तुम्हारी इच्छा अभी अधूरी रह गयी थी। तुम्हे पुनः खेल देखने की आज्ञा धनी ने कैसे दी? इन सभी विषयों पर श्रीजी ने चर्चा की।

भावार्थ– सखियों ने श्री राज जी से यह इच्छा प्रगट की कि धाम धनी! हमें वहाँ ले चलिये, जहाँ हम आपसे एक पल के लिये भी अलग न हों। धनी ने कहा कि वह तो परमधाम ही है, इसलिये तुम्हें परमधाम चलना पड़ेगा।

हवे वाला हूं एटलूं मांगू, खिण एक अलगां न थैए।
जिहां अमने विरह नहीं, चालो ते घर जैईए।।

रास ४७/४३

फेर इत सुपन भागा, जब मोमिन पहुँचे धाम।

चाह रही खेल देखने, होए पूरे न मनोरथ काम।।८।।

जब ब्रह्मसृष्टियाँ परमधाम पहुँची, तो उस समय यह स्वप्न का संसार अस्तित्व में नहीं था। सखियों के मन में अभी खेल देखने की इच्छा बाकी रह गयी थी, किन्तु संसार के ही न होने से वह पूर्ण न हो सकी थी।

अजूं मनोरथ रह गये, क्यों कहेगी रूहें विख्यात।

क्यों कर राजें दिखाइया, तुम्हारे दिल की बात।।९।।

श्रीजी ने चर्चा में इस प्रसंग को अच्छी तरह से स्पष्ट किया कि किस प्रकार जब तुम सखी रूप में थे, तो तुम्हारी इच्छा अधूरी रह गयी थी। धाम धनी ने तुम्हारे दिल की बात जान ली और माया का खेल दिखाने का पुनः निर्णय लिया, ताकि तुम्हें यह कहने का अवसर न

मिले कि हमारी इच्छा तो पूर्ण ही नहीं हुई।

तिस वास्ते इण्ड तीसरा, रचिया तुम कारन।
त्रिगुन खिलौने तुम्हारे, तुम हो खास सैंयन।।१०।।

इसलिये तुम्हारी इच्छा पूरी करने के लिये जागनी का यह तीसरा ब्रह्माण्ड बनाया गया है। तुम परमधाम की ब्रह्मसृष्टि हो। तुम्हारी लीला के लिये ही ब्रह्माण्ड सहित ये त्रिदेव आदि बनाये गये हैं। इस प्रकार ये तुम्हारी लीला के खिलौनों के समान हैं।

फेर खेल क्यों कर किया, याद करो ताए तुम।
क्यों रमाये तुम को दे, तुम्हारे साथ अपना हुकम।।११।।

अब तुम इस बात को याद करो कि यह माया का खेल पुनः क्यों बनाया गया? धाम धनी ने तुम्हारे साथ अपना

हुक्म देकर तुम्हें इस खेल में क्यों भेजा है?

अजूं तुम मोह अन्धेर में, जो एता दिया तुम्हें याद।
फेर फेर माया मोह में, याद न करो बुनियाद।।१२।।

इतनी याद दिलाने पर भी तुम अभी मोह के गहन अन्धकार में क्यों भटक रहे हो? तुम अपने मूल तन, मूल घर और अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को याद नहीं करते हो। इसी के परिणामस्वरूप तुम माया-मोह के अन्धकार में पड़े रहते हो।

इन चरचा के रस में, देख न जाते दिन।
सुनके सब मगन भये, दिल हुआ अति रोसन।।१३।।

श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा में इतना आनन्द था कि यह पता ही नहीं चल पाया कि सारा दिन

कैसे बीत गया? तारतम ज्ञान की अलौकिक वर्षा से सबके हृदय अत्यन्त प्रकाशमान हो उठे और सभी धनी के प्रेम-आनन्द में मग्न हो गये।

फेर चरचा करने लगे, भलो जो पायो सुख।
ता समें साथ की सिफत, कही न जाय या मुख।।१४।।

दूसरे दिन पुनः श्रीजी चर्चा करने लगे। उस दिव्य चर्चा का श्रवण करने वाले सुन्दरसाथ कितने भाग्यशाली थे, जो उन्होने उस सुख का रस लिया। श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा का श्रवण करने वाले इन भाग्यशाली सुन्दरसाथ की महिमा को इस नश्वर जगत के मुख से वर्णित नहीं किया जा सकता।

सम्वत सत्रह सै बाइसे, दीव पधारे श्री राज।

दोए बरस तहाँ रहे, सब पूरे मनोरथ काज।।१५।।

वि.सं. १७२२ में श्री प्राणनाथ जी दीव बन्दर पधारे। जागनी लीला में वह दो वर्षों तक वहाँ रहे और अपनी अमृतमयी चर्चा से सबकी इच्छाओं को पूर्ण कर दिया।

नित चरचा इन भाँत की, होवे दीव बन्दर में।

बड़ा सोर पड़ा सहर में, आवत सब सुनने।।१६।।

इस प्रकार की अलौकिक चर्चा दीव बन्दर में जयराम भाई के घर में प्रतिदिन हुआ करती थी। सारे नगर में श्रीजी के आगमन और चर्चा की ख्याति फैल गई। परिणामतः बहुत से लोग चर्चा सुनने आया करते थे।

अपने अंकूर माफक, हिस्सा लिया सबन।

पर आये केतेक साथ में, जो निसबती साथ सैंयन।।१७।।

अपने-अपने अंकुर के अनुकूल सबने चर्चा का रसपान किया। मात्र परमधाम की ब्रह्मात्माओं ने ही तारतम ज्ञान ग्रहण कर सुन्दरसाथ के समूह में शामिल होना स्वीकार किया।

जुध किया दज्जाल नें, बड़ा जो किया सोर।

हाथ पाँव अपने पटके, पर कछु न चला जोर।।१८।।

अज्ञानता के अन्धकार में भटकने वाले कथा वाचकों ने श्रीजी की चर्चा में बाधायें खड़ी करने की बहुत कोशिशें की। उन लोगों ने हर तरह से प्रयास किया, लेकिन उनका बस नहीं चला।

भावार्थ- धाम धनी के चरणों में जाने में जो बाधक

बनता है, वह दज्ञाल कहलाता है। श्रीजी की जागनी लीला में जिन लोगों ने किसी को भी धनी के चरणों में जाने से रोका है, उन्हें बीतक साहब में दज्ञाल कहा गया है।

धक्का दिया बड़ा साथ को, पर जाको डग्या न ईमान।
सोई खास गिरोह मोमिन, जाको हकें दई पूरी पहिचान।।१९।।

यद्यपि कथा वाचकों के विरोध ने सुन्दरसाथ के मनोबल को बहुत क्षति पहुँचायी, किन्तु श्रीजी पर जिनका अटूट विश्वास बना रहा, वही परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं। इन्हीं को धाम धनी ने अपनी पूरी पहचान दी है।

भावार्थ– "धक्का देना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है सामाजिक, मानसिक, शारीरिक या आर्थिक रूप से क्षति पहुँचाना। परमधाम की ब्रह्मसृष्टि सुन्दरसाथ का

इस बात पर पूरा विश्वास था कि श्रीजी साक्षात् अक्षरातीत हैं। इसलिये किसी की भी चुगली से उनका विश्वास डिगा नहीं।

अब कहों साथ आवन की, पहिले आये जीवा और जयराम।
रतनबाई घर में रहे, किया माया मिनें आराम।।२०।।

अब मैं दीव बन्दर में जाग्रत होने वाले सुन्दरसाथ के नाम बता रहा हूँ। सबसे पहले जीवा और जयराम भाई ने तारतम लिया। जयराम की पत्नी रतन बाई घर में रहकर श्रीजी की सेवा में ही सारा सुख मानती थीं।

चरचा सुनके आइया, रहे गणेस इन घर मिने।
यह आया साथमें, सुन राज की चरचा से।।२१।।

श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक चर्चा से गणेश जी भी

सुन्दरसाथ में सम्मिलित हुये। वे जयराम भाई के घर में ही रहा करते थे। श्रीजी की चर्चा का इनके ऊपर बहुत प्रभाव पड़ा था।

गंगादास आइया, इन चरचा के संग।

आय बैठा साथ में, कर कलयुग से जंग।।२२।।

धाम धनी श्री प्राणनाथ जी की चर्चा का ऐसा प्रभाव पड़ा कि गंगादास जी ने अज्ञानता के सारे बन्धनों को तोड़ दिया और तारतम ज्ञान ग्रहण कर सुन्दरसाथ में सम्मिलित हुये।

नरसिंह दास ग्वाल जी, ए आय बैठे बीच निजधाम।

जंग भया दज्जाल सों, ए डगा नहीं इन काम।।२३।।

नरसिंह दास और ग्वाल जी ने श्रीजी के चरणों में

आकर परमधाम की राह पकड़ी। जब माया से घोर युद्ध (कथा वाचकों से विरोध) चल रहा था, उस समय भी इनका मन नहीं डगमगाया।

गरीबदास साथ में, था पहिले का भोज भाई।
आवत नित राज पास, ए चरचा श्रवन देने को सुखदाई।।२४।।

एक सुन्दरसाथ का नाम भोज भाई था। वे प्रतिदिन धाम धनी के पास चर्चा सुनने के लिये आया करते थे। चर्चा सुनने में इनको बहुत आनन्द आता था। इन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और सुन्दरसाथ में सम्मिलित हुये। श्रीजी ने प्रेमपूर्वक इनका नाम गरीबदास रखा।

इत सरूप दे आई साथ में, वीरबाई और तेज।
और तेजबाई गेहेलबाई, इनों का सेवा में बड़ा हेज।।२५।।

दीव बन्दर में वीरबाई और तेजबाई भी सुन्दरसाथ के समूह में शामिल हुईं। तेजबाई और गेहेलबाई को श्रीजी की सेवा से बहुत अधिक लगाव था।

चम्पा और सुहासन, बेलबाई और बाल।

ए आई चारों साथ में, हुये राज अति खुसाल।।२६।।

चम्पा, सुभाषन, बेलबाई और बालबाई ये चारों सुन्दरसाथ में शामिल हुईं। श्रीजी इनके ऊपर बहुत प्रसन्न थे।

यों साथी साथ में, भये संगी चरचा के।

पचास साठ आये साथ में, आहार चरचा देवें ए।।२७।।

इस प्रकार सुन्दरसाथ के साथ बहुत से लोग चर्चा सुनने आया करते थे, जिनमें से पचास-साठ लोग

सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुये। श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली अलौकिक चर्चा ही इनके आत्मिक आहार का साधन थी।

बड़ो विलास जो होवहीं, सो क्यों कर कहों इन मुख।
लाहा लियो साथ में, सो कह्यो न जाए या सुख।।२८।।

दीव बन्दर की इस जागनी लीला में प्रतिदिन बहुत ही आनन्द होता था, जिसका वर्णन मैं इस मुख से कैसे कर सकता हूँ? जिन सुन्दरसाथ ने साक्षात् अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के चरणों में चर्चा का रसपान किया, उनके सुख का वर्णन हो पाना सम्भव नहीं है।

बड़ा सोर हुआ साथ में, कांप्या कुली दज्जाल।
ए आये मेरे दुस्मन, मोंको करे बेहाल।।२९।।

सुन्दरसाथ में तारतम ज्ञान की गर्जना से अज्ञान रूपी कलियुग काँपने लगा। वह सोचने लगा कि यह तो मेरे शत्रु हैं। ये मुझे अपनी शक्ति से व्याकुल कर देंगे।

भावार्थ– इस चौपाई में रूपक अलंकार के माध्यम से हिन्दू धर्मग्रन्थों में वर्णित कलियुग और कतेब ग्रन्थों में वर्णित दज्जाल को एक राक्षस के रूप में दर्शाया गया है, जिसका काँपना या व्याकुल होना अज्ञान के पतन का भाव दर्शाता है।

महामति कहे ए साथ जी, ए बीतक दीप बन्दर।
लड़ाई दज्जाल सों, पहुँचाई सख्ती मोमिनों पर।।३०।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! यह दीव बन्दर का वृत्तान्त वर्णित किया गया है। यहाँ पर जिन कथा वाचकों से विरोध हुआ, उन्होंने चुगलखोर के

माध्यम से सुन्दरसाथ के साथ कठोर व्यवहार किया।

प्रकरण ।।२१।। चौपाई ।।९४८।।

दीव में ब्रह्ममुनियों की रक्षा

फेर कहों दीप बन्दर की, जो लड़ाई दज्जाल बीतक।
तो मेहर में राखे मोमिन, करी सुभानल हक।।१।।

अब मैं दीव बन्दर के घटनाक्रम का वर्णन करता हूँ, जिसमें ईर्ष्यालु कथा-वाचकों का विरोध झेलना पड़ा था। यहाँ प्रियतम अक्षरातीत ने सभी ब्रह्मात्माओं को कृपा (मेहर) की छाँव तले रखा और उनका बाल भी बाँका नहीं होने दिया।

कथा बाँचने के आसन, सो हुये दुसमन।
श्रोता जो थे उनके, सो आय देने लगे श्रवन।।२।।

दीव बन्दर में जिन-जिन स्थानों पर रामायण तथा भागवत आदि ग्रन्थों की कथायें हुआ करती थीं , उन

स्थानों के कथा–वाचक श्रीजी के कट्टर विरोधी हो गये, क्योंकि उनके अधिकतर श्रोताओं ने उनकी कथाओं में जाना बंद कर दिया था और श्रीजी के मुखारबिन्द से होने वाली अमृतधारा का रसपान करने लगे थे।

सवाल पूछे जाए तिनको, हमको देओ जवाब।
इनको अर्थ आवे नहीं, रख न सके ताब।।३।।

जब वह श्रोता उन कथा–वाचकों से जाकर प्रश्न पूछते और कहते कि हमें इनका उत्तर दो, तो उन कथा–वाचकों के पास उन प्रश्नों का कोई भी उत्तर नहीं था, क्योंकि वे तारतम ज्ञान से रहित थे। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके मन में श्रीजी के प्रति क्रोध भड़क उठा।

तब चुगली को चित्त में लिया, कोई करे उपाए।

इनको इहाँ से काढ़िये, सब झगड़ा कीजे मिल धाए।।४।।

तब उन्होंने अपने मन में विचार किया कि किसी भी तरह से श्री प्राणनाथ जी के विरुद्ध शासन में चुगली कराई जाये। सब मिलकर कोई बहाना बनाकर इनसे झगड़ा करें और इनको इस नगर से बाहर निकालें।

द्रष्टव्य– धार्मिक विवादों के मूल में स्वार्थ और अहंकार छिपा होता है। यद्यपि विवाद का बहाना सिद्धान्तों का टकराव माना जाता है, किन्तु मूल कारण वर्चस्व की होड़, स्वार्थपरता और अपने अहं को तुष्ट करना होता है।

मिल एक चुगल ठाढ़ा किया, करो फिरंगी से अरज।

ये देव तुम्हारे निंदत, करो हमारी गरज।।५।।

उन सभी कथा–वाचकों ने एक चुगलखोर को इस

उद्देश्य से तैयार किया कि वह पुर्तगाली (ईसाई) बादशाह तक हमारी शिकायत पहुँचा दे। इन कथा-वाचकों ने उस चुगलखोर से कहा कि यह श्रीजी हमारे देवी-देवताओं की निन्दा करते हैं। हमारे लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि इनको किसी भी तरह से दीव बन्दर से निकाल दिया जाये।

विशेष- पौराणिक हिंदू समाज अपनी रूढ़िवादिता, स्वार्थ और अल्पज्ञता के कारण देवी-देवताओं की जड़-पूजा को छोड़ने के लिये तैयार नहीं रहता। वैदिक साहित्य में वर्णित माता, पिता, अतिथि, आचार्य, पति, तथा पत्नी आदि चैतन्य देवताओं को छोड़कर नदियों, पत्थरों, तथा वृक्षों को ही देवता मानकर पूजने में उसे रस आता है। वह यह भी विवेक नहीं रखता कि उसका कार्य वेद विरूद्ध होने से धर्म विरुद्ध है।

अतीत के पन्नों में विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा की गई इनकी दुर्दशा सर्वविदित है। फिर भी इनकी आँखे नहीं खुलतीं कि हम किस अंधेरी गली में भटक रहे हैं। इनके लिये वेद, उपनिषद, और शास्त्रों की शिक्षा का कोई महत्व नहीं है। जड़ की झूठी षोड्शोपचार पूजा को अपनी आस्था का जामा पहना देते हैं और लड़ने-मरने के लिये तैयार रहते हैं।

चुगल केते दिन पीछे, गया फिरंगी पास।
एक सख्स मिला दरबार में, इनही कारज की आस।।६।।

कुछ दिनों के पश्चात् चुगलखोर उस पुर्तगाली बादशाह के पास शिकायत करने के लिये गया। ऐसी विकट स्थिति में सुन्दरसाथ की सुरक्षा के लिये श्री राज जी के जोश ने चुगलखोर के मित्र का रूप धारण कर लिया और

दरबार में चुगलखोर से मिलने की इच्छा से गया।

तब उस व्यक्ति ने चुगलखोर से कहा– "तुम कहाँ जा रहे हो? और यहाँ किस काम से आये हो? ऐसा लगता है कि तुम यहां इस बार बहुत उतावले होकर आये हो।"

तब कह्या चुगल ने, कोई नया साध आया इत।
सो निंदत सब देवों को, ताकी चुगली को जात तित।।८।।

तब उस चुगलखोर ने कहा– इस दीव बंदर में कोई नया साधू आया है। वह सभी देवताओं की निंदा करता है। उसकी शिकायत करने के लिये मैं बादशाह के पास जा रहा हूँ।

तब उनने कही तें निंदा, सुनी अपने कान।
के तुम कही काहू की कहत हो, बिना करें पहिचान।।९।।

तब चुगलखोर के मित्र का रूप धारण किये हुये श्री राज जी के जोश ने कहा कि क्या तुमने अपने कानों से उनको देवी–देवताओं की निंदा करते हुये सुना है? कहीं ऐसा तो नहीं है कि बिना वास्तविकता की जानकारी लिये, दूसरों के कहने पर तुम ऐसा कह रहे हो?

तब उनने कही मोसो, नहीं उन साध पहिचान।
मैं निंदा कानों भी ना सुनी, कही कहों औरों की जान।।१०।।

तब उस चुगलखोर ने कहा– मैं उस साधू–महात्मा के बारे में कुछ नहीं जानता। मैंने अपने कानों से उन्हें किसी की निंदा करते हुये भी नहीं सुना है। मैं दूसरों के मुख से सुनकर ही ऐसा कह रहा हूँ।

ऐसा काम करत है, बिन देखे अपने नैन।

फिरंगी ऐसा जालिम, सुनत तुम मुख बैन।।११।।

यदि तुम बिना अपनी आँखों से देखे या जाने-पहचाने उन महात्मा की चुगली करते हो, तो इसका परिणाम बहुत बुरा होगा। पुर्तगाली बादशाह बहुत अत्याचारी है। तुम उसके मित्र हो, इसलिये तुम्हारे मुख से कोई भी बात सुनते ही।

तुरत अमल करत है, बहुत बुरा ए काम।

तिन साध को कसाला, देवें फिरंगी इस ठाम।।१२।।

वह तुरन्त सक्रिय हो जायेगा। यदि बादशाह इस दीव बन्दर में किसी साधू-महात्मा पर अत्याचार करे तो यह बहुत ही बुरा काम होगा।

तो क्या हाल तुम्हारा होवहीं, कछु होयगा तुम्हें दुख।
उनके दिल भली लगी, बड़ो जो पायो सुख।।१३।।

तो तुम यह सोचो कि किसी निर्दोष महात्मा को सताने से तुम्हारा क्या हाल होगा? निश्चित रूप से उस पाप के बदले तुम्हे दुःख भोगना पड़ेगा। चुगलखोर को अपने मित्र की यह सलाह बहुत ही अच्छी लगी और उसे अपने मन में इस बात की बहुत प्रसन्नता हुई कि आज मैं एक बहुत बड़े पाप कर्म से बच गया। अन्यथा परमात्मा की ओर से दण्ड स्वरूप मुझे बहुत कष्ट भुगतना पड़ता।

वह सुनत ही पीछे फिर्या, ए कहके भया अलोप।
फेर देखे तो उत ना पावहीं, होय के गया गोप।।१४।।

अपने मित्र की राय को उचित मानकर चुगलखोर वापस लौट गया। इधर वह मित्र रूपी राज जी का जोश भी

अदृश्य हो गया। कुछ ही पलों के बाद जब चुगलखोर ने चारों ओर देखा, तो कहीं भी उसे सलाह देने वाले उसके मित्र का पता नहीं चला क्योंकि वह तो कोई मनुष्य था ही नहीं। तब तक सलाह देने वाला, अपने स्वरूप को छिपा चुका था।

द्रष्टव्य– सुन्दरसाथ की कुशल क्षेम के लिये धाम धनी ने अपने जोश (जिबरील) और जाग्रत बुद्धि (इस्राफील) को आदेश दिया। इन दोनों की दृष्टि हर ब्रह्मसृष्टि के साथ रहती है। बाह्य या आंतरिक (जाहिरी या बातिन) किसी भी संकट की घड़ी में ये दोनों ब्रह्मसृष्टियों की सहायता करते हैं। इस सम्बन्ध में खुलासा ४/६० का यह कथन देखने योग्य है–

असराफील जबराईल, भेज दिया आमर।
निगह बानी कीजियो, मेरे खासे बंदो पर।।

साथ में खल भल पड़ी, हुआ चुगल का डर।
भागे चारों तरफों, खाड़ी गये उतर।।१५।।

चुगलखोर के द्वारा बादशाह के पास शिकायत की खबर से सुन्दरसाथ में खलबली मच गई और वे भयभीत होकर चारों ओर भागने लगे। कई सुन्दरसाथ तो खाड़ी पार करके कहीं और चले गये।

कोई सहर में छिप गये, कोई कहें हम न जावें इत।
कोई कहे हम न सुनें, कबहूं न गये तित।।१६।।

कुछ सुन्दरसाथ तो शहर में छिप गये। कुछ यह कहने लगे कि अब हम वहाँ कभी भी चर्चा सुनने नहीं जायेंगे। कुछ तो यहाँ तक कहने लगे कि हम आज तक वहाँ कभी गये ही नहीं और भविष्य में भी श्रीजी की चर्चा सुनने का कोई सवाल ही नहीं है।

इन भाँत दज्जालनें, सब के लिये हथियार।

कोई खड़ा न रह सकया, तरफ धनी निरधार।।१७।।

इस तरह से माया ने सबके श्रद्धा और विश्वास रूपी आयुधों (अस्त्र-शस्त्र) को छीन लिया। भय के कारण श्री राज जी के प्रति सबका ईमान बालू की दीवार की तरह ढह गया। कोई भी निष्ठा से खड़ा नहीं रह सका।

एक जयराम खड़ा रह्या, और इनके घर के लोक।

इनों आपोपा दिया, रहे अपने जोक।।१८।।

जयराम भाई और उनके परिवार के सभी सदस्यों के मन में धाम धनी के प्रति अटूट विश्वास था, इसलिये इनकी आस्था अविचल बनी रही। इन्होंने स्वयं को धनी के प्रेम में समर्पित कर दिया था। इनके मन में बादशाह का नाम मात्र भी भय नहीं था। ये पल-पल अपने धनी

के आनन्द में डूबे रहते थे।

ए तो नजर दज्जाल की, दिखाए अजमाए इन।
खल भल पड़ी साथ में, डगे इत सैंयन।।१९।।

यह तो माया का प्रभाव था, जिसने अपनी शक्ति दिखाकर ब्रह्मसृष्टियों के ईमान की परीक्षा ली थी। बादशाह के डर से सुन्दरसाथ में खलबली मच गई और ईमान डगमगा गया।

वह तो सोर ऊपर का, स्याह मुँह भये चुगल।
फेर साथ बैठा सब मिलके, करनें लगे नकल।।२०।।

बादशाह के द्वारा अत्याचार किये जाने का भय तो एक कथन मात्र था। धाम धनी की कृपा से, वह कुछ भी नहीं कर पाया। चुगली करने तथा करवाने का प्रयास करने

वालों के मुख काले पड़ गये, क्योंकि उनका उद्देश्य विफल हो गया। पुनः जब सुन्दरसाथ को वास्तविकता का पता चला और चर्चा सुनने के लिये श्रीजी के चरणों में आये, तो एक–दूसरे के भयभीत होने की घटना की नकल करने लगे।

हाँसी हुई साथ में, कहने लगे बीतक।

भूल मानी भागते, आगे बैठ के हक।।२१।।

बादशाह के डर से शहर में छिप जाने की बात से सबकी बहुत हँसी हुई। सबने अपनी आप–बीती बातें बताई। धाम धनी श्रीजी के समक्ष सबने भागकर छिप जाने की अपनी भूल मानी।

विशेष– आत्मबल से रहित व्यक्ति हमेशा डरपोक होता है। जिसे अपनी आत्मा के धाम हृदय में बैठे हुये

अक्षरातीत पर विश्वास नहीं है, वह तो संसार से हमेशा डरता ही रहेगा।

फेर श्री राजें लिया दिल में, क्योंए इहाँ से पावें निकसन।
साथ जुदा जुदा काढ़ना, क्यों इकट्ठे होए सैयन।।२२।।

अब श्रीजी ने अपने दिल में सोचा कि दीव बन्दर से कैसे चलें? परमधाम की आत्मायें तो संसार में अलग-अलग स्थानों पर आई हैं, जिन्हें माया से निकालना है। यदि मैं केवल यहीं पर रहूँगा , तो उन आत्माओं की जागनी कैसे होगी?

इन उपाय के वास्ते, आये दीप मारी आरबन।
आई श्री बाई जी बन्ध में, तब चले छुड़ावने तिन।।२३।।

मूल स्वरूप की प्रेरणा से श्रीजी को दीव बन्दर से जाने

का एक बहाना मिल गया। अरब के लुटेरों ने आकर दीव बन्दर पर धावा बोला, जिनके बन्धन में श्री तेज कुँवरी जी भी आ गईं। तब उन्हें छुड़ाने के लिये श्रीजी दीव बन्दर से चले और सुन्दरसाथ ने मजबूर होकर उन्हें विदा किया।

भावार्थ– श्रीजी के दीव बन्दर पहुँचने का समाचार पाकर श्री तेज कुँवरी जी भी वहाँ पहुँच गई थीं।

पौराणिक रूढ़ियों ने हिन्दू समाज को इतना जर्जर कर दिया था कि हिंदुओं का सामाजिक, धार्मिक, और राजनैतिक संगठन अस्त–व्यस्त हो गया था। जिसका परिणाम यह हुआ कि करोड़ों की संख्या वाले इस देश पर कुछ मुट्ठी भर मुस्लिम आक्रमणकारी हमला करते थे और मन चाहा अत्याचार करते थे। वैदिक शिक्षा से शून्य, मूर्तियों के आगे गिड़गिड़ाने वाले, भारतीयों में

भला चन्द्रगुप्त और स्कन्दगुप्त जैसा वीर कहाँ पैदा होता, जो मुगलों के अत्याचारों को दूर करता?

नवी पोरबन्दर पाटन, सब ठौरों देखा फेर।

काहू न हुआ मौयसर, ऐसी मोहजल की उठी लहर।।२४।।

नबी, पोरबन्दर, पाटन, आदि नगरों में श्रीजी ने बन्ध में पड़े हुये सुन्दरसाथ की खोज की, किन्तु मायावी कष्टों की यह ऐसी लहर थी कि किसी भी सुन्दरसाथ का कुछ भी पता नहीं चल रहा था।

साथ में खल भल पड़ी, दज्जालें किया जोर।

ठौर ठौर फितने उठे, करने लगे सोर।।२५।।

अरबी लुटेरों के रूप में कलियुग (दज्जाल) ने अपनी शक्ति दिखलायी। बाईजी सहित कुछ सुन्दरसाथ के बन्ध

में हो जाने के कारण सुन्दरसाथ में खलबली मच गई। अरबी लुटेरों के विरोध स्वरूप जगह-जगह झगड़े खड़े हो गये और लोग उनके विरूद्ध शोर करने लगे।

इहाँ सेती आये कच्छ, थावर दिया साथ।
मंडई मिने आये के, साथ के पकड़े हाथ।।२६।।

यहाँ से श्रीजी कच्छ आये। थावर भाई से उनकी भेंट हुई। मण्डई में आकर श्रीजी ने अपनी चर्चा द्वारा परमधाम की राह दिखाई।

तहाँ प्रागमल कुंवरबाई, केतेक रहवे साथ।
भूल गये साथ चरचा को, लई दज्जाल सों बाथ।।२७।।

वहाँ पर प्रागमल तथा कुँवरबाई आदि बहुत से सुन्दरसाथ रहा करते थे। वे सब सुन्दरसाथ चर्चा-

चितवनि को छोड़कर माया से लिपट चुके थे।

तहाँ खण्डनी करके, फेर जीवते किये सब को।

ऐ हाल तुम्हारा क्यों हुआ, रहके माया मों।।२८।।

श्रीजी ने अपनी चर्चा में खण्डनी के वचनों के द्वारा उनको माया के बन्धनों से मुक्त कराया। श्रीजी ने चर्चा में अपने उद्बोधन में कहा कि आप लोगों की यह कैसी स्थिति हो गई कि आप लोगों ने माया की उलझनों में फँसकर चर्चा-चितवनि को ही छोड़ दिया?

भावार्थ- माया के विषयों में फँसकर जो अपने स्वरूप, मूल घर, और प्रियतम अक्षरातीत को भूल जाता है, वह परमधाम की दृष्टि में मरे हुये के समान है तथा संसार की दृष्टि में जीवित है। किन्तु जो इस पिण्ड और ब्रह्माण्ड को भूलकर, अपने मूल स्वरूप तथा अक्षरातीत एवं परमधाम

के चिन्तन में लगा हुआ है, वह परमधाम की दृष्टि में जीवित है और संसार की दृष्टि में मरा हुआ है। इस चौपाई के दूसरे चरण का यही भाव है।

इस सम्बन्ध में तारतम वाणी का यह कथन देखने योग्य है–

जो पेहेले आप मुरदे हुए, तिन दुनी करी मुरदार।
हक तरफ हुए जीवते, उड़ पोहोंचे नूर के पार।।

श्रृंगार २४/९५

अब जागो दिन आइया, धाम चलने का।
अब कहां लो खेल देखने, रहोगे माहें माया।।२९।।

हे साथ जी! अब आप जाग्रत हो जाइये। चितवनि द्वारा संसार को छोड़ने तथा परमधाम को देखने का समय आ गया है। माया का खेल देखने के लिये कब तक आप झूठे

संसार में फँसे रहेंगे?

ए काहू के रही है, इनकी कौन प्रतीत।

तुम क्या करोगे इनको, रहो दुख देखनें इत।।३०।।

इस माया का कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। यह माया आज तक किसी के प्रति हितैषी नहीं रही है। संसार के दुःखों की लीला को देखने के लिये जब तक आप इसमें रहोगे, तब तक इस माया में लिपटे रहकर इसका क्या करोगे?

तुम तो चतुर प्रवीन हो, है तुम्हारा तन धाम।

तिनको भूलके माया में, करो कुफर काम।।३१।।

आप तो स्वयं ही चतुर एवं विलक्षण बुद्धि वाले हैं। आपके मूल तन मूल मिलावा में धनी के चरणों में बैठे हैं।

आप अपने घर और प्रियतम अक्षरातीत को भूलकर माया के ऐसे निरर्थक काम करते हैं, जो धनी की दृष्टि में आपको अपराधी बनाते हैं।

तुम को ऐसा न चाहिये, जो भूलो अपनो ठौर।
धाम लीला को छोड़ के, जाय काम करो और।।३२।।

आपको यह शोभा नहीं देता कि आप अपने मूल घर को ही भूल जायें और परमधाम की लीला के अखण्ड आनन्द को छोड़कर माया के निरर्थक कामों में डूबे रहें।

तुम देखो ओ घर अपना, हमको क्या बताया श्री राज।
हम खड़े कौन भोम में, हम आये थें कौन काज।।३३।।

हे साथ जी! आप चितवनि के द्वारा अपने मूल घर परमधाम को देखिये। इस बात पर विचार कीजिये कि

हमें धाम धनी ने क्या बताया था? इस समय हम कैसे संसार में रह रहे हैं? यहाँ किस कार्य के लिये आये थे और कर क्या रहे हैं?

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में "श्री राज जी" के कथन का आशय सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र के लिये है, तथा तीसरे चरण में कथित भोम शब्द का अभिप्राय मण्डल से है, यानी कालमाया के नश्वर जगत् से है।

उहाँ एक दिन रहके, किये जीवते सब।

चरचा कर समझाए के, कपाइये आये तब।।३४।।

वहां एक दिन रहकर श्रीजी ने सबको माया से निकालकर जाग्रत किया। अपनी चर्चा के द्वारा सबको प्रबोधित करके, वे कपाइये आये।

हरबंस ठाकुर तहाँ रहे, अपने कबीले समेत।

तहाँ आय बासा किया, जान धाम ना खेस।।३५।।

कपाइये में हरिवंश ठक्कर अपने परिवार सहित रहा करते थे। परमधाम के आत्मिक सम्बन्ध से श्रीजी ने उनके गृह पर निवास किया।

चरचा करी तिनके घरों, कहे खण्डनी के बचन।

सबे हुये जागृत, दो दिल हुए रोसन।।३६।।

श्रीजी ने हरिवंश जी के घर में खण्डनी के वचनों के साथ चर्चा की। उनके वचनों से सभी जाग्रत हुये और उनके दिल तारतम ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित हुये।

भेजे बिहारीजी के पास, जाये करो दीदार।

तुमको ऐसा न चाहिये, जो छोड़ो धनी निरधार।।३७।।

श्रीजी ने उन्हें गादीपति बिहारी जी के पास भेजा कि जाकर उनका दर्शन करो। धाम धनी को भुला देना तुम्हें शोभा नहीं देता।

तहाँ से आये भोजनगर, आये घर वृन्दावन।

मिलाप किया तिनसों, हुआ खुसाल मगन।।३८।।

वहाँ से श्रीजी भोजनगर में वृन्दावन जी के घर आये और उनसे भेंट की। श्रीजी का दर्शन प्राप्त करके वृन्दावन जी बहुत आनन्दित हुये।

कर आदर भली भाँत सो, आरुगाये श्री राज।

लगे बातां पूछने, हम सों कहो काज।।३९।।

वृन्दावन जी ने श्रीजी का बहुत आदर किया और प्रेमपूर्वक भोजन कराकर सारी बात पूछने लगे कि हे धाम धनी! आप बतायें कि आपका आगमन किस प्रयोजन से हुआ?

कही बात बीतक की, भई चरचा इन समें।

खण्डनी के कहे बचन, सुख पाया तिनसें।।४०।।

श्रीजी ने पूर्व की सारी घटनाओं (अमदाबाद और दीव बन्दर) को संक्षेप रूप में दर्शाया और परमधाम की चर्चा प्रारम्भ कर दी। चर्चा में उन्होंने खण्डनी के वचनों से सबको सचेत किया। सुन्दरसाथ ने उनकी चर्चा का अपार सुख प्राप्त किया।

भावार्थ– उपरोक्त घटनाक्रमों में श्रीजी के द्वारा खण्डनी के वचनों का प्रयोग करने से किसी को यह नहीं समझ लेना चाहिये कि हमें भी वैसे ही खण्डनी करके जागनी करनी है। यह तो धाम धनी की विशेष लीला थी, जिसमें माया में गहरी निद्रा में सोने वाले सुन्दरसाथ को झकझोरकर उठाना था, अन्यथा कलश वाणी २३/१० में श्री जी ऐसा नहीं कहते–

"खण्डनी कर खीजियें, जागे नहीं इन भांत।"

अर्थात् केवल खण्डनी के वचनों से जाग्रति नहीं हो सकती। पुनः आगे के क्रम में कहते हैं कि मैंने जो कटु वचन कहे हैं, वह अभी भी मेरे मन में साल रहे हैं कि मैंने अपने प्रिय सुन्दरसाथ को कटु वचन कैसे कहे।

"सो ए वचन मोहे सालहीं।"

ए हम सह्यो न जावहीं, जो कहे साथ में कोई कटुक वचन।

किरन्तन ८९/१३

धाम धनी ने यह स्पष्ट कह दिया कि यदि सुन्दरसाथ में कोई कटु वचन कहता है, तो मुझे सहन नहीं होता।

वस्तुतः मनुष्य की बोली ही उसके व्यक्तित्व की पहचान कराती है। इसलिये हमारी वाणी कैसी होनी चाहिये, इस विषय पर तारतम वाणी में कहा है–

जाको नामै रसना, होसी कैसी मीठी हक।

जिनकी जैसी बुजरकी, जुबां होत है तिन माफक।।

सिनगार १६/१

हमें नकारात्मक पक्ष को न देखकर सकारात्मक पक्ष को देखना चाहिये कि स्वयं धाम धनी श्रीजी क्या कह रहे हैं?

अब दुःख न देऊं फूल पांखडी, देखूं शीतल नैन।
उपजाऊं सुख सबों अंगो, बोलाऊं मीठे बैन।।

कलस हि. २३/४

वस्तुतः सबको सत्य, प्रिय, और हितकारी बोलना चाहिये। इसी में सबका कल्याण निहित है।

फेर के चरचा भई, बचन खण्डनी के।
वैराग पूरा राज को, सो घात बतावें ऐ।।४१।।

श्रीजी की चर्चा पुनः प्रारम्भ हुई, उसमें भी श्रीजी ने खण्डनी के वचनों से सबको जाग्रत किया। इस समय श्री इन्द्रावती जी का हृदय संसार से पूर्णतया अलग था। इसलिये उन्होंने सुन्दरसाथ को भी चर्चा द्वारा माया छोड़ने के तरीके बताये।

सब को मीठी लगी, होय चरचा जो हाल में।

मकसूद होवे तिनसों, सब सक जावे सुन के।।४२।।

श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा सब सुन्दरसाथ को बहुत प्यारी लगती थी, भले ही उसमें खण्डनी के शब्द क्यों न हों। उनकी अलौकिक चर्चा को सुनकर सबके संशय मिट जाते थे और सबकी कामनायें भी पूर्ण हो जाती थीं।

जो मलीनता मन की, सो सब हुई दूर।

बड़ा सुख पाया इन समें, करते धाम मजकूर।।४३।।

सबके मन में जो माया की मलिनता आ गई थी, वह श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को सुनकर दूर हो गई और सबने इस समय अपार सुख का अनुभव किया।

दिन दो एक रहके, फेर नलिये पहुँचे।

तहाँ सेती चलके, आये ठट्ठे नाथे के।।४४।।

एक-दो दिन वहाँ रहकर श्रीजी वहाँ से पुनः चल दिये और नलिया पहुँचे। नलिया से चलकर वे ठट्ठानगर आये, जहां नाथा भाई रहा करते थे।

पूछत घर उनका, नाथे सों भयों मिलाप।

मिलते ही सुख उपज्या, मिट गयो सब ताप।।४५।।

श्रीजी ठट्ठानगर में नाथा जोशी के घर का पता पूछते हुये उनके घर पहुँचे, जहाँ उनसे भेट हुई। श्रीजी का दर्शन करते ही नाथा जोशी को इतना आनन्द आया कि उन्हें अनुभव हुआ कि उनके सारे कष्ट मिट गये।

बातें लगे पूछने, कौन भाग हैं हम।

उहाँ सेती इहाँ लों, धरे मुबारक कदम।।४६।।

नाथा जोशी श्रीजी से अब तक घटित हुई सारी घटनाओं के विषय में पूछने लगे और कहने लगे कि मेरा कितना सौभाग्य है कि नवतनपुरी से चलकर सबका कल्याण करने वाले आपके चरण कमल मेरे घर में आए हैं।

महामति कहे ऐ साथ जी, दीप से ले ठट्ठा में।

अब फेर कहों ठट्ठे की, हुई बीतक जो हम से।।४७।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! दीव बन्दर से लेकर ठट्ठानगर तक होने वाले घटनाक्रमों का विवरण आपने सुना। अब ठट्ठानगर में हमारे साथ जो भी घटित हुआ, उसका विवरण मैं आपको सुनाता हूँ।

प्रकरण ।।२२।। चौपाई ।।९९५।।

ठट्ठानगर वृत्तांत

अब कहों बीतक ठट्ठे की, याद करो मोमिन।

जो दिखाया खेल तुम को, बीच जिमी नासूत सुभान।।१।।

हे साथ जी! अब मैं ठट्ठानगर का वृत्तान्त सुनाता हूँ। आप इसे अपने हृदय में धारण कीजिये। आपको अक्षरातीत श्री राज जी ने इस नश्वर संसार के अन्दर यह खेल दिखाया है।

श्रीजी आये ठट्ठे में, रहे दिन दस-बार।

फेर लाठी बन्दर आये, हुए इत हुसियार।।२।।

श्रीजी ठट्ठानगर में आये और दस-बारह दिन तक रहे। उसके पश्चात् लाठी बन्दर आये और अपने कार्य के प्रति सावधान हो गये।

विस्वनाथ भट्ट मिले, आये देवे के दुकान।

उन आदर बड़ो कियो, थी ऊपर की पहिचान।।३।।

देवा भाई की दुकान में श्रीजी की भेंट विश्वनाथ भट्ट से हुई। विश्वनाथ भट्ट श्रीजी को लौकिक सम्बन्ध से पहचानता था। उन्होंने श्री प्राणनाथ जी का बहुत अधिक आदर-सत्कार किया।

इहाँ से चढ़ नावमें, सत्रह दिन लगा तूफान।

ओ जहाज फेर आई, जो था हुकम हक सुभान।।४।।

ठट्ठानगर से श्रीजी नाव में चले। सत्रह दिन की यात्रा के पश्चात् समुद्र में अचानक तूफान उठा, जिसके कारण नाव पुनः लौट कर ठट्ठानगर वापस आ गई। ऐसा श्री राज जी के आदेश से हुआ।

फेर पधारे साथ वास्ते, अजूं मोमिनों सों न भयो मिलाप।
तो नाव जाय न सकी, फेर के आये आप।।५।।

सुन्दरसाथ के लिये श्रीजी को पुनः वापस लौटकर आना पड़ा क्योंकि ठट्ठानगर में चिन्तामणि , लालदास, आदि विराजमान थे, जिनके अन्दर परमधाम की आत्मा थी। उनसे अभी श्रीजी की भेंट ही नहीं हो पाई थी। इसलिये नाव को पुनः वापस आना पड़ा। उनकी जागनी के लिये श्रीजी को वापस आना पड़ा।

फेर लाठी से ठट्ठे आये, नाथा जोसी मिला धाए।
बन्धन सो मुलाकात भई, उन अपने घरों पधराए।।६।।

श्रीजी लाठी बन्दर से ठट्ठानगर आये। वहां नाथा जोशी बहुत भाव से श्रीजी से मिले। बन्धन भाई से श्रीजी की भेंट हुई और उन्होंने श्रीजी को अपने घर ठहराया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में "दौड़ कर मिलने" का कथन अत्यधिक प्रेममयी भाव से मिलने के सम्बन्ध में है। यहाँ बाह्य रूप से दौड़ने का भाव नहीं लेना चाहिये।

फेर जिन्दादास मिले, सुनी चरचा बाई ठाकुरी।
ओ आई साथ में, मेहर राज की उतरी।।७।।

पुनः श्रीजी से जिन्दादास जी की भेंट हुई। उनकी पत्नी ठाकुरी बाई ने चर्चा सुनी। उनके ऊपर धाम धनी की कृपा हुई और उन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण कर लिया।

तब होने लगी चरचा, बड़ो आनन्द भयो साथ।
चरचा करें जोस में, जाके धनियें पकड़े हाथ।।८।।

अब श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा का प्रवाह चल पड़ा।

सुन्दरसाथ चर्चा सुनकर बहुत अधिक आनन्दित रहने लगे। धाम धनी की जोश में होने वाली चर्चा को सुनने के लिये वही लोग आते थे, जिन पर धाम धनी की कृपा होती थी।

इन समें लोक आवत, चरचा सुनने को।
सोर पड़ा सहरमें, एक साध आया ठट्ठे मों।।९।।

इस समय चर्चा सुनने के लिये नगर के बहुत से लोग आने लगे। सारे नगर में इस बात का शोर पड़ गया कि ठट्ठानगर में एक दिव्य महात्मा आये हुये हैं।

जो कोई साध ए सुने, सो करने आवे दीदार।
सुन चरचा राजी होवे, कहे सुकर परवरदिगार।।१०।।

जो भी व्यक्ति यह सुनता कि हमारे नगर में कोई

अलौकिक महात्मा आये हैं, वह श्रीजी के दर्शन करने अवश्य आता। श्रीजी के मुखारविन्द की अलौकिक चर्चा सुनकर वह आनन्द में डूब जाता और परब्रह्म को धन्यवाद देता कि उनकी कृपा से ऐसा अलौकिक ज्ञान सुनने को मिला है।

सुने साध चिन्तामणि, रहे कबीर के धरम।
कह्या कीजे दीदार तिनका, देखें चरचा उनके करम।।११।।

श्रीजी ने चिन्तामणि नामक एक महात्मा के बारे में सुना, जो कबीर मत के अनुयायी थे। सुन्दरसाथ ने श्रीजी से आग्रह किया कि चिन्तामणि से भेंट की जाये और देखा जाये कि वह क्या चरचा सुनाते हैं?

घरों गये उनके, तिनसों करी मुलाकात।

देखत ही सुख पाया, वह करने लगा बात।।१२।।

श्रीजी कुछ सुन्दरसाथ के साथ चिन्तामणि के निवास पर गये और उनसे भेंट की। श्रीजी को देखते ही चिन्तामणि जी बहुत आनन्दित हुये और उनसे बातें करने लगे।

कहाँ से आये तुम, चरचा करो हमसों।

के तुम हमको सुनाओ, जो कछु ज्यादा आवे तुमको।।१३।।

चिन्तामणि जी कहने लगे कि हे महात्मा जी! आप कहाँ से आये हैं? आप हमसे आध्यात्मिक ज्ञान पर चर्चा कीजिये। यदि आपको अधिक ज्ञान है, तो मुझे अवश्य सुनाने का कष्ट करें।

जो देने आये हों तो देओ, लेने आये हो तो देवें हम।

तुम सुनो हम कहें, ज्यों होए चरचा आतम।।१४।।

यदि आप मुझे कुछ आध्यात्मिक ज्ञान देना चाहते हैं तो दीजिये, या यदि लेना चाहते हैं तो मैं देने के लिये तैयार हूँ। मैं चाहता हूँ कि आत्म-ज्ञान की चर्चा हो, आप सुनिये और मैं कहूँगा।

कहो तो चतुर्भुज का, दिखाऊं तुम्हें दर्सन।

के कहो-ज्योति स्वरूप को, के सेससांई-सहस्त्र-फन।।१५।।

यदि आप कहिये तो मैं आपको चतुर्भुज स्वरूप भगवान विष्णु का दर्शन करा सकता हूँ, या यदि आप चाहें तो ज्योति स्वरूप, या सहस्त्र फन वाले शेषनाग पर विराजमान नारायण को दिखा सकता हूँ।

भावार्थ- इस चौपाई में यह जिज्ञासा होती है कि वैदिक

मान्यता के अनुसार चतुर्भुज स्वरूप भगवान विष्णु, ज्योति स्वरूप, तथा सहस्त्र फन वाले शेषनाग पर विराजमान नारायण का स्वरूप क्या है?

वैदिक मान्यता के अनुसार ब्रह्मा, विष्णु, व शिव सृष्टि के प्रारम्भ में सांकल्पिक सृष्टि के योगीगण हैं। आज भी भगवान शिव को ध्यानावस्थित ही दिखाया जाता है। माहेश्वर तन्त्र में तथा पुराण संहिता में भी भगवान विष्णु को ध्यान में तत्पर दिखाया है। विष्णु का चार भुजा वाला होना तथा ब्रह्मा जी का चार मुख वाला होना आलंकारिक है, यथार्थ में नहीं।

जब सृष्टि की वृद्धि होने लगी, तो आसुरी प्रवृति वाले लोगों से जन समूह की रक्षा का भार भगवान विष्णु को दिया गया। शंख– ज्ञान का प्रतीक है, चक्र– संगठन (क्रियाशीलता) का प्रतीक है, गदा– शक्ति का प्रतीक है,

और पद्म– ऐश्वर्य का प्रतीक है। इस प्रकार इन चारों साधनों ज्ञान, ऐश्वर्य, शक्ति, और क्रियाशक्ति के द्वारा भगवान विष्णु ने जन समूह की रक्षा की। इसलिये इन्हें चतुर्भुज स्वरूप कहा गया।

योग दर्शन के कथन "मूर्धा ज्योति सिद्ध दर्शनम्" के अनुसार मूर्धा ज्योति में संयम करने से सिद्ध पुरुषों का दर्शन होता है। इस आधार पर भगवान विष्णु, शिव, आदि का साक्षात्कार सम्भव है।

शेष कहते हैं शून्य को। शून्य का तात्पर्य है निराकार– मोहसागर। इस मोहसागर में शयन करने वाला ही नारायण है। निरुक्त में "सर्वं वै सहस्त्रम्" कहकर सहस्त्र का अर्थ अनन्त किया गया है।

आदिनारायण अक्षर (अव्याकृत) का स्वाप्निक मन है। इसलिये उनकी ज्ञान दृष्टि में सारे प्राणी आ जाते हैं।

इसलिये यजुर्वेद के पुरुष सूक्त में उन्हें "सहस्त्र शीर्षाः" कहकर सम्बोधित किया गया है।

पौराणिक लोगों ने इसे विकृत रूप में प्रस्तुत किया और शेषनाग नामक एक ऐसे सर्प की कल्पना की, जिसके हजार फन हैं और जिसके सिर पर यह पृथ्वी सरसों के दाने के समान विराजमान है।

प्रश्न यह है कि सूर्य तो पृथ्वी से १३ लाख गुना बड़ा है और सूर्य से भी बड़े-बड़े असंख्य तारे सृष्टि में हैं। जब पृथ्वी शेषनाग के फन पर टिकी है, तो असंख्य ग्रह-नक्षत्र किसके फन पर टिके हैं?

इस प्रकार वैदिक परम्परा के अनुसार शेषशायी नारायण और आदिनारायण एक ही हैं। निराकारवादी विचारधारा वाले आदिनारायण को ही ज्योति स्वरूप कहते हैं।

के झिलमिल अनहद, ए सब दिखावें हम।

ना तो तुम हमको दिखाओ, जो कछु पाया होवे तुम।।१६।।

यदि आप झिलमिल-झिलमिल करती ज्योति या दस अनहद नादों को सुनना चाहते हैं, तो मैं वे सब दिखाने को तैयार हूँ। यदि आप यह सब नहीं देखना चाहते, तो आपने अब तक जो भी उपलब्धि की है, उसके अनुसार मुझे दिखाइये।

भावार्थ- पाँच ब्रह्माण्डीय शब्दों (निरंजन, ओऽम्, सोऽहम्, र्शिक्त, और ररं) में ररं शब्द की साधना में झिलमिल ज्योति का अनुभव होता है।

त्रिकुटी में संयम करने पर "ओऽम्" शब्द तथा ज्योति के अनुभव के साथ दस अनहदों की भी ध्वनि सुनायी पड़ती है। ये दस अनहद इस प्रकार हैं- ताल, मृदग, डम्फ, झांझ, मुरली, सिंह-गर्जना, वीणा, शहनाई,

बादल, व किंकिण।

तब श्रीजीयें कह्या, हम लेने आये वस्त।
हमको तुम बताये देओ, ए है हमारा कस्त।।१७।।

तब श्रीजी ने कहा कि हम तो आपके पास तत्व ज्ञान लेने आये हैं। आप हमारे लिये इतना कष्ट कीजिये कि हमें अध्यात्म का सर्वोच्च ज्ञान दीजिये। हमारी यही इच्छा है।

जो कछु तुम कह्या, सो ग्रहें तुम्हारे वचन।
तिनका निरणय कर देओ, दिल करो रोसन।।१८।।

आप जो कुछ भी कहेंगे, उसे मैं अपने हृदय में धारण करूँगा। आप ब्रह्म और माया के स्वरूप का यथार्थ निर्णय कीजिये, अर्थात् पहचान दीजिये, और हमारे हृदय

को उस ज्ञान से प्रकाशित कीजिये।

एक कमाल की साखी पर, चरचा हुई जोर।

जोस में श्रीजी ए कह्या, तब पाया चित मरोर।।१९।।

कमाल जी की एक साखी के सम्बन्ध में श्रीजी और चिन्तामणि जी के बीच में गहन चर्चा हुई। जोश में जब श्रीजी ने उस साखी के बारे में कहा, तब चिन्तामणि जी का चित्त श्रीजी के प्रति मुड़ गया और उनके कथन से बहुत प्रभावित हुआ।

साखी– कह्या कौड़ी ते हीरा भया, हीरा ते भया लाल।

आधा भक्त कबीर है, पूरा भक्त कमाल।।

साखी– चिन्तामणि जी कहते हैं कि कबीर जी के माता–पिता एक कौड़ी के समान हैं अर्थात् आध्यात्मिक

ज्ञान से पूर्णतया शून्य हैं। उनके पुत्र कबीर जी हीरे के समान हैं। किन्तु कबीर जी के पुत्र कमाल मूल्यवान माणिक (लाल) के समान हैं। इस प्रकार कबीर जी आधे भक्त हो पाये और कमाल जी पूरे भक्त।

तब श्रीजी ए कह्या, तुम क्या जानो कबीर।
तुम जो आधा भक्त इनको कह्या, जो चित नाहीं तुम धीर।।२०।।

यह सुनकर श्रीजी ने कहा कि ऐसा लगता है, आपको कबीर जी की पहचान ही नहीं है। आपका चित्त स्थिर नहीं है, इसलिये आप कबीर जी को आधा भक्त कह रहे हैं।

भावार्थ– कबीर जी का आशय यह था कि इस साखी में भाव को उल्टा करके व्यक्त किया गया है। कबीर जी अक्षर ब्रह्म की वासना होने के कारण माया से पूर्णतया

अलग हैं और उन्हें पूर्ण भक्त की शोभा प्राप्त है। किन्तु बाह्य रूप से वह गृहस्थ जीवन से जुड़े हैं, इसलिये बाह्य रूप से वे माया के आधे भक्त हैं।

इसके विपरीत कमाल जी जीव सृष्टि से सम्बन्धित हैं, इसलिये वे माया के पूरे भक्त है। इस सम्बन्ध में एक घटना का विवरण दिया जाता है।

कबीर जी की अनुपस्थिति में उनके घर किसी ने बहुत अधिक धन-सम्पदा भिजवा दी थी। लोई और कमाल ने उस धन को छिपाकर रख लिया, किन्तु जब संध्या समय कबीर जी आये, तो उन्होंने घर में पड़ी हुयी विशाल सम्पदा को देखकर स्पष्ट कह दिया कि जब तक इस धन को घर से बाहर फेंका नहीं जायेगा तब तक मैं घर के अंदर प्रवेश नहीं करूँगा। पूरी रात भर यह विवाद का विषय बना रहा। अन्त में प्रातःकाल कमाल सारी

धन–सम्पदा को घर से बाहर फेंकने लगे। कमाल के द्वारा बहुमूल्य रत्नों को घर से बाहर फेंकते हुये देखकर पड़ोस के सभी लोग आश्चर्य में पड़ गये और कहने लगे कि हम तो कबीर जी को सच्चा भक्त मानते थे, किन्तु कमाल जी तो कबीर जी से बहुत आगे हैं, जो इतने बहुमूल्य रत्नों को फेंक रहे हैं।

तभी से यह कहावत प्रचलित हो गई कि कबीर जी आधे भक्त हैं और कमाल जी पूरे भक्त हैं , जबकि वास्तविकता यह है कि कबीर जी आंतरिक रूप से परब्रह्म के पूर्ण भक्त और माया के आधे भक्त हैं तथा कमाल जी माया के पूरे भक्त हैं।

कहां मजल कबीर की, केती अकल कमाल।

तौल देखो दोनों को, किनका कैसा हाल।।२१।।

आप इस बात का विचार क्यों नहीं करते? अक्षर की वासना होने से कबीर जी की पहुँच कहाँ तक है और स्वप्न का जीव होने से कमाल की बुद्धि कहाँ तक है? दोनों की तुलना करके देखिये तो आपको पता चलेगा कि कौन किस स्थिति में है।

बिन पहिचाने बोलत, नाहीं तुम सराफ।
कहाँ कबीर कहाँ कमाल, विचार देखो आप।।२२।।

ऐसा प्रतीत होता है कि आप हीरे की परख करने वाले सच्चे जौहरी नहीं हो। तभी आप कबीर जी की पहचान न होने के कारण ऐसा बोल रहे हैं। यदि आप विचारपूर्वक सोचें तो आपको पता चलेगा कि कबीर जी की पहुंच अक्षर तक है और वह बेहद मण्डल का वर्णन करते हैं, जबकि कमाल जी हद से आगे नहीं जा पाये।

एक कबीर का कीर्तन, सुनाये दिया तब।

तब चिन्तामनी ने कह्या, देखो सब्द निकस्या अब।।२३।।

तब श्रीजी ने कबीर जी का एक कीर्तन सुनाया। उसे सुनकर चिन्तामणि जी कहने लगे, देखो! अब ये शब्द अखण्ड के हैं।

साखी–

एक पलक ते गंग जो निकसी, हो गया चहुं दिस पानी।

उहि पानी दो परवत ढांपे, दरिया लहर समानी।।

साखी– अक्षरातीत पूर्णब्रह्म सत् , चित्, और आनन्दमयी हैं। परमधाम की लीला चिद्घन शक्ति और आनन्द शक्ति के द्वारा होती है। इन्ही दोनों शक्तियों को अक्षरातीत की दो पलकें कहा गया है, जिनके द्वारा प्रेम और आनन्द की लीला सम्पादित होती है।

चिद्घन शक्ति ने अपने दिल में, अपने स्वरूप की पहचान देने के लिये, अक्षरब्रह्म के अन्दर परमधाम की लीला तथा श्यामा जी एवं सखियों के अन्दर माया की लीला देखने की जो इच्छा प्रकट की, वह इच्छा रूपी गंगा स्वलीला अद्वैत परमधाम में सर्वत्र फैल गयी। उस इच्छा रूपी गंगा में सत् अंग अक्षरब्रह्म, और आनन्द अंग श्यामा जी, तथा सखियां डूब गयीं।

मेहर का दरिया दिल में उपजा तो रूहों के दिल में खेल देखने का विचार उपजा। इस प्रकार चिद्घन स्वरूप श्री राज जी के मेहर के सागर में इच्छा रूपी गंगा की लहरें समा गयीं।

भावार्थ–

एक पातसाही अरस की, और वाहेदत का इस्क।

सो देखलावने रूहन को, पेहले दिल में लिया हक।।

खिलवत १६/१७

ब्रह्मसृष्टियों को अपने दिल में डुबोकर अपने पूर्ण स्वरूप की पहचान देना, अर्थात् मारिफत की पहचान देना, दरिया है, और सखियों के द्वारा खेल देखने की इच्छा तथा अक्षर के द्वारा परमधाम की लीला देखने की इच्छा गंगा है।

श्री राज जी ने जो दिखाने की इच्छा की, वही गंगा है। उस इच्छा रूपी गंगा में अक्षरब्रह्म और श्यामा जी सहित सखियों का डूबना ही इस मायावी जगत के खेल का कारण बना। इसे तारतम वाणी में इस प्रकार कहा गया है-

पेहले लई हकें दिल में, पीछे आई माहें नूर।

तिन पीछे हादी रूहन में, ए जो हुआ जहूर।।

खिलवत ६/४४

साखी–

उड़ मख्खी तरवर चढ़ बैठी, बोलत अमृत बानी।

वह मखी के मखा नाहीं, बिन पानी गरभानी।।

साखी– परब्रह्म की आदेश शक्ति (मक्खी) ने संसार रूपी वृक्ष पर बैठकर धर्मग्रन्थों में परब्रह्म की पहचान रूपी मधुर वाणी का उद्घोष किया। उस आदेश शक्ति का कोई पति नहीं है, फिर भी उसने परब्रह्म की प्रेरणा से सृष्टि रूपी गर्भ को धारण किया।

भावार्थ– इस चौपाई में संसार की एक वृक्ष से उपमा दी गई है। वैदिक परम्परा तथा कतेब परम्परा के ग्रन्थों में, जो भी परब्रह्म की पहचान से सम्बन्धित बाते हैं, वही आदेश शक्ति रूपी मक्खी की मधुर बानी है। लौकिक दृष्टि से गर्भधारण के लिये पति की आवश्यकता होती है, किन्तु परब्रह्म की आदेश शक्ति का पति परब्रह्म के बिना

और कौन होगा? परब्रह्म की इच्छा शक्ति ही हुक्म है। इसी इच्छा शक्ति के परिणामस्वरूप मूल प्रकृति का प्रकटन हुआ, जिसे गर्भ की संज्ञा दी गई है।

भगवान जी खेलत बाल चरित्र, आप अपनी इच्छा सों प्रकृत।

परिक्रमा ३/९९

साखी–

तिन गरभें गुन तीनों जाये, वह तो पुरूष अकेला।

कहे कबीर या पद को बूझे, सो सतगुरू मैं चेला।।

उस मूल प्रकृति के सपुत्र रूप में सत्व, रज, तम, इन तीन गुणों की उत्पत्ति हुयी, जिससे सृष्टि का विकास हुआ। परम पुरुष परब्रह्म इस सृष्टि प्रपंच से पूर्णतया अलग अपने निजधाम में हैं।

कबीर दास जी कहते हैं कि जो इस पद के रहस्य को

समझ जायेगा, वह सद्गुरु होगा और मैं उसका शिष्य।

देखो सब्द आगे चला, सो सख्स मिल्या आए।

अब देखो सब्द इनके, ए सब्द पार पहुँचाए।।२४।।

यह सुनकर चिन्तामणि जी कहने लगे, देखो! अब श्रीजी के ये शब्द अखण्ड धाम का वर्णन कर रहे हैं। मेरे गुरुदेव ने जिस स्वरूप के दर्शन देने की बात मुझे बताई थी, लगता है यह वही स्वरूप हैं। इनके शब्दों का सार देखो। श्रीजी के ये शब्द निराकार के परे अखण्ड धाम का वर्णन कर रहे हैं।

भावार्थ– कबीर जी के शब्द में गंगा का अर्थ मोह सागर करना उचित नहीं है, क्योंकि इस प्रकार का अर्थ तो संसार के लोग करते ही हैं। निःसंदेह इसमें परमधाम का प्रसंग है। तभी कबीर जी ने कहा था, जो इसका अर्थ

बतायेगा वह मेरा सद्गुरु होगा, क्योंकि बिना तारतम ज्ञान के कोई इसका रहस्य स्पष्ट कर ही नहीं सकता।

मैं तुमसे कहता था, जो सब्द आगे चलत।
अपने सेवकों से कही, वह सख्स पहुँचा इत।।२५।।

चिन्तामणि जी अपने शिष्यों से कहने लगे कि मैंने तो तुमसे पहले ही कह दिया था कि इनके शब्दों के द्वारा अखण्ड धाम का वर्णन हो रहा है। मेरे गुरुदेव ने जिस ब्रह्मस्वरूप दिव्य पुरुष की बात बताई थी, ये वही हैं।

एती मुलाकात करके, उठे श्रीजी साहिब।
आए अपने आसन, करी साथ से चर्चा तब।।२६।।

जब चिन्तामणि जी इस तरह की बात कर रहे थे, तब श्रीजी इस प्रकार थोड़ी देर के लिये चिन्तामणि जी से

मिलकर चल दिये, और अपने निवास पर आये, तथा सब सुन्दरसाथ के साथ चर्चा की।

कलू मिश्र के घरों, कथा में गए एक दिन।
असनाई उहाँ कच्ची, उत चर्चा सुनी सैंयन।।२७।।

एक दिन श्रीजी कल्लू मिश्र के घर होने वाली चर्चा में गये, जो एक पौराणिक कथाकार थे और पुराणों की कथा किया करते थे। सुन्दरसाथ ने वहाँ चर्चा सुनी, लेकिन उनसे प्रगाढ़ सम्बन्ध नहीं हो सका।

भावार्थ– पौराणिक कथाकार होने के कारण कल्लू मिश्र पौराणिक किस्से–कहानियों तक ही सीमित थे। इसलिये उनके पास उच्च स्तरीय आध्यात्मिक ज्ञान नहीं था। अहं भावना की ग्रन्थि से जुड़े रहने के कारण कल्लू मिश्र ने श्रीजी से कोई ज्ञान की जिज्ञासा भी प्रकट नहीं की और

अधिक प्रेम भी नहीं दर्शाया। परिणामतः दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सका। इसलिये इस चौपाई के तीसरे चरण में यह बात दर्शायी गयी है। "असनाई" का अर्थ होता है– प्रगाढ़ मित्रता।

महामति कहें ऐ साथ जी, ए ठट्ठे का मजकूर।
सम्बत सत्रह सै चौबीसें, कहूँ आगे और जहूर।।२८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह ठट्ठे का वृत्तान्त वर्णित हुआ। यह समय वि.सं. १७२४ का है। उस समय वहां जो और लीलायें हुईं, उनका मैं वर्णन करता हूँ।

प्रकरण ।।२३।। चौपाई ।।१०२३।।

चिन्तामणि बोध

चिन्तामनि ढूँढ़त फिरे, कहां है उन साध का ठौर।
आया पूछत कथा में, मोहे ढूँढ़त भई भोर।।१।।

अब चिन्तामणि जी, श्रीजी को चारों तरफ खोजने लगे कि उन महापुरुष का निवास कहाँ है, जिन्होंने मुझे अलौकिक ज्ञान सुनाया था? वे पूछते-पूछते कल्लू मिश्र की कथा में आये और उनसे श्रीजी के बारे में पूछा कि वे कहाँ हैं? मुझे उनकी खोज करते-करते पूरी रात बीत गई और अब प्रातःकाल हो गया है।

तब मिसरें बताइया, नाथे जोसी का घर।
तहाँ से खबर लेय के, आय पहुँचे अटारी पर।।२।।

तब कल्लू मिश्र ने उन्हें नाथा जोशी का घर बता दिया

कि श्रीजी वहीं ठहरे हैं। वहाँ से नाथा जोशी के घर का पता लेकर, चिन्तामणि जी अपने शिष्यों के साथ नाथा जोशी के घर पर पहुँचे। उस समय श्रीजी, नाथा जोशी के घर में, ऊपरी भूमिका (मंजिल) में चर्चा कर रहे थे।

तहाँ साथ सब बैठें थे, बीच में बैठे श्री राज।
चरचा के बखत मों लगा, चिन्तामनी कदमों इन काज।।३।।

वहाँ सब सुन्दरसाथ के बीच में बैठकर श्रीजी चर्चा कर रहे थे। चिन्तामणि जी ने आकर श्रीजी के चरणों में श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया।

साथ संगी सब अपनें, चरचा लगे सुनने।
श्रवना दई भली भाँत सों, निसबत अंकूर अपने।।४।।

अपने सब शिष्यों सहित चिन्तामणि जी, सुन्दरसाथ के

साथ बैठकर, श्रीजी के मुखारबिन्द से अलौकिक चर्चा सुनने लगे। उनके अन्दर परमधाम की ब्रह्मात्मा थी, इसलिये बहुत तन्मय होकर उन्होंने श्रीजी की चर्चा को सुना।

सुख पाया चरचा मिने, अपनी भूली गई भूल।
चरचा देखी अधिक, असल अंकूर का मूल।।५।।

चिन्तामणि जी को चर्चा में बहुत अधिक आनन्द आया। उन्हे अपने तन का भी आभास नहीं रहा। परमधाम का मूल अँकूर होने के कारण, उन्हे श्रीजी की चर्चा बहुत अधिक प्रिय लगी और उनका आध्यात्मिक तत्वज्ञान सर्वोपरि लगा।

इनके जो सेवक थे, खल भल पड़ी तिन में।

फिरे चित जो तिनके, इन चरचा सुनने से।।६।।

चिन्तामणि के शिष्यों में भी खलबली मच गयी थी, क्योंकि श्रीजी की अलौकिक चर्चा सुनने से उनके बहुत से शिष्यों को यह आभास हो गया था कि उनके गुरु की अपेक्षा श्रीजी का आध्यात्मिक तत्वज्ञान बहुत उच्च स्तर का है।

दिन दोए तीन लग, चरचा सुनी बनाए।

तब सब लगे कदमों, हुई पहिचान हक जाए।।७।।

इस प्रकार दो-तीन दिन लगातार चिन्तामणि जी ने अपने शिष्यों सहित आकर चर्चा सुनी। तदन्तर उनको बोध हो गया कि इस तन में साक्षात् परब्रह्म की शक्ति विराजमान होकर लीला कर रही है। श्रद्धा के वशीभूत

सभी ने श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया।

खण्डनी भली भाँत सों, देखत साथ सबन।

तब चिन्तामनि छाने कह्या, सरम राखियो बीच मोमिन।।८।।

एक दिन चर्चा के प्रसंग में श्रीजी ने चिन्तामणि की बहुत अच्छी तरह से खण्डनी की। तब चिन्तामणि जी ने एकान्त में श्रीजी से कहा– कृपा करके सबके बीच में मेरी लाज रखें।

एकान्त मोसों कहो, जानो तैसी खण्डनी।

पर मेरे सेवकों में सरम, राखो जान अपनी।।९।।

एकान्त में आपकी जैसी इच्छा हो, मेरी वैसी खण्डनी कीजिए, क्योंकि मैं तो अब आपके प्रति समर्पित हूँ, किन्तु मेरे सेवकों में मेरे गादीपति होने की मर्यादा रख

लीजिये।

तब राजें इनसों कह्या, तुम्हारी क्यों न राखें सरम।
तुमको जो हम कहेंगे, दे परदा ओट मरम।।१०।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने कहा– चिन्तामणि! भला मैं तुम्हारी मर्यादा की रक्षा क्यों नहीं करूँगा ? मैं तुम्हें खण्डनी के वचन तो अवश्य कहूँगा, किन्तु पर्दे की ओट से कहूँगा, जिसका अर्थ या तो मैं समझूँगा या तुम।

ए सब गये अपने घरों, राजें रात में किये कीर्तन।
सुनो रे सत के बनजारे, ए सुकन ग्रहो मोमिन।।११।।

जब चिन्तामणि अपने शिष्यों सहित अपने घर चले गये, तो रात्रि में एक कीर्तन उतरा "सुनो रे सत के बनजारे" अर्थात् हे सत की राह पर चलने वाली परमधाम की

आत्मा! तू मेरी वाणी सुन। इस कीर्तन में परमधाम की ब्रह्मसृष्टि से यह आग्रह किया गया है कि वह वाणी के सार रस को ग्रहण करे।

तिनमें सुकन खण्डनी के, तुम छोड़ो ग्यान गुमान।
प्रात को आये जब पढ़िया, तब चिन्तामनि को भई पहिचान।।१२।।

इस कीर्तन में खण्डनी के वचन थे, जिनमें कहा गया था कि तुम्हें अपने ज्ञान के अहंकार को छोड़ देना चाहिये। प्रातःकाल आकर जब चिन्तामणि ने उसे पढ़ा, तो चिन्तामणि को वास्तविक सत्य का आभास हो गया।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में "पढ़ना" शब्द है, "श्रवण" करना नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि रात्रि को जो कीर्तन उतरा था, उसको लिखित रूप में श्रीजी ने चिन्तामणि जी को पढ़ने के लिये दे दिया, क्योंकि

चिन्तामणि ने आग्रह किया था कि सबके सामने मेरी सीधी खण्डनी न की जाये।

अब मारों काले कुत्ते को, लाठी सिर ऊपर।
सेवकों आगे तब कह्या, मैं खाली कछु न खबर।।१३।।

अब चिन्तामणि जी सबके सामने खड़े होकर कहने लगे कि हे धाम धनी! आपके ज्ञान की लाठी से, मैं अब अपने अहंकार रूपी काले कुत्ते को मार डालूँगा। अपने सेवकों से चिन्तामणि जी ने स्पष्ट कह दिया कि मेरे अन्दर अखण्ड का कुछ भी ज्ञान नहीं है। श्रीजी साक्षात् ब्रह्म स्वरूप हैं, इनके चरणों में आ जाओ।

तब श्रीजीयें सराहिया, स्याबास चिन्तामन।
पाई तें निसबत, ए सुकन मोमिन।।१४।।

तब श्रीजी ने उसके स्पष्ट कथन को सराहा– शाबाश चिन्तामणि! इस प्रकार के स्पष्ट वचन तो केवल परमधाम की ब्रह्मसृष्टि ही कह सकती है। तुमने मूल सम्बन्ध से अपने प्रियतम अक्षरातीत को पा लिया है।

भावार्थ– लोकेषणा (प्रतिष्ठा की इच्छा) और दारेषणा (आश्रितों और अनुयायियों का मोह) को छोड़ पाना, बड़े–बड़े ज्ञानी–तपस्वियों के लिये भी कठिन होता है। किन्तु कीर्तन में चिन्तामणि की आत्मा को सम्बोधित करते हुये ही कहा गया था कि हे चिन्तामणि! तुमने गृहस्थी के बन्धन को तो छोड़ा, लेकिन उससे बड़ा बन्धन गादी का ले लिया। यदि तुम्हें सत्य की चाहना है, तो इस कीर्तन के शब्दों से सत्य की पहचान करो। अपने शिष्यों में अपनी प्रतिष्ठा के बन्धन को छोड़कर सद्गुरु रूप में आये हुये अक्षरातीत की पहचान करो।

कीर्तन के इन शब्दों से चिन्तामणि जी को इतनी चोट लगी कि उनका विवेक जाग्रत हो गया और उन्होंने संसार के सुखों को ठोकर मारकर धनी के चरणों को पकड़ लिया।

कह्या श्री तारतम इनको, सब सेवकों समेत।
परहेज कराया चार बात का, ए कबूल कर दिल लेत।।१५।।

अब श्रीजी ने चिन्तामणि को उनके सभी शिष्यों सहित तारतम ज्ञान प्रदान किया और चार बातों का संयम करने के लिये कहा। सबने उसे स्वीकार कर अपने दिल में तारतम ज्ञान को ग्रहण किया। वे नियम (त्याग) इस प्रकार हैं।

एक हराम कह्या मांस को, दूसरा हराम सराब।

तीसरी औरत बिरानी तजे, सो पावे हैयाती आब।।१६।।

१. माँस खाना, २. शराब पीना, और ३. परायी स्त्री के साथ सम्बन्ध रखना महापाप है। जो इन तीन दुष्कर्मों का त्याग कर सकता है, वही अखण्ड सुख को प्राप्त करने का अधिकारी है।

चोरी झूठ बोलना, इनका छोड़ाया उदक।

अब हम कबहूँ ना करें, हम पाया बेसक हक।।१७।।

इसी तरह, चोरी करना और झूठ बोलना भी पाप कर्म हैं। श्रीजी ने इन सबको छोड़ने के लिये प्रतिज्ञा दिलाई। सबने यह प्रण किया कि अब हम कभी भी इन बुरे कर्मों को नहीं करेंगे। निश्चित रूप से हमने सच्चिदानन्द परब्रह्म को पा लिया है।

इन समय में चरचा, बड़ी जो होवे तित।

साथ की आमदानी, हुई बड़ी इन बखत।।१८।।

इस समय ठट्ठानगर में श्रीजी की बहुत जोर–शोर से चर्चा हो रही थी और तारतम ज्ञान का प्रकाश चारों तरफ फैल रहा था। ऐसे समय में सुन्दरसाथ का आगमन बहुत अधिक बढ़ता गया।

चतुरा एक पोहोकरना, आवे श्री राज की सेवा में।

ल्यावे दूध नित्यानें, सुनी चरचा कानों उने।।१९।।

चतुर एक पुष्करण ब्राह्मण थे। वे प्रतिदिन श्रीजी की सेवा में आया करते और श्रीजी के पीने के लिये दूध लाया करते थे। उसने श्रद्धाभाव से श्रीजी की चर्चा सुनी थी और विश्वास लाया था।

तहाँ ब्रज रास को बरनन, होत हतो नित्यान।

वह देख अचंभा होवहीं, चरचा सुनते कान।।२०।।

श्रीजी की चर्चा में अखण्ड व्रज और रास का प्रतिदिन वर्णन हुआ करता था। जब वह चर्चा सुनता था, तो चर्चा की माधुर्यता और अलौकिकता को देखकर आश्चर्य में पड़ जाता था।

तहाँ उनकी सोहोबत लाल सों, नित्याने बखार में होए।

तहां आया चतुरे कही, चरचा सुनके आया जोए।।२१।।

लालदास जी से चतुर जी की भेंट प्रतिदिन उनके गोदाम में होती थी। चतुर दास जी ने श्रीजी से जो अखण्ड व्रज-रास की चर्चा सुनी थी, उसका प्रसंग छेड़ दिया, और कहने लगे- सेठ जी! आप यह बताइये कि।

कहां ब्रज अखण्ड क्योंकर, कहाँ रास अखण्ड।

ए तो तुम कहत हो, न्यारा जो ब्रह्माण्ड।।२२।।

अखण्ड व्रज कहाँ है और अखण्ड रास कहाँ है? आप तो कहा करते हैं कि अखंड व्रज–रास तो इस ब्रह्माण्ड से अलग है। व्रज की लीला दिन और रात्रि में है, तथा रास की लीला पूर्ण रात्रि में है। ऐसी स्थिति में दोनों किस प्रकार अखण्ड हैं?

तब लालें कह्या, रास ब्रज न हमारी दृष्ट।

चरम आंख क्यों देखिए, इन हाल सब सृष्ट।।२३।।

तब लालदास जी ने कहा– व्रज और रास की लीला हमें इसलिये दिखायी नहीं देती, क्योंकि वह त्रिगुणातीत है। इस नश्वर जगत की मायावी आँखों से उसे कैसे देखा जा सकता है?

तब चतुरे ने कहीं, क्यों आवे तुम्हारी नजर।
तुम दिव्य दृष्ट कब पाओगे, क्यों कर होय फजर।।२४।।

तब चतुर जी ने कहा– ऐसी स्थिति में तो तुम्हें व्रज–रास का दर्शन नहीं हो सकता। पता नहीं कब आपको दिव्य–दृष्टि मिलेगी? कब आप लीला का रसपान करेंगे? ऐसी मान्यता से आपके हृदय में ज्ञान का प्रकाश कैसे हो सकता है?

पांच तत्व तीन गुन को, जब हुयो ब्रह्माण्ड को नास।
तब ब्रज और रास की, ठौर कहाँ रही खास।।२५।।

जब पाँच तत्व और तीन गुण वाले इस ब्रह्माण्ड का महाप्रलय में लय हो जायेगा, यह बताइये कि तब अखण्ड व्रज और रास की स्थिति कहाँ पर होगी?

तब लालदास चौंकिया, तैं कहाँ सुनी ए बात।

मोहे ठौर बताय देओ, ए कहाँ पाई सिफत जात।।२६।।

तब श्री लालदास जी चौंक पड़ते हैं, और कहने लगे– चतुर! यह अलौकिक ज्ञान तुमने कहाँ से सुना? जिस अलौकिक महापुरुष से तुमने यह अद्भुत ज्ञान सुना है, मुझे उनका पता बताने का कष्ट करो।

तब चतुरे ने कह्या, कोई साध आए इन ठौर।

तहाँ चरचा होत है, ब्रज रास की जोर।।२७।।

तब चतुर जी ने कहा– ठट्ठानगर में कोई अलौकिक महात्मा आये हुये हैं। उन्हीं के मुखारविन्द से व्रज और रास की अद्भुत चर्चा हुआ करती है।

महामति कहें ए साथ जी, ए ठट्ठे की बीतक।

ए मेहर सैयों पर करी, साहिब सुभानल हक।।२८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह ठट्ठानगर का वृत्तान्त वर्णित हुआ। पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत ने श्रीजी के रूप में ठट्ठानगर के सुन्दरसाथ पर ऐसी कृपा की कि वहाँ अखण्ड धाम के अलौकिक ज्ञान की इतनी वर्षा हुई।

प्रकरण ।।२४।। चौपाई ।।१०५१।।

श्री लालदास जी का श्रीजी से मिलाप

ए ठट्ठे की बीतक, लालदास की मुलाकात।
जिन भाँत आए मिले, सो ए कहों फेर बात।।१।।

अब मैं ठट्ठानगर के उस घटनाक्रम का वर्णन कर रहा हूँ, जिसमें श्रीजी से लालदास जी की भेंट होती है। किस तरह से लालदास जी श्रीजी के चरणों में आते हैं, वह बात मैं पुनः दोहराता हूँ।

तब लालदासें कह्या, मोकों ले चलो तुम।
मैं जाए मुलाकात करों, ए रहमत पावें हम।।२।।

तब श्री लालदास जी ने चतुर जी से कहा कि मुझे तुम श्री प्राणनाथ जी के पास ले चलो। मैं जाकर उनके दर्शन करना चाहता हूँ, ताकि मैं भी उनकी कृपा का पात्र बन

सकूँ।

मैं उन्हें पूछ तुम्हें ले चलों, बिना उनके हुकम।
मैं ले जाए ना सकों, तुमको उनके कदम।।३।।

चतुर ने उत्तर दिया कि मैं श्रीजी से पूछकर ही आपको उनके पास ले चलता हूँ। बिना उनकी स्वीकृति के, मैं आपको उनके चरणों में नहीं ले जा सकता।

चतुरे आए अरज करी, लाल चाह करें दीदार।
लछमन उनका नाम है, है तालिब धनी निरधार।।४।।

चतुर ने आकर के श्रीजी के चरणों में प्रार्थना की कि नगर के एक सेठ लक्ष्मण दास (लालदास) आपके दर्शन की इच्छा करते हैं। उनके मन में प्रियतम अक्षरातीत को जानने की तीव्र उत्कण्ठा है।

हुकम हुआ श्री राज का, उनको बुलाओ सिताब।

काहू काहू ने मने करी, फेर मेहर करी उनके बाब।।५।।

श्री प्राणनाथ (श्री राज) जी ने उनको आदेश दिया कि सेठ लक्ष्मण दास जी को तुरन्त बुलाकर लाओ। वहाँ बैठे हुये कई श्रोताओं ने मना किया, फिर भी श्रीजी ने अति कृपा करके उन्हें बुलाने का आदेश दिया।

भावार्थ– श्रीजी की चर्चा में नगर के कुछ अन्य सेठ आते थे। उनमें लक्ष्मण सेठ (लालदास जी) के प्रति द्वेष भाव था। इसलिये वे नहीं चाहते थे कि लक्ष्मण सेठ भी श्रीजी के चरणों में आयें, क्योंकि उनको यह भय था कि लक्ष्मण सेठ के यहाँ आ जाने पर कहीं उनकी महत्ता कम न हो जाये।

आया बुलावन चतुरा, चला अपने संग लगाए।
आये पहुँचे कदमों, भेंट करी बनाए।।६।।

चतुर श्री लालदास जी को बुलाने के लिये आये और अपने साथ लेकर चल दिये। श्रीजी के चरणों में पहुँचकर लालदास जी ने प्रणाम किया।

देखत ही दीदार को, बड़ो जो पायो सुख।
मन की कुलफत सब मिटी, भाग गया सब दुःख।।७।।

श्रीजी का दर्शन करते ही लालदास जी बहुत आनंदित हुये। उनके मन का सारा कष्ट मिट गया। उनके मन के सभी द्वन्द्व समाप्त हो गये और सारा दुःख दूर हो गया।

भई चरचा सब ब्रजकी, देखी सुनी सब कान।

तब आय ईमान की, होय गई पहिचान।।८।।

श्रीजी के मुखारविन्द से जब व्रज की चर्चा हुयी, तो लालदास जी ने उसे बाह्य कानों से भी सुना और अन्तर्दृष्टि से भी देखा (विचारा)। तब उनके अन्दर धनी के प्रति विश्वास जागा और उन्हें श्रीजी की अलौकिकता की पहचान हुयी।

चार घड़ी चरचा सुनी, हुई खुसाली मन।

फेर के लाल घरों आये, रहा कदमों दिल मोमिन।।९।।

लालदास जी ने श्रीजी के मुखारविन्द से लगभग डेढ़ घण्टे (चार घड़ी) चर्चा सुनी। उनके मन को बहुत आनन्द हुआ। यद्यपि वे चर्चा सुनने के पश्चात् घर आ गये, फिर भी उनका मन श्रीजी के चरणों में वहीं लगा

रहा।

फेर के चरचा सुनने, आये बेर दो चार।

बाग में जिन्दादास कही, धाम पैठे बिना विचार।।१०।।

उसके बाद श्री लालदास जी दो–चार बार पुनः चर्चा सुनने के लिये आये। एक दिन जब वे अपने बाग में टहल रहे थे, तो जिन्दादास जी ने कहा कि सेठ जी! बिना विचारे ही आपने परमधाम का ज्ञान ग्रहण कर लिया।

भावार्थ– जिन्दादास जी के कथन का आशय यह था कि जिसकी चर्चा सुनने आप गये थे, क्या उनके स्वरूप को आपने पहचाना है?

फेर चरचा मारकंड की, कह दिखाया दृष्टान्त।

तब नजर खुली बातन की, देखी दृष्ट एकान्त।।११।।

फिर जिन्दादास जी ने मार्कण्डेय जी की कथा के दृष्टान्त से समझाया कि जिस प्रकार मार्कण्डेय जी ने नारायण के चरणों में रहते हुये माया देखने की इच्छा की थी और उनको जाग्रत भी नारायण ने ही किया। उसी प्रकार परमधाम की आत्माओं ने अक्षरातीत श्री राज जी से उनके चरणों में रहते हुये ही माया का खेल देखने की इच्छा की और उन्हें जगाने के लिये स्वयं अक्षरातीत श्री राज जी इस जागनी ब्रह्माण्ड में श्री प्राणनाथ जी (श्रीजी) के रूप में आये। इस दृष्टान्त को सुनने के पश्चात् श्री लालदास जी की अन्तर्दृष्टि खुल गयी और उससे उन्होंने मूल मिलावे की झलक देखी।

भावार्थ– भागवत के १२वें स्कन्ध के ९वें अध्याय में मार्कण्डेय जी के द्वारा माया–दर्शन का जो वृत्तान्त वर्णित है, वह संक्षेप में इस प्रकार है–

नर–नारायण से वर होने के पश्चात् एक बार जब मार्कण्डेय मुनि पुष्पभद्रा नदी के तट पर ध्यान में तल्लीन थे, उसी समय जल प्रलय हो गया। सारी पृथ्वी जल में डूब गयी। स्वयं मार्कण्डेय जी भी उसी जल में बहुत समय तक भटकते रहते हैं। अचानक उन्हें बरगद के पेड़ के एक पत्ते में एक छोटा सा शिशु लेटा हुआ दिखायी दिया। उसके सौन्दर्य को देखकर मार्कण्डेय मुनि मोहित हो गये और जैसे ही उस बालक ने स्वांस खींची, मार्कण्डेय मुनि उस बालक के पेट में चले गये। उसके पेट में उन्होंने सारी सृष्टि का दृश्य देखा, जैसा उन्होंने प्रलय के पहले देख रखा था।

कुछ समय के पश्चात् उसके स्वांस से वे बाहर आ गये। बाहर आने पर उन्होंने पुनः प्रलय का दृश्य देखा। कुछ देर में बरगद के पत्ते पर लेटा हुआ वह बालक रूप

नारायण भी नहीं था और बालक सहित प्रलय का सारा दृश्य समाप्त हो गया था।

इसी प्रकार परमधाम की आत्माओं के मूल तन मूल-मिलावा में विराजमान हैं। अब उनकी सुरता, आत्मा के रूप में, जीव के ऊपर विराजमान होकर माया की लीला को देख रही है। अक्षरातीत उनकी आत्मा को जगाने के लिये श्रीजी के रूप में आये हैं। जब वे जाग्रत हो जायेंगी, तो यह सारा ब्रह्माण्ड समाप्त हो जायेगा। इसी कथानक से मिलता-जुलता दृष्टान्त तारतम वाणी के प्रकाश हिन्दुस्तानी प्रकरण- "मार्कण्डेय का दृष्टान्त" में दिया गया है।

गीता और भागवत के, खोल दिये सब द्वार।

आई वस्त अखण्ड, देखे धनी निरधार।।१२।।

श्री लालदास जी की अन्तर्दृष्टि खुल जाने पर उन्हें भागवत और गीता के सारे गुह्य रहस्य विदित हो गये। उन्हें अखण्ड धाम की शोभा भी झलकने लगी और श्रीजी को साक्षात् अक्षरातीत के रूप में देखा।

आया जोस वस्त का, रही न कछु सुध।
लौकिक दृष्ट उतर गई, आई जागृत बुध।।१३।।

धनी का जोश आने से उन्हें कुछ भी सुध न रही। उनके हृदय में जाग्रत बुद्धि के विराजमान हो जाने से, उनमें लौकिक दृष्टि नहीं रही।

और सुध कछु ना रही, वही आवे याद।
दृष्ट फिरी उतथें, अपनी जो बुनियाद।।१४।।

परमधाम के अतिरिक्त उन्हें और किसी भी बात की

सुधि नहीं रही। अब लालदास जी को अनुभव होने लगा कि किस प्रकार उनकी दृष्टि मूल तन परमधाम से हटकर इस संसार में आई है और इस पिण्ड–ब्रह्माण्ड को ही अपना मूल तन और मूल घर मानकर बैठी है। उन्हें बार–बार परमधाम की याद आने लगी और उसका अनुभव होने लगा।

इन समें कलयुग ने, बड़ा जो किया सोर।
लोग जो उन मुलक के, उनों किया अति जोर।।१५।।

इस समय माया की ओर से जागनी लीला में बहुत बड़ा अवरोध खड़ा किया गया। उस क्षेत्र के कुछ अज्ञानी लोगों ने ठट्ठानगर में होने वाली ज्ञान चर्चा का बहुत अधिक विरोध किया।

कछु ना चला काहू को, रहे सिर पटक।

निन्दा करी बहुतक, थी इत मदद हक।।१६।।

किन्तु जब मूल स्वरूप अक्षरातीत का ही वरद हस्त हो, तो कोई क्या कर सकता है? विरोधी लोगों ने जी भरकर निंदा की तथा चर्चा के कार्यक्रम में बाधा डालने के लिये सारे प्रयास कर लिये, लेकिन उनमें से किसी का कुछ भी वश नहीं चल पाया।

इन समें आइया, मोहनदास दलाल।

राम दास वैद्य, ए भी हुआ खुसाल।।१७।।

इस समय होने वाली श्रीजी की जागनी लीला में मोहन दास दलाल ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया। उनके साथ रामदास वैद्य ने भी बहुत आनन्दपूर्वक परमधाम की राह पकड़ी।

खटू मटू खत्री आये, और आया चतुर।

और मंगल आइया, हुई खुसाली खूबतर।।१८।।

धाम धनी के चरणों में खट्टू –मट्टू खत्री, चतुर, और मंगल जी ने भी अपनी आत्मा का सम्बन्ध परमधाम से जोड़ा। चारों ओर सबके हृदय में बहुत अधिक प्रसन्नता छा गयी।

और भगत सामल, कुंवरजी और गोवरधन।

सुकदेव और जेठा, और द्वारका सैंयन।।१९।।

श्यामल भगत, कुंवर जी, गोवर्धन, शुकदेव, और द्वारिका, परमधाम के ब्रह्ममुनि थे, जिन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण कर निजानन्द की राह अपनायी।

रायचन्द्र बुला धीरा, और आये थिरदास।

और साथी केतेक, ल्याये ईमान खास।।२०।।

रायचन्द, बूला, धीरा, थिरदास, आदि बहुत से सुन्दरसाथ तारतम ज्ञान ग्रहण कर धनी के ऊपर अटूट विश्वास ले आये।

किसन बाई बसई, सेहेज बाई राम।

वल्लभी चतुराई करें, चरचा में आराम।।२१।।

किसन बाई, बसई बाई, सहज बाई, राम बाई, तथा वल्लभी बाई ने श्रीजी के चरणों में स्वयं को समर्पित किया। ये सुन्दरसाथ बहुत ही बुद्धिमतापूर्वक श्रीजी की सेवा करते थे और चर्चा सुनकर अखण्ड आनन्द का अनुभव करते थे।

और चिन्तामन के संग, आया केतेक साथ।

तामें ईमान दाखिल वह भये, जाके धनियें पकड़े हाथ।।२२।।

चिन्तामणि जी के साथ बहुत से सुन्दरसाथ ने तारतम लिया, किन्तु धाम धनी ने जिनके ऊपर कृपा की, वे लोग ही अटूट विश्वास लेकर परमधाम की राह पर चले।

इत चरचा का मारका, बड़ा जो पड़िया आए।

वल्लभी मार्ग के लोग, लड़नें को उठ धाए।।२३।।

श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली अलौकिक चर्चा का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि चारों ओर श्रीजी की महिमा की बातें होने लगीं। इससे वल्लभाचार्य मत के लोग द्वेष करने लगे और लड़ने का बार-बार प्रयास करते थे।

कलयुग डरा देख के, मेरे ए दुस्मन।
मेरा कछु ना चले, ए मारत मेरा मन।।२४।।

तारतम ज्ञान की अगाध ज्ञान वर्षा के सामने अज्ञानी लोगों के मन में डर पैदा हो गया। उन्होंने श्री प्राणनाथ जी को अपना शत्रु मान लिया। लेकिन वे जानते थे कि इनके ऊपर हमारा कोई बल नहीं चल सकता (ये तो हमारे मन को अपने वश में करके कहीं और भटका देंगे)। इन्होंने अपने ज्ञान बल से हमारे मन को मार दिया है, अर्थात् हमें विवश कर दिया है कि हम चुप रहें।

गुसाँई के बालक रहे, होय निंदा तिन में।
वस्त को समझे नहीं, फरियाद लगी तिन सें।।२५।।

गुँसाई जी के बालक हमेशा श्रीजी की निन्दा किया करते थे। वे आध्यात्मिक ज्ञान को समझ नहीं पाते थे।

अपने पिता के पास जाकर वे प्रार्थना करते थे कि आप श्री प्राणनाथ जी का विरोध कीजिये। वे यहाँ सबको भटका रहे हैं।

भावार्थ– वल्लभाचार्य मत के आचार्यों को गुँसाई कहते हैं। तारतम ज्ञान से रहित होकर कोई भी व्यक्ति अखण्ड व्रज और रास के भेद नहीं बता सकता। वल्लभाचार्य मत में गादी परम्परा वंशानुगत होती है। ठट्ठानगर में जब गुँसाई जी के बालकों को अखण्ड व्रज–रास का वर्णन समझ में नहीं आता था, तो वे श्रीजी की निंदा करते थे और पिता जी से उनका विरोध करने के लिए आग्रह करते थे।

मास दस यहां रहे, हुआ चलने का दिन।

मौसम भई मसकत की, विदा हुये साथ मोमिन।।२६।।

श्रीजी दस महीने ठट्ठानगर में रहे। अब वहाँ से चलने का समय आ गया। मस्कत जाने के लिये अनुकूल दिशा में हवा बहने लगी थी। अब श्रीजी ने सब सुन्दरसाथ से विदा लेकर वहाँ से प्रस्थान किया।

अरज करी सब साथनें, ए कारज करें हम।

आप इत बिराजे रहो, ए कारज होवे हुकम।।२७।।

सब सुन्दरसाथ ने श्रीजी के चरणों में प्रार्थना की कि हे धाम धनी! आप यहीं ठट्ठानगर में विराजमान रहिये। श्री तेज कुँवरी बाईजी को हम छुड़ा कर लायेंगे। श्री राज जी के आदेश से यह कार्य अवश्य हो जायेगा।

तब कह्या साथ को, उत है मेरा काम।

क्या जानें किन कारने, मेरा जाना होत तिस ठाम।।२८।।

तब श्रीजी ने उन सुन्दरसाथ को समझाया कि मेरा वहाँ जाना अति आवश्यक है, क्योंकि पता नहीं किस ब्रह्मसृष्टि की जागनी होनी है। इसलिये मूल स्वरूप की तरफ से मुझे वहाँ जाने के लिये प्रेरणा हो रही है।

बहुत विनती साथें करी, मानीं नाहीं कोय।
तब आज्ञा पर धरी, कहा कारज कारण सोय।।२९।।

यद्यपि सुन्दरसाथ ने बहुत प्रार्थना की, लेकिन श्रीजी ने उसे स्वीकार नहीं किया। श्रीजी ने कहा कि वहाँ मेरे जाने का कुछ विशेष कारण है। उनकी इस बात को सबने श्री राज जी का आदेश मानकर शिरोधार्य कर लिया।

फेर ठट्ठे से लाठी बन्दर, नाव ऊपर चढ़े।

तहां से पहुंचे मसकत, सरत थी वायदे।।३०।।

अब श्रीजी ठट्ठानगर से नाव पर चढ़कर लाठी बन्दर आये और वहां से मस्कत बन्दर पहुँचे। वायदे की शर्त के अनुसार तो धाम धनी को वहाँ जाना ही था।

भावार्थ– परमधाम में श्री राज जी ने ब्रह्मसृष्टियों को वचन (वायदा) दिया था कि माया के खेल में मैं तुम्हें अपने से अलग नहीं करूँगा और तुम्हें जगाने के लिये किसी न किसी रूप में तुम्हारे सम्मुख आऊँगा। उसी वायदे के अनुसार श्री राज जी को श्री मिहिरराज जी के तन में विराजमान होकर अरब देश में भी जाना पड़ा था।

बांधे आप हुकम के, काजी हुए इत आए।

कौल किया मोमिनों सो, सो पाल्या खेल देखाए।।

सनंध ३८/४९

यह कथन इसी तरफ संकेत करता है।

महामति कहे ए साथ जी, ए ठट्ठे की बीतक।

अब कहों मसकत की, जो आज्ञा है हक।।३१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! ठट्ठेनगर के वृत्तान्त को आपने सुना। अब मैं श्री राज जी के आदेश से मस्कत नगर के घटनाक्रम का वर्णन कर रहा हूँ।

प्रकरण ।।२५।। चौपाई ।।१०८२।।

मस्कत बंदर वृत्तांत

आए पहुँचे मसकत में, उतर नाव से।

काँठे दुकान महावजी की, आए बैठे उन में।।१।।

श्रीजी मस्कत बन्दरगाह आने पर नाव से उतर गये और किनारे की ओर चल पड़े। वहीं सागर के किनारे महाव जी भाई की दुकान थी, उसमें आकर विराजमान हुये।

पूछी खबर उन नें, उठ के मिले धाए।

कुसल खेम पूछन लगा, भले आप पहुँचे आए।।२।।

महाव जी भाई उठकर श्रीजी से प्रेमपूर्वक मिले और श्रीजी से उनके कुशल क्षेम के साथ-साथ सारा समाचार भी पूछने लगे। कहने लगे कि बहुत अच्छा हुआ जो आप यहाँ आये।

इत बड़ो आदर कियो, लौकिक नाते से।

आदर भाव करने लगे, खबर बंद की पूछी इन समें।।३।।

सौभाग्य से महाव जी भाई भी सूर्यवंशी क्षत्रिय थे। इस लौकिक सम्बन्ध से उन्होंने श्रीजी का बहुत आदर-सत्कार किया। तब श्रीजी ने उस समय बन्धन में पड़े हुये सुन्दरसाथ का समाचार पूछा।

विस्वनाथ संग था, श्री बाईजी की दई खबर।

रूपा राधा संग थी, धाए के पहुँची घर।।४।।

मस्कत बन्दर में विश्वनाथ जी से श्रीजी की भेंट हुई, जो श्री बाईजी के साथ बन्ध में थे। विश्वनाथ जी ने बाईजी की सारी सूचना दी। उनके साथ रूपा और राधा बाई भी थीं। विश्वनाथ, रूपा, और राधा को उनके सगे सम्बन्धियों ने धन देकर छुड़ा लिया था। रूपा और राधा

अपने सगे–सम्बन्धियों को श्रीजी के आगमन की सूचना देने के लिये तेज कदमों से घर गयीं।

ठौर पास दई रहने को, सब मिल हुये खुसाल।
बातां लगे करनें, बीतक अपनें हाल।।५।।

महाव जी भाई ने अपने घर के पास ही श्रीजी के रहने की व्यवस्था की। सब सुन्दरसाथ श्रीजी से मिलकर बहुत आनन्दित हुये और आपस में एक–दूसरे से अपनी आपबीती बताने लगे।

महावजीयें रसोई का, आदर किया इत।
लगा आप सेवा करने, हाल भाल इन बखत।।६।।

महाव जी भाई ने बहुत ही आदरपूर्वक श्रीजी सहित सभी सुन्दरसाथ के लिये भोजन की व्यवस्था की। मन में

अत्यधिक श्रद्धाभाव लेकर, वे सुन्दरसाथ की सेवा करने लगे।

कानजी बेटा उनका, रहे दुकान पर।

आरोग के फेर बैठे, साथ ठट्ठे की कही खबर।।७।।

महाव जी भाई के बेटे का नाम कान्ह जी भाई था। वे महाव जी भाई की जगह दुकान सम्भालने लगे। भोजन करने के पश्चात् श्रीजी पुनः चर्चा करने बैठ गये। श्रीजी ने ठट्ठानगर के सुन्दरसाथ की जागनी का सारा विवरण सुनाया।

लगी होने चरचा, जो ठट्ठे की बीतक।

उन समय जो सुख भया, मेहर सुभानल हक।।८।।

ठट्ठा में घटित होने वाले सम्पूर्ण वृत्तान्त की श्रीजी ने

चर्चा सुनायी। धाम धनी की कृपा से श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनकर सुन्दरसाथ को अपार आनन्द हुआ।

तिनकी बातें करते, बड़ा जो हुआ सुख।
कसाला जो बंद का, सो भाग गया सब दुःख।।९।।

ठट्ठानगर के घटनाक्रमों का विवरण सुनाते हुए श्रीजी ने जो अलौकिक चर्चा का रस बरसाया, उससे सबको बहुत आनन्द मिला। अरबी लुटेरों के बंधन में रहने का जो कष्ट था, वह श्रीजी की चर्चा से समाप्त हो गया।

इत रूपाबाई राधा, सुनी चरचा तिन।
श्री राज की तरफों, रोसन हुआ मन।।१०।।

रूपाबाई और राधाबाई ने भी श्री प्राणनाथ जी के

मुखारविन्द से चर्चा सुनी। उनका मन श्रीजी के प्रति पूर्णतया समर्पित हो गया।

चरचा मीठी होत है, कोई देवे कान।
महावजी ने चरचा सुनी, होने लगी पहिचान।।११।।

श्री प्राणनाथ जी के मुखारबिन्द से बहुत ही प्रेम से परिपूर्ण रसीली चर्चा होती है। कुछ लोग उसे बहुत सावचेत होकर सुनते हैं। महाव जी भाई ने जब कुछ दिनों तक चर्चा सुनी , तो उन्हें भी श्री प्राणनाथ के स्वरूप की थोड़ी-थोड़ी पहचान हो गयी।

और लोग आवें सुनने, लगी बातें चलनें।
दीदार को लोग आवहीं, बातां लगे सुनने।।१२।।

मस्कत बन्दर से बहुत से लोग चर्चा सुनने के लिये

आने लगे। चारों ओर यह बात फैल गई कि महाव जी की हवेली में अलौकिक ज्ञान की चर्चा चल रही है। उनके दर्शन करने एवं चर्चा सुनने के लिये लोग दूर-दूर से आने लगे।

इहाँ दिन दस बीस में, भई जो चरचा जोर।
दज्जालें इत सुनिया, लगा जो करने सोर।।१३।।

दस-बीस दिन में श्रीजी की चर्चा का प्रवाह बहुत जोर-शोर से होने लगा। जब दज्जाल ने इस की ख्याति सुनी, तो वह चर्चा के विरोध में बहुत शोर करने लगा।

दज्जाल अपनी सिपाह में, निंदा लगा करने।
ए कहाँ से आये हैं, मेरे मारनें का मन में।।१४।।

अज्ञानी लोगों का समूह श्री प्राणनाथ जी की निंदा करने

पर उतर आया। उन्हें यह बुरा लग रहा था कि दूसरे देश से आकर कोई व्यक्ति यहाँ अपने ज्ञान का प्रचार कैसे कर सकता है? इनके ज्ञान के प्रचार से तो हमारी सारी मान्यतायें ही नष्ट हो जायेंगी।

भावार्थ– दज्ञाल कोई व्यक्ति विशेष नहीं है, बल्कि मानव मन में छिपा हुआ अज्ञान और अहंकार है। इसी के कारण कोई व्यक्ति परब्रह्म के ज्ञान और प्रेम की राह को अपना नहीं पाता। इस चौपाई के चौथे चरण में दज्ञाल के मरने का भाव यह है कि लोगों में निहित अज्ञानता का समूल नाश हो जायेगा।

मस्कत बन्दर में रहने वाले लोग जिन रूढ़ियों से जुड़ गये थे, वे उन रूढ़ियों को किसी भी कीमत पर छोड़ना नहीं चाहते थे। इस चौपाई के चौथे चरण में इसी तथ्य को आलंकारिक भाषा में दज्ञाल का मरना कहा गया है।

मैं करों लड़ाई इनसों, ए क्या करें मुझको।

बैठ बाजे दिल में, आये लड़ने को सामों।।१५।।

दज्जाल ने अपने मन में विचारा कि मैं इनसे लड़ाई करूँगा। ये मेरा क्या कर लेंगे? कुछ लोगों के दिल में बैठकर, वह सामने लड़ने के लिये तैयार हो गया।

इहां चरचा कीर्तन होत है, हांस विनोद विलास।

साथ को धाम धनी बिना, और न कछुये आस।।१६।।

महाव जी भाई के घर में चर्चा और कीर्तन का कार्यक्रम हमेशा चलता रहता था। हमेसा हँसी, विनोद, और आनन्द का वातावरण बना रहता था। सुन्दरसाथ को धाम-धनी के अतिरिक्त और किसी चीज की आशा ही नहीं रह गयी थी।

इत दोय चार कीर्तन, नये किये बीतक।

तूं दुनी को क्या पुकारे, देख तरफ हक।।१७।।

श्री राज जी के आवेश से दो-चार नये कीर्तन उतरे। उसमें यह भाव था कि हे मेरी आत्मा! तू इन दुनिया के जीवों को क्या पुकार रही है? ये तो माया में ही डूबे हैं। तू तो एक अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को ही पुकार।

रे हो दुनियां बांवरी, खोवत जनम गमार।

दुनियाँ को तूं कहा पुकारे, ए आपनो करे आहार।।१८।।

संसार के लोग भौतिक सुखों के भोग में पागल हो चुके हैं और परब्रह्म से विमुख होकर अपने अनमोल मानव जीवन को मूर्खता में गँवा रहे हैं। ऐसे मायावी लोगों को बार-बार समझाने से कोई लाभ नहीं होगा। इन जीवों का आहार माया के विषयों का सुख ही है। भला उसे वे

कैसे छोड़ सकते हैं?

तूं भूल ना महामत, संभार अपना आप।

सब स्याने अपने काम में लगे, तोहे विरह धाम का ताप।।१९।।

हे मेरी आत्मा! तू अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को न भूल। अपने आप को संभाल। संसार में बुद्धिमान कहलाने वाले ये लोग, अपने माया के काम में लगे हैं। लेकिन तुझे तो परमधाम के विरह का कष्ट सता रहा है।

भावार्थ– धर्म प्रचार में विरोध वे ही लोग खड़ा करते हैं, जिनको न तो प्रियतम अक्षरातीत से प्रेम होता है और न ही आस्था। वे मात्र अपनी रूढ़िवादिता के संरक्षण के लिये धर्म के पर्दे में लड़ने के लिये तैयार रहते हैं।

इस चौपाई में यही भाव दर्शाया गया है। सामान्यतः यह माना जाता है कि "महामति" शब्द प्रयोग सम्वत् १७३२

में मेड़ते से होता है। किन्तु इस चौपाई में महामति शब्द का प्रयोग स्पष्ट करता है कि उसके पहले भी महामति शब्द का प्रयोग हुआ है, जब श्रीजी वि.सं. १७२५ में मस्कत बन्दर पहुँचे थे।

इसी प्रकार हब्से में अवतरित प्रकाश गुजराती की प्रकट वाणी में भी "महामति" शब्द का प्रयोग हुआ है।

साथ वचन सांभलियां एह, वासनाए कीधां मूल सनेह।
ते मांहें एक इन्द्रावती, कहे वाणी सहुमां महामती।।

प्र. गु. ३७/२१

इन चरचा होते भया, भाई महावजी का इत काम।
चरचा मीठी लगी इनको, दाखिल हुआ निजधाम।।२०।।

चर्चा के क्रम में महाव जी भाई का बहुत बड़ा आध्यात्मिक कार्य हुआ। श्रीजी की चर्चा इनको बहुत ही

मीठी लगी और उन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण कर लिया।

और भी केतेक साथी, आय पहुंचे इन ठौर।
श्री राज की चरचा बिना, सूझत नाहीं और।।२१।।

महाव जी भाई के अतिरिक्त और भी बहुत से सुन्दरसाथ महाव जी भाई के घर आने लगे। उन्हें श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा के अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं देता था।

एक दिन चरचा मिने, भई खण्डनी महावजी पर।
वाकिफ पूरा न था साथ में, अवगुन भासा दिल ऊपर।।२२।।

एक दिन चर्चा में श्रीजी ने महाव जी भाई की खण्डनी कर दी। सुन्दरसाथ के समूह में रहते हुये भी अभी तक उन्हें श्रीजी के स्वरूप की पूर्ण पहचान नहीं हो पायी थी।

इसलिये उन्होंने श्रीजी के द्वारा की गयी खण्डनी का अपने दिल में बुरा मान लिया।

मैं ना जाऊं उन पे, चरचा सुनने को।
मुझ पर करी खण्डनी, क्या देखा अवगुन मुझमों।।२३।।

वे मन ही मन कहने लगे कि अब मैं श्रीजी की चर्चा सुनने नहीं जाऊँगा। वे मेरे ही घर में रहते हैं। मैं उनकी इतनी सेवा करता हूँ। फिर भी उन्होंने सबके सामने मेरी खण्डनी की। उन्हें मेरे अन्दर क्या अवगुण दिखायी दिया?

रिसाय के आप अपने, रह गया घर में।
चरचा समें न आइया, हुआ दिलगीर राज सें।।२४।।

वे क्रोध के वशीभूत होकर अपने घर ही रह गये, चर्चा

सुनने नहीं आये। वे मन ही मन श्रीजी से रूठ गये।

जब सोया रात को, अपनी दुकान मों।
रातें मारा तमाचा राज ने, हुई दहसत जोर इनको।।२५।।

जब महाव जी भाई रात को अपनी दुकान मे सो रहे थे, तो रात्रि के समय श्री राज जी के जोश के स्वरूप ने उनके मुँह पर कसकर तमाचा मारा। महाव जी भाई बहुत अधिक भय के मारे काँपने लगे।

क्यों रीस करी इन को, क्यों न दिये तुम कान।
तूं जा फेर उतहीं, कर देख पहिचान।।२६।।

महाव जी भाई को ऐसा लगा जैसे कोई कह रहा हो, महाव जी भाई! तुम श्रीजी के प्रति क्रोध क्यों करते हो? तुमने उनके उपदेश को अच्छी तरह क्यों नहीं सुना?

अब तुम पुनः वहीं जाओ और श्रीजी के स्वरूप में आये अक्षरातीत की पहचान करो।

भावार्थ– ऐसा प्रतीत होता है कि इस चौपाई में जो महाव जी भाई को श्रीजी के पास जाने की सिखापन दी गई है, वह सपने में दी गई है, किन्तु उनको जो चाँटा पड़ा है, वह प्रत्यक्ष मारा है। दोनों ही लीलायें श्री राज जी के जोश के स्वरूप ने की हैं।

जागे पीछे रोइया, प्रात बैठा आय द्वार।
जगाये श्री जीय को, करने लगा मनुहार।।२७।।

चाँटा पड़ने के बाद, अब महाव जी भाई उठकर बैठ गये और प्रयाश्चित के स्वरों में रोने लगे। वे प्रातःकाल तड़के ही श्रीजी के कक्ष के बाहर आकर बैठ गये। दरवाजा खट–खटाकर श्रीजी को उठाया। वे बहुत ही विनम्र स्वरों

में श्रीजी से प्रार्थना करने लगे।

रोय के कदमों लगा, अपनी कही बीतक।

मुझे तमाचा मार के, मोंह फिराया हक।।२८।।

वे रोते हुये श्रीजी के कदमों में गिर पड़े और उन्होंने रात्रि का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया कि किस प्रकार मुझे चाँटा मारकर आपके पास भेजा गया।

मैं खण्डनी सुन के, होय गया बेजार।

मैं तो कच्चा साथ में, ना पहिचाना परवरदिगार।।२९।।

मैं चर्चा में अपनी खण्डनी सुनकर दुःखी हो गया था। मैं अभी अन्य सुन्दरसाथ की तरह विश्वास में परिपक्व नहीं हुआ था और आपके स्वरूप में लीला करने वाले अक्षरातीत को नहीं पहचान पाया था।

भावार्थ– इस चौपाई का चौथा चरण श्रीजी को स्पष्ट रूप से अक्षरातीत घोषित करता है। महाव जी भाई के अन्दर परमधाम का अँकुर होने के कारण, श्री राज जी ने उन्हें चाँटा मारकर श्रीजी के स्वरूप की पहचान करा दी।

इस घटना से उन सुन्दरसाथ को सिखापन लेना चाहिये जो अपने पद, धन, और अनुयायियों की संख्या के आधार पर श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप को मानवीय व्यक्तित्व के साँचे में ढालना चाहते हैं। ऐसा लगता है कि उनमें परमधाम का अँकूर ही नहीं है। इसलिये उन्हें महाव जी भाई की तरह कोई सिखापन नहीं मिलता।

इहाँ से चरचा मिने, भया पकव प्रवीन।

चरचा सुनते सुनते, बड़ा भया आकीन।।३०।।

अब इस घटना के पश्चात् महाव जी भाई चर्चा में

पूर्णतया परिपक्क हो गये। चर्चा का निरन्तर श्रवण करने से, उनमें श्रीजी के प्रति अटूट आस्था उत्पन्न हो गयी।

बेटा जोरू बाप महतारी, और कुटुम्ब परिवार।
सो सब लगे लड़नें, ले दज्जाल हथियार।।३१।।

अब महाव जी भाई चर्चा, चितवनि, तथा श्रीजी की सेवा में इतना लग गये कि उनसे अब गृहस्थी का कोई काम नहीं होता था। इसलिये उनके माता–पिता, पुत्र और पत्नी, तथा परिवार के अन्य सदस्य दज्जाल के रूप में उनसे लड़ने लगे। विवाद करना ही इनका प्रमुख आयुध (हथियार) था।

ओ तो लसकर दज्जाल का, करने लगा सोर।
जोर लड़ाई उनों करी, जो था उनमें जोर।।३२।।

परिवार के ये सभी सदस्य दज्जाल की सेना के सदस्य थे। इन्होंने परिवार में उत्पात् मचा रखा था। इनको यह स्वीकार ही नहीं था कि महाव जी भाई दिन–रात चर्चा, चितवनि में ही लगे रहें। जहाँ तक सम्भव हो सकता था, अन्य लोगों ने महाव जी भाई के साथ जोरदार विवाद बनाये रखा।

भावार्थ– जब परिवार के सभी सदस्य किसी एक व्यक्ति से लड़ने लगें, तो बड़े से बड़े धैर्यशाली का भी धैर्य टूट जाता है और वह सिद्धान्तों से झुक जाता है। परमधाम का अँकुर होने एवं धाम धनी की मेहेर होने से, महाव जी भाई श्रीजी के चरणों में बने रहे।

प्रायः परिवार और समाज के रिश्ते स्वार्थ पर आधारित होते हैं। उनमें से अधिकतर को यह स्वीकार नहीं होता कि कोई उनके मोह के बाड़े को तोड़कर श्री राज जी से

एकनिष्ठ प्रेम करे।

एह ना डगा इन समें, थे श्री राज इनके साथ।

जाको मदद हक की, धनीये पकड़े हाथ।।३३।।

किन्तु इन विपरीत परिस्थितियों में महाव जी भाई जरा भी डिगे नहीं, क्योंकि उनके ऊपर धाम धनी का वरद हस्त था। स्वयं धाम धनी अक्षरातीत जिसका हाथ पकड़कर माया से निकाल लेते हैं और हृदय का प्रेम लुटाते हैं, उसे भला कोई कैसे विचलित कर सकता है।

किने ना चला तिनसों, सिर भाना दज्जाल।

इनको धाम धनीय का, बड़ा जो हुआ हाल।।३४।।

महाव जी भाई के ऊपर किसी का भी वश नहीं चला। उन्होंने विरोध रूपी दज्जाल का सिर तोड़ दिया। धाम

धनी श्री राज जी की इन पर अपार मेहर थी। इसके पश्चात् ये धाम धनी के गहन प्रेम की अवस्था में डूबे रहने लगे।

इन समें साथ आइया, कहों जो तिन के नाम।
पहिले सबसे आइया, विस्वनाथ इन काम।।३५।।

इस समय जिन सुन्दरसाथ ने तारतम ग्रहण किया, मैं उनके नाम बताता हूँ। सबसे पहले विश्वनाथ भाई ने श्रीजी के चरणों में आकर तारतम लिया।

राधा बाई रूपा, और भाटिया प्रधान।
और आया खट्टू, पहिले राजो को पहिचान।।३६।।

राधा बाई, रूपा, भाटिया प्रधान, और खट्टू ने श्रीजी के स्वरूप में श्री राज जी की पहचान की और तारतम ज्ञान

ग्रहण किया।

और हीर जी भाटिया, और महावजी इन समें।
और नारायन कायस्थ, रामें सुनी उनसें।।३७।।

इस समय हीर जी भाटिया, महाव जी, और नारायण कायस्थ ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया। राम जी ने इन सुन्दरसाथ से श्रीजी के बारे में ज्ञान लेकर तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और जीवा खंभालिये का, संगजी आया इन ठाम।
कानजी महावजी का, आए गंगा हीरा इसलाम।।३८।।

खंभालिया के रहने वाले जीवा भाई और संग जी ने भी निजानन्द की राह पकड़ी। महाव जी के पुत्र कान्ह जी भाई तथा गंगा एवं हीरा ने भी शाश्वत शांति के इस मार्ग

को ग्रहण किया।

और लखमन रंगानाथी, और मानजी जीवा वे।
और रूपजी कामदार, और बेरसी सुनी ये।।३९।।

लक्ष्मण, रंगनाथी, मानजी, जीवा, रूप जी कामदार, और बेरसी ने श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली तारतम ज्ञान की अलौकिक चर्चा को सुना।

एह आये इन समें, तामें चरचा बड़ी होए।
सुख लिया इन साथ मे, क्योंकर कहों मैं सोए।।४०।।

इन सभी सुन्दरसाथ ने उस समय तारतम ज्ञान ग्रहण किया, जब चर्चा का अखण्ड रस बह रहा था। इन सुन्दरसाथ ने जो चर्चा का सुख लिया, उसे मैं किस तरह से व्यक्त करूं।

उच्छव चरचा नित्याने, होत साथ मिने।

हाथ पटके दज्जालें, ए मगन धाम मिने।।४१।।

मस्कत बन्दर के सुन्दरसाथ में चर्चा तथा प्रीतिभोज आदि का कार्यक्रम नित्य ही चलता रहता था। मायावी लोग इसका विरोध करते रहते थे, किन्तु सफल नहीं हुए, जबकि सुन्दरसाथ परमधाम की चर्चा–चितवनि में डूबा रहता था।

बन्दीवान के पैसे को, आए दरोगा करे पुकार।

काफर गरजे सिर पर, क्यों होत ना खबरदार।।४२।।

अरबी लुटेरों के कारागार का दरोगा हमेशा आकर तेज स्वरों में कहा करता था कि बन्धन में पड़े हुये अपने लोगों को पैसे देकर छुड़ाने के सम्बन्ध में आप सावधान क्यों नहीं होते हो?

भावार्थ– "सिर पर गरजने" का आशय होता है, किसी बात को जोर–जोर से कहना। दरोगा को यहाँ काफिर इसलिये कहा गया है क्योंकि वह सुन्दरसाथ की सभा में जोर–जोर से बोला करता था।

सिर पर साहिब जो, वह है खबरदार।
हमको फिकर न कछुये, और कादर भरतार।।४३।।

श्रीजी ने उससे स्पष्ट रूप से कह दिया कि बन्धन में पड़े हुये लोगों का शुभचिन्तक वह परब्रह्म है, जो सबकी रक्षा करता है। वही सबका स्वामी है और सर्वसमर्थ है। हमें बन्ध में पड़े हुये लोगों की कोई चिन्ता नहीं।

बड़ो दृढ़ाव देखके, वह हो गया जेर।
जिनकी ऐसी चरचा, फेर कहने आवे फेर।।४४।।

श्रीजी की दृढ़ता को देखकर वह नत्मस्तक हो गया। वह जब भी पैसे लेने के सम्बन्ध में कहने आता, तो चर्चा सुनकर यही कहता कि इनकी चर्चा बहुत ही ऊँची है। पैसे की सूचना देने के बहाने वह बार-बार चर्चा सुनने आया करता था।

इन मिस से इनके, आवे करने दीदार।
चरचा सुने श्रवनो, कहे सुकर परवरदिगार।।४५।।

बन्दियों को छुड़ाने के सम्बन्ध में पैसा देने के बहाने वह श्रीजी का दीदार करने आता है, और बैठकर श्रद्धाभाव से चर्चा सुनता था। वह परब्रह्म (अल्लाह तआला) को धन्यवाद देता था कि आपकी रहमत से हमें खुदाई इल्म सुनने को मिला है।

इन भाँत अट्ठाइसे सालमें, रहे मसकत में।

जात आप अपनी, सबों छुड़ाई अरबों से।।४६।।

इस प्रकार श्रीजी मस्कत में वि.सं. १७२८ में रहे। लोहाणा क्षत्रियों के सिवाय अन्य सभी जाति वालों को उनके सगे-सम्बन्धियों ने अरबी लुटेरों से छुड़ा लिया था।

यह बात भैरों सेठ सुनी, सबों छुड़ाई जात अपनी।

रहे अबासी बन्दर, करों अपनी नेक नामी।।४७।।

अब्बास बन्दर में भैरों सेठ रहा करते थे। ये बहुत ही धनवान थे। जब उन्होंने यह सुना कि मेरी जाति के अतिरिक्त अन्य सभी जाति वाले छूट गये हैं, तो अपनी प्रतिष्ठा के लिये सोचा कि मुझे अपनी जाति के लोगों को छुड़ा लेना चाहिये।

भेजे अपने आदमी, लेने को खबर।

केते पैसे बंद के, है डांड इन ऊपर।।४८।।

भैरों सेठ ने अपने आदमी भेजकर ये पता लगवाया कि बन्धन में रखे गये लोगों को छुड़ाने के लिये कितना दण्ड देना पड़ेगा।

खबर लेके आदमी, दई उनें पहुँचाए।

लहारी सत्तर हजार, इतनी देनी आए।।४९।।

भैरों सेठ के आदमियों ने सूचना दी कि लोहाणा जाति के लोगों को छुड़ाने के लिये ७०,००० लारी (अरबी मुद्रा) देनी पड़ेगी।

महामति कहे ए साथजी, है बहुत मसकत बीतक।

सो आगे मजकूर होएगा, कहों अबासी बन्दर बुजरक।।५०।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! मस्कत बन्दर का वृत्तान्त तो बहुत है, जिसकी चर्चा परमधाम में जाग्रत होने पर होगी। अब्बास बन्दर में जागनी की जो विशेष लीला हुयी, उसे मैं कहता हूँ।

प्रकरण ।।२६।। चौपाई ।।११३२।।

अबासी बन्दर की बीतक

अबासी बन्दर में, भैरों रहे सिरदार।

अपनी न्यात छुड़ावनें, हुआ खबरदार।।१।।

अब्बास बन्दर में भैरों नामक धनाढ्य सेठ रहा करते थे। वे लोहाणा क्षत्रिय थे। इस प्रकार वे अपनी जाति के लोगों को छुड़ाने के लिये तत्पर हो गये।

भेजे अपने आदमी, मसकत बन्दर में।

छुड़ाय ल्याया न्यात को, आया आबासी बन्दर अपने।।२।।

भैरों सेठ ने अपने आदमियों को मस्कत बन्दर भेजा। उन्होंने मस्कत बन्दर में दण्ड का रुपया देकर सबको छुड़ा दिया और उन सबको लेकर अब्बास बन्दर आये।

भई मुलाकात भैरों से, श्री जी साहिबजी सों जब।

अपने घरों ले गया, खिजमत करने लगा तब।।३।।

भैरों सेठ से जब श्रीजी साहिब जी की भेंट हुई, तो वह उन्हें अपने घर ले गया और सच्चे हृदय से सेवा करने लगा।

खेम कुसल बातें पूछी, अपने देस परदेस।

सब बात का उत्तर, बताए दिया खेस।।४।।

भैरों सेठ ने श्रीजी से देश-परदेश (भारत, अरब) की बातें पूछीं। श्रीजी ने उसकी भावना के अनुसार लोहाणा जाति से सम्बन्धित उसके सारे प्रश्नों का उत्तर दे दिया।

भावार्थ- जिस तन में श्री अक्षरातीत लीला करते हैं, उनके लिये किसी वर्ण विशेष का कोई महत्व नहीं होता। भैरों सेठ ने अपनी लोहाणा जाति से सम्बन्धित समाचार

पूछा था, इसलिये श्रीजी को वैसा ही उत्तर देना पड़ा।

वृत्तान्त मुक्तावली में वर्णित है कि राजा जयचन्द के राज्य में कुछ ऐसे क्षत्रिय थे, जिन्हें वेदादि ग्रन्थों का ज्ञान था। एक बार जयचन्द ने यज्ञ किया, जिसमें ब्राह्मणों ने पुरोहित बनने से मना कर दिया। इस पर जयचन्द ने उन क्षत्रियों को कहा कि आप पुरोहित बनकर हमारा यज्ञ पूरा करावाइये। उनके भी मना करने पर जयचन्द ने उन्हें राज्य से बहिष्कृत कर दिया। इसके पश्चात् इन लोगों ने गुजरात के सौराष्ट्र प्रान्त में अपना राज्य स्थापित किया। अपनी सुरक्षा के लिये इन्होंने लोहे का दुर्ग बनवाया था, तभी से ये लोहाणा क्षत्रिय के नाम से प्रसिद्ध हो गये। श्री केशव ठाकुर भी सूर्यवंशी लोहाणा क्षत्रिय थे।

भई पहिचान आपस में, हुआ रसोई का आदर।

जागा अपने नजीक, उतारे अपने घर।।५।।

इस प्रकार भैरों सेठ ने श्रीजी को लौकिक रीति से पहचान कर भोजन के लिये आग्रह किया और अपने निवास के पास ही श्रीजी सहित सभी सुन्दरसाथ को एक भवन में ठहराया।

उहाँ बिछौना बिछवाएके, तहाँ पधराये श्रीराज।

रसोई होत एक तरफ, लगे चरचा के काज।।६।।

उस भवन में उसने श्रीजी के लिये पलंग बिछाकर विराजमान कराया। उस भवन में एक तरफ रसोई होने लगी और दूसरी तरफ श्रीजी ने चर्चा प्रारम्भ कर दी।

आए आगे बैठा भैरों सेठ, अपने कबीले समेत।

ब्रज लीला की चर्चा, भैरों श्रवना सों लेत।।७।।

भैरों सेठ अपने सम्पूर्ण परिवार सहित चर्चा सुनने के लिये सबसे आगे बैठे। श्रीजी के द्वारा की गयी अखण्ड व्रज की चर्चा भैरों सेठ ने बहुत ध्यानपूर्वक सुनी।

सुन चरचा सुख पाइया, भई दो पहर बैठक।

काहूको खबर न काल की, ना रही सुख आड़े सक।।८।।

चर्चा सुनकर भैरों सेठ को बहुत आनन्द प्राप्त हुआ। चर्चा होते हुये दोपहर का समय हो गया। श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा इतनी मधुर थी कि किसी को समय का पता ही नहीं चला। किसी के मन में किसी भी प्रकार का शक नहीं रहा। इसलिये सबको अपार सुख हुआ।

रसोई की अरज भई, उठे श्रीराज उन बखत।

भैरों गया अपने घरों, बहुत खुसाल हुआ इत।।९।।

दोपहर तक भोजन बनकर तैयार हो गया था। इसलिये श्रीजी से भोजन करने के लिये आग्रह किया गया। वे चर्चा बन्द करके भोजन करने के लिये तैयार हुए। भैरों सेठ भी अपने घर गये। चर्चा का रस पाकर आज वे बहुत आनन्दित थे।

श्रीराज आरोग फेर बैठे, साथ सुख मिलाय।

कोई कोई इत आय मिले, चरचा को ललचाये।।१०।।

श्रीजी भोजन करने के पश्चात् चर्चा करने पुनः बैठ गये। सुन्दरसाथ को चर्चा में सुख मिल रहा था, इसलिये दौड़-दौड़ कर आने लगे। इधर-उधर से कई सुन्दरसाथ आ गये। वे श्रीजी के मुखारबिन्द से होने वाली चर्चा को

सुनने के लिये तरस रहे थे।

फेर होने लगी चरचा, बखत भयो लेल।
फेर कीर्तन करने लगे, भये मगन ब्रज के खेल।।११।।

अब श्रीजी के द्वारा पुनः चर्चा होने लगी। चर्चा होते – होते रात हो गयी। सुन्दरसाथ व्रज की लीलाओं का गायन करते हुए कीर्तन करने लगे और उसमें मगन हो गये।

इहां बहुत रात बीत गई, हुआ उठने का समें।
भैरों सेठ गया अपने घरों, भये साथ मगन चरचा से।।१२।।

कीर्तन करते हुये रात्रि का अधिकांश भाग बीत गया। यहाँ तक की प्रातः का उजाला भी हो गया। भैरों सेठ अपने घर गये और सुन्दरसाथ चर्चा में मग्न हो गये।

फेर चरचा होत होत, होय गई फजर।

उठे दातौन पानी को, भैरों खुली नजर।।१३।।

पुनः चर्चा होते–होते सवेरा हो गया। दन्त धावन, पानी पीने, और नित्य क्रिया, आदि के लिये सुन्दरसाथ उठने लगे। अपने घर में भैरों की भी नींद खुल गयी।

कोई इत सोये रहे, कोई बैठे पासे श्रीराज।

कोई आवत दीदार को, रह्या चरचा का काज।।१४।।

कुछ सुन्दरसाथ सोये हुये थे, जबकि कुछ श्री प्राणनाथ जी के पास बैठे हुये थे। कुछ सुन्दरसाथ श्रीजी के दर्शन के लिये आने लगे थे। इसलिये चर्चा का कार्य थोड़ी देर के लिये स्थगित हो गया था।

तब आये भैरों ठक्कर, उन संग आये कै लोक।

होने लगी चरचा, भागा सारा सोक।।१५।।

इस समय भैरों सेठ श्रीजी के दर्शन के लिये आये। उनके साथ कई और लोग भी आये। अब श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा शुरू हो गई, जिससे सबके हृदय का दुःख दूर हो गया।

दोय मुलतानी भैरों संग, आये उन बखत।

थे जोगारंभ में मेहेरम, चेला नानक के तित।।१६।।

उस समय भैरव सेठ के साथ, मुल्तान के रहने वाले, दो सत्संगी भी आये। वे गुरु नानकदेव जी के शिष्य थे और योगाभ्यास में प्रवीण थे।

पोथी साखी कबीर की, रहे उनके पास।

अरथ न सूझे तिनका, तापर चरचा हुई खास।।१७।।

उनके पास कबीर जी की साखियों की एक पोथी थी, जिनका अर्थ उन्हें पता नहीं चल पाता था। उन्हीं साखियों पर श्रीजी से विशेष चर्चा हुई।

कोई दिन चरचा से, वे दोऊ लगे कदम।

जेता था अंकूर इनका, इनों सौंपी आतम।।१८।।

उन दोनों ने कुछ दिनों तक चर्चा सुनी। इसके पश्चात् जब धनी के प्रति उनके मन में विश्वास पैदा हो गया, तो उन्होंने श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया। इनके अन्दर ईश्वरीय सृष्टि का अँकुर था। अँकुर के अनुकूल इन्होंने अपनी आत्मा धनी के चरणों में समर्पित की।

तेजबाई इन समै, आई करन दीदार।

ल्याई कबीला अपना, ना रही सक कीर्तन विहार।।१९।।

तेजबाई एक वृद्ध महिला थी, जो श्रीजी का दर्शन करने आयी। अपने साथ वह अपने पूरे परिवार को भी लेकर आयी। वह कीर्तन में मग्न हो गयी और श्रीजी के प्रति उसके मन में किसी भी तरह का संशय नहीं रहा।

तिनको सुन गलतान भई, संग आई सखी जेतीं।

कीर्तन उन्हें मीठे लगे, राज के चरन चित लेतीं।।२०।।

कीर्तन सुनकर तेजबाई के साथ आने वाली सभी बहनें गलित-गात हो गयीं। उन्हें कीर्तन बहुत प्यारे लगे। उन्होंने धाम धनी के चरणों को अपने हृदय में बसा लिया।

फेर वे आवनें लगीं, छोड़ दिये सबों घर।

बैठी रहें चरचा मिने, घर दिल न लगे क्योंए कर।।२१।।

उन सबों ने अपना घर छोड़ दिया और चर्चा सुनने के लिये बार-बार आने लगीं। वे हमेशा चर्चा में बैठी रहती थीं, उनका मन घर में लगता ही नहीं था।

तब भैरों सों राजें कह्या, तुम हमें बुलाये इत।

उहाँ सेती छुड़ाय के, सेवा करी इन वखत।।२२।।

अब श्रीजी ने भैरों सेठ से कहा- सेठ जी! आप हमें यहाँ बुलाकर लाये हैं। अरबों के बन्धन से सुन्दरसाथ को भी छुड़ाया और यहाँ उनकी सच्चे हृदय से सेवा भी कर रहे हैं।

अब हम तुम्हारे आगे, कौन सी राखें वस्त।

जिनसे होवे बदला, हम ता का किया कस्त।।२३।।

अब आप बताइये कि हम आपके सुख के लिये कौन सा कार्य करें, जिससे आपके किये हुये अहसान का बदला दिया जा सके? मैं वह कार्य अवश्य करूँगा।

जो कछु हमपै वस्त है, सो आगे राखें सब तुम।

सो ग्रहों तुम चित्त में, ज्यों फल पावे आतम।।२४।।

मेरे पास जो भी आध्यात्मिक तत्वज्ञान है, उसे मैं तुम्हारे आगे रखने के लिये तैयार हूँ। उसे तुम अपने हृदय में धारण करो, जिससे तुम्हारी आतमा जाग्रत हो जाये।

तब भैरों ठक्कर ने, बचन आजिजी के कहे।

तुम मेहर करी मुझ ऊपर, जो सुनावने के तुम भये।।२५।।

तब भैरों ठक्कर ने बहुत ही विनम्रता से कहा कि आपने मेरे ऊपर कितनी बड़ी कृपा की है, जो इतने समय तक अखण्ड का ज्ञान सुनाया।

तब श्रीजी ने कहा, तुम इतना करो परहेज।

होंए प्राप्त चरन भगवान के, घरों बैठे सेहेज।।२६।।

तब श्रीजी ने कहा– मेरे कहने से तुम कुछ दिनों के लिये यदि इतना संयम करो, तो घर बैठे ही तुम्हें सरलतापूर्वक परमात्मा के चरण प्राप्त हो जायेंगे।

एक महीना की मुद्दत, इत मुझ आगे करो तुम।

ज्यों होवें चरन प्राप्त तुमको, कहे ते सुनावें हम।।२७।।

तुम केवल एक महीने के लिये मेरे कहे अनुसार संयम का पालन करो और मैं तुम्हें ब्रह्मज्ञान की चर्चा सुनाता हूँ। यदि इतने समय में तुम्हें परब्रह्म का अनुभव न हो जाये तो।

तब अपना परहेज तोड़ियो, बिदा कीजो हमको।

हम जावें अपने घरों, तुम रहियो मगन माया मों।।२८।।

तुम अपना संयम तोड़ देना और मुझे यहाँ से विदा कर देना। मैं अपने देश हिन्दुस्तान चला जाऊँगा और तुम माया में मग्न रहना।

पीउना तमाखूं छोड़ देओ, और मांस मछली सब।

सराब और सब कैफ, परदारा चोरी न कब।।२९।।

एक तो तम्बाकू पीना पूर्णतया बन्द कर दो। दूसरा, किसी भी प्रकार के पशु–पक्षी का माँस, मछली, शराब, और हर तरह के नशे का परित्याग कर दो। तीसरा, परस्त्री को माता के तुल्य देखो, और चौथा, दूसरे के धन की कभी भी चोरी न करो।

भावार्थ– छान्दोग्य उपनिषद् में कहा गया है–

"आहार शुद्धौ सत्व शुद्धिः" अर्थात् आहार की शुद्धि से बुद्धि की शुद्धता होती है। बुद्धि के शुद्ध हुये बिना चित्त का शुद्ध होना सम्भव नहीं है। चित्त के संस्कारों के अनुसार ही मन कार्य करता है। इसलिये मन की शुद्धि के लिये चित्त का शुद्ध होना आवश्यक है। मन की शुद्धि के ऊपर ही आध्यात्मिक उपलब्धियों का भवन खड़ा होता

है।

श्रीजी ने प्रत्येक प्रकार का तमोगुणी आहार– माँस, शराब, एवं हर प्रकार के नशे का निषेध किया। तामसिक आहार करने से बुद्धि के तामसिक होते ही चित्त एवं मन भी तामसिक हो जाते हैं। ऐसी दशा में आध्यात्किता के मार्ग पर किसी भी स्थिति में नहीं चला जा सकता। प्रत्येक तामसिक पदार्थ में दुर्गन्ध होती है। तम्बाकू , गुटका, भाँग, अफीम, आदि नशीले पदार्थों का सेवन करके कोई ध्यान नहीं कर सकता।

यद्यपि प्याज और लहसुन शाकीय (शाकाहारीय) हैं, किन्तु दुर्गन्धित होने के कारण ये रजोगुण, तमोगुण से मिश्रित होते हैं। इनका सेवन इसलिये वर्जित किया जाता है, क्योंकि इनसे मनोविकारों के उत्पन्न होने की सम्भावना बनी रहती है।

तम्बाकू, गुटका, आदि में निहित टैनिन और कैफीन, चाय तथा काफी में भी होते हैं। जिस प्रकार समुद्र किनारे के भागों (बंगाल आदि प्रान्तों) में मछली को पानी की सब्जी कहकर खाने की प्रवृत्ति पायी जाती है, उसी तरह लोगों के द्वारा तम्बाकू, गुटका तथा किसी भी प्रकार के नशे, या प्याज, लहसुन, चाय, काफी, आदि के सेवन के लिए भी बहाने गढ़ लिये जाते हैं, जो उचित नहीं है। तीखी-तीखी मिर्चों तथा गरम मसालों का सेवन करने वाला भी अध्यात्म जगत के ऊँचे शिखरों पर नहीं चढ़ सकता।

इत एती बात का परहेज, करो इन बखत।

तो तुम को होय प्रापत, पाओ सुख तित।।३०।।

हे भैरों सेठ! यदि तुम इन बातों का इस समय संयम

रखो, तो तुम्हें अवश्य ही धाम धनी के चरण कमल प्राप्त हो जायेंगे, जिससे तुम्हें अखण्ड आनन्द मिलेगा।

एह सुकन सुन भैरों ने कहा, एह बात है सेहेल।
ए अवस्य मोहे करना, ए छोड़ दई दज्जाल गैल।।३१।।

यह सुनकर भैरों सेठ ने कहा– यह तो बहुत सरल बात है। मैं अवश्य ही आपके आदेशों का पालन करूँगा। मैं इसी क्षण इस कलियुग (दज्जाल) का साथ छोड़ देता हूँ।

इतनी मेहनत से, जो जागे अपनी आतम।
तो और क्या चाहियत है, हमको कह दिखाओ तुम।।३२।।

इतने अल्प परिश्रम से यदि मेरी आत्मा जाग्रत हो जाती है, तो भला और क्या चाहिये? आप केवल मुझे आदेश दीजिये, मैं उसका अक्षरशः पालन करूँगा।

उस बखत आगे हुक्का था, सो दिया तुरत फोर।।
उदक धरा चार वस्त का, दई श्रवना आतम जोर।।३३।।

भैरों सेठ के आगे हुक्का रखा था, उसने उस हुक्के को उसी क्षण तोड़ दिया। चार बातों के लिये प्रण कर लिया कि मैं माँस-मछली, शराब और हर प्रकार का नशा, परस्त्री गमन, एवं चोरी नहीं करूँगा। उसने श्रीजी की चर्चा के श्रवन में ही स्वयं को लगा देने का निश्चय किया।

रसोई मिने मने भई, मांस मछली करो जिन कोए।
हमारी रसोई जुदी करो, होय गया विरक्त सोए।।३४।।

भैरों सेठ ने अपने रसोई घर में आदेश दे दिया कि कोई भी मेरे लिये माँस-मछली का भोजन न बनाये। मेरा भोजन माँसीय भोजन से अलग बनाया जाये अर्थात् चूल्हा एवं बर्तन भी अलग रखा जाये। इस प्रकार वह

माँस–मछली के तामसिक भोजन से पूर्णतया अलग हो गया।

घर के लोग अन्दर, लगे बड़–बड़ करने।

कौन आया हमारे घरों, क्यों परहेज कराया इने।।३५।।

घर के अन्य सदस्य इस बात का विरोध करने लगे कि इन्हें माँस–मछली खाने से क्यों रोका जा रहा है? श्रीजी की ओर परोक्ष रूप से संकेत करते हुये उन्होंने यह भी कहा कि हमारे घर आकर सेठ जी को यह सब मना करने वाले कौन हैं? इस तरह का संयम कराने से उन्हें क्या मिलना है?

इनको पिन्ड तो इनपे, था इन पर गुजरान।

ताको क्यों छुड़ावत, सुकन कहे बिन ईमान।।३६।।

सेठ जी का शरीर तो मांस और मछली पर ही चलता था। उसको इनसे क्यों छुड़ाया जा रहा है? धाम धनी के प्रति ईमान न होने से उनके परिवार के लोगों ने इस तरह की बातें कहनी शुरू कर दीं।

भैरों सेठे खीझकर कहा, लिया परहेज मैं कोई दिन।
मैं परहेज फेर तोडूंगा, जो दाखिल न होऊं मोमिन।।३७।।

भैरों सेठ ने क्रोध में आकर अपने परिवार वालों से कहा– मैंने संयम का यह नियम केवल कुछ दिनों के लिये लिया है। यदि मैं एक महीने के अन्दर परब्रह्म को नहीं पा सका और ब्रह्ममुनियों के समूह में शामिल नहीं हो पाया, तो मैं यह संयम का नियम तोड़ दूँगा अर्थात् माँस–मछली का सेवन प्रारम्भ कर दूँगा।

यों दृढ़ाव करके, चरचा लगे सुनने।

तीसरे दिन के सुनते, कहे वचन मुख अपने।।३८।।

इस प्रकार भैरों सेठ श्रीजी के आदेशों पर दृढ़ होकर चर्चा सुनने लगा। तीसरे दिन चर्चा के समय, वे उठकर खड़े हो गये और अपने मुँह से यह बात कहने लगे।

मैं जनम भर को छोड़िया, ए चारों वस्त निखेद।

वस्त भई मोहे प्रापत, पाया माया माहें भेद।।३९।।

हे धाम धनी! जिन चार वस्तुओं का निषेध (प्रयोग न करना) करने के लिये आपने मुझे आदेश दिया था, मैंने जीवन भर के लिये उनका त्याग कर दिया है। इस मायावी जगत में मुझे प्रियतम परब्रह्म का अनुभव हो गया है और इस खेल का सारा रहस्य विदित हो गया है।

भावार्थ– भैरों सेठ ने जब बुराई को छोड़ा तो सच्चे हृदय

से छोड़ा। परिणामस्वरूप, तीसरे दिन ही, जब श्रीजी मूल मिलावे का वर्णन कर रहे थे, तो उनकी सुरता मूल मिलावे में पहुँच गयी और उन्होंने युगल स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया।

धाम धनी की कृपा पल-पल सब पर है, किन्तु जो हृदय की आन्तरिक सचाई से अपने अवगुणों का परित्याग करता है, निश्चय ही उनको अध्यात्म जगत में जल्दी सफलता मिलती है, किन्तु जो आध्यात्मिक क्षेत्र में उतरकर भी अपने अवगुणों को जबरन दबाये रखता है और बाह्य रूप से पवित्रता का आवरण ओढ़े रहता है, वह अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारता है। इस प्रकार के आडम्बर पूर्ण जीवन से कोई लाभ नहीं होता।

यदि भैरों ठक्कर को आत्मिक दृष्टि से तीसरे दिन दर्शन हो सकते हैं, तो गृह का त्याग कर सन्यास भेष में रहने

वालों को सारे जीवन में दर्शन क्यों नहीं होता?

ऐसा इसलिये है, क्योंकि वे अपने अवगुणों का शुद्ध हृदय से परित्याग नहीं करते और समर्पण की भावना से कोसों दूर रहते हैं।

एह आया यों साथ में, पड़ा सहर में सोर।
तब दज्जाल लगा पुकारने, बड़ा जो किया जोर।।४०।।

इस प्रकार जब भैरों सेठ ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर लिया, तो सम्पूर्ण अब्बास बन्दर में कोलाहल मच गया। तब अज्ञानी लोगों का समूह अपनी पूरी शक्ति के साथ विरोध करने के लिये तैयार हो गया।

सखी बाई आई साथ में, तिन संग आया गोवरधन।
लगे भणसारी निंदा करनें, ए कहाँ से आये मोमिन।।४१।।

सखी बाई और गोवर्धन भाई ने एक साथ तारतम ज्ञान ग्रहण किया और सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुये। भणसारी जाति के व्यापारी लोग निंदा करने लगे कि पता नहीं कहाँ से ये धार्मिक लोग आ गये हैं?

हमारे घर के लोग, बरजे न रहवें कोय।
राव भैरों ठक्कर से कही, हमारी लड़ाई तुमसे होय।।४२।।

वे व्यापारी कहने लगे कि हमारे घर की सारी महिलायें दिन-रात अधिकतर समय इन्हीं के यहाँ चर्चा सुनने जाती हैं। कितना भी मना किया जाये, वो मानती ही नहीं हैं। उन्होंने मिलकर भैरों सेठ से कहा कि इस स्थिति के लिये आप दोषी हैं और हम आपसे लड़ाई करेंगे।

तब भैरों ठक्कर ने कह्या, रखो अपनी लुगाइयाँ बरज।
हम बुलावने न जात काहू को, सब आवत अपनी गरज।।४३।।

तब भैरों ठक्कर ने उनको उत्तर दिया कि आप लोग अपनी पत्नियों को मना कर दें और अपने घर में रखें। मैं किसी को बुलाने तो जाता नहीं हूँ। यहाँ सभी अपने आत्म-कल्याण की भावना से आती हैं। इनके आने में मेरा कोई स्वार्थ नहीं है।

इत हम इनको क्या करें, इत चरचा होत भगवान।
कारज होत आतम को, आवत पूरी पहिचान।।४४।।

यहाँ पर परमात्मा की चर्चा हुआ करती है। हम इनको किसी व्यक्तिगत कार्य में प्रयोग नहीं करते। श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा से परब्रह्म की पूरी पहचान होती है और आत्मा का कल्याण होता है।

तुम आड़े होत हो तिनके, न आप सुनो न देओ सुनने।
ए सब करत है कलियुग, सब भलो चाहें अपने।।४५।।

आप लोग न तो स्वयं चर्चा सुनते हैं और न किसी को सुनने देते हैं। हर व्यक्ति अपना भला चाहता है, किन्तु आप लोग अपनी पत्नियों के आत्म–कल्याण में बाधक बन रहे हैं। ऐसा लगता है कि आप लोगों के दिल में कलियुग बैठ गया है और वही आप लोगों से ऐसा अपराध करा रहा है।

यह सुकन सुनके, हुये सरमिंदे सब।
खिसियाय के पीछे फिरे, अपने घरों आये तब।।४६।।

ये बातें सुनकर वे व्यापारी लोग बहुत लज्जित हुये और अपने मन में क्रोध को दबाये हुए घर आये। यद्यपि उन्हें अपनी भूल का अहसास था, किन्तु उनकी अहं भावना

ने उनके क्रोध को बनाये रखा।

लगे लुगाइयों से लड़ने, क्यों तुम जाओ तित।
ऐसा न चाहिये तुम को, जो घर छोड़ो रात बखत।।४७।।

वे घर पर अपनी पत्नियों से लड़ने लगे कि तुम वहाँ क्यों जाती हो? रात के समय घर छोड़कर दूसरे के घर जाना तुम्हारे लिये किसी भी तरह से उचित नहीं है।

तब जवाब दिया उनों ने, हमसे बुरा न हुआ कोई काम।
चरचा सुनने भगवान की, जात हैं तिस ठाम।।४८।।

तब उनकी पत्नियों ने उत्तर दिया कि हम वहाँ पर सच्चिदानन्द परमात्मा की चर्चा सुनने जाती हैं। वहाँ जाने का हमारा उद्देश्य कोई बुरा काम करना नहीं होता।

एक तो इस देस में, कबहूं न चरचा होए।

इत कौन आवत करने, आये भाग हमारे सोए।।४९।।

एक तो इस मुस्लिम बहुल देश में कभी आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा नहीं होती। दूसरा, भला यहाँ चर्चा करने कौन हिन्दू महात्मा आयेगा? यह तो हमारा सौभाग्य है कि ब्रह्मज्ञान सुनाने के लिये स्वयं अक्षरातीत आये हैं।

एक तो पूर्व अंकूर तें, प्रापत भये चरन।

तिन आड़े तुम होत हो, हमारे दुसमन।।५०।।

परमधाम के मूल सम्बन्ध से हमें धाम धनी के चरण कमल प्राप्त हुये हैं। आप लोग हमारे शत्रु हैं, जो हमारे आध्यात्मिक आनन्द में बाधक बन रहे हैं।

हम आतम सौंप चुकी, भगवान के कदम।

देह तुम्हारे भाग की, सो छोड़ देत हैं हम।।५१।।

हमने सच्चिदानन्द परब्रह्म के चरणों में अपनी आत्मा को न्यौछावर कर दिया है। तुम्हारा अधिकार हमारे शरीर पर है। उसे जब चाहो, हम छोड़ने के लिये तैयार हैं।

क्या करोगे तुम हमको, यों बरजी न रहवे कोए।

तब तेजबाई के घर गये, मिल लड़ने को सोए।।५२।।

जब हमारी आत्मा ही इस शरीर में नहीं रहेगी, तो तुम हमारे इन मृतक शरीरों को क्या करोगे? आप लोगों के मना करने पर, हम कोई भी घर में रहने वाली नहीं है। तब वे सभी पुरुष मिलकर, लड़ने के लिये, तेजबाई बुढ़िया के घर गये।

वह थी सहर में सिरदार, तिन आगे करी अरज।

तुम जिन जाओ साध पे, हमारी एह गरज।।५३।।

वह नगर की सभी महिलाओं में प्रमुख थी। उससे जाकर इन व्यापारियों ने प्रार्थना की कि हे माता! हम यही चाहते हैं कि तुम उस महात्मा जी के पास चर्चा सुनने न जाया करो।

तब तेजबाई ने कह्या, क्या मोहे बरजत तुम।

मेरी अवस्था न देखत, दोष न कछुए हम।।५४।।

तब तेजबाई ने कहा– तुम लोग वहाँ जाने से मुझे क्यों मना कर रहे हो? तुम्हें बुढ़ापे की मेरी यह अवस्था दिखाई नहीं देती। यदि मैं वहाँ चर्चा सुनने जाती हूँ, तो इसमें मेरा कोई भी दोष नहीं है।

तब उन सबों ने कह्या, हम तुम्हें क्यों बरजें।
पर तेरे पीछे सब लगी, जात हैं चरचा में।।५५।।

तब उन सभी व्यापारियों ने मिलकर कहा– माता! हम तुम्हें क्यों मना करेंगे? लेकिन तुम्हारे पीछे लगकर ही, हम सबकी पत्नियां वहां चर्चा सुनने जाया करती हैं।

तिस वास्ते हम तुमको, बरजत हैं इन काम।
ना जाओ हमारी खातर, सुनने चरचा उस ठाम।।५६।।

इसलिये, हम तुमको वहाँ जाने से मना करते हैं कि हमारी खुशी के लिये तुम वहाँ चर्चा सुनने न जाओ।

तब तेजबाई ने कह्या, तुम अपने घर के बरजो जाए।
मैं तो वहाँ जाऊंगी, तुमें करने होए सो करो आए।।५७।।

तब तेजबाई ने दृढ़ शब्दों में कहा– तुम्हारा अधिकार अपनी पत्नियों पर है, मेरे ऊपर नहीं। तुम अपने घर जाकर अपनी पत्नियों को मना करो। मैं तो चर्चा सुनने वहाँ अवश्य जाऊँगी। इसके विरोध में तुम्हें जो करना हो, कर सकते हो।

साथ नाम केते कहों, अबासी बन्दर के।
एक तो भैरों ठक्कर, और देवचन्द्र भाई जे।।५८।।

अब्बास बन्दर में तारतम ग्रहण करने वाले कितने सुन्दरसाथ के नामों का मैं वर्णन करूँ। सबसे पहले भैरों सेठ और देवचन्द्र भाई ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और भाई अमरिया, और भाई अमोलक।
मेर बाई बाई इन्द्रावती, राधा बाई बुजरक।।५९।।

इसके पश्चात् अमरिया भाई, अमोलक भाई, मेर बाई, इन्द्रावती बाई, तथा वयोवृद्ध अवस्था वाली राधा बाई ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

सुताई और फूलबाई, और बाई रतन।
लच्छो बाई और सखी, ए आई तले जतन।।६०।।

सुताई, फूलबाई, रतनबाई, और लच्छो बाई, आदि सखियां यत्नपूर्वक धनी के चरणों में आईं।

तेजबाई और बाई किसनी, और जसोदा बाई।
पहिले ए आई साथ में, खुस खबरी इनों पाई।।६१।।

तेजबाई, किसनी बाई, यशोदा बाई सबसे पहले सुन्दरसाथ में शामिल हुयी थीं। इनका यह बहुत बड़ा सौभाग्य था।

और साथ बहुत हैं, सो केते लेऊं नाम।

आगे जाहिर होयेंगे, जो दाखिल निजधाम।।६२।।

इनके अतिरिक्त और भी बहुत से सुन्दरसाथ हैं, जिनके नामों का मैं कहाँ तक वर्णन करूँ। जिन्होंने धनी के चरणों में आकर परमधाम की राह पकड़ी है, वे परमधाम में जाग्रत होने पर अवश्य सबके सामने प्रकट हो जायेंगे, अर्थात् सबको उनके बारे में मालूम हो जायेगा।

यों चरचा होने लगी, एक दूजे के संग।

साथ को आनन्द भयो, अंग न माय उमंग।।६३।।

इस प्रकार अब्बास बन्दर में श्रीजी के मुखारविन्द से अलौकिक चर्चा का प्रवाह बहने लगा। एक-दूसरे के साथ आकर सुन्दरसाथ चर्चा में सम्मिलित होने लगे। उस चर्चा के रस में डूबे प्रत्येक सुन्दरसाथ को आनन्द

का इतना अनुभव होने लगा कि किसी के हृदय में उमंग समाता ही नहीं था अर्थात् अथाह हो गया था।

चरचा चितवनी उच्छव, होने लगा जोर।

चित राज को साथ तरफ, बढ़ते चला और।।६४।।

सुन्दरसाथ में चर्चा, चितवनि, और उत्सव का प्रभाव दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा। सुन्दरसाथ में इस प्रकार की प्रेममयी भावना देखकर श्रीजी के दिल में सुन्दरसाथ के लिये प्रेम बढ़ता गया।

नयो साथ आवत है, सो करत हैं हेत।

रमण ब्रज रास को, सो बानी भली भाँत लेत।।६५।।

जब कोई नया सुन्दरसाथ धनी के चरणों में आता है, तो धाम धनी उसे बहुत प्रेम देते हैं। जब अखण्ड व्रज

और रास की चर्चा होती है, तो उसे वह बहुत तन्मयता से ग्रहण करता है।

भैरों ठक्कर आदर, भला जो किया साथ।
श्रीजी से दिल बांधिया, धनियें पकड़े हाथ।।६६।।

भैरों ठक्कर सब सुन्दरसाथ का प्रेमपूर्वक आदर करते हैं। उन्होंने अपना हृदय श्रीजी के चरणों में न्यौछावर कर दिया है। ऐसा वही कर सकता है, जिसका हाथ धाम धनी स्वयं पकड़ते हैं और माया से निकालते हैं।

जब इत मास दोय तीन भये, रजा मांगी जब।
हम जायें उन देसमें, उन रोय बातें करी तब।।६७।।

जब अब्बास बन्दर में दो-तीन माह बीत गये, तो श्रीजी ने यहाँ से जाने की स्वीकृति चाही कि अब हम यहाँ से

कहीं ओर जाना चाहते हैं। यह सुनकर भैरों सेठ रोते हुये कहने लगे।

हमको क्यों इत छोड़ोगे, कर असनायी धाम।
हमारी सुरत बंधी एक तुमसों, रह्या न कोई काम।।६८।।

हे धाम धनी! परमधाम के मूल सम्बन्ध की पहचान करा कर, हमें यहां क्यों छोड़ देना चाहते हैं? हमारी सुरता तो केवल आपसे ही जुड़ गयी है। अब हमसे संसार का अन्य कोई भी काम नहीं हो पाता है।

श्री जीयें विचारिया, जो कदी बरस रहवें एक।
तो साथ आवे सनेह सों, एक से होय अनेक।।६९।।

श्रीजी ने अपने मन में विचारा कि यदि मैं एक वर्ष यहाँ रह जाऊँ, तो सब सुन्दरसाथ में प्रेम भी फैलेगा और

बहुत से नये सुन्दरसाथ की जागनी भी हो जायेगी।

बात बड़ी है करनी, आवे सकुण्डल–सकुमार।

विस्तार होय ब्रह्माण्ड में, जाको वार न पार।।७०।।

लेकिन सबसे बड़ा कार्य जो मुझे करना है, वह सकुण्डल और सकुमार की जागनी का है। इन दोनों के जाग्रत होने पर ब्रह्माण्ड में जागनी लीला का इतना विस्तार होगा कि उसकी कोई सीमा नहीं होगी।

हम एकै बन्दर अटकें, क्या राज करना इत।

एतो हमें ना छोड़त, आज इन बखत।।७१।।

श्री महामति जी अपने मन में विचारते हैं कि हे राज जी! अब मुझे क्या करना चाहिये? क्या मैं इसी अब्बास बंदर में ही पड़ा रहूँ। इस समय तो ऐसी स्थिति है कि यहाँ का

सुन्दरसाथ मुझे किसी भी स्थिति में छोड़ने के लिये तैयार नहीं है।

यह विचार नित करें, देखा तरफ श्री राज।
साथ चित बाँध चला, धाम के सुख काज।।७२।।

इस प्रकार श्री महामति जी नित्य ही सोचा करते थे। उन्होंने मूल स्वरूप श्री राज जी से निवेदन किया। इधर परमधाम के सुख के अनुभव की कामना से सुन्दरसाथ का चित्त श्रीजी से और गहराता गया।

यह तो कारज कारन, आज साथ काढ़ना ठौर ठौर।
तिस वास्ते ऐसा चाहिए, तब आई बातिन और।।७३।।

इस समय श्री महामति जी अपने मन में सोचते हैं कि यह अति आवश्यक है कि जगह -जगह जाकर

सुन्दरसाथ को जाग्रत करना है और उन्हें माया से निकालना है। इसलिये ऐसा होना चाहिये कि कोई कारण (बहाना) बने और मुझे यहाँ से निकलने का अवसर मिले। तब मूल स्वरूप की प्रेरणा से ऐसी गुह्य घटना घटी।

हुकम हुआ तागीर का, वहाँ नये की आमदान।
तब रात को लगे भागने, जहाँ तहाँ निदान।।७४।।

वहाँ के क्षेत्रीय अधिकारी के स्थानान्तरण का आदेश आ गया। जिस नये अधिकारी का वहाँ आगमन हो रहा था, वह हिन्दुओं के प्रति अत्याचारी भाव रखने वाला था। उसके आने के भय से सुन्दरसाथ एवं धार्मिक गतिविधियों में संलग्न अन्य हिन्दू भी इधर-उधर भागने लगे।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में स्थानान्तरण के लिये भागने का प्रसंग नहीं है, बल्कि भय के कारण भागने का प्रसंग है। क्योंकि यदि स्थानान्तरण का प्रसंग होता, तो इस चौपाई के चौथे चरण में "जहाँ तहाँ" शब्दों का प्रयोग नहीं होता। स्वाभाविक ही है कि स्थानान्तरण के लिये अति उच्च अधिकारियों से ही निवेदन किया जा सकता है, जिनके लिये इस चौपाई में कोई भी शब्द प्रयोग नहीं किया गया है।

संकोच भयो भैरों को, रखने लड़के अपने।
इनको कहाँ छिपाऊंगा, बात आवे न दिल मिने।।७५।।

भैरों ठक्कर को संकोच होने लगा कि उस अत्याचारी अधिकारी से मैं श्रीजी की कैसे रक्षा करूँ? उसे अपने परिवार के पुत्र आदि को भी छिपाना कठिन पड़ रहा था।

वह अपने दिल में कोई निर्णय ही नहीं ले पा रहा था कि क्या करूँ?

भावार्थ– इस चौपाई में यह संशय होता है कि जब भैरों सेठ श्रीजी पर समर्पित थे, तो क्या वह अपने परिवार के पुत्र आदि सदस्यों की तरह श्रीजी को भी नहीं छिपा सकते थे?

इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि जब श्रीजी स्वयं ही चाहते थे कि मुझे यहाँ से जाने का बहाना मिले, तो उनको रोकना किसी भी तरह सम्भव नहीं था। एक इस्लामी देश में हिन्दू धर्म की चर्चा करना कट्टरवादियों की दृष्टि में बहुत बड़ा अपराध था। अत्याचारी अधिकारी यदि परिवार के एक–एक सदस्य की जाँच करता तो भैरों सेठ के सामने प्रश्न यह था कि श्रीजी का परिचय किस रूप में देता?

श्रीजी के हाव–भाव तथा वेश–भूषा से उन्हें सांसारिक ढांचे में रखा ही नहीं जा सकता था। कट्टरपन्थी अधिकारी की दृष्टि में किसी गैर मुस्लिम (हिन्दू धर्म) के ग्रन्थ की चर्चा सुनना और सुनाना दोनों ही अपराध था।

भैरों सेठ हाकिम के द्वारा जाँच आदि में अपने पुत्र का अपमान तो सहन कर सकते थे, किन्तु श्रीजी का नहीं।

यदि यह कहा जाये कि इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "लड़के" का अर्थ पुत्रादि नहीं, बल्कि धन की घूस देकर स्थानान्तरण रुकवाने से सम्बन्धित है, तो यह उचित नही है। क्योंकि इसके बाद अपने शब्द का प्रयोग हुआ है, जो कि किसी संज्ञा (पुत्र) शब्द के साथ ही जोड़ा जा सकता है, किसी क्रिया (लड़ने) शब्द के साथ नहीं।

तब रजा दई राज को, नाव को बैठ गये बसरे के।

तापर चढ़ाये साथको, उत आय पहुँचे ए।।७६।।

तब विवश होकर सबने श्रीजी को अब्बास बन्दर से चले जाने की स्वीकृति दे दी। उस समय अब्बास बन्दर से बसरा के लिये नौका जा रही थी। उस नौका पर श्रीजी सहित हिन्दुस्तान के सुन्दरसाथ को बैठा दिया गया। श्रीजी उस नाव पर बैठकर बसरा पहुँच गये।

वस्तर भूषण पैसे, भली भाँत दिये साथ।

जैसी उनकी सकत, तैसी भली चालाकी करी हाथ।।७७।।

सबने अपनी सामर्थ्य के अनुसार श्रीजी के चरणों में अच्छी प्रकार से वस्त्र-आभूषण तथा पैसे आदि रखे। इस भेंट रूपी सामग्री की व्यवस्था करने में उन्होंने कहीं

भी कृपणता (कंजूसी) नहीं दिखायी।

भावार्थ– "हाथ की चालाकी" करना एक मुहाविरा है जिसका अर्थ होता है– सामर्थ्य से अधिक खर्च करना, असम्भव या धन की विकट स्थिति में भी धन की व्यवस्था कर लेना।

परिवार में विकट परिस्थितियाँ होने पर भी, सुन्दरसाथ ने अपने प्रियतम अक्षरातीत के चरणों में भेंट करने के लिये कहीं न कहीं से धन की व्यवस्था की, इसी को हाथ की चालाकी करना कहा गया है।

जैसा जिनका अंकूर, लाभ लिया तिन माफक।
ताको तैसी सोभा भई, जो अग्या थी हक।।७८।।

जिसके अन्दर परमधाम का जैसा अँकुर था, उसके अनुसार ही उसने श्रीजी के चरणों में रहकर लाभ लिया।

धाम धनी के आदेश के अनुरूप, उनको वैसी ही शोभा भी मिली।

भावार्थ– इस चौपाई में ये संकेत किया गया है कि किस प्रकार माया के कीचड़ में डूबे हुये भैरों सेठ को धाम धनी ने निकाला और बहुत बड़ी शोभा दे दी, क्योंकि उनके अन्दर परमधाम का अँकूर था। दूसरी ओर परमधाम का अँकूर न होने से भणसारी जाति के व्यापारी लोग एक बूँद भी न पा सके, जबकि उनकी पत्नियों ने धनी के चरणों में रहकर अखण्ड आनन्द का रसपान किया।

महामति कहे ऐ मोमिनों, ए अबासी बन्दर की बीतक।
अब फेर कहों ठठ्ठे की, जो बीतक हुकम हक।।७९।।

श्री महामति जी कहते है कि हे साथ जी! ये अब्बास बन्दर का घटनाक्रम है। अब पुनः ठठ्ठानगर में, धाम धनी

के आदेश से, जो घटित होता है, वह मैं कह रहा हूँ।

प्रकरण ।।२७।। चौपाई ।।१२११।।

अबासी बन्दर से श्रीजी का ठट्ठानगर पहुँचना

अबासी बन्दर से, आये कोग बन्दर।

तहाँ से फेर नाव चढ़े, पहुंचे लाठी बन्दर।।१।।

श्रीजी अब्बास बन्दर से कोग बन्दर आये। वहाँ से पुनः नाव में चढ़कर लाठी बन्दर पहुँचे।

तहाँ चार दिन रह के, आये नगर ठट्ठे।

नाथे जोसी ने सुनी, दौड़ा लेने को आगे।।२।।

वहाँ ४ दिन रहकर ठट्ठानगर आये। जब नाथा जोशी ने यह समाचार सुना, तो वे उनको लेने के लिये शीघ्रतापूर्वक आये।

साथ सब दौड़े सामें, मारग में किया मिलाप।

साथ सबें सुख पाइया, मिट गई दुनियां ताप।।३।।

जिन-जिन सुन्दरसाथ को पता चला, वे बहुत शीघ्र श्रीजी से मिलने के लिये चल दिये। मार्ग में ही उनकी श्रीजी से भेंट हो गयी। श्रीजी के दर्शन करके सबको बहुत अधिक आनन्द हुआ। उनके सभी सांसारिक कष्ट मिट गये।

ठाकुरी बाई जिन्दादास, आये डेरा किया तित।

और साथ सब आए मिले, आये डेरा किया मिलाय इत।।४।।

श्रीजी ठाकुरी बाई और जिन्दादास जी के घर ठहरे, और ठट्ठानगर के समस्त सुन्दरसाथ समाचार पाकर श्रीजी से मिलने आने लगे।

ठाकुरी बाई इन समें, भये साथ रसोई के काम।

साक तरकारी बाजार से, सब साज ल्याई इस ठाम।।५।।

इस समय ठाकुरी बाई बाजार से तरह-तरह की शाक-सब्जियाँ और अन्य सामग्री लेकर आयीं। अन्य सुन्दरसाथ भोजन बनाने की सेवा में उनके साथ लग गये।

श्री जी और बाई जी, और साथ सब ततपर।

बैठे इत आरोगने, ठाकुरी बाई के घर।।६।।

अब ठाकुरी बाई के घर श्रीजी, बाई जी, और अन्य सभी सुन्दरसाथ भोजन करने के लिये बैठे।

इत उछरंग साथ में, हुआ बड़ा ठौर ठौर।

सब सामा ले ले दौड़हीं, अपनें घरों से और और।।७।।

ठट्ठानगर में इस समय, चारों ओर जगह–जगह, बहुत ही आनन्द बरस रहा था। सब सुन्दरसाथ अपने–अपने घर से खाने की वस्तुएं ले–लेकर आ रहे थे।

आबासी बन्दर की, कही सब बीतक।

इन भांत साथ आये के, सुकर बजाया हक।।८।।

श्रीजी ने अब्बास बन्दर में घटित होने वाली सारी घटनाओं को कह सुनाया। श्रीजी को अपने मध्य पाकर सब सुन्दरसाथ बहुत आनन्दित हुये और उन्होंने मूल स्वरूप प्रियतम अक्षरातीत को धन्यवाद दिया।

मन बढ़े सब साथ के, सुनते यह बीतक।।

राह जानी निजधाम की, देखी सबों पर बुजरक।।९।।

जब ठट्ठानगर के सुन्दरसाथ ने अब्बास बन्दर का वृत्तान्त सुना, तो उनका भी मनोबल बढ़ गया। उन्होंने अच्छी तरह से समझ लिया कि श्रीजी के द्वारा दर्शायी हुई परमधाम की राह, संसार के अन्य सभी मत-पन्थों की राह में, सर्वश्रेष्ठ है।

इत दीदार को आवत, ठठे के सब लोक।

देख साथ सब तिन को, भागत सारा सोक।।१०।।

ठट्ठानगर का विशाल जन-समूह श्रीजी के दर्शन के लिये आया करता था। सुन्दरसाथ के बीच में विराजमान श्रीजी को देखकर सबके दुख दूर हो जाते हैं।

सम्बत सत्रह सै अठावीसे, मास बैसाख का होय।

पधारे ठठे मिने, तब साथ रजा न देवे कोय।।११।।

वि.सं. १७२८ में वैशाख का महीना था, उस समय श्रीजी ठट्ठानगर में पधारे थे। जब भी श्रीजी चलना चाहते थे, तो कोई उन्हें जाने नहीं देता था।

ठठे के साथ के संग थें, आया मटहरी का साथ।

जिन चरचा सुनी धाम की, जाके हकें पकड़े हाथ।।१२।।

ठट्ठे के सुन्दरसाथ के साथ में मटहरी के भी सुन्दरसाथ आये। उन्होंने श्रीजी के मुखारविन्द से परमधाम के अलौकिक ज्ञान की चर्चा सुनी। चर्चा का सुख उन्हें ही प्राप्त हो सकता है, धाम धनी जिसका हाथ पकड़कर स्वयं माया से निकालते हैं।

ताके नाम लेत हों, सुनियो सब सैयन।

हकें इनों के दिल को, किये अपनी तरफ रोसन।।१३।।

हे साथ जी! अब मैं उन सुन्दरसाथ के नाम बता रहा हूँ, जिनके दिल को धाम धनी ने तारतम ज्ञान से प्रकाशित कर दिया और अपने ऊपर अटूट विश्वास दिलाया। आप उनके नामों का वर्णन सुनिये।

भगतीदास साहजू, और अड़न मकरन्द।

पारन मोटन तुलसी, और आया गोवरधन।।१४।।

भक्तिदास, साहजी, अड़न, मकरन्द, पारन, मोटन, तुलसी, और गोवर्धन जी ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर परमधाम की राह अपनायी।

जेठमल और बालचन्द, दयाल और धर्मदास।

सुखनन्द स्यामल श्री नन्द, सेवा दास मीठा खास।।१५।।

जेठमल, बालचन्द, दयाल, धर्म दास , सुखनन्द, स्यामल, श्रीनन्द, सेवादास, और मीठा भाई, ये विशेष सुन्दरसाथ थे जो धाम धनी के चरणों में आये।

टोडरमल और नन्दलाल, और दूसरा मोटन।

लाड़क गौरी गरीबदास,बाई ज्ञान और खेलन।।१६।।

टोडरमल, नन्दलाल, मोटन (दूसरा), लाड़क बाई, गौरी बाई, गरीबदास, ज्ञान बाई, और खेलन बाई सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुए।

स्यामबाई सुहागबाई, और बाई कल्यान।

समगी और मेघबाई, भई सहजमल को पहिचान।।१७।।

श्याम बाई, सुहाग बाई, कल्यान बाई, समगी बाई, मेघ बाई, और सहजमल को श्रीजी के स्वरूप की पहचान हुई।

थारीबाई और प्यारीबाई, और बाई कही परी।

अजबाई आई तिन पर, पाई धनी की खुसखबरी।।१८।।

थारी बाई, प्यारी बाई, अज बाई, और परी बाई ने धनी की मेहर को प्राप्त किया और तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और भाई धर्म दास, और कह्या बन्धन।

पृथ्वीमल और जयमल, माधो दासे सौंप्या मन।।१९।।

धर्म दास, बन्धन, पृथ्वीमल, जयमल, और माधव दास ने अपना मन धनी के चरणों में सौंप दिया।

और आया जेठमल, बालचन्द गोकल दास।
बंसीदास और गिरधर, बूलचन्द रायचन्द हक आस।।२०।।

जेठमल, बालचन्द, गोकुल दास, वंशी दास, गिरधर, बूलचन्द, और रायचन्द जी को एक मात्र धनी के चरणों की आशा रहती थी।

और तीसरा मूलचन्द, हरपाल हीरा उन नाम।
बाल चन्द और सूरजी, खेमदास आया बीच निजधाम।।२१।।

मूलचन्द (तीसरे), हरपाल, हीरामन, बालचन्द, सूरजी, और खेम दास जी ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर परमधाम की राह अपनायी।

और राजन थारा कमाल, सुमारचन्द हरवंस जेह।
कृस्नदास जेठियानन्द, मूलबाई रामबाई एह।।२२।।

राजन, थारा, कमाल, सुमार चन्द, हरिवंश, कृष्ण दास, जेठिया नन्द, मूल बाई, और राम बाई ने धनी की पहचान कर अपना जीवन कृतार्थ किया।

मखाबाई उमर बाई, मलूक बाई जीवनी।
स्याम बाई सहुद्रा बाई, रूईचन्द हरबाई जान्या धनी।।२३।।

मखा बाई, उमर बाई, मलूक बाई, जीवनी बाई, श्याम बाई, सहुद्रा बाई, रूई चन्द, तथा हर बाई ने अपने धाम धनी की पहचान की तथा तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

लखमीबाई समईबाई, ए आई बीच निजधाम।

पर पूठे कानों सुनी, ल्याये ईमान इस ठाम।।२४।।

लक्ष्मी बाई और समई बाई ने दृढ़ भाव से चर्चा सुनी और श्रीजी पर अटूट विश्वास लेकर तारतम ज्ञान ग्रहण किया तथा परमधाम की राह अपनायी।

एह साथ मटोद में, इत भई राज की चरचा जोर।

एह देख के दज्जाल नें, इत किया जो बड़ा सोर।।२५।।

ये सभी सुन्दरसाथ मटोद में भी थे। यहाँ पर श्रीजी की बहुत प्रभावशाली चर्चा हुयी। यह देखकर अज्ञानी लोगों के समूह ने चर्चा के विरोध में बहुत बड़ा विवाद किया।

भावार्थ– चौपाई १३ से २४ तक जिन सुन्दरसाथ के नाम बताये गये हैं, ये मटहरी के सुन्दरसाथ हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि मटहरी और मटोद दोनों गाँव

ठट्ठानगर के पास पड़ते थे। इस चौपाई में यही बात दर्शायी गयी है कि मटहरी और मटोद के सम्मिलित सुन्दरसाथ के बीच में श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा हुयी।

आगे की २६वीं, २७वीं चौपाई से सिद्ध होता है कि श्रीजी ने मटोद में भी चर्चा की थी। तभी २६वीं चौपाई में सुन्दरसाथ को कष्ट पहुँचने की बात कही है, तथा २७वीं चौपाई के पहले चरण में कहा गया है कि अब मैं पुनः ठट्ठानगर की बात करता हूँ।

साथ सब कोई को, पहुंचा कसाला इत।

यह समया कठिन है, आया बखत रोज कयामत।।२६।।

सब सुन्दरसाथ को चर्चा के विरोधी लोगों ने कष्ट पहुँचाया। संसार के प्राणियों को अखण्ड मुक्ति देने वाले तारतम ज्ञान के अवतरण का यह समय है, इसलिये

ब्रह्मज्ञान के विरोधी, मायावी लोगों के विरोध के कारण यह समय बहुत कठिन लग रहा है।

अब फेर कहों बात ठठे की, भेजी खबर पुरी नवतन।
हम आये बन्दर अबासी से, सब खबर लिखी रोसन।।२७।।

अब मैं पुनः ठट्ठानगर का प्रसंग वर्णित करता हूँ। श्रीजी ने नवतनपुरी में सूचना भेजी कि मैं अब्बास बन्दर से आ गया हूँ और अब तक के सभी घटनाक्रम को विस्तृत रूप से पत्र में लिखकर भेज दिया।

ज्यों साथ आया मसकत में, और अबासी बन्दर।
सो हकीकत पाती में लिखी, श्री बिहारी जी ऊपर।।२८।।

मस्कत बन्दर में और अब्बास बन्दर में जिस प्रकार से जागनी हुई, उसकी वास्तविकता पाती में लिखकर श्रीजी

ने बिहारी जी को दी।

और भी सहर पुरन के, साथी सबकी लिखी खबर।
स्यामलदास था साथ में, तिन पैगाम दिया सब पर।।२९।।

और भी जिन-जिन नगरों के सुन्दरसाथ की जागनी हुयी, श्रीजी ने सबका समाचार लिखा। इस समय श्रीजी के साथ श्यामल दास जी (चिन्तामणि जी) थे, जिन्होंने श्रीजी की जागनी लीला का सन्देश चारों तरफ भिजवाया।

भावार्थ- शहर और पुर दोनों एकार्थवाची हैं। "शहर" शब्द जहाँ फारसी भाषा का है, वहीं "पुर" शब्द हिन्दी या संस्कृत का है। "पुर" शब्द प्रायः नगर के भाव में प्रयोग किया जाता है, लेकिन कहीं-कहीं गाँव और छोटे-छोटे मुहल्लों को भी "पुर" कहते हैं।

वस्तुतः जनसमूह के निवास स्थान को "पुर" कहते हैं, चाहे वह छोटा हो या बड़ा। इसी क्रम में राजाओं के निवास स्थान को भी "अन्तःपुर" की संज्ञा दी गयी है।

और साथ सब दीप का, सब लिखी नवतन पुरी।
हकीकत पाती लिखी, बिहारी जी को खुसखबरी।।३०।।

श्रीजी ने दीव बन्दर में होने वाली जागनी लीला की सारी वास्तविकता पत्र में लिखी और नवतनपुरी में विराजमान बिहारी जी को जागनी की शुभ सूचना भेजी।

हम आवत हैं कच्छ में, तहां तुमसों होय मिलाप।
वहां से इत आवन का, इलाज कीजो आप।।३१।।

श्रीजी ने यह भी लिख दिया कि मैं कच्छ में आ रहा हूँ, जहाँ मैं आपसे मिलना चाहता हूँ। आप कृपा करके

नवतनपुरी से चलकर कच्छ आने का कष्ट करें।

ए पाती भेज के कह्या, हमको रजा देओ तुम साथ।
हम जायेंगे कच्छ में, होय बिहारी जी सों मिलाप।।३२।।

श्रीजी ने नवतनपुरी में पत्र भेजने के बाद ठट्ठानगर के सुन्दरसाथ से आग्रह किया कि हे साथ जी! मुझे कच्छ जाना है, जहाँ बिहारी जी से भेंट करना अति आवश्यक है। इसलिये आप सभी मुझे वहाँ जाने की, प्रसन्न मन से, स्वीकृति दीजिये।

साथ रजा न देवहीं, भई रद बदल कोईक दिन।
मास एक तहां रह के, फेर बिदा दई सैयन।।३३।।

सुन्दरसाथ श्रीजी को किसी भी तरह से जाने नहीं देना चाहते थे। इस सम्बन्ध में कई दिन बातचीत हुई। अन्त

में वहाँ एक माह और रुकने के पश्चात् सुन्दरसाथ ने श्रीजी को विदा किया।

इन समें लछमन पुर में, जाय साथ काढ़्या एह।
तहां जो चरचा भई, लिखी खबर पाती में तेह।।३४।।

इस समय ठट्ठानगर से चलकर श्रीजी लक्ष्मणपुर आये। लक्ष्मणपुर में श्रीजी ने वाणी चर्चा के द्वारा सुन्दरसाथ को माया से निकाला। उस समय वहाँ जो चर्चा हुयी, बिहारी जी को लिखे हुये अपने पत्र में उसका भी वर्णन किया।

महामति कहें ए साथ जी, ए बीतक ठट्ठे की जान।
अब याद करो नलिये को, आगे कहों पहिचान।।३५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! आपने ठट्ठानगर का प्रसंग सुना। अब मैं नलिये के घटनाक्रम का

वर्णन करने जा रहा हूँ। उसको याद कीजिये।

प्रकरण ।।२८।। चौपाई ।।१२४६।।

नलिया का वृत्तान्त एवं धाराभाई प्रसंग

श्री जी साहिब जी चले ठट्ठे से, नलिये आये पहुंचे।
धारे ने यह बात सुनी हती, आय पहुंचा धाय के।।१।।

श्रीजी ठट्ठानगर से चलकर नलिया आये। जब धाराभाई ने यह बात सुनी कि श्री प्राणनाथ जी नलिया आये हैं, तो वह भी शीघ्रतापूर्वक उनके चरणों में आये।

नलिये में आये मिल्या, किस्सा कह्या अपना।
मैं खंभालिया रहता था, हुआ साथ मिने रहना।।२।।

नलिया में आकर धाराभाई श्रीजी से मिले और अपनी आपबीती सुनाने लगे कि मैं खम्भालिया में सुन्दरसाथ के साथ रहा करता था।

आया सूर जी मसकत से, खंभालिये में जब।

साथ का मण्डान चरचा का, बड़ा जो हुआ तब।।३।।

सूरजी भाई जब मस्कत बन्दर से खम्भालिया में आये, तो उनके सहयोग से बहुत सुन्दरसाथ इकट्ठे होने लगे और ज्ञान चर्चा का प्रवाह बहुत चला।

नया साथ केतेक आया, आया मेरा कबीला सब।

तहां श्री राज के दीदार से, वृद्ध लीला भई तब।।४।।

वहाँ कुछ नये सुन्दरसाथ की भी जागनी हुई। मेरा सम्पूर्ण परिवार धाम धनी के चरणों में आ गया। वहां श्री राज जी की दर्शन लीला प्रारम्भ हो गयी, जिससे सुन्दरसाथ की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हुयी।

मोकों आवे तहां आवेस, दिन में होवे दीदार।

मैं श्री राज की बातें सब कहों, श्री धाम लीला विस्तार।।५।।

वहां मेरे अन्दर श्री राज जी का आवेश आने लगा। चर्चा के समय दिन में ही सुन्दरसाथ को श्री राज जी के दर्शन होने लगे। मैं श्री राज जी की शोभा–श्रृंगार तथा परमधाम की अष्ट प्रहर की लीला का विस्तारपूर्वक वर्णन करता था।

तब साथ सब मिलके, लगे पूजने मोको।

गादी बिछाय बैठाया, मोकों सेवे साथ मों।।६।।

तब सब सुन्दरसाथ ने मिलकर मेरा बहुत अधिक आदर–सत्कार (पूजा) करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने गादी बिछाकर मुझे उस पर बैठा दिया और मेरी सेवा करने लगे।

जहां कृपा होवे श्री राज की, तहां साथ सब पूजे।

तहां सक न रहवे काहू को, मिल सेवे चित दे।।७।।

यह सुनकर श्रीजी ने कहा कि जिस व्यक्ति पर धाम धनी की कृपा होती है, उसका सब सुन्दरसाथ आदर-सत्कार करते ही हैं। जब किसी के दिल में धनी की शोभा के विराजमान हो जाने, अर्थात् उसके हृदय के धाम बन जाने, में कोई संशय नहीं रह जाता तो सब सुन्दरसाथ सच्चे हृदय से उसकी सेवा करते ही हैं।

ए बात सुनी बिहारी जी, अकरास लगी मन।

ए कैसी राह चली, भई माया सामिल सबन।।८।।

अब पुनः धाराभाई कहना प्रारम्भ करते हैं- जब बिहारी जी को यह बात पता चली, तो उनके मन को बहुत बुरी लगी। उन्होंने कहा कि यह कैसी नयी राह चल गयी?

ऐसा लगता है कि चमत्कार के नाम पर सबमें माया बैठ गयी है।

ए पन्थ गोलों का, हुआ सबमें नाम।

कोई न लेवें श्री देवचन्द्रजी, मारग नाम निजधाम।।९।।

इस प्रकार तो चारों ओर यह बात फैल जायेगी कि यह शूद्रों का पन्थ है। यदि ऐसा ही चलता रहा तो सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी द्वारा चलाये हुये परमधाम के तारतम ज्ञान का कोई अनुसरण ही नहीं करेगा।

द्रष्टव्य– बिहारी जी की प्रवृत्ति बहुत ही संकुचित और नकारात्मक थी, अन्यथा अध्यात्म के नाम का ढिंढोरा पीटने वाला कभी भी जातीयता की संकीर्ण दीवारों से नहीं बन्ध सकता। यह हिन्दू समाज का दुर्भाग्य है कि उसके प्रायः सभी बड़े–बड़े स्थानों के कर्ता–धर्ता, न तो

धार्मिक शिक्षा का प्रसार चाहते हैं, और न जातीयता तथा क्षेत्रीयता की संकीर्ण राजनीति से ऊपर उठना चाहते हैं।

तब बुलाया नाग जी को, कह्या बिहारी जी इत।
पाती लिखी सूरजी पर, सिताब पहुंचो इन बखत।।१०।।

तब बिहारी जी ने अपने भान्जे नागजी को बुलाया और उनसे सूरजी भाई को पत्र लिखवाया। उस पत्र में निर्देश दिया गया था कि सूरजी भाई पत्र पाते ही तुरन्त चल दें और शीघ्र-अतिशीघ्र नवतनपुरी पहुँचें।

वह पाती सुन के दौड़िया, पहुंचा सूरजी नये नगर।
मुलाकात करी बिहारीजी सों, डरया धारे की खातर।।११।।

पत्र पाते ही सूरजी भाई चल पड़े और बिहारी जी के

चरणों में उपस्थित हुये। बिहारी जी से उन्होंने भेंट की। उनके मन में डर था कि धारा भाई से सम्बन्ध को लेकर कहीं बिहारी जी महाराज का कोपभाजन न बनना पड़े।

पूछी खबर साथ की, सब बताई इन।
मेहर भई साथ ऊपर, कही खुसाली मोमिन।।१२।।

बिहारी जी महाराज ने सब सुन्दरसाथ का समाचार पूछा। सूरजी भाई ने भोलेपन में सब कुछ बता दिया कि किस प्रकार धाराभाई को आवेश आता है और श्री राज जी का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। इस प्रकार सूरजी भाई ने इस तथ्य को अच्छी तरह से दर्शा दिया कि किस प्रकार धाम धनी की सुन्दरसाथ के ऊपर कृपा हुई और किस तरह से सुन्दरसाथ दर्शन लीला का आनन्द ले रहे हैं।

तब बिहारी जी खण्डनी करी, तुमको माया लगी जोर।
तुम्हारे घर मिने, किया कलिजुगें सोर।।१३।।

तब बिहारी जी ने तीखे शब्दों में दर्शन लीला का खण्डन किया और कहा कि दर्शन लीला के नाम पर तुम लोग माया के जाल में फँस रहे हो। धाराभाई के अन्दर श्री राज जी का कोई आवेश नहीं, बल्कि ये सब कलियुग का प्रपञ्च है जिसने चमत्कार दिखाकर सबको भटका दिया है।

धारे को तुम काढ़ देओ, रहे ना साथ मिने।
ना राखो इनका कबीला, जो रहे साथ मिने।।१४।।

इसलिये सूरजी भाई! धारा भाई को तुम अपने गाँव से बाहर निकाल दो। उसे सुन्दरसाथ में नहीं रहना चाहिये। इनके परिवार को भी सुन्दरसाथ के समूह में नहीं रहने

देना।

तो हमारे तुम्हारे, नाता न रहे श्री धाम।

नातो तुम्हें निकालें साथ से, जो हम सुन्या तुम्हें ए काम।।१५।।

यदि तुमने इनको समाज से बहिष्कृत नहीं किया, तो हमारे और तुम्हारे बीच में परमधाम का कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा, अर्थात् जब गादीपति होने से मैं अक्षरातीत हूँ तो तुम्हें परमधाम नहीं ले जाऊँगा। यदि तुमने हमारे दिये हुये निर्देश को नहीं माना, तो तुम्हें भी सुन्दरसाथ के समूह से निकाल दिया जायेगा।

ए बात सूरजी सुनके, हुआ धारे से बेजार।

हम काहे को इन्हें रखें, हम दाखिल बारे हजार।।१६।।

बिहारी जी की इस बात को सुनकर सूरजी भाई धारा

भाई से स्वयं को तंग (परेशान) अनुभव करने लगे और बिहारी जी से कहने लगे कि हम धारा भाई को क्यों अपने साथ रखेंगे? आप हमें बारह हजार ब्रह्मसृष्टियों में सम्मिलित रखिये।

भावार्थ– ज्ञान चक्षुओं के अभाव में मनुष्य यह निर्णय ही नहीं कर सकता कि उसे क्या करना चाहिये? वह उचित–अनुचित का भी निर्णय नहीं कर पाता। परमधाम की वाणी का ज्ञान न होने से सूरजी भाई जैसे सुन्दरसाथ को ऐसा लगता है कि मात्र गादी ही सर्वोपरि है। गादी के बन्धन को तोड़कर, वे अक्षरातीत परब्रह्म से अपनी आत्मा का सम्बन्ध नहीं जोड़ पाते।

सूरजी भाई के मन में यही भ्रम था कि गादी पर बैठने से बिहारी जी ही अक्षरातीत हैं और उनकी कृपा नहीं होगी तो हम परमधाम नहीं जा सकते। जब स्वयं अक्षरातीत

किसी ब्रह्मसृष्टि को परमधाम से नहीं निकाल सकते, तो उनके नाम की गादी पर बैठने वाले बिहारी जी किसी को कैसे निकाल सकते थे?

मेरे नाता श्री धाम का, क्यों कर तोड़त तुम।
हम कबीला न रखें धारे का, ना छोड़े तुम्हारे कदम।।१७।।

हे धाम धनी! आप मुझसे परमधाम का सम्बन्ध क्यों तोड़ रहे हैं? हम किसी भी स्थिति में आपके चरणों को नहीं छोड़ सकते। आपकी प्रसन्नता के लिये मैं धाराभाई को, परिवार सहित, समाज में नहीं रहने दूँगा।

ए रद बदल करके, फेर आया सूरजी खंभालिये।
धारा कबीले समेत इलाज, किया निकालने के।।१८।।

इस प्रकार की बातचीत करके सूरजी भाई खम्भालिया

आये और उन्होंने धारा भाई को परिवार समेत समाज से बहिष्कृत करने का निर्देश दे दिया।

सब साथ को कहके, मोकों रजा दई तब।
बेनी बाई जो थी साथ में, अरज करी साथ आगे सब।।१९।।

सूरजी भाई ने सब सुन्दरसाथ को इस बात के लिये राजी कर लिया कि धारा भाई को बहिष्कृत करना है। इस प्रकार सबने मुझे खम्भालिया से चले जाने के लिये कहा। मेरी पत्नी बेनी बाई मेरे साथ में थी, उसने सब सुन्दरसाथ के आगे हाथ जोड़कर प्रार्थना की।

क्या हमारा गुनाह है, कौन बुरा किया हम काम।
जो हमको साथ से निकालत, देस ठौर ए गाम।।२०।।

हमारा क्या अपराध है? हमने कौन सा ऐसा बुरा कर्म

किया है कि हमको सुन्दरसाथ से, राज्य से, और गाँव से निकाला जा रहा है?

हुकम नही बिहारी जी का, इत क्या चले साथ हुकम।
अरज करो उत जाए के, हजूर जाओ बिहारी जी तुम।।२१।।

तुम्हे रखने का बिहारी जी महाराज का आदेश नहीं है। यहाँ पर सुन्दरसाथ का आदेश नहीं चलता। हम तो बिहारी जी के अधीन हैं। यदि तुम्हें समाज में रहने की इच्छा है, तो नवतनपुरी में जाकर बिहारी जी से प्रार्थना करो।

द्रष्टव्य– आध्यात्मिक ज्ञान से रहित गादीवाद की मानसिकता समाज को अन्धेरी दिशा में ले जाती है, जिसमें कोई प्रकाश का स्रोत दिखायी नहीं पड़ता। मानवीय संवेदना से रहित अशिक्षा और रूढ़िवादिता के

अंगारे पर बैठी यह मानसिकता, समाज को ज्ञान से वंचित करके पता नहीं विनाश की किस खाई में गिराना चाहती है।

तब मैं कबीला लेय के, गया नवतनपुरी।
आजिजी करी बहुतक, सो चित में कछु ना धरी।।२२।।

(धाराभाई श्रीजी से कहते हैं) हे धाम धनी! तब मैं अपने सम्पूर्ण परिवार के साथ नवतनपुरी गया और बिहारी जी महाराज के चरणों में गिरकर मैंने बहुत प्रार्थना की, लेकिन उन्होंने मेरी तरफ जरा भी ध्यान नहीं दिया।

रोए धोए पीछा फिरा, आज मोहे बरस भया एक।
विनती मैं बहुतक करी, कै किये उपाए अनेक।।२३।।

मैं उनके चरणों में रो-धोकर प्रार्थना करता रहा, लेकिन

मुझे खाली हाथ निराश लौटना पड़ा। मैंने उनसे बहुत प्रार्थना की और अनेक प्रकार के उपाय भी किये, लेकिन उनका दिल नहीं पिघला। मेरा सामाजिक बहिष्कार हुये एक वर्ष हो चुका है।

द्रष्टव्य– अध्यात्म में निष्ठुरता, क्रूरता, एवं संवेदनहीनता के लिये कोई स्थान नहीं है। इन दोषों से युक्त व्यक्ति , चाहे वह कितना भी बड़ा या विशिष्ट क्यों न हो , आध्यात्मिक सुख के स्वर्णिम साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता।

तब इलाज मैं देखिया, है ठौर एक श्री मेहेराज।

मैं उत जाऊं कदमों, मेहर होवे श्री राज।।२४।।

तब मैंने एक ही उपाय सोचा कि अब मेरे एकमात्र सहारे श्री मिहिरराज जी हैं। यदि मैं उनके चरणों में चला

जाऊँ, तो निश्चित है कि धाम धनी की मेरे ऊपर कृपा होगी।

सुन तुम्हारी आमदानी, मोहे आनन्द भयो मन।
मैं दौड़ा इत धाए के, आए कदमों लगा मोमिन।।२५।।

आपके आने की बात सुनकर मेरे मन में बहुत आनन्द हो रहा है, और यहाँ मैं दौड़ते हुये आपके चरणों में आया हूँ, तथा अपना सब कुछ आपको सौंप चुका हूँ।

अब ज्यों जानों त्यों करो, मैं तो आए ग्रहे कदम।
अब मैं तो कहूं ना जाउंगा, रहों हक के तले हुकम।।२६।।

अब आपको जो भी उचित लगे, वह कीजिये। मैंने तो आपके चरण कमल को पकड़ लिया है। अब आपके इन चरण कमल को छोड़कर, मैं कहीं भी दूसरी जगह नहीं

जाऊँगा और सर्वदा आपकी आज्ञा के अधीन रहूँगा।

ए बात धारे की सुन के, श्रीजीयें दिया उत्तर।
खातर जमा रख तूं, कछु दिल में न कर फिकर।।२७।।

धाराभाई की इस बात को सुनकर श्रीजी ने उत्तर दिया कि धारा भाई! प्रियतम अक्षरातीत पर अटूट विश्वास रखकर धैर्य रखो और अपने मन में किसी भी बात की चिन्ता न करो।

बिहारी जी इत आवत, जाए खबर देऊं मैं।
मेहरबान होवें मुझ पर, एक काम किए सें।।२८।।

बिहारी जी यहाँ आने वाले हैं। उनके आने पर मैं उन्हें जब बधाई दूँगा तथा अपनी जागनी लीला की सारी बात बताऊँगा, तो ऐसा करने से वह मेरे ऊपर कृपा बरसाएंगे

और तब तुम्हारा काम हो जायेगा।

भावार्थ- श्री प्राणनाथ जी का आशय यह था कि जब बिहारी जी के आने पर उनका अच्छी तरह से स्वागत-सत्कार किया जायेगा तथा जागनी कार्य में मिली धन-सम्पदा उन्हें भेंट की जायेगी, तो वे अति आनन्दित हो जायेंगे और ऐसे समय में जब धाराभाई को सुन्दरसाथ में रखने का आग्रह किया जायेगा, तो अवश्य मान जायेंगे।

पहिले बिहारी जी को कागद, ताको दियो जवाब।
हम तो कहूं न आवहीं, तुम जाए के कहो सिताब।।२९।।

श्री प्राणनाथ जी ने बिहारी जी को पहले जो पत्र भेजा था, उसका उन्होंने संदेश वाहक के माध्यम से यह कहकर उत्तर भिजवाया कि तुम शीघ्र जाकर मिहिरराज जी से कह दो कि मैं नहीं आ रहा हूँ।

तब फेर विस्वनाथ को, पठाया नये नगर।

हम चले आवत हैं, तुम रह न सको क्यों ए कर।।३०।।

तब श्रीजी ने पुनः विश्वनाथ जी को यह संदेश देकर जामनगर भेजा कि मुझे जागनी कार्य में जो धन-सम्पदा मिली है, वह मैं आपके चरणों में समर्पित करना चाहता हूँ, इसलिये मैं आप से मिलना चाहता हूँ। यह सुनकर बिहारी जी ने उत्तर भेजा कि मैं नलिया अवश्य आ रहा हूँ। यह मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि तुम मेरे बिना रह ही नहीं सकते।

तब बिहारी जी चले, बैठ नाव ऊपर।

मंडई में जब उतरे, धारा दौड़ा ले खबर।।३१।।

तब बिहारी जी नौका पर बैठकर जब मंढई (माण्डवी) में उतरे, तो उनके आने की सूचना लेकर धारा भाई

श्रीजी के पास दौड़े हुये आये।

दई बधाई आए के, आये श्री बिहारी जी इत।
श्री जी सुन खुसाल भये, लगे बख्सीस देने तित।।३२।।

धारा भाई ने श्रीजी को इस बात की बधाई दी कि बिहारी जी महाराज माण्डवी आ गये। इस बात को सुनकर श्री प्राणनाथ जी बहुत खुश हुये और धारा भाई को आशीर्वाद देने लगे।

तब धारे ने कह्या, मैं एही पाऊं बख्सीस।
कदमों बिहारीजीए के, जाए नमाऊं सीस।।३३।।

तब धारा भाई ने श्रीजी से कहा कि मैं आपसे एकमात्र यही आशीर्वाद चाहता हूँ कि मैं बिहारी जी के चरणों में प्रणाम करूँ और वे मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

मोकों लेओ साथ में, दाखिल करो इसलाम।

मेरे दिल एही रहे, तुम पूरो मनोरथ काम।।३४।।

हे धाम धनी! मेरे दिल में एकमात्र यही इच्छा है कि आप मुझे सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित कीजिये और शाश्वत निजानन्द के मार्ग पर चलाइये। आप मेरी इस इच्छा को अवश्य पूरी कीजिये।

इन समें साथ सूरत से, आये थे आठ जने।

ते श्रीजी के दीदार को, ले चले कबीले अपने।।३५।।

इस समय सूरत से आठ सुन्दरसाथ श्रीजी के दर्शन की भावना से अपने परिवार सहित आये थे।

एक आकिल भगवान था, और नागजी नाहना।

बल्लभ और धन जी, ले चले कबीले अपना।।३६।।

एक आकिल भगवान जी, दूसरे नाग जी नाहना, तीसरे बल्लभ भाई, और चौथे धन जी अपना परिवार लेकर आये थे।

सुन्दरबाई साथ में, और बाई रतन।

और बाई मटा लालो, ए आई भले जतन।।३७।।

इनके साथ सुन्दर बाई, रतन बाई, मटा बाई, और लालो बाई, ये भी यत्नपूर्वक अपने परिवार के साथ आयी थीं।

और बिहारी जी के साथ, संगजी और अखई।

हरबंस और लाला, ए सोहबत इकट्ठी कही।।३८।।

और श्री बिहारी जी के साथ चार सदस्य थे– संग जी, अखई, हरिवंश, और लाला। ये चारों हमेशा बिहारी जी के साथ रहते थे।

और श्री जी की सोहबत में, एक बाई कही तेज।

रूपा और राधाबाई, उनों को सेवा में हेज।।३९।।

श्रीजी के साथ तेज बाई, रूपा, और राधा बाई थीं। इनको श्रीजी की सेवा में विशेष प्रेम था।

भावार्थ– यहाँ यह जिज्ञासा होती है कि इस चौपाई के दूसरे चरण में जिस तेज बाई का नाम लिया गया है, वह कौन हैं? वह श्री तेज कुँवरी जी हैं या अब्बास बन्दर की तेज बाई बुढ़िया।

इस जिज्ञासा के समाधान में यही कहना पड़ेगा कि श्रीजी की अर्धांगिनी स्वरूप श्री तेज कुँवरी जी को "श्री" या "जी" के साथ ही सम्बोधित किया गया है। जैसे इसी प्रकरण की ५८ चौपाई में "श्री बाई जी" लिखा है, किन्तु ५०वीं चौपाई में "बाई जी" तो लिखा है लेकिन "श्री" नहीं लिखा।

यहाँ यह प्रश्न होता है कि इस चौपाई में "बाई जी" किसे कहा गया है? अब्बास बन्दर की बुढ़िया के लिये या श्री तेज कुँवरी जी के लिये। इसके विषय में यही कहा जा सकता है कि इस ५०वीं चौपाई में "बाई जी" शब्द का प्रयोग तेज कुँवरी जी के लिये किया जा सकता है, लेकिन यह स्वाभाविक है कि श्रीजी श्री तेज कुँवरी जी को बिहारी जी की सेवा में नहीं लगा सकते। रूपा और राधा बाई को समझाते समय यदि तेज कुँवरी जी वहाँ

बैठी हों तो इसमें कोई आपत्ति नहीं की जा सकती।

"सिंहासन बाई जी, जुगल सरूप सोभाय" (बीतक ६८/७६) में "बाई जी" का प्रयोग श्री तेज कुँवरी जी के लिये किया है। इसी प्रकार "स्त्री घरों फूलबाई, दूजी श्री बाई तेज" (बीतक ११/२४) में श्री तेज कुँवरी जी के लिये श्री तेज बाई का सम्बोधन किया गया है।

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि इस प्रकरण की ३९वीं चौपाई में जिस तेज बाई का नाम आया है, वह अब्बास बन्दर की तेज बाई हैं, जबकि श्री तेज कुँवरी जी का नाम यहाँ छिपा दिया गया है।

आये ठठे से संग राज के, नाथा और खेमा।

ए आये थे पहुंचावने, रहे साथ में जमा।।४०।।

श्रीजी को नलिये तक छोड़ने के लिये ठट्ठानगर से नाथा

और खेमा भाई आये थे। ये दोनों ही सुन्दरसाथ के समूह में रह गये।

सूरजी और हरजी, थिरदास और जीवराज।

अजबाई बहन धारे की, ए आये बिनती के काज।।४१।।

सूरजी भाई, हरजी भाई, थिर दास, जीवराज, और धारा भाई की बहन अज बाई, ये सभी सुन्दरसाथ धारा भाई को सुन्दरसाथ में सम्मिलित करने के लिये प्रार्थना करने आये थे।

और आया हरवंस, और आया नरहर।

संग स्त्री अपनी, आये दीदार के खातर।।४२।।

हरिवंश जी और नरहरि अपनी पत्नी के साथ श्रीजी का दर्शन करने के लिये पधारे थे।

आये मिल नलिये सहर में, मिल के हुये खुसाल।

बिहारी जी का आगा लिया, दौड़े दीदार को ले हाल।।४३।।

सब सुन्दरसाथ गुजरात के नलिया नगर में एक दूसरे से मिलकर बहुत आनन्दित हुये। बिहारी जी के आने की बात सुनकर, जो जिस अवस्था में था, उसी अवस्था में उनकी अगवानी एवं दर्शन करने के लिये दौड़ पड़ा।

एक ठौर मांग लई, नलिये के कामदार पास।

थी उनसे न्यात की हुज्जत, तिन सगाई जानी खास।।४४।।

श्रीजी ने नलिये के कामदार से एक हवेली मांग ली, जिसमें बिहारी जी सहित सब सुन्दरसाथ को ठहराया जा सके। उससे लौकिक सम्बन्ध था। उस लौकिक को अधिक महत्व देते हुये उसने श्रीजी को सुन्दरसाथ के लिये हवेली दे दी।

भावार्थ– "कामदार" का शाब्दिक अर्थ प्रबन्धक होता है, लेकिन उस समय किसी नगर का कामदार वही होता था, जो वर्तमान समय में नगर पालिका अध्यक्ष कहलाता है। वह भी लौकिक रीति से लोहाणा क्षत्रिय था, उस सम्बन्ध की महत्ता से उसने हवेली दे दी थी।

उन हवेली में उतरे, साथ सबे एक ठौर।
बिहारी जी की खिजमत, सब करने लगे जोर।।४५।।

उस हवेली में सब सुन्दरसाथ एक जगह ठहरे और बिहारी जी महाराज की बहुत अच्छे से सेवा करने लगे।

अपनी जो बीतक, श्री जी साहिब जी लगे कहने।
बिहारी जी सारी सुनी, हंसने लगे मिनों मिने।।४६।।

श्री प्राणनाथ जी ने दीप बन्दर से लेकर ठट्ठानगर,

मस्कत, तथा अब्बास बन्दर में जो भी घटनाक्रम हुआ, उसे सुनाने लगे। बिहारी जी सारी बात चुपचाप सुनते रहे, लेकिन आन्तरिक रूप से व्यंग्यपूर्वक धीरे-धीरे हँसते रहे।

सब साथ एक ठौर हैं, सुन चरचा पाया सुख।
सब सोक दिल के गए, जो देखे माया दुख।।४७।।

सब सुन्दरसाथ एक ही हवेली में रह रहे थे। चर्चा सुनकर उन्हें अपार आनन्द हुआ। अब तक माया की दुःखमयी लीला को देखने से उन्होंने जिस दुःख का अनुभव किया था, श्रीजी के दर्शन और चर्चा से वह दुःख दूर हो गया।

उच्छव रसोई होने लगी, हुआ अंग उछरंग।

सब साथ है एकठो, अंग न माय उमंग।।४८।।

हवेली में सब सुन्दरसाथ के लिये भोजन बनाया जाने लगा। नित्य प्रति उत्सव होते। सबके हृदय में उत्साह भरा हुआ था। सब प्रेमपूर्वक एक साथ रहते और सबके अन्दर अपार उमंग थी।

श्री जी साहिब जी की चरचा, होने लगी जोर।

भाव दिखाए बचन कहें, चित माया से देवें मरोर।।४९।।

अब दिन-प्रतिदिन श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा का प्रवाह तीव्र होता गया। श्रीजी आकर्षक भावों की यथार्थ अभिव्यक्ति के साथ चर्चा करते थे और सबके चित्त को माया से अलग करते थे।

भावार्थ- "भाव दिखाने" का तात्पर्य है- हास्य, करुण,

वीभत्स, वात्सल्य, आदि रसों के भाव को शब्दों के उचित समायोजन में, भाव-भंगिमा का पुट देकर, इस प्रकार का प्रस्तुत करना, जिससे ऐसा प्रतीत हो कि भाव मूर्तिमान रूप में प्रत्यक्ष दिख रहा है।

जैसे किसी के देह-त्याग के प्रवचन के शब्दों में हास्य रस का प्रयोग नहीं किया जा सकता और न ही हास्यमयी मुद्रा अपनायी जा सकती है, इसी प्रकार किसी वीर रस की अभिव्यक्ति में भयभीत चेहरा या भयभीत स्वरों का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

रूपा राधा बाई जी, एकान्त बैठाये तिन को।
सिखापन देने लगे, करो सेवा इन बखत मों।।५०।।

रूपा, राधा, तथा बाई जी को श्रीजी ने एकान्त में बैठाया तथा बिहारी जी की सच्चे हृदय से सेवा करने के

लिये सिखापन दिया।

भावार्थ– इस चौपाई के पहले चरण में "बाई जी" शब्द के प्रयोग से ऐसा लगता है कि रूपा और राधा के साथ बाई जी भी बैठ गई हों, और श्रीजी ने केवल रूपा और राधा को ही सेवा के लिये संकेत किया।

अब्बास बन्दर की बीतक में तेज बाई बुढ़िया के लिये कहीं भी "जी" शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है।

श्री धाम का धनी जानियो, बिहारी जी को राज।

इनकी आज्ञा में रहो, तो तुम मेरे किये सब काज।।५१।।

श्रीजी ने रूपा और राधा बाई से कहा– बिहारी जी गादी पर विराजमान हैं, इसलिये यदि तुम उनको साक्षात् धाम का धनी श्री राज जी मानकर उनकी आज्ञा का पालन करो, तो समझ लो तुमने मेरे सारे कार्य को सिद्ध

कर दिया।

जो इनकी आज्ञा भंग करो, तो मेरा तुमसे नहीं काम।
तो तुमसे मैं जुदा होऊंगा, तुम मेरा न लीजो नाम।।५२।।

यदि तुम इनकी आज्ञा का उल्लंघन करती हो, तो मेरा तुमसे किसी भी तरह का सम्बन्ध नहीं रहेगा। तुम मुझे अपने से अलग समझना और मेरा कभी नाम भी नहीं लेना।

भावार्थ– इस तरह कठोर शब्दों में सुन्दरसाथ से बिहारी जी की सेवा कराने का उद्देश्य, उनके दिल में बिहारी जी के प्रति भाव भरना था, क्योंकि श्रीजी जानते थे कि यदि वे सुन्दरसाथ पर दबाव नहीं देगे तो कोई भी बिहारी जी की सच्चे हृदय से सेवा नहीं करेगा।

इन भांत इनको, दई सिखापन जोर।

अब मैं कह छूटत हों, तुम मेरी न काढ़ियो खोर।।५३।।

इस प्रकार, रूपा और राधा बाई को कठोर शब्दों में सिखापन देकर श्रीजी कहने लगे कि जो कुछ मुझे कहना था, मैंने कह दिया। अब तुम (दण्ड मिलने पर) मुझे दोष न देना।

इन भांत सब साथ को, सिखापन लगे देने।

सगाई श्री धाम वतन की, दई कर अपनायत अपने।।५४।।

इस तरह श्रीजी परमधाम के मूल सम्बन्ध से सब सुन्दरसाथ को तरह-तरह की सिखापन देने लगे और अपनत्व की भावना से उन्होंने यह भी कहा कि बिहारी जी से अपना परमधाम का सम्बन्ध है।

एक ठौर एकान्त में, करने लगे मसलहत।

बिहारी जी और श्रीजी, क्या करना आई साइत।।५५।।

इसके पश्चात् एकान्त में श्री प्राणनाथ जी और श्री बिहारी जी आपस में इस विषय पर विचार–विमर्श करने लगे कि जागनी की इस घड़ी में हमें क्या करना चाहिये।

पहिनाये साथ सब को, काहू बस्तर काहू भूखन।

काहू बासन काहू कछु, यों सेवें मोमिन।।५६।।

बिहारी जी के साथ जो भी सुन्दरसाथ आये थे, उनमें से प्रत्येक को श्रीजी ने किसी को वस्त्र, किसी को आभूषण, किसी को बर्तन, तो किसी को कोई पदार्थ दिया। इस तरह से श्रीजी ने उन सब सुन्दरसाथ की सेवा की।

और सामा सब लेयके, धरी बिहारी जी के आगे।
नगद बस्तर भूखण, पहिन पोतिया जुदे हुए।।५७।।

इसके पश्चात् श्रीजी ने नकद धनराशि, वस्त्र–आभूषण, तथा अन्य सब सामग्री लेकर बिहारी जी के आगे रख दी। अपने पास उन्होंने मात्र दो जोड़े कपड़े ही रखे।

श्री बाई जी के भूखण, और बस्तर सिनगार।
सो सब आगे रखा, जान के धनी निरधार।।५८।।

श्री तेज कुँवरी जी के वस्त्र–आभूषण तथा श्रृंगार के अन्य संसाधनों को भी बिहारी जी के आगे इस भाव से रख दिया कि ये ही साक्षात् धाम धनी हैं।

भावार्थ– यद्यपि श्री महामति जी को यह सब मालूम था कि अक्षरातीत युगल स्वरूप उनके ही धाम हृदय में विराजमान हैं, किन्तु उन्हें बिहारी जी को विवश होकर

बाह्य रूप से इसलिये धाम धनी मानना पड़ा, क्योंकि ऐसा न करने पर विरोध खड़ा होता और उन्होंने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से जो मिलजुल कर जागनी करने का वायदा किया था, वह पूरा न हो पाता।

आए आगे अरज करी, धारा साथ में दाखिल होए।
इनका हों मैं रिनियां, तुम्हारी दई बधाई सोए।।५९।।

इसके पश्चात् श्रीजी ने श्री बिहारी जी से प्रार्थना की कि धाराभाई को सुन्दरसाथ में सम्मिलित कर लिया जाये। धाराभाई ने आपके यहाँ आने की खबर मुझे दी थी, इसलिये मैं धारा भाई का ऋणी हूँ।

मैं इनसे बचन हारिया, मोकों दई बधाई जब तुम।
जीव निछावर इन पर करों, तो आवे न पटन्तर हम।।६०।।

मैं धारा भाई को वचन दे चुका हूँ कि धारा भाई! तुमने मुझे बिहारी जी महाराज के यहाँ आने की बधाई दी है, इसलिये मैं उनसे आग्रह करके तुम्हें सुन्दरसाथ के समूह में शामिल करा लूँगा। यदि मैं धारा भाई पर अपना जीव भी न्यौछावर कर दूँ, तो भी धाराभाई के अहसान की मैं बराबरी नहीं कर सकता (बधाई देने के मूल्य से मुक्त नहीं हो सकता)।

तिस वास्ते इनको, लेओ साथ में तुम।
इतनी अरज करत हैं, इन तुम्हारे चरनों सौंपी आतम।।६१।।

इसलिये आपसे इतनी प्रार्थना है कि आप धारा भाई को सुन्दरसाथ में सम्मिलित कर लीजिये। धारा भाई ने अपनी आत्मा आपके चरणों में सौंप रखी है।

तब बिहारी जी ने कह्या, ए अरज न सुने हम।

यह अरज कबहूं ना करियों, जिन फेरो मेरा हुकम।।६२।।

बिहारी जी ने उत्तर दिया, मिहिरराज! मैं तुम्हारी इस प्रार्थना को स्वीकार नहीं करूँगा। तुम मुझ से धारा भाई के लिये कभी प्रार्थना नहीं करना। यह मेरा आदेश है और तुम इसका उल्लंघन नहीं करो।

बहुत खीझ के कह्या, इनें करों न दाखिल साथ।

इनका दुख मोहे बहुत है, याके कबहुं न पकड़ो हाथ।।६३।।

उन्होंने बहुत क्रोधित होकर कहा कि मैं धारा भाई को कभी भी सुन्दरसाथ में शामिल नहीं करूँगा। मुझे इस बात का बहुत दुख है कि धारा भाई ने कहा है कि मेरे ऊपर श्री राज जी का आवेश आता है। इसका तात्पर्य यह है कि यह स्वयं अपने को राज जी मानता है। मैं इसे

कभी भी स्वीकार नहीं करूँगा।

तब श्री जी साहिब जी नें, दिन दोय–चार बीच डार।
फेर अरज विनती करी, तुम इनका करो विचार।।६४।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने दो–चार दिन के बाद पुनः बिहारी जी महाराज से प्रार्थना करी कि आप धारा भाई के बारे में कुछ विचार कीजिये।

क्या गुनाह है इनका, और जो बाइयाँ दोए।
काढ़ी इन्हें कौन गुनाह से, साथ से बाहिर सोय।।६५।।

आखिरकार धारा भाई का क्या अपराध है? और जो धारा भाई की पत्नी तथा बहन हैं, इन्हें किस अपराध में सुन्दरसाथ से बाहर निकाला गया है?

कदी गुनाह किया धारें नें, बदले और के क्यों निकालो इसलाम।
ए तो जुलम होत है, सब दुख पावत इस ठाम।।६६।।

यदि यह मान भी लिया जाये कि धारा भाई ने अपराध किया है, तो धारा भाई के अपराध के बदले परिवार के अन्य सदस्यों को निजानन्द सम्प्रदाय से क्यों निकाला जा रहा है? इसे तो अत्याचार कह सकते हैं। आपके इस निर्णय से सब सुन्दरसाथ दुःखी हो रहे हैं।

तब बिहारी जी ने कह्या, मैं तुम्हें बरजे तब।
तुम फेर उनकी अरज, करत हो मिल सब।।६७।।

तब बिहारी जी ने कहा– मिहिरराज! मैंने पहले भी तुम्हें मना किया था कि धारा भाई के लिये तुम किसी भी प्रकार की सिफारिश न किया करो। किन्तु तुम सभी बार–बार धाराभाई की ही बात लेकर प्रार्थना करते हो।

मैं तो कबहूं न मान हों, वास्ते उन के।

जो लाख बेर मोसों कहो, तो मेरा जवाब एक ये।।६८।।

मैं धारा भाई की सिफारिश की प्रार्थना कभी भी स्वीकार नहीं करूँगा। एक–दो बार नहीं, बल्कि तुम लाख बार भी धारा भाई की सिफारिश करोगे, तो मेरा एकमात्र उत्तर यही होगा कि मुझे धारा भाई किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं है।

तब श्री जी साहिब जी सों, सब साथ लगे कहने।

तबियत तो तुम जानत, क्यों न डरो वास्ते अपने।।६९।।

तब श्री प्राणनाथ जी से सब सुन्दरसाथ कहने लगे कि आप उनका स्वभाव तो जानते ही हैं, आप अपने लिये भी डरा कीजिये। कहीं ऐसा न हो कि वह आपको ही सुन्दरसाथ से निकाल दें।

और रूपा बाई का, ना लगे चित सेवा में।

वहां से श्रीजीय के, सक बढ़ चली तिन से।।७०।।

रूपा बाई का मन बिहारी जी की सेवा में जरा भी नहीं लगता था। इसलिये रूपा बाई के प्रति बिहारी जी की भृकुटी टेढ़ी हो गई थी (नाराज रहते थे)। इसलिये श्रीजी के मन में यह संशय पैदा हो गया कि बिहारी जी के ऊपर श्री राज जी की कोई मेहेर नहीं है।

महामति कहे ऐ साथ जी, ए नलिया में मजकूर।

और भी अजूं बहुत है, सो आगे कहों जहूर।।७१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! ये सारी बातें नलिये में घटित हुयीं। इसके बाद आगे होने वाली और भी बहुत सी बाते हैं, जिसका मैं वर्णन कर रहा हूँ।

प्रकरण ।।२९।। चौपाई ।।१३१७।।

दोनो स्वरूपों में मत वैभिन्य

देख नूर चरचा रोसनी, भई बिहारी जी को दिल सक।
ए तहकीक मसनंद मेरी लेयगा, ए बात बड़ी बुजरक।।१।।

श्रीजी के मुखारविन्द से तारतम ज्ञान की अनुपम चर्चा का प्रकाश देख बिहारी जी के मन में संशय हो गया कि यदि ऐसे ही वाणी चर्चा का प्रवाह चलता रहा, तो निश्चित रूप से मिहिरराज जी मेरी गद्दी पर अधिकार कर लेंगे। यह तो बहुत बड़ी बात हो जायेगी।

फेर के बैठे मसलहत करने, जाएगा एकान्त एक ठौर।
अब क्या करना हमको, चलो ढूंढ काढ़िये साथ और।।२।।

अन्ततोगत्वा श्रीजी और बिहारी जी, एकान्त स्थान में, इस विषय पर विचार करने बैठे कि अब हमें क्या करना

चाहिये? इस वार्तालाप में श्रीजी ने कहा कि हमें बाहर निकलकर सुन्दरसाथ को माया से निकालना चाहिये और उनकी आत्मा जाग्रत करनी चाहिये।

तब श्री बिहारी जी यें कह्या, ए राह नही इसलाम।
जो आपन माया को छोड़ के, कीजे विरक्त का काम।।३।।

तब बिहारी जी ने उत्तर दिया कि यह हमारे सम्प्रदाय की राह नहीं है कि हम माया (घर गृहस्थी) को छोड़कर विरक्तों की तरह चारों तरफ घूमते फिरें।

जो इत हलार देस में, रह ना सको तुम।
तो करो चाकरी कच्छ में, ए सुकन मानो हुकम।।४।।

तुम मेरा यह आदेश मानो कि यदि तुम हलार देश में नहीं रह सकते हो, तो कच्छ में जाकर वहाँ के राजा की

नौकरी करो।

तब श्री जीयें कह्या, मोकों श्री देवचन्द्र जी दई निध।
तिन से मेरे दिल में आई, वतन की जागृत बुध।।५।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने मुझे तारतम ज्ञान की अनमोल निधि दी है, जिससे मेरे दिल में परमधाम की जाग्रत बुद्धि प्रवेश कर चुकी है।

तिनसे ऐसे राजाओं को, जब देवें प्रमोध हम।
सो सेवा तुम्हारी करें, चलें तुम्हारे हुकम।।६।।

जब जाग्रत बुद्धि के ज्ञान से मैं कच्छ के राजा जैसे राजाओं को जाग्रत करूँगा, तो वे आपकी सेवा करेंगे और आपके आदेश के अनुसार चलेंगे।

अब तो हम माया को, क्यों ए पकड़ें नाहें।

रद किये चौदह तबक, हम क्यों काम करे सो जायें।।७।।

अब मैं माया के किसी भी बन्धन में फँसने वाला नहीं हूँ। मेरे लिये चौदह लोकों के नश्वर सुखों का कोई महत्व नहीं है। ऐसी अवस्था में मैं राजाओं की नौकरी कैसे कर सकता हूँ?

सकुण्डल–सकुमार की, थी श्री देवचन्द्र जी नजर।

वे आवें जब साथ में, लैल मिट होवे फजर।।८।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी की दृष्टि सकुण्डल और सकुमार को जगाने के ऊपर थी। उन्होंने कहा था कि जब वे दोनों जाग्रत हो जायेंगे, तब अज्ञानता का अन्धकार मिट जायेगा और ज्ञान का उजाला फैल जायेगा।

ताके वास्ते आपन, मिल निकसें बाहिर।

श्री देवचन्द्र जी को प्रकास, करे सब में जाहिर।।९।।

इसलिये हम दोनों को मिलकर बाहर निकलना चाहिये और सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने जो ज्ञान हमें दिया है, उसे सबमें फैलाना चाहिये।

यह जो इष्ट फिरके चले, किया मूल बिना विस्तार।

अपनी अखण्ड वस्त श्री धाम की, खड़े सिर पर धनी निरधार।।१०।।

आजकल सैंकड़ो नये-नये पन्थ और उनके आराध्यों की पूजा प्रचलन में है। इन पन्थों या देवी-देवताओं की मान्यता का कोई मूल आधार नहीं है, फिर भी ये सारे संसार में छाये हुये हैं। हमारे पास परमधाम का अखण्ड ज्ञान है और हमारे सिर पर धाम धनी की पल-पल छत्रछाया है।

सो विस्तार क्यों न करें, जाको मूल है हक।

चाहिए लीला परवरदिगार, होय ब्रह्माण्डों पर बुजरक।।११।।

ऐसे अलौकिक ज्ञान को हम संसार में क्यों न फैलायें, जिसके मूल में स्वयं अक्षरातीत हैं? सभी ब्रह्माण्डों के स्वामी एक अक्षरातीत हैं, जिनकी अखण्ड लीला का ज्ञान संसार में फैलना चाहिये।

भावार्थ– वर्तमान में भारत वर्ष में ७०० ऐसे सम्प्रदाय हैं, जिनकी मान्यताओं का कोई वैदिक या शास्त्रीय आधार नहीं है। सारी सृष्टि आज तक अक्षर को नहीं जान पायी, तो उनसे परे अक्षरातीत की लीला का अखण्ड ज्ञान पाकर भी हम उसे क्यों छिपायें, संसार में क्यों न फैलायें?

वर्तमान समय में देखा जाये तो ब्रह्मकुमारी मत, युग निर्माण योजना, राधा स्वामी मत, आदि पन्थ भारत देश

के अतिरिक्त अन्य कई देशों में फैले हुये हैं। जबकि हमारी अकर्मण्यता, रूढ़िवादिता, अशिक्षा और साहित्य से दुराव, तथा राग–द्वेष की प्रवृत्ति ने हमें देश के बहुत छोटे से भाग में सीमित किया हुआ है।

और तुम दिल में कछुए, संकोच न राखो लगार।
हम तुम्हें बैठावें अटारी पर, तले हम रहे खबरदार।।१२।।

और आप इस बात का अपने दिल में जरा भी संकोच न रखिये कि आपको जरा भी ज्ञान नहीं है। मैं आपको ऊँची अटारी पर विराजमान कराऊँगा और नीचे रहकर मैं आपकी सेवा के प्रति सावधान रहूँगा।

चरचा सबसे हम रेंक, सबको देवें जवाब।
जब श्री धाम के जोग होय, सो इत आवे लेने सवाब।।१३।।

आने वाले सभी जिज्ञासुओं से धार्मिक चर्चा मैं करूँगा और उन्हें यथोचित् उत्तर भी मैं दूँगा। जब वह परमधाम की पहचान कर लेगा, तो तारतम एवं आशीर्वाद लेने के लिये आपके पास भेजूँगा।

ताको पठाऊं तुम पे, आवे करन दीदार।
तुमको यों कर सेवहीं, जान के धनी निरधार।।१४।।

उन सुन्दरसाथ को मैं अपके पास भेजूँगा। वे आपका दर्शन करने आयेंगे और आपको साक्षात् धाम का धनी अक्षरातीत मानकर अपकी सेवा करेंगे।

तब बिहारीजीयें कह्या, मेरा निकलना क्यों होय।
मेरे संग रंगबाई कही, है बड़ी बोझल सोय।।१५।।

तब बिहारी जी ने कहा कि भला मैं घर छोड़कर कैसे

बाहर निकल सकता हूँ? मेरे साथ मेरे भाँजे नागजी भाई की पत्नी रंगबाई भी है, जो बहुत भारी शरीर वाली हैं।

तिनकी महतारी तिन संग, और कुटुम्ब परिवार।
सो तो निकल ना सके, मेरा क्यों चलना होय तुम लार।।१६।।

रंगबाई की माताजी भी मेरे साथ हैं। इस प्रकार मेरा इतना लम्बा-चौड़ा परिवार है, मैं सब कुछ छोड़-छाड़कर घर से निकल नहीं सकता। ऐसी अवस्था में भला मैं तुम्हारे साथ कैसे चल सकूँगा?

तिस वास्ते मेरा चलना, होय नहीं क्योंए कर।
धनी को जो है करना, सो आय जुड़े त्यों ही कर।।१७।।

इसलिये तुम्हारे साथ मेरा चल पाना किसी भी तरह से सम्भव नहीं है। जागनी लीला तो श्री राज जी के हाथ में

है। उनकी जिन पर कृपा होगी, वे स्वयं ही आकर सुन्दरसाथ में शामिल हो जायेंगे।

इन भांत की रदबदल, होत रहे निस दिन।
मास डेढ़ लगे इहाँ रहे, करे परियान मिल सैंयन।।१८।।

इस तरह की बातें बिहारी जी और श्रीजी के बीच में प्रतिदिन हुआ करती थीं। लगभग डेढ़ महीना यहाँ रहने के पश्चात्, सब सुन्दरसाथ ने मिलकर यहाँ से प्रस्थान करने का निर्णय लिया।

और कोई साथी साथ में, किए थे उनों दूर।
अरज होत रही तिनकी, सो न मान्या मजकूर।।१९।।

बिहारी जी ने जिन-जिन सुन्दरसाथ को समाज से बहिष्कृत कर दिया था, उनको सुन्दरसाथ में शामिल

करने के लिये प्रार्थना होती रही, लेकिन उन्होंने किसी की भी बात स्वीकार नहीं की।

रूपा बाई ऊपर, भई बिहारी जी को सक।
ए सेवा में न आवहीं, दिल में पैठी अनख।।२०।।

बिहारी जी के मन में यह संशय बैठ गया कि रूपा बाई उनसे कटी-कटी रहती हैं और उनकी सेवा में उपस्थित नहीं रहतीं। उनके दिल में रूपा बाई के लिये क्रोध बैठ गया।

श्री जी के दिल में, ऐसी उपजी आए।
इत आवेस रहे राज को, मेरा दिल क्यों ये न समझाए।।२१।।

श्रीजी के दिल मे यह बात पैदा हो गयी कि बिहारी जी के दिल में यदि श्री राज जी का आवेश है, तो उनका

दिल इतना निष्ठुर क्यों है? मेरा दिल इस रहस्य को क्यों नहीं समझ पा रहा है?

इत से दोऊ के दिल में, होय चली अन्तराए।
पर बाहिर जाहिर ना हुई, एक दूजे रखी छिपाए।।२२।।

यहाँ से दोनों के दिल में एक भेद की लकीर खिंच गयी, लेकिन वह बाहर प्रकट नहीं हो पाई। दोनों ने एक-दूसरे से छिपाये रखा।

श्री जीयें अपना चित्त, समझाय कियो फेर।
अवगुन उठा सो भान के, फेर सुध किया दूसरी बेर।।२३।।

श्रीजी ने अपने चित्त को विवेक द्वारा समझाकर दूसरी तरफ मोड़ दिया। बिहारी जी के द्वारा सुन्दरसाथ पर किये जाने वाले दुर्व्यवहार से उनके मन में जो कुछ

विद्रोही भावना हुयी थी, उसे उन्होंने अवगुण माना और उसे नष्ट करके, पुनः दूसरी बार अपने मन को शुद्ध किया।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "दूसरी बेर" का तात्पर्य यह है–

पहली बार बिहारी जी की हठधर्मिता के कारण श्री फूलबाई जी को तन छोड़ना पड़ा था। उस समय श्रीजी को धर्म और गादी की दुहाई देकर इस पूरे घटनाक्रम पर चुप्पी साधे रहने के लिये मजबूर किया गया था। यद्यपि उनके हृदय से आवाज आ रही थी कि बिहारी जी पूर्णतया अन्याय कर रहे हैं, लेकिन गुरु पुत्र की मर्यादा रखने के लिये उन्होंने सब कुछ सहन किया।

दूसरी बार धाराभाई को परिवार सहित निष्कासित किये जाने पर उनका मन बहुत व्यथित हुआ था।

इन्ही दोनों घटनाक्रमों में अपने मन को शुद्ध करने की बात कही गयी है।

इहाँ सेती चलके, आये मंडई बन्दर।
तहाँ साथ सब आये मिले, बाग में लई जागा उतारा कर।।२४।।

यहाँ से चलकर श्रीजी मण्डई बन्दर आये। वहाँ सब सुन्दरसाथ आकर मिले। एक बाग में जगह लेकर, श्रीजी के ठहरने की व्यवस्था की गयी।

गये बिहारी जी खंभालिये, इहाँ दज्जालें किया सोर।
मोमिन एक ठौर भये, इनें पहुंचाऊं जोर।।२५।।

बिहारी जी नलिया से खम्भालिया गये। वहाँ कलियुग ने अपना पूरा विरोध दर्शाया। उसने अपने मन में सोचा कि ब्रह्ममुनि तारतम ज्ञान के प्रकाश मे जाग्रत हो रहे हैं। मुझे

इन्हें अपनी शक्ति से आतंकित करना चाहिये।

भावार्थ– इस चौपाई में अति गोपनीय रूप से खम्भालिये की एक घटना की तरफ संकेत किया है। बिहारी जी को यह स्वीकार नहीं था कि सुन्दरसाथ में संगठन बढ़े और जागनी का प्रकाश फैले। श्रीजी के नेतृत्व में जागनी लीला का विस्तार होना बिहारी जी के लिये असह्य था। उन्होंने खम्भालिया के राजा से, अपने एक सेवक के द्वारा, इस बात की चुगली करा दी कि मिहिरराज यहाँ से होकर जाने वाले हैं। तुम अपना पुराना बदला ले लेना।

खम्भालिये का राजा श्रीजी से वैर भाव इसलिये रखता था, क्योंकि जामनगर के मंत्री के सचिव पद पर उसकी जगह मिहिरराज जी की नियुक्ति हो गयी थी। इसलिये, खम्भालिये के राजा और बिहारी जी, दोनों के ही मन में

श्रीजी के प्रति अपार द्वेष था। इस प्रकार बिहारी जी और खम्भालिये के राजा में जो द्वेष भाव था, उसे ही यहाँ दज्ञाल कहा गया है।

तब एक सख्स से, कह्या राजा आगे।
तुम्हारे गाव में श्री मेहेराज, इत आये उतरेंगे।।२६।।

तब बिहारी जी ने एक व्यक्ति से खम्भालिया के राजा के पास संदेशा भिजवा दिया कि मिहिरराज नाव से तुम्हारे गाँव में आकर उतरेंगे।

विशेष– यदि यह कहा जाये कि खम्भालिया के राजा से श्रीजी की चुगली बिहारी जी ने नहीं करवायी थी, तो यह उचित नहीं होगा, क्योंकि बिहारी जी और नलिया में इकट्ठा होने वाले सुन्दरसाथ के अतिरिक्त अन्य किसी को मालूम ही नहीं था कि श्रीजी खम्भालिया आने वाले

हैं। इस सम्बन्ध में लीला रस सागर ५६/४४ में लिखा है–

गये खंभालिये बिहारी जी जब, कही हाकिम आगे जाय तब।
इत आवेंगे श्री मेहेराज अब, तुम गाम में उतरेंगे सब।।

वह रखता था दुसमनी, दिल में असल की।
तिन चौकी बैठाई सब ठौरों, करी बड़ी हराम खोरी।।२७।।

वह अपने दिल में श्रीजी के प्रति पूर्ण रूप से वैर रखता था। उसने श्रीजी को पकड़ने के लिये चारों तरफ पुलिस की चौकी बैठा दी। इस प्रकार उसने बहुत बड़ा पाप कर्म किया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में "असल की दुश्मनी" का प्रसंग है। उसका भाव यह है कि खम्भालिया का राजा पूरे मन से श्री जी का वैरी था। उसके मन में

श्रीजी से किसी तरह के समझौते या बहस आदि करके अपना वैर मिटा देने की भावना नहीं थी। वह उन्हें जड़ से ही समाप्त कर देना चाहता था।

सब साथ चढ़े नाव पर, रहे श्री जी आप एकले।
जब चढ़ने लगे नाव में, छींक भई तिन समें।।२८।।

सब सुन्दरसाथ नाव पर चढ़ गये और श्रीजी अकेले रह गये। वे नाव की तरफ जैसे ही बढ़ने लगे, उसी समय उन्हें छींक आ गयी।

तब श्री जी पीछे हटे, हम ना चढ़े इस ठाम।
सकुन मोकों ना भयो, और राह चलें इन काम।।२९।।

तब छींक के कारण श्रीजी को पीछे हट जाना पड़ा। श्रीजी कहने लगे कि मैं इस नाव में नहीं चढूँगा, क्योंकि

धाम धनी की तरफ से ऐसा संकेत आ रहा है। इससे जाना मेरे लिये शुभ नहीं है। इस कार्य के लिये मुझे किसी और रास्ते से आना होगा।

भावार्थ– भविष्य में होने वाली शुभ या अशुभ घटनायें अवचेतन मन में विद्यमान रहती हैं। जब वे किसी इन्द्रीय, जैसे– आँख या बाँह का फड़कना, छींक आना, या स्वप्न, आदि के माध्यम से प्रकट हो जाती हैं, तो इसे शकुन या अपशकुन कहते हैं।

जुकाम हो जाने पर तो दिन में कई बार छींक आती हैं तथा अन्य रोगों में बाँह तथा आँखें फड़कती रहती हैं।

जिस तन में स्वयं अक्षरातीत बैठे हों, उस तन को सुरक्षित रखना तो अनिवार्य था ही। इसलिये धाम धनी ने श्री महामति जी के दिल में पहले से ही यह प्रेरणा दी कि मुझे इस नाव पर नहीं बैठना है।

ऐसा प्रतीत होता है कि सुन्दरसाथ श्रीजी से नाव में बैठने के लिये जिद कर रहे थे और श्रीजी के द्वारा मना करने पर भी वे भावुकतावश नहीं मान रहे थे। इस सम्बन्ध में लीला रस सागर के ये कथन देखने योग्य हैं–

प्राण जीवन कही साथ से जो ताहीं, हम और मारग से आवें आहीं।

कहे साथ तुम बिन जीव न प्राण, हम रहे ना सके छिन निदान।।

लीला रस सागर ५६/४७

ऐसे समय में श्रीजी को छींक आ गयी और वे असावधान हो गये और हवा के वेग से नाव चल पड़ी।

ब्रह्मसृष्टियों की आत्मा का तन और परात्म का तन दोनों धनी के चरणों में है– "ये दोउ तन तले कदम के, आतम परात्म।" हमें अपने हृदय का प्रेम पूर्ण रूप से अक्षरातीत के लिये समर्पित कर देना चाहिये। जब हमारा तन श्री राज जी के प्रति समर्पित रहेगा, तो उसकी

सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी उन्हीं का होगा। इसलिये हमें शकुन–अपशकुन की अपेक्षा श्री राज जी के प्रेम में अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिये।

केवल बिल्ली के रास्ता काट जाने मात्र से यात्रा को स्थगित कर देना उचित नहीं है। क्या परमधाम की ब्रह्मसृष्टि इतनी असहाय है कि उसे इन चीजों से भयभीत रहना पड़े? क्या अक्षरातीत उससे इतने दूर रहते हैं कि वे उसकी रक्षा नहीं कर सकते?

प्रायः अशुभ घटनाओं (भूकम्प, समुद्री तूफान, तथा किसी की आकस्मिक मृत्यु, आदि) की सूचना पशु–पक्षियों के अवचेतन मन में आ जाती हैं। जब भविष्य की बातें पशु–पक्षियों को मालूम हो सकती हैं, तो हमें भी अपना आध्यात्मिक स्तर ऐसा करना चाहिये कि हमें भी मालूम हो जाये। यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रियतम

परब्रह्म को हृदय में बसा लेने पर अशुभ भी शुभ हो जाता है।

जब इहाँ से नाव चली, लगा वायु जोर।
खंभालिये आये पहुंचे, किया दज्जालें बड़ा सोर।।३०।।

जब यहाँ से नाव चली तो तेज वायु के प्रभाव से सुन्दरसाथ जल्दी ही खम्भालिया आ पहुँचे। वहाँ कलियुग रूपी खम्भालिया के राजा ने बहुत उत्पात किया।

साथ सब पकड़े गये, उत माहें राज द्वार।
साथ सूरत का सब था, सो हुआ खबरदार।।३१।।

श्री बाई जी सहित सब सुन्दरसाथ पकड़े गये। उन सभी को खम्भालिया के राजा ने अपने यहाँ बुलवाया। इस

समूह में तेज कुँवरी जी के साथ सूरत के आठ सुन्दरसाथ थे, वे सावधान हो गये।

भावार्थ– श्री बाई जी सहित सूरत के आठ सुन्दरसाथ ने सारी वास्तविकता को जान लिया कि बिहारी जी की चुगली के कारण ही यह संकट आया है। खम्भालिया का राजा श्रीजी से बैर रखता है। इसलिये उन्हें श्रीजी का कोई पता नहीं देना है और तेज कुँवरी जी को अपनी बहन बताकर उनकी भी रक्षा करनी है।

बहुत जाप्ता तिन किया, चल्या न कछु लगार।
खलास किये दूसरे दिन, हुये तरफ धनी निरधार।।३२।।

खम्भालिया के राजा ने इस सम्बन्ध में बहुत सावधानीपूर्वक सख्ती से जाँच की कि इस समूह में मिहिरराज या उनके परिवार का कोई सदस्य तो नहीं है।

लेकिन उसका कुछ भी वश न चल सका। दूसरे दिन राजा ने सुन्दरसाथ सहित श्री बाई जी को छोड़ दिया। इसके पश्चात् सब सुन्दरसाथ अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत का आसरा लेकर अपने गन्तव्य सूरत की ओर चल पड़े।

भावार्थ– राजा ने जब उनसे पूछा कि मिहिरराज कहाँ है, तो सुन्दरसाथ के स्पष्ट मना करने पर, राजा ने तेज कुँवरी जी की तरफ संकेत करते हुये कहा– क्या यह तेज कुँवरी नहीं है? सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि हम लोग सूरत के रहने वाले ब्राह्मण हैं तथा यह हमारी बहन है। राजा ने इसकी जाँच करने के लिये तेज कुँवरी जी के हाथ का बना हुआ कच्चा भोजन (पानी में उबाला हुआ) खाने के लिये कहा। सब सुन्दरसाथ के द्वारा कच्चा भोजन खा लेने पर खम्भालिया के राजा को विश्वास हो गया कि इनमें तेज कुँवरी नहीं है और उन्हें छोड़ दिया।

महामति कहें ऐ साथ जी, ये नलिये की बीतक।

अब सूरत की कहों, जो आज्ञा है हक।।३३।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथजी ! यह सारा घटनाक्रम नलिये का है। अब मैं धाम धनी के आदेश से सूरत के वृतान्त का वर्णन करता हूँ।

प्रकरण ।।३०।। चौपाई ।।१३५०।।

सूरत आगमन

श्री जी साहिब जी खुस्की चले, रण आन उतरे।

चीरक भेष करके, धोरा जी मारग पन्थ चढ़े।।१।।

श्री प्राणनाथ जी स्थल मार्ग द्वारा कच्छ के रण में आये और वहाँ से विरक्त भेष में पैदल मार्ग द्वारा धौराजी पहुँचे।

ए जो साथ सूरत का, खंभालिया से चले।

धोरा जी में उतरे, श्री जी साहिब सों आये मिले।।२।।

सूरत के सुन्दरसाथ जो श्री तेज कुँवरी जी के साथ खम्भालिया से चले थे, वे धौराजी में उतरे और श्रीजी से आकर मिले।

प्रेम जी थावर सुनी, गाड़ी ले दौड़े ये।

आये मिल मारग में, साथ को चढ़ाय लिये जे।।३।।

जब प्रेम जी, थावर जी ने यह बात सुनी कि श्रीजी धौराजी में आये हैं, तो वे बैलगाड़ी लेकर दौड़ पड़े। मार्ग में उनकी भेंट श्रीजी और सुन्दरसाथ से हुई। उन्होंने उस गाड़ी पर सब सुन्दरसाथ को चढ़ाया।

विशेष– जब श्रीजी सहित सुन्दरसाथ बैलगाड़ी पर जा रहे थे, उस समय रेतीली धरती में बैलगाड़ी के पहिये धँस जाते थे, फिर भी गाड़ीवान अपना चाबुक बैलों पर मारता था। हाँफते हुये दोनों बैल गाड़ी के बोझ को खींच रहे थे। उस समय श्रीजी के तन से किरंतन उतरा–

धोरीडा मा मूके तारी धूसरी।

बाटडी विस्मी गाडी भार भरी, धोरीडा मा मूके तारी धूसरी।।

धोरीडा आरे मारे रे, हांरे तूंने गोधे घणे रे।

तूं ता नाके नथाणों रे, तूं तां बंध बंधाणों गुण आपणे रे।।

किरंतन १३०/१

यह रेतीला रास्ता बहुत कठिन है। गाड़ी पर बहुत अधिक भार है। हे बैल! तू अपने जुए को मत छोड़। गाड़ीवान तुझे आरे से मार रहा है और बहुत ज्यादा चुभो भी रहा है। तुम्हारी नाक भी रस्सी से नथी हुई है। लेकिन हे बैल! तू अपने बोझ को ढोने के कारण बँधा हुआ है।

भावार्थ– श्री मिहिरराज जी कहते है कि हे मेरे जीव! धर्म का रास्ता बहुत कठिन है। सबको परमधाम की राह पर ले चलने की जो जिम्मेदारी तुझे दी गयी है, उसे छोड़ना नहीं। गादीपति बिहारी जी महाराज तुम्हें कदम–कदम पर कष्ट देंगे, क्योंकि वे धर्म की ओट में अत्याचार

ही करते हैं। सद्गुरु को दिये हुये वचनों के कारण, तुम कुछ भी प्रतिरोध नहीं कर सकते। चाहे कितना भी कष्ट क्यों न हो, तुम तो सुन्दरसाथ को धाम की राह पर ले चलने के उत्तरदायित्व से बंधे हुए हो।

धोरीडा अवाचक थयो रे, मुख थी न बोलाय रे।
कल ने वेलूं रे धोरी, उवट ऊचाणों स्वास मा खाय रे।।

किरंतन १३०/२

हे बैल! तू तो गूंगा है, अपने मुख से कुछ बोल भी नहीं सकता। मार्ग में कीचड़ और रेत हैं। इस उबड़-खाबड़ राह में चलने से तू हाँफ रहा है।

भावार्थ- हे मेरे जीव! गुरु पुत्र का सम्मान करने की भावना से तू बिहारी जी को कुछ भी नहीं कह सकता। बिहारी जी ने वाणी के प्रसार में जो रोक लगा दी है,

उसका परिणाम यह हुआ कि अज्ञान रूपी कीचड़ मार्ग में फैला हुआ है। परमधाम की राह में जागनी रूपी गाड़ी के पहियों को चलने में यह कीचड़ बहुत बाधा कर रहा है।

बिहारी जी गादीपति के पद पर प्रतिष्ठित होकर व्यक्तिवाद की मानसिकता से ग्रसित हैं। सुन्दरसाथ के संघात्मक स्वरूप से उन्हें कोई लेना-देना नहीं है। उस व्यक्तिवाद की आँधी ने राह में बहुत अधिक रेत रूपी संकीर्णता डाल दी है, जो गाड़ी के पहियों को चलने नहीं दे रही।

धाराभाई का निष्कासन, रामजी भाई का प्रणाम स्वीकार न करना, फूलबाई का देह त्याग, खम्भालिये के राजा को उकसाने, आदि की घटनाओं ने परिस्थिति को इतना विषम बना दिया है कि पूरा मार्ग ही ऊबड़-खाबड़ हो गया है।

हे मेरे जीव! तू अपने अपने धनी की छत्रछाया के नीचे जागनी की गाड़ी को खींच तो रहा है, किन्तु कदम-कदम पर आने वाली मायावी बाधाओं के कारण तू हाँफ रहा है।

धोरीडा घणूं दोहेलूं छे रे, कीधां भोगवे रे।
तारे कांधे चांदी रे, दुखड़ा सहे रे।। किरंतन १३०/३

हे बैल! यह मार्ग कठिन है। तू अपने किये का फल भोग रहा है। जुए के दबाव से तुम्हारे कन्धे पर घट्ठा (ठेला, सूजन) पड़ गया है, जिसके कारण गाड़ी खींचने में बहुत ही अधिक दर्द हो रहा है।

भावार्थ- हे मेरे जीव! इस मायावी संसार में परमधाम की राह पर चलना बहुत ही कठिन है। तूने अपने पूर्व जन्म में यह कामना की थी कि अक्षरातीत तुम्हारे तन से

लीला करें। अब जागनी के लिये धनी ने जब तुम्हारे तन को चुन लिया है, तो इस कार्य में आने वाली सभी कठिनाइयों को तुम्हें सहना ही होगा। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी रास्ता नहीं है।

जागनी कार्य में आने वाली कठिनाइयों तथा बिहारी जी के दुर्व्यवहार के कारण तुम्हारे दिल में बड़े-बड़े घाव हो गये हैं। खम्भालिये का राजा तुम्हारे प्राणों का शत्रु है। यह जानकर बिहारी जी ने इस भावना से राजा को उकसाया था कि वह तुम्हें पकड़ कर मार डाले। गुरु पुत्र की इस दुर्भावना के कारण तू मर्माहत है, फिर भी जागनी की गाड़ी को तो तुझे खींचना ही पड़ेगा।

धोरीडा जाय रे उजाणी, द्रोडा द्रोड तूं आवे।

दया रे विना रे, बैठा मारडी पडावे।। किरंतन १३०/४

हे बैल! तू भूखा है, फिर भी मंजिल तक पहुँचने के लिये दौड़-दौड़ कर चल रहा है। इतना होने पर भी गाड़ीवान निर्दयी है। वह तुझे बारम्बार मारता जा रहा है।

भावार्थ- हे मेरे जीव! सामान्यतः सुन्दरसाथ की श्रद्धा गादी पर होती है। गादी पर बैठने वाले को वह अपना सर्वस्व मानने की भूल करता है। सुन्दरसाथ की इस कमजोरी को देखते हुए बिहारी जी ने बाल बाई के माध्यम से गादी पर अधिकार कर लिया। काफी सुन्दरसाथ उनके समर्थन में भी हैं।

व्यक्तिवाद की आँधी में तुम भी एक सामान्य सुन्दरसाथ की ही तरह बन गये हो, लेकिन धनी की मेहर से तुम जागनी कार्य में अपना शत-प्रतिशत योगदान कर रहे हो। बिहारी जी बहुत अधिक कूप-मण्डूकता एवं क्रूरता की प्रवृत्ति के शिकार हैं। उन्हें किसी भी स्थिति में यह

स्वीकार नहीं है कि जागनी कार्य में तेजी हो। परिणामस्वरूप वे कदम–कदम पर तुम्हे शारीरिक व मानसिक प्रताड़ना देने में कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं।

धोरीडा वही ने छूटे रे, करम आपणां रे।
मेहेराज कहे एम, कीधा छे घणा रे।। किरंतन १३०/५

श्री मिहिरराज जी कहते हैं कि हे बैल! अब तो तू अपनी मन्जिल पर पहुँचकर ही अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो सकेगा। तूने अपने कर्त्तव्य के पालन में बहुत अधिक समर्पण भाव से पुरुषार्थ किया है।

भावार्थ– हे मेरे जीव! तू कठिनाइयों से न घबरा। अक्षरातीत ने तुझे इस परम पुनीत कार्य में मनोनीत किया है कि सब सुन्दरसाथ को परमधाम की राह पर ले चल। इस कार्य में यदि आपत्तियों के पहाड़ भी आ जायें,

तो भी तुझे चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जिस तरह तूने अब तक अपना कर्त्तव्य निभाया है, उसी तरह आगे बढ़ता चल। जागनी कार्य की वृद्धि ही धनी के प्रति तुम्हारे सर्वस्व समर्पण और त्याग की कहानी कहेगी।

पदमसी सेवा मिने, रह्या हता दस दिन।

तहां से आये घोघे मिने, तीन दिन रहे सैयन।।४।।

श्रीजी की सेवा में पदमसी दस दिन तक रहे। वहाँ से सुन्दरसाथ सहित श्रीजी घोघा आये, जहाँ तीन दिन तक ठहरे।

तहाँ से सुहाली उतरे, फेर आये सूरत।

गये सैयद पुर भगवान के, मोहनदास के रहे तित।।५।।

घोघे से चलकर सुहाली उतरे। उसके पश्चात् सूरत आये। सूरत में सैयदपुर में भगवान नायक की शेरी (गली) में मोहन दास जी के यहाँ रहे।

भावार्थ– मोहन दास अमीन भी वल्लभाचार्य मत के अनुयायी थे। जब मोहन दास जी के यहाँ अखण्ड व्रज–रास का वर्णन किया जाने लगा और विष्णु रूप श्री कृष्ण का निराकरण किया जाने लगा, तो वल्लभाचार्य मत के वैष्णवों को बहुत बुरा लगा और उन्होंने मोहन दास को फटकार लगायी कि तुम्हारे घर में ही हमारे सम्प्रदाय का खण्डन क्यों हो रहा है? मोहन दास की संकुचित भावना को देखकर, श्रीजी दूसरे सुन्दरसाथ शिव जी के घर चले गये।

तहां से सिवजी के, था घर के जोड़े घर।

उतारे तिन मिने, हुआ सेवा में ततपर।।६।।

वहाँ मोहनदास के घर के बगल में शिव जी भाई का घर था। वहाँ श्रीजी विराजमान हुये और शिव जी ने शुद्ध हृदय से उनकी सेवा की।

सत्रह महीनें तहाँ रहे, कहों ताकी बीतक।

जिन भाँत लीला करी, सो याद करो बुजरक।।७।।

यहाँ पर श्री प्राणनाथ जी ने १७ महीने निवास कर जो जागनी लीला की, अब उस घटनाक्रम का वर्णन कर रहा हूँ। हे साथ जी! उस गरिमामयी जागनी लीला को याद कीजिये।

मोहन दास अमीन के, तित चरचा हुई जोर।

तहाँ दज्ञालें देख के, करने लगा सोर।।८।।

मोहन दास अमीन के यहाँ श्रीजी के मुखारविन्द से बहुत अधिक प्रभावशाली चर्चा हुयी, जिसके कारण वैष्णव लोग कटु शब्दों में विवाद करने लगे।

भावार्थ– "अमीन" अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ कहीं पर "पटवारी" से लिया जाता है, तो कहीं–कहीं निरीक्षक से लिया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय मोहन दास जी कोई राजकीय कर्मचारी थे और अमीन के पद पर थे।

"वर्तमान दीपक" में लिखा है कि एक वैष्णव ने तो श्रीजी को क्रोध में पाखण्डी तक कह डाला, जिसका श्रीजी ने बहुत ही शालीनतापूर्वक उत्तर दिया। परिणामस्वरूप, श्रीजी की इस महानता से सभी वैष्णवों

को लज्जित होना पड़ा।

तब वहाँ से उठ के, आये सैयद पुर में।

तहां सिवजी भाई हते, सेवा भली हुई इन सें।।९।।

तब मोहन दास के यहाँ से उठकर श्रीजी सैयदपुर में ही शिव जी भाई के घर में ठहरे। शिव जी भाई ने सच्चे हृदय से धाम धनी की सेवा की।

भावार्थ– सैयदपुर मोहल्ला सात शेरियों (गलियों) में बँटा हुआ था। वे शेरियाँ इस प्रकार हैं– १. वायदा शेरी, २. बोरडी शेरी, ३. भगवान नायक की शेरी, ४. श्रावक शेरी, ५. कछिया शेरी, ६. धोबी शेरी, ७. नगौरी शेरी।

पहले श्रीजी भगवान नायक की गली में मोहन दास जी के यहाँ ठहरे थे। उसके बाद उनके यहाँ से बगल में स्थित शिव जी भाई के घर आ गये।

पहिले ए जो साथ था, सिवजी राम जी नाम।

तिनको समझाय के, भेजे बिहारी जी के ठाम।।१०।।

शिव जी और राम जी दोनों सगे भाई थे। इन दोनों ने पहले से ही सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के चरणों में तारतम ज्ञान ग्रहण कर रखा था। श्रीजी ने इन दोनों को चर्चा द्वारा जाग्रत कर बिहारी जी के चरणों में प्रणाम करने भेजा।

तुम जाय दीदार उत करो, जोलों उत ना लगों कदम।

तोलों तुम्हारी अलौकिक, सुध न होय आतम।।११।।

श्री जी ने उनसे कहा कि तुम दोनों नवतनपुरी में जाकर गादी पर विराजमान श्री बिहारी जी का दर्शन करो। जब तक तुम उनके चरणों में प्रणाम नहीं करोगे , तब तक तुम्हारी आत्मा की वास्तविक जाग्रति नहीं हो सकती।

भावार्थ– श्री प्राणनाथ जी के द्वारा दोनों भाइयों को बिहारी जी के पास भेजे जाने का विशेष कारण यह था कि सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी से तारतम लेने के कारण उन दोनों को श्रीजी के स्वरूप की पहचान नहीं थी। नवतनपुरी जाने पर उन्हें इस वास्तविकता का बोध हो सकता था कि धाम धनी इस गादी में नहीं, बल्कि श्रीजी के स्वरूप में हैं।

इन भांत समझाय के, भेजे भाई सिवजी को।
फेर पाती लिख दई रामजी को, सो भी चले इन काम मों।।१२।।

इस तरह से समझाकर श्रीजी ने शिव जी भाई को नवतनपुरी भेज दिया। इसके पश्चात् उन्होंने राम जी भाई को पत्र लिखकर भी दे दिया। वे भी बिहारी जी महाराज का दर्शन करने के लिये नवतनपुरी चल पड़े।

सिवजी पाती दै मिले, जाय के लगे कदम।

पांच मोहोर खर्च करी, उन निरमल करी आतम।।१३।।

शिव भाई जी ने श्री प्राणनाथ जी के द्वारा लिखा हुआ पत्र बिहारी जी के हाथ में दिया। उनके चरणों में प्रणाम किया तथा ५ मोहरें भेंट में रखी। उनकी इस सेवा से बिहारी जी महाराज इतने प्रसन्न हुये कि कह दिया – तुम्हारी आत्मा अब निर्मल हो गयी है।

राम जी पाती ले गया, उनको न दिया आवनें।

पाती न लई तिनकी, साथ में न दिया पैठने।।१४।।

राम जी भाई भी श्रीजी के हाथ से लिखा पत्र लेकर गये हुये थे किन्तु, उनकी दीन–हीन अवस्था को देखकर, बिहारी जी के आदेश से उनको अन्दर नहीं आने दिया गया। यहाँ तक कि बिहारी जी ने उनका पत्र भी लेना

स्वीकार नहीं किया और सुन्दरसाथ में बैठने की भी स्वीकृति नहीं दी।

रोय धोय विनती करी, और तीन किये उपवास।
दया ना करी किनने, तब टूटी इनकी आस।।१५।।

राम जी भाई तीन दिन उपवास करते रहे तथा रोते बिलखते हुए प्रार्थना करते रहे कि बिहारी जी महाराज उनका प्रणाम स्वीकार कर लें, किन्तु उनके ऊपर किसी ने भी दया नहीं दिखायी। तब राम जी भाई की सारी आशायें टूट गयीं और वे निराश होकर वहाँ से चल पड़े।

उन पाती फेर दई, कही अपनी बीतक।
श्री जी तब दिलगीर भये, दिल में भई सक।।१६।।

वापस लौटकर राम जी भाई ने श्रीजी से अपनी

आपबीती सारी बातें बतायीं, और जब यह बात कही कि बिहारी जी ने आपका लिखा पत्र लेने से भी मना कर दिया, तो यह बात सुनकर श्रीजी बहुत दुःखी हुये। उनके हृदय में यह संशय पैदा हो गया कि ऐसा लगता है कि बिहारी जी में कोई भी आध्यात्मिक सम्पदा नहीं है।

रहे धारा श्री जी के संग, सो बिहारी जी सुन्या मजकूर।
कही जिनको हम निकालत, ताए ए ना करत क्यों दूर।।१७।।

उधर बिहारी जी ने जब यह बात सुनी कि धारा भाई श्री मिहिरराज के साथ रहा करता है, तो वे कहने लगे कि मैं जिस व्यक्ति को सुन्दरसाथ से निकालता हूँ, उसको ये अपने पास क्यों रख लेते हैं? अपने से दूर क्यों नहीं करते?

इन बात की उनके, दिल में रहे सक।

मेरा हुकम ना मानत, ए आप कहावें बुजरक।।१८।।

इस बात का बिहारी जी के दिल में हमेशा संशय बना रहता था कि मिहिरराज जी के मन में सद्गुरू महाराज की गादी के प्रति कोई निष्ठा नहीं है। जब मैं उनकी गादी पर बैठा हूँ, तो वे मेरा कहना भी नहीं मानते और स्वयं को बड़ा कहलवाना चाहते हैं।

रामजी को हम काढ़िया, इन तिन को रख्या साथ में।

ए भली न करी इनों ने, दुख पाया इन बात सें।।१९।।

राम जी भाई को मैंने सुन्दरसाथ से निकाल दिया, किन्तु मिहिरराज जी ने उसे भी अपने साथ रख लिया। यह उन्होंने अच्छा नहीं किया। बिहारी जी महाराज इस बात से बहुत ही दुःखी रहते थे।

तब श्री जी साहिब जी नें सुनी, बिहारी जी पायो बड़ो दुख।
मैं काढ़ो ताय ए रखें, इन हम सों फेरया मुख।।२०।।

यह बात श्रीजी साहिब तक पहुँच गयी कि बिहारी जी महाराज इस बात से बहुत दुखी हो रहे हैं कि मैं जिसको निकालता हूँ, मिहिरराज जी उसको रख लेते हैं। उन्होंने मुझसे मुख फेर लिया है अर्थात् गादी को सर्वोपरि नहीं मान रहे हैं।

तब श्री जी साहिब जी ने कह्या, जो कोई लूला पांगला साथ।
इन्द्रावती न छोड़े तिनको, पहुंचावे पकड़ हाथ।।२१।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने यह घोषणा करी कि जो कोई भी लूला-लँगड़ा सुन्दरसाथ हो, उसको मैं असहाय अवस्था में माया में नहीं छोडूँगा , बल्कि उसका हाथ पकड़कर परमधाम की राह दिखाऊँगा।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "लूला" शब्द का आशय समाज के उन उपेक्षित और असहाय लोगों से है, जो सामाजिक, धार्मिक, तथा आर्थिक शक्ति से रहित हैं।

इसी प्रकार "पांगला" (लँगड़ा) शब्द का तात्पर्य उस व्यक्ति से है, जो इतना असहाय हो कि उसे दूसरे की कृपा पर रहना पड़ता हो, अर्थात् समाज का सबसे उपेक्षित व्यक्ति, जिसका न घर हो, न सम्पदा हो, और न कोई उच्च सामाजिक स्थिति हो।

इन समय गोवरधन, आया अबासी बन्दर से।
सो भी आये के इत, रह्या भेला साथ मिनें।।२२।।

इस समय अब्बास बन्दर से गोवर्धन जी सूरत आये और श्रीजी के चरणों में सुन्दरसाथ सहित रहने लगे।

तिन सेवा श्रीजीय की, सिर लई अपनें।

सब खर्चनें लगा साथ में, सुफल जनम करने।।२३।।

उन्होंने श्री प्राणनाथ जी सहित समस्त सुन्दरसाथ का सारा खर्च अपने ऊपर ले लिया। इस सेवा में ही उन्होंने अपने जीवन को सार्थक माना।

सोर पड़ा सहर में, चरचा को आवे खलक।

ले दिल में सक आवहीं, कर दीदार होय बेसक।।२४।।

श्रीजी की अलौकिक ज्ञान चर्चा का समाचार सारे सूरत नगर में फैल गया। लोगों की बहुत बड़ी भीड़ उनके दर्शन के लिये आने लगी। लोग अपने हृदय में संशय लेकर आते थे, लेकिन श्रीजी का दर्शन करने के बाद उनमें कोई भी संशय नहीं रह जाता था।

भीम स्याम भट्ट सुनी, करने आये दीदार।

चरचा इत बड़ी भई, उनों किया बड़ा प्यार।।२५।।

उस समय सूरत में भीम भट्ट और श्याम भट्ट वेदान्त के बहुत बड़े आचार्य थे। उन दोनों ने जब श्रीजी की अलौकिक ज्ञान चर्चा की बात सुनी तो दर्शन करने के लिये आये। उन दोनों से श्रीजी की बहुत चर्चा हुई और धाम धनी ने उन दोनों को बहुत स्नेह दिया।

इन प्यार के बांधे, करने आवें दीदार।

भयो रस चरचा को, हम समझें परवरदिगार।।२६।।

श्रीजी के पवित्र प्रेम में बँधकर, वे दोनों दर्शन करने आया करते थे। उनमें भी श्रीजी की चर्चा से इतना आनन्द आने लगा कि परब्रह्म को यथार्थ रूप से जानने की उनकी जिज्ञासा बढ़ती गयी।

उनों एक पख वेदान्त का, तिन गुरू सन्यासी संभूनाथ।
ताय वस्तो गत दूसरा नहीं, इन चरचा लगे साथ।।२७।।

दोनों ही वेदान्त पक्ष के प्रकाण्ड विद्वान थे। उनके गुरू शम्भूनाथ जी थे, जो एक सन्यासी थे। उन्हे वेदान्त के अतिरिक्त अन्य शास्त्रों का ज्ञान नहीं था। भीम भट्ट और श्याम भट्ट, श्री जी की चर्चा में दिन–प्रतिदिन डूबने लगे।

भावार्थ– पक्ष का तात्पर्य भाग से है। सृष्टि के छः प्रमुख कारणों में, निमित्त कारण, ब्रह्म की व्याख्या, वेदान्त दर्शन में दर्शायी गयी है। वेदान्त दर्शन छः शास्त्रों में से एक शास्त्र है। इसी को इस चौपाई के प्रथम चरण में "पक्ष" शब्द से सम्बोधित किया गया है।

जो खोज करे आतम की, ताय दिल में न होए विकार।
सब आतम देखहीं, एही करे करार।।२८।।

जिसे आत्म तत्व की सच्ची खोज होती है, उसके दिल में राग–द्वेष का किसी तरह का विकार नहीं होता। उसे सबमें एक ही चैतन्य (एक ही आत्म तत्व) दिखायी देता है।

भावार्थ– इस चौपाई में इस तथ्य की तरफ संकेत किया गया है कि श्याम भट्ट तथा भीम भट्ट को परमात्म तत्व की खोज थी। इसलिये वे श्रीजी के चरणों में सच्चे हृदय से चर्चा सुनने लगे। उनके मन में यह विकार नहीं था कि अपने गुरू को छोड़कर मैं दूसरे से चर्चा क्यों सुनूँ? यजुर्वेद के ४०वें अध्याय को ईशावास्य उपनिषद् कहते हैं, जो अन्य सभी उपनिषदों का आधार है, जिसमें कहा गया है–

"तत्र कः मोहः कः शोकः यो एकत्वं अनुपश्यति।"

अर्थात् जो सबमें एक चैतन्य को देखता है, वह मोह

और शोक से रहित हो जाता है। वेदान्त की इस शिक्षा को ज्ञान रूप से आत्मसात् करने के कारण, उन्हें श्री जी की चर्चा सुनने के प्रति कोई झिझक नहीं हुयी।

ए लगे चरचा समझनें, इत सर्व देसी चरचा होए।
ताय सुन के अचरज, पावत हैं सब कोए।।२९।।

दोनों श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को समझने का प्रयास करने लगे। श्रीजी के मुखारविन्द से प्रत्येक ग्रन्थ की चर्चा होती थी, जिसे सुनकर हर व्यक्ति को आश्चर्य होता था कि ये कैसे सभी विषयों पर व्याख्यान देते हैं?

भावार्थ– श्री महामति जी के धाम हृदय में अक्षर ब्रह्म विराजमान हैं, जिनकी ज्ञानधारा आदिनारायण के अन्दर वेद के रूप में अवतरित हुयी। वेद को सारे ज्ञान का मूल

स्त्रोत माना जाता है। महामति जी के अन्दर श्री राज जी का जोश जिबरील भी विराजमान है, जिसके द्वारा अखण्ड का ज्ञान संसार में आता है। इसके अतिरिक्त उनके अन्दर जाग्रत बुद्धि भी विराजमान है। ऐसी स्थिति में सभी धर्मग्रन्थों पर व्याख्यान देना श्रीजी के लिये सामान्य सी बात थी।

वेदान्त की चरचा, वह तो जानत सब।
ए चरचा तिन ऊपर, और कोई नहीं मतलब।।३०।।

वेदान्त पक्ष का ज्ञान तो दोनों जानते ही थे, किन्तु उन्हें ऐसा लगा कि श्रीजी के द्वारा वेदान्त से भी परे की बात बतायी जा रही है और उसकी साक्षी सभी ग्रन्थों से दी जा रही है। यहाँ उस परमतत्व के अतिरिक्त और कोई बात ही नहीं होती।

ए सुन के स्याम भट्ट, करनें लगा विचार।

भीम भाई को कह्या, तुम हूजो खबरदार।।३१।।

श्रीजी की अलौकिक चर्चा को सुनकर श्याम भट्ट विचार करने लगे और उन्होंने भीम भाई से कहा कि भीम भाई! तुम सावधान हो जाओ।

वेदान्त के खोज की, इनों से छिपे नहीं सुकन।

तिन ऊपर बतावत, ए कौन राह रोसन।।३२।।

वेदान्त की कोई भी गुह्य बात इनसे छिपी हुयी नहीं है, किन्तु ये तो वेदान्त से भी परे का ज्ञान बता रहे हैं। इनका कैसा अद्भुत ज्ञान है।

भावार्थ– वेदान्त का मूल प्रतिपाद विषय अक्षर ब्रह्म है। वेदान्त के प्रथम दो सूत्रों– "अथातो ब्रह्म जिज्ञासा" तथा "जन्माद्यस्य यतः" अर्थात् वह ब्रह्म जिज्ञासा का विषय

है, तथा जिससे सृष्टि की उत्पत्ति, पालन, एवं संहार होता है, वह अक्षर ब्रह्म है, से यह बात स्पष्ट होती है।

इसी प्रकार कठोपनिषद में भी कहा गया है– "यदक्षरं वेद विदो विदुः" अर्थात् वेद के जानने वाले जिस अक्षर ब्रह्म का वर्णन करते हैं। किन्तु श्रीजी के मुखारविन्द से अक्षर से भी परे अक्षरातीत की विवेचना की जा रही थी, जिसे उपनिषदों में "अक्षरात्परतः परः" मु. २/२/२४ कहा गया है।

एह विचार करते, भीम की खुली नजर।

ए तो अक्षर पार के, नजरों आई फजर।।३३।।

भीम भाई जब श्याम भाई की इन बातों पर विचार कर रहे थे, तो धाम धनी की कृपा से उनकी अन्तर दृष्टि खुल गयी और उन्हें ज्ञान का ऐसा प्रकाश मिला, जिसमें

उन्हें विदित हुआ कि ये तो अक्षरब्रह्म से भी परे अक्षरातीत परब्रह्म की पहचान दे रहे हैं।

आपन थे व्यापक लों, जानी सूरत एक।
जब नींद उड़ी अक्षर की, ए जो फैली उड़ी अनेक।।३४।।

वे श्याम भाई से कहने लगे– अभी तक हम लोग अक्षर ब्रह्म के स्वाप्निक स्वरूप आदिनारायण के व्यापक स्वरूप को ही ब्रह्म समझते थे, किन्तु अक्षर के मन (अव्याकृत) की नींद के हटते ही आदिनारायण का भी स्वरूप अपने मूल को प्राप्त हो जाता है, और इसके साथ ही असंख्य लोकों की यह सृष्टि भी महाशून्य में लय हो जाती है।

भावार्थ– सम्पूर्ण प्रकृति मण्डल में अक्षर का स्वाप्निक मन ही आदिनारायण के रूप में लीला करता है। अक्षर

के मन अव्याकृत को धर्मग्रन्थों में "ओऽम्" की संज्ञा दी गयी है और उसके स्वाप्निक स्वरूप आदिनारायण को भी "ओऽम्" कहा जाता है। आदिनारायण के संकल्प "एकोऽहम् बहुस्याम" से अनन्त सृष्टि का यह रूप दृष्टिगोचर हो रहा है। इसी आदिनारायण को वेदान्त की भाषा में "शबल ब्रह्म" या "ईश्वर" कहते हैं।

सृष्टि के कण-कण में इनकी सत्ता के व्यापक होने से, इनको व्यापक स्वरूप वाला कहा है।

ए तिन अक्षर के पार की, लीला बताई अखण्ड।
त्रिगुन विष्णु महाविष्णु की, बोय न लोक ब्रह्मांड।।३५।।

यह तो अक्षर ब्रह्म से भी परे अक्षरातीत के धाम की अखण्ड लीला का वर्णन कर रहे हैं, जिसकी सुगन्धि इस ब्रह्माण्ड में भिन्न-भिन्न लोकों में, त्रिगुणात्मक बन्धनों में,

रहने वाले ब्रह्मा, विष्णु, शिव, तथा आदिनारायण को भी नहीं है।

भीम की नजर खुली, जाय पहुंची लीला मों।
तब आये कदमों लगा, अपने कबीले सों।।३६।।

धनी की कृपा से भीम की अन्तर्दृष्टि खुल गयी और वे परमधाम की अखण्ड लीला का रसपान करने लगे। इसके पश्चात् उन्होंने अपने परिवार सहित आकर तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

पहिले गुरू से तोड़ के, आया बीच निजधाम।
चरचा का सुख पाए के, रह्या मोमिनों के काम।।३७।।

अपने पहले गुरू सन्यासी शम्भूनाथ से सम्बन्ध तोड़कर, वे सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुए। वे

श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा के रस में इतने आनन्दित हो गये कि उन्होंने अपना जीवन ब्रह्मसृष्टियों की जागनी लीला में लगाया।

एक व्यास गोविन्द जी, रहे वल्लभी मारग में।

उनने चरचा सुनी, भागवत के बचनों सें।।३८।।

गोविन्द जी व्यास वल्लभाचार्य मत के अनुयायी थे। उन्होंने श्रीजी के मुखारविन्द से श्रीमद्भागवत् की चर्चा में अखण्ड व्रज और रास का प्रसंग सुना।

इन समय भागवत की, मारग बल्लभाचारज।

तिनके टीका मिने, था सैंयों का कारज।।३९।।

श्री वल्लभाचार्य जी के द्वारा श्रीमद्भागवत् की जो टीका की गयी, उसका नाम सुबोधिनी टीका है। उसमें

ब्रह्मसृष्टियों के द्वारा व्रज–रास की अखण्ड लीला का वर्णन था।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में यह बात दर्शायी गयी है कि सखियों ने व्रज–रास में जो लीला की वह इसमें वर्णित है। वल्लभाचार्य की सुबोधिनी टीका से यह बात सिद्ध होती है कि उन्होंने काल माया से परे योगमाया में होने वाली महारास लीला का वर्णन किया है। इस सम्बन्ध में श्रीमद्भागवत् के दो श्लोक महत्वपूर्ण हैं–

भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः।
वीक्ष्यरन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः।।

दृष्ट्वा कुमुद्वन्तमखण्डमण्डलं रमाननाभं नवकुंकुमारूणम्।
वनं च तत्कोमलगोभिरंजितं जगौ कलं वामदृशां मनोहरम्।।

भागवत १०/२९/१,३

अर्थात् उन शरदकालीन रात्रियों में जब बेला, चमेली, आदि के सुगन्धित फूल खिले हुए थे, परब्रह्म ने योगमाया के अखण्ड ब्रह्माण्ड में जाकर महारास करने के लिये अपने मन में संकल्प किया। उस समय योगमाया के ब्रह्माण्ड के नित्य वृन्दावन में, नूतन केशर के समान लालिमा से युक्त, लक्ष्मी जी के मुख के समान अति सुन्दर, पूर्णमासी का चन्द्रमा आकाश में जगमगा रहा था, और सारा नित्य वृन्दावन उनकी कोमल किरणों से सुशोभित हो रहा था। ऐसे समय में अति मोहक स्वरों में श्री कृष्ण जी ने बाँसुरी बजाई।

इनकों कछु ना खुलहीं, चालीस प्रस्न तिन में।

सो लिख के धर उतारिए, ए लिया चाहिये इन सें।।४०।।

सुबोधिनी टीका में वल्लभाचार्य जी द्वारा चालीस प्रश्न लिखे गये थे, जिनमें से किसी का भी उत्तर गोविन्द व्यास जी को समझ में नहीं आता था। उन्होंने उन प्रश्नों को लिखकर अलग रख लिया और उनके मन में यह चाहना थी कि श्रीजी इन प्रश्नों का समाधान करें।

ए जो दलाल वल्लभ, रहे अपने साथ।

सो मेहनत कर ल्याइया, आन दई श्री जी के हाथ।।४१।।

वल्लभ भाई दलाल, जो अपने सुन्दरसाथ थे, उन चालीस प्रश्नों को बड़े परिश्रमपूर्वक लिखकर ले आये और श्रीजी के हाथ में पकड़ा दिया।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण का भाव यह है कि वल्लभ भाई दलाल को ४० प्रश्नों को प्राप्त करने में बहुत परिश्रम करना पड़ा, क्योंकि वल्लभाचार्य मत वाले लोग

दूसरे पन्थ वालों से बहुत अधिक भेदभाव रखते थे।

तिन प्रस्नों की चरचा, कहवाई गोविन्द जी के मुख।

तिन को तिन से समझाइया, तिन पाया बड़ा सुख।।४२।।

श्रीजी ने उन ४० प्रश्नों की चर्चा गोविन्द जी के मुख से कहलवायी। उन ४० प्रश्नों के उत्तर देकर श्रीजी ने उन्हें अच्छी तरह समझा दिया, जिससे उन्हें बहुत सुख हुआ।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में यह बात स्पष्ट कही गयी है कि, "तिनको" अर्थात् गोविन्द जी व्यास को, श्री प्राणनाथ जी ने उत्तर देकर यथोचित बोध करा दिया।

सो तबहीं कदमों लगा, आया साथ मिने।

तब दज्जाल के लसकर के, लगे निंदा करने तिन से।।४३।।

गोविन्द जी व्यास उसी समय श्रीजी के चरणों में समर्पित हो गये और तारतम ज्ञान ग्रहण कर लिया। इस बात से वल्लभाचार्य मत के लोग बहुत ही नाराज़ हुए और श्रीजी की निन्दा करने लगे।

एह कीर्तन हुये तिन पर, मीठी वल्लभाचारज बान।
कोई भली बुरी कहने लगे, काहू काहू भई पहिचान।।४४।।

उस समय धाम धनी ने एक कीर्तन अवतरित किया– "वचन विचारो रे मीठड़ी वल्लभाचारज बानी।" अर्थात् हे वैष्णव! तुम वल्लभाचार्य जी की मधुर वाणी का विचार करो। कुछ वैष्णव उन्हें भला–बुरा कहते, तो किसी–किसी को उनके स्वरूप की पहचान भी हो गयी कि ये कोई अलौकिक महापुरूष हैं।

भावार्थ– इस कीर्तन में वैष्णवों को सावचेत किया गया

है कि हे वैष्णवों! तुम्हारा सारा ध्यान नहाने–धोने और अच्छे कपड़े पहनने में बीत जाता है। तुम्हें यह भी बोध नहीं है कि तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो? और तुम्हारा मूल घर कहाँ है? एक तरफ तुम वल्लभाचार्य के अनुयायी कहलाते हो, दूसरी तरफ उनके द्वारा कही हुयी अखण्ड व्रज–रास की बातें भी नहीं मानते हो। उल्टे सुबोधिनी टीका को ही गलत ठहराने लगते हो। जिस कृष्ण की तुम भक्ति करते हो, तुम्हें मालूम ही नहीं है कि वह श्री कृष्ण जी कहाँ हैं?

कोई आवे लड़ने, कोई आवे निन्दक।

जब पावे दीदार, तब सुकर कहवे हक।।४५।।

कुछ लोग श्रीजी से झगड़ा करने की नीयत से आते थे, तो कुछ निन्दा करने के बहाने, किन्तु जब वे श्री

प्राणनाथ जी का दर्शन पाते, तो उनके मन की सारी भ्रान्तियाँ मिट जातीं और परब्रह्म को धन्यवाद देते हुये यह कहते कि।

इनकी निंदा जो करे, सो होवे ख्वार।
ए तो साध बड़े हैं, हैं तरफ धनी निरधार।।४६।।

जो इनकी निन्दा करेगा, उसका नाश हो जायेगा। ये तो बहुत बड़े अलौकिक महात्मा हैं और हमेशा परब्रह्म के प्रेम में डूबे रहते हैं।

द्रष्टव्य– इस चौपाई के तीसरे चरण में जो श्री प्राणनाथ जी को साधू (महात्मा) शब्द कहा है, वह श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप से अनजान प्रवाहियों का कथन है। तारतम लेकर जाग्रत होने वाले सुन्दरसाथ ने सर्वत्र उनको अक्षरातीत ही माना है।

इसी प्रकार, श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप के सम्बन्ध में तारतम वाणी या किसी जाग्रत आत्मा का ही कथन मान्य हो सकता है, अन्य प्रवाहियों का नहीं।

मानिक आवे दीदार को, सोहबत संग भगवान।

इनको चरचा सुनते, होय गई पहिचान।।४७।।

मानिक भाई भगवान दास जी के साथ श्रीजी के दर्शन करने के लिये आया करते थे। जब उन्होंने श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी, तो उन्हें उनके वास्तविक स्वरूप की पहचान हो गयी।

बिहारी जी इन समें, पाती लिख भेजे कलाम।

तीन बात का बन्धेज, हम किया इस ठाम।।४८।।

इस समय बिहारी जी ने श्रीजी को पत्र के माध्यम से

अपने मन की सारी बातें लिखकर भेजीं कि धर्म को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिये हमने नवतनपुरी में तीन नियमों का प्रचलन किया है।

सो तुम भी कीजियो, ए बात बहुत सिरे।
ए बात तुम उत करो, तो इत भी आन फिरे।।४९।।

मैं चाहता हूँ कि इन तीन नियमों को तुम अपने सुन्दरसाथ में भी लागू करो। यह बात बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि तुम अपने सुन्दरसाथ में तीन नियमों का पालन कराते हो, तो यहाँ पर उसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

एक तो नीच जात को, सुनाइयो नहीं तारतम।
दूजे रांड स्त्रीय को, तीजे कहें हम तुम।।५०।।

पहला नियम तो यह है कि नीची जाति के किसी व्यक्ति

को तारतम ज्ञान नहीं देना। दूसरा, किसी विधवा स्त्री को भी तारतम नहीं देना। तीसरा नियम यह है कि मेरे और तुम्हारे अतिरिक्त और कोई अन्य व्यक्ति तारतम नहीं दे सकता।

एह तीन बात को, जहूर कीजो उत।
धर्म उज्जवल देखियो, कोई करे न निन्दा कित।।५१।।

मेरी इच्छा है कि तुम इन तीन नियमों को अपने सुन्दरसाथ में लागू करो, जिससे कि हमारा पन्थ उज्ज्वल रहे और कोई भी कहीं इसकी निन्दा न कर सके।

भावार्थ– पन्थ या सम्प्रदाय धर्म रूपी वृक्ष की शाखायें हैं, किन्तु बोल–चाल की भाषा में प्रायः पन्थ को धर्म कहकर सम्बोधित कर दिया जाता है। इस चौपाई के तीसरे चरण में यही भाव व्यक्त किया गया है।

पन्थ विभिन्न पुरूषों द्वारा चलाये जाते हैं, किन्तु धर्म का प्रवाह अनादि काल से है और अनन्त काल तक रहेगा। धर्म रूपी सत्य के सागर से कुछ मणियों को लहराने वाली लहरें सागर नहीं बन सकतीं। धर्म या सत्य को किसी समाज, राष्ट्र, क्षेत्र, या जाति विशेष के बन्धन में नहीं बाँधा जा सकता। जैन, बौद्ध, सिख, श्री कृष्ण प्रणामी, यहूदी, इस्लाम, आदि पन्थ हैं, धर्म नहीं।

ए बात पाती की सुन के, श्री जी लिखी खबर।
तुम बाहिर दृष्ट छोड़ के, देखो अन्तर की नजर।।५२।।

बिहारी जी द्वारा भेजे पत्र को पढ़कर श्री प्राणनाथ जी ने उसका उत्तर लिखकर इस प्रकार भेजा कि बिहारी जी महाराज! यदि आप अपनी बहिर्मुखी दृष्टि को छोड़कर अपनी अन्तर्मुखी दृष्टि से देखें, तो आपको धर्म के

वास्तविक स्वरूप का बोध होगा।

जवाब तीन बात का, हम तुम्हें लिखों बनाए।

ताको विचार कीजियो, श्री देवचन्द्र जी राह चलाए।।५३।।

आपने जो तीन नियम बनाये हैं, मैं उसका उत्तर लिखकर भेज रहा हूँ। आप उसके बारे में विचार कीजियेगा। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने जो निजानन्द की राह दर्शायी है, उसमें...।

उननें जात भेष को, भान डारया सीस।

देख्यो जित अंकूर को, तित करी बखसीस।।५४।।

जाति विशेष या भेष–भूषा को कोई स्थान नहीं दिया गया है। उनका द्वार सबके लिये समान रूप से खुला हुआ है। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने जिसके अन्दर

परमधाम का अँकूर देखा, उसे परमधाम की निधि तारतम ज्ञान दिया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में "सिर तोड़ देना" (सिर भानना) एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है– अस्तित्व समाप्त कर देना या नष्ट कर देना।

सो देखो तुम जाहिर, खोजी बाई मुसलमान।
और ओ स्त्री रांड थी, बखस्यो रही बाई वासना जान।।५५।।

इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण ले लीजिये कि खोजी बाई एक मुसलमान महिला थी और वह विधवा भी थी। फिर भी सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने उसे परमधाम की आत्मा पहचानकर तारतम ज्ञान दिया।

सो ए बात तुम देखी है, उनकी दृष्ट जात भेष पर नाहिं।
जित देखो अंकूर धाम को, गिनो ऊंच नीच न ताहिं।।५६।।

अब यह बात सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी की जागनी में आपने अपनी आँखों से देखी है कि उनकी दृष्टि किसी जाति विशेष या भेष–भूषा पर नहीं थी। उनका यह स्पष्ट सिद्धान्त था कि जिसके अन्दर भी परमधाम का अँकूर (आत्मा) होता है, उसे किसी ऊँच या नीच जाति के बँधन में नहीं बाँधना चाहिये।

भावार्थ– भारतीय संस्कृति में वर्ण व्यवस्था कर्मणा है, जन्मना नहीं। इस समय दुर्भाग्यवश हिंदुओं में १२०० जातियां हैं, जबकि वर्ण चार ही हैं, और ये वर्ण कर्म के अनुसार होते हैं, जन्म के आधार पर नहीं। गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं–

चातुर्वर्णयम् मयासृष्टाः गुण कर्म विभागशः।

अर्थात् चारों वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शुद्र) कर्म से होते हैं जन्म से नहीं।

इसी प्रकार मनुस्मृति में भी कहा गया है-

शुद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैव शुद्रताम्।

क्षत्रियाज्ञातमेवन्तु विद्याद्वैश्यास्तथैव च।। मनु.१०/६५

अर्थात् ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर यदि उसका गुण-कर्म-स्वभाव क्षत्रिय, वैश्य या शुद्र के अनुसार है, तो उसे राजसत्ता के द्वारा शुद्र बना दिया जाना चाहिये।

इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति शुद्र कुल में है , किन्तु गुण-कर्म-स्वभाव ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य के समान है, तो उसे उस वर्ण में स्थापित कर देना चाहिये।

गृह्यसूत्रों में भी यही बात कही गयी है-

धर्मचय्र्यया जघन्यो वर्णः पूर्वं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।

उअधर्मचय्र्यया पूर्वो वर्णो जघन्यं जघन्यं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।

आपस्तम्ब सूत्र प्रश्न २ प. ५ क. ११ सूत्र १०–११

अर्थात् धर्म का आचरण करने से निम्न वर्णों के लोग उच्च वर्णों को प्राप्त होते हैं तथा अधर्म का आचरण करने से उच्च वर्णों के लोग निम्न वर्णों को प्राप्त होते हैं।

यह सर्वविदित है कि जाबालि ऋषि गडरिया थे, मतंग ऋषि चण्डाल थे, जानुश्रुति शुद्र थे, विश्वामित्र क्षत्रिय थे, किन्तु ये तप के द्वारा ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो गये। जबकि महर्षि पुलस्त्य का पौता और विश्रवा मुनि का पुत्र रावण ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने पर भी राक्षस ही कहलाया। स्वयं वेद व्यास जी भी मल्लाह की पुत्री सत्यवती के पुत्र थे। मीराबाई के गुरू रविदास जी भी शुद्र थे, जो जूता बनाया करते थे।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि आध्यात्मिक क्षेत्र में जन्मना जातिवाद का कोई स्थान नहीं होता।

और उनने ए कही, ए लीला आई अखण्ड।

या लीला के प्रताप तें, होए बका ब्रह्माण्ड।।५७।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने यह भी कहा है कि ब्रह्ममुनियों की यह लीला अखण्ड परमधाम से आयी है, और उनकी इस जागनी लीला के प्रभाव से सारा ब्रह्माण्ड ही अखण्ड मुक्ति को प्राप्त होगा।

सो हम तुम वस्त को, कहाँ लो कहते फिरें।

जिनको पहुंचे तारतम, सोई प्रकास करे।।५८।।

ऐसी अवस्था में, मैं और आप इतने बड़े संसार में परमधाम के इस अलौकिक ज्ञान को कहाँ तक कहते फिरेंगे? इसलिये उचित तो यही होगा कि जिसके भी पास तारतम ज्ञान का प्रकाश हो, वह दूसरे के हृदय में इसका उजाला फैलाये।

जित होए अंकूर निजधाम को, गिनिये ऊंच नीच न तित।
ए राह श्री देवचन्द्र जीयें, कही आतम दृष्ट की इत।।५९।।

परमधाम की आत्मा जिन तन में विराजमान है, उसे किसी ऊँची या नीची जाति के बँधन में नहीं बाँधना चाहिये। यह मार्ग सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने बताया है और उन्होंने स्पष्ट कहा है कि हमें दूसरों को आत्मिक दृष्टि से देखना चाहिये, शारीरिक दृष्टि से नहीं।

सोई लिखी वेद पुरान में, जहाँ भक्त प्रगट होई।
तिनकी जात पात न देखिए, ए बैकुण्ठ वालों की राह सोई।।६०।।

वेदों तथा पुराणों (हिन्दू धर्मग्रन्थों) में यह बात लिखी हुयी है कि जिस कुल में परमात्मा का भक्त प्रकट हो जाता है, उसकी जाति नहीं देखनी चाहिये। ऐसा तो वैकुण्ठ की भक्ति करने वाले भी कहते हैं, जबकि हम तो

परमधाम के हैं।

ए राह श्री देवचन्द्र जीयें, हमको तुम आगे दई दिखाई।
सोई तुम सब साथ को, अब वोही देओ बताई।।६१।।

बिहारी जी! आपको यह बात अच्छी तरह से याद होगी, कि आपके सामने ही सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने मुझे जातीयता के रूढ़िवादी बन्धनों से दूर रहने के लिये कहा था। इसलिये आप भी अपने सुन्दरसाथ को वही मार्ग बताइये, जो सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने कहा था।

तो राह ए चलसी, होए बड़ो प्रकास।
साथ सब दौड़सी, ले दिल जागनी की आस।।६२।।

तभी हमारा पन्थ संसार में फैल सकेगा और चारों ओर तारतम ज्ञान की गूँज होगी। इस अवस्था में ही अपनी

आत्म-जाग्रति की कामना लेकर सब सुन्दरसाथ धनी की तरफ दौड़ लगायेंगे।

साथ सबे उतरयो, चारों वर्णों माहिं।

ए बन्धेज बांधे से, होए अकारज ताहिं।।६३।।

परमधाम की आत्मायें चारों वर्णों में आयी हुयी हैं। आपके बनाये हुये इन तीन नियमों से तो जागनी का कार्य ही बन्द हो जायेगा।

इन भांत की हकीकत, लिखा जवाब बिहारी जी ऊपर।

और भेजी किताब कलस की, लेने मसनंद की खबर।।६४।।

इस तरह से श्री प्राणनाथ जी ने श्री बिहारी जी को पत्र लिखकर वास्तविकता से अवगत करा दिया, और साथ में सूरत में अवतरित हुई कलश गुजराती की किताब भी

भेज दी, जिससे बिहारी जी को यह पता चल जाये कि श्री राज जी उनकी गादी में नहीं बैठे हैं, बल्कि श्री महामति जी के धाम हृदय में बैठे हैं।

भावार्थ– कलश गुजराती में स्पष्ट लिखा है–

तारतम तेज प्रकास पूरण, इंद्रावती ने अंग।
ए मारूं दीधूं में देवाय, हूं इंद्रावती ने संग।।६५।।
इंद्रावती ने हूं अंगे संगे, इंद्रावती मारूं अंग।
जे अंग सोंपे इंद्रावती ने, तेने प्रेमें रमाडूं रंग।।६६।।
सुख दऊं सुख लऊं, सुखमां ते जगवुं साथ।
इन्द्रावतीने उपमा, मैं दीधी मारे हाथ।।६८।।
इन्द्रावती सों अतंत रंगे, स्याम समागम थयो।
साथ भेलो जगववा, इन्द्रावती ने में कह्यो।।१३५।।

कलस गुजराती प्रकरण १२

तारतम वाणी के इन वचनों से यह स्पष्ट होता है कि अक्षरातीत ब्रह्मात्माओं के धाम हृदय में निवास करते हैं, रूई की गद्दी में नहीं। यह बात बिहारी जी को स्वीकार नहीं हुयी और उन्होंने "कलश ग्रन्थ" को "क्लेश ग्रन्थ" कहा।

सुन के बिहारी जी ने, बड़ो पायो दुःख तब।
न मानों कलस को, देखी पाती जब।।६५।।

बिहारी जी ने जब उस पत्र को पढ़ा, तो वे बहुत दुःखी हुये। उन्होंने यह कह भी दिया कि मैं इस कलश ग्रन्थ को नहीं मानता।

उन लिख भेजी पातीय को, तुम्हारी राह भई और।
और हमारी भी और है, भई जुदागी इस ठौर।।६६।।

उन्होंने श्री जी के पत्र का उत्तर लिखकर भेजा कि आज से हमारे और तुम्हारे बीच अलगाव हो रहा है। तुम्हारा रास्ता अलग है और हमारा रास्ता अलग।

हम तो तुमको चीन्हया, तुम्हारे माहें कलाम।
तुम नही हमारे साथ में, हम काढ़ें तुम्हें इस धाम।।६७।।

मैंने तुम्हें अच्छी तरह से पहचान लिया है कि तुम्हारे अन्दर कविता बनाने की कला है, जिसके द्वारा तुम अपने मुख से अपने हृदय में अक्षरातीत को बैठा हुआ घोषित करते हो। अब तुम हमारे सुन्दरसाथ में नहीं हो, मैंने तुम्हें परमधाम से भी निकाल दिया है।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण का अर्थ यदि यह किया जाये कि मैंने तुम्हें परमधाम के सुन्दरसाथ से निकाल दिया है, तो यह उचित नहीं लगता, क्योंकि इस

तरह का भाव तीसरे चरण में पहले से दे दिया है कि तुम मेरे सुन्दरसाथ में नहीं हो अर्थात् तुम्हें सुन्दरसाथ से बहिष्कृत कर दिया गया है।

तारतम वाणी के ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण बिहारी जी को परमधाम की निस्बत एवं वहदत का कोई ज्ञान नहीं था। इसलिये सूर जी भाई को भी उन्होंने इस धमकाने के अन्दाज में कहा था कि मैं तुमको परमधाम से निकाल दूँगा। जिससे विवश होकर सूर जी भाई को यह प्रार्थना करनी पड़ी थी कि हे धाम धनी! आप मुझको परमधाम से अलग न कीजिये और १२००० ब्रह्मात्माओं में सम्मिलित किये रहिये। इस सम्बन्ध में बीतक प्रकरण २९ की चौपाइयाँ १५, १६, १७ देखने योग्य हैं–

तो हमारे तुम्हारे, नाता न रहे श्री धाम।
नातो तुम्हें निकालें साथ से, जो हम सुन्या तुम्हें ए काम।।

ए बात सूरजी सुनके, हुआ धारे से बेजार।
हम काहे को इन्हें रखें, हम दाखिल बारे हजार।।
मेरे नाता श्री धाम का, क्यों कर तोड़त तुम।
हम कबीला न रखें धारे का, ना छोड़े तुम्हारे कदम।।

हम जिन साथ को काढ़िया, क्यों तिन को लिया बीच दीन।
तो इत तुमको हमारा, छूट गया आकीन।।६८।।

मैंने जिन-जिन सुन्दरसाथ (धारा भाई, रूपा, राम जी भाई, आदि) को निकाला, उनको तुमने धर्म में बनाये रखा। इसका तात्पर्य यही है कि तुम्हे हमारे निर्देश के ऊपर कोई विश्वास नहीं है।

भावार्थ- किसी स्थान विशेष का स्वामित्व पाकर आध्यात्मिक आदर्शों को पैरों तले नहीं रौंदा जा सकता। गादी पर बैठने मात्र से बिहारी जी अपने को सर्वशक्तिमान

समझने लगे थे, और वे ये भी मानने लगे थे कि प्रत्येक व्यक्ति को उनका आदेश मानने के लिये विवश रहना होगा। यह उनकी बहुत बड़ी भूल थी। इस प्रकार की विकृत मानसिकता किसी भी समाज के लिये घातक है।

तिस वास्ते हम तुमको, किए साथ से दूर।
हमारे तुमारे नाता न रह्या, जिन पाती करो मजकूर।।६९।।

इसलिये मैंने तुमको सुन्दरसाथ से बहिष्कृत कर दिया है। अब हमारे–तुम्हारे मध्य किसी भी तरह का सम्बन्ध नहीं है। भविष्य में पत्र के द्वारा भी मुझसे बात करने का प्रयास न करना।

इन भाँत पाती लिखी, आए पहुंची सूरत।
तब श्री जीयें विचारिया, ऐसा हुआ बखत।।७०।।

इस प्रकार बिहारी जी ने जो पत्र लिखा, वह सन्देश वाहक के द्वारा श्रीजी के पास आया। उसे पढ़कर श्रीजी ने अपने मन में विचार किया कि अब ऐसा भी समय देखना पड़ रहा है कि मुझे भी बहिष्कृत कर दिया गया है।

ऐसा तो न चाहिये, जो हमको ऐसे लिखे सुकन।
हमसे तकसीर ना पड़ी, ए काम नहीं सैंयन।।७१।।

मेरे लिये इस तरह की बातों वाला पत्र लिखना बिहारी जी को शोभा नहीं देता। हमने तो कोई अपराध किया नहीं था। इस तरह का काम ब्रह्मसृष्टियाँ नहीं करतीं।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण का बाह्य अर्थ लेने से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे बिहारी जी ब्रह्मसृष्टि नहीं थे। लीला रस सागर में भी ४५वें प्रकरण में यह बात

दर्शायी गयी है कि सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने, बाल बाई और नाग जी भाई के बार–बार आग्रह करने पर भी, बिहारी जी की आत्मा का नाम नहीं बताया था। तब नाग जी भाई और बाल बाई ने स्वयं उनको अपने मन से रतन बाई कह दिया।

तब बोले बालबाई नागजी भाई, इनको नाम कहो रतनबाई।
रतन कूख में रत्न जो होई, ताथे रतन बाई कहो सब कोई।।
उत गए आगे थे नागजी बाई, बिहारीजी को बात सुनाई।
धनी वासना परखी नाहिं, बहुत उपाय करे हम ताहिं।।
तब सब साथें अर्ज तहां किन्हीं, तब बुलावन की आज्ञा दीन्हीं।
सब साथ मिलके इत ठेहेराई, नाम तुमारो है रतनबाई।।
लीलारस सागर प्रकरण ४५ चौपाई ७०,७१,७२

किन्तु यह उचित नहीं है। श्रीजी के प्रति श्रद्धा के अतिरेक में लीला रस सागर में ऐसा लिखा गया है। जब

हजारों निर्दोष व्यक्तियों को फाँसी की सजा देने वाले अपने सगे भाइयों (दारा शिकोह आदि) की हत्या कराकर दिल्ली के चौराहे पर उनका सिर टँगवा देने वाले तथा अपने सगे पिता शाहजहाँ को विष मिश्रित तेल से मालिश करवाकर तड़पा-तड़पाकर मारने वाले औरंगज़ेब के अन्दर सकुमार की आत्मा मानी जा सकती है, तो बिहारी जी के अन्दर परमधाम की आत्मा क्यों नहीं कही जा सकती? आत्मा तो मात्र द्रष्टा है। उसका जीव के शुभ-अशुभ कर्मों से कोई लेना-देना नहीं है।

तारतम वाणी अक्षरातीत के आवेश से अवतरित हुयी है। इसलिये तारतम वाणी का कथन अन्तिम सत्य है-

गयो अवसर फेर आयो है हाथ, चेतन कर दिये प्राणनाथ।
तब जो वासना बाई रतन, लीलबाई के उदर उतपन।।

प्रकाश हिन्दुस्तानी ९/२

सईं तूं मेरी बाई रतन, मोहे मिले छबीले लाल।
करी मुझे सोहागिनी, अब मैं भई निहाल।।

प्रकाश हिन्दुस्तानी २८/११

परब्रह्म के आवेश से कहे हुए इन वचनों को अन्यथा कैसे किया जा सकता है? पूर्वोक्त प्रकरण की ७१वीं चौपाई में जो "ए काम नहीं सैंयन" कहा गया है, वह उलाहने या फटकारने की मुद्रा में कहा गया है। यह बात वैसे ही है, जैसे व्यावहारिक रूप से कोई पिता किसी अपराध के कारण अपने सगे पुत्र को खीझ में यह कहे कि तुम मेरे पुत्र ही नहीं हो। क्या उसके कहने मात्र से पिता-पुत्र का सम्बन्ध समाप्त हो जायेगा?

इन समें सब साथ ने, करी ए मसलहत।
बैठे श्री देवचन्द्र जी किनके हिरदे, तुम तौल देखो इत।।७२।।

इस समय सब सुन्दरसाथ ने आपस में विचार–विमर्श किया कि अब सुन्दरसाथ इस बात को गहनता से सोचें (मूल्यांकन करें) कि सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी (श्री राजश्यामा जी) किसके धाम हृदय में विराजमान हैं? गादीपति श्री बिहारी जी के अन्दर या श्री मिहिरराज जी के अन्दर।

कही ए श्री जी साहिब जी सों, तुम लेओ हक सिर काम।
साथ को जमा करना, बीच दीन इसलाम।।७३।।

सब सुन्दरसाथ ने श्री प्राणनाथ जी से कहा कि आप धाम धनी के इस कार्य को अपने शिर पर लीजिए अर्थात् जागनी कार्य का नेतृत्व कीजिये। आप सुन्दरसाथ को धनी की पहचान कराकर निजानन्द के शाश्वत मार्ग में ले आइये।

कोई उनसे साथ में, ल्याया नही ईमान।

चरचा राज की करके, काहू न भई पहिचान।।७४।।

बिहारी जी ने आज तक धाम धनी की चर्चा करके किसी को भी उनकी पहचान नहीं करायी, और न ही उनके समझाने से आज तक किसी ने भी श्री राज जी के प्रति अपने मन में विश्वास (ईमान) धारण किया।

जिनको तुम समझाए के, भेजत हो उन तरफ।

सो विकार पाए के, खाए आवत सब सक।।७५।।

आप जिस किसी भी सुन्दरसाथ को तारतम ज्ञान से समझाकर उनके पास प्रणाम करने के लिये भेजते हैं, वे उनके दुर्व्यवहार से दुःखी होकर वापस चले आते हैं। और इस पन्थ के अस्तित्व और सिद्धान्त पर ही उनके मन में संशय पैदा हो जाता है।

अब तुम क्या देखत, नजर करो तरफ धाम।

लेओ तुम सिर आपने, दीन इसलाम का काम।।७६।।

अब आप क्या देखते हैं? अपनी दृष्टि परमधाम की तरफ कीजिये अर्थात् मूल स्वरूप श्री राज जी का आदेश मानकर निजानन्द की राह में परमधाम की आत्माओं की जाग्रति का उत्तरदायित्व स्वीकार कीजिये।

भावार्थ– सुन्दरसाथ के कहने का आशय यह था कि हमने यह पहचान लिया है कि आपके अन्दर युगल स्वरूप विराजमान हैं। आप अपने स्वरूप पर पर्दा डालने के लिये गादी पर विराजमान बिहारी जी के चरणों के प्रति आस्था क्यों दिलाते हैं? जब मूल स्वरूप श्री राज जी ने जागनी की शोभा आपको दी है तथा सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने भी आपको जागनी का उत्तरदायित्व दिया था, तो आप उसे क्यों नहीं निभाते हैं? हम अपना

सर्वस्व आपको मानते हैं और अब हम गादी पर विराजमान बिहारी जी को प्रणाम करने कभी भी नहीं जायेंगे।

साथ सब लागू हुये, आगा किया भाई भीम।
चरचा करके सिर ले, लिया जस अजीम।।७७।।

भीम भाई के नेतृत्व में सब सुन्दरसाथ ने एक स्वर से यह घोषणा कर दी कि हम आज से श्री प्राणनाथ जी को अपना धाम धनी स्वीकार करते हैं। सब सुन्दरसाथ को श्री प्राणनाथ जी के प्रति अटूट आस्था दिलाने में भीम भाई अग्रणी रहे। सबसे बातचीत करके इस विषय पर सबको एकमत करने के कारण भीमभाई को सबसे महान् शोभा मिली।

भावार्थ– भीम भाई के नेतृत्व में सुन्दरसाथ ने इस बात

का अनुभव कर लिया कि बिहारी जी का गादीवाद अज्ञानता के अन्धकार का जनक है। हम जाहिरी गद्दी को छोड़कर श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान युगल स्वरूप के चरणों का आश्रय क्यों न लें?

वृत्तान्त मुक्तावली में वर्णित है कि इसके पश्चात् उन्होंने श्रीजी की आरती उतारी और एक स्वर से अपना धाम धनी माना–

कर बाई जूं राज के, आरति प्रेम कराई।
युगल बैठाइ आपुन करी, कल्मष दये हराइ।।

वृत्तान्त मुक्तावली ४९/३१

तब पाती का जवाब, लिख भेजे कलाम।
तुम हमको काढ़े साथ से, हम सिर पर लिया काम।।७८।।

इसके पश्चात् श्रीजी ने बिहारी जी के पत्र का उत्तर

लिखकर भेजा। उसमें उन्होंने लिखा कि आपने मुझे सुन्दरसाथ से बहिष्कृत तो कर दिया, किन्तु सद्गुरू महाराज ने मुझे जो जागनी का उत्तरदायित्व दिया था, अब मैंने उसे शिरोधार्य कर लिया है।

जो हम स्वारथ को, दौड़ करेंगे इत।
तो सीधा कबहूं न होएगा, हम जायेंगे तित।।७९।।

किन्तु यदि जागनी के कार्य में हम स्वार्थवश कदम बढ़ायेंगे, तो हमारा कोई भी कार्य किसी भी स्थिति में सफल नहीं हो पायेगा।

और साथ के वास्ते, जो हम करत मेहनत।
तो हमारे सीधा होयगा, नजीक है साइत।।८०।।

और यदि सुन्दरसाथ के सुख के लिये हम जो भी

परिश्रम करेंगे, उसमें धाम धनी की कृपा से हमें सफलता अवश्य मिलेगी। वह शुभ घड़ी बहुत निकट है, जब चारों ओर जागनी का परचम फैला होगा।

इन भांत का जवाब, पाती में लिखे कलाम।
हम तो कमर बांधी, श्री निजधाम के काम।।८१।।

श्रीजी ने इस प्रकार का उत्तर पत्र में लिखकर भेज दिया कि मैं अब परमधाम की आत्माओं की जागनी के लिये पूर्ण रूप से तैयार हो गया हूँ।

इन समय लालदास, साथ आया ठट्ठे से।
सुदामा पुर पहुंचिया, कहों बीतक तिन सें।।८२।।

इस समय लालदास जी ठट्ठानगर से सुदामापुर पहुँचे। अब वहाँ का घटनाक्रम वर्णित किया जा रहा है।

सम्बत् सत्रह सताईसे, पहुंचे सुदामा पुर।

तहां भीम पीताम्बर मिले, हुई चरचा तिन ऊपर।।८३।।

वि.सं. १७२७ में लालदास जी सुदामापुर पहुँचे। वहाँ भीम भाई और पीताम्बर भाई थे। उनसे लालदास जी की अखण्ड व्रज–रास पर गहन चर्चा हुयी।

कछुक इन ठट्ठे मिने, चरचा देखी जब।

वहां दोऊ लागू भये, सुनायो तारतम तब।।८४।।

भीम भाई और पीताम्बर भाई ने ठट्ठानगर में श्री लालदास जी के मुख से कुछ ज्ञान चर्चा श्रवण की थी। वहाँ उन दोनों में अक्षरातीत के प्रति निष्ठा जाग्रत हो गयी थी और वे दोनों तारतम ग्रहण करना चाहते थे।

कोइक दिन पीछे उने, सुनायो श्री तारतम।

ए दोऊ जने तबहीं, सौंप चुके आतम।।८५।।

कुछ दिनों के बाद जब लालदास जी सुदामापुर आये, तो भीम भाई और पीताम्बर भाई ने उनसे तारतम ज्ञान ग्रहण किया। तारतम ज्ञान ग्रहण करते ही इन्होंने अपनी आत्मा अक्षरातीत धाम धनी के चरणों में सौंप दी।

तब दज्जाल इन समें, लगा जो करने सोर।

विठलेस गुसांई के, लगे निंदा करने जोर।।८६।।

तब विट्ठलेश गोसांई के अनुयायी वैष्णव लोग, लालदास जी की बहुत अधिक निन्दा करने लगे और लड़ने के लिये तैयार हो गये।

वल्लभी मारग में, खड़ भड़ पड़ी उत।

ए कौन मारग पैदा भयो, ए चलें सेवक इत।।८७।।

भीम भाई और पीताम्बर भाई के तारतम ग्रहण कर लेने से वल्लभाचार्य मत में खलबली मच गयी। वे लोग कहने लगे कि यह कौन-सा नया पन्थ आ गया है, जिसमें हमारे अनुयायी चले जा रहे हैं।

हमारो तो बड़ों मारग, चारो खूंटों रोसन।

तिन भांत के और को, बतावत साधुजन।।८८।।

हमारा वल्लभाचार्य मत तो सर्वश्रेष्ठ है, जिसकी प्रसिद्धि चारों दिशाओं में है, किन्तु ये लोग तो हमारे पन्थ के ही समान अन्य पन्थों को भी बता रहे हैं।

श्री राज के दर्सन की, चरचा होवे जोर।

दज्जाल तिनकी करे, अपनी सिपाह में सोर।।८९।।

जब श्री लालदास जी चर्चा करते थे, तो उस समय श्री राज जी के दर्शन का बहुत अधिक प्रसंग आता था, किन्तु वल्लभाचार्य मत के लोग उस बात को लेकर अपने अनुयायियों में बहुत निन्दा करते थे।

धरम उंदरियों पैदा भयो, पांव बांधत घूंघरी।

थाल धरे परदा करे, देखो ऐसी राह चली।।९०।।

वे ऐसा प्रचार करते थे कि चूहों वाला यह नया पन्थ चला है। ये लोग चूहे के पैर में घुँघरू बाँध देते हैं और अन्दर भोग का थाल रखकर पर्दा कर देते हैं।

कहें हमारे घरों, श्री कृष्ण जी पधारत।

सो अरूगाय के, एही राह चलावत।।९१।।

जब चूहा उस थाल को खाने के लिये आता है, तो उसके पैरों में बँधे घुँघरू की आवाज को ये लोग इस रूप में प्रचारित करते हैं कि हमारे यहाँ साक्षात् श्री कृष्ण जी भोजन करने आते हैं। इस प्रकार चूहे को खिलाकर वही झूठा प्रसाद सबको खिला देते हैं। ऐसे आडम्बरपूर्ण मार्ग पर दूसरों को चलाकर उन्हे भटका रहे हैं।

इन भाँत सहर में, निंदा निस दिन होय।

पूछे प्रस्न भागवत के, ताको अरथ न कहवे कोय।।९२।।

इस प्रकार सुदामापुर में दिन-रात वैष्णव लोग निन्दा करते थे, किन्तु इस समय जब सुन्दरसाथ उनसे भागवत के प्रश्न पूछते तो उनमें से किसी को भी एक भी

प्रश्न का उत्तर नहीं आता था।

काहू को सांची भासे, कोई चरचा सुन होवे गलित।
कोई अस्तुति करे, जो देखे आये के तित।।९३।।

किन्तु अगर कोई आकर श्री लालदास जी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को प्रत्यक्ष सुन लेता था, तो किसी को वह बहुत सच्ची लगती थी और कोई गलित-गात अर्थात् समर्पित हो जाता था। कोई श्री लालदास जी की महिमा भी गाता था।

रब्द प्रस्न चरचा का, रात दिन उत होय।
जवाब काहू न आवहीं, क्यों उत्तर देवें सोय।।९४।।

इस प्रकार सुदामापुर में दिन-रात आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर से सम्बन्धित विवाद छिड़ा रहता था। तारतम ज्ञान

से रहित वल्लभाचार्य मत के अनुयायियों को लालदास जी के किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं आता था, तो भला वे उत्तर कहाँ से देते?

यों करते लोग इन समें, लगे चरचा सुनने को।
गोपी साथ में आइया, खेमजी जोसी इन मों।।९५।।

इस प्रकार धीरे-धीरे चर्चा सुनने के लिये लोगों की संख्या बढ़ती गयी। चर्चा सुनकर गोपी तथा खेम जी जोशी ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और सुन्दरसाथ में सम्मिलित हुये।

दामा और सूरचन्द्र, और वस्ता नाम।
लालबाई धनियानी, भए दाखिल निजधाम।।९६।।

दामा, सूरचन्द, और बस्ता भाई, तथा श्री लालदास

जी की पत्नी लालबाई ने तारतम ज्ञान ग्रहण करके परमधाम की राह अपनायी।

इहाँ होय चरचा उच्छव, आया इत प्रधान।
और आया मसकत से, महाव का बेटा कान।।९७।।

यहाँ पर वाणी चर्चा के साथ-साथ प्रीति भोज आदि के उत्सव भी होते थे। सुदामापुर के प्रधान तथा मस्कत बन्दर के रहने वाले महाव जी भाई के बेटे कान्ह जी भाई ने यहाँ आकर तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

यों एक गांठ होय चली, आवने लगा नया साथ।
सोई चरचा सुनत हैं, जाके धनिये पकड़े हाथ।।९८।।

इस तरह से नये-नये सुन्दरसाथ के आने से संख्या बहुत अधिक हो गयी और उनका एक समूह सा हो गया।

धाम धनी जिस पर कृपा करके माया से निकालते हैं, एक मात्र वही चर्चा सुनता है, अन्यथा संसार के जीव तो माया के सुखों को ही सब कुछ मान लेते हैं।

भावार्थ– "एक गांठ होना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ है– संगठित रूप में समूहबद्ध हो जाना।

लाल दास को इन समें, भई माया की उरझन।
इनको राजें काढ़ के, चाहिये कदमों पहुंचे मोमिन।।९९।।

इस समय धाम धनी ने चाहा कि लालदास जी माया के झंझटों को छोड़कर जागनी कार्य में प्रमुख सहयोगी बनें। इसलिये धनी की प्रेरणा से माया की परेशानियाँ बहुत बढ़ गईं।

भावार्थ– तारतम ज्ञान ग्रहण करते ही श्री लालदास जी (लक्ष्मण सेठ) का मन संसार से अलग सा हो रहा था।

जागनी कार्य के लिये उन्हें श्री जी के चरणों में पहुँचना अति आवश्यक था। इसलिये धाम धनी की प्रेरणा से उनकी दुकान में आग लग गयी, जिससे उन्हें बहुत हानि उठानी पड़ी। वैराग्य भाव की वृद्धि के कारण वे व्यापार की तरफ अधिक ध्यान भी नहीं दे पा रहे थे, जिससे व्यापार छिन्न-भिन्न सा हो गया था। इसी को इस चौपाई के दूसरे चरण में माया की उलझन कहा है।

तब माया की तरफ का, हुआ धक्का जोर।
दज्जालें जोरा किया, ऊपर करने लगा सोर।।१००।।

इसके अतिरिक्त लौकिक दृष्टि से उन्हें एक और क्षति उठानी पड़ी, जब उनके माल से भरे हुये जहाज समुद्र में डूब गये। यह उनकी बहुत बड़ी क्षति थी। जिन व्यापारियों को उनसे धन लेना था, वे दज्जाल के रूप धन

माँगने के उद्देश्य से झगड़ा करने लगे।

भावार्थ– "वर्तमान दीपक" में लालदास जी के जहाजों के डूबने का वर्णन इस प्रकार है–

त्यां कारण केवुं थयो, सांभल वीरा बात।
बहाण गया विदेशमां, ते सागर डूबया समत।।
थया विमाना वायदा, लेबा आव्या लोक।
माल नथी दुकानमां, शेठ ने प्रगट्यो शोक।।

वर्तमान दीपक ४७/९,१०

जब कछु न रह्या हाथ में, तब माया दिया छोड़।
तब नजर करी तरफ राज के, चित माया से लिया मोड़।।१०१।।

जब उनके पास कुछ भी धन नहीं रह गया, तब उन्होंने माया का सारा व्यवहार छोड़ दिया और संसार से अपना

सारा ध्यान हटाकर धाम धनी के चरणों की ओर कर लिया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में व्यापार आदि का छोड़ना "स्थूल माया" का त्याग है तथा चौथे चरण में वैराग्य भाव में डूबकर चित्त को लौकिक कार्यों से हटा देना "सूक्ष्म माया" का त्याग है। इसी प्रकार धनी के प्रेम में डूबकर वासना के संस्कारों को निर्मूल कर देना "कारण माया" का त्याग है।

अन्न का नेम लिया, जब मैं करों दीदार।
नवतनपुरी जाय के, देखों धनी निरधार।।१०२।।

अब श्री लालदास जी ने प्रण कर लिया कि जब तक मैं नवतनपुरी जाकर सद्गुरू महाराज की गादी पर विराजमान बिहारी जी महाराज के दर्शन नहीं करूँगा,

तब तक मैं अन्न ग्रहण नहीं करूँगा।

तब लों अनाज ना लेऊं, तोलो करों फल आहार।
इन भांत चलने लगे, ऐसा किया विचार।।१०३।।

उन्होंने अपने मन में दृढ़ विचार कर लिया कि बिहारी जी के दर्शन के पहले तक मैं केवल फलाहार ही ग्रहण करूँगा, अन्न से बने हुये किसी भी पदार्थ का मैं तब तक सेवन नहीं करूँगा। इस प्रकार वे ठट्ठानगर से नवतनपुरी के लिये चल पड़े।

जब मगरोल पाटन, आये पहुंचे इत।
तहाँ दज्जाल बैठा था, कहे तुम जाओ सूरत।।१०४।।

जब वे मगरोल पाटन आये, तब व्यापारियों के द्वारा रखवाये हुये पहरेदारों ने उन्हें जाने से रोक लिया और

कहा कि आप नवतनपुरी न जाकर सूरत जायें।

भावार्थ– व्यापारियों को आशंका थी कि यदि सेठ लक्ष्मण दास जी (लालदास जी) नवतनपुरी चले जाते हैं तो वे वहाँ वैराग्य धारण कर लेंगे। ऐसी अवस्था में हमें उनसे अपना धन वापस नहीं मिल सकता। इसलिये नवतनपुरी जाने वाले सभी मार्गों पर उन्होंने अपने पहरेदार बैठा दिये थे, ताकि उनको किसी भी स्थिति में नवतनपुरी न जाने दिया जाये। इस चौपाई में उन पहरेदारों को ही दज्जाल कहा गया है।

बहुत रद बदल भई, माने नही सुकन।

तब देखा तरफ श्री राज की, हुई आज्ञा ऊपर सैयन।।१०५।।

उन पहरेदारों से लालदास जी की बहुत बहस हुयी। लालदास जी ने बहुत आग्रह किया कि मुझे नवतनपुरी

जाने दो, किन्तु उन्होंने उनकी एक न सुनी। अब श्री लालदास जी को एक मात्र श्री राज जी का ही सहारा दिखायी दिया। लालदास जी को यह मालूम ही नहीं था कि उन्हें धाम धनी के आदेश से ही सूरत भेजा जा रहा है।

तब उहाँ से दीप आये, तहां रहे पन्द्रह दिन।
साथ सों मुलाकात करी, फेर घोघे पहुंचे ततखिन।।१०६।।

अब श्री लालदास जी मगरोल पाटन से दीव बन्दर आये। वहाँ १५ दिन तक रहे। दीव बन्दर के सब सुन्दरसाथ से भेंट करके, वे शीघ्रतापूर्वक चल पड़े और घोघा पहुँचे।

तहाँ से नाव चढ़ के, आये बन्दर सूरत।

सम्बत् सत्रह सौ उन्तीसे, इहाँ आय पहुंची सरत।।१०७।।

घोघा से नाव के द्वारा वे सूरत बन्दरगाह आये। इस समय वि.सं. १७२९ का समय चल रहा था।

आय के श्री जी साहिब जी के, लगे दोऊ कदम।

नेम था अनाज का, सौंपी थी आतम।।१०८।।

श्री लालदास जी ने आकर श्री प्राणनाथ जी के दोनों चरण कमलों में प्रणाम किया। उन्होंने अपनी आत्मा धाम धनी के चरणों में तो सौंप ही रखी थी और दूसरा प्रण यह ले रखा था कि बिहारी जी के दर्शन से पूर्व अन्न ग्रहण नहीं करेंगे।

श्री जी अपने चित्त में, बड़ो पायो सुख।

प्रसाद लेओ उठो अब, यों कह्या श्री मुख।।१०९।।

लालदास जी को देखकर श्रीजी बहुत ही आनन्दित हुये। उन्होंने अपने श्री मुख से लालदास जी को भोजन करने के लिये आग्रह किया।

तब लालदासें कह्या, हमको अगड़ है अनाज।

जाऊं बिहारी जी के कदमों, अनाज छोड़े तिन काज।।११०।।

तब लालदास जी ने कहा कि हे धाम धनी! मैंने यह प्रण लिया है कि जब तक मैं बिहारी जी के चरणों में प्रणाम नहीं करूंगा, तब तक अन्न ग्रहण नहीं करूँगा। इसलिये मैं इस समय भोजन करने में असमर्थ हूँ।

तब आप श्री मुख कह्या, भया पूरा तुम्हारा पन।

कछु फिकर ना करो, पहुंचे मिलावे सैयन।।१११।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने अपने श्री मुख से कह दिया कि लालदास! तुम्हें चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम्हारा प्रण पूरा हो चुका है। मेरे पास सुन्दरसाथ के समूह में आ जाने पर, अब तुम्हें नवतनपुरी जाकर बिहारी जी के दर्शन करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

द्रष्टव्य– अब तक की जागनी लीला में यह पहला अवसर है, जब श्रीजी ने अपने श्री मुख से किसी को अपनी पहचान दी है। इसके पहले वे अपने स्वरूप को छिपाये रखते थे और सबको बिहारी जी पर आस्था दिलाया करते थे।

महामति कहे ऐ मोमिनों, ए सरत करो याद।

फेर लाल आगे की कहों, जो झगड़े को बुनियाद।।११२।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! उस शुभ घड़ी को याद कीजिये, जब मैं धाम धनी के चरणों में पहुँचा था। अब मैं आगे के प्रसंग का वर्णन कर रहा हूँ, जो धाम धनी श्री प्राणनाथ जी और बिहारी जी के मध्य विवाद की नींव है।

भावार्थ– संसार में सत्य और असत्य (ज्ञान और अज्ञान) के बीच हमेशा संघर्ष होता आया है। श्रीजी जहाँ परमधाम के सत्य ज्ञान को फैलाना चाहते हैं, वहीं बिहारी जी महाराज उसे रोकना चाहते हैं। क्योंकि उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि यदि ज्ञान का प्रकाश फैल जायेगा तो मेरा वर्चस्व समाप्त हो जायेगा। इसलिये प्रारम्भ से लेकर अन्त तक वे श्री जी का विरोध करते

रहते हैं।

आने वाले प्रकरण में इस विषय पर चर्चा की गयी है कि किस प्रकार सुन्दरसाथ अपना घर-परिवार हमेशा के लिये छोड़कर जागनी कार्य हेतु श्रीजी के साथ निकल पड़ते हैं। इस प्रकार इन दोनों विचारधाराओं (ज्ञान फैलाना और ज्ञान को ढकना) में संघर्ष का यही मूल है, जिसे इस चौपाई के चौथे चरण में दर्शाया गया है।

प्रकरण ।।३१।। चौपाई ।।१४६२।।

एक धर्म का सूत्रपात

हजरतें हज इत करी, लेनें को मक्का।

फते करी दज्जाल की, कूच करे दारूल बका।।१।।

जिस प्रकार हजरत मुहम्मद (सल्ल.) ने मक्का पर अधिकार करने के लिये मदीने से प्रस्थान किया एवं अबू ज़हल को जीतकर सम्पूर्ण मक्का पर अधिकार कर लिया, उसी प्रकार श्रीजी ने सूरत से पन्ना जी के लिये वह जागनी यात्रा प्रारम्भ की जिसमें धर्म का विरोध करने वाले कलियुग रूपी विरोध को जीतकर अध्यात्म का सर्वोच्च सिंहासन प्राप्त किया।

भावार्थ– जब मुहम्मद (सल्ल.) पर मक्का के लोगों ने अत्याचार किया, तो उन्हें विवश होकर मदीना जाना पड़ा। वहाँ उनके बहुत से अनुयायी हो गये। इन

अनुयायियों ने एक सेना तैयार की, जिसका निर्देशन मुहम्मद साहब ने स्वयं किया। इस सेना के द्वारा मक्का पर आक्रमण किया गया। इस युद्ध में हज़रत अली के द्वारा अबू जहल, जिनका वास्तविक नाम अबू जहद था, मारा गया और सम्पूर्ण मक्का पर मुहम्मद साहिब का अधिकार हो गया।

जिस प्रकार अबू जहल मुहम्मद साहब के अद्वैत सिद्धान्त को नहीं मानता था और धर्म विरोधी कार्यों में लिप्त था, वही भूमिका बिहारी जी भी अदा कर रहे थे। नवतनपुरी को मक्का कहा गया है, जहाँ की जाहिरी गादी पर विराजमान होकर बिहारी जी अपने को सर्वोपरि मानते थे। जैसे मुहम्मद साहब ने अबू जहल को परास्त कर मक्का पर अपना अधिकार कर लिया था, वैसे ही श्री प्राणनाथ जी ने बिहारी जी के अन्दर बैठे हुए कलियुग

रूपी अज्ञान को जीत लिया और जागनी लीला करते हुए सूरत से पन्ना जी तक पहुँचे।

पन्ना जी में परमधाम की वाणी (खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार) के अवतरित होने तथा प्रत्यक्ष ब्रह्मलीला होती हुयी देखकर, सबने उन्हें अक्षरातीत का ही स्वरूप माना। इस प्रकार उन्होंने सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी की बातिनी (गुह्य) गादी को प्राप्त कर लिया।

सहर मदीना सूरत, तहाँ सेती चले जब।

महाजरों मद्दत करी, जो साथ सेवा में चले तब।।२।।

जब श्रीजी परमधाम की आत्माओं को जगाने के लिये सूरत (मदीने) से चले, तो धर्म पर अपना सब कुछ न्यौछावर कर देने वाले सुन्दरसाथ ने जागनी कार्य में अपनी विशेष भूमिका निभायी। इन्होंने अपना घर-द्वार

हमेशा के लिये छोड़ दिया तथा सेवा करते हुए श्रीजी के चरणों में अपना जीवन गुज़ार दिया।

तिन मोमिन की सिफत, पहुंची बका में जब।
कुरान हदीसों में कही, सबों ऊपर सिफत अब।।३।।

इन ब्रह्मात्माओं के त्याग की महिमा अखण्ड परमधाम में पहुँच चुकी है। कुरआन और हदीसों में भी इनकी महिमा सर्वोपरि बतायी गयी है।

सो लिखी लोमोफूज में, कहत अल्ला कलाम।
अग्यारे से बरस आगूं ही, सब पढ़े खलक आम।।४।।

कुरआन में इन ब्रह्मसृष्टियों (मोमिनों) की महिमा लोहे की तख्ती पर अटल सत्य के रूप में लिखी है। इनके अवतरित होने के ११०० वर्ष पहले से दुनिया इनके बारे

में पढ़ रही थी, लेकिन वास्तविकता से पूर्णतः अनभिज्ञ थी।

श्री धनी देवचन्द्र जी ल्याए, किल्ली अल्ला कलाम।
श्री जी आप जाहिर करी, दिया मोमिनों को ताम।।५।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी परमधाम से तारतम ज्ञान की वह कुञ्जी लेकर आये, जिससे कुरआन तथा अन्य सभी धर्मग्रन्थों के भेद स्पष्ट हो जाते हैं। श्री प्राणनाथ जी ने तारतम ज्ञान की कुञ्जी से सभी धर्मग्रन्थों के भेदों को स्पष्ट कर दिया और परमधाम की आत्माओं को परमधाम का आत्मिक आहार दिया।

भावार्थ– सभी धर्मग्रन्थों (वेद–कतेब) के रहस्य स्पष्ट हो जाने से एक सच्चिदानन्द परब्रह्म की पहचान होती है। तत्पश्चात् उनके प्रेम में डुबकी लगाने पर उनका दिल

प्रियतम का धाम बन जाता है और उसमें परमधाम के अखण्ड आनन्द की अपार वर्षा होने लगती है। यही ब्रह्मात्माओं का आत्मिक आहार है।

मोमिन सुंनत जमात में, बातें करें बीतक।
हक का प्यार इन पर, ए बात बड़ी बुजरक।।६।।

प्रियतम अक्षरातीत पर अटूट विश्वास रखने वाली परमधाम की ब्रह्मअँगनायें आपस में माया से होने वाले अपने युद्धों के प्रसंग की चर्चा किया करती हैं। यह कितनी गरिमामयी बात है कि स्वयं अक्षरातीत परब्रह्म इनसे प्रेम करते हैं।

जिनों सेवा करी सनेह सों, तन मन दिया धन।
तो आए इसलाम में, ए खासल खास मोमिन।।७।।

जिन्होंने अपना तन–मन–धन जागनी कार्य में न्यौछावर कर दिया तथा प्रेमपूर्वक धनी के चरणों में सेवा की, वे ही परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं और उन्होंने ही शाश्वत निजानन्द की राह अपनायी।

उतरी अरवाहें अरस से, तिनको ढूंढन काज।
और जबरूती फिरस्ते, हुकुम दिया श्री राज।।८।।

माया का खेल देखने के लिये परमधाम से ब्रह्मसृष्टि तथा अक्षर धाम (सत्स्वरूप) से ईश्वरी सृष्टि आई हैं, जिनको खोजकर जाग्रत करने के लिये मूल स्वरूप श्री राज जी का आदेश है।

भावार्थ– परमधाम के अन्दर अक्षरधाम में अक्षर ब्रह्म का मात्र निवास है, लीला नहीं। अक्षरातीत के द्वारा की जाने वाली व्रज, रास, और जागनी लीला का आनन्द

लेने के लिये अक्षर ब्रह्म ने जो २४,००० सुरतायें धारण की, वे उनके अहं के स्वरूप सत्स्वरूप के द्वारा धारण की हुई मानी जायेंगी। स्वलीला अद्वैत परमधाम में कोई नयी चीज धारण नहीं की जा सकती।

एही थे ब्रज रास में, हुए पूरन नहीं मनोरथ।
तब तीसरो ए रचनों पड़्यो, इन दिखावन अरथ।।९।।

यह ब्रह्मसृष्टि और ईश्वरी सृष्टि ही व्रज-रास में थीं। उस समय माया का खेल देखने की इनकी इच्छा पूर्ण नहीं हो सकी थी, इसलिये इनकी माया की इच्छा पूरी करने के लिये धाम धनी को जागनी का यह तीसरा ब्रह्माण्ड बनाना पड़ा।

तीसरो उपजो अक्षर को, जाने तैसा ही इंड।
सब जाने हम वही हैं, काहू खबर न पड़ी ब्रह्मांड।।१०।।

अब ये जागनी का तीसरा ब्रह्माण्ड अक्षरब्रह्म के मन के विलास से उत्पन्न हुआ है। यह ब्रह्माण्ड हूबहू वैसा ही है, जैसा पहले था। इस ब्रह्माण्ड में रहने वाले सभी जीव यही जानते हैं कि हम पहले वाले ब्रह्माण्ड के ही हैं। इस ब्रह्माण्ड में रहने वाले किसी भी व्यक्ति को यह जानकारी ही नहीं है कि बीच में प्रलय हो गया था और ये नया ब्रह्माण्ड है।

तामें आई सृष्ट ब्रह्म की, ए जो खासल खास उमत।
ताको जगावे जुगत सों, दावत कर क्यामत।।११।।

इस जागनी ब्रह्माण्ड में परमधाम की ब्रह्मसृष्टि आयी हुई है, जिसे कुरआन पक्ष में खासुल खास उम्मत कहा गया

है। इन ब्रह्मसृष्टियों को कियामत के आगमन का सन्देश देकर श्रीजी युक्तिपूर्वक जगा रहे हैं।

भावार्थ– सबको मुक्ति देने वाले परमधाम के ज्ञान का अवतरण ही कियामत का आना है। श्री प्राणनाथ जी के द्वारा परमधाम का जो ज्ञान अवतरित हुआ है, उसे ही फर्दा रोज़ के समय कियामत का आना कहा गया है। इसी के द्वारा ब्रह्मसृष्टियों की और ईश्वरी सृष्टि की जागनी होनी है, तथा सारे ब्रह्माण्ड को मुक्ति मिलनी है।

सकुण्डल सकुमार को, चले जगावन काज।

श्री मुख श्री देवचन्द्र जी कही, बुलाए ल्याओ श्री मेहेराज।।१२।।

अब श्रीजी सकुण्डल और सकुमार की आत्मा को जाग्रत करने के लिये सूरत से चल पड़े। बहुत समय पहले सदगुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने कहा था कि

मिहिरराज! इन दोनों आत्माओं को जगाने का उत्तरदायित्व तुम्हारे ऊपर है।

कुली कलिंगा दज्जाल सों, जंग करो जाय तुम।
देह बुध छोड़ाय के, ल्याओ बुध आतम।।१३।।

तुम तारतम ज्ञान के द्वारा सबके दिल में विराजमान कलियुग (दज्जाल) से युद्ध करो और अज्ञानता के कारण सबकी बौद्धिक दृष्टि जो शरीर पर केन्द्रित है, उसे आत्म स्वरूप पर केन्द्रित कराओ।

धरम विरोध धरा मिनें, करता कुली दज्जाल।
ताको मारो सिताब सों, ज्यों होवें सब खुसाल।।१४।।

अज्ञान रूपी राक्षस, जो सबके हृदय में बैठकर पृथ्वी पर सभी धर्म के लोगों में विरोध पैदा कराता है, उसको

तारतम ज्ञान की तलवार से शीघ्र मार डालो, जिससे संसार के सारे प्राणी आनन्दित हो जायें।

एक दीन होए एक का, सब भजन करे भगवान।
देओ वेद कतेब की साहिदी, ज्यों ल्यावें सब ईमान।।१५।।

हे मिहिरराज! तुम वेद और कतेब की साक्षियां देकर सबमें एक सत्य धर्म (निजानन्द) की स्थापना करो। जिससे सबको एक सच्चिदानन्द परब्रह्म पर भी विश्वास हो और एकमात्र उसी की भक्ति करें, अन्य किसी की नहीं।

गाजी बनी असराईल, तामें श्री देवचन्द्र जी सिरदार।
लड़े राह खुदाए के वास्ते, ए जो महिने हजार।।१६।।

धर्म पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाले ब्रह्ममुनियों के समूह में सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी प्रमुख (सरदार)

हैं। उन्होंने हज़ार महीने तक प्रियतम परब्रह्म की राह पर चलते हुये अज्ञान रूपी दज्जाल से युद्ध किया था।

भावार्थ– कुरआन के पारा ३० सूरे कद्र आयत इन्ना इन्जुलना में १००० महीने से बेहतर जिस रात्रि का वर्णन है, उसका प्रसंग दोनों स्वरूपों, सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्रजी और श्री प्राणनाथ जी, पर घटित होता है।

१००० महीने में ८३ वर्ष और ४ माह होते हैं, अर्थात् वि.सं. १६३८ से लेकर वि.सं. १७१२ तक श्री श्यामा जी ने अपने पहले तन में श्री देवचन्द्र जी के द्वारा दज्जाल से युद्ध किया। उस तन में श्री श्यामा जी की आत्मा थी, जो धर्म पर सर्वस्व न्योछावर करने वाली ब्रह्मसृष्टियों की प्रमुख हैं।

दूसरे तन में वि.सं. १७१२ से लेकर वि.सं. १७२२ तक ८३ वर्ष और ४ महीने पूरे हो जाते हैं।

दज्जाल से युद्ध का यही क्रम दूसरे जामे में भी वि.सं. १७२२ तक चलता रहा, किन्तु वि.सं. १७२२ के बाद जागनी लीला का प्रकाश बहुत अधिक बढ़ गया। इसमें परमधाम की चार किताबों (खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार) का अवतरण हुआ।

आगे की चौपाई में यही बात दर्शायी गयी है।

तिन से भी बेहतर कही, श्री जी बांधी कमर।

जाहिर करी जगत में, ए लड़ाई सब पर।।१७।।

८३ वर्ष ४ माह के बाद होने वाली जागनी लीला और अधिक गरिमामयी है, जिसमें श्रीजी ने दज्जाल से अपने युद्ध को सारे संसार में प्रसिद्ध कर दिया।

तिन लड़ाई के बखत में, जिनों करी मद्दत।

तिनकी मेहनत इन जुबां, करी न जाए सिफत।।१८।।

जागनी लीला के रूप में होने वाली इस लड़ाई की महिमा सर्वोपरि है। उस दज्जाल (अज्ञान रूपी कलियुग) के साथ होने वाले युद्ध में, जिन सुन्दरसाथ ने अपनी सेवा (तन, मन, धन) से सहायता की, उनकी महिमा को इस जिह्वा से व्यक्त नहीं किया जा सकता।

तिनके नाम कहत हों, सुनियो चित दे साथ।

कूवत दई कादर ने, पकड़े अपने हाथ।।१९।।

हे साथ जी! अब मैं उन सुन्दरसाथ के नाम बता रहा हूँ। एकाग्र चित्त से उसे सुनिये। इन सुन्दरसाथ को धाम धनी ने अपने हाथों से पकड़कर माया से निकाला, तथा दज्जाल से लड़ने एवं धनी के प्रति अपना सर्वस्व समर्पण

करने की शक्ति प्रदान की।

संग चले सेवन को, ए जो मोमिन खासल खास।
इनको श्री धाम धनी बिना, और न उपजे आस।।२०।।

श्रीजी के साथ सेवा करने के लिये जो सुन्दरसाथ चले, वे परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं। इनके मन में अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के अतिरिक्त और कोई भी लौकिक इच्छा नहीं है।

प्रकरण ।।३२।। चौपाई ।।१४८२।।

सूरत से प्रस्थान (अमदाबाद, सिद्धपुर, मेरता प्रसंग)

श्री जी संग श्री बाई जी, और भट्ट गोवरधन।

सेवा करी तन धन सों, तो हुआ साथ में धन धन।।१।।

श्रीजी के साथ श्री बाई जी (श्री तेज कुँवरी जी) चलीं, जो हमेशा उनके अंग-संग रहीं। गोवर्धन भट्ट ने अपना तन और धन दोनों ही सेवा में न्यौछावर कर दिया। इस प्रकार वे सुन्दरसाथ में धन्य-धन्य हुए।

भीम भाई भली भांत सों, निकस्या तन ले धन।

सेवा करी उमर लों, गाए प्रेम बचन।।२।।

भीम भाई, जो सूरत के वेदान्ताचार्य थे, भी अपना तन और धन लेकर पूरी तरह से निकल पड़े। धनी के प्रति प्रेममयी वचनों का गान करते हुये, उन्होंने अपना सारा

जीवन सेवा में लगा दिया।

नागजी अति नेह सों, छोड़ कुटुम्ब की आस।

तन मन धन सब ले चला, पाया खिताब नाम गरीब दास।।३।।

नाग जी भाई श्रीजी के प्रति अत्यन्त प्रेम में डूबे हुए थे। उन्होंने अपने परिवार की सारी आशा छोड़ दी। श्री प्राणनाथ जी के प्रति उन्होंने अपना तन, मन, धन सब न्यौछावर कर दिया। इस प्रकार उनका नाम श्री गरीब दास जी पड़ा।

स्याम भट्ट संग चल्या, रह्या केतेक दिन।

वचन वेदान्त सुनावत, कर न सका बस मन।।४।।

यद्यपि श्याम भट्ट भी श्रीजी के साथ चले थे, लेकिन केवल कुछ दिन ही साथ में रह पाये। वे हमेशा वेदान्त के

वचन सबको सुनाया करते थे। दुर्भाग्यवश, वे अपने मन को वश में न कर सके और दिल्ली से वापस चले गए।

नाहना भाई और पाखड़ी, चले श्री राज के साथ।
आखर लों निबाहिया, जाके धनिये पकड़े हाथ।।५।।

नाहना भाई और पाखड़ी भाई श्रीजी के साथ चले और जीवन की अन्तिम श्वास तक अपना सम्बन्ध निभाया। इस तरह की समर्पण भाव वाली सेवा वही कर सकता है, जिसका हाथ स्वयं धाम धनी पकड़कर माया से निकालते हैं।

कान जी राम जी चला, ले कबीला संग।
आखर लों निबाहिया, कोई रहा न पीछे अंग।।६।।

कान्ह जी भाई और राम जी भाई अपने परिवार के साथ

श्री प्राणनाथ जी के साथ चले। जीवन की अन्तिम श्वास तक इन्होंने सेवा धर्म निभाया। अब उनका कोई भी अंग धनी की सेवा में पीछे नहीं रहा, अर्थात् अंग–अंग सेवा में समर्पित हो गया।

जमुनाबाई संग चली, छोड़ कुटुम्ब परिवार।
सेवा करी सनेह सों, जान के परवरदिगार।।७।।

बिहारी जी की बहन यमुना बाई ने अपने परिवार की आशा छोड़ दी और श्री प्राणनाथ जी को पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द मानकर उनके साथ चल पड़ी। अपना सारा जीवन उन्होंने धनी की प्रेमपूर्वक सेवा करते हुए गुजारा।

छबीलदास संग चले, सेवन के सुख काज।
बेटा जमुना का जान के, सेवा दई श्री राज।।८।।

धाम धनी के चरणों की सेवा का सुख प्राप्त करने के लिये छबील दास जी भी साथ में चल पड़े। यमुना बाई का पुत्र होने के नाते तथा उनकी प्रेम भावना को देखकर, श्री राज जी ने उन्हें जल पिलाने की सेवा दी थी।

कोई दिन धारा रहे आए, फेर के जाए पीछे।

पत्रियाँ पहुंचावे साथ मों, ऐ काम इन के।।९।।

कुछ दिन तक धारा भाई भी सेवा में रहे। इनकी मुख्य सेवा जगह-जगह पत्र पहुँचाने की थी। लेकिन पुनः किसी कारणवश इन्हें वापस घर लौटना पड़ा।

लालबाई संग चली, स्याम बाई को ले।

श्री बाई जी की सेवा मिने, काम जो करती ए।।१०।।

श्री लाल दास जी की पत्नी लाल बाई जी अपनी बेटी श्याम बाई को लेकर चल पड़ीं। इनका मुख्य कार्य श्री बाई जी की सेवा में तल्लीन रहना था।

लाल दास संग चले, खाली लेकर हाथ।
निबहे आखर लों, चले श्री राज के साथ।।११।।

श्री लाल दास जी भी श्रीजी के साथ चल पड़े। लेकिन अब उनके पास एक रूपया भी नहीं था। वे खाली हाथ थे। उनका तन-मन पूर्णतया प्रियतम् अक्षरातीत को समर्पित था और उन्होंने जीवन की अन्तिम श्वास तक सेवा धर्म निभाया।

सुकदेव सूरत से, ले चले संग मानिक।
अपना आपा डारिया, पहुंचे मेरते बुजरक।।१२।।

सूरत से शुकदेव और मानिक भाई चले। इन्होंने अपना अहम् धनी के प्रेम में न्यौछावर कर दिया था। ये दोनों मेड़ते में श्रीजी से मिले।

प्रेम जी अति प्रेम सों, मारग में मिले धाए।

हाजिर रहे हजूर में, सेवा करी चित ल्याए।।१३।।

प्रेम जी बहुत प्रेमपूर्वक मार्ग में श्रीजी से मिले। वे हमेशा धाम धनी की सेवा में उपस्थित रहते थे और शुद्ध हृदय से इन्होंने श्रीजी की सेवा की।

सूरत सेती चल के, आए पहुंचे गुजरात।

राह खुदाए के वास्ते लड़े, मेटन को जुलमात।।१४।।

लगभग ५०० सुन्दरसाथ के साथ चलकर श्रीजी अमदाबाद (गुजरात) आये। अज्ञानता के अन्धकार को

नष्ट करने तथा प्रियतम के प्रेम में डूबने के लिये, इन ब्रह्ममुनियों ने माया से युद्ध किया।

गुजरात के बीच में, चार दिन रहे येह।
तहाँ सेती कूच करके, सिद्धपुर पहुंचे तेह।।१५।।

श्रीजी, सुन्दरसाथ सहित, अहमदाबाद में चार दिन रहे। इसके पश्चात् वहाँ से चलकर सिद्धपुर पहुँचे।

लछमन कबीला लेय के, पहुंचे हैं गुजरात।
कबीला भारी भया, कही रहने की बात।।१६।।

लक्ष्मण भाई अपना सारा परिवार लेकर श्रीजी के चरणों में अमदाबाद पहुँच गये, किन्तु पारिवारिक समस्याओं के कारण, वे वहीं बस जाने की बात करने लगे।

तिस वास्ते रह्या बीच में, माया के सुख काज।

उमर खोई तिन में, फेर सुरत करी श्री राज।।१७।।

इसलिये माया के सुख की चाहत ने उन्हें घर में रहने के लिये विवश कर दिया। लक्ष्मण भाई ने अपनी सारी उम्र परिवार में ही बिता दी। जीवन के अन्तिम समय में उन्होंने श्री राज जी के चरणों की तरफ अपने मन को लगाया।

सिद्धपुर के बीच में, रहे बाईस दिन।

भगवान उपाध्या ने सेवा, करी अति मगन।।१८।।

सिद्धपुर में सब सुन्दरसाथ के साथ श्री प्राणनाथ जी २२ दिन तक ठहरे रहे। वहाँ पर भगवान उपाध्याय ने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ की अत्यन्त प्रेम भाव से सेवा की।

और भगवान का, रेवादास है नाम।

पहुंचा पालन पुर में, इनके पूरे मनोरथ काम।।१९।।

इनका पूरा नाम भगवान रेवादास उपाध्याय था। यह धन की चाहत में पालनपुर तक श्रीजी के साथ गया, जहाँ इनकी आध्यात्मिक इच्छा को धाम धनी ने पूर्ण किया।

भावार्थ– सिद्धपुर के पास एक विंध्य सरोवर है, जो तीर्थ माना जाता है। उस समय श्रीजी उस सरोवर में स्नान करने गये थे। सिद्धपुर में श्रीजी ने सम्भवतः कहीं हवेली लेकर अपना निवास बनाया होगा, क्योंकि पाँच सौ सुन्दरसाथ को अपने घर में ठहराने की सामर्थ्य भगवान दास में नहीं थी। श्रीजी और भगवान दास की भेंट उस सरोवर पर ही होती है, जहाँ पर उसने कुछ दिन श्रद्धाभाव से सेवा की थी। भगवान दास पैसे के

लालच में सिद्धपुर से पालनपुर तक पहुँच गये थे।

ए तीरथ गुरू होए मिल्या, कछु न हुई खबर।

एक मोहर दे विदा कियो, फेर लालच करी ऊपर।।२०।।

यह एक पण्डे के रूप में श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ से मिले। धन की कामना से इन्होंने अत्यधिक प्रसन्नतापूर्वक श्रीजी की सेवा की, लेकिन श्रीजी के आन्तरिक स्वरूप को नहीं पहचान सका। चलते समय श्रीजी ने इन्हें एक मोहर दी। किन्तु उन्हें और अधिक लालच आ गया और मोहरों की चाहत में वे पालनपुर तक साथ-साथ जा पहुँचे।

तब गोवरधन ने कह्या, करो इन सरूप की पहिचान।

मांगो अलौकिक इन से, तुम को दे ईमान।।२१।।

तब उसकी नादानी पर तरस खाकर गोवर्धन भट्ट ने कहा– भगवान दास! धन तो तुम्हें कहीं से भी मिल सकता है, किन्तु तुम इनके वास्तविक स्वरूप की पहचान करो, और इनसे अध्यात्मिक सम्पदा माँगो। ये तुम्हारे अन्दर एक परब्रह्म के प्रति निष्ठा पैदा कर सकते हैं।

तब अरज करी भगवान ने, लगा दोऊ कदम।
परआतम पहिचान के, जगाओ मेरी आतम।।२२।।

तब भगवान दास जी श्रीजी के चरणों में गिर पड़े और प्रार्थना करते हुये कहने लगे कि आप मेरी परात्म को पहचान कर मेरी आत्मा को जाग्रत कीजिये।

तब चार सुकन चलते कहे, याद करो निजधाम।

जमुना ताल घाट की, और अक्षर मुकाम।।२३।।

तब चलते-चलते श्रीजी ने कुछ बातें (चार शब्द) कहीं- भगवान दास! हद, बेहद, और अक्षरधाम से परे उस परमधाम को याद करो, जिसमें पुखराज पहाड़ से निकल कर दूध से भी उज्ज्वल और मिश्री से भी मीठे जल वाली यमुना जी बहती हैं, और यह हीरे के बने हुए हौज कौसर ताल में गिर जाती हैं।

ब्रज रास में हम थे, भी तीसरे आए इत।

अब खेल देख पीछे फिरें, जाए लगें हम तित।।२४।।

व्रज-रास में हमने ही लीला की थी और इस तीसरे जागनी के ब्रह्माण्ड में हम ही आये हैं। यह माया का खेल देखने के पश्चात् हम अपने परमधाम वापस चले जायेंगे।

ए बात चित धर के, फेर आए अपने ठौर।

सोई बात दिल में रखी, काहू न कहवे और।।२५।।

श्रीजी द्वारा कही हुयी बात को उन्होंने अपने दिल में धारण कर लिया और पुनः अपने निवास पर आ गये। इस बात को मन ही मन याद किया करते थे, लेकिन किसी अन्य से नहीं कहते थे।

बोला नही छः मास लों, रहे केसव भट्ट सोहबत।

तिनसों चरचा करते, एक छत्री निकला इत।।२६।।

छः महीने तक उन्होंने किसी से इस बारे में चर्चा नहीं की। केशव भट्ट, भगवान रेवादास के बहुत निकटस्थ थे। उनसे बातें करते हुए अचानक एक दिन भगवान दास के मुख से निकल पड़ा कि आज से छः माह पूर्व कोई क्षत्रिय महापुरूष अपने सैकड़ों शिष्यों सहित यहाँ आये थे।

तिनने हमें परमोधिया, दो एक कहे वचन।

सोई वचन हम से कहो, तिनके दो एक सुकन।।२७।।

उन्होंने हमें ब्रह्मज्ञान की कुछ बातें बतायी हैं। यह सुनकर केशव भट्ट ने कहा– तुमने उनके मुखारविन्द से जो सुना है, उसमें से कुछ बातें मुझे भी बताओ।

तब दो एक सुकन, कह दिखाया धाम।

तब केसव पहिचानिया, कहा कहों तुम्हें इस ठाम।।२८।।

तब भगवान दास ने कुछ थोड़ी सी बातें कहकर परमधाम का संक्षिप्त वर्णन कर दिया। तब केशव भट्ट ने वास्तविकता की पहचान कर ली और भगवान दास से कहने लगे कि तुम्हारी मन्दभाग्यता के लिये मैं तुम्हे क्या कहूँ?

यह तो अक्षरातीत था, तुम न करी पहिचान।

अब मैं उतहीं जात हों, मुझे आया ईमान।।२९।।

भगवान दास! तू सचमुच पण्डा ही रह गया। जिसको तुमने मात्र एक क्षत्रिय महापुरूष के रूप में देखा है, वे तो साक्षात् अक्षरातीत के स्वरूप थे, किन्तु तुमने अपनी मन्दभाग्यता (बदनसीबी) के कारण उनकी पहचान नहीं की। अब मैं उनके चरणों में जा रहा हूँ क्योंकि मुझे उन पर अटूट आस्था हो गयी है।

भावार्थ– ब्रह्मसृष्टि की यही पहचान है कि धाम–धनी के जरा से शब्दों को सुनने मात्र से उन पर समर्पित हो जाती हैं।

बेहद बनज का होयगा साथी, एक लवे होसी टूक टूक।

किरंतन ६/१६

इस प्रसंग से उन अग्रगण्य सुन्दरसाथ को प्रेरणा लेनी

चाहिये, जो श्री प्राणनाथ जी को सन्त, कवि, महापुरूष, और श्री देवचन्द्र जी का शिष्य कहने में अपनी सारी ऊर्जा लगा देते हैं।

ओ ऐसे ही उत से चल्या, ढूँढत फिरे सब ठौर।

ढूंढते दिल्ली पहुंचिया, खोज करी अत जोर।।३०।।

केशव भट्ट जी उसी समय वहाँ से चल पड़े और चारों तरफ श्रीजी को पूछ-पूछकर खोजते फिरे कि आज से छः माह पहले इधर से वे कहाँ गये? खोजते-खोजते वे दिल्ली पहुँच गये और वहाँ जाकर दिन-रात खोजने में लगे रहे।

रामचन्द पंसारी के इहां से, पाई इने खबर।

लाल दरवाजे आय मिल्या, अति आतुर होए कर।।३१।।

राम चन्द्र पंसारी जी के यहाँ से केशव भट्ट जी को सूचना मिली कि श्रीजी लाल दरवाजे में ठहरे हैं। तब बहुत व्याकुल होकर, वे लाल दरवाजे गये और श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया।

कोई दिन तहाँ रह्या, सुने सुकन सुभान।
तारतम नीके जानिया, कछु ज्यादा भई पहिचान।।३२।।

कुछ दिन तक वहाँ रह कर, केशवभट्ट ने श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी। तारतम ज्ञान को अच्छी तरह से जानने के पश्चात्, उन्हें धाम धनी की बहुत अधिक पहचान हो गयी।

तब लड़ने दज्जाल सों, बांधी कमर जोर।
फेर आये सिद्धपुर में, किया साथ काढ़नें का सोर।।३३।।

केशव भट्ट माया के बन्धनों से लड़ने के लिये पूरी तरह तैयार हो गये। दिल्ली से चलकर वे सिद्धपुर आये और वहाँ उन्होंने सुन्दरसाथ की जागनी का शंखनाद कर दिया।

भगवान रेवादास को नसीहत, फेर के दई इने चिन्हार।
तिनको ल्याया साथ में, किया खबरदार।।३४।।

भगवान रेवादास को उन्होंने चर्चा के द्वारा सिखापन दी और पुनः उन्हें क्षर , अक्षर, और अक्षरातीत की वास्तविक पहचान करायी। तारतम देकर भगवान दास को सुन्दरसाथ में सम्मिलित किया, और परमधाम का ध्यान करने और माया को छोड़ने के प्रति सावचेत किया।

केसवजी परमोधिया, और द्वारकादास।

धाम लीला देखाय दई, तब टूट गई सब आस।।३५।।

केशव भट्ट ने केशव जी और द्वारिका दास जी को जाग्रत किया। जब इन दोनों को परमधाम की लीला की पहचान करायी, तब उनके मन में परमधाम के अतिरिक्त संसार की अन्य कोई भी चाहना नहीं रह गयी।

ऐ भी घर को छोड़ के, गये श्री राज के पास।

दिल्ली मिने आये मिले, सेवा की दिल आस।।३६।।

ये दोनों भी घर को छोड़कर दिल्ली में श्रीजी के चरणों में आये। इनके मन में चाहना थी कि हम धाम धनी के चरणों में रहकर सेवा करें।

दूजे केसव दास को, दई तारतम सुध।

तब लोक अलोक की, छूट गई सब बुध।।३७।।

केशव भट्ट जी ने जब दूसरे केशव दास जी को तारतम ज्ञान से धनी की पहचान दी, तब स्वप्न की बुद्धि से कल्पित इस नश्वर जगत की उनकी सारी चाहनायें समाप्त हो गयीं।

भावार्थ- इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "लोक" का तात्पर्य सभी स्थूल (साकार) लोकों से है तथा "अलोक" का तात्पर्य सूक्ष्म (निराकार) से है। स्वप्न की बुद्धि से बँधा हुआ जीव, इस साकार-निराकार के प्राकृतिक सुखों के बँधन को ही सर्वोपरि मानता है। तारतम ज्ञान के प्रकाश में ये सारे बन्धन समाप्त हो जाते हैं, वही इस चौपाई में दर्शाया गया है।

त्रीकम गंगादास नें, चरचा सुनी कान।

तब ए दिल में धरके, पहुंचा ले ईमान।।३८।।

जब त्रीकम और गंगादास जी ने केशव भट्ट जी से चर्चा सुनी, तब इन्हें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप के प्रति अटूट विश्वास हो गया और ये दोनों दिल्ली में श्रीजी के चरणों में पहुँच गये।

बीठल चरचा सुनके, कछुक भई पहिचान।

घर कबीला छोड़ के, पहुंचा ले ईमान।।३९।।

विट्ठल भाई को चर्चा सुनने के पश्चात् श्रीजी के स्वरूप की थोड़ी सी पहचान हुयी। मन में श्रीजी के प्रति विश्वास लेकर अपना घर-परिवार छोड़ दिया और उन के चरणों में दिल्ली पहुँच गये।

जब जुद्ध भया दज्जाल सों, तब बीठल उपज्या डर।

भाग चला पीठ देय के, पहुँचा अपने घर।।४०।।

जब शरीअत के मानने वाले कट्टरपन्थी मुसलमानों से ज्ञान का युद्ध हुआ, तब विट्ठल के मन में डर पैदा हो गया। वे मृत्यु के डर से श्रीजी के चरणों की सेवा छोड़कर भाग गये और अपने घर पहुँचे।

थाना थाप्या सिद्धपुर में, केसव भट्ट के घर।

धाम चरचा नित होवहीं, साथ रह्या पकर।।४१।।

सिद्धपुर में केशव भट्ट जी ने अपने घर में ज्ञान केन्द्र की स्थापना की। वहाँ पर प्रतिदिन ही परमधाम के ज्ञान की चर्चा हुआ करती थी, जिसका रसपान सुन्दरसाथ किया करता था।

अब सिद्धपुर से, मेरते पहुंचे धाय।

लाभानन्द जती सों, चरचा करी बनाय।।४२।।

श्री प्राणनाथ जी, सुन्दरसाथ के साथ, सिद्धपुर से चलकर मेड़ता शीघ्र ही पहुँच गए। वहाँ पर उन्होंने लाभानन्द यति से आध्यात्मिक ज्ञान के सम्बन्ध में बहुत अधिक चर्चा की।

दस दिन चरचा में भये, ठौर ठौर हुओ जब बन्ध।

तब कही महातम मेरो गयो, मेरे मारग को परबन्ध।।४३।।

जब श्रीजी से चर्चा करते हुए दस दिन बीत गये, किन्तु उसे कदम-कदम पर श्रीजी के प्रश्नों का उत्तर नहीं आया, तब उसने अपने मन में सोचा कि इससे तो मेरी महत्ता समाप्त हो जायेगी। ये तो मेरी प्रतिष्ठा की राह में सबसे बड़े रोड़ा हैं।

भावार्थ– "यति" का अर्थ होता है, परब्रह्म के ध्यान में डूबा रहने वाला विरक्त योगी। किन्तु लाभानन्द के साथ यति शब्द नाममात्र के लिये ही जुड़ा था। यद्यपि वेश – भूषा से वह यति अवश्य दिखता था, किन्तु आचरण से पूर्णतया विपरीत था। आध्यात्मिक ज्ञान से रहित होने के कारण, द्वेषवश, उसने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ को तान्त्रिक क्रियाओं से मारने का प्रयास किया।

मारों दाब के पहाड़ से, इनको डारों उलटाय।
सब दैत्यों के मंत्र से, भाँत भाँत किये उपाय।।४४।।

वह मन में सोचने लगा कि मैं भारी –भारी चट्टानों के नीचे दबाकर इन्हें मार डालूं। इसके लिये उसने आसुरी शक्तियों के मन्त्र के द्वारा सिद्ध की हुई तान्त्रिक क्रियाओं से सबको मारने का तरह–तरह का प्रयास किया।

भावार्थ– मन को एकाग्र करके आश्चर्यजनक सिद्धियां पायी जाती हैं। यदि मन में सात्विक और सकारात्मक भावना है, तो मन के संयम से आध्यात्मिक सिद्धियों एवं आत्मबल की प्राप्ति होती है। किन्तु यदि मन में नकारात्मकता एवं तमोगुण की प्रवृत्ति है, तो मन के संयम (मन्त्र, जप, आदि) द्वारा तान्त्रिक सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

इन क्रियाओं में, तमोगुणी लोग, श्मशान आदि स्थानों में बैठकर, सूक्ष्म शरीरधारी तामसिक जीवों (भूत–प्रेतों) को प्रसन्न करने के लिये, मन्त्रों का जप आदि साधनायें करते हैं। इन्ही तामसिक जीवों को प्रसन्न करके वे चमत्कारिक सिद्धियां प्राप्त कर लेते हैं। लाभानन्द के पास ऐसी ही सिद्धियां थीं।

घर परवत उठो नहीं, तब हार के बैठा ठौर।

पंच वासना सब देव जहाँ खड़े, तहाँ मंत्र चले क्यों और।।४५।।

लाभानन्द के आह्वान पर आये हुये भूत–प्रेतों (दैत्यों) ने बड़े–बड़े पत्थरों को उठाने की कोशिश की, लेकिन उनसे एक कंकरी भी नहीं उठ पायी। अन्त में लाभानन्द हारकर निराश मुद्रा में बैठ गया। जहाँ अक्षरब्रह्म की पाँचों वासनायें– शिव, सनकादिक, कबीर, विष्णु, और शुकदेव– तथा सभी देवी–देव ब्रह्ममुनियों की सुरक्षा में खड़े हैं, वहाँ कोई तान्त्रिक शक्ति भला कैसे काम कर सकती है?

विशेष– सच्चिदानन्द परब्रह्म की भक्ति करने वाले के ऊपर किसी भी तान्त्रिक शक्ति का प्रभाव नहीं पड़ता, इसलिये उन्हे तान्त्रिकों से कभी भी भयभीत नहीं होना चाहिये।

देखाऊं में डगाए के, आसन कर बैठा सुन।

खोज खोज खाली भया, ग्रह के बैठा मुन।।४६।।

लाभानन्द ने सुन्दरसाथ को विचलित करने का भरपूर प्रयास किया, किन्तु असफल रहा। वह आसन लगाकर शून्य में ध्यान भी करता रहा, तथा अपनी एक-एक शक्ति को खोज-खोज कर प्रयोग करना चाहा, किन्तु असफल होने पर मौन व्रत धारण कर बैठ गया।

रामचन्द आये मिले, मेरते के ठौर।

सेवा में सामिल रहा, तब आस न रही और।।४७।।

मेड़ते में राम चन्द भाई आकर श्रीजी से मिले। जब वे धाम धनी के चरणों में सेवा करने लगे, तब उन्हें संसार की कोई भी कामना नहीं रही।

एक हवेली लेय के, तहां बिराजे श्री राज।

चरचा बड़ी होवहीं, रह्या न कोई काज।।४८।।

मेड़ते में एक हवेली लेकर सब सुन्दरसाथ सहित श्री राज जी (श्री प्राणनाथ जी) विराजमान हुये, और वहाँ चर्चा का प्रवाह जोर–शोर से चलने लगा। इसके अतिरिक्त और कोई काम ही नहीं था।

सोर पड़या सहर में, आवत सब खलक।

घेर रहे मध माखी ज्यों, कोई आय बीच हक।।४९।।

श्रीजी के मुखारबिन्द से होने वाली चर्चा की सारे नगर में धूम मच गयी। जिस तरह से छत्ते के पास मधुमक्खियाँ भागकर आती हैं, उसी तरह से मेड़ता का सारा जन समूह उनकी चर्चा सुनने के लिए आने लगा। बहुत से लोगों ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और

निजानन्द की राह अपनायी।

भावार्थ– लाभानन्द के भय से मेड़ता का कोई भी व्यक्ति किसी अन्य महात्मा से ज्ञान–चर्चा नहीं सुन सकता था, क्योंकि उनको डर था कि यदि लाभानन्द को पता चल गया तो वह तान्त्रिक क्रियाओं से प्रताड़ित करेगा। लाभानन्द के नतमस्तक हो जाने पर सभी लोग श्रीजी के चरणों में आकर अपनी आध्यात्मिक प्यास बुझाने लगे थे।

आया चांपसी चित सों, और आया रघुनाथ।
छोड़ कुटुम्ब कबीला, चला श्री राज के साथ।।५०।।

चापसी और रघुनाथ सच्चे मन से श्रीजी की चर्चा सुनने आया करते थे। धाम धनी के चरणों में आकर उन्होंने अपने परिवार और समाज की आशा छोड़ दी तथा

जागनी कार्य में श्रीजी के साथ चल पड़े।

अगरबारे बनियां मिनें, आया राजा राम।

समेत कबीला आपनें, सेवा करी तमाम।।५१।।

राजा राम अग्रवाल वैश्य कुल के थे। ये अपने सम्पूर्ण वंश (खानदान) सहित धाम धनी के चरणों में आये और पन्ना जी तक सब सुन्दरसाथ की सेवा करते रहे।

भावार्थ- कबीला अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता है वंश या खानदान। कुटुम्ब या परिवार, कबीले का एक छोटा भाग होता है।

झांझन आया साथ में, लिये कुटुम्ब परिवार।

ल्याया ईमान अरस पर, पहुंचा परवरदिगार।।५२।।

झांझन भाई अपने सम्पूर्ण परिवार के साथ सुन्दरसाथ में सम्मिलित हुए। उनके मन में अक्षरातीत तथा परमधाम के प्रति अटूट विश्वास पैदा हो गया।

और आया मकरन्द, और भाई मानसिंघ।

और भाई मोहन मनोहर, ए आये ईमान ले अंग।।५३।।

मकरन्द भाई, मान सिंह, मोहन, तथा मनोहर भाई ने भी श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी और तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और आया सादल, और भाई नन्दराम।

और आया रिखेस्वर, दो जीवन दास नाम।।५४।।

चर्चा सुनकर शार्दुल, नन्द राम भाई ने धाम धनी के चरणों से अपनी आत्मा का सम्बन्ध जोड़ा। इनके

अतिरिक्त दो और सुन्दरसाथ, ऋषिश्वर और जीवनदास, ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर अपने को धन्य-धन्य माना।

और आई सरूप दे, एक बाई लखमी।
और आई रंभाबाई, इनों पायी कायमी।।५५।।

दो बहनों लक्ष्मीबाई और रम्भा बाई ने भी श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक चर्चा का रसपान किया और धाम धनी से अपनी आत्मा का सम्बन्ध जोड़कर अखण्ड सुख प्राप्त किया।

जादी और कुसली, और बाई चाँद तथा मोज।
ए आई इसलाम में, करके बड़ी खोज।।५६।।

जादी, कुसली, चाँद बाई, मोज बाई ने आध्यात्मिक क्षेत्र में बहुत खोज की थी। श्रीजी के मुखारविन्द से

परमधाम की चर्चा सुनकर इन्होंने तारतम ज्ञान ग्रहण किया और निजानन्द का मार्ग अपनाया।

भागबाई और तेजबाई, अनूपो राधा नाम।
बेनबाई मुरलीधर, ये दाखिल निजधाम।।५७।।

भाग बाई, तेज बाई, अनूपो, राधा, बेन बाई, और मुरलीधर ने भी तारतम ज्ञान ग्रहण कर परमधाम की अलौकिक राह अपनायी।

ए आवत चरचा को, बानी सुनत श्रवन।
खुसाल होवे मन में, सिफत सुने मोमिन।।५८।।

उपरोक्त सभी सुन्दरसाथ चर्चा सुनने के लिये पूर्ण निष्ठा के साथ आया करते थे और श्रीजी की वाणी चर्चा में जब ब्रह्ममुनियों की महिमा सुनते थे, तो वे अपने मन में बहुत

आनन्दित होते थे।

और इनकी सोहबत से, आया केतेक साथ।

तिनके नाम ना लिखे, पर धनिये पकड़े हाथ।।५९।।

इन सुन्दरसाथ की संगति से और भी बहुत से सुन्दरसाथ ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया। यद्यपि उनके नाम नहीं लिखे गये हैं, फिर भी धाम धनी ने उनके हाथ पकड़कर माया से निकाला है।

खरची पाती इनकी, पहुंचत लड़ाई मिने।

पतली कमरी ओढ़न को, आवत थी उत सें।।६०।।

जागनी कार्य में मायावी लोगों से होने वाले ज्ञान युद्ध में सारा खर्च मेड़ता के सुन्दरसाथ से आया करता था। ओढ़ने के लिये पतली कम्बली (कमरी) भी मेड़ता से ही

आया करती थी।

इत सब साथ में, राजा राम सिरदार।

तारतम बानी सब में, हुआ खबरदार।।६१।।

सेवा करने वाले इन समस्त सुन्दरसाथ में राजा राम भाई प्रमुख थे। तारतम वाणी का भी उन्हें विशेष ज्ञान था। अपनी आत्म–जाग्रति के लिये वे हमेशा सावधान रहते थे।

और मनाबाई सेवा में, रहवे खबरदार।

पावत है दीदार को, रहे तरफ धनी निरधार।।६२।।

मना बाई धाम धनी की सेवा में हमेशा सावचेत रहती थीं। वह श्रीजी का प्रतिदिन दर्शन करती थीं तथा उनका ध्यान हमेशा श्री प्राणनाथ जी की ओर ही बना रहता

था।

अब इन समै मेरते मिने, बड़ा जो पड़्या सोर।
चरचा और दीदार को, खलक चली आवे इन ठौर।।६३।।

इस समय मेड़ता में चारों ओर श्रीजी के अलौकिक ज्ञान की चर्चा हो रही थी। श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनने के लिये और उनका दर्शन करने के लिये सम्पूर्ण मेड़ता के लोग उमड़े हुए चले आते थे।

सुख बड़ो सब साथ को, इत उपजत है नित।
एक मजल जो इन समै, होसी बखत क्यामत।।६४।।

मेड़ता में होने वाली नियमित चर्चा एवं चितवनि के कार्यक्रम से सुन्दरसाथ को बहुत अधिक आनन्द होता था। अब तक केवल एकमात्र हिन्दू पक्ष की ही चर्चा

चलती रही थी, किन्तु मेड़ता के बाद कियामत का समय आ जाने तथा आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज़्ज़मां के प्रकट होने की भी चर्चा प्रारम्भ हो गयी।

ये बातें बहुत है, कहा लों कहों बनाय।
जो इत लीला में हाजर, ए अनुभव है ताय।।६५।।

मेड़ता में होने वाली जागनी लीला की बातें तो बहुत हैं, उसका मैं कहाँ तक वर्णन करूं? जो उस जागनी लीला में वहाँ उपस्थित थे, एकमात्र उन्हे ही उसके सुख का अनुभव हो सकता है।

सुनी बात जब जसवंत की, तब पाती लिखी दोय।
भट्ट गोवरधन ले चले, पैगाम पहुंचावने सोय।।६६।।

श्रीजी ने जब जोधपुर के शूरवीर राजा जसवन्त सिंह के

विषय में सुना, तब उनको जाग्रत करने हेतु दो पत्र लिखे। श्रीजी का सन्देश लेकर गोवर्धन भट्ट भी चल पड़े।

भावार्थ– ऐसा प्रतीत होता है कि जसवन्त सिंह के पास पहले भी एक पत्र भेजा होगा। पुनः दूसरी बार दूसरा पत्र लेकर गोवर्धन भट्ट के हाथों भिजवाया होगा, क्योंकि एक ही व्यक्ति के नाम से दो पत्र एक साथ भेजने का कोई औचित्य नहीं होता।

जसवन्त सिंह अपनी शूरवीरता के लिये प्रसिद्ध थे, किन्तु औरंगज़ेब की अधीनता में रहना इनकी मानसिकता बन चुकी थी। एक बार औरंगजेब के दरबार में, औरंगजेब के द्वारा यह कहने पर कि संसार में दिल्ली के शाही पिंजरे में बन्द बब्बर शेर से बड़ा कोई शेर नहीं है, जसवन्त सिंह ने अपने १२ वर्षीय पुत्र पृथ्वी सिंह को प्रस्तुत किया।

औरंगज़ेब ने यह शर्त रखी कि यदि आपका सिंह हार जायेगा तो आपको फाँसी की सजा दी जायेगी। जसवन्त सिंह ने यह स्वीकार कर लिया। अन्त में जसवन्त सिंह के निहत्थे पुत्र पृथ्वी सिंह और कई दिन के भूखे बब्बर शेर में द्वन्द युद्ध हुआ। पृथ्वी सिंह ने उस बब्बर शेर के दोनों जबड़ों को चीरकर दो टुकड़े कर डाले। सारी सभा पृथ्वी सिंह के नाम से जय-जयकार करने लगी, किन्तु औरंगज़ेब का चेहरा मुरझा गया।

उसने एक चाल चली। पठानों का दमन करने के बहाने जसवन्त सिंह को काबुल भेज दिया और पृथ्वी सिंह को भोजन में जहर दे दिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। जब यह समाचार जसवन्त सिंह तक पहुँचा, तो हृदयगति रुक जाने से उनकी भी मृत्यु हो गयी।

ये दोनों घटनायें श्रीजी के सन्देश के प्रति रूचि न

दिखाने के कुछ महीने बाद ही घटित हो गयीं। यदि जसवन्त सिंह श्री प्राणनाथ जी की शरण में आ जाते, तो इतिहास कुछ और होता।

इधर औरंगज़ेब ने जोधपुर के राठौर वन्श का समूल नाश करने के उद्देश्य से जसवन्त सिंह की दूसरी पत्नियों को भी कैद करवाना चाहा। उसकी मानसिकता थी कि दूसरी रानी जो गर्भवती है, उसका पालन–पोषण इस्लामिक रीति–रिवाज के अनुसार हो, किन्तु वीर दुर्गादास को किसी भी कीमत पर यह सहन नहीं था। उन्होंने राजपूतों की एक छोटी सी टुकड़ी के साथ जसवन्त सिंह की दोनों रानियों को सुरक्षा घेरे में लेते हुये ऐसी बहादुरी दिखायी कि मुगल सेना के दांत खट्टे हो गये। दिल्ली की गलियाँ खून से लाल हो गयीं, किन्तु वीर दुर्गादास दोनों महारानियों के धर्म की सुरक्षा करने में

सफल रहे।

अटक पार पहुंच के, खबर दई उन जाय।
ए अंकूर बिना क्या करें, रह्या रस न चरचा ताय।।६७।।

अटक नदी, जो सिंधु नदी की एक शाखा कही जाती है, को पार कर गोवर्धन जी ने जसवन्त सिंह को श्रीजी का सन्देश दिया। उसमें परमधाम का कोई अँकुर नहीं था, इसलिये उसने ब्रह्मज्ञान की चर्चा में कोई रूचि नहीं ली।

भावार्थ– यद्यपि जसवन्त सिंह जोधपुर के राजा थे किन्तु, औरंगज़ेब की अधीनता में रहने से, वे काबुल के सूबेदार नियुक्त किये गये थे। इसलिये जसवन्त सिंह से मिलने जाते समय रास्ते में अटक नदी पड़ी, जिसको पार कर गोवर्धन भट्ट जसवन्त सिंह से मिले। सम्भवतः

उस समय जसवन्त सिंह अटक शहर में भी आये थे, जिसका प्राचीन नाम तक्षशिला है, और गोवर्धन जी को अटक नदी पार कर इसी अटक नगर में आना पड़ा था।

तहाँ चार मास लग, रहे मेरते में इन बखत।
एक दिन बाहिर चलते, मारग खड़े तित।।६८।।

श्रीजी ने ४ महीने तक मेड़ते में जागनी लीला की। एक दिन सन्ध्या समय मार्ग में जाते समय जब वे बाहर खड़े थे।

बांग मुनारे पर चढ़के, दई मुल्ला नें जब।
कानों सुन आवाज को, दिल विचार किया तब।।६९।।

उस समय अज़ान देने वाले मुल्ला ने मस्जिद की मीनार पर चढ़ कर बांग दी। जब उन्होंने उस आवाज को सुना,

तब उन्होंने उसके बारे में अपने मन में विचार किया।

भावार्थ– मस्जिद की मीनार पर चढ़कर अल्लाह के कलमे को जोर से पढ़ना "बांग देना" कहलाता है। इसका उद्देश्य यह था कि राह चलते लोगों को परब्रह्म की कुछ पहचान हो सके।

ऊपर चढ़ कलमा कह्या, ला इलाह इल्लिल्लाह।

महंमद रसूल अल्ला तिनकी, ए खबर कहे अल्लाह।।७०।।

मुल्ला ने मीनार पर चढ़कर कलमा कहा था– अशहदू अल् ला इलाह इल्लिल्लाह मुहम्मदुर्रसूल्लाह स.अ.व। श्री महामति जी अपने मन में सोचने लगे कि यह मुल्ला तो अल्लाह तआला (खुदा) की पहचान दे रहा है। इसने मुहम्मद को खुदा का रसूल कहा है।

ला तो नाहीं को कह्या, इलाह तो है हक।

ए अक्षर अछरातीत की, बात बड़ी बुजरक।।७१।।

ला का अर्थ होता है नहीं अर्थात् क्षर, इलाह का अर्थ होता है अखण्ड अर्थात् अक्षर, और इल्लिल्लाह का तात्पर्य अक्षरातीत से है। इस प्रकार इस कलमें में क्षर–अक्षर–अक्षरातीत की बहुत ही रहस्यमयी एवं महान बात कही गयी है।

ए तो श्री देवचन्द्र जी कही, तहाँ से आये तुम।

दूसरा तो कोई है नही, इनका कौन दावा करे बिना हम।।७२।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने कहा था कि तुम जिस परमधाम से आये हो, वहाँ परमधाम की आत्माओं और अक्षरातीत के अतिरिक्त अन्य कोई है ही नहीं। इस अवस्था में, परमधाम का सन्देश लाने का दावा हमारी

उम्मत के सिवाय और कौन कर सकता है?

भावार्थ– स्वलीला अद्वैत परमधाम में श्री राज जी, श्यामा जी, सखियाँ, अक्षर ब्रह्म, और महालक्ष्मी पाँचों अद्वैत स्वरूप हैं। जब एक श्री राज जी के अतिरिक्त सबके ऊपर फरामोशी है, तो उनका सन्देश कोई दूसरा कैसे दे सकता है?

इसलिये सनंध वाणी में कहा है–

रसूल आया हुकमें, तब नाम धराया गैन।
हुकम बजाये पीछा फिरया, तब सोई ऐन का ऐन।।

सनंध ३६/६२

अर्थात् अक्षरब्रह्म की आत्मा जब श्री राज जी का सन्देश लेकर इस नश्वर जगत में आयी, तो उन्होंने स्वयं को अल्लाह का रसूल (गैन) कहा। किन्तु जब वे लीला करके निजधाम में गये, तो धनी के अद्वैत स्वरूप में

विराजमान हो गये।

भ्रान्तिवश ये मान्यता है कि अरब में मुहम्मद साहिब के अन्दर श्री श्यामा जी की आत्मा थी, किन्तु इसी बीतक के प्रकरण में कहा गया है–

तहां रास लीला कर के, आए बरारब स्याम।
त्रेसठ बरस तहां रहे, वायदा किया इस ठाम।।

बी. सा. ७१/८४

यदि श्यामा जी अरब में आयी हुई हों, तो ब्रह्मसृष्टियाँ भी वहीं होतीं, किन्तु वाणी एवं बीतक का कथन है कि अरब में कोई भी ब्रह्मसृष्टि नहीं आयी थी।

गिरो रूहें हम इत आई नहीं, तो यों करी सरत।
कह्या खुदा हम इत आवसी, फरदा रोज कयामत।।

खुलासा २/२८

हुकम के अमल में, ना कोई उतरे मोमिन।
हकीकत मारफत की, किन आगे करें रोसन।।

बी. सा. ६२/३३

तहकीक हमारे कासिद, हम वास्ते ल्याये कलाम।
सब खबर हमारी होयगी, ल्याये महम्मद अलेह सलाम।।७३।।

निश्चित रूप से अक्षर की आत्मा ही मुहम्मद (सल्ल.) के रूप में अल्लाह का सन्देश लेकर आयी। वह सन्देश हमारे लिये है। निश्चित रूप से उसमें हमारे परमधाम की साक्षियाँ होंगी।

भावार्थ– यद्यपि कुरआन में शरीअत और तरीकत का ही ज्ञान विशेषकर है, जो जीव सृष्टि के लिये है। हकीकत का ज्ञान, संक्षेप में हरूफे मुक्तेआत के रूप में है, जिनके भेद अल्लाह तआला के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता।

मारिफत के शब्द मुहम्मद साहिब की जुबान पर इसलिये नहीं चढ़ सके क्योंकि अरब में उसे ग्रहण करने वाला ही कोई नहीं था।

महामति कहें ए साथ जी, इहाँ लों ईसा का इलम।
अब महम्मद को मिल चला, कहों एक दीन आदम।।७४।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! मेड़ता तक सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के तारतम ज्ञान (वेद पक्ष) के द्वारा जागनी होती रही। अब मुहम्मद साहिब के द्वारा लाया हुआ कलमा (कुरआन पक्ष) का ज्ञान भी श्रीजी के स्वरूप में स्थित हो गया है। अब सम्पूर्ण मानव जाति को (वेद-कतेब की साक्षी द्वारा) एक सत्य धर्म का ज्ञान प्राप्त होगा, जिसका वर्णन मैं करने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।३३।। चौपाई ।।१५५६।।

कतेब की पूंजी

इहाँ लगे कतेब की, चरचा में न चित।
कलमा से हासिल किया, लिया मुहम्मद मता इत।।१।।

मेड़ता में आने से पहले तक श्री प्राणनाथ जी का मन कुरआन पक्ष की चर्चा में नहीं था। कलमा सुनते ही उनके अन्दर से कुरआन का ज्ञान प्रकट होना प्रारम्भ हुआ।

भावार्थ– अक्षर की आत्मा तो महामति जी के धाम हृदय में पहले से ही विराजमान थी। कुरआन को कहने वाले स्वयं अक्षरातीत जिस तन में विराजमान हों, उन आयतों को लाने वाला इस्राफील और जिबरील भी हो, तो उनको कुरआन का ज्ञान प्राप्त करने के लिये किसी अन्य साधन की आवश्यकता नहीं थी, किन्तु मूल

स्वरूप ने मेड़ता से ही कुरआन पक्ष के ज्ञान को अवतरित करने की बात दिल में ले ली थी। इसलिये लीला रूप में मेड़ता से कुरआन पक्ष की चर्चा प्रारम्भ हुई। इस कथन में खुलासा ग्रन्थ का यह कथन देखने योग्य है–

पढया नाहीं फारसी, ना कछु हरफ आरब।
सुन्या न कान कुरान को, और खोलत माएने सब।।

खुलासा १५/५

बीतक की इस चौपाई के तीसरे चरण के शब्दों का बाह्य अर्थ करके भ्रान्ति वश यह कहा जाता है कि अरब में पाँच वर्ष रहने के कारण श्री महामति जी को अरबी भाषा आ गयी थी और उसी भाषायी ज्ञान के कारण उन्होंने कलमे का भाव समझ लिया।

इस प्रकार का कथन श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक

महिमा पर कुठाराघात करता है।

लालदास को कह्या, आज एक बात पाई।

तब अरज करी लालदास ने, ए हमको देओ दिखाई।।२।।

श्रीजी ने लालदास जी से कहा कि लालदास! आज मुझे विशेष ज्ञान की अनुभूति हुई है। तब लालदास जी ने प्रार्थना की कि हे धाम धनी! मुझे भी उसके बारे में बताइये।

तब बात कलमें की, कर दिखाई सब।

मुहम्मद कुरान ल्याये, सब तुमारा मतलब।।३।।

तब श्रीजी ने कलमें के द्वारा क्षर , अक्षर, और अक्षरातीत के अनुभव की बात बतायी कि मुहम्मद साहिब जो कुरआन लाये हैं, उसमें तुम्हारी अर्थात्

(ब्रह्मसृष्टियों) की पहचान की सारी साक्षी दी गई है।

इत महम्मद सों मिल चले, तब अहमद पाया खिताब।
ईसा और महम्मद मिले, मारे दज्जाल सिताब।।४।।

जब श्री महामति जी के धाम हृदय में कुरआन पक्ष का ज्ञान प्रकट हो गया, तो उस स्वरूप को "अहमद" कहलाने की शोभा मिली। जब उनके धाम हृदय में तारतम और कलमा (वेद एवं कतेब पक्ष का गुह्य ज्ञान) दोनों ही मिल गये, तो इससे मानव समाज के अन्दर निवास करने वाले अज्ञानमयी राक्षस (दज्जाल) को शीघ्र मारना सरल हो गया।

भावार्थ– इस चौपाई के शब्दों का बाह्य अर्थ लेने पर ऐसा प्रतीत होता है कि मेड़ता में अक्षर की आत्मा श्री महामति जी के धाम हृदय में प्रविष्ट हो गयी , तभी से

कुरआन पक्ष का ज्ञान अवतरित होने लगा। किन्तु यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से, तारतम ज्ञान के प्रकाश में, देखते हैं तो उपरोक्त विचारधारा उचित प्रतीत नहीं होती।

जब कुरआन के ज्ञान को देने वाले स्वयं श्री राज जी श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान हैं, तो ज्ञान के लिये मेड़ता तक की प्रतीक्षा क्यों करनी पड़ेगी?

वस्तुतः कुरआन का ज्ञान तो श्री राज जी (अल्लाह ताआला) ने जिबरील के माध्यम से मुहम्मद साहब के तन द्वारा कहलाया है। उसमें अक्षर की आत्मा को लीला रूप में शोभा दी गयी थी। मुहम्मद साहब ने होश में जो भी ज्ञान कहा है, वह हदीसों में संग्रहित है, कुरआन में नहीं। प्रकाश गुजराती की प्रगट वाणी में स्पष्ट कह दिया गया है–

साथ वचन सांभलियां एह, वासनाएं कीधां मूल सनेह।
ते माहें एक इन्द्रावती, कहे वाणी सहुमां महामती।।
प्र. गु. ३७/२१

किन्तु यह कथन तभी सार्थक हो सकेगा, जब अक्षर की आत्मा भी हब्सा में श्री इन्द्रावती जी के हृदय में विराजमान हो जाये, क्योंकि पाँचों शक्तियों के मिलने पर ही "महामति" की शोभा मिल सकती है।

यदि यह कहा जाये कि हब्सा में श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में महामति जी की आत्मा थी , तो रास, प्रकाश, तथा षट्ऋतु में इन्द्रावती की छाप क्यों है , महामति की क्यों नहीं है।

इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि वि .सं. १७३५ में श्यामा जी के स्वामित्व (बादशाही) के ४० वर्ष प्रारम्भ होते हैं। तभी से श्री इन्द्रावती जी को श्री

महामति जी की शोभा देकर वाणी के प्रकरणों में "श्री महामति जी" का शब्द प्रयोग करना उचित है। अन्यथा पाँचों शक्तियाँ तो सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के अन्दर भी विराजमान थीं, किन्तु जागनी की लीला उस स्वरूप से नहीं होनी थी, इसलिये यह बात जाहिर नहीं की गयी।

यह बात खुलासा ग्रन्थ १५/२१ में भी कही गयी है–

महंमद आया ईसे मिने, तब अहमद हुआ स्याम।

अहमद मिल्या मेंहेदी मिने, ए तीन मिल हुए इमाम।।

यदि शब्दों के बाह्य अर्थ को देखा जाये तो इसका यही अर्थ निकलता है कि श्यामा जी के दूसरे जामे अर्थात् श्री मिहिरराज जी के तन में अक्षर की आत्मा ने मेड़ता में प्रवेश किया, तब श्यामा जी के उस दूसरे जामे को अहमद की शोभा मिली। जब वह स्वरूप महदी, महामति जी, के अन्दर विराजमान हुआ, तो इस पूर्ण स्वरूप को

ईमाम कहा गया। किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखें, तो इसका गुह्य अर्थ कुछ और कहता है।

काव्य की भाषा अलंकारमयी होती है। इसलिये प्रायः ग्रन्थ को ग्रन्थकार के रूप में और ग्रन्थ में ग्रन्थकार की उपस्थिति दर्शायी जाती है। इसी आधार पर श्रीमुखवाणी को श्रीजी का वाङ्मय कलेवर भी माना जाता है। किरंतन ग्रन्थ में कहा है–

न मानो ते जई सुक जी ने पूछो, आ बैठा छे माहें भागवत।

किरंतन १२६/१००

इसी प्रकार, श्री मिहिरराज जी का तन श्यामा जी के द्वारा धारण किया गया दूसरा तन है, जिसमें मरु के जीव पर श्री इन्द्रावती जी की आत्मा विराजमान है और श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में अक्षरातीत अपनी पाँचों शक्तियों– १. जोश (जिबरील) २. आनन्द शक्ति

(श्यामा जी) ३. अक्षर ब्रह्म की आत्मा ४. आवेश शक्ति (हुक्म) तथा ५. जाग्रत बुद्धि (इस्राफील)– के साथ विराजमान हैं। जब जिस शक्ति की विशिष्ट लीला होती है, तो लीला रूप में उस शक्ति का नाम पर्दे पर आ जाता है।

मेड़ता तक ज्ञान की वही धारा चल रही थी, जो सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के तन से प्रगट हो रही थी। इसलिये कहा गया है कि "यहां लो ईसे का इलम।" इसी प्रकार वि.सं.१७३५ से लेकर वि.सं.१७७५ तक श्यामा जी के स्वामित्व (बादशाहत) का समय माना जाता है, जबकि इसमें श्री मिहिरराज जी और महाराजा श्री छत्रशाल जी के तन का प्रयोग होता है।

यद्यपि खिल्वत, परिक्रमा, सागर, तथा श्रृंगार का अवतरण स्वयं अक्षरातीत ने किया, लेकिन शोभा श्यामा

जी को दी जा रही है कि यह उनकी रसना है।

इसी प्रकार, जब श्री महामति जी के धाम हृदय से कुरआन के गुह्य रहस्यों का ज्ञान प्रकट होने लगता है, तो शोभा उस अक्षर की आत्मा (मुहम्मद) को दी जा रही है, जो अरब में कुरआन का सन्देश लेकर अवतरित हुये थे। अरब वाले स्वरूप (बसरी सूरत) को "मुहम्मद" की शोभा दी जाती है। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी (मलकी सूरत) को दूसरे जामे में "अहमद" की शोभा दी जाती है, तथा श्री इन्द्रावती जी की आत्मा को "महदी" की शोभा दी जाती है। इस सम्बन्ध मे यह चौपाई बहुत ही महत्वपूर्ण है–

महंमद हुआ महदी, अहमद कहलाया सही।
खिताब दिया खसमें, तब भेली इमाम भई।।

शरीर विशेष को "मुहम्मद" कहना बहुत बड़ी भूल है।

मुहम्मद का अर्थ होता है– महिमा से परे, अर्थात् अनन्त महिमा वाला। इसलिये अरब वाले स्वरूप को "बसरी सूरत या रसूलल्लाह मुहम्मद मुस्तफ़ा" कहते हैं। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी को भी "मलकी मुहम्मद" कहते हैं, तथा श्री प्राणनाथ जी को "हक़ी मुहम्मद" कहते हैं।

इन तीनों स्वरूपों में श्री राज जी की शक्ति ने ही लीला की है, किन्तु नाम, तन, समय अलग–अलग रहा है। इन तीनों स्वरूपों को अलिफ –लाम–मीम या बसरी–मलकी–हक्की या मुहम्मद–अहमद–महदी कहते हैं। तीनों सूरतों का एकाकार रूप ही "इमाम" है और यह सारा घटनाक्रम श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में ही घटित होता है। किन्तु बाह्य रूप से लीला को दर्शाने के लिए मेड़ता आदि का नाम लिया जाता है।

अब लड़ाई करने को, जाइये पास सुलतान।

इनको प्रथम दावत करें, ए ल्यावें ईमान।।५।।

श्रीजी लालदास जी से कहते हैं कि अब हमें शरीअत के विरूद्ध ज्ञान की ज्योति फैलाने के लिये औरंगज़ेब के पास जाना होगा। यदि हम उसे कियामत के आने की पहचान करा देते हैं, तो सम्भवतः वह विश्वास ला सकता है।

भावार्थ– इस चौपाई के प्रथम चरण में कथित "लड़ाई" का तात्पर्य अस्त्र–शस्त्र की लड़ाई नहीं, बल्कि इल्मे लदुन्नी (तारतम ज्ञान) की तलवार द्वारा शरीअत की ओट में होने वाली मिथ्या मान्यताओं का खण्डन करना है।

श्री देवचन्द्र जी ने कही थी, आवे सकुण्डल सकुमार।

तब खेल देख पीछे फिरें, पहुंचे परवरदिगार।।६।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने कहा था कि जब सकुण्डल और सकुमार की आत्मा जाग्रत हो जायेगी, तब यह माया का खेल खत्म हो जायेगा और सभी धनी के चरणों में जाग्रत हो जायेंगे।

तिस वास्ते ढूंढ काढ़िये, ए लीला होए जाहिर।

कुली दज्जाल को मारिये, करत बदफैली बाहिर।।७।।

इसलिये, हमारा लक्ष्य सकुण्डल और सकुमार को जाग्रत करना है। अब जागनी लीला का प्रकाश चारों तरफ फैल जायेगा। सबके हृदय में विराजमान उस अज्ञान रूपी कलियुग (दज्जाल) को मारना होगा, जो बाह्य जगत में चारों ओर बुरे कर्म करवा रहा है।

तब साथ सब को, होवेगी खबर।

दौड़ेंगे आप अपनी, आए मिले आखर।।८।।

जब सभी सुन्दरसाथ को इस जागनी लीला की जानकारी हो जायेगी, तो आखिर में दौड़ते हुये धनी के चरणों में स्वयं आयेंगे।

ए विचार करके, मेरते से चले जब।

गोकुल मथुरा आगरे, आए पहुंचे तब।।९।।

इस प्रकार का विचार करके श्री प्राणनाथ जी जब मेड़ता से चले, तो गोकुल एवं मथुरा होते आगरा आ गये।

कोई दिन तहाँ रह के, दिल्ली पहुंचे धाए।

कितनाक साथ ठठे का, इत पहुंचा आए।।१०।।

कुछ दिन आगरा में रहने के पश्चात्, श्रीजी शीघ्र ही दिल्ली आ गये। दिल्ली में ही ठट्ठानगर के रहने वाले बहुत से सुन्दरसाथ भी आ गये।

हरि राम चौधरी, और चिन्तामन लालमन।

और रामचन्द्र आये पहुंचे, रहे कोइक दिन।।११।।

हरिराम चौधरी, चिन्तामणि, लालमणि ने दिल्ली आकर श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया। रामचन्द्र जी दिल्ली में धनी के चरणों में कुछ ही दिन समर्पित रहे।

ईश्वर दास चोबदार, ए रह्या बरस दोए।

पीछे माया लहर में, रह न सक्या सोए।।१२।।

ईश्वर दास चोबदार दो वर्ष तक श्रीजी के साथ रहे। बाद में माया की ऐसी लहर आयी कि वह जागनी लीला में धनी के साथ नहीं रह सके।

मलूक चन्द भली भाँत सों, लड़ा दज्जाल सो जोर।

सौंपी अपनी आतम, कछु न आई खोर।।१३।।

मलूक चन्द्र माया के साथ बहुत अच्छी तरह से लड़े। इन्होंने अपनी आत्मा श्री प्राणनाथ जी के चरणों में सौंप दी। समर्पण भावना में इन्होंने जरा भी कमी नहीं रखी।

सेखबदल आइया, नीके ग्रहे कदम।

लड़ा दज्जाल सों सनमुख, और न मारी दम।।१४।।

शेखबदल ने श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा सुनकर पूर्ण विश्वास के साथ धनी के चरणों को ग्रहण किया। ये शरीअत के लोगों से हमेशा लड़ते रहे और इस सेवा में उन्होंने कभी आराम नहीं किया।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में "दम न मारने" का प्रसंग एक मुहाविरे के रूप में दिया गया है, जिसका अर्थ होता है, लगातार कार्य करते रहना (आराम न करना)।

अनन्तराम आये मिला, लड़ाई के बखत।

सेवा में सामिल रह्या, समय पाया इत।।१५।।

शरा–तोरा के विरुद्ध होने वाले ज्ञान युद्ध में अनन्तराम

भी धनी के चरणों में आये। उन्हें धनी की सेवा में सम्मिलित होने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ।

तुलसी बिहारी दास, और हिरदे राम।

कोइक दिन सामिल रहे, फेंर घरों किया बिसराम।।१६।।

तुलसी, बिहारी दास, व हृदयराम, कुछ दिनों तक सुन्दरसाथ में सम्मिलित रहे। फिर घर जाकर माया के सुखों में लिप्त हो गये।

ए जो हरिराम भाई का, बेटा हीरानन्द।

कोइक दिन रह्या सेवा मिने, पीछे पहुंचा अपने वतन।।१७।।

हरिराम भाई का बेटा हीरानन्द था। ये कुछ दिन धनी की सेवा में रहे। इसके पश्चात् इनका धामगमन हो गया।

भाई श्री मुकुन्ददास ने, सुन्या सूरत में तारतम।
आये पहुंचे सैयद की हवेली में, जाग खड़ी आतम।।१८।।

श्री मुकुन्द दास जी ने सूरत में तारतम ज्ञान ग्रहण किया था। उनमें वैराग्य ने इतना जोड़ पकड़ा कि वे घर-द्वार छोड़कर दिल्ली में सैयद की हवेली पहुँच गए। उनकी आत्मा धनी के चरणों में आकर जाग्रत (ज्ञान दृष्टि से) हो उठी।

भावार्थ- मुकुन्द दास जी का कुछ समय पूर्व ही विवाह हुआ था, किन्तु धनी के चरणों में आने के बाद उनको संसार नश्वर लगने लगा। और उन्होंने श्रीजी के चरणों में साथ चलने के लिए अपनी पत्नी से आग्रह किया। पत्नी के मना करने पर उन्होंने हमेशा के लिए उसका परित्याग कर दिया और श्रीजी के चरणों में दिल्ली पहुँच गए।

रामचन्द्र मेड़ते से, पहुंचा इन सोहबत।

कोइक दिन रहके, फेर घर किया इत।।१९।।

मेड़ता के रहने वाले राम चन्द्र भाई दिल्ली में धनी के चरणों में आये तो अवश्य, किन्तु कुछ दिन रहने के बाद मोह के वशीभूत होकर पुनः घर चले गये।

और साथी केतेक, आए के गये अपने घर।

पर बात न छूटे दिल से, रहे इसलाम ऊपर।।२०।।

इनके अतिरिक्त और भी बहुत से सुन्दरसाथ आये और पुनः अपने घर जाकर रहने लगे, किन्तु घर में रहने पर भी उन्होंने निजानन्द की राह नहीं छोड़ी, और उनके दिल में श्री प्राणनाथ जी तथा परमधाम के प्रति पहले की तरह ही भावना रही।

केतेक मुनकर हुये, सो पैठ न सके इसलाम।

जो मुँह नीचा करे साथ, कोई न कहे कलाम।।२१।।

बहुत से लोग सुन्दरसाथ के बीच में आकर भी निजानन्द की राह को अपना नहीं सके। वे अपनी इस भूल के कारण अपना मुख नीचा किये रहे और सुन्दरसाथ ने भी उनसे कोई ज्ञान चर्चा नहीं की।

कोई दिन पीछे आइया, गोवरधन अटक से।

लाल दरवाजे आए रह्या, गंगाराम की दुकान में।।२२।।

कुछ दिनों के पश्चात् अटक से गोवर्धन भाई वापस लौटकर आये और दिल्ली में लाल दरवाजे मोहल्ले में गंगाराम की दुकान में ठहर गये।

तहां बचन तारतम के, कहे जो गंगाराम।

आसाजीत परबोधिया, तित पाया बिसराम।।२३।।

वहाँ गोवर्धन जी ने गंगाराम जी को तारतम ज्ञान की कुछ बातें कहीं। इसके अतिरिक्त उन्होंने आशाजीत वकील को भी प्रबोधित किया। उसने बहुत अधिक आनन्द का अनुभव किया।

नैनसुख महाजन सों, कहें वचन दो चार।

तिनने अपने दिल में, किया बड़ा विचार।।२४।।

गोवर्धन जी ने नैनसुख महाजन से भी तारतम ज्ञान की दो-चार बातें की। उन्होंने अपने मन में उन बातों पर बहुत अधिक गंभीर चिन्तन किया कि इनकी वास्तविकता की साक्षी क्या है?

फिरते उर्दू बाजार में, मिले गरीबदास।

धाय के तिनको मिले, पूछी खबर खास।।२५।।

जब गोवर्धन जी उर्दू बाजार में घूम रहे थे। तब उनकी भेंट गरीब दास जी से हुई। वे दौड़कर गरीब दास जी से मिले और श्रीजी के बारे में पूछा।

कहाँ साथ रहत है, श्री जी आप हैं कित।

मैं अपने साथ को, लेकर आऊं इत।।२६।।

इस समय श्री प्राणनाथ जी कहाँ पर रह रहे हैं तथा सुन्दरसाथ कहाँ हैं? मैं अपने सुन्दरसाथ को लेकर उनके चरणों में आना चाहता हूँ।

पूरे विट्ठल गौर के, सैयद की हवेली में।

तहाँ श्री जी रहत हैं, मैं खबर करों इनसें।।२७।।

गरीबदास जी ने उत्तर दिया कि विट्ठल गौर के मोहल्ले में सैयद की हवेली में धाम धनी विराजमान हैं। मैं उन्हें आपके आने की सूचना देता हूँ।

गोवरधन अपने घर गया, आया गरीबदास।

खबर करी श्री राज सों, आया गोवरधन खास।।२८।।

गोवर्धन जी अपने निवास पर गये और गरीबदास जी ने श्रीजी के पास आकर सूचना दी कि गोवर्धन जी अटक से आ गये हैं।

ब्रत समै गोवरधन, ल्याया अपने संगी मिलाए।

सब आए कदमों लगे, बीतक कही बनाए।।२९।।

प्रातः समय गोवर्धन जी अपने जाग्रत किये हुए सुन्दरसाथ को साथ लेकर आये। सबने आ-आकर श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया। गोवर्धन जी ने जसवन्त सिंह से मिलने का सम्पूर्ण विवरण कह सुनाया।

इन हवेली में आप, मास छः रहे।

तहाँ से लाल दरवाजे को, ले चला उत के।।३०।।

सैयद की हवेली में श्रीजी छः महीने तक रहे। इसके बाद वहाँ के रहने वाले सुन्दरसाथ दयाराम और नैनसुख श्रीजी को लाल दरवाजा मुहल्ले में क्षत्रिय की हवेली में लेकर आए।

इहाँ आए सकुमार को, पाती लिखी बनाए।

बाईस प्रस्न तिन में, लिखे चित सों ल्याए।।३१।।

यहाँ पर आकर श्रीजी ने बहुत ध्यानपूर्वक औरंगज़ेब को पत्र लिखा, जिसमें कुरआन के २२ (बाईस) प्रश्न लिखे गये थे।

इन पाती लिखने में रहें, श्री जी और लालदास।

रात दिन मेहनत करी, श्री राज सेवन की आस।।३२।।

मूल स्वरूप श्री राज जी की सेवा की भावना से श्री महामति जी और श्री लालदास जी ने दिन-रात परिश्रम किया और बाईस प्रश्नों के रूप में इस पत्र को लिखा।

ए पाती लेइ के, आये लाल दरवाजे।

हवेली छत्रीय की, तिन में रहे आये।।३३।।

उस पत्र को लेकर श्रीजी लाल दरवाजे आए। वहाँ पर एक क्षत्रिय की हवेली लेकर निवास करने लगे।

तहाँ आए बैठ के, बड़ी करी मसलहत।

पूछा विचार सब को, कहा करना अब इत।।३४।।

उस क्षत्रिय की हवेली में आकर सबने बहुत अधिक विचार-विमर्श किया। श्रीजी ने सबका विचार पूछा कि औरंगज़ेब तक अपना सन्देश पहुँचाने के लिये हमें क्या करना होगा?

आसाजीत आइया, लगा श्री राज के कदम।

तब ए विचार पूछिया, कहा करना अब हम।।३५।।

आशाजीत वकील ने आकर श्री प्राणनाथ जी के चरणों में प्रणाम किया। तब उसने यह बात पूछी कि धाम धनी आप हमें ये बताइये कि अब हमें क्या करना है?

तब आसा जीत को, पाती पढ़ सुनाई।

सुनके उन उत्तर दियो, ए पाती क्यों दिखाई।।३६।।

जब आशाजीत वकील को बाईस प्रश्नों का पत्र पढ़कर सुनाया गया, तो उसने सुनकर उत्तर दिया कि इस पत्र को भला औरंगज़ेब क्यों देखेगा?

ऐ तो हिन्दुअन का, हमेसा रहत दुसमन।
प्रात को मुंह ना देखहीं, ए आप कहावत मोमिन।।३७।।

यह औरंगज़ेब तो हिंदुओं के प्रति शत्रुता का व्यवहार करता है। यह खुद को तो मोमिन कहता है, किन्तु प्रातः यदि किसी हिन्दू का मुख दिख जाये तो उसे वह बहुत अशुभ मानता है कि मैंने एक काफिर का मुख देख लिया।

सो पाती हिन्दवी की, क्यों कर सुने कान।
सरियत है जोरावर, है पोहोरा मुसलमान।।३८।।

भला हिन्दुस्तानी भाषा में लिखे हुये इस पत्र को औरंगज़ेब कैसे पढ़ या सुन सकता है? मुसलमानों का राज्य है और उनके शरातोरा के नियम बहुत ही कठोर हैं।

मास दोय इहाँ रहे, होए चरचा वेद वेदान्त।

ऊपर अटारी के, बैठत हैं एकान्त।।३९।।

श्रीजी दो माह तक इस हवेली में रहे। इस हवेली के ऊपरी भाग में सभी सुन्दरसाथ एकान्त में बैठते थे और वेद–वेदान्त की चर्चा हुआ करती थी।

इत सूफी एक आवत, चरचा सुनाई ताए।

मीठी लगी तिन को, लालच को इत आए।।४०।।

एक सूफी फकीर इस हवेली में आता था। उसने श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी। वह उसे बहुत अच्छी लगी और चर्चा सुनने के लालच में वह आता रहा।

दयाराम दिल प्रेम सों, इत आया तिन ईमान।

ल्याया सबके देखते, है खास सैयों में जान।।४१।।

दयाराम जी ने अपने दिल में श्रीजी के प्रति प्रेम लेकर श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी। वे परमधाम की ब्रह्मसृष्टि थे और सबके सामने अति अल्प समय में ही धाम धनी पर अटूट विश्वास ले आए।

दया राम को ल्याईया, ऐ जो भाई नैन सुख।

सुख दयाराम जो पाईया, सो कहो न जाए मुख।।४२।।

नैनसुख भाई दयाराम को श्रीजी के चरणों में लेकर आये। श्रीजी के दर्शन एवं उनके मुखारविन्द की चर्चा सुनके दयाराम को इतना सुख हुआ कि उसका वर्णन इस मुख से कहा नहीं जा सकता।

चंचल आगे चरचा, करी जो दया राम।

यह भी ईमान ल्याईया, बड़ा पाया बिसराम।।४३।।

दयाराम ने चंचल के आगे जब तारतम ज्ञान की चर्चा की, तो उन्हें बहुत शान्ति मिली और धनी के चरणों में उन्हें अटूट विश्वास हो गया।

हरप्रसाद हरकरन, चरचा सुनी न किनके मुख।

इन दोऊ भाइयों को, ल्याया बीच इन सुख।।४४।।

हरप्रसाद और हरकरण ने किसी की सामने बैठकर प्रत्यक्ष रूप से चर्चा नहीं सुनी। फिर भी चर्चा के सुख ने उन दोनों भाइयों को अक्षरातीत के चरणों में ला दिया।

ए दोऊ भाई प्रेम सों, चरचा छिपके सुनते।

ईमान पूरा ल्याये, पर बड़कों से डरते।।४५।।

श्री प्राणनाथ जी के मुखारबिन्द से होने वाली चर्चा को ये दोनों प्रेमपूर्वक–छिपकर सुना करते थे। श्री राज जी पर इन्हें अटूट विश्वास था, किन्तु घर के बड़े लोगों के विरोध के कारण उनके डर से सुन्दरसाथ में नहीं आते थे।

और भिखारी दास नें, कछु चरचा सुनी।

ऊपर की पहचान सों, सेवा करी अपनी।।४६।।

भिखारी दास ने श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी। उन्हें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की केवल ऊपरी पहचान हो सकी और उसी भाव से उन्होंने धाम धनी की सेवा की।

श्री राज को घरों पधराए के, अरूगाया थाल।

साथ सब की सेवा करी, होए के दिल खुसाल।।४७।।

भिखारीदास ने धाम धनी को अपने घर पर भोजन करने के लिये आमन्त्रित किया और हृदय में बहुत आनन्द लेकर श्रीजी को थाल में भोजन अर्पित किया। इसी भाव से ही उसने सभी सुन्दरसाथ की भी सेवा की।

गंगाराम आवत, खाली हाथों न कब।

पावें भली वस्त बाजार में, राज आगे धरे सब।।४८।।

गंगाराम श्रीजी के पास कभी भी खाली हाथ नहीं आते थे। बाजार में जो भी अच्छी वस्तुएँ मिलती थीं, वे उन्हें लाते थे और धाम धनी के आगे भेंट में रखते थे।

दयाराम आवत, ल्यावें मिठाई पकवान।

नये नये मेवे लेय के, ल्यावत दिल ईमान।।४९।।

दयाराम जी जब भी धाम धनी के चरणों में आते हैं, तो वे अपने साथ तरह-तरह की मिठाइयाँ, पकवान, और नये-नये मेवे लाकर समर्पित करते हैं। श्रीजी के प्रति अटूट विश्वास होने के कारण ही वे इस प्रकार की सेवा करते हैं।

चंचल अपनी दूकान से, ल्यावत कर चोरी।

ल्यावें श्री राज के वास्ते, अंग उमंग करी।।५०।।

घर वालों के मना करने पर भी चंचल दास अपनी दुकान से चोरी करके तरह-तरह के उपहार श्रीजी के चरणों में लाते हैं। उनके हृदय में धाम धनी की सेवा के प्रति अटूट उमंग है।

भावार्थ– चंचल दास जी के मन में धनी के प्रति समर्पण भावना थी, किन्तु उनके परिवार वाले अति कंजूस और धार्मिकता से रहित थे। चंचल दास जी, दुकान से जो सामान बिना घर वालों को बताए लाते थे, उसे चोरी की अपेक्षा "छिपाकर लाना" कहना ज्यादा उपयुक्त होगा।

दूसरे के घर या दुकान से कुछ भी लाना चोरी है और इस प्रकार पाप है। किन्तु जिस दुकान की आर्थिक वृद्धि में स्वयं चंचलदास जी का योगदान हो, उसमें से कोई वस्तु धार्मिक कार्य में देने पर उसे चोरी की संज्ञा नहीं दी जा सकती। क्या पति की अनुपस्थिति में पत्नी के द्वारा दी गयी भिक्षा भी चोरी है?

कुटुम्ब कबीला लड़ते, बरजत रहे हमेस।

तिनका मोंह मार के, काहू न गिनत खेस।।५१।।

चंचल दास जी के परिवार वाले, सगे–सम्बन्धी, श्रीजी के पास जाने के कारण उनको हमेशा मना करते थे, और उनसे लड़ाई करते थे, किन्तु चंचलदास जी ने परिवार के किसी सम्बन्धी को कोई महत्व नहीं दिया और उनके प्रति अपना मोह पूर्णतया समाप्त कर दिया।

रामचन्द पंसारी नें, करी उपली पहिचान।
खिजमत अपने माफक, करी ऐसी जान।।५२।।

रामचन्द्र पंसारी ने श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की बाहरी पहचान की और उस पहचान के अनुकूल ही उसने अपनी सामर्थ्य के अनुसार सेवा की।

महाजन जेठा वेदान्ती, चरचा सुनता कान।
सुकन भले चीनता, पर छूटा न सुंन मकान।।५३।।

जेठा महाजन एक वेदान्ती था। वह श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से होने वाली ज्ञान-चर्चा को सुनता था। तारतम ज्ञान की गम्भीरता को भी वह अच्छी तरह पहचानता था, किन्तु निराकारवाद की मान्यता को वह छोड़ नहीं सका।

अब ए विचार करने लगे, क्यों ए बात सुने सुलतान।
इत बैठे ना बनत, बड़ा अमल सैतान।।५४।।

सब सुन्दरसाथ आपस में विचार करने लगे कि हमारी बात औरंगज़ेब बादशाह तक कैसे पहुँचे? यहाँ निरर्थक बैठे रहने से भी कोई लाभ नहीं है। शरा-तोरा के नाम पर अपना शासन चलाने वाले अत्याचारियों की बहुत अधिक शक्ति है।

कोइक जागा पकड़ के, लड़े इनसे हम।

वचन इने सुनावनें, कहो इलाज कोई तुम।।५५।।

सबने यह निर्णय किया कि कोई सुरक्षित स्थान लेकर रहा जाये, तभी शरीअत के इन कट्टरपन्थी लोगों से लड़ा जा सकता है। उस सभा में यह घोषणा कर दी गई थी कि यदि कोई सुन्दरसाथ , इन मुसलमानों को अपना ज्ञान सुनाने के लिए, अपनी सलाह देना चाहता है तो वह निःसंकोच कह सकता है।

ऐसा विचार करके, दिल्ली से चले जब।

साहजहानपुर बोड़िया मिने, आये पहुंचे तब।।५६।।

ऐसा विचार करके जब श्रीजी दिल्ली से चले तो शाहजहाँपुर बुड़िया पहुँच गये, जो आज हरियाणा प्रान्त का एक नगर है।

भावार्थ– शाहजहाँपुर उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले में आता है, जबकि बुड़िया नगर हरियाणा में आता है। दोनों के बीच लगभग २० कि.मी. की दूरी है।

केतेक साथ दिल्ली मिने, राख के आप चले।
हम लेइंगे पीछे ते खबर, जाएंगे उस जगे।।५७।।

श्रीजी ने कुछ सुन्दरसाथ को दिल्ली में छोड़ दिया और कुछ के साथ आप वहाँ से चल पड़े। उन सुन्दरसाथ को यह कह दिया गया कि अभी हम कुछ सुरक्षित स्थान पर जा रहे हैं। आप लोगों की गुप्त रूप से (पीछे से) देखभाल करते रहेंगे।

भावार्थ– उस निरंकुश मुगल शासन में सरा तोरा को चुनौती देकर संघर्ष करना, एक बड़ा ही जोखिम भरा कार्य था। इसलिये यह निर्णय लिया गया कि दिल्ली से

लगभग २०० किलोमीटर दूर शाहजहाँपुर बुड़िया में रहकर अपनी गतिविधियाँ संचालित की जायें और गुप्त रूप से दिल्ली के सुन्दरसाथ की भी देखभाल की जाये। दिल्ली में कुछ सुन्दरसाथ को छोड़ने का कारण यह भी था कि मुगल शासन की सारी जानकारी मिलती रहे।

महामत कहें ऐ साथ जी, याद करो धनी तुम।
उतरी मेहर हक से, जगाओ आपनी आतम।।५८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! तारतम ज्ञान के प्रकाश में अपनी आत्मा को जाग्रत कीजिये और अपने उस प्राणेश्वर अक्षरातीत को याद कीजिये, जिनकी कृपा पल-पल बरस रही है।

प्रकरण ।।३४।। चौपाई ।।१६१४।।

लक्ष्मीदास पर हांसी

इन समय सूरत से, आया लक्ष्मीदास।

रूपा बाई को लेइ के, बेटी जमुना खास।।१।।

जब श्रीजी दिल्ली में थे, उस समय सूरत से लक्ष्मीदास जी आए। उस समय उनके साथ उनकी पत्नी रूपा बाई तथा बेटी यमुना भी विशेष थीं।

और भाई नारायण दास, और गोविन्द जी दास।

रामबाई को लेइ के, दिल राज चरन की आस।।२।।

उनके साथ उनके भाई नारायण दास और गोविन्द दास जी थे, साथ में गोविन्द दास जी की पत्नी राम बाई भी थीं। ये सभी सुन्दरसाथ अपने हृदय में श्री राज जी के चरणों की सेवा की भावना लेकर आए थे।

और सभा चंद छत्री, भागवती हरीराम।

केतक दिन संग रहे, पीछे किया माया में बिसराम।।३।।

सभा चन्द्र क्षत्रिय, भागवती, और हरी राम कुछ दिनों तक दिल्ली में श्रीजी के साथ रहे। बाद में घर लौट गये और माया में लिप्त हो गये।

लछमीदास के घर मिने, उपली दृष्ट भई जोर।

राज दीदार देवहीं, कछु न दिल में खोर।।४।।

लक्ष्मी दास जी के घर में चमत्कारिक लीला का प्रभाव बढ़ गया। वहाँ धाम धनी प्रत्यक्ष दर्शन देने लगे, जिससे लक्ष्मी दास के दिल में किसी तरह विश्वास की कमी नहीं रह गयी।

भावार्थ– अन्तर्दृष्टि आत्मा और परब्रह्म के प्रेम और आनन्द से सम्बन्धित है। किन्तु, उपली या बाह्य दृष्टि

उस चमत्कारिक लीला को कहते हैं, जिससे थोड़े समय के लिये चमत्कार दिखायी देता है, किन्तु उससे आत्मा को न तो कोई आनन्द मिलता है और न मन में शान्ति मिलती है। इससे ज्ञान के द्वारा उत्पन्न विश्वास और परिपक्व हो जाता है, किन्तु यदि तारतम ज्ञान का प्रकाश नहीं होता है तो इन चमत्कारिक लीलाओं के प्रति आकर्षण, आध्यात्मिक पतन का कारण भी बन जाता है।

नित आरोगन आवहीं, आवत बड़ा आवेस।
तिस वास्ते माया का, कछु न रह्या लवलेस।।५।।

श्री राज जी लक्ष्मी दास जी के घर पर प्रतिदिन भोजन करने आने लगे। उनमें श्री राज जी का आवेश आने लगा। इसलिये उनके ऊपर मायावी विकारों का कोई प्रभाव नहीं रह गया।

और राज के दिल में, हांसी करने का काम।

तिस वास्ते बातां करें, वायदा किया इस ठाम।।६।।

श्री राज जी के दिल में हँसी की लीला करने की इच्छा हुई। इसलिये वे लक्ष्मी दास जी से बातें करने लगे और वायदा किया कि।

आज से सकुमार बाई, आवें आठमें दिन।

तब राज बड़ो आदर कियो, कहे बैठाओ जोड़े सैयन।।७।।

आज के आठवें दिन औरंगजेब की आत्मा सकुमार बाई तुम्हारे तन से जाग्रत होगी। यह बात लक्ष्मी दास जी ने श्रीजी को बतायी कि धाम धनी ने साक्षात् प्रकट होकर मुझसे कहा है कि आज से आठवें दिन औरंगजेब की आत्मा तुम्हारे तन से जाग्रत हो जायेगी। तब श्रीजी ने यह बात सुनकर लक्ष्मी दास जी का बहुत आदर किया

और सुन्दरसाथ से कहा कि इनको मेरी बराबरी में आसन दो।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में श्री प्राणनाथ जी को श्री राज जी कहकर सम्बोधित किया गया है। श्री महामति जी के धाम हृदय में श्री राज जी का आवेश ही, उनकी पहचान दिलाने के लिये, लक्ष्मी दास जी को श्री राज जी के रूप में दर्शन देता था।

जब सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के तन से आड़िका लीला होती थी, तो व्रज–रास की याद दिलाने के लिये राज जी कृष्ण रूप में दर्शन देते थे। किन्तु अब औरंगज़ेब की आत्मा की जागनी के प्रसंग में श्री राज जी का आवेश मात्र श्री राज जी के रूप में दर्शन देगा, श्री कृष्ण जी के रूप में नहीं।

ऐ श्री राज की कृपा, काहू ऊपर होइ।

सो मेरे आगे होइ, ऐह काम करे सोइ।।८।।

श्री राज जी की कृपा तो किसी के तन के ऊपर भी हो सकती है। मेरी यही इच्छा है कि, श्री राज जी की कृपा से, जो भी औरंगज़ेब की जागनी का कार्य करे वह आगे-आगे चले, मैं उसके पीछे-पीछे चलने को तैयार हूँ।

जो मेरे आगे होइ, या बैठे मेरे जोड़।

जो श्री देवचन्द्र जी सिर पर हैं, तो करों नही चित मोड़।।९।।

जागनी कार्य में मेरे सिर पर सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी का वरद हस्त है। इसलिये यदि कोई भी मुझसे आगे होकर चले, या मेरे बराबर में बैठे, तो मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं है। मैं उसे सहयोग देने में अपना चित्त पीछे नहीं करूंगा।

नाहीं तो मेरा पीछा, कोई जिन छोड़ो तुम।

ऐह प्रकास देख के, जगाओ अपनी आतम।।१०।।

अन्यथा कोई भी सुन्दरसाथ जागनी कार्य में मेरे पीछे चलना बन्द न करे। धाम धनी ने मेरे तन से तारतम वाणी का जो अवतरण किया है, उसके उजाले में अपनी आत्मा को जाग्रत करें।

तब कह्या लखमीदास ने, मुझ से आगा ना होए।

पर जोड़े तुमारे बैठूंगा, सकुमार जगाऊं सोए।।११।।

तब लक्ष्मी दास जी ने कहा– मैं आपके आगे तो नहीं चल सकता, लेकिन आपकी बराबरी में बैठ सकता हूँ। सकुमार की आत्मा को अवश्य जगाऊँगा।

दिन दो तीन जोड़े बेठा, फेर आड़े आई सरम।

स्याम भीम ताना मारते, तब हुआ दिल नरम।।१२।।

दो–तीन दिन लक्ष्मी दास श्रीजी के बराबर के आसन पर बैठे रहे। श्याम भाई और भीम भाई, श्रीजी को प्रणाम करते समय, लक्ष्मी दास जी को व्यंग्यपूर्वक धाम धनी कहकर प्रणाम किया करते थे, जिससे उन्हें लज्ज्ञा महसूस हुयी और उनका दिल कोमल हो गया अर्थात् आवेश आने का अहंकार बहुत कम हो गया।

जब आठ दिन पूरे भये, श्री राजें दिया दीदार।

तब इनने अरज करी, करो पूरा परवरदिगार।।१३।।

जब आठवाँ दिन आ गया तो श्री राज जी ने पुनः दर्शन दिया। तब लक्ष्मी दास जी ने उनसे प्रार्थना की कि आपने मुझसे औरंगज़ेब को जगाने के लिए जो वचन

दिया था, उसे पूरा कीजिए।

तब राज हाथ से जुदे हुये, तब हांसी हुई इत।
ए तो नही मुकरर, बखत रोज क्यामत।।१४।।

यह सुनते ही श्री राज जी अदृश्य हो गये। सुन्दरसाथ के द्वारा औरंगज़ेब की जागनी के बारे में पूछने पर मौन धारण किए हुए लक्ष्मी दास जी का सिर नीचा हो गया। कियामत के समय में (पाँचवे दिन की लीला में) जागनी की सारी शोभा श्री महामति जी को है। वह किसी अन्य तन से नहीं हो सकती थी।

भावार्थ– हँसी की इस लीला के द्वारा धाम धनी ने सुन्दरसाथ के लिये बहुत बड़ी शिक्षा दी है कि तारतम वाणी का कथन परम सत्य है। उसके विपरीत यदि कोई भी विद्वान, सन्त, परमहंस, गादीपति, यहाँ तक कि

साक्षात् मैं भी कहूँ, उसको सच नहीं मानना। धाम धनी ने कलश की वाणी में पहले ही कहा है–

इन्द्रावती ने हुं अगे संगे, इन्द्रावती मारूं अंग।
जे अंग सोंपे इन्द्रावती ने, तेने प्रेमे रमाडुं रंग।।
सुख दऊं सुख लऊं, सुखमां ते जगवुं साथ।
इन्द्रावती ने उपमा, में दीधी मारे हाथ।।

क. गु. १२/६६,६८

कलश की वाणी से स्पष्ट है कि धाम धनी ने अपनी सारी शोभा श्री इन्द्रावती जी को दे रखी है।

तारतम वाणी में कही हुई यह बात, कि जागनी की सारी शोभा महामति जी को है, सत्य सिद्ध करने के लिये उन्होंने लक्ष्मी दास जी को प्रत्यक्ष दर्शन देकर अपनी कही हुई बात को झूठा सिद्ध कर दिया। अब बीतक के इस घटनाक्रम को पढ़कर सुन्दरसाथ को अपनी

अन्तरात्मा से पूछना चाहिए कि हम तारतम वाणी को पहली प्राथमिकता दें या व्यक्ति विशेष के प्रति व्यक्तिगत आस्था को।

फेर विचार करके, दिल्ली से चले जब।

साहजहानपुर बूड़िए, आये पहुंचे तब।।१५।।

अब श्रीजी ने दिल्ली से कुछ दूर रहने का निर्णय कर लिया था, इसलिये दिल्ली से चलकर वे शाहजहाँपुर बूड़िये पहुँचे।

तहां आजूज माजूज नें, बड़ा जो किया सोर।

मरगी पड़ी इन समें, आई थी इत जोर।।१६।।

वहाँ मृत्यु ने अपना ताण्डव नृत्य करना शुरू कर दिया। उस नगर में चारों ओर मिर्गी की बीमारी का भयंकर

प्रकोप फैल गया।

इन समें बूड़िए में, पकड़ा नागजी को।

मलकल मौत झलूविया, तब मारा तिनका मोंह।।१७।।

इस समय बूड़िया में नागजी भाई को भी मिर्गी की बीमारी ने पकड़ लिया। उनके शिर पर प्रत्यक्ष मौत मँडराने लगी थी। तब धाम धनी ने उन्हें मृत्यु के पंजे से छुड़ाया।

श्री धाम दिखाइ के, दिया अपना जोस।

तब काल को मारिया, हो गया फरामोस।।१८।।

श्रीजी ने उन्हें परमधाम की अनुभूति कराकर , उनके अन्दर अपना जोश डाला, इससे मृत्यु की शक्ति समाप्त हो गयी और वह वापस लौट गयी।

इत सिरदार क्षत्री रहे, तिन करी ऊपर की पहिचान।

सेवा करी तिन माफक, कछु न आया हीसे कान।।१९।।

बूड़िया नगर के प्रधान एक क्षत्रिय थे। उन्होंने श्रीजी को बाह्य रूप से ही पहचाना और उसी के अनुसार सेवा की। परिणामस्वरूप, उन्हें कोई आत्मिक लाभ नहीं हो सका।

इहां से निरमलदास को, और जने जो चार।

खड़कारी राजा पास, भेजे कर विचार।।२०।।

यहाँ से श्रीजी ने निर्मल दास को चार सुन्दरसाथ के साथ खड़कारी के राजा के पास इस आशा से भेजा कि सम्भवतः उसमें कोई परमधाम का अँकुर हो।

तहां जाए के देखिया, तो ए जागा नाहीं जोग।

दिन दस एक रहके, फेर आये मिले संजोग।।२१।।

वहाँ जाकर सुन्दरसाथ ने यह अनुभव किया कि इसमें आत्म–जाग्रति के कोई लक्षण नहीं थे और यह स्थान भी धार्मिक वातावरण से रहित था। इसलिये वे पाँचों सुन्दरसाथ, लगभग ११ (ग्यारह) दिन वहाँ रहकर, पुनः बूड़िये में वापस आए।

तब विचार करके, जों सिर पर थे सुकन।

सो सोभा दई महंमद को, पहिचान करे मोमिन।।२२।।

अब श्रीजी ने सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के उन वचनों का विचार किया, जिसमें उन्होंने कहा था कि सकुण्डल और सकुमार की जागनी की शोभा तुम्हें है। तुम्हारे स्वरूप की वास्तविक पहचान ब्रह्मसृष्टियाँ ही करेंगी।

इन भांत सब्द फेर के, किये जब तैयार।

तब भीम लालदास को कह्या, देओ पैगाम परवरदिगार।।२३।।

इस बात को ध्यान में रखकर बाईस (२२) प्रश्नों वाले पत्र को फारसी लिपि में लिखवाया गया। तब भीम भाई एवं लाल दास जी को वह पत्र देकर श्रीजी ने कहा कि यह परब्रह्म का सन्देश (खुदाई पैगाम) है। इसे औरंगज़ेब तक पहुँचा देना।

दोनों तैयार होए के, सिर चढ़ाया हुकम।

चले बूड़िए सहर से, आये पहुंचे दिल्ली हम।।२४।।

श्री लालदास जी कहते हैं कि मैं और भीम भाई दोनों ही दिल्ली चलने के लिये तैयार हो गये और हमने श्रीजी के इस आदेश को शिरोधार्य किया, तथा औरंगज़ेब को सन्देश देने के लिये बूड़िये शहर से दिल्ली आ पहुँचे।

पीछे ते जबराईलें, दिया जब इलम।

ए पैगाम जो भेजिया, पर होवेगा नहीं काम।।२५।।

पीछे से धनी के जोश जिबरील ने श्री महामति जी को संदेश दिया कि औरंगज़ेब के पास इस समय जो संदेश भेजा जा रहा है, उसका अभी उचित समय नहीं आया है। इस कार्य में सफलता नहीं मिलेगी।

भावार्थ– श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में जो जागनी लीला चल रही है, उसमें श्री मिहिरराज जी का जीव, श्री इन्द्रावती जी की आत्मा, तथा पाँचों शक्तियों सहित धाम धनी की लीला की अलग-अलग भूमिका है। तारतम ज्ञान का रस पाकर श्री मिहिरराज जी का जीव आत्मिक भावना में डूब गया है। वह अपने को परमधाम की आत्मा मानता है। वह धनी से ऐक्य भाव स्थापित कर जागनी लीला के विभिन्न कार्य करता है। कभी वह जयराम

कंसारा को जाग्रत होने के लिये फटकारता है, तो कभी जसवन्त सिंह और खड़कारी के राजा को जगाने का प्रयास करता है।

श्री इन्द्रावती जी की आत्मा दृष्टा होकर इस जागनी लीला को देख रही है। अक्षरातीत, श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में कूटस्थ होकर विद्यमान हैं। वे आवश्यकता पड़ने पर वाणी का अवतरण करते हैं या अलौकिक लीलायें करते हैं। शेष समय में संसार की बाह्य दृष्टि से अदृश्य रहते हैं। वस्तुतः वही श्री प्राणनाथ जी, श्रीजी या श्री राज जी हैं। न तो वे जयराम भाई को फटकार लगाते हैं और न ही जसवन्त सिंह व खड़कारी राजा के पास अपने सन्देश वाहक भेजते हैं। यह कार्य श्री मिहिरराज जी के जीव के द्वारा सम्पादित किया जा रहा है। अक्षरातीत तो सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ हैं। उनकी इच्छा

मात्र से असंख्यों लोकों का पल भर में लय और सृजन हो सकता है।

छोटे-छोटे माया के जीव रूपी राजाओं को जगाने का असफल प्रयास अक्षरातीत का नहीं है, बल्कि श्री मिहिरराज जी के जीव का है। वे तो जागनी की सारी लीला कुछ पलों में भी पूर्ण कर सकते हैं, किन्तु प्रकृति की मर्यादा के लिये वे ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि ऐसा कर देने पर चमत्कार के कारण सारा आध्यात्मिक ढाँचा ही ध्वस्त हो जायेगा। इसलिये अपने ही बनाये हुए इस जगत के विधि-विधान को नष्ट नहीं कर सकते। परिणामतः उन्हे गुप्त रूप से ही सारी लीला करनी है। इसलिये जब वे देखते हैं कि भीम भाई और लालदास जी सन्देश लेकर औरंगजेब के पास जा रहे हैं, तो श्री मिहिरराज जी के जीव को अन्तःप्रेरणा करके उन्हें वापस

बुला लेते हैं।

इतना अवश्य है कि जो श्री मिहिरराज जी के चरणों में प्रणाम करता है, वह अक्षरातीत के चरणों में प्रणाम किया माना जाता है, और जो श्री मिहिरराज जी के बाह्य तन को अपमानित करता है या निंदा करता है, उसे परब्रह्म की निंदा का पाप लगता है, क्योंकि धाम धनी ने उस तन को अपनी शोभा दे रखी है। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी में कहा गया है–

जाको दिल जिन भांत सों, तासों मिले तिन विध।
मन चाह्या स्वरूप होय के, कारज किये सब सिध।।

खुलासा १३/९४

पीछे से कान जी भाई को, श्री राजें भेजा जब।
पेठे दिल्ली में बराबर, हकीकत ल्याया तब।।२६।।

पीछे से कानजी भाई को श्रीजी ने भीम भाई और लालदास जी को वापस लौटा लाने के लिये भेजा। कानजी भाई दिल्ली में जाकर भीम भाई और लालदास जी से मिले तथा श्रीजी का सन्देश उनको सुना दिया कि।

तुमको पैगाम देने का, हुकम हुआ मनसूक।
ए तुमको न मानेगा, पड़ेगी इनसे चूक।।२७।।

आपको औरंगज़ेब तक श्रीजी का जो सन्देश पहुँचाने का आदेश था, वह रद्द किया जाता है। अभी सन्देश देने का उचित समय नहीं है। इस समय औरंगज़ेब सन्देश (पैगाम) को स्वीकार नहीं करेगा, बदले में हानि की सम्भावना अधिक है।

हमको उत देओ, आये के करें विचार।

जैसा लाग देखेंगे, तैसा करें करार।।२८।।

श्रीजी ने कहा है कि हमें पहले वहाँ आने दो। आकर, जैसी परिस्थिति होगी उसी के अनुसार विचार किया जाएगा कि क्या निर्णय लेना है, और तब उसके अनुसार कार्य किया जायगा।

हरिद्वार प्रसंग

मास एक इत रहे, फेर चले हरद्वार।

आये हरद्वार में, ताको कहों विस्तार।।२९।।

एक माह श्रीजी शाहजहाँपुर बूड़िये में सुन्दरसाथ सहित ठहरे। उसके पश्चात् वहाँ से हरिद्वार के लिये चल पड़े। हरिद्वार में जो कुछ घटनाक्रम हुआ, उसका मैं विस्तारपूर्वक वर्णन करता हूँ।

साका सालवाहन का, सोरह से पूरन।

बैठा साका विजयाभिनन्द का, तब फिराये फिरके सैयन।।३०।।

उस समय शालिवाहन शाका के १६०० वर्ष व्यतीत हो चुके थे। तब सुन्दरसाथ के समक्ष सभी सम्प्रदायों के आचार्यों ने विजयाभिनन्द बुद्ध जी के शाका के प्रारम्भ होने की घोषणा की।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "फिरना" शब्द का अर्थ घोषित करना या प्रचारित करना होता है। सभी सम्प्रदायों के आचार्यों ने श्रीजी से शास्त्रार्थ में हार कर यह स्वीकार किया कि आप ही विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप हैं और उस दिन से उनके नाम की शाका (संवत्) भी प्रारम्भ की।

विक्रमाजीत के राज से, बरस सत्रह सै पैंतीस।

तब जिद्द हुई फिरकान सों, बुद्ध ईस्वरों के ईस।।३१।।

विक्रमादित्य के नाम से प्रचलित होने वाले विक्रम सम्वत् के जब १७३५ वर्ष व्यतीत हो गये थे, उस समय नारायण तथा सदाशिव आदि ईश्वरों के भी ईश्वर श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक श्री प्राणनाथ जी का सभी सम्प्रदाय के आचार्यों के साथ हरिद्वार में शास्त्रार्थ हुआ था।

हरद्वार के मेला में, चार सम्प्रदाय ताहिं।

षट दर्शन भी तहां मिले, दस नाम सन्यासी जाहिं।।३२।।

हरिद्वार में १२ वर्ष के पश्चात् लगने वाले महाकुम्भ के मेले में वैष्णव के चारों सम्प्रदाय , तथा षट् दर्शनों के आचार्यों, तथा दस नाम सन्यासियों के साथ श्री

प्राणनाथ जी का शास्त्रार्थ हुआ।

भावार्थ– मृत्यु को जीतकर अमरत्व पाने की इच्छा तो प्रायः प्रत्येक मनुष्य में होती ही है। स्वाभाविक रूप से हर प्राणी मृत्यु से दूर रहना चाहता है। यह पौराणिक मान्यता है कि देवों और दानवों ने अमृत को पाने के लिये समुद्र का मन्थन किया। फलस्वरूप १४ रत्न निकले, जिसको पाने के लिये देवों और दैत्यों में विवाद खड़ा हो गया। देवगण उस अमृत कलश को लेकर भागते रहे और दैत्य उनका पीछा करते रहे। हरिद्वार, प्रयाग, उज्ज्ैन, और नासिक में अमृत कलश से अमृत की कुछ बूँदे ढुलक गयीं।

अमृत पीकर अमरत्व को पाने वाले देवताओं की भाँति आज का मानव यही सोचता है कि यदि मुझे भी उस अमृत का रसपान करने के लिये मिल जाये, तो मैं भी

अमर हो जाऊँगा। इसी आकाँक्षा को पूरा करने के लिये वह हरिद्वार में गंगा में स्नान करता है, तो प्रयाग में त्रिवेणी के संगम पर, उज्जैन और नासिक में क्षिप्रा तथा गोदावरी में।

प्रश्न यह है कि क्या अमृत की वे बूँदें इन स्थानों पर उपलब्ध हैं? लाखों वर्ष पहले समुद्र-मन्थन की घटना हुई है। बहती हुई नदियों में अमृत के कण क्या अभी तक सुरक्षित हैं? जब राम के वाणों से रावण की नाभि का अमृत सूख सकता है, तो इन स्थानों पर अभी तक अमृत कण भला कैसे सुरक्षित रह सकते हैं? क्या कुम्भ पर्व पर इन स्थानों में नदियों में स्नान मात्र से ही अमृत की प्राप्ति हो सकती है। मोक्ष की कामना से एकत्रित होने वाले लाखों लोगों को उस अमृत का कितना अंश प्राप्त हो सकता है? अमृत पान कर अमर होने वाले देवता तो

स्वर्ग में ही रहते हैं। जब महाप्रलय में स्वर्ग , वैकुण्ठ सहित सभी लोकों का विनाश होता है, तो उस अमृत की सार्थकता ही क्या है?

यजुर्वेद का कथन है कि विद्या से अमृत प्राप्त होता है। वस्तुतः अमृत–पान की कथा आलंकारिक है। परा विद्या या ब्रह्मविद्या के ग्रहण से सात्विक स्वभाव वाले देवताओं ने ब्रह्मतत्व को प्राप्त करके ब्रह्मानन्द को प्राप्त किया। यही अमृत है और यही मोक्ष या मुक्ति है। इसके विपरीत तमोगुणी दानव सुरापान में ही व्यस्त रहे, क्योंकि ब्रह्मविद्या की प्राप्ति न होने से उन्हें ब्रह्म का साक्षात्कार न हो सका था। परिणामस्वरूप, वे जन्म–मरण के चक्र में भटकते रहे।

इसी अमृत–पान की स्मृति में मनाये जाने वाले महाकुम्भ के मेले में श्री प्राणनाथ जी सुन्दरसाथ सहित

हरिद्वार पधारे। वहाँ पर उस मेले में चारों वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) तथा चारों आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास) के अनुयायी एकत्रित हुये थे।

चार वर्ण चार आश्रम, सबे भये एक ठौर।
सबने देख श्री राज को, कीनी दिल सक और।।३३।।

उन्होंने श्रीजी को जब अपने से अलग वेशभूषा में देखा, तो उनके मन में संशय बैठ गया और कहने लगे कि–

भावार्थ– उस समय पूरे देश का हिन्दू जनमानस औरंगज़ेब के अत्याचार से त्रस्त था। काशी, मथुरा, आदि अनेक धार्मिक स्थानों पर मुगल सेना ने आक्रमण कर त्राहि–त्राहि मचा दी थी। इसलिये हरिद्वार में भी उन आचार्यों को यह भय था कि कहीं ये औरंगज़ेब से मिले हुए तो नहीं हैं, क्योंकि श्रीजी की वेशभूषा उस समय

आचार्यों एवं सन्यासियों की प्रचलित वेशभूषा (भगवे वस्त्र, कण्ठी, तिलक) से अलग थी।

कह्या तुम्हारी राह तो नई है, हम सुनी न देखी कांह।
झारो दीजे आपनों, तुम हम मारग में नांह।।३४।।

ऐसा प्रतीत होता है कि आपका कोई नया पन्थ है, जिसके बारे में हमने न तो कहीं सुना है और न ही कहीं देखा है। इसलिये आप कृपा करके अपना परिचय दीजिये। हमें ऐसा लगता है कि आप सनातन हिन्दू धर्म के प्रचलित सम्प्रदायों में से नहीं हैं।

तब कहे बचन श्री राज नें, तुम प्राचीन पुरातम।
सो कहो हमें समझाय कें, अपनो इष्ट जो धरम।।३५।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने कहा- हे आचार्य जनों! आपके

मत प्राचीन काल से चले आ रहे हैं। आप कृपा करके अपने सम्प्रदाय के इष्ट तथा दार्शनिक सिद्धान्तों को समझाकर बताने का कष्ट करें।

क्रोध अहम को छोड़के, चितसों कहो समझाय।
कहो यथार्थ वेद ले, सोई ग्रहें हम आय।।३६।।

आप अपने क्रोध एवं अहंकार को छोड़कर शुद्ध मन से हमें समझाने का कष्ट करें। आप अपने कथनों की पुष्टि में वेदादि धर्मग्रन्थों की भी साक्षी दीजिए, जिससे हम संतुष्ट होकर उसे ग्रहण कर सकें।

अपनो दृढ़ाव जो होय, सो हमको देओ बताय।
तापर सक हमें होवहीं, सो तुम देओ मिटाय।।३७।।

आपका जो स्थिर सिद्धान्त है, उसे आप हमें बताने का

कष्ट करें। हमारे मन में जो भी संशय हैं, उसे आप मिटा दीजिये, तो हम आपके सिद्धान्त को ग्रहण कर लेंगे।

रामानुज सम्प्रदाय

तब बोले रामानुज, सब सास्त्र वेद मत इष्ट।

कहों अगोचर पन्थ सही, देखो अपनी दृष्ट।।३८।।

तब सबसे पहले रामानुज मत के आचार्य ने कहा कि हम अपनी साम्प्रदायिक मान्यता के अनुसार शास्त्र, वेद, मत, इष्ट, आदि के विषय में बता रहे हैं। यदि आप अपनी यथार्थ दृष्टि से देखें, तो हमारा पन्थ इन्द्रियातीत ही कहा जा सकता है।

द्रष्टव्य– वैष्णव सम्प्रदाय की चार शाखायें हैं। रामानुज, निम्बार्क, माध्व, और विष्णु स्वामी नामक चार आचार्यों द्वारा ये चार शाखाएँ स्थापित की गयी हैं। रामानुज

आचार्य का जन्म वि.सं. १०७३ में दक्षिण भारत के पेरूम्बूर नामक स्थान में हुआ था। इनके पिता का नाम केशवाचार्य तथा माता का नाम कान्तिमति था। रामानुज से पूर्व तीन और आचार्य शठकोप, मुनि वाहन, तथा यामनाचार्य भी हो चुके हैं। रामानन्द पन्थ इसी की एक शाखा रूप कहा जा सकता है।

हमारे गुरू धर्म में, कही नाम माला उर माहिं।
अच्युत गोत्र अत सुचि परम, प्रभु अनन्त साखा जो आहिं।।३९।।

गुरू–शिष्य परम्परा से हमारे मत (धर्म) में परमात्मा के नाम की माला को हृदय में धारण करने का विधान है। हमारा गोत्र अच्युत है, जो परम पवित्र है। अनन्त परमात्मा ही हमारी शाखा है।

भावार्थ– गोत्र का तात्पर्य किसी कुल या वंश के नाम से

है, जो उसके किसी मूल पुरूष के नाम के अनुसार होता है। आध्यात्मिक जगत में विभिन्न सम्प्रदायों के भिन्न – भिन्न गोत्र होने का भाव यह है कि उस सम्प्रदाय के अनुयायियों के मूल पुरूष का नाम उस गोत्र के नाम से सम्बन्धित है।

आध्यात्मिक ज्ञान की विभिन्न धाराओं को शाखा के नाम से कहा गया है। प्रायः शाखा का नामकरण उस ज्ञान धारा के प्रवर्तक के नाम से होता है। उदाहरणार्थ, विष्णु स्वामी के सम्प्रदाय में शाखा का नाम त्रिपुरारी शाखा है, क्योंकि इस मत को चलाने वाले शिव जी माने गये हैं। आध्यात्मिक साधनाओं की पद्धतियों तथा उसकी उपलब्धियों को १०८ भागों में बाँटा गया है , जिन्हे श्री निजानन्द सम्प्रदाय में १०८ पक्ष की शाखा कहते हैं। वेदों की भिन्न–भिन्न ऋषियों द्वारा की गयी

व्याख्याएँ, उनके नाम से शाखा ग्रन्थों के रूप में जानी जाती हैं।

सुकल हमारो वरण है, सब वर्णों से बाहिर।
साम वेद द्वार श्रवना, मुक्त समीपी जाहिर।।४०।।

हमारा वर्ण शुक्ल है, जो अन्य सभी वर्णों से परे है। हम सामवेद का श्रवण करते हैं तथा सामीप्य मुक्ति को मानते हैं।

भावार्थ– यह सम्पूर्ण जगत त्रिगुणात्मक प्रकृति से बना है। जीव की प्रवृत्ति इन तीनों गुणों पर आधारित है। तीनों गुणों के आधार पर चार प्रकार के वर्णों की कल्पना की गयी है। शुक्ल (श्वेत), लाल, पीला, तथा काला। विशुद्ध सत्व गुण युक्त प्रवृति को शुक्ल वर्ण के अन्दर माना गया है। इसमें ही ब्राह्मणत्व निहित है। रजोगुण और सतोगुण

मिश्रित प्रवृति रक्त (लाल) वर्ण की मानी गयी है। इसमें क्षत्रियत्व स्थित होता है। रजोगुण और तमोगुण की मिश्रित प्रवृत्ति पीत (पीला) वर्ण मानी गयी है। इसमें वैश्यत्व स्थित होता है। मात्र तमोगुण की प्रवृत्ति काले वर्ण में मानी गयी है। यह शूद्रत्व का द्योतक है।

यद्यपि सभी सम्प्रदाय वाले प्रायः अपने को वेदानुयायी कहते हैं, किन्तु उनके अधिकतर सिद्धान्त वेदों के मूल सिद्धान्त के विपरीत होते हैं। अपने आराध्य के लोक में उनके पास रहना "सामीप्य मुक्ति" है। उन्ही के समान रूप धारण करके लीला विहार करना "सारूप्य मुक्ति" है। उनके लोक में निवास करना "सालोक्य मुक्ति", और उनमें लीन हो जाना "सायुज्य मुक्ति" कहलाती है।

मठ बैकुण्ठ है हमारो, सुमेर प्रदखिणा जान।

बीज मंत्र निराकार है, नभ सम ब्रह्म मान।।४१।।

हमारा मठ वैकुण्ठ है। सुमेरू पर्वत की प्रदक्षिणा हमारे लिये अति पवित्र कार्य है। बीज मन्त्र निराकार है तथा आकाश के समान हम ब्रह्म को सर्वत्र व्यापक मानते हैं।

भावार्थ– वह स्थान जिसमें किसी महन्त के अधीन बहुत से साधु रहते हों, वह मठ कहलाता है। इसके अतिरिक्त अपने आराध्य का वह स्थान भी जहाँ भक्त को अपने देह त्याग के बाद मुक्ति मिलती हो, वह मठ कहा जाता है, जैसे वैष्णवों का मठ वैकुण्ठ है।

प्रदक्षिणा का तात्पर्य किसी पवित्र स्थान के चारों ओर पैदल चलकर परिक्रमा करने से होता है, किन्तु इसका गुह्य अर्थ अपने आराध्य से अपना तारतम्य बनाये रखने के लिए होता है।

मनन किया जाने वाला कथन ही मन्त्र है। अपने आराध्य के गुणों का वर्णन करते हुए स्वयं को आत्म-कल्याण की भावना से उससे संयुक्त करने पर शब्दों का जो समूह होता है, वह ही मन्त्र कहा जाता है। वस्तुतः वेदों की ऋचाओं को ही मन्त्र कहा जाता है, किन्तु आजकल भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के स्वनिर्मित भिन्न - भिन्न मन्त्र हैं।

पद्मनाभ जो क्षेत्र है, मेल कोटा सुख बिलास।

लक्ष्मी इष्ट अत गोप है, उजल अति प्रकास।।४२।।

हमारा क्षेत्र पद्मनाभि अर्थात् विष्णु भगवान का रूप है। सुख-विलास का स्थान मेलकोटा है। अति उज्ज्वल प्रकाशमयी लक्ष्मी जी हमारी इष्ट हैं, जिनका ज्ञान अति गोपनीय है।

भावार्थ– धर्मप्राण–पवित्र भारतवर्ष को अनेक भागों में बाँट दिया गया है, जिसे क्षेत्र के नाम से पुकारा जाता है। जैसे बलिया जिला भृगु क्षेत्र में, बक्सर जिला हरिहर क्षेत्र में, और सीतापुर जिला नैमिषारण्य क्षेत्र में माना जाता है। दक्षिण भारत का केरल प्रदेश परशुराम क्षेत्र के अन्तर्गत माना जाता है। प्रायः ये क्षेत्र ज्ञान के केन्द्र माने जाते हैं।

जिस स्थान पर कभी भक्त और भगवान, या प्रियतम परब्रह्म और उनकी आत्माओं की आन्तरिक प्रेम लीला का विलास हुआ रहता है, वह स्थान सुख–विलास का स्थान कहा जाता है।

जिस प्रकार शक्तिमान में शक्ति, अग्नि में दाहकता, और सूर्य के प्रकाश में ज्योति का अस्तित्व माना जाता है , उसी प्रकार अध्यात्म में परमात्मा या देवता को पुरूष

रूप में मानकर उनकी आराधना की जाती है, तथा उनके आनन्द अंग को स्त्री रूप में अपना इष्ट मानकर पूजा की जाती है, जैसे- वैष्णवों की इष्ट लक्ष्मी, रूक्मिणी हैं, तो शैवों की इष्ट पार्वती, एवं ज्ञान पक्ष वाले सावित्री को अपना इष्ट मानते हैं।

ये पद्धत लक्ष्मी से चली, से पद्धत बिन भ्रम आए।
चौदह भवन पर बैकुण्ठ है, सोइ अखाड़ा सुहाए।।४३।।

हमारे सम्प्रदाय की पद्धति को लक्ष्मी जी ने प्रचलित किया है। इस पद्धति को ग्रहण किये बिना मन में भ्रम बना ही रहता है। चौदह लोकों में सर्वोपरि जो वैकुण्ठ है, वही हमारा अखाड़ा अर्थात् मूल निवास है।

रंगनाथ हम धाम है, नदी काबेरी तीरथ।

देवी है कमला सही, सारे सबे अरथ।।४४।।

हमारा धाम रंगनाथ है। कावेरी नदी को हम अपना तीर्थ मानते हैं। कमला अर्थात् लक्ष्मी जी हमारी देवी हैं, जिनसे हमारी सारी कामनायें पूरी होती हैं।

भावार्थ– अपने आराध्य का निवास स्थान धाम कहलाता है, जैसे– जीव सृष्टि का धाम वैकुण्ठ, ईश्वरीय सृष्टि का धाम योगमाया का ब्रह्माण्ड, और ब्रह्मसृष्टि का धाम अनादि परमधाम है।

"जनाः यैः तरन्ति तानि तीर्थानि।"

मनुष्य जिन साधनों से पवित्र होकर इस भवसागर से पार हो जाते हैं, उन्हे तीर्थ कहते हैं।

अपने आराध्य देव की अर्धांगिनी ही देवी कही जाती हैं, जिनकी भक्ति से सभी कष्ट दूर हो जाते हैं, तथा लौकिक

सुख की प्राप्ति होती है।

श्री नारायण हैं देवता, विस्णु आचारज होय।
गायत्री है अलख निरंजन, कही पद्धति रामानुज सोय।।४५।।

हमारे देवता नारायण हैं। विष्णु भगवान आचार्य हैं। अलख निरन्जन गायत्री मंत्र को हम मानते हैं। रामानुज मत के आचार्यों ने इस प्रकार अपनी पद्धति बताई।

भावार्थ– देवता का अर्थ दिव्य गुण वाला होता है। कहीं–कहीं पर अपने आराध्य को ही देवता मान लिया जाता है, क्योंकि भक्त या प्रेमी के लिये उसका आराध्य ही एक मात्र सर्वगुण सम्पन्न एवं अलौकिक प्रतीत होता है। कहीं पर अपने आराध्य के घनिष्ठ सम्बन्धी या किसी अलौकिक गुणों वाले दिव्य पुरूष को भी देवता मान लिया जाता है। वेदों के मन्त्रों में वर्णित विषय को ही

देवता कहा गया है।

आचार्यः कस्मात्? आचारं ग्राहयति। अर्थात् आचरण को ग्रहण कराने वाला आचार्य कहा जाता है। किसी सम्प्रदाय का आचार्य वही व्यक्ति माना जाता है, जिसने सर्वप्रथम उस सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का अनुकरण समाज को कराया हो।

गायत्री छंद में लिखे गये मन्त्रों को गायत्री मन्त्र कहते हैं। यजुर्वेद के ३६/३ में गायत्री छंद में २४ अक्षरों वाला गायत्री मन्त्र लिखा है। इसमें एकमात्र सच्चिदानन्द परब्रह्म की ही आराधना की गयी है। इस गायत्री मन्त्र को ब्रह्म गायत्री मन्त्र कहते हैं। इसकी देखा-देखी अन्य सम्प्रदाय वालों ने अपने-अपने गायत्री मन्त्र कल्पित कर ली है, जैसे- राम गायत्री, हनुमान गायत्री, शिव गायत्री। मिलावट की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गयी है कि सांई बाबा के

नाम से भी गायत्री मन्त्र बन गया है।

यद्यपि रामानुज पन्थ के अनुयायी प्रायः साकारवादी होते हैं, किन्तु अलख निरंजन गायत्री मन्त्र निराकारवादी मान्यता से सम्बन्धित है।

सुन पद्धत श्री राज नें, किये प्रस्न जो एह।

कह्यो पंथ अगाध जो, तुम धन्य रामानुज तेह।।४६।।

रामानुज मत की पद्धति सुनकर श्रीजी ने यह प्रश्न किया कि आप लोग धन्य हैं। आपका मत तो अगाध (अनन्त) महिमा वाला है।

जग माहें की कही तुम, कहे वेद जगत को नास।

पिण्ड ब्रह्माण्ड दोऊ प्रलय में, तो कहां जीव को वास।।४७।।

आपने अपना धाम, मूल घर, मठ, तीर्थ, आदि सब कुछ इस नश्वर जगत में ही कहा है। वेद कहते हैं कि महाप्रलय में संसार का लय हो जाता है। जब महाप्रलय में न शरीर रहेगा और न ही यह संसार रहेगा, तो आप कृपा करके बताइये कि तब जीव का अस्तित्व कहाँ रहेगा?

नीमानुज सम्प्रदाय

तब बोले नीमानुज, वेद इस्ट जप धाम।

अपनी सम्प्रदाय सब कहों, मूल ग्रहो बिसराम।।४८।।

तब निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्यों ने कहा- हम अपने सम्प्रदाय का वेद, इष्ट, जप, धाम, आदि सारी बातें कहेंगे। यदि आप हमारी इन मूल बातों को ग्रहण करेंगे, तो आपको अखण्ड शान्ति मिलेगी।

भावार्थ– आचार्य निम्बार्क का जन्म दक्षिण भारत के वैदुर्य पत्तन नामक नगर में वि.सं. १२१९ के लगभग हुआ था। इनके पिता का नाम अरूण और माता का नाम जयन्ती देवी था। इनका पूर्व नाम नियमानन्द था, जो कालान्तर में निम्बार्क आचार्य के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

एक बार इनके यहाँ सूर्यास्त के समय एक महात्मा अतिथि के रूप में आये, जो सूर्यास्त के बाद भोजन नहीं करते थे। नियमानन्द जी ने अपने योगबल से नीम के पेड़ के ऊपर चमकते हुये सूर्य का दर्शन कराकर उन महात्मा जी को भोजन कराया था। नीम के ऊपर अर्क (सूर्य) को दिखलाने के कारण इनका नाम निम्बार्क आचार्य पड़ गया।

मथुरा है साला सही, धर्म क्षेत्र गोकुल पुनीत।
सुख विलास वृन्दावन में, धाम द्वारका नीत।।४९।।

मथुरा हमारी शाला है। पवित्र गोकुल हमारा धर्म क्षेत्र है। सुख-विलास का स्थान नित्य वृन्दावन है। द्वारिकापुरी को हम धाम मानते हैं।

भावार्थ- शाला का शाब्दिक अर्थ स्थान या घर होता है, किन्तु अध्यात्म में अपने आराध्य के मूल धाम की लीला और ऐश्वर्य जहाँ प्रतिबिम्बित रूप में या अंश रूप में विराजमान हो, वह स्थान शाला कहलाता है। यदि आराध्य ने अपने भक्तों या अपनी प्रियाओं के साथ किसी स्थान पर कुछ समय ठहर कर कोई विशेष लीला की हो, तो वह स्थान भी शाला कहलाता है।

नदी गोमती तीरथ, इष्ट रूकमणी होय।

यजुर्वेद हर नाम की माला, टारे छल सब सोय।।५०।।

गोमती नदी को हम अपना तीर्थ मानते हैं। रूक्मिणी हमारी इष्ट हैं। यजुर्वेद हमारा वेद है। हरिनाम की माला को हम हृदय में धारण करते हैं, जिससे माया के सारे पर्दे दूर होते हैं।

वृन्दादेवी मुक्त सरूपी, प्रणव मंत्र ऊंकार।

चली सम्प्रदा सनकादिक से, प्राचीन मत सार।।५१।।

वृन्दा को हम देवी मानते हैं। मुक्ति हमारी सारूप्य है। प्रणव मन्त्र "ॐ" का हम जप करते हैं। हमारा यह सम्प्रदाय सनकादिक से चला हुआ है और अत्यन्त प्राचीन है।

गोपाल वंस है गायत्री, गोपाल मंत्र है जान।

नारद हैं आचारज, ऋषि दुर्वासा मान।।५२।।

हमारे लिये गोपाल मन्त्र की विशेषता है। गोपाल वंश गायत्री मन्त्र को हम अपना गायत्री मन्त्र मानते हैं। हमारे आचार्य नारद जी तथा दुर्वासा जी ऋषि हैं।

भावार्थ– वैदिक मान्यता में वेद–मन्त्रों के रहस्यों का साक्षात्कार करने वाला ही ऋषि कहलाता है, किन्तु साम्प्रदायिक परम्परा में ऋषि वह व्यक्ति है , जो उस सम्प्रदाय के मन्त्रों का सम्पादन करे तथा उस सम्प्रदाय के मूल सिद्धान्तों को प्रामाणिक रूप से प्रकाश में लाये।

विस्णु को बाहन सही, गरूड देवता सोए।

रक्षा करें सदा सन्त की, ए पद्धत नीमानुज होए।।५३।।

विष्णु के वाहन गरूड़ हमारे देवता हैं, जो हमेशा सन्तों

की रक्षा करते हैं। यह हमारे निम्बार्क सम्प्रदाय की पद्धति है।

तब किये प्रस्न श्री राज ने, तुममें नहीं विचार।
कछु कही जगत के परे की, कछु जगत मंझार।।५४।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने उनसे प्रश्न किया कि हे आचार्य जी! आपने इस बात का विचार नहीं किया कि आप कुछ बातें इस जगत के अन्दर की कह रहे हैं, तो कुछ बातें जगत के परे की कह रहे हैं।

भावार्थ- निम्बार्क मत के आचार्यों ने अखण्ड गोकुल और अखण्ड वृन्दावन का तो वर्णन बताया, किन्तु अपना धाम द्वारिकापुरी को बता दिया जो कि नश्वर जगत के अन्दर है।

इसी प्रकार राधा-कृष्ण को अपना आराध्य मानकर

भी, लक्ष्मी जी के अवतार रूक्मिणी को इष्ट मानना बहुत बड़ी भूल है।

विष्णु श्याम सम्प्रदाय

सार असार को एक किये, मिले नही मत वेद।
तुम बिन सतगुरू क्या करो, छूटे नही भव खेद।।५५।।

आपने तो सार-असार (सत्य और झूठ) को एक ही में मिला दिया। आपका मत वेद के अनुकूल नहीं है। बिना सद्गुरू के, न तो आप सत्य की प्राप्ति कर सकते हैं और न संसार का यह चक्र समाप्त हो सकता है।

भावार्थ- तारतम ज्ञान से अनभिज्ञ निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्यों को श्री कृष्ण जी की त्रिधा लीला का यथार्थ ज्ञान नहीं है, इसलिये उन्हें रास बिहारी श्री राधा-कृष्ण तथा वैकुण्ठ विहारी द्वारिकाधीश श्री कृष्ण-रूक्मिणी में

भेद प्रतीत नहीं होता।

विष्णु स्वामी के द्वारा चलाया गया सम्प्रदाय, उन्हीं के नाम से प्रचलित है। जिस प्रकार रामानुज सम्प्रदाय से रामानन्दी वैष्णव पन्थ निकला, उसी प्रकार विष्णु स्वामी सम्प्रदाय में वल्लभाचार्य जी ने वल्लभ सम्प्रदाय चलाया। विष्णु स्वामी सम्प्रदाय के आराध्य विष्णु भगवान हैं, जबकि वल्लभ सम्प्रदाय के आराध्य श्री कृष्ण हैं जिसमें श्री कृष्ण के बाल एवं किशोर स्वरूप की प्रधानता है।

तब विस्णु स्याम अचारज ने, अपनी सम्प्रदा सब।
इस्ट उपासना वेद जाप, कहों सुनो तुम अब।।५६।।

तब विष्णु स्वामी सम्प्रदाय के आचार्य ने कहा कि अब मैं अपने सम्प्रदाय के इष्ट, उपासना, वेद, जप, आदि के विषय में कह रहा हूँ, इसे आप सुनिये।

विस्णु कांची है धर्मसाला, स्वेत गंगा चक्र तीरथ सोए।

सुख विलास इन्द्र दमन मध, जहां निरमल सब होए।।५७।।

हमारे धर्म (पन्थ) की शाला का नाम है विष्णु कांची। श्वेत गंगा चक्र हमारा तीर्थ है। इन्द्रियों के दमन से जब हृदय में निर्मलता आती है, तो उसे हम सुख-विलास का स्थान मानते हैं।

मारकण्ड है तीरथ, परसोतम पुर धाम।

इस्ट लछमी है सही, जगन्नाथ सेवन उपासना नाम।।५८।।

मार्कण्डेय क्षेत्र हमारा तीर्थ स्थान है। पुरूषोत्तम पुर अर्थात् वैकुण्ठ हमारा धाम है। लक्ष्मी जी हमारी इष्ट हैं। भगवान जगन्नाथ की सेवा ही हमारी उपासना है।

भावार्थ- मार्कण्डेय ऋषि ने जिस सरोवर या पुष्पभद्रा नदी के तट पर साधना की थी, वह क्षेत्र ही विष्णु स्वामी

सम्प्रदाय का तीर्थ कहा जाता है। जगत् का स्वामी ही जगन्नाथ है।

अथर्व वेद हमरो सही, माला नाम की सार।
अच्युत है गोत्र पुन, त्रिपुरारी साखा धार।।५९।।

हमारा वेद अथर्व है। भगवान विष्णु के नाम की माला जपते हैं। गोत्र अच्युत है, तथा शाखा का नाम त्रिपुरारी है।

भावार्थ- अच्युत का अर्थ होता है, जो कभी च्युत अर्थात् निष्फल न हो। यह शब्द प्रायः भगवान विष्णु के लिये प्रयोग किया जाता है। विष्णु भगवान को गोत्र कहने का आशय यह है कि उनके उपासक उन्हीं के अंग रूप हैं।

सुकल वर्ण तुम जानियो, तुलसी मंत्र है जाप।

जल बिंब ऋषि हैं देवता, वामदेव आचारज थाप।।६०।।

हमारा वर्ण शुक्ल वर्ण है। हम तुलसी मन्त्र का जप करते हैं। जलबिम्ब ऋषि देवता हैं, तथा वामदेव ऋषि आचार्य हैं।

ब्रह्म गायत्री जानियो, महादेव से सम्प्रदा आए।

सायुज मुक्त हमने ग्रही, ए विस्णु स्याम सम्प्रदा सुहाए।।६१।।

हम ब्रह्म गायत्री मन्त्र (ॐ भूः भुवः स्वः) को मानते हैं। हमारे सम्प्रदाय का प्रारम्भ महादेव अर्थात् शंकर जी से होता है। हम सायुज्य मुक्ति को मानते हैं। यह हमारे विष्णु श्याम सम्प्रदाय की पद्धति है।

भावार्थ– वैष्णव के चारों सम्प्रदायों की यह मान्यता है कि उनकी शाखायें लक्ष्मी जी , सनकादिक, शिव, एवं

ब्रह्मा जी ने चलायीं, किन्तु यह बात शत्–प्रतिशत् मिथ्या है। कलियुग से पूर्व सत्युग, त्रेता, द्वापर में कोई भी सम्प्रदाय नहीं था। क्या शिव पुराण और लिंग पुराण को मानने वाले यह स्वीकार कर सकते हैं कि शंकर जी विष्णु भगवान के भक्त हैं? भगवान शिव, विष्णु, और ब्रह्मा– तीनों ही सृष्टि के प्रारम्भिक योगी हैं, और यह कदापि सम्भव नहीं है कि ये एक अविनाशी ब्रह्म को छोड़कर किसी और की भक्ति करें। इसी पक्षपातपूर्ण मानसिकता के कारण साम्प्रदायिक कट्टरता का जन्म होता है, जो समाज के लिये हानिकारक होता है।

तुम तो ऐ जग में कही, ए कहे वचन श्री राज।
वेद पुराण जग नास कहे, रहे कहां सम्प्रदा विराज।।६२।।

तब धाम धनी ने कहा कि आचार्य जनों! आपकी सारी

बातें तो इस नश्वर जगत की हैं। वेद और पुराणों में तो कहा गया है कि महाप्रलय में जगत का लय हो जाता है, ऐसी स्थिति में आपके सम्प्रदाय के इन सिद्धान्तों का अस्तित्व कहाँ रहेगा?

भावार्थ– श्रीजी के कहने का आशय यह है कि विष्णु स्वामी सम्प्रदाय का चिन्तन पृथ्वी और वैकुण्ठ के आगे कुछ भी नहीं है। अखण्ड के बारे में तो ये कुछ जानते ही नहीं हैं।

माध्व सम्प्रदाय

माध्वाचार्य का जन्म वि.सं. १२९६ मे दक्षिण भारत के उड़ीपी नगर में हुआ था। उनके पिता का नाम मध्यगेह और माता का नाम वेदवती था।

तब कही माधवाचारज ने, हमारी सम्प्रदा जोए।

गोत्र क्षेत्र इस्ट धाम वेद, सुनों आप तुम सोए।।६३।।

माध्व सम्प्रदाय के आचार्य ने कहा कि हे प्राणनाथ जी! आप हमारे सम्प्रदाय के गोत्र, क्षेत्र, इष्ट, धाम, वेद, आदि के विषय में सुनने का कष्ट करें।

पुरी अवन्तिका साला सही, नीमखार क्षेत्र होए।

सुख विलास है अंगपात मध, बद्रीनाथ धाम है सोए।।६४।।

अवन्तिकापुरी अर्थात् उज्जैन हमारी शाला है। नैमिषारण्य क्षेत्र है। तप द्वारा अंगों को तपाने में ही हम सुख का विलास मानते हैं। बद्रीनाथ हमारा धाम है।

भावार्थ– नैमिषारण्य वह क्षेत्र है, जहाँ अति प्राचीन काल में दधीचि ऋषि ने तप किया था। यहाँ पर ज्ञान के बड़े-बड़े सत्र चला करते थे, जिसमें हजारों ऋषि-मुनि

भाग लिया करते थे। यह नैमिषारण्य क्षेत्र उत्तर प्रदेश के सीतापुर जिले में पड़ता है।

इस मत में साधना के द्वारा शरीर के अंगों को जर्जर करना ही सुख-विलास का साधन है।

अलखा नदी तीरथ हमारो, विध उपासना जान।
सावित्री तो इस्ट है, आद वेद ऋग मान।।६५।।

अलकनन्दा नदी हमारा तीर्थ है। हम ब्रह्मा जी की उपासना करते हैं। सावित्री (सरस्वती) इष्ट हैं। प्रथम वेद ऋग्वेद को हम अपना वेद मानते हैं।

भावार्थ- हिमालय के अनेक स्थानों से शुद्ध जल की धारायें निकलकर नदियों का रूप ले लेती हैं। गोमुख से निकलने वाली जल धारा को गंगा कहते हैं तथा बद्रीनाथ से निकलने वाली जल धारा अलकनन्दा कहलाती है।

इस प्रकरण की ६६वीं चौपाई में ब्रह्मा जी को आचार्य माना गया है, किन्तु ६५वीं चौपाई में जो ब्रह्मा जी की उपासना की बात कही गयी है। यह ब्रह्मा जी को परमात्मा मानकर की जाने वाली उपासना नहीं है, बल्कि गुरू भाव की उपासना है, क्योंकि ६७वीं चौपाई में ब्रह्मा से ही इस सम्प्रदाय की उत्पत्ति कही गयी है। यदि ६५वीं चौपाई के तीसरे चरण में सावित्री (सरस्वती) को इष्ट नहीं माना गया होता, तो दूसरे चरण का यह अर्थ होता कि यही हमारी उपासना-पद्धति है।

हरनाम की माला उर में, विस्णु गायत्री है गान।
विस्णु हँस रूप मंत्र है, ब्रह्मा आचारज प्रमान।।६६।।

विष्णु भगवान की नाम रूपी माला को हम अपने हृदय में धारण करते हैं। विष्णु गायत्री का गायन करते हैं।

भगवान विष्णु के द्वारा धारण किया हुआ हंस रूप का मन्त्र है। ब्रह्मा जी को आचार्य मानते हैं।

हंस ऋषि पुनि देवता, ब्रह्मा तें सम्प्रदा आए।
सालोक है मुक्त हमारी, ए पद्धत माधवी सुहाए।।६७।।

हंस ऋषि हमारे देवता हैं। इस सम्प्रदाय का प्रकटन ब्रह्मा जी से हुआ है। सालोक्य अर्थात् वैकुण्ठ को प्राप्त करना ही हमारी मुक्ति है।

तब कहे प्रस्न श्री राज नें, ए तो कही जग माहिं।
कहै वेद जग भरम है, तब मुक्त कही सो काहिं।।६८।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने प्रश्न किया कि आपने तो सारी बातें इस नश्वर जगत की कही हैं। वेदों में कहा गया है कि यह संसार भ्रम रूप है, स्वप्नवत् प्रपञ्चमयी है अर्थात्

महाप्रलय में लय को प्राप्त हो जाने वाला है, तब आपके द्वारा कही हुयी मुक्ति कहाँ होगी? इसका उत्तर दीजिये।

प्रकरण ।।३५।। चौपाई ।।१६८२।।

अथ दस नाम सन्यासी की विधि

प्रथम मन्या

फेर दस नाम सन्यास जो, बोले इस्ट प्रमाण।
मन्या सात मठ चार हमारे, परम हंस मत ए जान।।१।।

पुनः दस नाम सन्यास मत के अनुयायी कहने लगे कि हम आपको अपने इष्ट आदि प्रमाणों के साथ अपनी पद्धति के बारे में बताएंगे। आप हमारे मत को परमहंस मत के रूप में जानिए। हमारे मत में सात मन्याएं हैं और चार मठ हैं।

प्रथम मठ मन्या पच्छिम की, मठ सारदा तहां आये।
परम द्वारका क्षेत्र है, सुदेचर देवता सुहाये।।२।।

पश्चिम दिशा में शारदा मठ है। इस प्रकार पहली मन्या पश्चिम दिशा की है। इसके अन्तर्गत परम पवित्र द्वारिकापुरी क्षेत्र है। सुदेचर देवता हैं।

भद्रकाली देवी सही, गंगा गोमती तीरथ।

अनुभूति सरूपाचारज, सारे सब अरथ।।३।।

भद्रकाली देवी हैं। हम गंगा और गोमती को अपना तीर्थ मानते हैं। हमारे आचार्य अनुभूति-स्वरूपाचार्य जी हैं। इनसे (देवी, तीर्थ से) हमारी सारी कामनाओं की पूर्ति हो जाया करती है।

कीटवार है सम्प्रदा, तीरथ आश्रम दो नाम।

ब्रह्मा विस्णु हैं देवता, ए पच्छिम मन्या विश्राम।।४।।

हमारे सम्प्रदाय का नाम है कीटवार। इस मन्या से जुड़े

हुए सन्यासियों के नाम के साथ तीर्थ और आश्रम शब्द जुड़ा रहता है। ब्रह्मा तथा विष्णु भगवान हमारे देवता हैं। यह पश्चिम मन्या की पद्धति है।

भावार्थ– प्राणियों पर सर्वदा अपनी कृपादृष्टि की भावना से, कीट आदि जीव–जन्तु के प्रति जिन्होंने अपनी हिंसक भावनाओं का परित्याग कर दिया हो, उन्हीं का सम्प्रदाय कीटवार सम्प्रदाय कहलाता है।

जो "तत्वमसि" आदि लक्षणों को आत्मसात् कर चुका हो, तथा ईड़ा, पिंगला, एवं सुषुम्ना के संगम में ध्यान द्वारा स्नान करता हो, वह सन्यासी "तीर्थ" कहा जाता है।

आशा के मजबूत बन्धनों से रहित तथा आश्रम में स्थित होने से आने–जाने के कार्य से मुक्त सन्यासी "आश्रम" नाम से जाना जाता है।

द्वितीय मन्या

दूसरी मन्या है पूरब की, वन आरण्य दो नाम।
भोग गोवर्धन है मठ, भोगवार सम्प्रदा ठाम।।५।।

दूसरी मन्या पूर्व दिशा की है। इस मन्या के सन्यासी वन और अरण्य नाम से जाने जाते हैं। इस मन्या का मठ गोवर्धन मठ है तथा सम्प्रदाय का नाम भोगवार है।

भावार्थ– सम्पूर्ण कामनाओं के बन्धन से मुक्त हुआ जो सन्यासी वन में या अत्यन्त सुन्दर झरने के पास निवास करता है, वह "वन" नाम से जाना जाता है।

जो इस सम्पूर्ण जगत को छोड़कर परब्रह्म के नित्य आनन्द में मग्न अरण्य (जंगल) में रहता है, वह "अरण्य" नाम से कहा जाता है। यतियों का वह सम्प्रदाय, जिसने लौकिक भोगों का परित्याग कर दिया हो, भोगवार कहलाता है।

पद परसोतम क्षेत्र है, देवता है जगन्नाथ।

बलभद्र और पद्माचारज, बिंबलाई देवी साथ।।६।।

पुरूषोत्तम अर्थात् जगन्नाथ पुरी ही हमारा क्षेत्र है। भगवान जगन्नाथ ही देवता हैं। पद्माचार्य और उनके शिष्य बलभद्राचार्य हमारे आचार्य हैं। विमला अर्थात् लक्ष्मी जी देवी हैं।

भावार्थ– यद्यपि जगन्नाथ का अर्थ जगत् का स्वामी होता है और इसे विष्णु या आदिनारायण के लिये भी प्रयोग किया जाता है, किन्तु जिस पुरी में गोवर्धन मठ है, वहाँ भगवान विष्णु के अवतार श्री कृष्ण को ही जगन्नाथ माना जाता है। पौराणिकों के चार धामों में पुरी में स्थित जगन्नाथ मन्दिर भी आता है। इसमें श्री कृष्ण, बलराम, एवं सुभद्रा की मूर्तियाँ हैं।

रोहिन्या महोदधि तीरथ, ए पूरब मन्या होए।

इन आचारजन के मुखें, सुनी श्री राज नें सोए।।७।।

रोहिणी नदी और महासागर (समुद्र) हमारे तीर्थ हैं। श्री प्राणनाथ जी ने पूर्व मन्या के आचार्यों से इस प्रकार की पद्धति सुनी।

तृतीय मन्या

त्रीजी मन्या जो कही, सुनियो ताकी विध।

जोसी मठ आनन्दवार सम्प्रदा, पद बद्रीनाथ आश्रम है सिध।।८।।

हे साथ जी! जो तीसरी मन्या कही जाती है, उसकी यथार्थता सुनिये। इसका मठ जोशी मठ है। सम्प्रदाय का नाम आनन्दवार है। सिद्ध पुरूषों से सेवित बद्रीनाथ हमारा क्षेत्र है।

भावार्थ- योगियों का वह सम्प्रदाय, जिसने जीवों के

आनन्द का परित्याग कर दिया हो, आनन्दवार कहलाता है।

इस प्रकरण की चौपाई ६,८,१२,१५,१८ में "पद" शब्द का प्रयोग किया गया है। वस्तुतः पद का अर्थ इन चौपाइयों में स्थान के भाव से लिया गया है। यद्यपि इन चौपाइयों में क्षेत्र शब्द पहले से दिया होता है, फिर भी पद का आशय उस क्षेत्र शब्द में विलीन हो जाता है।

नर नारायण हैं देवता, गिरि परबत सागर नाम।
नरा टोटका आचारज, पुन्यागिरि देवी ठाम।।९।।

नर और नारायण ऋषि ही हमारे देवता हैं। इस मन्या के सन्यासियों के नाम के साथ गिरि, पर्वत, और सागर नाम जोड़ते हैं। नरातोटक जी आचार्य हैं तथा पूर्णगिरि देवी हैं।

भावार्थ– जो श्रेष्ठ पर्वतों में रहता हैं, नित्य ही गीता के अध्ययन में लगा रहता है, तथा गम्भीर और स्थिर बुद्धि वाला है, वह "गिरि" नाम से पुकारा जाता है।

पर्वतों की तलहटी में रहते हुए, जो परिपक्व ज्ञान को धारण करता है, तथा सार और असार तत्व को जानता है, वह "पर्वत" नाम से जाना जाता है।

जिसमें आध्यात्मिक तत्वज्ञान का गहरा सागर हो, जो ज्ञान रूपी रत्नों का संचय करने वाला हो, तथा धर्म की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता हो, वह "सागर" नाम से जाना जाता है।

मुक्त क्षेत्र अलखा नदी तीरथ, ए त्रीजी मन्या जान।

इन आचारजों ने कह्यो, आपनो सबे प्रमान।।१०।।

हमारी मुक्ति का स्थान अलकनन्दा नदी है और यही

हमारा तीर्थ भी है। यह तीसरी मन्या की यथार्थता है। इस मन्या के आचार्यों ने इस तरह अपनी पद्धति बताई।

चतुर्थ मन्या

चौथी मन्या दक्षिण दिसकी, तीन नाम हैं ताहिं।

पुरी भारती सरस्वती, श्रृंगेरी मठ है जाहिं।।११।।

चौथी मन्या दक्षिण दिशा की है। इसके सन्यासियों के नाम के साथ पुरी, भारती, और सरस्वती शब्द जोड़े जाते हैं। मठ का नाम श्रृंगेरी मठ है।

भावार्थ– जो स्वरों के ज्ञान में तल्लीन हो, हमेशा शुद्ध स्वर में बोलने वाला हो, पण्डितों में श्रेष्ठ हो, तथा संसार रूपी सागर की असारता को नष्ट करने वाला हो, वह "सरस्वती" नाम से कहा जाता है।

जो सम्पूर्ण लौकिक कर्मों के भार को छोड़कर, विद्या के

भार से भरपूर होने से सांसारिक दुखों के भार को नहीं जानता है, वह "भारती" नाम से जाना जाता है।

जो ज्ञान तत्व से भरपूर होकर ब्रह्म के उस पूर्ण तत्व वाले पद में स्थित हो जाता है, तथा जगत से परे स्थित उस ब्रह्म के स्वरूप में नित्य ही तल्लीन रहता है, वह "पुरी" नाम से पुकारा जाता है।

भूर्वार है सम्प्रदा, पद रामेश्वर क्षेत्र सत।
संकर आद बाराह देवता, कामिक्षा देवी गत।।१२।।

हमारे सम्प्रदाय का नाम भूरिवार है। रामेश्वर का स्थान हमारा पवित्र क्षेत्र है। शंकर और आदि बाराह हमारे देवता हैं। कामाख्या हमारी देवी हैं।

भावार्थ– यतियों का वह सम्प्रदाय, जिसने शरीरधारी प्राणियों के स्वर्ण सदृश चमकते हुए बाह्य सौन्दर्य के मोह

का परित्याग कर दिया हो, "भूरिवार" कहलाता है।

श्रृंगी ऋषि पृथ्वी धराचारज, टोक भद्रा तीरथ सार।
चौथी मन्या को मतो, सुन्यो सबे विचार।।१३।।

श्रृंगी ऋषि हमारे ऋषि हैं, पृथ्वी धराचार्य आचार्य हैं। तुंगभद्रा नदी हमारी तीर्थ है। श्रीजी ने चौथी मन्या की इस पद्धति को अच्छी तरह से सुना।

पंचम मन्या

पांचमी मन्या जो कही, उरधा ताको नाम।
ताको मठ सुमेर है, कासी सम्प्रदा ठाम।।१४।।

पाँचवी मन्या जो कही जाती है, उसका नाम ऊर्ध्वा है। इसका मठ सुमेरू पर्वत है और सम्प्रदाय की उत्पत्ति का

स्थान काशी नगरी है।

भावार्थ– पाँचवी, छठी, और सातवीं मन्या उन विरक्त सन्यासियों की बनाई हुई है, जो किसी लौकिक बन्धन में नहीं बन्धना चाहते थे। इनका कोई मठ या लौकिक तीर्थ आदि नहीं हैं। यदि इन्होंने किसी लौकिक स्थान का नाम लिया है, तो ज्ञान दृष्टि से ही है, बाह्य दृष्टि से नहीं, और उसका गुह्य भाव अध्यात्मपरक है।

जैसे– सुमेरू पर्वत को मठ कहना। सुमेरू तो पर्वत है, सुमेरू पर्वत को मठ नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार परात्म को भी मठ कहा गया है। मानसरोवर तथा त्रिकुटी को तीर्थ कहना भी यही तथ्य दर्शा रहा है।

ज्ञान पद कैलास क्षेत्र है, निरंजन देवता सत।

माया को देवी कही, ईस्वर आचारज मत।।१५।।

ज्ञान का स्थान कैलाश क्षेत्र है। निराकार–निरञ्जन ही सत्य हैं और वही हमारे देवता हैं। अनादि माया हमारी देवी हैं। ईश्वर (आदिनारायण, प्रणव, शबल ब्रह्म, हिरण्यगर्भ) ही हमारे आचार्य हैं।

भावार्थ– इस मन्या के सन्यासियों ने कैलाश को अपने ज्ञान का स्थान इसलिये माना है, क्योंकि भगवान शिव उनके ज्ञान गुरू हैं।

ब्रह्म को निर्गुण , निराकार, निरञ्जन मानने वाले सन्यासियों ने अपना देवता माना है, इसलिये उसके आगे सत् शब्द का प्रयोग किया गया है। सृष्टि के प्रारम्भ में ईश्वर (आदिनारायण) से ही सारा ज्ञान सृष्टि में फैलता है, इसलिए उन्हें अपना आचार्य माना है।

मान सरोवर तीरथ, पांचमी मन्या सोए।

सुनके आप चित विचारिया, ए जग बाहिर नहीं कोए।।१६।।

मानसरोवर हमारा भी तीर्थ है। यह हमारी पाँचवी मन्या की मान्यता है। श्रीजी ने इन मन्याओं की पद्धति को सुनकर अपने मन में सोचा कि इन पाँचों मन्याओं में से कोई भी इस जगत् से परे की बात कर ही नहीं रहा।

षष्ठम मन्या

छठी मन्या की विध जो, बरनत अगम अगाध।

दसों नाम का इष्ट है, भजत बोहोत विध साध।।१७।।

छठी मन्या की मान्यताओं को सभी अगम और अगाध कहते हैं। इस मन्या की मान्यतायें सम्पूर्ण दस नाम सन्यास मत में प्रचलित हैं और सभी साधु -सन्त (सन्यासी गण) उन्हें अनेक रूपों में याद करते हैं।

भावार्थ– छठी मन्या में बहुत उच्च स्तर के आध्यात्मिक ज्ञान की बातें कही गयी हैं, जैसे– आत्मा, परात्म, त्रिकुटी में ध्यान। ये सभी तथ्य आध्यात्मिक ज्ञान के सर्वोच्च शिखर पर ही प्राप्त होते हैं। इस ज्ञानधारा को अंश रूप में दस नाम सन्यास मत के सभी सन्यासी अवश्य मानते हैं। इस चौपाई के तीसरे चरण का यही आशय है।

मन्या छठी कही आतमा, मठ परआतम मूल।

सत सन्तुष्ट कही सम्प्रदा, जोग पद परे न भूल।।१८।।

छठी मन्या का नाम है आत्मा तथा इसका मठ मूल परात्म है। सम्प्रदाय का नाम सत् सन्तुष्ट है। योग का त्रिगुणातीत (अलौकिक मार्ग) है, जिसे छोड़ा नहीं जाता।

भावार्थ– इस चौपाई में यह बात दर्शायी गयी है कि जो आत्मा के स्वरूप को जानता है, और उसके मूल परात्म

या परब्रह्म को जानता है, वह हमेशा आनन्दित (सन्तुष्ट) रहता है। किन्तु इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चैतन्य योग की प्रकिया को हमेशा बनाए रखना होता है।

इस चौपाई के चौथे चरण में "योग पद" की बात कही गयी है, जबकि पाँचवी मन्या में "ज्ञान पद" की बात कही है, और उसके पूर्व की मन्याओं में पुरूषोतम (जगन्नाथ पुरी), बद्रीनाथ, तथा रामेश्वर को पद कहा गया है, जो कि इस नश्वर जगत के स्थान हैं।

निःसन्देह योग की निर्बीज अवस्था में माला के बन्धनों से छुटकारा मिलता है, और अपनी आत्मा तथा परब्रह्म की पहचान होती है। इसके लिये शुद्ध ज्ञान के साथ चैतन्य समाधि का आश्रय लेना पड़ता है, तभी माया से परे उस परब्रह्म की प्राप्ति सम्भव हो सकती है।

नाभि क्षेत्र परमहंस देवता, मनसा देवी उर आन।

चेतन व्यापी आचारज, त्रिकुटी तीरथ जान।।१९।।

नाभि को हम क्षेत्र मानते हैं। परमहंस अवस्था की प्राप्ति को देवता मानते हैं। अपने हृदय में स्थित अपनी शुद्ध मानसिक शक्ति को हम अपनी देवी मानते हैं। जो चैतन्य परमात्मा सर्वत्र व्यापक है, उसे हम आचार्य मानते हैं। त्रिकुटी को तीर्थ कहते हैं।

भावार्थ– मुण्डक उपनिषद् में नाभि को सभी नाड़ियों का केन्द्र मानकर ॐ का ध्यान करने की बात कही गयी है।

यद्यपि मनसा देवी जरत्कारू ऋषि की पत्नी हैं, किन्तु आजकल उन्हे देवी का रूप देकर उनकी पूजा की जाती है, किन्तु इस चौपाई का प्रसंग मानसिक शक्ति से सम्बन्धित है। यजुर्वेद में, मन को हृदय में प्रतिष्ठित "हृत्

प्रतिष्ठम्" कहा गया है।

जब देवता कोई व्यक्ति विशेष नहीं है, बल्कि परमहंस अवस्था ही देवता है, तो देवी भी कोई व्यक्ति विशेष नहीं होनी चाहिये, बल्कि शुद्ध मानसिक अवस्था ही देवी है।

इस चौपाई में त्रिकुटी में ध्यान प्रक्रिया द्वारा स्नान करने की बात कही गयी है। इड़ा, पिंगला, और सुषुम्ना के मिलन स्थान को त्रिकुटी कहते हैं।

समाधि की उच्चतम अवस्था में जिस चैतन्य, व्यापक स्वरूप वाले आदिनारायण का साक्षात्कार होता है, वही आचार्य माने गये हैं। इस प्रकार यह सम्पूर्ण चौपाई योग साधना से सम्बन्धित है।

सरोवर क्षेत्र है सही, छठी मन्या विधि ऐह।

एह बात है साथ की, लेत आप पर तेह।।२०।।

ध्यान रूपी सरोवर ही क्षेत्र है। यह छठी मन्या की विधि है। जब श्री प्राणनाथ जी ने इस छठी मन्या की पद्धति सुनी, तो उन्होंने अपने मन में सोचा कि इसमें तो सुन्दरसाथ की बात है, किन्तु ये लोग सब कुछ अपने शरीर पर ही घटाये बैठे हैं।

भावार्थ– यद्यपि छठी मन्या वाले मानसरोवर को क्षेत्र कह सकते हैं, किन्तु इसका वास्तविक आशय ध्यान रूपी सरोवर से है, जिसमें डुबकी लगाकर मन पूर्णतया शुद्ध हो जाता है, और ज्ञान तथा प्रेम का प्रकटीकरण होता है।

सप्तम मन्या

अब मन्या सुनो सातमी, जंबू दीप भरत खण्ड माहिं।

ब्रह्मपुत्र सिखा सही, सूत्र साखा ताहिं।।२१।।

हे साथ जी! अब आप सातवीं मन्या के विषय में सुनिये, जो जम्बूदीप में भरतखण्ड के अन्दर है, जिसमें ब्रह्मा जी के मानसिक पुत्र सनकादिक को शिखा तथा संख्यायन ऋषि को सूत्र कहा गया है।

यग्यो पवित्र में सुत्र कह्यो, बरने सत मठ चार।
पच्छिम मठ पूरब द्विती, दो उत्तर दक्षिन सार।।२२।।

यज्ञोपवीत को ही बाह्य रूप से सूत्र कहा जाता है। चार प्रकार के मठों का वर्णन किया गया है– पश्चिम में शारदा मठ, पूर्व में गोवर्धन मठ , उत्तर में जोशी मठ, तथा दक्षिण में श्रृंगेरी मठ।

चार मठ के चार ब्रह्मचारी, आनन्द सरूप चेतन प्रकास।
हंस परमहंस बोध कुटीचर, सप्तमठ मन्या जास।।२३।।

चार मठों के ब्रह्मचारी चार प्रकार के नामों (आनन्द, स्वरूप, चैतन्य, प्रकाश) से जाने जाते हैं तथा सन्यासियों का आध्यात्मिक स्तर चार प्रकार का होता है। कुटीचर, बोध, हंस, और परमहंस– इस प्रकार सात मन्याओं के सात मठों की यह वास्तविकता है।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाई में सन्यासियों की आध्यात्मिक अवस्था के चार स्तर बताये गये हैं–

१. कुटीचर– शिखा–सूत्र का त्याग किये बिना, भगवे वस्त्र और दण्ड–कमण्डल धारण करके, घर से कुछ दूरी पर कुटी बनाकर, वैराग्य दशा में रहने वाले व्यक्ति को कुटीचर कहते हैं।

२. बहुदक– इन्हें सात घरों से भिक्षा माँगकर भोजन करने का विधान है। इन्हें बस्ती में रहने का अधिकार नहीं होता।

३. हंस– अपनी विषय–वासनाओं को त्यागकर अपने आत्म–स्वरूप में स्थित रहने वाले को हंस कहते हैं।

४. परमहंस– त्रिगुणातीत परमात्म दशा को प्राप्त हो जाने को परमहंस अवस्था कहते हैं।

जिस प्रकार चार मठों के सन्यासियों की चार अवस्थायें दर्शायी गयी हैं, उसी प्रकार चार मठों के ब्रह्मचारियों के ये चार स्तर हैं। इन्हें व्यक्ति विशेष का द्योतक नहीं माना जा सकता। क्या एक मठ में एक ही ब्रह्मचारी रहेगा? यदि अतीत काल में चार मठों में केवल चार ब्रह्मचारी हो गये, तो इस समय उनका परिचय श्रीजी को देने की क्या आवश्यकता थी?

संक्षेप में ब्रह्मचर्य के चार स्तरों पर इस प्रकार प्रकाश डाला जा सकता है–

ब्रह्मचर्य के द्वारा शाश्वत् आनन्द की कामना करने वाला

"आनन्द" कहलायेगा।

अखण्ड ब्रह्मचर्य के पालन से जो अपने आत्म-स्वरूप में स्थित होना चाहता है, वह "स्वरूप" कहलायेगा।

जो ब्रह्मचर्य के ब्राह्मी भाव में डूबे रहने के कारण शरीर के मोह से परे हो जाता है, वह "चैतन्य" कहलाता है।

जो ब्रह्मचर्य पालन द्वारा शाश्वत् ज्ञान का प्रकाश पाने का प्रयास कर रहा है, वह "प्रकाश" कहलायेगा।

चार दिशाओं के चारों मठों के वर्णन के साथ पाँचवी एवं छठी मन्या के मठ सुमेरू और परात्म हैं।

इसी प्रकार सात मन्याओं के सात मठों की मान्यता है।

सातों मठ के सन्यासी, बोले सबे विचार।

उपदेस बोध दीक्षा कहे आपनी, सो देखो तौल निरधार।।२४।।

सातों मठ के सन्यासी आपस में विचार कर श्रीजी से कहने लगे कि हम आपको अपने उपदेश–बोध और दीक्षा के सम्बन्ध में कह रहे हैं। आप उसका मूल्यांकन कीजिये।

सातों मन्या के मन्त्र

सात मन्या के सात मंत्र है, मन्या प्रथम पश्चिम सुहायें।
तीरथ आश्रम दो नाम की दीक्षा, सो देखो चित ल्याये।।२५।।

सातों मन्याओं के सात मन्त्र हैं। प्रथम मन्या पश्चिम की है। उस मन्या के– तीर्थ और आश्रम– इन दो नाम वाले सन्यासियों की दीक्षा के मन्त्र आप सावधान होकर सुनिये।

मंत्रः ॐ ह्रीं नीलहंसः सोऽहम् परमहंसः

ॐ सोऽहम् सिद्धान्त भास्करोऽहम्।

स्वदेचर देवता। सोऽहम् ब्रह्मेति।।

अर्थ– अति कल्याणकारी स्वरूप वाला वह परमात्मा है। मैं भी वह ही हूँ। वह सबकी आत्मा है। मैं भी वही हूँ। मैं इस सिद्धान्त को प्रकाशित करने वाला हूँ तथा मैं वही ब्रह्म हूँ। इस मन्त्र के देवता स्वदेचर हैं।

पूरब मन्या को मंत्र है, तारन हमारो जोए।

वन आरन दो नाम की, दीक्षा सुनो अब सोय।।२६।।

पूर्व की मन्या का जो मन्त्र है, वह हमें भवसागर से पार कराने वाला है। वन और अरण्य नाम वाले सन्यासियों की दीक्षा का मन्त्र अब सुनिए।

मंत्रः

ॐ सोऽहम् मठः प्रतीच्यात्सर्वद्दिड मुखेन नमस्ते करोम्यहम्।

जगन्नाथो देवता। सोऽहम् ब्रह्मेति मन्त्रः।।

अर्थ– वह ब्रह्म सम्पूर्ण ज्ञान का केन्द्र है। मैं वही ब्रह्म हूँ। मैं उस ब्रह्म को पश्चिम से तथा अन्य सभी दिशाओं में प्रणाम करता हूँ। मैं वही ब्रह्म हूँ। इस मन्त्र के देवता जगन्नाथ हैं।

उत्तर मन्या के नाम त्रय, गिरि परवत सागर।

तिनकी दीक्षा कहत हों, सुनियो चित आगर।।२७।।

उत्तर मन्या में सन्यासियों के तीन प्रकार के नाम आते हैं– गिरि, पर्वत, तथा सागर। उनकी दीक्षा के मन्त्र मैं कह रहा हूँ, उसे सावधान चित्त से सुनिये।

मंत्रः ॐ सोऽहम् हंसः तत्वमसि अहं ब्रह्मास्मि।

नारायणो देवता। सोऽहम् ब्रह्मेति मन्त्रः।।

अर्थ– वह ब्रह्म माया रहित है। मैं भी वही हूँ। तुम भी वही हो। मैं वही ब्रह्म हूँ। इस मन्त्र के देवता नारायण हैं तथा "मैं ब्रह्म हूँ" यह मन्त्र है।

तीन आचारज दक्षिन मन्या के, पूरी भारती सरस्वती मत।

तिनकी दीक्षा मंत्र जो, सुनो कहत हों सत।।२८।।

दक्षिण मन्या के आचार्य रूप सन्यासियों के तीन नाम हैं– पुरी, भारती, और सरस्वती। उनकी दीक्षा के मन्त्र कहता हूँ, उसे सुनो।

मंत्रः ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्म ॐ क्लीं स्मीति सोऽहं

आत्मा तत्वमसि अहं ब्रह्मास्मि सोऽहम् हंसः।

आदि वाराहो देवता। सोऽहम् ब्रह्मेति मंत्रः।।

अर्थ– वह ब्रह्म सत्, चित, और आनन्द का स्वरूप है। वह शक्तिमान है। वह ब्रह्म मैं ही हूँ। तुम भी वही हो। मैं ब्रह्म हूँ। मैं वह शुद्ध ब्रह्म हूँ। आदि वाराह इसके देवता हैं तथा सोऽहम् ब्रह्म इसका मन्त्र है।

मन्या ऊर्धा पांचमी, मठ सुमेर परवान।

कासी सम्प्रदा ज्ञान पद, तिनकी दीक्षा सुनो जान।।२९।।

पाँचवी मन्या ऊर्ध्वा कही जाती है। मठ सुमेरू पर्वत कहलाता है। सम्प्रदाय की उत्पत्ति का स्थान काशी तथा ज्ञान का मूल स्थान कैलाश है, उसकी दीक्षा सुनिए।

मंत्रः ॐ नीलहंसः परमहंसः सोऽहम् तत्वमसि।
निरंजनो देवता। सोऽहम् ब्रह्मेति मंत्रः।।

अर्थ– वह ब्रह्म कल्याणकारी है एवं सबकी आत्मा का मूल है। मैं वही ब्रह्म हूँ। तुम भी वही हो। इस मन्त्र के देवता निरञ्जन हैं। सोऽहम् ब्रह्म मन्त्र का भाव है।

छठी मन्या आतमा, पर आतम मठ होए।
परमहंस है देवता, तिनकी दीक्षा कहों सोए।।३०।।

छठी मन्या आत्मा है, जिसका मठ परात्म है। परमहंस देवता हैं। उसकी दीक्षा का मन्त्र कहता हूँ।

मंत्रः ॐ सोऽहम् हंसः तत्वमसि पदं, ब्रह्मत्वं पद माया असिपदं।
तत्पदं जीवो ब्रहम्। परमहंसो देवता। सोऽहम् ब्रह्ममेति मंत्रः।।

अर्थ– मैं वही ब्रह्म हूँ। तुम भी वही हो। वह धाम (पद) ब्रह्ममयी है, जबकि माया का स्थान तलवार के समान कष्टमयी है। ब्रह्म के उस धाम को प्राप्त करके जीव ब्रह्मरूप हो जाता है। इस मन्त्र के देवता परमहंस हैं और सोऽहम् ब्रह्म मन्त्र का भाव है।

सातमी मन्या जम्बू दीप में, भरत खण्ड मध आए।
ब्रह्मा पुत्र शिखा सूत्र, तिनकी दीक्षा सुहाए।।३१।।

सातवीं मन्या जम्बू दीप में भरत खण्ड के अन्तर्गत है। ब्रह्मा जी के मानसिक पुत्र सनकादिक उसकी शिखा हैं। सांख्यायन ऋषि सूत्र हैं। उनकी दीक्षा अति उत्तम है।

मंत्रः ऊँ हीं नीलहंसः सोऽहम् परमहंसः।
सच्चिदानन्दो देवता। सोऽहम् ब्रह्मेति मंत्र।।

अर्थ– वह ब्रह्म मंगलमयी है। मैं वही ब्रह्म हूँ। वह ब्रह्म सभी आत्माओं का मूल है। इस मन्त्र के देवता सच्चिदानन्द हैं तथा सोऽहम् ब्रह्म का भाव है।

या भांत सन्यास मत, दीक्षा मंत्र सब बिद्ध।
और द्वादस परमहंस गायत्री, सुनी सतगुरें ताकी सिद्ध।।३२।।

इस प्रकार सद्गुरू श्री प्राणनाथ जी ने सन्यास मत की पद्धति, दीक्षा के मन्त्र, तथा सिद्धि देने वाले बारह परमहंस गायत्री मन्त्रों को सुना।

भावार्थ– अन्य पौराणिक लोगों की तरह दस नाम सन्यासियों ने भी बारह परमहंस गायत्री मन्त्र बना रखे हैं। वस्तुतः मन्त्र बनाने का अधिकार मानव–मात्र को नहीं होता। अपने साम्प्रदायिक विचारों को पुष्ट करने के लिए अलग–अलग प्रकार के गायत्री मन्त्र बनाना पूर्णतया

वेद विरूद्ध है। दीक्षा मन्त्र तो एकमात्र ब्रह्म गायत्री मन्त्र है, जो यर्जुवेद के ३६वें अध्याय के तीसरे मन्त्र में लिखा है।

इसके अतिरिक्त इनके बारह महावाक्य भी हैं, जो इस प्रकार हैं–

१. प्रज्ञानं ब्रह्म्। ए. उ. ३/५/३

– ब्रह्म शुद्ध ज्ञान स्वरूप है।

२. अहम् ब्रह्मास्मि। श. ब्रा. ४/३/२/२१

– मैं ब्रह्म हूँ।

३. तत् त्वमसि। छा. उ. ६/८/७

– वह ब्रह्म तुम हो।

४. अयमात्मा ब्रह्म्। माण्डू. उ. २

– यह आत्मा ब्रह्म है।

५. सर्वम् खल्विदं ब्रह्म्। छा. उ. ३/१४/१

– सम्पूर्ण जगत ब्रह्म है।

६. एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म्। श्वे. ६/११ तथा छा. ६/२/१

– ब्रह्म मात्र एक ही है और उसके समान दूसरा कोई नहीं है।

७. आनन्दो ब्रह्म्। तैत. ३/६

– वह आनन्दमय है।

८. सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म्। तैत. २/२

– ब्रह्म सत्य है, ज्ञान स्वरूप है, और अनन्त है।

९. विज्ञानं आनन्दं ब्रह्म्। बृ. उ. ३/९/८

– ब्रह्म विज्ञान मय है और आनन्दमय है।

१०. आदित्यो ब्रह्म्। छा. ९/३/४

– ब्रह्म सूर्य के समान प्रकाश वाला है।

११. अमृतं अभयमेतद् ब्रह्म्। छा. ९/३/४

– ब्रह्म भय से रहित है।

१२. कं ब्रह्म खं ब्रह्म्। छ. उ. ९/१०/५

– ब्रह्म आनन्दमय है और आकाश के समान व्यापक है।

मात–पिता उधारण कारण, अपने पिंड और प्राण।
पूरब जनम उद्धारवे को, मत सन्यास प्रवान।।३३।।

माता–पिता का उद्धार करने के लिए, अपने शरीर और प्राण की उन्नति, तथा पूर्व जन्म का उद्धार करने के लिए, सन्यास मत को ग्रहण करना श्रेयस्कर है।

भावार्थ– जिस परिवार में कोई ब्रह्मज्ञानी पैदा होता है, तो उसके माता–पिता को भी पूर्ण लाभ प्राप्त होता है, क्योंकि वे उसका पालन–पोषण किये होते हैं और उसे

समय दिये होते हैं। इसके अतिरिक्त ध्यान–साधना से शरीर तेजस्वी हो जाता है तथा जीवनी शक्ति बढ़ने से उसकी आयु भी बढ़ जाती है।

पूर्व जन्म के उद्धार का तात्पर्य यह है कि स्वयं को जन्म–मरण के चक्र से बचाना, किन्तु यह तभी सम्भव है जब यथार्थ में ब्रह्मज्ञानी बना जाये। ज्ञान, भक्ति, विवेक, और वैराग्य से रहित होकर, केवल सन्यास के वस्त्र धारण करने मात्र से कोई लाभ नहीं होता।

इस समय सारे देश में लगभग ७० लाख से अधिक महात्मा हैं, किन्तु सच्चे ज्ञानी, तपस्वी, एवं विरक्त महात्मा १० लाख से अधिक नहीं होंगे। यथार्थ ब्रह्मज्ञानी तो अँगुलियों पर गिने जा सकते हैं। मूर्ति पूजा, बहुदेव पूजा, और अशिक्षा की प्रवृत्ति ही सन्यासी वर्ग को अन्धकार में भटकाने वाली है।

जागृत कुल गुरू चरने बरन्यो, नसे कोट अघपाप।

नारायण की है प्रापती, पारायण सब जग आप।।३४।।

यह सन्यास मत कुल को जाग्रत करने वाला है, अर्थात् जिस परिवार में कोई सन्यासी होता है, उस परिवार के लोग इस बात से सावचेत रहते हैं कि हमसे कोई बुरा कार्य न हो। गुरू के चरणों में कहने मात्र से करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं। इस मत को स्वीकार करके यथार्थ आचरण करने पर उस आदिनारायण की प्राप्ति होती है, जिसकी सत्ता सम्पूर्ण जगत में व्यापक हो रही है।

विशेष– "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभासुभम्" गीता के कथनानुसार तो शुभ–अशुभ कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। गुरू के चरणों में कह देने पर प्रायश्चित की भावना के पायों से बचा जाता है, किन्तु पूर्व पापों का फल तो भोगना ही पड़ता है।

पच्छिम मन्या के तीरथ आश्रम, पूरब मन्या वन आरन।

उत्तर मन्या गिरि परवत सागर, सबके तरन तारन।।३५।।

पश्चिम मन्या के तीर्थ और आश्रम, पूर्व मन्या के वन और अरण्य, उत्तर मन्या के गिरि, पर्वत, और सागर नाम वाले सन्यासी, अपने ज्ञान और तप के द्वारा सबको भवसागर से पार कराने वाले हैं।

दक्षिण पुरी भारती सरस्वती, यों दस नाम मठ चार।

ए मत जुगान जुग चले आये, जे सुनाये तुम्हें सार।।३६।।

दक्षिण मन्या के पुरी, भारती, और सरस्वती, ये सन्यास मत के दस नाम हैं। उनके चार दिशाओं में चार मठ हैं। दस नाम सन्यास की यह परम्परा युगों-युगों से चली आ रही है। हे प्राणनाथ जी! आपको हमने उसका सार सुना दिया है।

वेद उक्त सन्यास मत, गुरूदत्त उजास।

परमहंस परिब्राज का, संकर कह्यो प्रकास।।३७।।

यह सन्यास मत वेदों में वर्णित है। गुरू दत्तात्रेय ने इस मत को प्रकाशित किया है। निर्द्वन्द होकर सर्वत्र विचरण करने वाले परमहंसों के इस मत को आदि शंकराचार्य ने प्रचारित किया है।

भावार्थ– मनुस्मृति में सन्यासी के लक्षण एवं कर्त्तव्य बताये गये हैं। इसी प्रकार १६ संस्कारों में सन्यास का भी संस्कार होता है। उपनिषदों में "यं पश्यन्तियतयो क्षीण दोषाः" कहकर सन्यास धर्म का ही चित्रण किया गया है।

वेदों में सन्यास का वर्णन इस प्रकार है–

यतयः (ऋ. ८/६/१८), ब्राह्मणस्य (ऋ. १०/१०९/४), विजानतः (यजु. ४०/७)

सन्यास मत के आचारज, चारों जुग के जेह।

तिनके नाम कहत हों, सुनियो चित दे तेह।।३८।।

चारों युगों में सन्यास मत के जो भी आचार्य हुए हैं, उनके नाम कह रहा हूँ। हे साथ जी! आप सावधान चित्त होकर उसे सुनिये।

ब्रह्मा विस्णु रूद्र सतजुग में, त्रेता जुग में तीन।

वसिस्ठ सक्ति परासर, ए देखो तुम चीन।।३९।।

सतयुग में ब्रह्मा, विष्णु, और शिव सन्यास मत के आचार्य हुए, तथा त्रेता युग में भी तीन आचार्य वशिष्ठ, शक्ति, और पराशर हुए। हे साथ जी! आप इनकी पहचान कीजिए।

द्वापर जुग में दो आचरज, व्यास सुकदेव नाम।

कलियुग में पुनि तीन हैं, गौड गोविन्द संकर ठाम।।४०।।

द्वापर में व्यास और शुकदेव मुनि सन्यास मत के दो आचार्य हुए। कलियुग में सन्यास मत के पुनः तीन आचार्य हुए– गौड़, गोविन्द, और शंकर।

संकराचारज के चार सिष्य भये, तिन में ब्रह्माचारज एक।

दूजे पदमाचारज, तीजे नराटोटकाचारज विसेख।।४१।।

शंकराचार्य के चार प्रमुख शिष्य हुए, उसमें ब्रह्माचार्य पहले हुए, दूसरे पद्माचार्य, और तीसरे नरातोटकाचार्य विशेष महिमा वाले हुए।

भावार्थ– शंकराचार्य जी ने देश के चार कोनों में चार मठों की स्थापना कर अपने चार शिष्यों को उनका आचार्य मनोनीत किया। जगन्नाथ पुरी में स्थापित

गोवर्धन मठ, जो पूर्व में है, का आचार्य पद्मपाद को मनोनीत किया। पश्चिम में शारदा मठ के आचार्य पद पर सुरेश्वराचार्य (ब्रह्माचार्य) को, तथा उत्तर में जोशी मठ के आचार्य पद पर नरातोटकाचार्य, और दक्षिण में श्रृंगेरी मठ के आचार्य पद पर पृथ्वीधराचार्य (श्रृंगी ऋषि) को मनोनीत किया। इन्हें हस्तामलकाचार्य भी कहते हैं।

चौथे श्रृंगी ऋषि कहे, तिन चारों के हैं सिष्य दस।
सोई दस नाम सन्यास हैं, मारग बांध लियो जस।।४२।।

चौथे आचार्य श्रृंगी ऋषि कहे गये हैं। इन चार आचार्यों के दस शिष्य हुए। इन्होंने ही अपने नाम से दस नाम सन्यास मत प्रचलित किया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में यह बात छिपा दी गयी है कि शंकराचार्य जी के चार शिष्यों में

नरातोटकाचार्य जी के तीन शिष्य हुए गिरि, पर्वत, और सागर। शेष सात शिष्य उनके प्रशिष्य थे, अर्थात् शिष्यों के शिष्य थे। आगे की चौपाइयों में यह बात दर्शायी गयी है।

ब्रह्माचारज के सरूपाचारज, तिनके हैं सिष्य दोय।
एक तीरथ एक आश्रम, देखो दण्डीवान प्रसिद्ध होय।।४३।।

ब्रह्माचार्य के शिष्य स्वरूपाचार्य हुए, जिनके तीर्थ और आश्रम नाम के दो शिष्य हुए। इन्हीं से दण्ड धारण करने वाले सन्यासियों का समुदाय प्रसिद्ध हुआ।

भावार्थ- त्रिदण्डी का तात्पर्य कायिक, मानसिक, और वाचिक संयम को धारण करने वाला ही सच्चा त्रिदण्डी होता है। केवल काष्ठ के दण्ड से अध्यात्म का विशेष प्रयोजन नहीं होता।

पदमाचारज के बलभद्र, तिनके वन आरन।

नराटोटकाचारज, गिरि पर्वत सागर तरन तारन।।४४।।

पद्माचार्य के बलभद्र शिष्य हुए, जिनके वन और अरण्य नाम से दो शिष्य हुए। इसी प्रकार नरातोटकाचार्य के तीन शिष्य गिरि, पर्वत, और सागर नाम से हुए, जो अपने ज्ञान द्वारा सबको तारने वाले हुए अर्थात् अद्वितीय हुए।

श्रृंगी ऋषि के उद्रधाचारज, तिनके सरस्वती भारती पुरी।

ए दस नाम विस्तार कलिजुग में, सन्यास सम्प्रदा प्रगट करी।।४५।।

श्रृंगी ऋषि के ऊर्ध्वाचार्य शिष्य हुए, जिनके तीन शिष्य सरस्वती, भारती, और पुरी हुए। कलियुग में इन दस नामों का विस्तार हुआ और इनसे दस नाम सन्यास मत प्रकट हुआ। **प्रकरण ।।३६।। चौपाई ।।१७२७।।**

षट् दर्शन की विधि

इस प्रकरण में तारतम ज्ञान के प्रकाश में छः दर्शनों की समीक्षा की गयी है।

षट दर्सन बोले तबे, प्राचीन हम मत।
सो देखो तुम समझके, भगवत प्रापत सत।।१।।

तब छः दर्शनों के आचार्य कहने लगे, हे प्राणनाथ जी! हमारा मत बहुत ही प्राचीन है। यदि आप हमारे मत को जानकर आचरण में लायें, तो निश्चित रूप से परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है।

चतुर्मुखी ब्रह्मा सदा, चार वेद नित्यान।
अध्ययन अहनिस करें, पूर्व मुखें ऋग जान।।२।।

ब्रह्मा जी अपने चारों मुखों से चारों वेदों का नित्य ही अध्ययन करते हैं। पूर्व मुख से ऋग्वेद का अध्ययन करते हैं।

अध्ययन उत्तर मुखें, करें अथरवन वेद।
पच्छिम मुख तें बोलहीं, यजुर्वेद के भेद।।३।।

उत्तर मुख से अथर्ववेद तथा पश्चिम मुख से यजुर्वेद के रहस्यों को उजागर करते हैं।

दखिन मुख ते उचरे, सामवेद नित्यान।
तिनके षट अंग हैं सही, कहों तिनके प्रमान।।४।।

अपने दक्षिण मुख से वे नित्य ही सामवेद का उच्चारण करते हैं। इन चारों वेदों के छः अंग हैं, जिनका मैं वर्णन करता हूँ।

प्रगट भये मुख पूर्व तें, नैयायिक दरसन।

पच्छिम मुख तें प्रगटे, तिनके कहों बचन।।५।।

ब्रह्मा जी के पूर्व मुख से न्याय दर्शन प्रकट होता है। उनके पश्चिम मुख से जो शास्त्र प्रकट होते हैं, अब उनके विषय में मैं बताता हूँ।

पातांजल और सांख्यमत, वैसेसिक परवान।

पच्छिम मुख तें प्रगटे, तीन सास्त्र ए जान।।६।।

उनके पश्चिम मुख से तीन शास्त्र सांख्य, योग, और वैशेषिक की उत्पत्ति होती है।

मीमांसा दरसन चतुर, दखिन मुख तें होए।

अति निरमल वेदान्त मत, उत्तर मुख ते सोए।।७।।

ब्रह्मा जी के दक्षिण मुख से अत्याधिक बुद्धिवादी मीमांसा दर्शन उत्पन्न हुआ और अति निर्मल वेदान्त मत उनके उत्तर मुख से प्रकट हुआ।

भावार्थ– वेदों तथा शास्त्रों की उत्पत्ति का उपरोक्त वर्णन श्रीमद्भागवत् के स्कन्ध ३ अध्याय १२ श्लोक ३७–३९ में दिया है, जो वैदिक मान्यता के पूर्णतः विपरीत है। वस्तुतः ब्रह्मा जी के चार मुखों का वर्णन आलंकारिक है। ब्रह्मा जी ने सृष्टि के प्रारम्भ में उत्पन्न होने वाले चार ऋषियों– अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा– ऋषियों से एक–एक वेद का ज्ञान प्राप्त किया। इस प्रकार चारों वेदों का अकेला ज्ञाता होने से उन्हें चतुर्मुखी कहा गया है। इस सम्बन्ध में मनुस्मृति आदि धर्मग्रन्थों के ये उदाहरण देखने योग्य है–

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।

दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुः सामलक्षणम्।। मनु. १/२३

अर्थात् ब्रह्मा जी ने अग्नि, वायु, आदित्य, और अंगिरा से क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, तथा अथर्ववेद का ज्ञान प्राप्त किया।

श्रीमद्भागवत् में कहा गया है–

इतिहासपुराणनि पंचम वेदमीश्वरः।

सर्वेभ्यः एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनः।।

भा. ३/१२/३९

अर्थात् फिर सर्वदर्शी भगवान ब्रह्मा ने अपने चारों मुखों से इतिहास–पुराण रूप पाँचवा वेद बनाया।

यह कथन पूर्णतया मिथ्या है, क्योंकि जब सृष्टि बनी ही नहीं थी तो इतिहास–पुराणों की रचना कैसे हो सकती थी?

यह सर्वविदित है कि छः शास्त्र (दर्शन), वेदों के उपांग कहे जाते हैं, अंग नहीं। वेदों के अंग तो शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, और व्याकरण हैं।

यह विशेष ध्यान देने योग्य तथ्य है कि बीतक साहिब के इस प्रकरण में ब्रह्मा जी द्वारा चारों वेदों तथा छः शास्त्रों की उत्पत्ति का वर्णन भागवत के अनुसार है, श्री लालदास जी के अनुसार नहीं।

एह विध खट दरसन भये, तिनके कहों प्रमान।
खट आचारज हैं सही, नाम सुनो तिह ज्ञान।।८।।

छः दर्शनों की उत्पत्ति जिस प्रकार होती है, उसके विषय में मैं कहता हूँ। इन छः दर्शनों की रचना करने वाले छः आचार्य हैं, जिनके नाम सहित ग्रन्थ रचना का विवरण सुनें।

भावार्थ– छः दर्शन वेदों के उपांग हैं। वेद में छः दर्शनों का ज्ञान बीज रूप में विद्यमान है। छः दर्शनों के आचार्यों ने वेद में निहित उस ज्ञान को तर्क और प्रमाण द्वारा विस्तृत रूप में अपने दर्शन में व्यक्त किया है।

वस्तुतः सृष्टि बनने के छः कारण होते हैं और एक-एक दर्शन में एक-एक कारण की व्याख्या एक-एक आचार्य द्वारा की गयी है।

न्याय दर्शन

गौतम तें प्रत्यक्ष हुआ, न्याय सास्त्र प्रकास।

मीमांसा दो मिल कही, जैमुन जी और व्यास।।१।।

गौतम ऋषि ने न्याय दर्शन की रचना की। वेद व्यास जी तथा उनके शिष्य जैमिनि ने मीमांसा के दोनों ग्रन्थों की रचना की।

कर्म विवेक जैमुन कह्यो, सारीरिक कृत व्यास।

मीमांसा की दोय विधि, कहीं तुम्हें प्रकास।।१०।।

मीमांसा के दो भेद हैं– पूर्व मीमांसा तथा उत्तर मीमांसा। पूर्व मीमांसा की रचना जैमिनि ने की है। पूर्व मीमांसा में यज्ञ सम्बन्धी कर्मकाण्ड एवं वेद मन्त्रों के विनियोग की व्याख्या की गयी है। वेद व्यास जी ने उत्तर मीमांसा की रचना की है, जिसे वेदान्त दर्शन कहते हैं। इन्हें शारीरिक सूत्र भी कहते हैं।

कपिल देव तें सांख्य है, पातान्जल मत सेस।

कर्ण देव वैसेसिक, सिव वेदान्त उपदेस।।११।।

कपिल मुनि ने सांख्य दर्शन की रचना की है। शेषावतार पतञ्जलि मुनि ने योग दर्शन की रचना की है तथा कणाद मुनि ने वैशैषिक दर्शन की। वेदान्त के प्रथम वक्ता भगवान

शिव हैं, जिसको शब्दों में लिपिबद्ध वेद व्यास जी ने किया है।

भावार्थ– पौराणिक मान्यताओं में, संसार के सबसे अधिक बुद्धिमान व्यक्तियों में शेष जी की गणना की जाती है। वे उन्हें नाग मानते हैं जिसके हजार मुख हैं, किन्तु यह मान्यता यथार्थता के पूर्णतया विपरीत है। वैदिक मान्यता के अनुसार शेष एक ऐसे ऋषि का नाम है, जो किसी भी शब्द की एक हजार प्रकार से व्याख्या कर सकता था। इसलिए आलंकारिक रूप में उनके एक हजार मुखों की कल्पना की गयी है। किसी ने भूलवश शेष के आगे नाग शब्द जोड़कर शेषनाग की जो मिथ्या धारणा बना ली, वही आज तक चली आ रही है।

पतञ्जलि को शेषावतार कहना ही यह दर्शाता है कि वे कितने प्रतिभाशाली थे। पतञ्जलि ऋषि ने जो योग दर्शन

लिखा है, उसको पातञ्जल मत भी कहते हैं।

इसी प्रकार भगवान शिव द्वारा कहा हुआ वेदान्त का ज्ञान वेद व्यास जी द्वारा लिपिबद्ध होकर उत्तर मीमांसा, शारीरिक सूत्र, या वेदान्त दर्शन कहलाता है।

ए आचारज मूल हैं, छेऊ सास्त्र के लेख।
वाद चतुर को करत है, भिन्न भिन्न मत देख।।१२।।

मूलतः इन्हीं आचार्यों ने इन छः शास्त्रों की रचना की है। इन छः दर्शनों के मूल आशय को न समझ पाने के कारण प्रायः इन दर्शनों के विद्वान आपस में मतभिन्नता रखते हैं, और बौद्धिक चतुराई द्वारा वाद-विवाद करते रहते हैं।

भावार्थ- तारतम ज्ञान का प्रकाश न होने या ऋतम्भरा प्रज्ञा न होने से भी बुद्धिवादी विद्वान छः दर्शनों में विरोध

मानते हैं। वस्तुतः इनमें नाम मात्र भी विरोध नहीं है। बल्कि सृष्टि बनने के छः अलग-अलग कारणों की छः अलग-अलग शास्त्रों में व्याख्या दी गयी है।

जिस प्रकार घड़े के बनाने में कर्म, समय, मिट्टी, विचार, संयोग-वियोग, आदि का पुरूषार्थ, प्रकृति के गुण, और कुम्भकार कारण हैं। उसी प्रकार सृष्टि बनने में जो कर्म-कारण है उसकी व्याख्या मीमांसा में, समय की व्याख्या वैशेषिक में, उपादान कारण की व्याख्या न्याय में, पुरूषार्थ की व्याख्या योग में, तत्वों के अनुक्रम से परिगणन की व्याख्या सांख्य में, और निमित्त कारण ब्रह्म की व्याख्या वेदान्त शास्त्र में की गयी है। इसलिए एक शास्त्र को दूसरे शास्त्र का विरोधी बताना अज्ञानता के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

नैयायिक दरसन की, भेद वाद विध आये।

माया जीव ईस्वर त्रई, भिन्न अनादि सुहाये।।१३।।

न्याय दर्शन भेद-वाद के सिद्धान्त पर आधारित है। माया, जीव, और ईश्वर- ये तीनों एक-दूसरे से भिन्न हैं और अनादि हैं।

भावार्थ- न्याय दर्शन के अनुसार माया अर्थात् प्रकृति केवल सत् है। जीव सत् और चित् दोनों है, तथा ईश्वर सत्, चित्, आनन्दमय है। इस प्रकार तीनों अनादि होते हुए भी एक-दूसरे से गुणों में भिन्न हैं।

बीस एक परनालिका, सीढ़ी दुख की जौन।

नास होय तब सुख को, प्रापत होवे तौन।।१४।।

दुःख की प्रणालिका रूप जो २१ सीढ़ियां हैं, उनके नाश होने पर अखण्ड सुख की प्राप्ति होती है।

भावार्थ– परनालिका का शुद्ध रूप प्रणालिका है। इसका तात्पर्य है कि परम्परागत रूप से जीव प्रत्येक योनि में २१ प्रकार के दुखों से ग्रसित रहता है, इसलिये यहाँ प्रणालिका शब्द का प्रयोग हुआ है।

न्याय न्याय में २१ प्रकार के दुःख इस प्रकार हैं–

पाँच ज्ञानेन्द्रिय और छठवाँ मन। इस प्रकार छः इन्द्रियाँ, छः इन्द्रियों के विषय, और छः इन्द्रियों के विषयों का ज्ञान, लौकिक सुख–दुःख, तथा शरीर– ये २१ प्रकार के दुख हैं।

सीढ़ी का तात्पर्य स्तर, भेद, या प्रकार से है।

प्रसन कियो श्रीजू तबे, तुममें नही विचार।

ईस्वर जीव विनास है, तुम्हारे वचन मंझार।।१५।।

श्रीजी ने उनसे प्रश्न किया कि हे आचार्य जनों! आप

यथार्थ सत्य का विचार नहीं कर रहे हैं। आपके वचनों से तो ईश्वर और जीव का विनाश सिद्ध हो जाता है।

बीस एक सीढ़ियां कही, दुख की भारी जौन।
तिन मध्य माया जीव सब, कहो सुख की सो कौन।।१६।।

आप जो २१ प्रकार के गहन दुःख के स्तर बता रहे हैं और उन्हीं माया–जनित दुखों के बीच में जीव का अस्तित्व कह रहे हैं, तो यह बताइये कि उन २१ प्रकार के दुःखों से भिन्न सुख की सीढ़ियाँ कौन सी हैं?

भावार्थ– श्रीजी का संकेत इस बात की तरफ है कि जब "चैतन्य जीव" प्रकृति के दुःखों के बन्धन में है, तो सच्चिदानन्द परब्रह्म का आनन्द कहाँ है और किस प्रकार का है?

सूक्ष्म सरूप नित तुम कह्यो, स्थूल कहत हो नास।
बीस एक सीढ़ियन से, कहां नित को बास।।१७।।

आप जीव तथा ईश्वर के सूक्ष्म स्वरूप को नित्य कहते हैं, तथा स्थूल ब्रह्माण्ड और इस स्थूल शरीर का नाश कहते हैं। ऐसी अवस्था में दुःख के २१ स्तरों से परे अनादि जीव एवं अनादि सच्चिदानन्द ब्रह्म का निवास कहाँ है?

भावार्थ– न्याय दर्शन के मतानुसार, महाप्रलय में न तो किसी प्राणी का स्थूल शरीर रहता है और न ये स्थूल जगत, बल्कि सब कुछ उस कारण प्रकृति (परमाणु के महासागर) में लय को प्राप्त हो जाता है।

तारतम ज्ञान के बिना यह निर्णय नहीं किया जा सकता कि महाप्रलय में जीव और ब्रह्म का स्वरूप कहाँ रहता है? इसे तारतम ज्ञान के प्रकाश में इस प्रकार कहा जा

सकता है–

अविनाशी ब्रह्म के अन्दर सृष्टि होने की इच्छा को मूल प्रकृति कहते हैं। यह मूल प्रकृति ही कारण प्रकृति को प्रकट करती है।

प्रकृति पैदा करे, ऐसे कई इंड आलम।
ए ठौर माया ब्रह्म सबलिक, त्रिगुन की परआतम।।
किरंतन ६५/१०

अक्षर ब्रह्म के चित्त स्वरूप सबलिक ब्रह्म के स्थूल में सुमंगला शक्ति है, जो कारण प्रकृति का मूल स्थान है। उसी की कला रूप रोधिनी शक्ति है, जो परमाणुओं के सागर "कारण प्रकृति" को प्रकट करती है।

महाप्रलय की अवस्था में भी अक्षर ब्रह्म के चारों पाद अखण्ड रहते हैं, इसलिये धर्मग्रन्थों में कहा गया है कि सृष्टि के पूर्व व्यक्त या अव्यक्त जगत (प्रकृति) तथा

परमाणु भी नहीं थे। केवल एक अविनाशी ब्रह्म ही था।

यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि रोधिनी शक्ति, जो प्रणव ब्रह्म के मन की शक्ति कही जाती है, अपने संकल्प मात्र से ही कारण प्रकृति को प्रकट करती है। वह प्रकृति का उपादान कारण कदापि नहीं है, जैसा कि नवीन वेदान्ती समझते हैं। सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि जीव और प्रकृति प्रवाह से अनादि तो अवश्य हैं, किन्तु मूल रूप से नहीं।

मीमांसा दर्शन

तब मीमांसा दरसनी, बोले कर्म प्रधान।

कारण करता कर्म है, कर्म इस्ट प्रमान।।१८।।

तब मीमांसा दर्शन के आचार्य कहने लगे कि हमारे मत में कर्म की प्रधानता है। युक्तियों से प्रमाणित है कि कर्म

से ही कर्ता या कारण का अस्तित्व है। इसलिये कर्म ही हमारा इष्ट है।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण का आशय यह है कि बिना कर्म के किसी को कर्ता की संज्ञा कैसे दी जा सकती है? इसी प्रकार, यदि ब्रह्म सृष्टि की रचना न करे, तो उसे निमित्त कारण कैसे कहा जा सकता है?

मीमांसा दर्शन में कर्म की महानता दर्शायी गयी है। इसलिये, भ्रान्तिवश कुछ विद्वान इसे नास्तिक दर्शन भी मानते हैं। अपने शास्त्र के पहले ही सूत्र में जैमिनी कहते हैं–

"अथातो धर्म जिज्ञासा।" मी. १/१/१

अर्थात् धर्म जिज्ञासा का विषय है।

किन्तु धर्म को जानने की जिज्ञासा कब होगी? जब वेदाध्ययन पूर्ण हो। वेद में जब परमात्मा की स्तुति की

गयी है, तो मीमांसा दर्शन का रचनाकार नास्तिक कैसे हो सकता है? मीमांसा दर्शन के छठे अध्याय में कहा गया है–

"सर्व शक्तौ प्रवृत्तिः स्यात् तथाभूतोपदेशात्।"

मीमांसा ६/३/१

अर्थात् सर्व शक्तियों के स्रोत परमात्मा की ओर प्रवृत्त होना प्राणियों का धर्म है, क्योंकि ऐसा ही उपदेश पाया जाता है।

"तद्कर्मणि च दोषस्तस्मात्ततो विशेषः स्यात् प्रधानेनाऽभिसम्बन्धात्।।" मीमांसा ६/३/३

अर्थात् परमात्मा की ओर से उदासीन रहना दोष है। उस दोष से बचने के लिये परमात्मा के साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहिए।

जीव ईस्वर ब्रह्म है, सब कर्मन को रूप।

कर्म बिना कछु और नहीं, सदा अनादि अनूप।।१९।।

जीव, ईश्वर, ब्रह्म– सभी कर्म के ही स्वरूप हैं। बिना कर्म के और कुछ है ही नहीं। कर्म के समान कोई नहीं है और यह अनादि है।

भावार्थ– यह कहना तो उचित है कि चाहे जीव हो, ईश्वर हो, या ब्रह्म हो, क्रियाशीलता (कर्म) से रहित कोई नहीं हो सकता, किन्तु कर्म (क्रियाशीलता) को कर्ता से भी श्रेष्ठ कह देना उचित नहीं है। जीव प्रकृति के बन्धनों में रहकर क्रियाशील है, तो ईश्वर (आदिनारायण, शबल ब्रह्म) सृष्टि के सन्चालन की प्रक्रिया में संलग्न है, और इसी प्रकार कूटस्थ निर्विकार ब्रह्म अपनी दिव्य लीला में मग्न है, किन्तु कर्म की महिमा में कर्ता को नकार देना बहुत बड़ी भूल है। कर्म से कर्ता की पहचान हो सकती

है, किन्तु कर्ता के बिना तो कर्म का अस्तित्व ही नहीं हो सकता।

आधुनिक आचार्यों के अनुसार अक्षर ब्रह्म (अव्याकृत ब्रह्म) का स्वाप्निक मन ही ईश्वर कहलाता है। उसे ही दूसरे शब्दों में शबल ब्रह्म, प्रणव, या आदिनारायण कहते हैं। प्राकृतिक जगत में यही लीला करता है। ब्रह्म का शुद्ध स्वरूप निर्गुण है, जो प्रकृति से सर्वथा परे है।

श्री जी बोले प्रस्न तब, कर्म विषे हैं भांत।

ब्रह्म अखण्ड सरूप हैं, सदा एक रस जात।।२०।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि कर्म के सम्बन्ध में हमेशा भ्रान्ति रहती है, जबकि ब्रह्म हमेशा अखण्ड और एक स्वरूप–रस वाला है।

भावार्थ– निर्विकार और आनन्दमयी ब्रह्म जब अपनी

दिव्य क्रीड़ा करता है, तो उसे लीला कहा जाता है, किन्तु जब त्रिगुणात्मक बन्धनों में फँसा हुआ जीव वासनाओं के वशीभूत होकर क्रियाशील होता है, तो उसे कर्म करना कहते हैं। अनेक दृष्टियों से कर्म के अनेकों भेद हो जाते हैं, जैसे– संचित, प्रारब्ध, और क्रियमाण कर्म; या कर्म, विकर्म, और अकर्म; किन्तु ये शब्द ब्रह्म के लिये प्रयुक्त नहीं किये जा सकते। उसी प्रकार वासनाग्रस्त जीव को भी लीलाधारी नहीं कह सकते।

कर्म तहां उपजे खपे, थिरता उनमें नाहिं।

अहंकार मन का अमल, कर्म लगत है ताहिं।।२१।।

कर्म की उत्पत्ति होती है तथा लय होता है। अहंकार तथा मन के संयोग से किसी चैतन्य में कर्म की उत्पत्ति होती है।

अहंकार मन जीव में, तिहितें कर्मी सोए।

मन पहुंचे नही ब्रह्म को, कर्म तहां क्यों होए।।२२।।

जीव कर्ता तभी कहलाता है, जब वह अहंकार तथा मन की क्रिया से जुड़ता है। जब मन की पहुँच ब्रह्म तक है ही नहीं, तो ब्रह्म में कर्म की उत्पत्ति कैसे हो सकती है?

भावार्थ– ब्रह्म में ज्ञान , बल, और क्रिया स्वाभाविक होती है, किन्तु जीव जन्म–जन्मान्तरों से प्रकृति के सुखों की वासना से ग्रसित रहता है। इसकी पूर्ति के लिये वह अपने मन के द्वारा अपनी पाँचों इन्द्रियों से पाँचों विषयों का सेवन करता है। यहीं से शुभ और अशुभ कर्मों की उत्पत्ति होती है, जिसके बदले उसे सुख और दुःख दोनों भोगने पड़ते हैं।

जीव अपनी योनि और ज्ञान के अनुकूल अपने अहं को धारण करता है। चित्त में जन्म–जन्मान्तरों की वासना,

बुद्धि और अहं के योग से संयुक्त होकर , विषयों में डूबकर, कर्म करने के लिये प्रेरित करती है। त्रिगुणातीत अवस्था में पहुँचा हुआ व्यक्ति भी जब कर्म की परिधि में नहीं रहता, तो सच्चिदानन्द परब्रह्म को कर्म के बन्धन में कैसे रखा जा सकता था?

उपनिषदों में तो स्पष्ट रूप से ब्रह्म को मन से परे कहा गया है–

"यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।"

तैतिरियोपनिषद् २/४/१

अर्थात् वाणी जहां से लौट आती है और जो मन से प्राप्त नहीं होता, वही ब्रह्म है।

"अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात् परतः परः।"

मु. उ. २/१/२

अर्थात् वह परब्रह्म त्रिगुणात्मक मन व प्राण से रहित है,

तथा अक्षर से भी परे है।

माया ते पुनि रहित हैं, ब्रह्म सरूप समान।

वेद सास्त्र में यों कह्यो, तुममें ताना तान।।२३।।

वेद–शास्त्र में तो ऐसा कहा गया है कि वह परब्रह्म माया से पूर्णतया रहित है और एक रस–स्वरूप वाला है। लेकिन आप तो ब्रह्म में कर्म का आरोप लगाकर खींच–तान कर रहे हैं।

भावार्थ– जब ब्रह्म का साक्षात्कार होने मात्र से जीव कर्मों के बन्धन से रहित हो जाता है, तो ब्रह्म को कर्म की परिधि में कैसे रखा जा सकता है? इस सम्बन्ध में मुण्डकोपनिषद् के ये कथन देखने योग्य हैं–

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः।

क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे।।

मु. उ. २/२/८

अर्थात् ब्रह्म तत्व को प्राप्त कर लेने वाले ब्रह्मज्ञानी के हृदय की सभी अज्ञानमयी ग्रन्थियाँ नष्ट हो जाती हैं। उसके सारे संशय समाप्त हो जाते हैं तथा उसके कर्मों के सारे बन्धन भी नष्ट हो जाते हैं।

जिस ब्रह्म का साक्षात्कार कर लेने पर कर्मों के बन्धन से मुक्ति हो जाती है, तो वह साक्षात् ब्रह्म कर्मों के बन्धन में कैसे पड़ सकता है? हे आचार्य जनों! मीमांसा दर्शन में जैमिनि ने जो कर्म की व्याख्या की है, वह मात्र जीवों के लिये है कि वे ज्ञान प्राप्त करके संसार में किस प्रकार धर्मानुकूल कर्म करें? इस कथन पर मीमांसा दर्शन के विद्वान मौन हो गये।

सांख्य दर्शन

सांख्य सास्त्र के दरसनी, बोले तबै विचार।

प्रकृत पुरूष सबके परे, सबको कारण सार।।२४।।

इसके पश्चात् सांख्य दर्शन के विद्वान विचारपूर्वक कहने लगे कि पुरूष और प्रकृति इस जगत के परे हैं और वही सबके कारण रूप हैं।

भावार्थ– कुछ लोग भ्रान्तिवश सांख्य दर्शन को भी नास्तिक कहते हैं, किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि सांख्य दर्शन में तीस बार श्रुति (वेद) शब्द का प्रयोग हुआ है। श्रुति के कथनों को इतना महत्व देने वाला व्यक्ति नास्तिक कैसे हो सकता है? सांख्य दर्शन में कहा गया है–

"स हि सर्ववित् सर्व कर्ता।" सां. ३/५६

अर्थात् ब्रह्म सर्वज्ञ और सर्व कर्ता है।

प्रकृत पुरूष जब मिलत हैं, जगत प्रगट तब होए।

भिन्न भये मिट जात हैं, हमरो मत यह सोए।।२५।।

जब पुरूष-प्रकृति का मिलन होता है तब ये जगत उत्पन्न होता है, तथा उनके अलग होने पर लय को प्राप्त हो जाता है। यह हमारा मत है।

भावार्थ- पुरूष दो प्रकार के हैं- जीव पुरूष तथा परमात्म पुरूष। इसी प्रकार परमात्म पुरूष के कई भेद हैं, जैसे- क्षर पुरूष (प्रणव, आदिनारायण, शबल ब्रह्म), दूसरा अक्षर पुरूष, तथा तीसरा परम पुरूष अक्षरातीत।

तारतम ज्ञान के अभाव में सांख्य दर्शन के आचार्य पुरूष और प्रकृति के स्वरूप तथा धाम की विवेचना नहीं कर सके हैं।

प्रकृत पुरूष तें कहत हो, जगत भयो सब एह।

सूरज दृस्टें तिमिर रहें, एही बड़ो सन्देह।।२६।।

श्रीजी ने उत्तर दिया कि हे आचार्य जी! आप कहते हैं कि पुरूष और प्रकृति से यह संसार बना है, तो इससे बहुत अधिक संशय पैदा होता है कि सूर्य के उदय होने पर भी अंधेरा कैसे रह सकता है?

भावार्थ– श्रीजी का आशय यह है कि ब्रह्म आनन्दमय, सर्वज्ञ, चेतन, और निर्विकार है। किन्तु जगत में इसके प्रतिकूल परिस्थिति दिखायी पड़ रही है। सच्चिदानन्द परब्रह्म की बनायी हुयी सृष्टि में सच्चिदानन्द परब्रह्म के गुणों का प्रकटीकरण क्यों नहीं है?

महाप्रलय सब जगत को, प्रकृत पुरूष लों होए।

रूप रहे नही प्रकृत को, मिले कहां ए दोए।।२७।।

महाप्रलय में तो पुरूष–प्रकृति तक सब जगत का लय हो जाता है। जब प्रकृति का रूप ही नहीं रह जाता, तो पुरूष–प्रकृति का मिलन कहाँ होता है?

भावार्थ– सांख्य दर्शन के आचार्यों का ज्ञान अक्षर या अक्षरातीत का नहीं बल्कि आदिनारायण का है, क्योंकि आदिनारायण (शबल ब्रह्म) के ही क्षोभ से कारण प्रकृति के परमाणुओं में कम्पन होता है और सृष्टि रचना का प्रारम्भ होता है, किन्तु कारण प्रकृति और नारायण का प्रकटन कहाँ से होता है? वह मात्र तारतम ज्ञान से ही जाना जा सकता है।

निराकार के मूर्त है, भेद कहो समझाए।

प्रलय मध्य अस्थान कहां, रहे कहो सब भाए।।२८।।

पुरूष और प्रकृति का रूप साकार है या निराकार,

कृपया इस बात को समझाने का कष्ट करें, तथा यह भी बतायें कि महाप्रलय के पश्चात् पुरूष और प्रकृति कहाँ रहते हैं?

भावार्थ– वस्तुतः अक्षर ब्रह्म के अन्दर असंख्य ब्रह्माण्डों को उत्पन्न करने की इच्छा को "मूल प्रकृति" कहते हैं। "निज लीला ब्रह्म बाल चरित्र, जाकी इच्छा मूल प्रकृति।" अक्षर ब्रह्म के चित्त का स्वरूप सबलिक ब्रह्म है, जिसके एक पलक के इशारे से ही असंख्य ब्रह्माण्डों का उदय–लय होता रहता है।

सबलिक के सूक्ष्म में चिदानन्द–लहरी पुरूष है, जिसका व्यक्त स्वरूप सबलिक के स्थूल (अव्याकृत के महाकारण) में सुमंगला–शक्ति पुरूष है। आदिनारायण तथा कालमाया की प्रकृति का मूल स्थान यही है।

प्रणव ब्रह्म तथा रोधिनी शक्ति क्रमशः इसी पुरूष तथा

सुमंगला शक्ति के कला रूप हैं। ये ही व्यक्त रूप में जगत की उत्पत्ति एवं संहार करने की भूमिका निभाते हैं। महाप्रलय में आदिनारायण और प्रकृति, इन्हीं पुरूष एवं सुमंगला शक्ति में स्थित हो जाते हैं। श्री प्राणनाथ जी के ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण वे विद्वत्जन, महाप्रलय में पुरूष-प्रकृति का अखण्ड स्थान कहाँ पर होता है, इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके और मौन हो गये।

जो तुम अपनी बुद्ध कर, निराकार कहो ताहिं।
तो मिलन कहो कैसे भयो, दोऊ भेद पुनि नाहिं।।२९।।

यदि आप अपनी बुद्धि से पुरूष-प्रकृति को निराकार कहते हैं, तो रूप रहित होने से दोनों में मिलन कैसे सम्भव है? इस प्रकार तो दोनों में कोई भेद ही नहीं रहेगा।

भावार्थ– तारतम वाणी का यह कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है–

प्रकृति पैदा करे, ऐसे कई इंड आलम।
ए ठौर माया ब्रह्म सबलिक, त्रिगुन की परआतम।।

किरंतन ६५/१०

विशेष सूचना– वेद एवं छः दर्शनों से सम्बन्धित गहन ज्ञान के लिये कृपया "सत्याञ्जलि, निजानन्द योग, ज्ञान–मंजूषा, ब्रह्माण्ड रहस्य" ग्रन्थों का अवलोकन करने का कष्ट करें।

वैशेषिक दर्शन

वैशेषक दरसन तब बोले, सबको मूल काल मत खोले।
काल पाए उपजत है एही, ख्याल खेलावत सबको तेही।।३०।।

तब वैशेषिक दर्शन के आचार्य कहने लगे कि हमारे मत के अनुसार सारी सृष्टि का मूल "काल" है। यह स्वप्नमयी जगत काल से उत्पन्न होता है और काल ही इसको संचालित कर रहा है।

भावार्थ– वैशेषिक दर्शन के आचार्यों द्वारा काल को ब्रह्म का स्वरूप मानने के कथन से ही यह सिद्ध होता है कि उन्होंने वैशेषिक दर्शन का गहराई से अध्ययन नहीं किया था। सम्पूर्ण वैशेषिक दर्शन में एक भी सूत्र ऐसा नहीं है, जिसमें यह लिखा हो कि काल ही ब्रह्म है। वैशेषिक दर्शन में ९ प्रकार के द्रव्य माने गये हैं–

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशं कालो दिगात्मा मन इति द्रव्याणि।

वैशेषिक दर्शन १/१/५

अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, काल (समय), दिशा, आत्मा (जीव), और मन– यह ९ द्रव्य

हैं।

वैशेषिक दर्शन के इस कथन में काल को ब्रह्म नहीं माना गया है, तथा आत्मा शब्द में जीव एवं ब्रह्म दोनों का भाव ग्रहण किया गया है।

"नित्येष्वभावादऽनित्येषु भावात्कारण कालाख्येति।"

वैशेषिक दर्शन २/२/९

अर्थात् नित्यों में न होने से और अनित्यों में होने से कारण की काल संज्ञा है।

"कारणेन कालः।" वैशेषिक दर्शन ७/१/२५

अर्थात् नित्य पदार्थ ब्रह्म आदि में काल नहीं रहता तथा अनित्य पदार्थ मनुष्य, पशु, पक्षी, आदि में रहता है, इसलिये कारण को ही काल कहा गया है। अर्थात् काल को कारण और मनुष्य-पशु-पक्षी आदि को कार्य कहा जाता है। कारण से काल की व्याख्या हो गयी, अर्थात्

उत्पन्न होने वाले जितने पदार्थ हैं, सबकी उत्पत्ति में काल निमित्त कारण है।

सबको खाए करत है नासा, एही रूप ब्रह्म को वासा।
श्री जु प्रस्न कियो तब तिनको, मूल कहत हो काल जो सब को।।३१।।

यह काल सबको अपने में विलीन कर लेता है। ब्रह्म का भी ऐसा ही रूप मानना चाहिए। यह सुनकर श्री प्राणनाथ जी ने उनसे प्रश्न किया कि हे आचार्य! आप जिस काल को सारी सृष्टि का मूल कहते हैं–

वेद वाक्य मध्यकाल को नास, काल रहित है ब्रह्म प्रकास।
कह्यो श्रुति स्मृति के माहीं, काल तहां पहुंचत है नाहीं।।३२।।

वेदों में तो उस काल का नाश हो जाना लिखा है। जहाँ ब्रह्म का अखण्ड प्रकाश है, वहाँ तो काल का कोई

अस्तित्व ही नहीं है। श्रुतियों और स्मृतियों में ऐसा कहा गया है कि ब्रह्म के धाम में तो काल पहुँचता ही नहीं है।

भावार्थ– यद्यपि अथर्ववेद में "काल सूक्त" (काण्ड ११ सूक्त ५३, ५४) भी दिया गया है, जिसका अर्थ "ब्रह्म" होता है। यहाँ काल शब्द से जड़ (समय) का भाव नहीं लेना चाहिए, बल्कि उस ब्रह्म को काल कहा गया है, जिसकी सत्ता से असंख्य लोकों वाली इस सृष्टि की उत्पत्ति, पालन, और संहार होता है। जिस प्रकार वेद में अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, आदि शब्दों का अर्थ (ज्ञान, स्वरूप, बलवान, प्रकाश स्वरूप, और आह्लाद कारक) ब्रह्म होता है, उसी प्रकार काल शब्द का अर्थ ब्रह्म ही होता है।

पूर्वोक्त कथन में नौ द्रव्यों में जिस काल की गणना की गयी है, वह काल तो जड़ है। उसे किसी भी स्थिति में

ब्रह्म नहीं माना जा सकता।

काल पाये उपजे सो बिनसे, उतपत लीन होय सब तिनसे।
ब्रह्म माहीं उतपत लय नाहीं, सब तें दूर रहे सब माहीं।।३३।।

काल की सत्ता के अधीन जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका विनाश अवश्य होता है। काल से उत्पत्ति और लीन होने की प्रक्रिया सतत चलती ही रहती है। इसके विपरीत ब्रह्म में न तो उत्पत्ति होती है और न लय होता है, वह अपने त्रिगुणातीत निज स्वरूप में सबसे परे है और सत्ता के द्वारा सबमें प्रविष्ट है।

भावार्थ– सामान्यतः यही देखा जाता है कि समय के बिना इस सृष्टि में कोई भी क्रिया नहीं हो सकती। यहाँ तक कि महाप्रलय का समय बीत जाने पर, उचित समय पर, सृष्टि पुनः प्रकट हो जाती है। इस प्रकार

जनसाधारण में यह धारणा घर कर गयी कि सब कुछ काल में लय हो जाता है, इसलिये काल ब्रह्म है।

दुर्भाग्यवश दर्शन के क्षेत्र में भी यही प्रवृत्ति चल पड़ी है, जो वैदिक मान्यता के विपरीत है। सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में कहीं भी जड़ काल को चेतन ब्रह्म नहीं कहा गया। कठोपनिषद् में लिखा है कि काल भी ब्रह्म की सत्ता के अधीन है–

भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्यः।

भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पंचमः।।

कठोपनिषद् २/६/३

अर्थात् उस अक्षर ब्रह्म के ही भय से अग्नि तपती है तथा सूर्य तपता है। विद्युत भी उसी के भय से प्रकाशित होती है। मृत्यु (काल) भी उसी के भय से गतिमान रहती है।

इसी उपनिषद् में आगे कहा गया है–

अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तन्मृत्यु मुखात्प्रमुच्यते।

कठो. १/३/१५

उस अनादि, अनन्त, अखण्ड, तथा महान ब्रह्म को जानकर जीव मृत्यु के मुख से छूट जाता है। मृत्यु के बन्धन में फँसा हुआ जीव हमेशा दुःखी ही रहता है, इसलिये ब्राह्मण ग्रन्थों में यह प्रार्थना की गयी है–

"मृत्योः मा अमृतम् गमयेति।" शतपथ ब्राह्मण

हे परमात्मा! मुझे इस मृत्यु के संसार से अमरत्व (अखण्ड धाम) में ले चलो।

उपरोक्त कथनों से यह स्पष्ट होता है कि काल और ब्रह्म अलग–अलग हैं।

कह्यो सरूप ब्रह्म को ऐसो, तुम तो कहत हो सबलिक जैसो।

अंग सबलिक माया माहीं, निर्विकार सब ही में नाहीं।।३४।।

धर्मग्रन्थों में ब्रह्म का ऐसा स्वरूप वर्णित किया गया है, लेकिन आप तो उसे आदिनारायण या ईश्वर की तरह कहते हैं। आदिनारायण का स्वरूप माया के अन्तर्गत होता है, किन्तु निर्विकार ब्रह्म इस प्रपञ्च रूपी जगत से सर्वथा परे है।

भावार्थ– आधुनिक वेदान्त की भाषा में "शबल ब्रह्म" का तात्पर्य आदिनारायण, ईश्वर, या प्रणव ओंकार से है। जब अक्षर का मन अव्याकृत, मोह सागर में प्रतिबिम्बित होता है, तो वह "ईश्वर" या "शबल ब्रह्म" कहलाता है। जबकि "सबलिक" तो अक्षर ब्रह्म के चित्त का स्वरूप है।

वैशेषिक दर्शन के आचार्यों ने कालरूप जिस ब्रह्म की व्याख्या की है, वह "शबल ब्रह्म" है, शुद्ध निर्विकार ब्रह्म नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि लिखने की अशुद्धि के कारण "शबल" का "सबलिक" हो गया है। अक्षर के

चित्त स्वरूप सबलिक ब्रह्म को कालमाया के अन्दर कदापि नहीं मान सकते। इतना अवश्य है कि अव्याकृत का महाकारण सबलिक का स्थूल कहलाता है। वही सुमंगला पुरूष है, जो स्वयं को स्वप्न में आदिनारायण (शबल ब्रह्म) के रूप में देखता है।

होय काल मध्य ब्रह्म सो नाहीं, या विध कह्यो वेद के माहीं।
निराकार तुम काले कहो, तैसो रूप ब्रह्म को लहो।।३५।।

वेद में तो ऐसा कहा गया है कि काल के अधीन जो कुछ होता है, वह ब्रह्म नहीं है। हे आचार्य जनों! आप काल को निराकार कहते हैं और भ्रान्तिवश ब्रह्म का भी वैसा ही रूप मान बैठते हैं।

पातंजलि दर्शन

तब बोले पातांजल ज्ञानी, व्यापक ब्रह्म सकल मध्य जानी।

एही भवन ब्रह्म को लेखो, व्यापक इतहीं है तुम देखो।।३६।।

वैशेषिक दर्शन के आचार्यों के मौन हो जाने के पश्चात् योग दर्शन के विद्वान कहने लगे कि हम ब्रह्म को सम्पूर्ण जगत में व्यापक मानते हैं। इस शरीर और संसार में ब्रह्म का अस्तित्व मानना चाहिए। वह इसी के कण–कण में व्यापक हो रहा है।

पिण्ड माहिं आठ अंग लेके, खोज कीजिये जब चित दे के।

नाड़ी चक्र सोधिये जबहीं, मिले ब्रह्म आप में तबहीं।।३७।।

जब हठयोग की क्रियाओं से नाड़ियों और चक्रों का शोधन किया जाता है तथा योग के आठों अँगों के द्वारा शुद्ध हृदय से खोज की जाती है, तो इसी शरीर में ब्रह्म

का साक्षात्कार हो जाता है।

भावार्थ– हठयोग प्रक्रिया में जो षट् कर्म बताए गए हैं, उससे शरीर का शोधन होता है। वे षट्कर्म इस प्रकार है– नेति २. धोती ३. नोली ४. वस्ति ५. त्राटक तथा ६. कपाल भाति। इन षट्कर्म के द्वारा शरीर का शोधन होता है। इसी प्रकार मुद्रा, प्राणायाम, एवं ध्यान के द्वारा नाड़ियों और चक्रों का शोधन किया जाता है।

आठ अंग योग के जेही, नाम कहत हों तिनके एही।
आसन प्राणायाम जो कहिये, प्रत्याहार धारण लहिये।।३८।।

योग के जो आठ अंग हैं। मैं उनके नाम कह रहा हूँ। वे हैं– आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, तथा धारणा।

ध्यान समाध नेम जप जोई, आठों अंग योग के सोई।

ज्योत रूप तुम ब्रह्म ही मानों, कारण बीज जगत को जानो।।३९।।

यम, नियम, ध्यान, तथा समाधि– ये योग के आठ अंग हैं। आप ब्रह्म को ज्योति स्वरूप मानें और उसे इस संसार का कारण रूप मानना चाहिए।

भावार्थ– योग दर्शन के अनुसार आठ अंगों का क्रम इस प्रकार है–

१. यम– हिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह का पालन।

२. नियम– शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान का पालन।

३. आसन

४. प्राणायाम

५. प्रत्याहार

६. धारणा

७. ध्यान

८. समाधि

उपजे उपजावे सब यामें, जगत रहत किरना सम तामें।
बुद्ध विषे लेओ ए मत सार, ग्रहो चित में कर निरधार।।४०।।

यह सम्पूर्ण जगत ब्रह्म की इच्छा से उत्पन्न होता है। एक मात्र वही इस संसार को उत्पन्न करने वाला है। उस ज्योति स्वरूप ब्रह्म में यह संसार किरणों के समान स्थित है। हे श्रीजी! आप अपनी बुद्धि में सबके सार रूप इस मत को ग्रहण कीजिए और बिना संशय किये इसे अपने हृदय में धारण कीजिए।

श्री जी पूछ्यो प्रश्न विवेकें, मेटो आसंका ए चित देके।

ब्रह्म सच्चिदानन्द सरूप, जगत असत जड़ दुख को रूप।।४१।।

श्रीजी ने आचार्यों से युक्तिपूर्वक प्रश्न किया और यह कहा कि हे आचार्य जनों! अब आप एकाग्र मन से मेरे प्रश्नों को सुनिए और मेरे संशयों का समाधान कीजिए। ब्रह्म तो सत्, चित्, और आनन्द स्वरूप है, जबकि यह जगत् असत्, जड़, और दुःख रूप है।

सत वस्त ते सत ही उपजे, द्रव्य असत तें असत ही निपजे।

इच्छा रहित ब्रह्म श्रुति के माहीं, उपज खपत तामें कछु नाहीं।।४२।।

सत् वस्तु से सत् की उत्पत्ति होती है और झूठे पदार्थ से झूठ की ही उत्पत्ति होती है। श्रुतियों में ब्रह्म को इच्छा से रहित कहा गया है। न तो उसमें कोई वस्तु उत्पन्न होती है और न ही लय को प्राप्त होती है।

भावार्थ– श्रीजी के द्वारा इस चौपाई में योगदर्शन के आचार्यों के उस सिद्धान्त का खण्डन किया गया है, जिसमें उन्होंने इस जड़ जगत को किरण रूप और चैतन्य ब्रह्म को सूर्य के दृष्टान्त से वर्णित किया है।

अखण्ड और चैतन्य वस्तु से नश्वर और जड़ वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती।

उपज खपत माया तें होई, वेद सास्त्र मध कह्यो जो सोइ।
वेद कहत माया में भास, तातें करत सत्त प्रकास।।४३।।

वेद-शास्त्रों में तो ऐसा कहा गया है कि यह सम्पूर्ण जगत कारण-प्रकृति रूप माया से उत्पन्न हुआ है और उसी में लय को प्राप्त हो जायेगा। वेदों का कथन है कि मोहसागर (माया) में उसका मन प्रतिबिम्बित होता है और आदिनारायण के रूप में अपनी शक्ति से जगत का

संचालन करता है।

भावार्थ– शास्त्रों (माहेश्वर तन्त्र एवं पुराण संहिता) के अनुसार माया (मोह सागर) में ब्रह्म के प्रतिबिम्ब का प्रकाश है, जिसकी शक्ति से इस नश्वर जगत का संचालन होता है।

तस्मिन्विमोहधावशेत पुरूषो महान।

तस्मादेव समुन्त्तस्थौ भूत्वा नारायणः स्वयम्।।

पंचावयव, संयुक्तः स एवं प्रणवाभिधः।

पुराण संहिता २४/२८,२९

शुद्ध सत्व प्रधाना हि निर्मला ज्ञान रूपिणी।

तत्र यः प्रतिबिम्बो भूदक्षरस्य परात्मनः।।

तमाहुः पुरूषं देवि श्रुति सिद्धान्त वादिनः।

स एव काल रूपेण प्रकृति क्षोभ कारकः।।

माहेश्वर तन्त्र २०/२५-२६

किरना सूरज भेद न आए, माया ब्रह्म बीच बहु भाए।

परस्पर प्रतिवादी दोऊ, एक पात्र मध्य रहे न कोऊ।।४४।।

सूर्य और किरणों में भेद नहीं होता, जबकि माया और ब्रह्म में बहुत अन्तर है। दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं और दोनों कभी एक पात्र में नहीं रह सकते, अर्थात् जहाँ माया होगी वहाँ ब्रह्म नहीं, और जहाँ ब्रह्म होगा वहाँ माया नहीं होगी।

सत असत की जात है न्यारी, यामें रहे विचार बहु भारी।

रहे प्रमान बचन सब केरे, यह बिध खोलो प्रस्न जो मेरे।।४५।।

सत्य और असत्य, अर्थात् ब्रह्म और माया, दोनों का स्वरूप अलग-अलग है। इन दोनों से सम्बन्धित विचार

बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। युक्तिपूर्वक सारे प्रमाण मैंने कह दिये हैं। आप से आग्रह है कि आप मेरे प्रश्नों का यथार्थ समाधान कीजिए।

वेदान्त दर्शन

फेर वेदान्ती दरसन जेही, ब्रह्म बिना कछु कहत न तेही।
माया को अनाद पुन कहे, माया सदा ब्रह्म मध्य रहे।।४६।।

इसके पश्चात् वेदान्त दर्शन के वे आचार्य शास्त्रार्थ के लिए तत्पर हो गये, जो ब्रह्म के बिना और कुछ कहना ही पसन्द नहीं करते। एक ओर तो माया को अनादि कहते हैं, दूसरी तरफ वे यह भी कहते हैं कि माया हमेशा ब्रह्म के अन्दर रहती है।

भावार्थ– यह चौपाई उन वेदान्तियों के प्रति हास्य –व्यंग्य के भाव में कही गयी है, जो ब्रह्म के अतिरिक्त

किसी का नाम लेना नहीं चाहते, किन्तु मायावाद पर बहस करना भी बन्द नहीं करते।

माया माहें ब्रह्म है व्यापक, सर्व देसी है सर्व लायक।
ब्रह्म बिना दूजा जो देखे, तिनको हम अज्ञानी लेखें।।४७।।

वे आचार्य कहने लगे कि माया के अन्दर वह ब्रह्म व्यापक है, वह सर्वदेशीय है, और सबको सब रूपों में प्राप्त है। जो ब्रह्म के अतिरिक्त किसी और व्यक्ति को देखता है, उसे हम अज्ञानी कहते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "सर्व लायक" का भाव यह है कि उस ब्रह्म को पाने का अधिकार इस संसार के प्रत्येक वर्ण को है।

अणु तें तुम हस्ती लों जानों, एक ब्रह्म सब माहिं बखानों।
इच्छा रहित सबन तें न्यारा, करता कर्म न कछु बिचारा।।४८।।

अति सूक्ष्म अणु से लेकर अति विशालकाय हाथी तक एक अद्वितीय ब्रह्म ही सबके अन्दर विद्यमान कहा जाता है। वह लौकिक इच्छाओं से रहित सबसे परे है। वह न तो किसी कर्म का कर्ता है और न सांसारिक प्राणियों की तरह कुछ विचार करता है।

भावार्थ– इस चौपाई की दूसरी पंक्ति का आशय यह है कि वह सांसारिक प्राणियों की तरह कोई लौकिक इच्छा नहीं करता, बल्कि पूर्णकाम है। वह लौकिक कर्म से रहित तो है, किन्तु दिव्य लीला से युक्त है। सर्वज्ञ होने से वह कुछ सोचता–विचारता नहीं है, बल्कि सत्य संकल्प वाला है।

साखी–

जो तुम सर्वत्र ब्रह्म कह्यो, तब तो अज्ञान कछुये नाहिं।
तो खट सास्त्र भये काहे को, मोहे ऐसी आवत मन माहिं।।४९।।

उनके इस प्रकार के कथन को सुनकर श्रीजी कहने लगे कि हे आचार्य जनों! मेरे मन में तो ऐसा आ रहा है कि जब आप ब्रह्म को सर्वत्र व्यापक कहते हैं, तब तो किसी के अन्दर अज्ञानता का अन्धकार होना ही नहीं चाहिए, तो छः शास्त्रों को रचने की आवश्यकता ही क्या है?

निराकार सब माहीं बिराजे, इच्छा रहित सदा छब छाजे।
होत जगत कौन तें एही, मेटो आसंका तुम अब तेही।।५०।।

आप कहते हैं कि ब्रह्म निराकार है और सबके अन्दर विद्यमान है। इच्छा से रहित होते हुए भी हमेशा अपार शोभा से युक्त है। ऐसी स्थिति में आप मेरे संशय को

मिटाइये कि यह नश्वर जगत किससे प्रकट होता है?

भावार्थ– इस चौपाई में यह बात विशेष रूप से दर्शायी गयी है कि जो निराकार है, उसमें शोभा कहाँ से आ सकती है? और जब उसमें इच्छा ही नहीं है, तो यह संसार किससे बन जाता है?

उपर्युक्त चौपाई में इच्छा का भाव "संकल्प" से लिया जा रहा है, लौकिक इच्छा से नहीं।

ब्रह्म विषे माया कछु नाहीं, तीन काल रहित नहीं ताहीं।
पुन अनाद माया को कही, ब्रह्म सर्वत्र माया बिध लही।।५१।।

ब्रह्म में माया का अस्तित्व तीनों कालों में नहीं होता है। पुनः आप माया को अनादि भी कहते हैं और ब्रह्म को माया में सर्वत्र व्यापक भी कहते हैं।

ब्रह्म मध्य माया कौन विध, तीन काल नहीं आए।

सर्वत्र ब्रह्म किहि बिध लसे, भेद कहो समझाए।।५२।।

हे आचार्य जनों! आप मुझे इस भेद को समझाइये कि जिस ब्रह्म के अन्दर माया तीनों काल में प्रवेश नहीं कर सकती, तो आप किस प्रकार माया को ब्रह्म के अन्दर विद्यमान कह रहे हैं? तथा माया के अन्दर ब्रह्म किस प्रकार सर्वत्र व्यापक हो रहा है?

पुन अनाद माया कही, कौन भाँत है सोए।

निराकार साकार के, कहो भेद जो होए।।५३।।

पुनः आप माया को अनादि भी कहते हैं, तो वह किस प्रकार से अनादि है? कृपया यह भेद भी समझाइए कि वह साकार है या निराकार?

भावार्थ– जब ब्रह्म अनादि है, तो माया को भी अनादि

मानने पर ब्रह्म के समानान्तर एक नयी सत्ता खड़ी हो जाती है, जिससे शंकराचार्य के अद्वैत सिद्धान्त में बाधा पड़ती है। किन्तु यदि माया का अस्तित्व न मानें, तो इस जड़ जगत को भी ब्रह्मरूप मानना पड़ेगा। श्रीजी के इन अकाट्य प्रश्नों का वेदान्त के विद्वानों के पास कोई भी उत्तर नहीं था।

साखी–

भिन्न आत्मा जगत ते, संकर कही प्रकास।

पुन आत्मा सब में कही, कहो भेद प्रकास।।५४।।

शंकराचार्य ने कहा है कि "आत्मा का स्वरूप जगत् से भिन्न है" और आप इस रहस्य को समझाइए कि ऐसी अवस्था में सबके अन्दर आत्मा का अस्तित्व कैसे माना जाता है?

भावार्थ– आत्मा का अर्थ ब्रह्म भी होता है और शरीर में स्थित अणु चैतन्य रूप (जीव) भी होता है। इसलिये जगत से भिन्न जो आत्मतत्व कहा गया है, वह व्यापक तत्व है। जैसे–

"आत्मा वा इदम् अग्र आसीत्।।" वृ. उ. १/४/१

अर्थात् सृष्टि से पूर्व केवल एक व्यापक परमात्मा ही था।

"अयम् आत्मा ब्रह्म।" शत. ब्रा. १४/४/५/२१

अर्थात् जो व्यापक ब्रह्म है, उसे ही आत्मा कहा गया है।

"हृदि ह्येषः आत्मा।" प्रश्नोपनिषद ३/६

अर्थात् यह आत्मा (जीव) हृदय में है।

"स वा एष आत्मा हृदि।" छान्दोग्योपनिषद् ८/३/३

अर्थात् वह आत्मा हृदय में है।

अर्थात् वेदान्त के कथनानुसार जो एकदेशीय चैतन्य

अणु है, जब वह प्रकृति से परे अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित होता है तो आत्मा कहलाता है, किन्तु जब अविद्या से ग्रसित होकर स्थूल शरीर, इन्द्रियों, या अन्तःकरण के बन्धन में आता है तो जीव कहलाता है।

इस प्रकार एक ही शब्द आत्मा का अलग-अलग प्रसंगों में ब्रह्म और जीव दोनों अर्थ होते हैं।

वेदान्तन से वाद बहु, भया जो मेला माहिं।
कहाँ लों कहों बनाए के, देखो हते जो वाहिं।।५५।।

इस प्रकार वेदान्त के आचार्यों से उस कुम्भ के मेले में बहुत अधिक वाद-विवाद हुआ। मैं शब्दों में कितना वर्णन करूँ। जो प्रत्यक्षदर्शी थे, वे ही उस आनन्द को यथार्थ रूप से जान सके।

कोई कहे सबे ब्रह्म है, तब तो अज्ञान कछुए नाहीं।

तो षट सास्त्र भये काहे को, मोहे ऐसी आवत मन माहीं।।५६।।

कोई कहता है कि सब कुछ ब्रह्म रूप है। सारा जगत ही ब्रह्ममय है, तब तो किसी के अन्दर अज्ञानता होनी ही नहीं चाहिए। मेरे मन में ऐसा आता है कि जब सभी कुछ ब्रह्म ही ब्रह्म है, तो छः शास्त्रों का ज्ञान किसके लिये बनाया गया है?

ए सबे षट दर्सनी, षट सास्त्र अचारज जोए।

न्यारे न्यारे मत सबे, सुने श्री राज नें सोए।।५७।।

छः शास्त्रों के इन आचार्यों से श्रीजी ने अलग-अलग विचारधारा वाले अपने-अपने मत सुने।

तब सब मत मारग नें मिलके, कही श्री जी सों विख्यात।
अपने मत हम सब कहे, अब आप कहो साख्यात।।५८।।

इसके पश्चात् सभी आचार्यों ने मिलकर श्रीजी से कहा कि हमने तो अपने मत का परिचय आपको दे दिया। अब आप अपने मत के बारे में बताइये।

कौन सास्त्र में कहां कही है, सो हमें कहो दे साख।
नई राह है तुम्हारी, सो कहो हमें विध भाख।।५९।।

आप हमें साक्षी देकर यह बताने का कष्ट करें कि आपकी यह बात किस शास्त्र में कहाँ पर कही गयी है? ऐसा लगता है कि आपका मार्ग कुछ नया है। यदि ऐसा है, तो आप हमें अच्छी तरह से बताने का कष्ट करें।

श्रीजी का जवाब

कही व्यास हरवंस में, देखो संत विचार।

जनमेजय राजा प्रते, सुनो विरोध तज सार।।६०।।

श्रीजी कहते हैं– कि हे सन्त जनों! आप विरोध छोड़कर शान्तिपूर्वक मेरी बात सुनें। हरिवंश पुराण में वेद व्यास जी ने राजा जनमेजय से जो बात कही है, उसका आप विचार कीजिए।

कही अनहो व्यासें सों, नृप सुन पूछत सोए।

ब्रह्म रूप मुनि प्रकट हैं, दुर्घट सब थे जोए।।६१।।

वेद व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा कि एक अनहोनी घटना घटने वाली है। यह सुनकर राजा ने कहा कि कृपा करके आप मुझे वह बताने का कष्ट करें। व्यास जी कहते हैं, अब ब्रह्म स्वरूप मुनि प्रकट होने वाले हैं,

जो आज दिन तक सबके लिये दुर्लभ थे।

नृप तब पूछी व्यास सों, सनकादिक थें सोए।

तुम लों ऋषि बहु प्रगटे, क्या ब्रह्म रूप तुम ना होए।।६२।।

तब राजा जनमेजय ने व्यास जी से पूछा कि सनकादिक से लेकर आप तक इतने ऋषि हो गए, क्या आपमें कोई भी ब्रह्मरूप नहीं हुआ?

तब व्यासें नृप सों कही, वे भये नहीं कोई काल।

हू हैं प्रकट कलयुग में, प्रगट आए के हाल।।६३।।

तब वेद व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा, वे पहले कभी न हुए हैं और न भविष्य में कभी होंगे। वे इसी कलियुग में बहुत शीघ्र ही प्रकट होने वाले हैं।

भावार्थ– पाण्डवों के द्वारा ३६ वर्ष तक राज्य करने के पश्चात् कलियुग का प्रारम्भ हो गया था। इसके पश्चात् वे परीक्षित को सिंहासन पर बैठाकर हिमालय की यात्रा पर चल पड़े। परीक्षित के पुत्र जनमेजय से वेद व्यास जी की जो वार्ता हुई, उसमें उन्होंने इसी कलियुग में ब्रह्ममुनियों के आने के लिए संकेत किया।

इस चौपाई के चौथे चरण में "शीघ्र प्रकट होने" का यही भाव है।

उत्तम पुरूष बिन और को, देवी देव न ध्याये।
अकथ कथा नवतन कहे, जग सुन पूजेताये।।६४।।

उनकी सबसे बड़ी पहचान यही है कि वे उत्तम पुरूष अक्षरातीत के अतिरिक्त अन्य किसी भी देवी–देवता की उपासना नहीं करेंगे और वे ऐसे अलौकिक नये ज्ञान की

चर्चा करेंगे, जिसको आज तक किसी ने नहीं कहा।

भावार्थ– परमधाम तथा उत्तम पुरूष अक्षरातीत का ज्ञान ही वह ज्ञान है, जिसकी आज तक किसी ने चर्चा नहीं की थी, इसलिये इसको अकथ और नूतन ज्ञान कहा गया है।

ए व्यासें नृप सों कही, बहुत विध विस्तार।
तिनकी साख जो देत हों, देखो संत विचार।।६५।।

यह बात वेद व्यास जी ने राजा जनमेजय से कही थी, जिसका बहुत अधिक विस्तार है। मैं हरिवंश पुराण से उसकी साक्षी दे रहा हूँ। हे सन्त जनों! उस पर विचार कीजिए।

श्लोक– उक्तम् च हरिवंशे भविष्योत्तर।

अभाविनो भविष्यन्ति मुनयो ब्रह्मरूपेणः।

उत्पन्ना ये कलौयुगे, प्रधान पुरूषाश्रयाः।।

कथायोगेन तान्सर्वान् पूजयिष्यन्ति मानवाः।

यस्य पूजा प्रभावेन जीव सृष्टि उद्धारणम्।।

(हरिवंश पुराण भविष्य पर्व अध्याय ४ श्लोक २१,२२)

हरिवंश पुराण के भविष्य पर्व में कहा गया है कि उत्तम पुरुष अक्षरातीत के आश्रय में रहने वाले वे ब्रह्मरूप मुनि कलियुग में प्रकट होंगे, जो आज दिन तक कभी भी संसार में नहीं आये थे। उनके कथायोग से , अर्थात् उनके द्वारा सुनाये गये ज्ञान से, प्रभावित होकर सभी लोग उनकी पूजा करेंगे। उस पूजा के प्रभाव से, अर्थात् ब्रह्ममुनियों का सम्मान करने से, जीव सृष्टि अखण्ड मुक्ति को प्राप्त होगी।

या भांत वेद उपनिषद में, विध विध कही बनाए।

और अस्टादस पुराण में, आगम सास्त्र लेखाए।।६६।।

इस प्रकार वेदों और उपनिषदों में अनेक प्रकार से ब्रह्ममुनियों की साक्षी दी हुई है। इसके अतिरिक्त अठारह पुराणों तथा भविष्य के ग्रन्थों में ब्रह्ममुनियों के प्रकट होने की साक्षी दी गयी है।

भावार्थ– वेदों में कोई इतिहास या भविष्य की बातें नहीं हैं, किन्तु जिस प्रकार मोर के नाचने से यह अनुमान लगा लिया जाता है कि आकाश में घनी घटा छायी हुई है, उसी प्रकार वेदों में कुछ ऐसे प्रसंग हैं जिनका रहस्य ब्रह्ममुनियों के सिवाय कोई नहीं जान सकता।

"यो वेतसं हिरण्ययं तिष्ठन्तं सलिले वेद।

स वै गुह्यः प्रजापतिः।।" अथर्ववेद १०/७/४१

इस मन्त्र में पहेली के रूप में यह वर्णन किया गया है कि

अक्षरातीत पूर्णब्रह्म रूपी जल में स्वर्ण का बेंत रूपी अक्षर ब्रह्म स्थित है। गुह्य प्रजा का संकेत ब्रह्मसृष्टियों के लिए किया गया है। ब्रह्मसृष्टियों के एकमात्र पति अनादि अक्षरातीत पूर्णब्रह्म को ही यह पता है कि मैं स्वयं चिद्घन् स्वरूप हूँ, मेरी सत्ता का स्वरूप अक्षर ब्रह्म है, तथा मेरे आनन्द का स्वरूप आत्माएं हैं। सत् + चित् + आनन्द का स्पष्ट रहस्य स्वयं अक्षरातीत पूर्णब्रह्म को छोड़कर सामान्य जीवों को नहीं है।

इस प्रकार वेदों, उपनिषदों के ऐसे उद्धरणों के रहस्य खुलने से पता चलता है कि ब्रह्मसृष्टियों का प्रकटन हो चुका है।

इसके अतिरिक्त पुराण संहिता एवं माहेश्वर तन्त्र के अन्तर्गत ब्रह्मसृष्टियों के आने की विस्तारपूर्वक साक्षी दी गयी है।

जो ग्राहक या वस्त को, सो लेवे चित ल्याए।

ताको वेद उपनीषदें, हम सब दे समझाए।।६७।।

जो भी आचार्य परमधाम के इस अलौकिक ज्ञान का जिज्ञासु हो, वह सावधान चित्त से इसे ग्रहण करे। इसको हम वेद और उपनिषदों की साक्षी देकर अच्छी तरह समझाएंगे।

तब सबने चित में लई, ए नहीं कहूं बंधाए।

पूछिए धाम क्षेत्र संप्रदा, तब जवाब नहीं आए।।६८।।

तब सभी ने अपने मन में सोचा कि ये कहीं भी हमसे बन्ध नहीं पा रहे हैं। यदि हम सभी मिलकर इनसे इनका धाम, क्षेत्र और सम्प्रदाय आदि पूछें, तो सम्भवतः ये भी उत्तर नहीं दे पाएँगे।

स्वामी विध संप्रदाए की, कहो साख दे सोए।

ज्यों हम अपनी सब ने कही, त्यों तुम कहो प्रसंन होए।।६९।।

वे सभी आचार्यजन एकत्रित होकर श्री प्राणनाथ जी से कहने लगे कि हे स्वामी जी! आप अपने सम्प्रदाय की पद्धति सभी ग्रन्थों की साक्षी देकर हमें बताएँ। जिस तरह से हमने अपने-अपने सम्प्रदाय की पद्धति आपको बतायी है, उसी तरह से आप भी प्रसन्न होकर हमें बताइये।

भावार्थ- सम्पूर्ण बीतक में केवल दो बार ही श्री प्राणनाथ जी को "स्वामी जी" कहकर सम्बोधित किया गया है। इस चौपाई में और एक बार औरंगाबाद के राजा भाव सिंह के द्वारा स्वामी कृष्णदास कहकर सम्बोधित किया गया है। शेष सम्पूर्ण बीतक में कहीं भी किसी जाग्रत सुन्दरसाथ ने श्रीजी को स्वामी जी नहीं कहा है,

किन्तु आजकल सुन्दरसाथ के द्वारा अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी को स्वामी प्राणनाथ कहने की जो प्रवृत्ति चली है, वह बहुत ही घातक है। ऐसा कहने से श्री प्राणनाथ जी का स्तर स्वामी विवेकानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, आदि सन्यासियों के समकक्ष हो जाता है।

करके गर्व बोले सबे, प्रस्न विविध विस्तार।

साखा सिखा कहो आपनी, फेर कहो सूत्र विचार।।७०।।

वे सभी आचार्यजन गर्वपूर्वक अपने प्रश्नों का अनेक प्रकार से विस्तार करते हुए कहने लगे, हे श्रीजी! आप अपने सम्प्रदाय की शिखा बताइये। पुनः सूत्र पर भी अपने विचार स्पष्ट कीजिए।

सेवन अपनो निज कहो, गोत्र इस्ट अरू जाप।

साधन मंत्र पुरी कहो, कहो देवी परताप।।७१।।

आपका आराध्य कौन है, इसके बारे में बताने का कष्ट करें? आप अपने गोत्र, इष्ट, और जप के बारे में भी अवगत कराइये। परब्रह्म को पाने का आपका साधन क्या है? इस पर प्रकाश डालिये। आपका मन्त्र क्या है? पुरी क्या है? यह भी आप स्पष्ट कीजिए कि अपकी देवी की शक्ति क्या है?

साला कहिए अपनी, क्षेत्र होए जो कोए।

सुख विलास रिष देव जो, तीरथ सास्त्र जो होए।।७२।।

आप अपने सम्प्रदाय की शाला बताइये? आपका क्षेत्र, सुख-विलास का स्थान, ऋषि, देवता, तीर्थ, और शास्त्र क्या हैं? इस पर प्रकाश डालिये।

ग्यान कहिए कुल आपनो, फल और द्वार प्रकास।

कहां निवास कौन संप्रदा, कहो उत्तर प्रस्न उजास।।७३।।

आप यह भी बताइये कि आप किसका ज्ञान मानते हैं? आपका कुल क्या है? आपके ज्ञान को ग्रहण करने का फल क्या प्राप्त होगा और आपके धाम को पाने का मार्ग या नियम क्या है? उस पर भी प्रकाश डालिए। आपका मूल निवास कहाँ है? आपके सम्प्रदाय का नाम क्या है? आप कृपा करके हमारे प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

भावार्थ– इस प्रकार आचार्यों ने श्रीजी से २४ प्रश्न पूछे।

कृपा द्रस्ट बोले तबे, सुनो साध सब कोए।

प्रस्न प्रस्न को उत्तर, तुमको दें हम सोए।।७४।।

तब सबके ऊपर कृपा करने वाले श्री प्राणनाथ जी कहने लगे कि हे सन्त जनों! आप सभी मेरी बात सुनिए।

आपके एक-एक प्रश्न का हम यथोचित उत्तर देंगे।

अकथ भेद अदभुत एह, चित दे सुनो तुम सब।
कीजो हिरदे विचार, धरो दोस जिन अब।।७५।।

गुह्य भेदों से भरपूर यह अद्भुत ज्ञान आज दिन तक इस संसार में कहा नहीं गया है। इसलिये हे सन्त जनों! अब आप सभी एकाग्र चित्त से इसे श्रवण कीजिए तथा अपने हृदय में इसका विचार भी कीजिए। आप अपने मन में किसी भी प्रकार की दोष दृष्टि न रखें।

श्रुति स्मृति की साख दे, कहों तुमें समझाए।
ग्राहक हो चित दे सुनो, तो कलजुग भ्रम जाए।।७६।।

मैं श्रुतियों और स्मृतियों की साक्षी देकर आप सभी को समझा रहा हूँ। यदि आप इस ज्ञान को जिज्ञासु होकर

एकाग्र चित्त से सुनेंगे, तो आपके अज्ञान रूपी संशय का नाश हो जायेगा।

भावार्थ– श्रुति का तात्पर्य है "वेद–उपनिषद" तथा स्मृति का तात्पर्य है "मुनस्मृति आदि धर्मशास्त्र"।

श्री निजानन्द सम्प्रदाय की पद्धति

सतगुरू ब्रह्मानंद है, सूत्र है अक्षर रूप।

सिखा सदा इन सें परे, चेतन चिद जो अनूप।।७७।।

आनन्दमय स्वरूप वाले ब्रह्म ही हमारे सद्गुरू हैं। अक्षर ब्रह्म सूत्र रूप हैं। अक्षर से परे अक्षरातीत परब्रह्म की जो चिद्घन स्वरूप शोभा है, वह हमारी शिखा है।

भावार्थ– तैतिरिय उपनिषद में कहा गया है– "आनन्दो ब्रह्म इति व्यंजनात्" अर्थात् परब्रह्म आनन्दमय है। इस

प्रकार सच्चिदानन्द परब्रह्म को ही सद्गुरू माना गया है। अथर्ववेद के काण्ड १० सूक्त ८ मन्त्र ३७,३८ में दो सूत्रों का वर्णन है। एक सूत्र प्रकृति का वह सूत्र है, जिसमें समस्त प्राणी बंधे हुए हैं और उस सूत्र का सूत्र "अक्षर ब्रह्म" को माना गया है। मन्त्र में संक्षिप्त रूप से इस प्रकार माना गया है–

सूत्रं सूत्रस्य यो विद्यात् म विद्याद ब्राह्मणं महत्।।

अथर्ववेद १०/८/३७

श्लोक– ब्रह्मानन्दं परम् सुखदं केवलं ज्ञान मूर्तिम्,

द्वन्द्वातीतं गगन सदृशं तत्वमस्यादि लक्ष्यम्।।

एको नित्यं विमलमचलं सर्वदा साक्षि रूपं,

भावातीतं त्रिगुण रहितं सद्गुरं तं नमामि।।

(स्कन्द पुराणे गुरूगीतायाम्)

परब्रह्म के आनन्दमयी स्वरूप वाले, सर्वश्रेष्ठ आनन्द को देने वाले, अलौकिक ज्ञान स्वरूप, सभी द्वन्द्वों से रहित, आकाश के समान व्यापक हृदय वाले, "तुम ब्रह्म हो" के कथन को दर्शाने वाले, सर्वदा निर्मल स्वरूप वाले, परिवर्तन से रहित एकरस रहने वाले, हमेशा ही सबके साक्षी रूप, मन के भावों से परे रहने वाले, सत्व, रज, तम के बन्धन से रहित, उस एकमात्र सद्गुरू को मैं प्रणाम करता हूँ।

श्लोक– यदक्षरं परं ब्रह्म तत्सूत्रमिति धारयेत्।
सूचनात्सुत्रमित्याहूः सूत्रं नाम परं पदम्।।
तत्सूत्रं विदितं येन स विप्रो वेदपरागः।

(ब्रह्मोपनिषद)

जो अत्यन्त श्रेष्ठ अक्षर ब्रह्म रूपी सूत्र है, उसे धारण

करना चाहिए। परब्रह्म के प्रति संकेत करने के कारण उसे सूत्र कहते हैं। उस श्रेष्ठ धाम को ही सूत्र कहा गया है। उस सूत्र को जो जानता है, वही विप्र वेद के रहस्य को जानने वाला कहा जाता है।

श्लोक– शिखा ज्ञानमयी यस्य उपवीतं च तन्मयम्।
ब्राह्मण्यं सकलं तस्य इति ब्रह्मविदो विदुः।।
चिदेव पंचभूतानि चिदेव भुवनत्रयम्।

(ब्रह्मोपनिषद)

जिसकी शिखा ज्ञानमयी स्वरूप वाली है तथा यज्ञोपवीत भी ज्ञानमयी स्वरूप वाला है, उसे सब कुछ ब्रह्मरूप दिखाई देता है। इस प्रकार उसे ब्रह्मज्ञानी कहते हैं। उस ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि में पाँचों तत्व तथा तीनों लोक भी चेतन की ही तरह प्रतीत होते हैं।

श्लोक– आनन्द विज्ञान घन एवास्मि।

तदेव मम् परमं धाम तदैव शिखा तदेवोपवीतं च।।

(परमहंस उपनिषद)

मैं आनन्दमय, विज्ञानमय स्वरूप वाला हूँ। वह ही मेरा परमधाम है, वह ही शिखा है, और वह ही यज्ञोपवीत है।

सेवन है पुरूषोतम, गोत्र चिदानंद जान।

परम किशोरी इस्ट है, पतिव्रत साधन मान।।७८।।

उत्तम पुरूष अक्षरातीत हमारे आराध्य हैं। हमारा गोत्र चिदानन्द है। किशोर स्वरूप वाली श्यामा जी हमारी इष्ट हैं। अनन्य परा प्रेम लक्षणा भक्ति (पतिव्रता साधन) के द्वारा हम परब्रह्म की प्राप्ति मानते हैं।

भावार्थ– परमधाम की ब्रह्मात्मा के परात्म का प्रेममयी तन श्री राज जी का है और उसमें श्यामा जी का आनन्द

प्रवाहित हो रहा है। इस प्रकार वह चिद् और आनन्द का स्वरूप है, जिसे चिदानन्द कहते हैं। गोत्र को चिदानन्द कहे जाने का यही कारण है।

श्लोक– द्वाविमौ पुरूषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कुटस्थोऽक्षरः उच्यते।।
उत्तमः पुरूषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
(गीता १५/१६–१७)

संसार में दो पुरूष क्षर और अक्षर कहे जाते हैं। सभी प्राणी क्षर कहे जाते हैं तथा कूटस्थ पुरूष अक्षर कहा जाता है। उत्तम पुरूष अक्षरातीत इनसे परे दूसरा ही है, जो परमात्मा कहा जाता है। वह अविनाशी है, सबका स्वामी है, और तीनों लोकों को अपनी सत्ता के स्वरूप से धारण करता है।

श्लोक– अनादिमादिं चिदरूपं चिदानन्दं परं विभु।
वृन्दानेश्वरं ध्यायेत त्रिगुणस्येक कारणम्।।
(वाराह संहितायाम् गोत्रस्य साक्षी)

चेतन और आनन्दमय, अनादि स्वरूप वाले, मूल से ही चेतन स्वरूप वाले, अति श्रेष्ठ, वृन्दावन के स्वामी का ध्यान करना चाहिए, जो त्रिगुण के कारण हैं। (वृन्दावन में अक्षरातीत परब्रह्म ने लीला की थी। इस श्लोक में वृन्दावनेश्वर के कथन से यही संकेत है)।

श्लोक– सिद्धिरूपासि चाराध्या राधिका जीवनं मम्।
ये स्मृत्वा भावयन्ति त्वां तैरहं भाविता सदा।।
तत्र में वास्तवं रूपं यत्र यत्र भवद्दृशः।
ममेष्टं च ममात्मा त्वं राधैव राध्यते मया।।

(पुराण संहिता ६/३६-३८)

श्री कृष्ण जी कहते हैं कि हे राधा! तुम अलौकिक स्वरूप वाली हो, और आराधना करने योग्य हो, और मेरे जीवन का आधार हो। जो तुम्हारा स्मरण करके तुम्हें प्रसन्न करते हैं, तो उनके द्वारा मुझे ही प्रसन्न किया जाता है। जहाँ-जहाँ ऐसा होता है, वहाँ-वहाँ ही मेरा वास्तविक रूप होता है। तुम मेरी इष्ट हो, प्रिया हो, और मेरी आत्मा हो। मुझसे ही तुम्हारी भी पूर्णता है।

विशेष- इस श्लोक में राधा-कृष्ण के दृष्टान्त से परमधाम के युगल स्वरूप श्री राजश्यामा जी का भाव लेना चाहिए।

श्लोक- नाहं वेदैर्न न तपसा न दानेन न चेज्यया।

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवं विधोऽर्जुन।।

(गीता ११/५३-५४)

न तो मैं केवल वेदों के अध्ययन मात्र से प्राप्त होता हूँ, न तप से, न दान से, और न यज्ञ से। हे अर्जुन! मैं केवल अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति से ही प्राप्त होता हूँ।

द्रष्टव्य- जब परब्रह्म ने व्रज और रास में युगल स्वरूप की लीला की, तो उसी लीला को आधार मानकर परमधाम के युगल स्वरूप को दर्शाने का प्रयास धर्मग्रन्थों में किया गया है। इसलिए चाहे गोत्र के रूप में चिदानन्द का प्रमाण देना हो या इष्ट के रूप में श्यामा जी का प्रमाण देना हो, राधा-कृष्ण से सम्बन्धित श्लोकों को ही देना पड़ता है। यहाँ तक कि युगल स्वरूप का प्रमाण भी राधा-कृष्ण के नाम से बने हुए श्लोकों का आधार लेकर ही देना होता है। यद्यपि पुराण संहिता और माहेश्वर तन्त्र में इस सम्बन्ध में साक्षियाँ उपलब्ध हैं, जो आगे दर्शायी

जायेंगी।

श्री जुगल किशोर को जाप है, मंत्र तारतम सोए।
ब्रह्म विद्या देवी सही, पुरी नौतन मम जोए।।७९।।

हम परब्रह्म के युगल स्वरूप (श्री राजश्यामा जी) का जप करते हैं। हमारा मन्त्र तारतम है। ब्रह्मविद्या को हम देवी मानते हैं तथा इस संसार में हमारी पुरी नवतनपुरी है।

श्लोक– राधया सह श्रीकृष्णं युगलं सिंहासने स्थितम्।
पूर्वोक्तं रूप लावण्यं दिव्य भूषा श्रृंगम्बरम्।।
(बाराह संहिता)

पहले वर्णन किए हुए रूप एवं लावण्य से युक्त,

अलौकिक वस्त्र आभूषणों से सुशोभित, श्री कृष्ण जी राधा के साथ युगल स्वरूप के रूप में सिंहासन पर विराजमान हैं।

द्रष्टव्य– माहेश्वर तन्त्र ४०/२८ में कहा गया है–

रसोहं मूर्तिमान साक्षात् घनीभूतः कलावति।

तस्याद्यं भागं मां विद्धि द्वितीयं स्वामिनीं प्रियाम्।।

अर्थात् मैं (परब्रह्म) घनीभूत (सबका मूल) मूर्तिमान साक्षात् रस हूँ। उसका प्रथम भाग मुझे समझो और द्वितीय भाग प्रिया स्वामिनी (श्यामा जी) को समझो। अक्षर, अक्षरातीत, श्यामा जी, सखियाँ, सभी का स्वरूप परमधाम में किशोर है। इस सम्बन्ध में वेद एवं पुराण संहिता में इस प्रकार कहा है–

अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू रसेन तृप्तः न कुतश्चनोनः।

तमेव विद्धान् न विभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानाम्।।

अथर्ववेद १०/८/४४

अर्थात् पूर्णकाम, अमृत स्वरूप, आनन्दमयी रस से भरपूर, निजधाम में सर्वत्र पूर्ण, उस धीर, अजर, अमर, नित्य तरूण, परब्रह्म को जानकर ही विद्वान पुरूष मृत्यु से नहीं डरता है। इसी प्रकार अक्षर ब्रह्म का भी स्वरूप अखण्ड नूरमयी और युवा है।

येषामिन्द्रो युवा सखा।

साम वेद उ. ५/१२/२, यजु. ३३/३४

अर्थात् अक्षर ब्रह्म युवा स्वरूप वाला, ऐश्वर्यवान, एवं सखा है।

श्लोक– स्वकृत विचित्रयोनिषु विशन्निव हेतुतया,
तरतमश्चकास्स्यनलवत स्वकृतानुकृतिः।

अथ वितथास्वमूष्ववितथं तव धाम समं,

विरजधियोऽन्वयन्त्यभिविपण्यव एक रसम्।।

(भागवत् १०/८७/१९)

हे परमात्मा! अपने द्वारा बनाई हुई विचित्र प्रकार की योनियों में कार्य-कारण रूप से प्रवेश करते हुए आप ही लकड़ी में अग्नि की भाँति प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, किन्तु इस भेद को तारतम ज्ञान के द्वारा ही जाना जा सकता है। सदा अविनाशी एवं एकरस रहने वाले आपके धाम को केवल निर्मल बुद्धि वाले मानव ही प्राप्त कर पाते हैं।

अक्षरात्मा परानन्दः किशोरः काम विग्रहः।

पुराण संहिता ३/१०८

अर्थात् अक्षरब्रह्म का स्वरूप किशोर ही है।

श्लोक– ॐ ब्रह्म विद्या प्रवक्ष्यामि सर्वज्ञानम् उत्तमम्।
यत्रोत्पत्ति लयं चैव ब्रह्माविष्णु महेश्वराः।।
(ब्रह्म विद्योपनिषद)

अब मैं सभी ज्ञानों में उत्तम उस ब्रह्म विद्या के विषय में कहता हूँ जिसके जानने पर ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि देवों की उत्पत्ति एवं लय होने का ज्ञान हो जाता है।

अठोत्तर सौ पख साखा सही, साला है गौलोक।
सतगुरू चरण को छेत्र है, जहां जाए सब सोक।।८०।।

एक सौ आठ पक्षों की शाखा है। हमारी शाला गोलोक है। सद्गुरू रूप परब्रह्म के चरण कमल ही क्षेत्र हैं, जिनका ध्यान करने पर सारे दुःख समाप्त हो जाते हैं।

भावार्थ– नवधा भक्ति इस प्रकार की होती है– श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य,

सख्य, और आत्मनिवेदन।

इस नवधा भक्ति का पालन सत्व, रज, तम के भावों में होता है, इसलिये इसके २७ भेद हो जाते हैं। पुनः पुष्ट, प्रवाह, एवं मर्यादा के पालन भाव से (२७ x ३) ८१ भेद हो जाते हैं।

८२वाँ पक्ष वल्लभाचार्य जी का है, जो अखण्ड गोलोक का ज्ञान देते हैं। ८३वाँ पक्ष कबीर आदि पञ्च वासनाओं का है जो बेहद मण्डल का ज्ञान है, और इसके परे परमधाम के २५ पक्ष हैं। ये सभी मिलाकर १०८ पक्ष होते हैं।

सुख विलास मांहें नित वृन्दावन, रिष महाविष्णु है जोए।
वेद हमारो स्वसं है, तीरथ जमुना सोए।।८१।।

सुख-विलास का स्थान नित्य वृन्दावन है। महाविष्णु

ऋषि हैं। वेद हमारा स्वसं वेद है। परमधाम की यमुना जी हमारा तीर्थ हैं।

भावार्थ– स्वसं वेद का अर्थ होता है "आत्म–वेद"। परब्रह्म के आदेश से अवतरित तारतम वाणी ही वह ब्रह्मवाणी है, जिसमें आत्मा और परमात्मा की विवेचना दी गयी है। यही हमारा वेद है।

सास्त्र श्रवण श्री भागवत, बुद्ध जागृत को ज्ञान।
कुल मूल हमारो आनन्द है, फल नित्य विहार प्रमान।।८२।।

श्रीमद्भागवत् हमारा शास्त्र है, जिसमें अखण्ड व्रज और रास की लीलाओं का वर्णन किया गया है। हम जाग्रत बुद्धि के ज्ञान तारतम वाणी को मानते हैं, स्वप्न की बुद्धि के ज्ञान को नहीं मानते। हमारा मूल कुल परब्रह्म के आनन्द स्वरूप श्यामा जी का अंग है। इस तारतम ज्ञान

को ग्रहण करने का फल परमधाम की नित्य (अखण्ड) लीला में विहार करना है।

भावार्थ– प्रायः भ्रान्तिवश भागवत् को जाग्रत बुद्धि का ज्ञान कहा जाता है, किन्तु ऐसा कहना तारतम वाणी के पूर्णतः विपरीत है। जब सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के प्रकट होने से पूर्व इस सृष्टि में तारतम ज्ञान था ही नहीं, तो श्रीमद्भागवत् जाग्रत बुद्धि का ज्ञान कैसे हो सकता है?

एते दिन त्रैलोक में, हुती बुध सुपन।
सो बुध जी बुध जागृत ले, प्रगटे पुरी नवतन।।

यदि भागवत् सुनने से बुद्धि जाग्रत होती, तो कान्हजी भट्ट या भागवत् के रचनाकार की बुद्धि क्यों नहीं जाग्रत हुई? इसके साथ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि आचार्यों के द्वारा शास्त्र अलग रूप में पूछा गया है और ज्ञान अलग रूप से पूछा गया है।

दिव्य ब्रह्मपुर धाम है, घर अक्षरातीत निवास।

निजानन्द है सम्प्रदा, ए उत्तर प्रस्न प्रकास।।८३।।

हमारा धाम दिव्य ब्रह्मपुर परमधाम है। जिस परमधाम में अक्षरातीत लीला करते हैं, वही हमारा मूलघर है। हमारे सम्प्रदाय का नाम निजानन्द है। यह आपके प्रश्नों के उत्तर हैं।

भावार्थ– मुण्डक उपनिषद में कहा गया है–

"दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येषः व्योम्नि आत्मा प्रतिष्ठितः।"

अर्थात् दिव्य ब्रह्मपुर में परब्रह्म है।

धनी श्री देवचन्द्र जी निजानन्द, तिन प्रगट करी सम्प्रदा ऐह।

तिनथें हम यह लखी हैं, हम द्वार पावें अब तेह।।८४।।

सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी परब्रह्म के आनन्द स्वरूप अर्थात्

निजानन्द हैं। उन्होंने ही इस निजानन्द सम्प्रदाय को प्रकट किया है। उनसे ही हमने यह ज्ञान ग्रहण किया है। इस ज्ञान के द्वारा ही हमें परमधाम का मार्ग मिला है।

तो या भांत चर्चा बहुत, भई मेला में जान।
साख दई सब सास्त्र की, अवगत गति जो प्रमान।।८५।।

इस प्रकार हरिद्वार के महाकुम्भ मेले में आचार्यों के साथ बहुत अधिक चर्चा हुयी, जिसमें परब्रह्म की पहचान से सम्बन्धित सभी साक्षियां दी गयीं।

तहाँ पैतीसा के बरस में, भये निसान धूम्रकेत।
खय भई एक मास की, इन समै जगत भयो अचेत।।८६।।

उस समय वि.सं. १७३५ का समय चल रहा था। धर्मग्रन्थों में लिखी भविष्यवाणी के अनुसार रात्रि के

समय धूम्रकेतु का तारा भी दिखाई पड़ा, तथा वर्ष में एक माह कम हुआ अर्थात् ११ मास का वह वर्ष हुआ। फिर भी संसार के लोग अज्ञानता की नींद में सोये रहे, अर्थात् उन्हें पता ही नहीं चला कि विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप का प्रकटन हो चुका है।

भावार्थ– चैत्र मास से जो नव संवत्सर प्रारम्भ होता है, उसी दिन हरिद्वार में सभी आचार्यों ने श्री महामति जी को विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक के रूप में स्वीकार किया और श्रद्धापूर्वक उनकी आरती उतारी। उन्होंने उनके नाम की ध्वजा फहराई तथा विजयाभिनन्द बुध जी का शाका भी प्रचलित किया।

भविष्य के ग्रन्थों में साक्षी थी कि जिस समय विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप प्रकट होंगे, उस रात्रि को धूम्रकेतु का तारा दिखाई देगा और वह वर्ष भी

ग्यारह माह का होगा। ये दोनों साक्षियाँ भी उस दिन पूर्ण हो गईं, किन्तु मायावी जीव अज्ञानता की निद्रा में सोते रहे।

साके विजयाभिनन्द के, पुकारत सब कलाम।
ताको सबै पढ़त हैं, पर भूली खलक तमाम।।८७।।

सभी धर्मग्रन्थों में श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप के शाका के प्रचलित होने की बात कही गयी है। संसार के लोग धर्मग्रन्थों में लिखे उन वचनों को पढ़ते तो हैं, फिर भी माया की नींद के कारण किसी ने उन पर ध्यान नहीं दिया।

जीती फौज सिरे संसार की, कारज कारन विस्तार।
तहाँ तमासा देखके, फेर के किया विचार।।८८।।

हरिद्वार में श्री प्राणनाथ जी ने हिन्दू जगत के सभी आचार्यों पर शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त की। मूल स्वरूप ने पहले ही अपने हृदय में ले लिया था कि हरिद्वार में विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप को प्रकट कर तारतम ज्ञान का फैलाव होना है। इसी कारण हरिद्वार में इस तरह की लीला हुई। इसके पश्चात् श्री प्राणनाथ जी ने कुम्भ मेले का सारा दृश्य देखकर, पुनः दिल्ली चलने का विचार किया।

दाउद पाण्डे की हवेली में, साथ को छोड़े जब।
हरद्वार से होए के, आए के मिले तब।।८९।।

श्रीजी दिल्ली में ही सब सुन्दरसाथ को दाऊ पाण्डेय की हवेली में छोड़कर चले गये थे। अब हरिद्वार से वापस लौटने के बाद, उस हवेली में आये और सभी सुन्दरसाथ

से मिले।

भावार्थ– दाऊद शब्द अरबी भाषा का है, जो ब्राह्मण की उपाधि पाण्डे के साथ नहीं जोड़ा जा सकता। वस्तुतः यह शब्द "दाऊ" होना चाहिए।

इन समें खिजमत में, रहता था गरीब दास।
खान सामा खिताब दीवान का, कह्या कलाम खास।।९०।।

इस समय गरीबदास जी सब सुन्दरसाथ के प्रबन्धन की सेवा में रहते थे। इसलिये श्रीजी ने बहुत प्रेम भरे शब्दों में उनके प्रबन्धक पद को "खानसामा" का खिताब दिया था।

भावार्थ– यद्यपि "खानसामा" शब्द रसोइये के लिये प्रयोग होता है, किन्तु सब सुन्दरसाथ की बहुत प्रेमपूर्वक सेवा करने के कारण श्रीजी ने उन्हें इस विशेष शब्द से

सम्बोधित किया था।

एह लालदास को, हुआ था हुकम।

इसी वास्ते आगे को, रखता था कदम।।९१।।

हरिद्वार आने से पहले श्रीजी ने लालदास जी को भीम भाई के साथ औरंगज़ेब को पैगाम देने का हुक्म दिया था, जो कुछ समय के लिये स्थगित कर दिया था। इसलिये औरंगज़ेब को सन्देश पहुँचाने के हर काम में श्री लालदास जी हमेशा आगे ही रहते थे।

प्रकरण ।।३७।। चौपाई ।।१८१८।।

औरंगज़ेब को पैगाम

फेर श्री राज आए दिल्ली, आए मिले सब साथ।
मास चार इत भये, फेर साथ के पकड़े हाथ।।१।।

हरिद्वार से चलकर श्री प्राणनाथ जी दिल्ली आये और दाऊ पाण्डेय की हवेली में आकर सबसे मिले। हरिद्वार में रहते हुए उन्हें ४ महीने बीत गये थे। दिल्ली आकर उन्होंने सब सुन्दरसाथ का हाथ पकड़ा, अर्थात् अपने प्रेम व कृपा की छत्रछाया में ले लिया।

इत विचार करके, राखें एक तरफ सरूप दे।
लड़े छड़े होए के, देखें कैसा काम होवे जेह।।२।।

दिल्ली में सबने आपस में विचार किया कि महिलाओं, बच्चों, तथा वृद्धों को एक सुरक्षित स्थान पर रख दिया

जाए। दिल्ली में जागनी कार्य में केवल युवाओं को अपने साथ रखना है तथा यह देखना है कि किसी भी तरह से औरंगज़ेब की जागनी का कार्य हो जाए।

तब अनूप सहर को, सब साथ को ले चले।
तहां एक हवेली लेय के, सब साथ को रखे।।३।।

तब श्रीजी छोटे बच्चों एवं श्री बाई जी सहित अन्य सभी महिला सुन्दरसाथ को साथ लेकर अनूपशहर को चल दिए और एक हवेली लेकर सब सुन्दरसाथ को वहाँ ठहराया।

इत रहत एक पाठक, अनूप सहर का चौधरी।
दो दिन आया दीदार को, तिन सों चरचा करी।।४।।

उस समय अनूपशहर का चौधरी एक पाठक था। वह दो

दिन श्री प्राणनाथ जी के दर्शन के लिए आया और उनसे आध्यात्मिक ज्ञान के सम्बन्ध में कुछ चर्चा की।

सीसा एक गुलाब का, आगे धरया तिन।
उपली कछुक पेहेचान से, और न चीना किन।।५।।

उसने गुलाब के इत्र की एक बोतल लाकर श्रीजी के चरणों में भेंट की। उसने श्री प्राणनाथ जी की कुछ बाह्य पहचान की। शेष अन्य कोई भी श्रीजी के स्वरूप की पहचान न कर सका।

तहां साथ को राख के, फेर आये दिल्ली में।
उतरे आय साहगंज में, आये बातें करी साथ से।।६।।

श्रीजी महिला सुन्दरसाथ को अनूपशहर में छोड़ पुनः दिल्ली आ गये और शाहगंज मोहल्ले में ठहरे। वहाँ उन्होंने

सुन्दरसाथ से जागनी के सम्बन्ध में बातचीत की।

साथ जो दिल्ली का, आये मिला सब धाए।

तिन सबको परियान की, बातें करी बनाए।।७।।

दिल्ली का जो भी सुन्दरसाथ था, वह दौड़ कर श्रीजी से मिलने आया। उन सब सुन्दरसाथ से श्री प्राणनाथ जी ने औरंगज़ेब को सन्देश देने के सम्बन्ध में बातचीत की।

तहां सेती पाती लिखी, बिहारी जी ऊपर।

एक सकस चलाया, सारी दे खबर।।८।।

वहाँ से उन्होंने बिहारी जी को एक पत्र लिखा तथा जागनी कार्य की सारी सूचना देकर एक व्यक्ति के हाथ से उनके पास भिजवा दिया।

फेर इहां से चले, आए लाल दरवाजे में।

साथ सबे मिल के, परियान किया तिन से।।९।।

पुनः यहाँ से चलकर दिल्ली के लाल दरवाजे आये और वहाँ सब सुन्दरसाथ ने मिलकर इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया कि औरंगज़ेब तक अपनी बात कैसे पहुँचायी जाये?

आसाजीत बुलाइया, सुनाए सब कलाम।

सिफत जो तिन में, महम्मद अलेहु सलाम।।१०।।

श्रीजी ने आसाजीत वकील को बुलवाया और पाती के उन वचनों को सुनाया जिसमें मुहम्मद साहब की महिमा गायी गई थी।

नबी और नारायण की, कछु सुनाई पहिचान।

तब ऐ बात सुनके, खड़ भड़ पड़ी ईमान।।११।।

जब मुहम्मद साहब और आदिनारायण के स्वरूप की कुछ पहचान बतायी गयी, तो इस तरह के वाक्य सुनकर आशाजीत का विश्वास डगमगा गया।

हिन्दुओं के तरफ की, कछु न रही ठौर।

इनमें तो कछु न रह्या, बड़ा होत है जोर।।१२।।

वह कहने लगा कि आपके इस पत्र से तो हिन्दू पक्ष की कोई गरिमा ही नहीं रह गयी। यह बहुत अनुचित हो रहा है। इस्लाम धर्म को इतनी अधिक महत्ता देने से हमारे धर्म में तो कुछ रह ही नहीं जाता है।

भावार्थ– धर्म का वास्तविक स्वरूप वेश–भूषा, रीति–रिवाज, मत–पन्थ, और देश–काल की सीमाओं से

सर्वथा परे होता है। धर्म के वास्तविक स्वरूप को जानने वाले साम्प्रदायिक रूढ़िवादिता का शिकार नहीं होते। मूल शाश्वत सत्य तो संसार के सभी मत–पन्थों के लिए एक ही होता है।

वेदों का मूल प्रतिपाद्य विषय अक्षर और अक्षरातीत है। उपनिषदों का एक स्वर से यही कहना है– "एकं एव अद्वितीयं" अर्थात् परब्रह्म एक है और उसके समान कोई दूसरा नहीं है। ऋग्वेद में कहा गया है– "न त्वावां अन्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते" अर्थात् हे परब्रह्म! तुम्हारे जैसा कोई कभी न था, न है, और न भविष्य में कभी होगा।

दुर्भाग्यवश हिन्दू समाज के ९० प्रतिशत लोगों ने वेदों और उपनिषदों के इन मूल कथनों को भुला दिया है और वे सर्वशक्तिमान एक चैतन्य ब्रह्म की उपासना छोड़कर

नदियों, वृक्षों, जड़-मूर्तियों, शिवलिंग, शालिग्राम, ९ ग्रहों, और नाना प्रकार के काल्पनिक देवी-देवताओं की पूजा में लगा है। ऐसी स्थिति में हिन्दू समाज की गरिमा कैसे सुरक्षित रह सकती है? पौराणिक मान्यताओं में १८ पुराणों में अनेक प्रकार के मिथ्या देवी-देवताओं की जो कल्पना की गयी है, उसने हिन्दू समाज को पतन की गर्त में ढकेल दिया है।

अक्षर के मन अव्याकृत का ही स्वाप्निक रूप नारायण है। उनको वेद और उपनिषदों में कहीं भी उपास्य नहीं माना गया है, किन्तु यदि हिन्दू समाज, वेदों और उपनिषदों को छोड़कर, नारायण और सदाशिव से आगे कुछ जानना ही नहीं चाहे तो यह उनका दुर्भाग्य है।

यद्यपि मुस्लिम जगत भी आज कुरआन के विरूद्ध चलकर कब्रों की पूजा एवं कुरआन की आयतों का

अनुचित प्रयोग कर जन्त्र एवं मन्त्र इत्यादि बुराइयों में लगा हुआ है, किन्तु भक्ति तो वह अल्लाह (परब्रह्म) की ही करता है।

अक्षर ब्रह्म की जिस आत्मा ने व्रज और रास में श्री कृष्ण के रूप में लीला की, वही अरब में मुहम्मद साहिब के रूप में अवतरित होकर कुरआन का सन्देश लायी। कुरआन को अवतरित करने के दो ही आशय थे- एक तो अरब के लोगों को अद्वैतवाद और मानवता का पाठ पढ़ाना, दूसरा ग्यारहवीं सदी में हिन्दुस्तान में प्रकट होने वाले श्री प्राणनाथ जी एवं परमधाम की आत्माओं की साक्षी देना।

नारायण की नींद के आधार पर ही सृष्टि का अस्तित्व है। नारायण को अपने और अक्षर स्वरूप का बोध होते ही सृष्टि का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। इसलिए अक्षर

या अक्षरातीत का साक्षात्कार करना आदिनारायण के लिये सम्भव ही नहीं है। ऐसी स्थिति में यदि अक्षर की आत्मा अरब में मेअराज द्वारा अपने स्वरूप को जान लेती है या अल्लाह तआला (परब्रह्म) का दीदार कर लेती है, तो इस सत्य को कैसे झुठलाया जा सकता है? यदि धार्मिक शिक्षा की कमी होने से पौराणिक सनातनी हिन्दू अपनी हठधर्मिता और रूढ़िवादिता के कारण नारायण और उनके अवतारों को ही सर्वस्व मानकर अक्षर–अक्षरातीत से मुख मोड़े रहें, तो इसके लिए वे स्वयं दोषी हैं, हिन्दू धर्म नहीं।

आशाजीत ने धार्मिक ज्ञान की कमी के कारण हिन्दू समाज के भटकाव को ही हिन्दू धर्म मान लिया। वस्तुतः हिन्दू धर्म का मूल स्वरूप तो वेदों में निहित है।

अपौरूषेय वेदों के विरूद्ध आचरण करने वाला व्यक्ति

कभी भी सच्चा हिन्दू नहीं कहला सकता। तारतम वाणी में तो डिण्डिम घोष के साथ हिन्दू धर्म की महिमा गायी गई है। "त्रैलोकी में उत्तम खंड भरथ को, तामें उत्तम हिन्दू धर्म" अर्थात् भरतखण्ड स्वर्ग और वैकुण्ठ से भी उत्तम है, और इस ब्रह्माण्ड में हिन्दू धर्म से श्रेष्ठ कोई धर्म नहीं है।

यह हिन्दू धर्म का सौभाग्य है कि अक्षरातीत पूर्णब्रह्म हिन्दू धर्म में प्रकट हुए।

कृपा हिन्दुओं पर हुई घनी, जित आखर को आए धनी।

कयामतनामा

मैं देखत हों तुमको, बिन सिर के आदमी।

कानों तो सुने हते, तुमको देखे इन जिमी।।१३।।

आप लोग मुझे बिना सिर वाले आदमी के रूप में

दिखायी पड़ रहे हैं। पहले तो मैंने कानों से केवल सुना ही था, किन्तु आज आप लोगों को मैं प्रत्यक्ष उस रूप में देख रहा हूँ।

भावार्थ– "बिना सिर का होना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ है, मरने के लिए हमेशा तैयार रहना या मृत्यु के भय से सदा रहित हो जाना।

अमल औरंगजेब का, और सरियत का अमल।

तिनसों तुम लड़त हो, इत मोहे न पड़े कल।।१४।।

कट्टर "सरातोरा" के इस राज्य में आप औरंगज़ेब जैसे निष्ठुर एवं मतान्ध बादशाह से लड़ना चाह रहे हैं, इससे मेरा मन बहुत बेचैन हो रहा है।

तब विचार करके, छोड़ दिया इनको।

विचार अपने साथ में, करे आपुस मों।।१५।।

तब सुन्दरसाथ ने आसाजीत की नकारात्मक मानसिकता देखकर उसका साथ छोड़ दिया और औरंगज़ेब की जागनी के सम्बन्ध में आपस में विचार करने लगे।

कौन नजीकी इनका, करें तिनसे मिलाप।

कहें हकीकत आपनी, इनें छूट जाए सब ताप।।१६।।

सुन्दरसाथ ने सोचा कि औरंगज़ेब के दरबार में रहने वाला जो बादशाह का नजदीकी हो, उससे मिला जाए और उसको अपने ज्ञान की वास्तविकता बतायी जाये। यदि वह हमारा सन्देश औरंगज़ेब बादशाह तक पहुँचा दे, तो हम भी उससे वायदा करेंगे कि अल्लाह तआला की

मेहर से आपके सारे कष्ट दूर हो जाएँ।

ऐ विचार करके, जाए मिले सेख सलेमान।

तिनसों कहा हमको, मिलाओ सुलतान।।१७।।

यह विचार करके कुछ सुन्दरसाथ शेख सुलेमान से मिले और उससे आग्रह किया कि वह उन्हें बादशाह से मिलवा दे।

इन मिलाप श्री राज सों, किया था बेर दोए।

इनके दिल में कुफर, कीमियां मांगे सोए।।१८।।

इसके पहले शेख सुलेमान दो बार श्रीजी से मिल चुका था। उसके मन में सुन्दरसाथ के प्रति बुरे विचार थे। औरंगज़ेब से मिलवाने के बदले, वह लोहे से सोना बनाने की विद्या जानना चाहता था।

भावार्थ– प्राचीन काल में लोहा, पारा, आदि धातुओं का शोधन करके तथा अनेक रसायनों के मिश्रण से, जो लोग लोहे से सोना बना देते थे, उन्हें कीमियागर कहते थे।

इनको एक फकीर की, बात कही समझाए।
बैठा फकीर पहाड़ में, तिनके भेजे हम आए।।१९।।

सुन्दरसाथ ने शेख सुलेमान को समझाया कि दिल्ली के बाहर पहाड़ पर एक फकीर रहते हैं, उनके भेजने पर ही हम आपके पास आये हैं।

तुम्हारे दिल के बीच में, जेता कोई मनोरथ।
सो सारे तुम्हारे, पूरे करें अरथ।।२०।।

यदि आप हमारा सन्देश बादशाह तक पहुँचा देते हैं, तो

वह फिर आपके दिल की सारी इच्छाओं को पूरा करे देंगे।

एक दीन सब होवहीं, भागे सबरो ब्रोध।

आपुस में लड़ मरत हैं, सो मिट जावे क्रोध।।२१।।

इसके साथ ही यह भी लाभ होगा कि सारे हिन्दुस्तान में एक सत्य धर्म स्थापित हो जाएगा। सबका विरोध समाप्त हो जाएगा। हिन्दू और मुसलमान जिस तरह आपस में लड़-मर रहे हैं, उनका आपसी क्रोध समाप्त हो जाने से उनमें सौहार्द बढ़ जाएगा।

और सब तुम्हारे दुस्मन, आपे होवे जेर।

तुम्हारा सिर ऊंचा होवे, जाय लगे सिर मेर।।२२।।

आपके जितने भी विरोधी हैं, वे स्वयं ही नत्मस्तक हो

जायेंगे। आपका सिर सुमेरू पर्वत तक ऊँचा हो जाएगा।

भावार्थ– "सिर ऊँचा होना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ है, बहुत अधिक प्रतिष्ठित होना।

पौराणिक मान्यता के अनुसार हिमालय में स्थित सुमेरू पर्वत संसार का सबसे ऊँचा पर्वत है। सिर के सुमेरू पर्वत के शिखर को छूना यही दर्शाता कि वह सबसे प्रतिष्ठित व्यक्ति है।

और जेता कोई कीमियांगर, करने वाले धात।
ते कदम तुम्हारे पकड़ें, आधीन हो करें बात।।२३।।

लोहे से सोना बनाने वाले जो भी कीमियागर हैं, वे आपके चरणों में रहेंगे और आपके हर आदेश को शिरोधार्य करेंगे।

और डर सुलतान के, रहे न कोई कित।

तुमको खुदा करे रसूल का, दीदार होवे इत।।२४।।

समस्त हिन्दू जनता में जो औरंगज़ेब बादशाह का खौफ छाया हुआ है, वह भी किसी के मन में नहीं रहेगा। अल्लाह की इनायत से आपको इसी दुनिया में मुहम्मद (सल्ल.) का दीदार भी हो जाएगा।

भावार्थ– कट्टर शरीअत का हिमायती होने के कारण, औरंगज़ेब की छवि हिन्दू जनता के मन में एक अत्याचारी और क्रूर बादशाह की थी। जब औरंगज़ेब बादशाह शरीअत की राह छोड़कर इल्मे लदुन्नी से हकीकत की राह अपना लेगा, तो वह हिन्दू जनता से प्रेम करने लगेगा और उसके प्रति किसी के मन में भय नहीं रहेगा, बल्कि सम्मान बढ़ जायेगा। इस चौपाई की पहली पंक्ति का यही आशय है।

जब ए बात लिख दई, तब डरा सेख सलेमान।

तब इत की पातसाही, कौन करे सुलतान।।२५।।

जब सुन्दरसाथ ने लिखित में इन शर्तों को पूरा करने का वचन दे दिया तो शेख सुलेमान के मन में डर बैठ गया। वह सोचने लगा कि यदि बादशाह एक हिन्दू महात्मा के प्रति नत् मस्तक हो गया तो हिन्दुस्तान पर शरातोरा का राज्य समाप्त हो जायेगा। ऐसी अवस्था में हिन्दुस्तान की बादशाहत कौन करेगा?

तब जवाब इनको दिया, इन फकीर की पातसाही।

हकें दई दीन की, जाहिर की न दिखाई।।२६।।

तब सुन्दरसाथ ने शेख सुलेमान को उत्तर दिया कि पहाड़ में रहने वाले हमारे फकीर को अल्लाह तआला ने दीन (धर्म) की बादशाहत दी है। वे झूठे संसार की

बादशाहत लेकर क्या करेंगे?

जो कोई होवेगा फकीर, हक ताला की तरफ।

सो दुनियां मुरदार की, थूक ना काढ़े हरफ।।२७।।

अल्लाह तआला से इश्क करने वाला जो सच्चा फकीर होता है, वह इस झूठी दुनिया को नाचीज़ समझता है। वह इसके बारे में एक शब्द भी बात करना पसन्द नहीं करता।

भावार्थ- किसी को न देखना घृणा का परिचायक है। सच्चे फकीर के द्वारा "दुनिया पर थूकने" का अभिप्राय है, सांसारिक कामनाओं से पूर्णतः विरक्त हो जाना।

ऐह बात सुन के, देहेसत भई दिल में।

ऐ बात बड़ी बुजरक, क्या मालूम होए मुझसे।।२८।।

इस बात को सुनकर शेख सुलेमान के मन में भय बैठ गया। सम्पूर्ण हिन्दुस्तान की बादशाहत ठुकराने वाले फकीर की यह बात बहुत महत्वपूर्ण है। पता नहीं, मिलाप कराने के सम्बन्ध में यदि किसी बात पर बादशाह रूष्ट हो गया तो मेरा क्या होगा?

महामत कहें ए मोमिनों, याद करो हजरत।

जो लड़ाई तुम करी, कायम करने क्यामत।।२९।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप श्री प्राणनाथ जी, जो कुरआन-हदीसों की भाषा में आखरूल जमां इमाम महम्मद महदी साहिबुज्जमां कहलाते हैं, उनकी उस मेहर को याद कीजिए, जिसकी छत्रछाया में कियामत का सन्देश देने के लिये आपने शरा तोरा के विरूद्ध युद्ध छेड़ा था।

प्रकरण ।।३८।। चौपाई ।।१८४७।।

दिल्ली की बीतक

लाल दरवाजे की हवेली में, श्री राजें किया हुकुम।

लाल गोवरधन को कह्या, जाए मुल्ला पूछो तुम।।१।।

लाल दरवाजे की हवेली में श्रीजी ने लाल दास जी और गोवर्धन दास जी को आदेश दिया कि आप दोनों जाकर मुल्ला से पूछिए कि–

क्या कुरान में कहत हैं, कैसी हैं मजकूर।

किनको ए ठहरावत, सो मुझ आगे करो जहूर।।२।।

कुरआन में क्या कहा गया है, उसमें किस तरह की बातें हैं, परब्रह्म किसको कहा गया है? इन सारी बातों का उत्तर मुझे बताइये।

भावार्थ– जिस तन में अक्षरातीत अपनी पाँचों शक्तियों के साथ विराजमान हों, उस तन को कुरआन के ज्ञान के लिये किसी मुल्ला की आवश्यकता नहीं थी, किन्तु श्रीजी अपनी पहचान स्वयं अपने मुख से कैसे दे सकते थे? इसलिये लाल दास जी और गोवर्धन दास जी को मुल्ला के पास भेजा, ताकि यदि कुरआन, हदीस, एवं तफसीर हुसैनी के प्रमाण कहें कि मैं आखरूल मुहम्मद महदी साहिबुज़मां हूँ, तो सुन्दरसाथ को अटूट विश्वास होगा और जागनी का कार्य सुगमतापूर्वक होगा।

इन समय काम करन की, उरझ रही सब बात।
कैसे कर पहिचानेगा, अपनी असल जात।।३।।

इस समय जागनी कार्य में इस बात की बहुत बड़ी उलझन बनी हुयी थी कि शरातोरा के बन्धनों में बँधा

हुआ बादशाह अपनी आत्मा के वास्तविक स्वरूप की पहचान कैसे करेगा?

लाल गोवरधन गए, एक मुल्ला पास मेहेजद।

बातें सुनत मुल्लां की, आपुस में भई जिद।।४।।

लाल दास जी और गोवर्धन जी पास की एक मस्जिद में रहने वाले मुल्ला के पास गये। जब उन्होंने कुरआन के सम्बन्ध में मुल्ला की बातें सुनीं तो दोनों का आपस में टकराव हो गया।

मुल्ला के बातन की, लालें भई पहचान।

एतो हमारे घर की, तहकीक भया ईमान।।५।।

जब मुल्ला ने कुरआन की कुछ बातें बतायीं तो लाल दास जी को इस बात की पहचान हो गयी कि इसमें तो

हमारे परमधाम की बातें हैं। उनका कुरआन के ऊपर विश्वास परिपक्व हो गया।

गोवरधन के दिल में, डर रहे मुसलमान।
पोहोरा औरंगजेब का, जिन कोई सुनो कान।।६।।

गोवर्धन के दिल में मुसलमानों का डर बैठा हुआ था। वे इस बात से भय खा रहे थे कि औरंगज़ेब के शासन काल में एक हिन्दू के मुख से कुरआन या अल्लाह तआला की बात करना औरंगज़ेब को स्वीकार नहीं था। ऐसा करना मौत को निमन्त्रण देना था।

तिस वास्ते झगड़ा भया, लाल बातें करें मिने जोस।
टूक टूक होवे इन बात पर, दुनियां थी फरामोस।।७।।

इसलिये उन दोनों में झगड़ा हो गया। लाल दास जी

जोश में बातें कर रहे थे। कुरआन में परमधाम की साक्षी मिल जाने पर शरातोरा के विरूद्ध धर्मयुद्ध के लिए वे सर्वस्व समर्पण के लिए तैयार थे, जबकि संसार इस बात से बेखबर था।

दोऊ राह में लड़के, आये लाल दरवाजे सोय।
राज आरोगन को समै, दिन रह्या घड़ी दोय।।८।।

लाल दास जी और गोवर्धन दास जी, दोनों ही रास्ते में लड़ते हुए आगे-पीछे लाल दरवाजे आये। उस समय श्रीजी के भोजन करने का समय था। उस समय सायंकाल सवा ५ बजे थे।

ऊंचे अटारी पर, बैठे हते श्री राज।
गोवरधन तहां पहुंच के, कही सुनी चरचा जो आज।।९।।

ऊपरी भूमिका (मंजिल) में श्रीजी बैठे हुए थे। गोवर्धन जी वहाँ पहले पहुँच गए और मुल्ला की कही हुयी सारी बातों को दोहराने लगे।

इतनी बेर में तितहिं, लालदास आए पहुंचे।

बातें सुनी तिन की, कही गोवरधन जे।।१०।।

इतनी देर में लालदास जी भी वहाँ आ पहुँचे। गोवर्धन जी श्री प्राणनाथ जी से जो कुछ कह रहे थे, लाल दास जी ने उसे सुन लिया।

वहां की बातें सुनके, कहने लगा जब।

ए जो लालदास नें, अरज करी तब सब।।११।।

लालदास जी ने देखा कि गोवर्धन तो वही बातें दोहरा रहे हैं, जो मुल्ला ने कही थीं। मेरे द्वारा कुरआन की बातों

का समर्थन करने पर ये मुझसे लड़ रहे थे और अब श्रीजी के सामने ये वही बातें दोहरा रहे हैं।

हमारा इन चटाई पर, मन होत है और।
इहाँ सेती उठ जात हैं, तब चेहेन न रहवे ठौर।।१२।।

तब उन्होंने श्रीजी के चरणों में प्रार्थना करते हुए कहा– हे धाम धनी! आपके सामने बैठे रहने पर हमारा मन कुछ और होता है तथा यहाँ से अलग होते ही हमारा मन ऐसा बदल जाता है कि उसके आचरण का कोई भरोसा ही नहीं किया जा सकता।

तब भाई गोवरधन को, रीस चढ़ी बनाए।
ऐ सब मोकों कह्या, तुम जानत नाहीं ताए।।१३।।

इस बात को सुनकर गोवर्धन भाई को क्रोध आ गया

और वे कहने लगे कि ये सब बातें तो मेरे लिए कही जा रही हैं। इसके उत्तर में श्री लाल दास जी ने कहा कि गोवर्धन जी! क्या आप जानते नहीं है कि वहाँ पर आप क्या कह रहे थे और यहाँ क्या कह रहे हैं?

दोउ बातां श्री राज देख के, दिल में किया विचार।
इनों की अकल ऊपर, मोहे कैसो इतबार।।१४।।

उन दोनों की विवाद भरी बातों को सुनकर श्री प्राणनाथ जी ने अपने मन में विचार किया कि जागनी के इस महान् कार्य में इन दोनों की बुद्धि पर कैसे विश्वास करूँ?

इन समै श्री राज को, नूर जोस चढ़ियो जोर।
आए जबराईलें जोरा किया, असराफीलें किया सोर।।१५।।

इस समय श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान

पाँचों शक्तियों का स्वरूप दिव्य आभामण्डल के रूप में श्रीजी के मुखारविन्द के चारों ओर दिखाई देने लगा, अर्थात् तेज, सौन्दर्य, प्रेम, आनन्द, शक्ति, ज्ञान, आदि जोश के साथ झलकार करने लगे। उनके मुखारविन्द के चारों ओर जिबरील तथा अस्राफील का प्रचण्ड प्रभाव दृष्टिगोचर हो रहा था।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "नूर" शब्द का प्रयोग श्री राज जी के विभिन्न स्वरूपों (शक्तियों) के लिए किया गया है। श्री राज जी, श्यामा जी, और अक्षरब्रह्म के स्वरूप को दर्शाने के लिए "नूर" शब्द का प्रयोग तो होता ही है, परमधाम के प्रेम, सौन्दर्य, आनन्द, आदि के लिए भी "नूर" शब्द का प्रयोग होता है। इस प्रकार नूर जोश का तात्पर्य यह है कि अक्षरातीत का जो स्वरूप श्री महामति जी के धाम

हृदय में विराजमान था, वह जोश के साथ परिलक्षित (अनुभवगम्य) होने लगा था।

मोंह आगे बिजलीय के, चमकत लेहेरां दई।

तब श्री राज के मुख से, ए बातां पुकार कही।।१६।।

श्रीजी के मुखारविन्द के आगे ऐसा लग रहा था जैसे बिजली चमक रही हो। तब उन्होंने यह वाक्य पुकारते हुए कहा कि–

कारखाना कागद का, ए सौंप्या लालदास।

उदयपुर को जावहीं, भीम मुकन्द मोमिन खास।।१७।।

लाल दास जी! धर्मग्रन्थों का सारा साहित्य मैं आपको सौंपता हूँ। भीम भाई और मुकुन्द दास जी! आप जागनी कार्य के लिये उदयपुर चले जाओ।

गोवरधन भट्ट को कह्या, सूरत जाओ तुम।

अनूप सहर हम जात हैं, एह हुआ हुकम।।१८।।

गोवर्धन भट्ट जी! आप सूरत जाकर अपना जागनी कार्य फैलाइये, यह मेरा आदेश है। और मैं अनूपशहर जा रहा हूँ। अब इस समय कुछ नहीं करना है।

दई वस्तां जोस में, सेख बदल को हुकुम।

कागद लालदास को, मुकन्ददास तारतम।।१९।।

श्रीजी ने जोश में शेख बदल को हुक्म की शक्ति दी। श्री लाल दास जी को धर्मग्रन्थों के ज्ञान की शक्ति दी। मुकुन्द दास जी को तारतम वाणी के भेद खोलने की शक्ति दी।

भावार्थ– शेख बदल जी को हुक्म की शक्ति देने का तात्पर्य यह है कि धर्म कार्य के लिये वे अपने मन में जो

भी संकल्प लेंगे वह अवश्य पूर्ण हो जाएगा। इसी प्रकार वेद–कतेब के सारे गुह्य रहस्यों का ज्ञान लाल दास जी को हो जाना, उन्हें कागद सौंपना है।

बुध दई भीम को, गोवरधन को सूरत।

मुकुन्द भीम उदयपुर, हम जात अनूपसहर इत।।२०।।

भीम भाई को जाग्रत बुद्धि की शक्ति दी, और गोवर्धन भाई को सूरत जाने का आदेश मिला, एवं मुकुन्द दास जी एवं भीम भाई को उदयपुर जाने का आदेश दिया। श्रीजी ने स्वयं अनूपशहर जाने का निर्णय लिया।

भागी सारी उरझन, कोई न रह्या काम।

प्रात को उठ ले चले, अनूप सहर के ठाम।।२१।।

अब तो सारी उलझन ही समाप्त हो गयी थी क्योंकि

जागनी का कोई काम रहा ही नहीं (स्थगित कर दिया गया।) प्रातःकाल होते श्री प्राणनाथ जी अनूप शहर की तरफ चल पड़े।

महिना था आसाढ़ का, बरखत धारा अखण्ड।
पोठी ऊपर बैठ के, पहुंचे अनूप सहर तत खिन।।२२।।

उस समय आषाढ़ का महीना चल रहा था। लगातार मूसलाधार वर्षा हो रही थी, किन्तु श्रीजी ऊँट गाड़ी पर बैठकर अनूपशहर चल दिए।

मारग मिने चलते, दई मानिक औखद।
पेट छूटा तहां जाए के, कछु न रही हद।।२३।।

रास्ते में चलते समय श्रीजी का स्वास्थ्य खराब हो गया और उन्हें सीमा से अधिक अतिसार (पाचन तन्त्र की

गड़बड़ी) हो गया। रोग के उपचार के लिए मानिक भाई ने औषधि दी।

इन समय सरीर को, बड़ी भई कसोट।
डर के लालबाई रोई, ले धनी की ओट।।२४।।

इस समय श्रीजी का स्वास्थ्य बहुत ही गम्भीर हो गया। उनकी अस्वस्थता को देखकर लालबाई रोने लगीं और मूल स्वरूप श्री राज जी से प्रार्थना करने लगीं।

तब आप दिलासा करी, जिन कोई डरो तुम।
फिरी न मेरी सुरत, तब तुम्हें खबर करों हुकम।।२५।।

तब श्रीजी ने लालबाई को सान्त्वना दी कि डरो नहीं, अभी मेरी सुरता परमधाम जाने वाली नहीं है अर्थात् मेरा तन छूटने वाला नहीं है। यदि कोई ऐसी बात होती तो

तुम्हें पहले बता देता।

उस बखत जबराईलें, बड़ा जो किया जोर।

उतरे कलाम कादर से, करो खेल में सोर।।२६।।

उस समय जिबरील का बहुत अधिक प्रभाव दिख रहा था। सर्वशक्तिमान् अक्षरातीत के आवेश से सनद (सनंध) ग्रंथ का अवतरण शुरू हो गया। यह वाणी जागनी लीला में सत्य की गूँज कराने वाली है।

भावार्थ– यद्यपि वाणी का कथन अक्षरातीत के आवेश द्वारा होता है, किन्तु शरीर से उसका प्रकटीकरण जोश के द्वारा होता है।

तौरेत किताब में, उतरी सनंधे तीस।

सब खबर कुरान की, हकें करी बकसीस।।२७।।

कुरआन के ३० पारों का बातिनी भाव सनद ग्रन्थ के प्रकरणों के रूप में अवतरित हुआ। शेष १२ प्रकरण कलश ग्रन्थ के भी इसमें समाहित कर दिए गये। सनद ग्रन्थ का यह अलौकिक ज्ञान धाम धनी की विशेष मेहेर का परिणाम है।

भावार्थ– तारतम वाणी सम्पूर्ण विश्व के लिए है। कलश के १२ प्रकरणों में हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों की विवेचना की गई है, जैसे– खोज का प्रकरण, विरह का प्रकरण, सुहागिनों के लक्षण, खेल के मोहोरों का प्रकरण, पन्थ पैंडों की खेंचाखेंच, वेद का कोहेड़ा, और अवतारों का प्रकरण। इन प्रकरणों को सनद ग्रन्थ में देने का आशय यही है कि, वेद पक्ष और कतेब पक्ष, दोनों में छिपे सत्य का बोध इस "सनद वाणी" से हो सके।

सनंधे लिख तैयार करी, विचार देखे सुकन।

ऐह बानी सुनके, पीछा न हटे मोमिन।।२८।।

सनद ग्रन्थ को लिखकर तैयार किया गया। सुन्दरसाथ ने जब इसको पढ़कर विचार किया तो यह स्पष्ट हो गया कि जो इस ब्रह्मवाणी को सुन लेगा, वह धर्म के मार्ग से कभी भी पीछे नहीं हटेगा।

इन मजल ऐसा हुआ, सब कारज भये सिध।

अपने निज वतन की, आई जागृत बुध।।२९।।

इस वाणी के अवतरित होने से स्थिति ऐसी बन गयी कि औरंगज़ेब को सन्देश पहुँचाने से सम्बन्धित सारे कार्य सिद्ध हो गये। इस वाणी का अवतरण परमधाम की जाग्रत बुद्धि के प्रकाश में हुआ।

अब ए बानी सुनके, कोई न फिरे ईमान।

जब पहुंचे सकुमार को, टूक टूक होवे सुलतान।।३०।।

इस सनद ग्रन्थ की वाणी को सुनकर किसी का ईमान (विश्वास) डगमगा नहीं सकता। जब औरंगज़ेब बादशाह तक यह वाणी पहुँच जाएगी, तो वह पूरी तरह समर्पित हो जाएगा।

इन बखत पाठक के, कछु दिल में भई सक।

देखी अन्दर विचार के, कैसी बात माफक।।३१।।

इस समय पाठक के दिल में कुछ संशय पैदा हो गया कि ये हिन्दू होकर भी कुरआन की चर्चा क्यों करते हैं? वह अपने मन में यह विचार करने लगा कि इनकी बात कहाँ तक सच है?

पधराए अपने घरों, बिछौने कर साज।

बातें राजें सब करीं, बीतक अपनी तहाँज।।३२।।

वह श्रीजी को अपने घर ले गया और बहुत अच्छे सजावट भरे आसन पर विराजमान किया। श्रीजी ने उसे अपनी सम्पूर्ण जागनी लीला का वृत्तान्त कह सुनाया।

तब एह सुन के, बहुत हुआ खुसाल।

अरज अपनी करने लगा, माफक अपने हाल।।३३।।

श्रीजी के मुखारबिन्द से जागनी लीला का प्रसंग सुनकर वह बहुत आनन्दित हुआ, और अपनी स्थिति के अनुकूल उनसे प्रार्थना करने लगा।

भावार्थ– पाठक कुछ सांसारिक परेशानियों से घिरा हुआ था। श्रीजी की जागनी लीला का प्रसंग सुनकर उसे यह आभास हो गया कि यह कोई अलौकिक महापुरूष

हैं। इसलिये वह अपने कष्टों की निवृत्ति के लिये श्रीजी से प्रार्थना करने लगा।

इहाँ सेती आये के, साथ को दिया दीदार।
तुमको सैंया हुकम, जो भेजा परवरदिगार।।३४।।

पाठक के घर से चलकर श्रीजी उस हवेली में आये जहाँ अपने सुन्दरसाथ ठहरे हुए थे। श्रीजी ने उनसे कहा कि हे साथ जी! आपको श्री राज जी ने एक आदेश दिया है कि औरंगज़ेब को सन्देश देना ही है।

हुआ हुकम हक का, सेख बदल ऊपर।
जाओ तुम सुलतान पे, देओ खुस खबर।।३५।।

श्रीजी ने शेख बदल को आदेश दिया कि तुम "सनद वाणी" को लेकर औरंगज़ेब के पास जाओ, और उसे यह

शुभ सूचना दे दो कि कियामत आ गई है, और आखरूल जमां इमाम मुहम्मद महदी प्रकट हो चुके हैं।

सेख बदल बिदा हुये, चले तरफ सुलतान।
सनंधे सिर पर बांध, ले दिल में ईमान।।३६।।

शेख बदल अपने सिर पर सनद वाणी को रखकर तथा अपने दिल में श्रीजी के प्रति अटूट विश्वास रखकर अनूपशहर से विदा हुए, और औरंगज़ेब बादशाह से मिलने के लिये चल पड़े।

पहुंचे दिल्ली सहर में, बखत जुमें निमाज।
ईदगाह चला गया, मैं पैगाम पहुंचाऊं ताए आज।।३७।।

शेख बदल दिल्ली महानगर में शुक्रवार के दिन उस समय पहुँचे, जब नमाज़ का समय था। वह सीधे ईदगाह तक

इस भावना से पहुँच गये कि आज औरंगज़ेब को संदेश पहुँचा ही देना है।

भावार्थ– जिस समय शेख बदल ईदगाह पहुँचे, उस समय रमज़ान का महीना चल रहा था और उसके १५ रोज़ें बीत चुके थे। मुहम्मद साहिब के द्वारा हदीसों में कही हुई भविष्यवाणी के अनुसार रमज़ान के पहले पखवाड़े में सूर्यग्रहण तथा दूसरे पखवाड़े में चन्द्रग्रहण लगना निश्चित है। ऐसा इमाम महदी के प्रकट होने से पूर्व न तो कभी हुआ था और न प्रकट होने के बाद कभी होगा।

तहाँ खलक ठाड़ी रहे, चित्त न काहू एक ठौर।
सेख बहुत पुकारिया, देखा दज्जाल का बड़ा जोर।।३८।।

वहाँ बहुत से लोग एकत्रित थे, लेकिन किसी का भी

चित्त शान्त नहीं था। शेख बदल ने सनद (सनंध) वाणी का गायन करके बहुत पुकार की, लेकिन सरातोरा के कट्टरपंथियों का बहुत दबदबा दिखाई दिया।

कोई कहे हिन्दवी मिनें, लिखे एह कलाम।
बातां तो बरहक हैं, पर हमें रवा नहीं इस ठाम।।३९।।

कोई कहता था कि ये वचन हिन्दुस्तानी भाषा में लिखे हुये हैं। इनकी बातें तो बिल्कुल सच्ची हैं, किन्तु हमें ये स्वीकार इसलिये नहीं, क्योंकि शरा इसकी इजाज़त नहीं देती।

इन भाँत बातें सुनके, फेर आये अपनें ठौर।
गनीबेग की हवेली में, जाए पहुंचे और।।४०।।

इस तरह की बातें सुनकर शेख बदल अपने निवास पर

आ गये। कुछ समय के पश्चात्, वे गनी बेग की हवेली में जा पहुँचे।

तहाँ सनंधें बाँचन लगे, बिना एक महम्मद।
तब एक सैयद बोलिया, बात जेहेल की लिए जिद।।४१।।

वहाँ सनद ग्रन्थ से "बिना एक महम्मद" प्रकरण का गायन करने लगे। वहाँ मूर्खता भरे हठ से एक सैयद शेख बदल जी से बहस करने लगा।

क्यों कुफर बोलत हो, है एक महम्मद अलेहु सलाम।
एते पैगम्बर भये, तिन काहू नाहीं नाम।।४२।।

तुम एक मात्र मुहम्मद (सल्ल.) की महिमा गाकर क्यों कुफ्र बोल रहे हो? इतने (१ लाख २० हजार) पैगम्बर हो गये हैं, लेकिन मुहम्मद (सल्ल.) के सिवाय तुमने

उनमें से किसी का भी नाम नहीं लिया।

तब सेख बदल सों, झगड़ा हुआ इत।

उत से पीछे फिरके, घरों आये तित।।४३।।

तब शेख बदल से उस सैयद का झगड़ा हो गया। झगड़े से निपटने के पश्चात् शेखबदल पुनः अपने घर आ गये।

दिन दोए चार में, अनूप सहर से आये श्री राज।

बुलाया सेख बदल को, पूछा पैगाम का काज।।४४।।

दो-चार दिन में अनूपशहर से श्री प्राणनाथ जी आ गये। उन्होंने शेख बदल को बुलवाया और पूछा कि औरंगज़ेब को सन्देश देने के सम्बन्ध में कितना काम हुआ?

तब सेख बदल ने, अपनी कही बीतक।

मैं तो बहुत पुकारिया, इनों पीठ दई तरफ हक।।४५।।

तब शेख बदल ने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया कि हे धाम धनी! मैंने सनद की वाणी को गा–गाकर सुनाया, किन्तु शरीअत के बन्धनों में फँसे मुसलमानों ने अल्लाह तआला को पीठ दे रखी है।

कोई कलाम हिन्दवी का, ल्यावत है दिल सक।

काहू दिल में कुफर, कोई बात कहे बुजरक।।४६।।

कोई मुसलमान तो सनद वाणी के हिन्दुस्तानी भाषा में होने के कारण विश्वास नहीं करता, तो किसी के दिल में पाप है इसलिये वह सुनना नहीं चाहता। कुछ ऐसे भी हैं, जो सनद ग्रन्थ को बहुत ऊँची वाणी भी कहते हैं।

फेर बैठे विचार को, इन बातां सुनी न कान।

लाल गोवरधन मिल के, जाए कहो सेख सलेमान।।४७।।

पुनः इस बात पर विचार–विमर्श हुआ कि हमारी बातों को शरीअत में बँधे हुये मुसलमान सुनना नहीं चाह रहे हैं। ऐसी स्थिति में हमें क्या करना चाहिए ? अन्त में श्रीजी ने गोवर्धन दास जी और लाल दास जी को आदेश दिया कि आप दोनों जाकर शेख सुलेमान से बातें करो।

तब फेर उत गये, जाए के किया मिलाप।

सारी हकीकत कही, जाके सुने मिटे सब ताप।।४८।।

तब वे दोनों पुनः शेख सुलेमान के पास गये, और उससे कियामत तथा इमाम महदी के आने के सम्बन्ध में वे सारी बातें की, जिनके सुनने से सारा मानसिक कष्ट मिट जाता है अर्थात् मन में शान्ति आ जाती है।

आज मिलाऊं कल मिलाऊं, यों फिरते मास भये दोए।

कबहूं कछु कबहूं कछु, जवाब करत हैं सोए।।४९।।

शेख सुलेमान कभी तो कहता है कि आज मिला दूँगा, कभी कहता है कि कल मिलाऊँगा, इस तरह से उसके पास चक्कर लगाते हुए दो महीने हो गए। कभी कुछ कहता तो कभी कुछ कहता, इस तरह से बहानेबाजी में उत्तर दिया करता था।

कहे पहिले तो इन भेष सों, मिलत नहीं सुलतान।

भेष तुम्हारा बदलो, तो सुलतान सुनाऊं कान।।५०।।

कभी तो यह कहता था कि इस हिन्दू वेशभूषा में रहने पर बादशाह कभी नहीं मिल सकता। यदि आप लोग अपनी वेशभूषा बदल कर मुस्लिम वेशभूषा धारण कर लें, तो मैं बादशाह से आपकी बातें करा सकता हूँ।

यों करते विचारते, कछु न देखी साख।

तब आपस में कह्या, अब फिरो इन से आप।।५१।।

इस प्रकार जब शेख सुलेमान से बात करते-करते लम्बा समय बीत गया, तो सुन्दरसाथ समझ गए कि इसकी नीयत में खोट है और यह बात नहीं कराना चाहता। तब सुन्दरसाथ ने आपस में विचारा कि इससे किसी तरह की आशा नहीं करनी चाहिए।

लाल दरवाजा छोड़ के, आए सराए रोहिलाखान।

ए कलाम फारसी में करें, तब होवे पहिचान।।५२।।

लाल दरवाजे को छोड़कर श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ सराय रोहिल्ला खान मोहल्ले में आए। वहाँ यह निर्णय लिया गया कि यदि हिन्दुस्तानी भाषा में लिखे हुए २२ प्रश्नों के पत्र का फारसी भाषा में अनुवाद करा दिया जाए,

तो शायद उससे औरंगज़ेब को वास्तविकता की पहचान हो सकती है।

तब एक मुल्ला फारसी का, हुकम हुआ दयाराम।
बुलाया ल्याओ तिनको, लिखे फारसी में कलाम।।५३।।

तब श्रीजी ने दयाराम जी को आदेश दिया कि फारसी भाषा के जानकार किसी मुल्ला को बुलाकर लाइए, जो इस हिन्दुस्तानी भाषा में लिखे हुए पत्र को फारसी में अनुवादित कर सके।

तब लड़के काइम को, बुलाय ल्याया दयाराम।
राखा चाकर दे महिना, वास्ते लिखने इन काम।।५४।।

तब दयाराम जी किसी मुल्ला के युवा पुत्र कायम को बुलाकर ले आए। उसे मासिक वेतन पर, हिन्दुस्तानी

भाषा से फारसी भाषा में, अनुवाद करने के लिए रख लिया गया।

सेखजी मीराजीय का, लिखया इत संवाद।
तिन में सारी हकीकत, लिखी जो बुनियाद।।५५।।

कियामत के सातों निशानों के प्रकट होने की वास्तविकता को शेख जी और मीर जी के संवाद के रूप में फारसी भाषा में लिखा गया। इसके अतिरिक्त इश्क रब्द से लेकर व्रज, रास, और जागनी लीला को भी संवाद के रूप में फारसी भाषा में लिखा गया।

भावार्थ– शेख जी और मीर जी का संवाद कुरआन के उन अनसुलझे गुह्य रहस्यों को प्रकट करता है, जिनके उजागर होने की प्रतीक्षा सारा इस्लामिक जगत कर रहा था। इसमें औरंगज़ेब के पाँच अधिकारियों के प्रतिनिधि

के रूप में मीर जी (लालदास जी) प्रश्नकर्ता हैं और शेख जी (श्री प्राणनाथ जी) उत्तर देने वाले हैं।

इनकी जिल्दें बांध के, रूक्के किये तैयार।
ठौर ठौर पहुंचाये, जो थे सुलतान के यार।।५६।।

फारसी भाषा में लिखे गये इस संवाद को रूक्के (पत्र) के रूप में तैयार किया गया और जो भी बादशाह के निकटस्थ व्यक्ति थे, वहाँ-वहाँ जाकर उन तक पहुँचा दिया गया।

पुकार करी घर घर, सब देखे मुरदार।
राह खुदाइ के वास्ते, कोई न हुआ खबरदार।।५७।।

उस रूक्के के माध्यम से सुन्दरसाथ ने घर-घर जाकर कियामत एवं इमाम महदी के प्रकट होने की पुकार

लगायी, किन्तु उन्होंने सबको मरा हुआ अर्थात् माया में पूर्ण रूप से डूबा हुआ देखा। ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं मिला, जो खुदा की राह पर चलने के लिये सावचेत दिखता हो।

उस्ताद सुलतान का, ए जो सेख निजाम।
कोई दिन इनके इहाँ फिरे, ना लायक देखा इसलाम।।५८।।

बादशाह औरंगज़ेब का धार्मिक गुरू (उस्ताद) शेख निज़ाम था। उसके यहाँ रूक्के (पत्र) लेकर कई दिन तक सुन्दरसाथ भटकते रहे, किन्तु सुन्दरसाथ ने अनुभव किया कि इस व्यक्ति में सत्य की राह पर चलने की क्षमता नहीं है।

एक सौदागर सूरत का, रहे चांदनी चौक में।

तिन पाया दीदार राज का, मिलाप था तिन सें।।५९।।

सूरत का एक व्यापारी चाँदनी चौक में रहता था। उसने आकर श्रीजी का दर्शन किया। वह पहले भी धाम धनी से मिल चुका था।

तिन ने कह्या मेरे पास, है दज्जाल नामा।

तुमको मैं दिखाऊंगा, दज्जाल की सामा।।६०।।

उस व्यापारी ने कहा कि मेरे पास दज्जालनामा है। मैं आपको वह ग्रन्थ दिखलाना चाहता हूँ, जिसमें दज्जाल की वास्तविकता दर्शायी गयी है।

सो लेने के वास्ते, लाल जाए बेर एक।

वह नित वायदा करे, बातें करे अनेक।।६१।।

उसे लेने के लिए लालदास जी प्रतिदिन एक बार जाया करते थे। वह प्रतिदिन कल देने का वायदा करता था, किन्तु देने के समय तरह-तरह की बहानेबाजी कर दिया करता था।

केतेक दिन फिराया, तब भया मुनकर।

मेरे तपसीर है हुसैनी, जो बड़ी मातबर।।६२।।

कई दिनों तक वह लालदास जी को खाली हाथ लौटाता रहा और अन्त में दज्ञालनामा देने से मना ही कर दिया, किन्तु उसने बातचीत के प्रसंग में यह बात छेड़ दी कि मेरे पास तफ्सीर-ए-हुसैनी है, जो बड़ी ही महत्वपूर्ण है।

तब पूछा लालदास नें, उन में क्या खबर।

कुरान अरथ फारसी, है जाहिर सब ऊपर।।६३।।

तब श्री लालदास जी ने उससे पूछा कि उसमें क्या बात बताई हुई है? उस व्यापारी ने उत्तर दिया कि उसमें कुरआन का फारसी भाषा में अर्थ किया गया है, जो सबसे श्रेष्ठ माना जाता है।

ए बात लाल ने आए के, आगे करी श्री राज।

हुकम हुआ लाल को, ले आओ तुम आज।।६४।।

इस बात को श्री लालदास जी ने आकर धाम धनी श्री प्राणनाथ जी से बताया। श्रीजी ने उन्हें आदेश दिया कि तुम आज ही उसे लेकर आओ।

लाल फेर उनके घर गये, फिरते भए दिन चार।

फेर लालें आए के कह्या, याको झूठो लगत विचार।।६५।।

लालदास जी फिर उसके घर गए, किन्तु उसने उन्हें तफ्सीर-ए-हुसैनी नहीं दी। जब चार दिन लगातार जाने पर भी वह बहानेबाजी करता रहा, तो लालदास जी ने आकर श्रीजी से कहा कि वह देना ही नहीं चाहता है, उसके विचार झूठे लगते हैं।

उस बखत में हाजिर, बैठा था दयाराम।

तिनने अरज करी, मुझे कहो ए काम।।६६।।

उस समय वहाँ श्रीजी के सामने दयाराम जी बैठे थे। उन्होंने धाम धनी से प्रार्थना की कि तफ्सीर-ए-हुसैनी लाने की यह सेवा मुझे दीजिए।

तब श्री राजें हुकम किया, तुम ल्याओ हुसैनी तपसीर।

बड़ी चाह है हम को, पहुंचे मजल मीर।।६७।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने आदेश दिया कि तुम तफ्सीर-ए-हुसैनी लेकर आओ। मुझे उसकी बहुत ही आवश्यकता है। उसके मिल जाने पर औरंगज़ेब बादशाह तक पहुँचना सरल हो जाएगा।

भावार्थ- इस चौपाई के चौथे चरण में "मीर" का तात्पर्य औरंगज़ेब बादशाह से है, क्योंकि वही सरातोरा का बादशाह था।

तब हुकम श्री राज का, सिर चढ़ाया दयाराम।

अपने अस्नाओं रहते थे, तिनसों कहा ए काम।।६८।।

दयाराम जी ने धाम धनी के इस आदेश को शिरोधार्य कर लिया। उन्होंने अपने दिल्ली के मुस्लिम व्यापारी मित्रों

से कहा कि मुझे तफ्सीर-ए-हुसैनी की आवश्यकता है। आप लोग मेरा यह काम कर दीजिए।

हमारे अस्नाओं ने, पाती लिखी हम पर।
हुसैनी मँगाई है, बहुत निहोरा कर।।६९।।

मेरे पास दिल्ली के बाहर रहने वाले व्यापारी मित्रों ने पत्र लिखा है। उन्होंने मुझसे बहुत प्रार्थना करके तफ्सीर-ए-हुसैनी की प्रति मँगवायी है।

भावार्थ- उस सरातोरा के राज्य में किसी हिन्दू को कुरआन एवं उससे सम्बन्धित साहित्य पढ़ने का अधिकार नहीं था। इसलिए दयाराम जी ने अपने दिल्ली के मुस्लिम मित्रों से तफ्सीर-ए-हुसैनी के लिए आग्रह किया। इसके लिए उन्होंने दिल्ली से बाहर के अपने मुस्लिम मित्रों का हवाला दिया कि उन्होंने मँगवायी है।

तब उनने कह्या, मैं करों तुम्हारा काम।

तबहीं सुन हाजिर करी, दई हाथ दयाराम।।७०।।

तब दयाराम जी के मुस्लिम मित्रों ने कहा कि मैं तुम्हारा यह काम अवश्य कर दूँगा। तब उसने उसी समय तफ्सीर-ए-हुसैनी लाकर दयाराम जी के हाथ में सौंप दी।

लिये चालीस रूपया, तिनमें दिए दो फेर।

खुसाल हुआ दयाराम, जाए लगा सिर मेर।।७१।।

यद्यपि तफ्सीर-ए-हुसैनी का न्योछावर उस समय ४० रूपये था, किन्तु उनके व्यापारी मित्र ने उसमें से २ रूपये वापस कर दिये और ३८ रूपये रख लिए। तफ्सीर-ए-हुसैनी को पाकर दयाराम जी इतने आनन्दित हुए कि जैसे प्रसन्नता के मारे उनका सिर

सुमेरू पर्वत जितना ऊँचा हो गया हो।

द्रष्टव्य– दुःख की घड़ी में सिर नीचा हो जाता है, किन्तु सुख की घड़ियों में सिर ऊँचा रहता है। तफसीर–ए–हुसैनी मिल जाने के बाद दयाराम जी इतने आनन्दित थे कि उनके अपार आनन्द की उपमा सिर के सुमेरू पर्वत छूने से दी गई है।

वहाँ से लेकर धाया, आये पहुंचा पास श्री राज।
लेत तपसीर आगे धरी, ऐ हुआ सिध काज।।७२।।

तफ्सीर–ए–हुसैनी लेकर दयाराज जी दौड़ते हुए श्रीजी के पास आए और उसे उनके आगे रख दिया। श्रीजी से दयाराम जी ने कहा कि हे धाम धनी! आपकी कृपा से यह काम हो गया।

तपसीर को देख के, श्री राज भये खुसाल।

बातें लगे करनें, आगे गुलाम लाल।।७३।।

तफ्सीर-ए-हुसैनी को देखकर श्री प्राणनाथ जी बहुत ही आनन्दित हुए और लालदास जी से बातें करने लगे।

भावार्थ- इस चौपाई के चौथे चरण में श्री लालदास जी ने स्वयं को गुलाम लिखा है, जो उनकी श्रीजी के प्रति अटूट निष्ठा एवं अथाह समर्पण भावना को दर्शा रहा है।

इन समय कायम के, तपसीर दई आगे।

देख इनके मायनें, हमको सुनाओ ऐ।।७४।।

इस समय श्रीजी ने मुल्ला कायम को तफ्सीर-ए-हुसैनी दी और उनसे कहा कि हिन्दुस्तानी भाषा में मुझे इसका अर्थ सुनाओ।

प्रथम इन्ना इन्जुलना सूरत इन पढ़ी, जामें तीन तकरार।
इसारतें सारी खुलीं, जो लिखीं परवरदिगार।।७५।।

सर्वप्रथम, जब मुल्ला कायम ने आम पारे की इन्ना इन्जुलना सूरत पढ़ी, तो कुरआन में धाम धनी के द्वारा संकेतों में लिखवायी गयी सारी बातें स्पष्ट हो गईं। इस सूरत में लैल-तुल-कद्र के तीन तकरार व्रज, रास, एवं जागनी का वर्णन है।

हम ही थे ब्रज रास में, हम तीसरे आये इत।
ऐ तो वही बात है, जो हम को कही तित।।७६।।

यह सुनकर श्री महामति जी के हृदय में यह विचार आया कि व्रज-रास में हम ही थे तथा इस जागनी के तीसरे ब्रह्माण्ड में भी हम ही आये हैं। कुरआन में तो मैं वही बात सुन रहा हूँ, जो सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने

मुझसे कही थी।

इन्ना आतेना सूरत, पढ़ी मुल्ला ने जब।

जमुना ताल पाल की, हकीकत पाई तब।।७७।।

जब मुल्ला ने इन्ना आतेना सूरत पढ़ी, तब श्री महामति जी ने उसमें यमुना जी, हौज़–कौसर ताल, तथा उसकी पाल की शोभा का वर्णन पाया।

जब चोट लगी श्री राज को, आया ऐसा हाल।

ना रही उठने की ताकत, हुये अत खुसाल।।७८।।

परमधाम की शोभा का वर्णन सुनकर श्रीजी इतने आनन्दित हुए कि तफ्सीर–ए–हुसैनी का वर्णन सुनने के अतिरिक्त उन्हें और कुछ भी अच्छा नहीं लगा। प्रसन्नता के आवेग में उनके हृदय को ऐसी चोट लगी और ऐसी

हालत हो गयी कि वे बिस्तर से उठने के लिए भी मानसिक रूप से तैयार नहीं हो सके।

तीन रोज लग सेज से, उठ ना सके तब।
सुने सुकन तपसीर में, कलाम रब्बानी जब।।७९।।

जब श्रीजी तफ्सीर-ए-हुसैनी में वर्णित खुदाई इल्म को सुनने लगे, तो वे उसमें इतना डूब गए कि तीन दिन तक शैय्या से उठे ही नहीं।

साथ आगे बैठ के, चरचा करी बनाए।
हुई खुसाली साथ में, लई साखें मिलाए।।८०।।

इसके पश्चात् श्रीजी ने सुन्दरसाथ के सामने वेद और कतेब की साक्षियों से दोनों का एकीकरण किया और चर्चा की। उस चर्चा को सुनकर सुन्दरसाथ बहुत ही

आनन्दित हुए।

एह खुसाली अपनी, पहुंचाई सब साथ।
एह तो मोमिनों वारसी, जाके हकें पकड़े हाथ।।८१।।

श्रीजी ने वेद और कतेब के एकीकरण की शुभ सूचना पत्र के माध्यम से सब सुन्दरसाथ को पहुँचा दी। इस अलौकिक ज्ञान के उत्तराधिकारी (वारिस) वे ब्रह्ममुनि हैं, जिनका हाथ पकड़कर धाम धनी ने माया से निकाला है।

पाती लिखी उदयपुर को, और साथ सबन।
तुम ठौर ठौर पहुंचाइयो, जो कोई साथ सैयन।।८२।।

श्रीजी ने उदयपुर तथा अन्य सभी जगहों के सुन्दरसाथ को पत्र लिखा। इस पत्र में यह लिखा था कि आप सब

इस सूचना को जगह-जगह ब्रह्मसृष्टि सुन्दरसाथ को पहुँचा देना।

सुनियो भीम मुकुन्द जी, उद्धव केसव स्याम।

हम पाती पढ़ी महम्मद की, सब पाई हकीकत धाम।।८३।।

उन पत्रों में लिखा था कि हे भीम भाई, मुकुन्द जी, ऊद्धव भाई, केशव भाई और श्याम भाई! मैंने मुहम्मद (सल्ल.) की पाती (कुरआन) को पढ़ा है और परमधाम की सारी वास्तविकता को प्राप्त किया है, अर्थात् मुझे कुरआन में परमधाम की शोभा एवं लीला के संकेत मिले हैं।

अपने घर की इसारतें, और न समझे कोए।

और कोई तो समझें, जो कोई दूसरा होए।।८४।।

अपने परमधाम की जो बातें कुरआन में संकेतों में लिखी गयी हैं, उसे सुन्दरसाथ के अतिरिक्त और कोई भी दूसरा समझ नहीं सकता। और किसी को तो, अर्थात् जीवों को, परमधाम की बातें तो तब समझ में आयेंगी, जब उनका स्वयं का अखण्ड स्वरूप हो।

भावार्थ– इस चौपाई में इस बात की ओर संकेत किया गया है कि परमधाम की लीला का रस मात्र ब्रह्मसृष्टि ही ले पाती हैं और धर्मग्रन्थों में निहित गुह्य रहस्यों को वही समझ पाती हैं। जीव सृष्टि प्रायः शब्दों के बाह्य अर्थों में ही उलझकर रह जाती हैं।

इन भाँत की पातियां, पहुंचाई सब साथ।

खुसाली तिनको दीजियो, जो लड़त दज्जाल सों बाथ।।८५।।

इस तरह श्रीजी ने सब जगह सुन्दरसाथ के पास पत्र

भिजवा दिए जिन में यह लिखा था कि जो सुन्दरसाथ माया से लड़ रहे हैं, उन्हें वेद–कतेब के एकीकरण की खुशखबरी दे दीजिए।

इन समय नवतन पुरी से, आए पहुंचे प्रेमदास।
नागजी संगजी सामिल, आये प्रमोधनें की आस।।८६।।

इस समय नवतनपुरी से प्रेम दास जी श्रीजी से मिलने आए। उनके साथ नाग जी और संग जी भी सम्मिलित थे। इन तीनों के आने का एकमात्र उद्देश्य था, श्रीजी को चाकला मन्दिर की गादी पर ईमान दिलवाना और उन्हें गादी की छत्रछाया में रखना।

भावार्थ– जिस तरह आलसी व्यक्ति को यदि कुबेर का खजाना भी दे दिया जाए, तो एक दिन वह भी समाप्त हो जाता है। उसी प्रकार जिन धार्मिक केन्द्रों पर ज्ञान और

भक्ति की धारा प्रवाहित नहीं होती , वे धार्मिक केन्द्र (स्थान) उजाड़ बन जाते हैं। इसलिए कोई भी धार्मिक केन्द्र तभी तक खुशहाल रह सकता है, जब तक वहाँ से गंगा की अविरल धारा की तरह ज्ञान और प्रेम का प्रवाह बहता रहे। इसके अभाव में वहाँ जनशून्यता घेर लेती है और अर्थसंकट भी खड़ा हो जाता है।

बिहारी जी की गादी के साथ भी यही हुआ। उनकी निरंकुशता, ज्ञान और भक्ति से शून्यता , तथा संवेदनहीनता ने वहाँ आने वाले सुन्दरसाथ की संख्या नगण्य कर दी। परिणामतः आर्थिक संकट से उन्हें जूझना पड़ा। इसलिए अपनी गादी का महत्व बताकर श्रीजी से अर्थ की भेंट लेने और अपनी छत्रछाया में रखने की मानसिकता से वे तीनों आये थे।

ए आये दिल्ली मिने, सराए हवेली रोहिल्ला खान।

एक दावा ले बैठे ईसे का, इनका तिन पर था ईमान।।८७।।

ये तीनों दिल्ली में उस समय आए, जब श्रीजी सराय रोहिल्ला खान की हवेली में ठहरे हुए थे। सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के सबसे निकटस्थ होने का दावा इनका था। इनकी आस्था सद्गुरू महाराज के नाम, स्थान, और गादी पर थी। जिस प्रकार यहूदी लोग पैगम्बर मुहम्मद साहब का विरोध करते थे, उसी तरह से ये तीनों भी श्रीजी का विरोध करने वाले समूह में से थे।

थे गिरोह यहूदन में, इनों था मसनन्द का काम।

अकस राखते दीन से, जो बरहक इसलाम।।८८।।

इनका उद्देश्य अपनी गादी के महत्व को दर्शाना था। निजानन्द का जो शाश्वत सत्य धर्म है, उससे इन्हें द्वेष

सा था।

भावार्थ– धर्म का स्वरूप बहुत व्यापक होता है। यह सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक ही होता है। उसे कण्ठी, तिलक, गादी, पूजा–पाठ, तथा वेश–भूषा के बन्धनों में नहीं बाँधा जा सकता।

धर्म का तत्व अति गहन है। बड़े–बड़े विद्वान भी इसको यथार्थ रूप से नहीं जान पाते। जो अपने आत्म–स्वरूप में स्थित हो जाते हैं, उन्हें ब्राह्मण और चाण्डाल में कोई अन्तर नहीं दिखता। किन्तु इसके विपरीत व्यक्तित्व वाला, सारे विश्व को एक मानव मात्र की दृष्टि से देख ही नहीं सकता। उनके लिये तो गादी, कर्मकाण्ड, और अहंता ही सर्वोपरि होती है। इसे ही शाश्वत धर्म से द्वेष रखना कहा गया है।

रसूल साहिब की बात को, कबहू न सुने कान।

खुदा एक महम्मद बरहक, तापर ना ल्यावें ईमान।।८९।।

ये लोग मुहम्मद साहब के कुरआन को अपने कान से कभी सुन ही नहीं सकते थे। परब्रह्म (अल्लाह तआला) एक है और मुहम्मद साहब का कथन पूर्णतः सत्य है। इस बात पर कभी उनकी आस्था ही नहीं हो सकती थी।

ए आये मजलिस मोमिनों की, इहाँ बिना महम्मद और न बात।

ए देख ताज्जुब भये, बड़ी चरचा हुई खुदा की जात।।९०।।

जब वे सुन्दरसाथ की सभा में आए तो यहाँ चर्चा में मुहम्मद साहब के अतिरिक्त और कोई बात ही नहीं चल रही थी। यह देखकर उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ। उस दिन ब्रह्ममुनियों (मोमिनों) के समूह में बहुत ही गहन चर्चा हुयी।

जब रूबरू भये राज सों, तब बातें करी मिने जोस।

आप आड़े कछु न देखहीं, इलम था फरामोस।।९१।।

जब वे श्रीजी से मिले, तब उन्होंने गादी स्थान से आने के अहं में जोश में बातें की। उन्हें अपने वर्चस्व के सिवाय और कुछ दिखाई ही नहीं दे रहा था, क्योंकि उनका ज्ञान नींद का था।

जब चरचा करी हजूर नें, दई श्री देवचन्द्रजी की पहिचान।

श्री महम्मद साहिब का, रोसन किया ईमान।।९२।।

जब आप श्रीजी चर्चा करते हैं, तो सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के स्वरूप की वास्तविक पहचान देते हैं और सबके दिल में मुहम्मद साहब के प्रति सच्ची आस्था भी पैदा करते हैं।

भावार्थ– सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी की वास्तविक

पहचान उनके आत्मिक स्वरूप श्यामा जी (रूह अल्ला) की पहचान से है। मत्तू मेहता के पुत्र देवचन्द्र जी की पहचान तो शरीर की पहचान है। श्री प्राणनाथ जी ने अपनी चर्चा में स्पष्ट कर दिया कि सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी में श्यामा जी तथा मुहम्मद साहब में अक्षर ब्रह्म की आत्मा लीला कर रही थी। इन दोनों आत्माओं के धाम हृदय में एक श्री राज जी की शक्ति ही नजर आती है।

जो बात कही महम्मद नें, सोई रूह अल्लाह कलाम।
मिला दिखाये दोनों इनों को, ए हुआ दीन एक इसलाम।।९३।।

जो बात मुहम्मद (सल्ल.) ने कही थी, वही बात सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने भी कही थी। जब श्रीजी ने दोनों के कथनों का एकीकरण कर दिया, तो एक सत्य धर्म

निजानन्द का प्रकटीकरण हो गया।

जब ईसा महम्मद मिल गये, कलमा और तारतम।
भागा दिल का कुफर, जाग देखी आतम।।९४।।

जब सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के तारतम ज्ञान का मुहम्मद साहिब के कलमे में एकीकरण हो गया, तो उन तीनों के दिल का संशय रूपी पाप समाप्त हो गया, और उन्होंने अपनी आत्मा को जागनी की राह पर चलते हुए देखा।

कहे सुकन जब राज नें, बड़ा देख्या जोस।
तब दीन यहूदन का, सब हुआ फरामोस।।९५।।

जब श्री प्राणनाथ जी ने चर्चा की, तो उनकी चर्चा में जोश की लीला प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो गयी थी। उस समय

गादीवाद का बोझ ढोने वाले उन तीनों के पास अपने को सर्वोपरि मानने का जो अहं भाव था, वह शान्त हो गया।

तब अपनी जुबान सों, बातें कही ईमान।
हम श्री देवचन्द्र जी को इत देखें, भई हमको पहिचान।।९६।।

तब उन्होंने अपने मुख से श्री प्राणनाथ जी के प्रति आस्था व्यक्त करते हुए यह बात कही कि हमने सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी को श्रीजी के स्वरूप में देखा है। अब हमें श्री प्राणनाथ जी के वास्तविक स्वरूप की पहचान हो गयी है।

खुदा एक महम्मद बरहक, हमको रही न सक।
सुनाई सनंध कलस की, ए तो है माफक।।९७।।

खुदा मात्र एक है तथा मुहम्मद साहिब उनके सन्देश

वाहक हैं, के इस कथन में हमें किसी भी बात का संशय नहीं है। जब उन्हें सनद ग्रन्थ में विद्यमान कलश ग्रन्थ के प्रकरणों की चौपाइयाँ सुनाई गयीं, तो वे कहने लगे कि यह तो बहुत ही अच्छा है।

भावार्थ– यहाँ कलश ग्रन्थ की चौपाइयाँ सुनाने का प्रसंग नहीं है, क्योंकि वे शुद्ध हिन्दू–दर्शन के अनुकूल हैं। कलश ग्रन्थ के जो प्रकरण सनद ग्रन्थ में दिये गये हैं, उन्हें ही सुनने पर उनको बोध हो सकता है कि इस ग्रन्थ में सम्पूर्ण विश्व को एक करने की क्षमता है।

हम तो तहकीक किया, तुम हो बीच इसलाम।
तुम्हारी किताब का, हम लिख पावें कलाम।।९८।।

हमें यह पूर्णतया निश्चय हो गया है कि आप निजानन्द की ओर ले जाने वाले वास्तविक धर्म की राह पर हैं।

धाम धनी यह कृपा करें कि हम लोग आपके इस सनद ग्रन्थ की वास्तविकता को लिखकर औरों को भी बता सकें।

हम भी सब साथ को, लिखेंगे सुकन।
हम अब लों भूले थे, है इत बात मोमिन।।९९।।

हम भी सब सुन्दरसाथ को यह बात लिखकर भेजेंगे कि अब तक हम भूल में थे। यहाँ पर हमें ब्रह्मसृष्टियों के वास्तविक व्यवहार का अनुभव हुआ है।

श्री धनी देवचन्द्र जी को, हम देखा है इत।
तुम ईमान ल्याईयो, जो कोई होवे जित।।१००।।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी को हमने श्री मिहिरराज जी के अन्दर देखा है। आप सब सुन्दरसाथ जहाँ पर भी हों,

हमारी इस बात को सत्य मानकर विश्वास करें।

द्रष्टव्य– सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी से तारतम ज्ञान ग्रहण करने के कारण प्रेम जी, नाग जी, एवं संग जी स्वयं को श्रीजी के समकक्ष मानते थे। इसलिये पूर्ण पहचान के बिना, वे श्रीजी को "मिहिरराज जी" ही कहेंगे, "प्राणनाथ जी" नहीं।

इन भाँत सब साथ को, पाती लिखी बनाये।
सो पाती सब ठौरों को, दई सबों पहुंचाय।।१०१।।

इस प्रकार, उन लोगों ने अपने हृदय की पुकार पर सब सुन्दरसाथ को जो पत्र लिखा, वे पत्र उन तक पहुँचा दिये गये।

सेख बदल और नागजीं, एक ठौर किये जब।

संग जी सामिल होय के, ताम खिलाया तब।।१०२।।

जब धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने शेख बदल और नाग जी भाई को एक जगह बैठाकर ब्रह्मज्ञान का रसास्वादन कराया, तो उसमें संग जी भी सम्मिलित हो गये।

कुफर सारा दिल का, भाग गयी सब सक।

एक दीन होए मिले, ल्याये ईमान ऊपर हक।।१०३।।

वास्तविक सत्य का बोध होने पर इनके मन का सारा पाप धुल गया तथा सारे संशय भी समाप्त हो गए। उन्हें एक वैश्विक धर्म (निजानन्द) की पहचान हो गई और यह बोध हो गया कि सारी सृष्टि का एक ही परमात्मा (अल्लाह तआला) है और उस परब्रह्म का आवेश श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में लीला कर रहा है।

इन भाँत बाईस दिन, रहे सोहबत में।

प्रेमदास ने देखिया, बात इन किस्से सें।।१०४।।

इस तरह से श्रीजी संगति में ये तीनों सुन्दरसाथ २२ दिन तक रहे। प्रेमदास को ऐसा अनुभव हुआ कि नाग जी और संग जी बनावटी व्यवहार कर रहे हैं।

कह्या प्रेमदास नें, हम सों बातें करते और।

रूबरू में देखिया, ईमान ल्याये इस ठौर।।१०५।।

प्रेमदास जी ने उन दोनों से कहा कि आप दोनों ने चर्चा के समय अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखा था कि श्रीजी की जगह पर साक्षात् सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी विराजमान थे और आपने उनके स्वरूप पर पूर्ण विश्वास भी व्यक्त किया था, किन्तु आप मुझसे इस समय कुछ और बातें कर रहे हैं, अर्थात् आपकी आस्था श्री प्राणनाथ जी पर

नहीं, बल्कि श्री बिहारी जी महाराज और उनकी गादी पर है।

प्रेमदास रह गया, ए दोऊ चले अपने मुकाम।
जिन बात को आये थे, सो कर चले काम।।१०६।।

प्रेमदास जी श्रीजी के चरणों में रह गए और ये दोनों नवतनपुरी के लिए चल दिये। उनके आने का मुख्य उद्देश्य था, गादी का महत्व बताकर श्रीजी को उनकी छत्रछाया में लाना, तथा यह भी देखना कि वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ जी के द्वारा जागनी कार्य कैसे किया जा रहा है? वे श्रीजी को बिहारी जी की छत्रछाया में तो नहीं ला सके, किन्तु जागनी कार्य की परख करके चलते बने।

जब इत से पीठ दई, तब घेरे सैतान।

बसबसा करने लगा, छीन लिया ईमान।।१०७।।

यहाँ से अलग होते ही उनको माया ने घेर लिया। उनके हृदय में अज्ञान रूपी कलियुग का इतना अधिक वर्चस्व हो गया कि उन्हें श्री प्राणनाथ जी पर जरा भी विश्वास नहीं रहा।

भावार्थ– गादी एक जड़ पदार्थ है, उसमें परब्रह्म की शक्ति का निवास मानना बहुत बड़ी भूल है। शक्ति तो धनी के प्रति हमारे विश्वास, प्रेम, एवं समर्पण में होती है। किसी ब्रह्ममुनि के आसन का सम्मान अवश्य करना चाहिए, किन्तु ब्रह्मवाणी के अतिरिक्त अन्य किसी पदार्थ के सामने नतमस्तक नहीं होना चाहिए। गादी के प्रति श्रद्धा का अतिरेक (अधिकता) मूल स्वरूप के प्रति हमारी आस्था को कम कर देता है, परिणाम हमारी

आत्म–जाग्रति की राह में रूकावट आ जाती है। नागजी और संगजी के संदर्भ में यही बात घटित होती है।

साथ में जहां मिले, तहां बातें दुदिली करें।
सब कोई लगे पूछनें, तुम काहे जात फिरे।।१०८।।

नवतनपुरी जाते समय जहाँ–जहाँ सुन्दरसाथ के यहाँ ठहरे, वहाँ दुविधापूर्ण (दोनों तरफ) बातें करने लगे। तब सुन्दरसाथ उनसे पूछने लगे कि अब आप अपनी बात से मुकर क्यों रहे हैं, अर्थात् पहले तो पत्र भेजकर आपने यह कहा कि श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में श्री देवचन्द्र जी लीला कर रहे हैं, किन्तु अब उसके विपरीत बोल रहे हैं।

तिन से कछु बातें करें, कछु लगाय के सक।

श्री देवचन्द्र जी बिना, और न कोई हक।।१०९।।

वे दोनों उन सुन्दरसाथ से श्रीजी के प्रति कुछ संशयात्मक भाव वाली बातें करने लगे, और यह स्पष्ट कहने लगे कि सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी के अतिरिक्त और कोई परमात्मा नहीं है।

जब नवतनपुरी पहुंचे, अपने मित्र के पास।

तहां जाय के कह्या, बिन श्री देवचन्द्र जी न आस।।११०।।

जब वे नवतनपुरी में अपने मित्र बिहारी जी के पास पहुँचे, तो उनसे कहने लगे कि सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के अलावा हमें और किसी से आशा नहीं।

श्री देवचन्द्र जी को हम देखें, बैठे उन मुकाम।

एक दीन करन का, सौंप्या उनको काम।।१११।।

हमने सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी को श्री मिहिरराज जी के हृदय में विराजमान हुए देखा है। उन्होंने श्री मिहिरराज जी को एक सत्य धर्म (वैश्विक धर्म, निजानन्द धर्म) स्थापित करने का कार्य सौंप रखा है।

इतनी बात सुनके, उठ भागा मेहतर।

रहों न पास तुम्हारे, झगड़ा हुआ यों कर।।११२।।

यह बात सुनते ही बिहारी जी गादी से उठकर भागने लगे। वे कहने लगे कि अब मैं तुम्हारे पास नहीं रहूँगा। इस प्रकार वहाँ बहुत विवाद की स्थिति बन गई।

ए सब मिल पीछे दौड़े, फिराये क्योंए न फिरे जे।

कदमों लाग करें आजजी, बातें भूल के कही हम ऐ।।११३।।

सब लोग बिहारी जी महाराज के पीछे-पीछे दौड़े, परन्तु वे किसी भी तरह से लौटने के लिए तैयार नहीं हुए। सभी उनके चरणों में गिरकर प्रार्थना करने लगे कि भूलवश हमारे मुख से निकल गया था कि सद्गुरु महाराज मिहिरराज के अन्दर बैठे हैं। सचाई तो यह है कि वे साक्षात् आपके अन्दर बैठे हैं।

वे क्यों ऐ कर माने नही, जाए बैठे इक ठौर।

समझाये समझे नही, बात न सुने और।।११४।।

वे किसी प्रकार भी मान नहीं रहे थे। दूर एक स्थान पर जाकर बैठ गए। समझाने पर किसी भी प्रकार से समझ नहीं रहे थे तथा किसी की भी बात सुनने के लिए तैयार

नहीं थे।

तीन दिन तहां रहे, बात काहू न सुने कान।

बड़ा दुख भया साथ में, सुनके बात ईमान।।११५।।

तीन दिन तक वहाँ रहे। वे किसी की प्रार्थना सुनने के लिए तैयार नहीं थे। सुन्दरसाथ में इस बात को लेकर बहुत दुःख हुआ कि उन्होंने बिहारी जी के प्रति अपने विश्वास में कमी की थी।

ऐ सब ज्यों त्यों करके, ल्याये अपनें घर।

बातें जो इसलाम की, यों उठी दिल ऊपर।।११६।।

सब सुन्दरसाथ ने जैसे-तैसे प्रार्थना करके उनको पुनः गादी पर विराजमान किया। उनके (संग जी और नाग जी) मन में चर्चा सुनकर श्री प्राणनाथ जी के प्रति जो

आस्था उत्पन्न हुयी थी, वह पुनः हट गई।

भावार्थ– बीतक में वर्णित "इस्लाम" शब्द का तात्पर्य, मुसलमानों का शरीअत वाला इस्लाम धर्म नहीं, बल्कि तारतम ज्ञान के प्रकाश में प्राप्त होने वाले उस मार्ग से है, जो हमें आत्मा के निजानन्द (शाश्वत शान्ति) के लक्ष्य तक पहुँचाता है। इस्लाम का अर्थ ही होता है शान्ति।

फेर ठौर ठौर पाती लिखी, अपनें फिरे की।
मत कोई ल्याइयो ईमान, तरफ श्री जी साहिब जी।।११७।।

उन्होंने पुनः जगह–जगह पत्र लिखा कि हमने भूलवश लिख दिया था कि सद्गुरू महाराज मिहिरराज जी के अन्दर विराजमान हैं। वास्तविकता तो यह है कि सद्गुरू महाराज तो गादी में विराजमान हैं। इसलिए कोई भी सुन्दरसाथ श्री प्राणनाथ जी (श्रीजी) के प्रति विश्वास न

लाये।

ए किस्सा इत का कह्या, जो आया बीच दरम्यान।
अब कहों ए बीतक, जो लड़ाई सुलतान।।११८।।

हे साथ जी! दिल्ली में होने वाली जागनी लीला में यह एक विशेष प्रसंग था, जो मुझे कहना पड़ा। अब औरंगज़ेब के शरातोरा से होने वाले धर्मयुद्ध में जो भी घटनाक्रम हुआ, मैं उसका वर्णन करता हूँ।

महामत कहे सुनो साथ जी, जो तुम में बीतक।
लिखी लोमोफूज में, तुम्हारे ताले हक।।११९।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! मेरी बात सुनिये। आपके साथ जो भी घटनायें हुई हैं, वह पहले से ही लोहे महफूज में लिखी हुयी हैं। आपको तो मूल

सम्बन्ध से धनी के चरण कमल प्राप्त हुए हैं।

भावार्थ– ब्रह्मसृष्टियों के लिए लोहे महफूज श्री राज जी का वह दिल है, जिस पर उनके साथ होने वाली हर घटना अंकित है। धाम धनी अपने दिल में जो भी लेंगे, वह इस लीला में घटित होना है–

कहे महामत तुम पर मोमिनों, दम दम जो बरतत।
सो सब इस्क हक का, जो पल–पल मेहेर करत।।

खिल्वत १२/१००

प्रकरण ।।३९।। चौपाई ।।१९६६।।

नलुओं का वृत्तान्त

रोहिल्ला खान की सराय में, बैठ किया विचार।

हमको अब क्या करना, हुकम परवरदिगार।।१।।

रोहिल्ला खान की सराय में बैठकर सब सुन्दरसाथ ने विचार–विमर्श किया कि धाम धनी के आदेश से अब हमें क्या करना चाहिए?

घरों रजवी खान के, फिरे दिन दस बीस।

चरचा बात रसूल की, उम्मेद नही जगदीस।।२।।

रिज़वी खान के घर पर वे दस–बीस दिन तक गए। उन्होंने मुहम्मद (सल्ल.) की चर्चा भी की, लेकिन आम खलक का होने से रिज़वी खान से किसी तरह की आशा नहीं बँध सकी कि वह ईमान लाएगा।

भावार्थ– जिस प्रकार "अजाजीलें विरह आग जल" किरन्तन का तात्पर्य जीव सृष्टि से लिया जाता है, उसी प्रकार इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "जगदीश" शब्द से जीव सृष्टि का भाव ग्रहण किया जायेगा क्योंकि जगदीश शब्द का अर्थ विष्णु होता है–

जो जाने नहीं जगदीस को, तिन सिर जम को मार।

किरन्तन १७/३२

जगदीस नाम विष्णु को होए, यों न कहूं तो समझे क्यों कर कोए।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३३/७

जगदीश का अर्थ अक्षरातीत भी होता है–

वेदों कह्या आवसी, बुध ईश्वरों का ईस।

मेट कलजुग असुराई, देसी मुक्त सबों जगदीश।।

खुलासा १२/३१

सेख निजाम के घरों, फिरत रहे मास एक।

बातें फरज उतारनें के, कह दिखाई अनेक।।३।।

सुन्दरसाथ शेख निज़ाम के घर एक महीने तक जाते रहे। अपना कर्त्तव्य पूरा करने के लिए कियामत के सम्बन्ध में बहुत सी बातों को सुन्दरसाथ ने समझाया।

इन बात के वास्ते, कछू बात सुने इसलाम।

और आज उनको ए कही, दुनिया तरफ तमाम।।४।।

ऐसा केवल इसलिए किया कि वह कुछ वास्तविक सत्य की बातें सुन सके, किन्तु जब उसने उनकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया तो उसको एक दिन यह बात कह भी दी कि आपका सारा ध्यान संसार की तरफ है, अल्लाह तआला की तरफ नहीं।

सेख वाजिद एक फकीर, सुना ए निगाह रखे इत।

दस बेर उनके गये, बात सुने क्यामत।।५।।

सुन्दरसाथ ने शेख वाजिद नामक एक फकीर के बारे में सुना कि वह खुदा की बन्दगी में लगा रहता है। उसके यहाँ भी सुन्दरसाथ १० बार गये, ताकि वह किसी तरह से कियामत के प्रकट होने के सम्बन्ध में सुन सके।

करी सोहबत सागर मल्ल सों, घरों गये दस बेर।

चरचा सुनाई बीतक, पर हुआ न आगे जेर।।६।।

सुन्दरसाथ सागर मल के यहाँ १० बार गये और उसे परमधाम से लेकर व्रज, रास, एवं जागनी तक का सारा प्रसंग सुनाया, किन्तु वह अपनी रूढ़िवादी मान्यता को छोड़ नहीं सका।

पर इनकी सोहबत से, गये बखतावर के घर।

तहां जाय चरचा करी, सुनवाने के खातर।।७।।

किन्तु सागर मल की संगति से उन्हें बख्तावर के घर जाने का मौका मिला। उनके यहाँ जाकर सुन्दरसाथ ने कियामत एवं इमाम महदी के प्रकट होने सम्बन्धी बातों पर चर्चा की।

यों और कई जागा, फिरे घर घर कहने को।

पर ईमान बोय बिना, क्या करे तिन सों।।८।।

इस प्रकार कई जगहों पर घर-घर कहने के लिए सुन्दरसाथ घूमते रहे, लेकिन जिनके पास परब्रह्म के प्रति विश्वास (ईमान) की सुगन्धि भी नहीं, उनसे बात करके वे क्या कर सकते थे?

भावार्थ- जिस प्रकार ऊसर भूमि में बीज बोने पर कोई

लाभ नहीं होता, उसी प्रकार श्रद्धा-विश्वास से रहित किसी व्यक्ति को चाहे कितनी भी ज्ञान चर्चा क्यों न सुनाई जाए, उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता?

तब करके बैठक, करने लगे विचार।

ए पोहरा दज्जाल का, कोई होवे न खबरदार।।९।।

तब सुन्दरसाथ ने आपस में बैठकर विचार किया कि इस समय माया (कलियुग) का गहरा प्रभाव है, इसलिए चर्चा सुनने के बाद भी परब्रह्म के प्रेम और ईमान के प्रति कोई सावधान नहीं हो रहा है।

फरज आपन ऊपर है, पहुंचावने पैगाम।

जो कोई ईमान ल्यावहीं, सो दाखिल होए इसलाम।।१०।।

किन्तु हमारा कर्त्तव्य है कि उन तक हम श्री प्राणनाथ

जी (इमाम महदी) एवं कियामत के प्रकट होने का सन्देश पहुँचा दें। जो धाम धनी पर विश्वास लाएगा, वह शाश्वत शान्ति वाले निजानन्द की राह को प्राप्त करेगा।

तिस वास्ते पैगाम को, पहुंचावना जरूर।
नलुवा लिख पहुंचाइये, तब ए सुने मजकूर।।११।।

इसलिए औरंगज़ेब बादशाह तक इमाम एवं कियामत का सन्देश अवश्य ही पहुँचाना है। यदि हम पत्र के माध्यम से अपनी बातें लिखकर बादशाह तक पहुँचा देते हैं, तो वह उस पर अवश्य विचार करेगा।

पास रोहिल्लाखान के, रहे मास चार।
चांदनी चौक में आये के, करने लगे विचार।।१२।।

सराय रोहिल्ला खान में श्रीजी सुन्दरसाथ सहित चार

महीने रहे। इसके पश्चात् चाँदनी चौक में आकर सुन्दरसाथ इस बात पर विचार करने लगे कि जागनी कार्य को कैसे आगे बढ़ाया जाये?

तहां सेती आए के, रहे हवेली दुलीचन्द के।
भया सोर सराबा उतहीं, टरे उन हवेली से।।१३।।

चाँदनी चौक से आकर वे दुलीचन्द की हवेली में ठहरे। अज्ञानी लोगों के द्वारा विरोध किये जाने पर सबने उस हवेली को छोड़ दिया।

तब इत दज्जाल ने, गुलबा किया अति जोर।
काहूं रहने न देवहीं, बहुत करने लगा सोर।।१४।।

कट्टरपन्थी-रूढ़िवादी लोगों के समूह ने बहुत अधिक विरोध करना प्रारम्भ कर दिया। उन लोगों ने यह तय

कर लिया था कि श्रीजी सहित सुन्दरसाथ को कहीं भी ठहरने नहीं देना है। उनका विरोध उत्तरोत्तर बहुत बढ़ता ही गया।

भावार्थ– ब्रह्मज्ञान का प्रकाश तो उस सूर्य के प्रकाश के समान होना चाहिए, जो निर्बाध रूप से सब तक पहुँच जाए। धर्म की चादर ओढ़े हुए अज्ञानी लोगों को हमेशा यह भय सताता रहता है कि यदि ज्ञान का प्रकाश फैल गया तो उनके वर्चस्व का क्या होगा? इसलिये वे कोई न कोई बहाना लेकर विरोध करते हैं और सत्य का प्रचार नहीं होने देते।

बैठे जाय एक ठौर, करने लगे परियान।

अब कासिद भेजिये, इनको दीजे निसान।।१५।।

सब सुन्दरसाथ एक एकान्त स्थान में बैठ गए और

आपस में इस बात पर विचार–विमर्श करने लगे कि कियामत के सभी निशानों को औरंगज़ेब के पास सन्देशवाहक द्वारा भिजवाना चाहिए।

बैठे एकान्त एक ठौर, पांच किये समार।
नलुये पाँच बनाए के, हाजिर किये तैयार।।१६।।

एकान्त में बैठकर कियामत की पहचान से सम्बन्धित पाँच नलुए (पत्र) तैयार किये गए और उन्हें श्रीजी के समक्ष प्रस्तुत किया गया।

हकीकत कयामत की, और पहिचान इमाम।
हजरत ईसा आइया, हकीकत दीन इसलाम।।१७।।

इन पत्रों में कियामत के सातों निशानों की वास्तविकता को दर्शाया गया था। इसके अतिरिक्त आखरूल इमाम

मुहम्मद महदी साहिबुज़्ज़मां की पहचान भी बतायी गई थी। यह भी लिखा था कि हजरत ईसा रूहअल्ला (सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी) आ चुके हैं, जो धर्म के सच्चे स्वरूप को उजागर करेंगे।

असराफील जबराईल, उतरे अरस से।
और लड़ाई दज्जाल की, सब लिखी उन में।।१८।।

बेहद मण्डल से इस्राफील और जिबरील भी आ चुके हैं। उन पत्रों में यह भी लिखा था कि ईसा रूहअल्ला, इमाम महदी, तथा मोमिनों से भी उस दज्जाल का युद्ध होने का वर्णन लिखा हुआ था।

भावार्थ– जिबरील और इस्राफील का मूल स्थान सत् स्वरूप (बेहद मण्डल) है। इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "अर्स" से तात्पर्य सत्स्वरूप से है, परमधाम

(अर्शे अजीम) से नहीं।

आजूज माजूज जाहिर, उगा सूर मगरब।
दाभा हुई जाहिर, ए सब लिखे सबब।।१९।।

आजूज-माजूज के जाहिर होने, सूरज के पश्चिम में उगने, तथा दाब्ह-तुल-अर्ज जानवर के प्रकट होने का वर्णन भी उस पत्र में लिखा था।

भावार्थ- कुरआन के पारा १६ सूरा १८ आयत ९३-९८ में आजूज-माजूज के प्रसंग का वर्णन है। कतेब की मान्यता के अनुसार आजूज-माजूज नूह नबी के पोते हैं, अर्थात् याफिस की सन्तान हैं। कुछ लोग इन्हें मध्य एवं पूर्व एशिया की असभ्य जातियाँ भी मानते हैं, जो अन्य देशों पर आक्रमण करके लूट-मार मचाती थीं। इनसे सुरक्षा के लिये दीवार भी बनायी गयी थी। यह दीवार

अष्ट धातु की मानी गई है।

आजूज १०० गज का तथा माजूज एक गज का माना गया है। इनके फौजों की संख्या ४ लाख तथा इन की फौजों के तीन सेनानायक तुल, ताब, और सब माने गये हैं। अष्टधातु की पतली दीवार को आजूज-माजूज चाटते रहते हैं। शाम तक वह कागज के बराबर पतली रह जाती है, किन्तु सबेरे तक पुनः पहले जैसी हो जाती है। ऐसा कहा जाता है कि जब तक खुदा नहीं चाहे, तब तक आजूज-माजूज अष्टधातु की इस दीवार को नहीं तोड़ सकेंगे।

४ लाख फौजों का आशय यह है कि ४००००० , ३६०-११०० अर्थात् ग्यारवीं सदी में इमाम -ए-जमां का प्रकट होना सिद्ध होता है।

श्री प्राणनाथ जी की वाणी से इसके बातूनी भेद स्पष्ट हो

जाते हैं। आजूज दिन को तथा माजूज रात्रि को कहते हैं। दिन के समय मनुष्य के मन की वृत्तियाँ १०० तरफों दौड़ती हैं, इसलिये आजूज को १०० गज का लम्बा कहा गया है।

बड़ा कह्या इन मायनों, करी रोसन आकास जिमी।
सौ गज कहे सौ तरफों के, दौड़े खाहिस दिन आदमी।।

मारफत सागर ११/२४

रात्रि को माजूज कहते हैं। माजूज को एक गज का लम्बा इसलिये कहते हैं, क्योंकि रात्रि में सो जाने पर मन की वृत्तियां एक ही तरफ हो जाती हैं।

जीवधारियों का यह पँचभौतिक शरीर ही अष्टधातु (रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, और ओज) की दीवार है। प्रातः, दोपहर, तथा सायंकाल- ये तीन फौजे हैं। आजूज-माजूज निरन्तर सबकी उम्र का हरण

कर रहे हैं। जब खुदा के हुक्म से महाप्रलय होगी, तो इस दुनिया में कुछ भी नहीं बचेगा अर्थात् आजूज-माजूज रूपी काल के द्वारा सांसारिक प्राणियों की उम्र रूपी दीवार को तोड़ दिया जायेगा।

कुरआन के पारा २० सूरा २७ आयत ८२ में दाभ्ह-तुल-अर्ज जानवर का वर्णन है, जो कियामत के समय में प्रकट होगा। इस जानवर की शक्ल विशेष प्रकार की होगी, अर्थात् उसकी छाती शेर की होगी, पीठ गीदड़ की होगी, गर्दन मुर्गे की होगी, कान हाथी के होंगे, सिर पर पहाड़ी बैल के तीखे सींग होंगे, आँखें सुअर की होंगी, किन्तु उसका मुख आदमी का होगा।

शरीअत का पालन करने वाले जाहिरी मुसलमान इसका वास्तविक रहस्य नहीं समझते। आखरूल इमाम मुहम्मद महदी श्री प्राणनाथ जी ने अपनी वाणी खुलासा

२/३० में इसका रहस्य इस प्रकार स्पष्ट किया है–

आए वसीयत नामें मक्के से, उठ्या कुरान दुनी से बरकत।
सो अग्यारै सदी अंत उठसी, रूहें हादी कुरान सोहोबत।।

मक्का–मदीना से शरीअत के बादशाह औरंगज़ेब के पास चार वसीयतनामे लिख कर आये, जिनमें उन्होंने कसम खाकर लिखा था कि मक्का से कुरआन की सफकत तथा बरकत उठ गयी, तथा यहाँ से नूरी ज्ञान का झण्डा भी उठ गया।

ईमान से रहित मनुष्यों में "दाब्ह–तूल–अर्ज" जानवर की सभी विशेषताये हैं। उस जानवर रूपी इन्सान की छाती को शेर का इसलिये कहा गया है कि जिस प्रकार शेर निर्दयतापूर्वक पशुओं का संहार करता है, उसी प्रकार इन्सान भी दया–प्रेम से रहित होकर अन्य प्राणियों को पीड़ा देने वाला हो जायेगा।

गीदड़ की पीठ बहुत कमजोर होती है। वह डण्डे के सामान्य प्रहार को भी सहन करने में असमर्थ होती है। मनुष्य भी, कियामत का समय आ जाने पर, धर्म के शुभ कार्यों से दूर रहने वाला हो जायेगा। माया के कामों में धन खूब खर्च करेगा, किन्तु धर्म के कामों में नहीं।

मुर्गे की गर्दन अति आवश्यक कार्य जैसे दाना चुगने आदि में भी बहुत कठिनता से झुकती है। कियामत आने पर इन्सान इतना अधिक अभिमानी स्वभाव का हो जायेगा कि वह बड़े बुजुर्गों एवं महापुरूषों को प्रणाम करने में भी अपना अपमान समझेगा।

हाथी अपनी स्तुति पर ध्यान नहीं देता है, किन्तु अपने प्रति कहे हुए कठोर शब्द को अवश्य याद रखता है तथा बदले की भावना में जलता रहता है। कियामत के समय में मनुष्यों का स्वभाव भी केवल बुरी बातों को सुनने की

चाहत वाला बन जायेगा।

पहाड़ी बैल के सींग बहुत नोकदार एवं मजबूत होते हैं। उसमें हमेशा किसी न किसी प्राणी से झगड़ा करने की प्रवृत्ति बनी रहती है। यदि कोई जानवर उसे झगड़ा करने के लिए नहीं मिलता, तो वह झाड़ियों में ही अपने सींगों को उलझाकर अपनी इच्छा पूरी करता है। जब कियामत का समय आयेगा, तब इन्सान बिना वजह दूसरों से झगड़ा करने में अपना गौरव समझेगा।

सुअर की दृष्टि हमेशा गन्दे पदार्थों की तरफ ही अधिक होती है, बजाय स्वादिष्ट पदार्थों के। इसी प्रकार कियामत के समय में मनुष्यों की चित्त वृत्ति (दृष्टि) विषय-विकारों की ही तरफ रहेगी, परब्रह्म की भक्ति में नहीं।

तफ्सीर-ए-हुसैनी के भाग २ पृष्ठ १७६ पर कियामत के समय में पश्चिम में सूरज के उगने का वर्णन है, जो

मुसलमानों के लिये बिना रोशनी का होगा। सृष्टि क्रम के विपरीत यह बात एक गहरे रहस्य की तरफ संकेत करती है, जिसे जाहिरी मुस्लिम जन नहीं जानते। वे अभी भी यही समझते है कि यह सूरज ही पश्चिम की तरफ से निकलेगा। धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी अपनी वाणी में इस रहस्य का स्पष्टीकरण इस प्रकार करते हैं–

सो नूर सब इत आईया, इन जिमी मसरक।
तब वह जिमी दाभा भई, जैसे पहले थी बिना हक।।

खुलासा १५/३६

जब कुरआन के मारिफत का ज्ञान हिन्दुस्तान में हिन्दुओं के तन में प्रकट होने वाले इमाम महदी के तन में आ गया, तो रसूल मुहम्मद साहिब के अरब में आने से पहले मक्का की जो हालत थी, पुनः वैसी ही हो गयी।

रूह अल्ला महंमद इमाम, मसरक आए जब।

सूरज गुलबा आखिरी, मगरब उग्या तब।। खु. १५/३८

परमधाम का ज्ञान रूपी सूर्य इस ब्रह्माण्ड में सर्वप्रथम अरब में आया, इसलिये अरब को पूर्व दिशा में माना गया। जब रूहअल्लाह (श्री श्यामा जी), रसूल साहिब, तथा इमाम महदी हिन्दुस्तान में श्री प्राणनाथ जी श्रीजी साहिब के रूप में जाहिर हुए, तो परमधाम का ज्ञान रूपी सूर्य पूर्व दिशा (हिन्दुस्तान) में उगा हुआ माना गया और अरब की धरती को पश्चिम की दिशा माना गया। वहाँ नूरी ज्ञान का झण्डा न होने से अज्ञानता का साम्राज्य छाया रहा। इसलिये वहाँ के ज्ञान रूपी सूर्य की तुलना बिना रोशनी वाले सूरज से की गयी है।

नूर खुदा आया मसरक, ऊग्या सूरज मगरब।

जाहेरी ढूंढे सूरज जाहेर, ए जो पढ़े आखिरी सब।।

खुलासा १५/३९

जब परब्रह्म का ज्ञान (श्रीमुखवाणी) हिन्दुस्तान (पूर्व) में आया, तो पश्चिम (मुसलमानों) में अज्ञानता छा गयी। कुरआन का बाहरी अर्थ समझने वाले मुसलमान, जाहिरी सूरज के पश्चिम में उगने की बाट देख रहे हैं।

बिना रोशनी वाले सूर्य को सूर्य कहा ही नहीं जा सकता। इसी प्रकार कट्टर शरीअत के नियमों से बंधे हुए मुसलमान आखरूल जमां इमाम महदी श्री प्राणनाथ जी की पहचान नहीं कर पाते क्योंकि उन्होंने हिन्दू का तन धारण किया है। इसलिये वे खुदाई ज्ञान रूपी सूर्य के उजाले में नहीं आ पाते।

राह सरातल मुस्तकीम, रसूलें करी सरत।
सो सबै आये मिले, फरदा रोज क्यामत।।२०।।

मुहम्मद साहिब ने ग्यारहवीं सदी फरदा रोज़ में कियामत और इमाम महदी के प्रकट होने का वायदा किया था और यह भी कहा था कि उस समय सबको परमधाम का सीधा-सरल मार्ग प्राप्त हो जाएगा। अब ग्यारहवीं सदी का वही समय आ पहुँचा है।

इन भाँत की हकीकत, ए होए एक दीन इसलाम।
इन सेती काफर फिरे, रखे रब्बानी कलाम।।२१।।

नलुओं (पत्रों) में यह भी लिखा था कि कियामत के समय सब में एक सत्य धर्म स्थापित हो जाएगा। उसमें कुरआन के उद्धरणों को देकर यह लिखा था कि इससे इन्कार करने वाला काफिर कहलाएगा।

कुरान हदीसों की साहिदी, देके लिखे बनाए।
वास्ते फरज उतारने, ए पहुंचाओ जाए।।२२।।

अपना कर्त्तव्य पूरा करने के लिए कुरआन और हदीसों की साक्षी देकर इन पाँच नलुओं को लिखा गया। इन्हें ५ प्रमुख व्यक्तियों को पहुँचाने के लिए श्रीजी का आदेश हुआ।

कानजी को कासिद कर, नलुये दिये हाथ।
केतिक और सामिल किये, रहियो इनके साथ।।२३।।

कान्हजी भाई को सन्देशवाहक बनाकर, श्रीजी ने पाँचों नलुये उनके हाथ में दे दिये। उनकी सुरक्षा को ध्यान में रखकर साथ में कुछ और भी सुन्दरसाथ कर दिए गए। उनके लिए निर्देश था कि कान्हजी भाई से थोड़ी दूरी पर हमेशा उनके साथ रहें।

एक नलुआ सेख इसलाम पर, दूजा रजवी खान।

तीसरा सेख निजाम पर, ए किनको होए पहिचान।।२४।।

एक नलुआ काजी शेख इस्लाम के लिये था। दूसरा, मुख्य दरबारी रिज़वी खान के लिये था। तीसरा, बादशाह के धर्मगुरू शेख निज़ाम के लिये था। सबको नलुये इस भावना से पहुँचाये गये थे, ताकि उनमें से कोई भी कियामत और इमाम महदी के प्रकट होने की पहचान कर ले और बादशाह तक पहुँचा दे।

चौथा आकिलखान को, पाँचमा सीदी पोलाद।

खबर करो तुम इनको, लिखी तुम्हारी बुनियाद।।२५।।

चौथा नलुआ कुरआन की तालीम देने वाले आकिल खान के लिए था। पाँचवा नलुआ सिद्दीक फौलाद के लिए था, जो दिल्ली का कोतवाल था। श्रीजी ने कान्हजी

भाई से कहा कि इन नलुओं के द्वारा तुम इन्हें सूचित कर दो कि इसमें इनके इस्लाम धर्म की मूल बातों, अर्थात् एक अल्लाह तआला और उसके अर्शे अज़ीम तथा कियामत के सात निशानों, का वर्णन किया गया है।

काजी ने नलुआ लिया, पूछी फकीर की बात।
कहाँ फकीर रहत है, कौन तुम्हारी जात।।२६।।

काज़ी शेख इस्लाम ने नलुआ ले लिया और फकीर के विषय में पूछा कि वह कहाँ रहता है? कान्हजी भाई से पूछा कि तुम्हारा परिचय क्या है? तुम हिन्दू हो या मुसलमान?

हम कासिद पेटारथू, करें खिजमत अपने अरथ।
हम मेहनत तिनकी करें, गाँठ से छोड़के देवें ग्रथ।।२७।।

कान्हजी भाई ने उत्तर दिया– हुज़ूर! मैं तो मात्र एक सन्देशवाहक हूँ। अपने पेट को पालने हेतु रूपये के लिए मैं यह काम करता हूँ। मैं पैसे के लिये उनकी मजदूरी करता हूँ। इसके बदले में वे मुझे अपने पास से पारिश्रमिक (मेहनताना) देते हैं।

पहाड़ से भेजा फकीर नें, तुम्हें पहुंचावने पैगाम।
कह्या और भी काहू पर, के मुझ ही पर इस ठाम।।२८।।

वह फकीर जो पहाड़ पर रहते हैं, उन्होंने आपके पास सन्देश देने के लिए मुझे भेजा है। क़ाज़ी शेख इस्लाम ने पूछा कि क्या यह सिर्फ मेरे लिए ही है या औरों के लिये भी है?

कही चार नलुये और हैं, तिनके लिये नाम।

तिनके डेरे जात हों, पहुंचावने पैगाम।।२९।।

कान्हजी भाई ने उत्तर दिया कि चार नलुये और हैं। शेख निज़ाम, रिज़वी खान, आकिल खान, और सिद्दीक फौलाद के लिये भी हैं। उन्हें फकीर का सन्देश देने के लिए मैं उनके निवास पर जा रहा हूँ।

तब काजी रजा दई, ले के जाओ तुम।

तिनका जवाब ल्याओ, कैसा होत हुकम।।३०।।

तब काज़ी ने कान्हजी भाई को स्वीकृति दे दी कि तुम फकीर का पैगाम उनके पास ले जाओ और उनका जवाब लेकर आओ, ताकि मुझे भी पता चले कि वे क्या उत्तर देते हैं? मैं बाट देख रहा हूँ कि अल्लाह का हुक्म क्या होता है?

कानजी उहाँ से चले, द्वार आया सेख निजाम।

नलुआ पहुंचाया अन्दर, हम आये ले करो काम।।३१।।

कान्हजी भाई वहाँ से चलकर शेख निज़ाम के घर पर आये, और उसके घर के अन्दर जाकर नलुआ शेख निज़ाम को दिया, तथा कहा कि हम फकीर का सन्देश लेकर आये हैं। हमारा काम कर दीजिये, अर्थात् इसका उत्तर दे दीजिये, ताकि मुझे इसका मेहनताना मिल जाये।

सेख निजाम बुलाय के, पूछी हकीकत।

तुमको किनने भेजिया, लिख के दौर कयामत।।३२।।

शेख निज़ाम ने कान्हजी भाई को पास बुलाकर सारी बात पूछी कि कियामत की ये बातें लिखकर तुम्हें किसने मेरे पास भेजा है?

तब जवाब दिया कानजीयें, हमको भेजा फकीर।

सैयद महम्मद इबन इसलाम, बैठा गोसे एक तीर।।३३।।

तब कान्हजी भाई ने जवाब दिया कि मुझे एक फकीर ने भेजा है, जिसका नाम सैय्यद मुहम्मद इब्न-ए-इसलाम है। वह पहाड़ के एक कोने में एकान्त में रहता है।

और भी काहू के कागद, के लिखे हमहीं पर।

तब जवाब दिया कानजीयें, हैं पांचों ऊपर।।३४।।

शेख निज़ाम ने पूछा कि क्या केवल मेरे लिये ही ये नलुये हैं या औरों के लिए भी हैं? तब कान्हजी भाई ने जवाब दिया कि पाँचों के लिए हैं।

नाम कह दिखाये तिनके, एक दिया काजी इसलाम।
अब मैं जात औरों घरों, पहुंचावने पैगाम।।३५।।

कान्हजी भाई ने उन पाँचों के नाम बताकर कहा कि काज़ी शेख इस्लाम को तो मैं नलुआ दे आया हूँ। अब आपके यहाँ से जाने के पश्चात् बाकी बचे तीन अन्य लोगों के पास मैं फकीर का पैगाम देने जाऊँगा।

तब सेख निजाम ने, दिया एह जवाब।
पहुंचाओ सिताबी तिनको, मिल बिदा करें सिताब।।३६।।

तब शेख निज़ाम ने यह उत्तर दिया कि जल्दी से उनके पास पैगाम पहुँचा दो, ताकि हम लोग भी जल्दी से मिलकर तुम्हे इसका उत्तर दे सकें।

गया आकिल खान के इहाँ, उन किया इनकार।

न मेरा नाम नलुए पर, हुआ न खबरदार।।३७।।

कान्हजी भाई आकिल खान के यहाँ गये, किन्तु उसने लेने से इनकार कर दिया। उसने बहाना बनाया कि जब नलुये में मेरा नाम ही नहीं है तो मैं इसे कैसे ले सकता हूँ? यह उसकी बदनसीबी थी कि श्रीजी के पैगाम के प्रति वह सावचेत नहीं हो पाया।

फेर दिया नलुये को, लिखी लानत जिन।

वास्ते बहुत पढ़े के, मोहर लिखी कानन।।३८।।

आकिल खान ने अपने गुमान में नलुये को वापस लौटा दिया। ऐसे ही लोगों के लिये कुरआन में अल्लाह की तरफ से फटकार लिखी है। बहुत पढ़े होने के गुमान ने आकिल खान को बहरा बना दिया, जिससे वह अल्लाह तआला के

पैगाम को सुन नहीं सका।

भावार्थ– तमोगुण और रजोगुण की अधिकता रहने पर ही ज्यादा अहंकार आ सकता है। भक्ति भाव से युक्त सतोगुणी व्यक्ति, चाहे कितना भी विद्वान क्यों न हो, अहंकारी नहीं हो सकता। आकिल खान के गुमान में उसका तमोगुणी खान–पान एवं रहन–सहन ही मूल कारण था।

गया रजवी खान के, नलुआ दिया हाथ।
उनने खबर पूछी तिनकी, केते नलुये तेरे साथ।।३९।।

कान्हजी भाई ने रिज़वी खान के पास जाकर नलुआ उसके हाथ में दिया। उसने सारा समाचार पूछा कि तुमने किस–किस को नलुआ दिया है?

तब कान जी भाई ने कह्या, पहुंचाये चार पैगाम।

रह्या एक सीदी पोलाद का, जात हों तिस ठाम।।४०।।

तब कान्हजी भाई ने उत्तर दिया आपको लेकर चार व्यक्तियों को मैं नलुये के माध्यम से फकीर का पैग़ाम दे चुका हूँ। एक सिद्दीक फौलाद का बाकी है और मैं अब वहीं पर देने जा रहा हूँ।

तब जवाब इननें दिया, पहुंचाय के आओ तुम।

हम भी जवाब देएंगे, जैसा होवे हुकम।।४१।।

तब रिज़वी खान ने उत्तर दिया कि उनको पैगाम देकर मेरे पास आना। अल्लाह तआला का जैसा हुक्म होगा, मैं वैसा उत्तर दूँगा।

वहां सेती चलके, आए सीदी पोलाद के घर।

नलुआ दिया हाथ में, सारी कही खबर।।४२।।

वहाँ से चलकर कान्हजी भाई सिद्दीक फौलाद के घर पर आए। उन्होंने सिद्दीक फौलाद के हाथ में नलुआ दिया और सारी बात बतायी।

सुनों इनका उत्तर, मैं पाऊं सिताब।

तब कह्या सीदीय नें, औरों लेओ जवाब।।४३।।

कान्हजी भाई ने यह आग्रह किया कि मैं इस नलुये का जल्दी ही उत्तर पाना चाहता हूँ। तब सिद्दीक फौलाद ने कहा कि पहले औरों से जवाब लेकर आओ।

पाँचों पैगाम पहुंचाए के, आए मिले मोमिन।

सारों की खबर के, बीतक कहे वचन।।४४।।

पाँचों को पैगाम पहुँचाकर कान्हजी भाई अपने सहयोगी सुन्दरसाथ से मिले। उन्होंने सबके पास जाने पर क्या-क्या घटना घटित हुयी, सारी बात उनको बतायीं।

ए हकीकत लेए के, दौड़े पासे श्री राज।

कही सारी बीतक, जो गुजरी है आज।।४५।।

कान्हजी भाई पाँचों के मन की भावना लेकर श्री प्राणनाथ जी के पास दौड़ते हुए आए और आज उनके साथ जो भी घटनायें घटित हुयी थीं, वह सारी की सारी कह सुनाई।

फेर सवारे पहर में, कान जी फिरा सबन।

एक डारे दूसरे पर, जवाब न दिया किन।।४६।।

पुनः प्रातःकाल कान्हजी भाई एक-एक के घर गए, लेकिन किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। एक ने दूसरे पर डाल दिया कि पहले उनसे उत्तर ले आओ तो मैं उत्तर दूँगा।

यों करते सबन के, फिरे पन्द्रह दिन।

बोए ईमान है नहीं, बिना खास मोमिन।।४७।।

इस प्रकार, प्रतिदिन उन पाँचों के घर जाते हुए कान्हजी भाई को १५ दिन बीत गये, लेकिन किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। ब्रह्मसृष्टियों के अतिरिक्त अन्य किसी में परब्रह्म के प्रति सच्चा ईमान नहीं होता।

जाए झुका सेख निजाम के इहां, मोहे देयो जवाब।

तब जवाब इनने दिया, ए काम नाहीं सिताब।।४८।।

कान्हजी भाई शेख निज़ाम के यहाँ जाकर बहुत विनम्रता से कहने लगे कि आप कृपा करके नलुये का उत्तर दे दीजिए। तब उसने उत्तर दिया कि यह काम इतनी जल्दबाज़ी का नहीं है।

ए तो इमामत का, दावा ल्याये तुम।

ए तो काम सुलतान का, क्या जवाब देवें हम।।४९।।

तुम जो नलुआ मेरे पास लाये हो, उसमें तो आखरूल इमाम मुहम्मद महदी के आने का दावा किया गया है। यह काम तो बादशाह औरंगज़ेब का है, भला इसमें मैं क्या जवाब दे सकता हूँ?

हम सब मिलके, एक ठौर करें जवाब।

इत कई खलक मिलेगी, न होवे काम सिताब।।५०।।

हम पाँचों मिलकर जब एक जगह एकत्रित होंगे तो इसका जवाब लिख पायेंगे। कियामत और इमामत का निर्णय करने में अनेक वर्गों की जनता आएगी। यह काम इतनी जल्द होने वाला नहीं है।

गया काजी के घरे, किया जवाब तलब।

ना होवे काम एक मुझसे, जो मैं जवाब करों अब।।५१।।

कान्हजी भाई काज़ी के घर गये और उससे नलुये का उत्तर माँगा। काज़ी ने उत्तर दिया कि यह काम अकेले मुझसे नहीं हो सकेगा। इसलिये मैं अभी जवाब नहीं दे पाऊँगा।

बात बड़ी ल्याये तुम, ए मुकदमा कयामत।

मैं पढ़त पढ़त आजिज भया, डारा कागद तित।।५२।।

तुमने कियामत के आने का जो दावा किया है, वह बहुत बड़ी बात है। मैं इसे पढ़ते-पढ़ते परेशान हो गया, इसलिए थक-हार कर मैंने उसे एक कोने में रख दिया।

हम पांचों इकट्ठे मिलके, देवेंगे उत्तर।

तब तुम फकीर को, जाए के देओ खबर।।५३।।

जब हम पाँचों मिलकर इसका उत्तर लिखेंगे, तब तुम फकीर को हमारा उत्तर ले जाकर दे देना।

सीदी पोलाद के घरों, जाए के पहुंचे तित।

तलब करी जवाब की, मुझे फकीर न देवे मेहनत।।५४।।

कान्हजी भाई सिद्दीक फौलाद के घर पहुँचे और उससे नलुये का उत्तर माँगने लगे। कान्हजी भाई कहने लगे कि जवाब न मिलने से वह फकीर मुझे मेहनताना नहीं दे रहा है, इसलिये जवाब देने की इनायत कीजिए।

सीदी ने जवाब दिया, ए काजी मुल्ला का काम।
मैं क्या जानों कुरान की, हकीकत दीन इसलाम।।५५।।

सिद्दीक फौलाद ने उत्तर दिया कि यह काम तो काज़ी–मुल्लाओं का है। भला मैं कुरआन और इस्लाम धर्म की वास्तविकता के बारे में क्या जानता हूँ?

तब जवाब कान जी नें, तुम खबर करो सुलतान।
ओ आपहीं जवाब देवेंगे, उन्हें सब पहिचान।।५६।।

तब कान्हजी भाई ने उत्तर दिया कि आप केवल

बादशाह तक नलुये की बात पहुँचा दीजिए। वे स्वयं ही इसका उत्तर देंगे, उन्हें कुरआन की सारी जानकारी है।

कह्या हमारा बुता नही, बात न निकसे मुख।
भूल चूक बचन कहें, तो बड़े पावें दुख।।५७।।

सिद्दीक फौलाद ने उत्तर दिया कि यह मेरी ताकत से बाहर है कि इस बारे में मैं बादशाह से कुछ बात कर सकूँ। यदि भूल–चूक से कुरआन के विपरीत कोई बात मुख से निकल गयी, तो मुझे बादशाह के भयानक दण्ड से दुःखी होना पड़ेगा।

तहां सेती फेर के, गया रजवी खान।
तहां जाए जवाब को, पुकारा देओ दीवान।।५८।।

वहाँ से चलकर कान्हजी भाई रिज़वी खान के यहाँ गये

और कहा कि दीवान साहिब! मेरे लाये हुए नलुये का जवाब दीजिए।

मैं तुम पर ल्याइया, सादी के बचन।
तुम सुन अपनें दिल में, करो खुसाली मन।।५९।।

मैं आपके लिए नलुये के माध्यम से खुशखबरी का पैगाम लेकर आया हूँ। उसे सुनकर आप अपने दिल में खुशियाँ मनाइये।

तब जवाब इन दिया, क्या सादी करें हम।
आज ही कयामत ल्याया, चाहिये मारया तुम।।६०।।

तब रिज़वी खान ने जवाब दिया, मैं कैसे खुशियाँ मनाऊँ? तुम आज ही कियामत के आने की बातें कर रहे हो, तुम्हें तो मार डालना चाहिए।

अजूं हमारे दिल में, रहे दुनियां की उम्मेद।

जोरू लड़के घर की, छूट जात सब कैद।।६१।।

मेरे दिल में अभी दुनियाँ के सुखों की ख्वाहिशें बाकी हैं। कियामत आ जाने से तो बीबी-बच्चे तथा घर की मीठी कैद से छुटकारा मिल जायेगा अर्थात् कोई बचेगा नहीं।

भावार्थ- कियामत शब्द कियाम (ठहरने) से बना है, जिसका अर्थ होता है, "अखण्ड मुक्ति देने वाले ज्ञान का अवतरण", किन्तु सामान्य मुसलमान यही समझते हैं कि कियामत का अर्थ है, "प्रलय (फना) हो जाना।" जबकि पाक कुरआन व हदीस-ए-नबी में कियामत छोटी व बड़ी कही है।

रिज़वी खान भी इसी मानसिकता से ग्रस्त था। इसलिए वह यह सोच रहा था कि जब संसार रहेगा ही नहीं, तो बीवी-बच्चों और घर का सारा सुख मुझ से छूट जाएगा।

हम कछु कहत हैं, लिख देओ दो कलमें।

तो हम जायें फकीर पे, रूजू होवे तिन सें।।६२।।

मेरा तो आपसे केवल इतना ही कहना है कि आप तो केवल दो बातें लिखकर दे दीजिए, जिससे मैं फकीर के पास जाकर अपना मेहनताना ले लूँ।

एह बात पांचन की, नही अकेले मेरा काम।

ऐह बड़ा मुकदमा, काम दीन इसलाम।।६३।।

रिज़वी खान ने उत्तर दिया कि यह काम अकेले मैं नहीं कर सकता। यदि हम पाँचों एकत्रित हों, तभी इसका उत्तर दिया जा सकता है। कियामत एवं आखरूल इमाम मुहम्मद महदी का दावा करना तो इस्लाम धर्म का बहुत बड़ा काम है।

इन भांत आजिज होए के, आया पास श्री राज।
जवाब कोई न देवहीं, बहुत फिरा इन काज।।६४।।

इस तरह से कान्हजी भाई बहुत परेशान होकर श्रीजी के पास खाली हाथ लौट आये और उन्होंने सारी बात बताई कि हे धाम धनी! मैं नलुओं का उत्तर लेने के लिये पाँचों के पास बार-बार गया, किन्तु कोई भी उत्तर देने के लिये तैयार नहीं है।

महामत कहें सुनों मोमिनों, ए नलुओं की बीतक।
अब कहों आगे परियान की, कहों सो हकीकत।।६५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! अभी आपने नलुओं का प्रसंग सुना। अब औरंगज़ेब को सन्देश देने के लिए जाने का प्रसंग है, जिसकी वास्तविकता मैं आपसे कहने जा रहा हूँ। **प्रकरण ।।४०।। चौपाई ।।२०३१।।**

मंत्रणा

रामचन्द्र वकील के, फिरे कोईक दिन।

चरचा सुनाई बहुतक, ना देखा अंकूर मोमिन।।१।।

रामचन्द्र वकील के यहाँ सुन्दरसाथ कई दिन तक गए। उसे चर्चा तो बहुत अधिक सुनायी, लेकिन उसमें परमधाम का कोई अँकुर नहीं दिखायी दिया।

उधोव दास गोड़िया, बड़ा भाई गंगा राम।

दोए दिन सेवा करी, उत पाया विसराम।।२।।

गँगाराम का बड़ा भाई ऊधव दास गोड़िया था। उन्होंने दो दिन तक श्रीजी की सेवा की। पुनः माया के सुखों में लिप्त हो गए।

सुन्दरी एक सन्यासिन, मिली रेती में आए।

दीदार कर पीछे फिरी, और नजरों न आया ताए।।३।।

जब श्रीजी यमुना के किनारे रेती में बैठे हुए थे, तब सुन्दरी नाम की एक सन्यासिनी उनके पास आई और उनका दर्शन कर वापस लौट गयी। उसे श्रीजी के वास्तविक स्वरूप की पहचान नहीं हो सकी।

मास दोए नलुओं मिने, किया गुजरान इत।

पहुंचावनें पैगाम को, दावत जो कयामत।।४।।

सुन्दरसाथ दो महीने तक औरंगज़ेब के पाँचों अधिकारियों से नलुओं के उत्तर की प्रतीक्षा करते रहे। इन नलुओं का एकमात्र उद्देश्य था कि किसी तरह औरंगज़ेब तक कियामत और इमाम महदी के प्रकट होने का सन्देश पहुँचा दिया जाए।

फेर बैठे परियान को, जाए दूर बैठे श्री राज।
आपस में मसलत करी, क्या करना है आज।।५।।

पुनः श्रीजी के साथ सुन्दरसाथ किसी दूर एकाँत स्थान में बैठकर विचार-विमर्श करने लगे। सबने आपस में विचार किया कि आज हमें क्या करना है?

साथ केताइक दिल्लीय का, और केताइक महाजर।
मसलत करी बाग में, क्यों ए पावें खबर।।६।।

इस बैठक में कुछ सुन्दरसाथ दिल्ली के था और कुछ बाहर के सुन्दरसाथ भी थे, जो अपना घर-द्वार हमेशा के लिए छोड़ कर श्रीजी के ऊपर समर्पित हो गए थे। सबने एक बाग में बैठकर इस बात पर विचार किया कि किस तरह से औरंगज़ेब तक सन्देश पहुँचाया जाए?

एक बात दिल में, लेओ तुम्हारी बीतक।

श्री देवचन्द्र जी तुम पर, भेज दिया है हक।।७।।

श्री प्राणनाथ जी ने सब सुन्दरसाथ को सम्बोधित करते हुए कहा– हे साथ जी! आप उस सम्पूर्ण घटनाक्रम को अपने हृदय में बसाइये, जिसमें धाम धनी ने आपको इश्क रब्द के पश्चात् व्रज–रास की लीला दिखाकर इस जागनी ब्रह्माण्ड में भेजा है। आपके ऊपर असीम कृपा करके धाम धनी ने श्यामा जी को भेजा।

और महम्मद साहिब आये, लेकर हक कलाम।

सो ल्याये तुम्हारे वास्ते, कोई और न लेवे नाम।।८।।

और मुहम्मद (सल्ल.) भी आपके लिए ही कुरआन का ज्ञान लेकर आए हैं। आपके अतिरिक्त और कोई भी अक्षरातीत को याद नहीं करता।

भावार्थ– हिन्दू और मुसलमान क्रमशः वेद और कुरआन को पढ़कर भी अक्षरातीत को नहीं जानते और ब्रह्मसृष्टि के दिल में अक्षरातीत के अतिरिक्त और कोई नहीं बसा होता है। इसी बात को इस चौपाई के चौथे चरण में दर्शाया गया है। यहाँ नाम लेने से तात्पर्य प्रेमपूर्वक याद करने से है।

ए कलाम तुम विना, और न काहू खुलत।

ए मेहर कादर की, हुई तुमको इत।।९।।

आपके अतिरिक्त अन्य किसी को भी कुरआन के गुह्य रहस्य नहीं खुल सकते। आपके ऊपर सर्वशक्तिमान अक्षरातीत की यह कितनी बड़ी कृपा है कि धर्मग्रन्थों के गुह्यतम् रहस्य आपको ही विदित हैं।

पैगाम को पहुंचावते, ए क्या करे तुम।

जो कदी भेष बदले, तो डर नाहीं हम।।१०।।

औरंगज़ेब को संदेश देने पर भला ये मुसलमान आपका क्या कर लेंगे? यदि हमें अपनी हिन्दू वेश –भूषा को छोड़ना भी पड़े, तो भी हमें उससे डरना नहीं चाहिए।

जो कदी मार डारहीं, तो हमें मरनें का नहीं डर।

हम जागें अपने धाम में, हमको नहीं फिकर।।११।।

यदि कदाचित मुसलमान हमें मार डालें, तो हमें मरने से भी नहीं डरना चाहिए। हम तो अपने मूल घर में अपनी परात्म में जाग्रत हो जायेंगे। हमें किसी भी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

ए बात सब दृढ़ करो, दिल के बीच विचार।

जैसा जिने उकले, सो तैसा कहो करार।।१२।।

हे साथ जी! आप अपने दिल में इस बात का विचार कीजिए और मेरी इन बातों को अपने दिल में दृढ़तापूर्वक धारण कीजिए। जिसके हृदय में जो भी बात हो, वह शान्तिपूर्वक उसे अवश्य कहे।

कोई कहेगा हमको, पूछी नही मसलत।

तिस वास्ते मैं कहत हों, तुम जवाब करो इत।।१३।।

जिससे कोई यह न कहे कि हमारी तो कोई सलाह ही नहीं ली गई। इसलिए मैं आपसे यह बात कह रहा हूँ कि आप अपने मन की बात कहिए और उसका उत्तर लीजिए।

ए तो राज के हुकमें, बैठे हैं आपन।

ए तो निश्चे एहज है, हक बुरा न करे मोमिन।।१४।।

मूल स्वरूप श्री राज जी के आदेश से ही हम लोग इस जागनी के कार्य में लगे हैं। यह बात तो निश्चित है कि धाम धनी कभी भी ब्रह्मसृष्टियों का बुरा नहीं कर सकते।

दूसरे अपना अंकूर, ए जो है सकुमार से।

सो जोरा क्यों ए न करे, थे एकठे वतन में।।१५।।

दूसरी बात यह है कि औरंगज़ेब के अन्दर सकुमार की आत्मा है। हम सभी एक ही परमधाम के रहने वाले हैं। इसलिए वह किसी भी स्थिति में हमारे साथ अत्याचार नहीं कर सकता।

तिस वास्ते पैगाम पहुंचावना, एही किया परियान।
सबों बात आपस में, एही लिया दिल मान।।१६।।

इसलिए मेरा यही निर्णय है कि प्रत्येक स्थिति में औरंगज़ेब को कियामत का सन्देश देना ही है। श्रीजी की इस बात को सभी ने एकमत से स्वीकार कर लिया।

भावार्थ– इस घटनाक्रम से एक विशेष शिक्षा मिलती है कि किसी बड़े काम में जनभावना का सम्मान होना चाहिए एवं सबकी राय ली जानी चाहिए। पुनः सत्य के अनुकूल ही वास्तविक निर्णय लिया जाना चाहिए। शक्तिशाली से शक्तिशाली व्यक्ति को भी अपनी विचारधारा जबरन किसी पर थोपने का प्रयास नहीं करना चाहिए। स्वयं अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी ने विचार–विमर्श के द्वारा सबको कार्य करने की शिक्षा दी है। यह घटना हमें यही मार्ग दर्शाती है।

महामत कहें ए मोमिनों, ए बीतक कही हम तुम।

आगे जो मजकूर हुआ, सो ऐ बतावें हम।।१७।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! दिल्ली में बैठक के द्वारा निर्णय लेने का जो घटनाक्रम हुआ, मैंने उसे आपसे कहा। आगे जो बात हुई, उसे मैं आपसे बताने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।४१।। चौपाई ।।२०४८।।

रूक्का प्रसंग

यों करते संझा समे, उठ आये अपने घर।

फेर तहाँ रात को मिलके, बैठे मेहेजद पगथी पर।।१।।

इस प्रकार सन्ध्या समय तक सब सुन्दरसाथ अपने निवास पर वापस आ गये। फिर रात को कुछ सुन्दरसाथ जामा मस्जिद की सीढ़ियों पर जाकर बैठ गए।

तहाँ जाए के सनंधे, गावत हैं कलाम।

जोस भरे न देखहीं, दुस्मन खलक जो आम।।२।।

और वहाँ सनद (सनंध) वाणी का गायन करने लगे। वे श्री राज जी के प्रेम के जोश से इतने अधिक भरे हुए थे कि उन्हें दिखाई ही नहीं पड़ रहा था कि नमाज पढ़ने के लिए आये हुए जो जीव सृष्टि के लोग हैं, वे हमारे प्रति

शत्रुता की भावना रखते हैं।

नित ही उत जाए के, गावत हैं बानी।

सक दिल में न आवहीं, करें सब अपनी मानी।।३।।

वे सुन्दरसाथ प्रतिदिन ही जामा मस्जिद में जाकर सनद वाणी का गायन करने लगे। उनके दिल में नाम मात्र का भी संशय नहीं है। सभी अपनी इच्छानुसार वहाँ विचरण करते हैं।

जोस धनी सिर ऊपर, नजर नहीं संसार।

निसंक चरचा करत हैं, परवाह नहीं लगार।।४।।

उनके ऊपर धनी का जोश है, इसलिये उन्हें संसार दिखाई ही नहीं देता। वे पूर्णतया निर्भय होकर सनद वाणी के ऊपर चर्चा करते हैं। मुगल सल्तनत की उन्हें

जरा भी परवाह नहीं है।

नन्दलाल घड़यालची, ल्याया कबीले समेत ईमान।

खिजमत में ठाढ़ा रहे, रहती थी पहिचान।।५।।

नन्दलाल जी जामा मस्जिद में घड़ियाल (घण्टा) बजाने का कार्य करते थे। उन्होंने अपने पूरे परिवार सहित तारतम ज्ञान ग्रहण किया। उन्हें श्रीजी के स्वरूप की पहचान हो गई थी, इसलिए वे हमेशा श्रीजी की सेवा में तत्पर रहते थे।

और राजा राम जो, और बेटा सिवराम।

दरसन को आवें नित, करें चरचा में आराम।।६।।

राजा राम जी अपने बेटे शिवराम के साथ प्रतिदिन श्री प्राणनाथ जी के दर्शन करने के लिए आया करते थे।

इनको धाम धनी की चर्चा में बहुत आनन्द आता था।

मिल भाइयों मसलत करी, रूक्का लिख सुनावें कान।
घड़यालची ले जायेंगे, चोहोड़े दरवाजे गुसलखान।।७।।

दोनों भाइयों ने आपस में विचार किया कि रूक्का लिखकर हम औरंगज़ेब तक सन्देश पहुँचा सकते हैं। रात्रि को घण्टा बजाने की जिसकी सेवा होगी, वही गुसलखाने (स्नान गृह) के दरवाजे पर रूक्का चिपका देगा।

तिन रूक्के में लिखा, जो कोई मुसलमान।
तिनको खबर करत हों, तुम ल्याइयो ईमान।।८।।

उस रूक्के में यह लिखा था कि जो कोई भी सच्चा मुसलमान हो, उनको यह सूचना दी जा रही है कि इस

रूक्के में लिखे हुये कथनों पर विश्वास लाये।

रूह अल्ला मिसल गाजियों, आये अरस से उतर।
रसूल इनके सामिल, आये अपने वायदे पर।।९।।

श्यामा जी परमधाम की आत्माओं के साथ इस खेल में आयी हैं। उनके साथ मुहम्मद साहब (अक्षर की आत्मा) भी अपने वायदे के अनुसार आए।

और असराफील आइया, जोस जबराईल आये संग।
सो उतरे अरस अजीम से, खुद खसम के अंग।।१०।।

जाग्रत बुद्धि (इस्राफील) और जोश (जिबरील) भी साथ में आये हैं। ये धनी के अंग हैं और परमधाम से आए हैं।

भावार्थ– जिबरील और इस्राफील वस्तुतः अक्षर के फरिश्ते हैं। परमधाम की वहदत में अक्षर और अक्षरातीत का एक ही स्वरूप है, इसलिए अक्षर के अंग होते हुए भी इन्हें अक्षरातीत का अंग कहा गया है। तफ्सीर–ए–हुसैनी में यह बात दर्शायी गयी है कि परमधाम से पाँच नहरें अवतरित हुईं। उसी तथ्य को दर्शाने के लिए परमधाम से यहाँ इस्राफील और जिबरील के आने की बात कही गयी है, अन्यथा जिबरील तो सत स्वरूप से आगे जा ही नहीं सकता।

सो जबराईल जबरूत से, आगे लाहूत में न जाए।
नूर तजल्ला की तजल्ली, पर जलावत ताए।।

खुलासा २/५४

सुन सावचेत होइयो, जिन करो गफलत।

जो कौल तुम सों किया था, सो आया फरदा रोज कयामत।।११।।

इस रूक्के को पढ़कर आप सभी सावधान हो जाइये, गफलत (भूल) में न पड़े रहना। जिन मुहम्मद (सल्ल.) ने फरदा रोज कियामत (ग्यारहवीं सदी) के समय स्वयं आने का वायदा किया था, अब वे आ चुके हैं।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाइयों में जिन शक्तियों का वर्णन किया गया है, वे सभी श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान हैं, किन्तु रूक्के में केवल सांकेतिक रूप में इमाम महदी (श्री प्राणनाथ जी) की पहचान करायी गयी है। जब परब्रह्म की पाँचों शक्तियाँ इस संसार में आयी हैं, तो किसी न किसी के धाम हृदय में अवश्य विराजमान होंगी। जिस धाम हृदय में विराजमान होंगी, वही आखरूल इमाम मुहम्मद महदी होगा।

बिन सुने इन रूक्के के, जो बैठे इन दरबार।

तिनको लानत खुदाए की, पहुंचे न परवरदिगार।।१२।।

इस रूक्के को पढ़े बिना जो अल्लाह के इस दरबार (मस्जिद) में नमाज पढ़ने जाएगा, उसे खुदा की लानत (फटकार) होगी। निश्चय ही वह अल्लाह तआला को प्राप्त नहीं कर सकेगा।

हम अपने सिर का, उतारत हैं फरज।

सो हमको ढूंढ लीजियो, जाको होए गरज।।१३।।

अल्लाह तआला ने हमारे सिर पर आपको पैगाम देने की जो जिम्मेदारी सौंपी थी, अपना फर्ज समझते हुए मैं उसे पूरा कर रहा हूँ। जिसे मुझसे मिलने की चाहत हो, वह मुझे खोज लेना।

यह रूक्का लिख के, दिया हाथ नन्द लाल।

गोंद लगाए रात को चोहोड़ियो, होए के दिल खुसाल।।१४।।

श्रीजी ने यह रूक्का लिखकर नन्दलाल जी को दिया और कहा कि रूक्के में गोंद लगाकर प्रसन्नतापूर्वक रात को गुसलखाने पर चिपका देना।

तब घड़यालची ने, सिर चढ़ाया हुकम।

रात को रूक्का चोहोड़िया, कछु न खाया गम।।१५।।

नन्दलाल जी घड़यालची ने श्री प्राणनाथ जी के उस आदेश को शिरोधार्य किया और बिना चिन्ता किये हुए रात को रूक्का चिपका दिया।

जब हो गई फजर, हुआ रूक्का जाहिर।

रूक्का पढ़ के पैठहीं, जो आवते थे बाहिर।।१६।।

जब प्रातःकाल नमाज़ पढ़ने का समय हुआ, तब सब ने उस रूक्के को देखा। अब जो भी बाहर से नमाज़ पढ़ने के लिए आता था, वह रूक्का पढ़कर ही नमाज़ पढ़ सकता था, क्योंकि रूक्के में अल्लाह तआला का वास्ता देकर उसे पढ़ना अनिवार्य कर दिया था।

यों करते पढ़ते पढ़ते, दिन हुआ पहर एक।

बांचत बांचत रूक्के को, कै पढ़ पढ़ गये अनेक।।१७।।

इस प्रकार रूक्के को पढ़ते-पढ़ते प्रातःकाल के नौ बज गये। बहुत से लोग रूक्के को पढ़ने आये और पढ़कर चले गए।

भावार्थ- रूक्के में यह लिख दिया गया था कि जो

इसको पढ़े बिना नमाज पढ़ेगा, उसकी वह नमाज अल्लाह की तरफ से कबूल नहीं की जायेगी और उसे अल्लाह की फटकार लगेगी। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक नमाजी को रूक्का पढ़ना अनिवार्य हो गया। इस प्रकार सुबह ५ बजे से प्रातः ९ बजे तक रूक्का पढ़ने वालों का तांता लगा रहा।

सोर भया दरबार में, भई खबर सुलतान।
मंगाए लिया रूक्के को, तब भई पहिचान।।१८।।

औरंगज़ेब बादशाह के दरबार में इस बात का शोर मच गया कि किसी ने जामा मस्जिद के गुसलखाने पर रूक्का चिपका दिया है। बादशाह ने रूक्के को सावधानीपूर्वक मँगवा लिया और इसे पढ़ते ही उसे इमाम महदी के जाहिर होने का अन्देशा हो गया।

भावार्थ– औरंगज़ेब कुरआन का मर्मज्ञ विद्वान तो था ही, उसने शेख अहमद के पुत्र शेख़ एक मासूम मोहम्मद सरहिन्दी बैअत से बैत भी ले रखी थी। इसलिए वह मन ही मन इमाम महदी साहिबुज्ज़माँ के आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था। रूक्के को पढ़ते ही उसे सारी बात समझ में आ गयी।

परब्रह्म की कृपा से, एक रात्रि जब औरंगज़ेब कुरआन लिख रहा था, तो २८वें पारे की एक आयत का गुह्य रहस्य उसे विदित हो गया था कि ग्यारहवीं सदी में इमाम महदी को आना है। इस चौपाई के चौथे चरण का यही आशय है।

खिजमत सेख सलेमान की, रूक्का पहुंचावत जब।

गुस्सा किया सुलतान ने, सलेमान पर तब।।१९।।

शेख सुलेमान का कार्य बादशाह तक सबका निवेदन पहुँचाना था, किन्तु जब सुल्तान ने देखा कि यह रूक्का जामा मस्जिद के गुसलखाने से आया है तो शेख सुलेमान पर बहुत गुस्सा हो गया।

क्यों ए रूक्का आइया, तें न करी खबर।
इन रूक्के से मालूम भई, ए फरियाद तुझ ऊपर।।२०।।

वह क्रोध में शेख सुलेमान से कहने लगा कि यह रूक्का जामा मस्जिद के गुसलखाने से क्यों आया है? तुमने मुझे इसकी सूचना क्यों नहीं दी? इस रूक्के को देखकर ऐसा लगता है कि रूक्का चिपकाने वालों ने पहले तुमसे लम्बे समय तक फरियाद की थी।

पहिले तेरे घर में, भटक फिरे हैं जब।

तें कानों जब न सुनी, उन रूक्का चोहोड़ा तब।।२१।।

पहले बहुत समय तक वे तुम्हारे घर में भटकते रहे होंगे। जब तुमने उनकी बातों को सुना ही नहीं, तब उन्हें मजबूर होकर रूक्का चिपकाना पड़ा होगा।

तोकों मैं जो रख्या था, इसी काम ऊपर।

जिन इतमाम को करे, सबकी दे खबर।।२२।।

मैंने तो तुम्हें इसी कार्य के लिए रखा था कि तुम सबकी सूचना मुझे देने की व्यवस्था किया करो। बादशाह ने कठोर शब्दों में कहा।

दूर करों खिजमत से, है नही कामिल।

दोस दे मन सों काढ़िया, इन में नही अकल।।२३।।

यह बुद्धिविहीन है और इसमें खिदमत (सेवा) की योग्यता नहीं है। इस प्रकार उसके प्रति दोष भावना रखकर, उसको राजकीय खिदमत (सेवा) से निकाल दिया।

एह खिजमत इन से, तबहीं लई छुड़ाए।

बेटा अब्दुल्ला सेख निजाम का,दई खिजमत ताए।।२४।।

इस प्रकार बादशाह औरंगज़ेब ने शेख सुलेमान को दरबार की सेवा से हटा दिया और उसकी जगह पर शेख निज़ाम के बेटे अब्दुल्ला को वह सेवा दे दी।

ढंढोरा ए फिराइया, होय फरियाद जो कोए।

मैं जाऊं जुम्मे निमाज को, आए हाजिर होवे सोए।।२५।।

अब्दुल्ला ने दिल्ली शहर में ढिंढोरा फिरवा दिया कि जो भी फरियादी हो, वह शुक्रवार (जुम्मे) की नमाज के दिन, जब बादशाह जामा मस्जिद आयेंगे, तो वह आकर स्वयं उनसे सीधे मिल सकता है।

भावार्थ– बादशाह ने तो यह आदेश दिया था कि शहर में यह सूचना देनी है कि रूक्का चिपकाने वाला व्यक्ति जुम्मे की नमाज के दिन सीधे मुझसे मिल सकता है, किन्तु शाही दरबार के पाँचों अधिकारियों (शेख निज़ाम, शेख इस्लाम, आकिल खान, रिज़वी खान, और सिद्दीक फौलाद) की सहमति से अब्दुल्ला ने सूचना को गलत तरीके से प्रस्तुत किया, अर्थात् ढिंढोरे में रूक्का चिपकाने वाले का कहीं ज़िक्र ही नहीं था।

जब निकला जुमे निमाज को, खड़ा अब्दुल्ला आए।

रूक्के जो फरियाद के, सब के लेता जाए।।२६।।

जब बादशाह जुम्मे (शुक्रवार) के दिन नमाज पढ़ने के लिए जामा मस्जिद गया, तो अब्दुल्ला खड़ा होकर सभी फरियादियों के रूक्के लेते जा रहा था।

आप खड़ा देखत, भये फरियादु अनेक।

तामें लाल निरमलदास, ले गये अपना रूक्का एक।।२७।।

शेख अब्दुल्ला से थोड़ी दूरी पर खड़े होकर बादशाह सारा दृश्य देख रहा था। वह मन ही मन सोच रहा था कि मैंने तो केवल गुसलखाने के ऊपर रूक्का चिपकाने वाले को बुलाया था, यहाँ फरियादियों की इतनी भीड़ क्यों दिखायी दे रही है? वह इसी विषय पर सोचता रहा, लेकिन अपने अधिकारियों की जालसाजी को नहीं समझ

पाया कि सूचना ही गलत दी गयी थी। इन फरियादियों में लालदास जी और निर्मलदास जी भी थे, और वे भी अपना एक रूक्का लेकर आए थे।

रूक्का लेते बखत, अपना लिया इन।

पढ़ रूक्का फाड़ डारिया, ऐ ना सुनों कानन।।२८।।

जब अब्दुल्ला सबका रूक्का ले रहा था, उस समय उसने लालदास जी के हाथ से भी रूक्का लिया, किन्तु उस रूक्के को पढ़कर फाड़ डाला। ऐसे रूक्के को तो कानों से सुनना ही नहीं है।

एह रूक्का फार के, ले डारा बीच जेब।

एह तो बात मोमिन की, करनी हैं मोहे गैब।।२९।।

फाड़े हुए रूक्के को उसने अपनी जेब में रख लिया। वह

अपने मन में यही सोच रहा था कि इस रूक्के में मोमिनों की बातें हैं, जिसे मुझे बादशाह से छिपा देना है।

बहुत पुकारे मोमिन, क्योंए न सुने कान।
एह हमारे वास्ते, खड़ा है सुलतान।।३०।।

लालदास जी और निर्मल दास जी ने बहुत पुकारा कि बादशाह हमसे मिलने के लिए ही खड़ा है। लेकिन अब्दुल्ला तो ऐसे व्यवहार कर रहा था कि जैसे उसे कुछ सुनायी ही नहीं पड़ रहा हो।

रूक्का चोहोड़न वाले हम हैं, ऊपर गुसलखान।
गुस्सा हम वास्ते किया, ऊपर सलेमान।।३१।।

लालदास जी ने तीव्र आवाज में कहना शुरू किया कि गुसलखाने के ऊपर रूक्का हमने ही चिपकाया था और

हमारे लिये ही बादशाह ने शेख सुलेमान के ऊपर गुस्सा किया था और उसे नौकरी से निकाला था।

क्यों तुम ऐसा करत हो, डरते नही खुदाए।
दिल मोहोर आँख ऊपर, क्यों अकल आवे ताए।।३२।।

तुम इस तरह से अन्याय क्यों कर रहे हो? क्या तुम्हें खुदा का जरा भी डर नहीं है? किन्तु जिनके दिल और आँखों के ऊपर मुहर लगी हो, भला उन्हें बुद्धि कैसे आ सकती है?

भावार्थ– कुरआन के अनुसार जीव सृष्टि के दिल में अजाजील एवं आँखों में अबलीश का वास है, इसलिये जीव सत्य की राह नहीं अपना पाता। इसे दिल और आँखों पर मुहर लगना कहते हैं।

एक दोए तीर लगे, चले घोड़े पीछे घसेट।

तब विचार किया मोमिनों, ए बात न सुने नेठ।।३३।।

अचानक ही औरंगज़ेब बादशाह अपने घोड़े के साथ चल पड़ा। लालदास जी ने एक–दो फर्लांग तक उसके पीछे दौड़ भी लगायी, लेकिन भला वे घोड़े का मुकाबला कहाँ से कर पाते? तब लालदास जी और निर्मल दास जी ने विचार किया कि इस अब्दुल्ला के कारण ही हम बादशाह से नहीं मिल पाये हैं और यह ढीठ अब्दुल्ला हमारी बात सुनने वाला नहीं है।

एह खबर श्री राज को, लिख के भेजी उत।

हम पैगाम पहुंचावनें, कमी करी ना तित।।३४।।

लालदास जी ने श्री प्राणनाथ जी को पत्र लिखकर यह सूचित किया कि हे धाम धनी! औरंगज़ेब को सन्देश देने

में हमने किसी चीज की कमी नहीं की थी।

पर हम इत क्या करें, पोहोरा बड़ा दज्जाल।
बात हमारी ना सुनें, सब परे बस दज्जाल के हाल।।३५।।

लेकिन हम क्या करें? कट्टरपन्थी लोगों के रूप में दज्जाल की शक्ति बहुत अधिक है। अब्दुल्ला जैसे लोग हमारी बात को सुनना ही नहीं चाहते। ऐसा लगता है कि सभी दज्जाल के वशीभूत हैं।

जिन भांत हम गए, सब लिख भेजी बीतक।
पर हम इनको न छोड़हीं, तुम सिर पर खड़े हो हक।।३६।।

लालदास जी ने सारे घटनाक्रम को पत्र के माध्यम से लिखकर श्रीजी के पास भेजा कि हम किस प्रकार जामा मस्जिद गये थे और वहाँ क्या-क्या घटित हुआ?

लेकिन अब हम इन कट्टरपन्थी मुसलमानों को नहीं छोड़ेंगे। आप स्वयं अक्षरातीत जब हमारे सिर पर हैं, तब हमें किस बात की चिन्ता है?

एक लड़ाई हमारी, अब देखियो श्री राज।

हुकम तुम्हारे से करें, पैगाम का हम काज।।३७।।

हे धाम धनी! अब शरातोरा से होने वाले हमारे युद्ध को आप देखिये। आपके आदेश से हम औरंगज़ेब को सन्देश देने का कार्य अवश्य करेंगे।

अब हम लड़ने जात हैं, तुम रहियो हुसियार।

तुम सिर पर हमारे खड़े, समरथ परवरदिगार।।३८।।

अब हम धर्मयुद्ध के लिये जा रहे हैं। आप अपने निवास में सावधानीपूर्वक रहियेगा। आप सर्वसमर्थ अक्षरातीत

हमारे शिर पर विराजमान हैं, अर्थात् हम पल–पल आपकी कृपा की छत्रछाया में हैं।

ए क्या करे हमको, हम ग्रहे तुम्हारे कदम।
तो इनको हम मारत हैं, कोई हटें न पीछे दम।।३९।।

हमने आपके चरणों को अपने हृदय में बसा लिया है, तो ये कट्टरपन्थी मुस्लिम हमारा क्या कर लेंगे? अपने ज्ञान की तलवार से हम इन्हें मार डालेंगे। हममें से कोई भी, इनसे होने वाले धर्मयुद्ध में, पल भर के लिए भी पीछे नहीं हटेगा।

एह पाती लिखके, दई भाई कान जी के साथ।
कान जी जाए के पहुंचिया, दई पाती हाथ।।४०।।

लालदास जी ने इस तरह का पत्र लिखकर कान्हजी

भाई को दिया। कान्हजी भाई ने श्रीजी के पास पहुँचकर, वह पत्र उनके कर कमलों में दे दिया।

राज पाती लिख के, भेजा तुरत जवाब।
तुम आकले न होइयो, मैं आवत हों सिताब।।४१।।

श्री प्राणनाथ जी ने उस पत्र को पढ़कर तुरन्त कान्ह जी भाई से उसका उत्तर भिजवाया कि तुम अभी व्याकुल न हो, मैं शीघ्र ही आ रहा हूँ।

मोसों मिलाप करके, तुम कीजो एह काम।
फेर बैठ मसलत करें, एक जागा इन ठाम।।४२।।

मुझसे मिलने के पश्चात् ही तुम्हें औरंगज़ेब को सन्देश देने का कार्य करना है। इसके लिये एकान्त में बैठकर हम पुनः विचार करेंगे।

पाती पहुंची आए के, मिल बांची सब साथ।

राह देखें श्री राज की, यहाँ लेनी दज्जाल सों बाथ।।४३।।

कान्हजी भाई श्रीजी का पत्र लेकर आये। सब सुन्दरसाथ ने मिलकर उसे पढ़ा तथा धाम धनी के आने की बाट देखने लगे कि उनके आने के पश्चात् दज्जाल के विरुद्ध युद्ध शुरू हो जायेगा।

यों करते दूसरे दिन, आए पहुँचे श्री राज।

चाँदनी चौक की हवेली, छत्री के घर इन काज।।४४।।

इस प्रकार श्रीजी दूसरे दिन चाँदनी चौक आ गए। वहाँ वे क्षत्रिय की हवेली में ठहर गए।

रहत लालबाई इनमें, तहां आए कियो मिलाप।
साथ बैठ मसलत करी, तब जवाब किए आप।।४५।।

लालबाई चाँदनी चौक में ही रहा करती थीं। वे यहाँ आकर श्रीजी से मिलीं। श्री प्राणनाथ जी ने सुन्दरसाथ के साथ बैठकर विचार-विमर्श किया और उनकी शंकाओं का समाधान करने के पश्चात् उनसे पूछा कि-

अब तुम्हें क्या करना, पहुंचावने पैगाम।
साथियों जवाब दिया जोस में, हम टूक टूक होवें इन काम।।४६।।

औरंगजेब को संदेश देने के लिये अब तुम्हें क्या करना है? सब सुन्दरसाथ ने बहुत जोश में उत्तर दिया कि इस कार्य के लिये तो हम अपना सब कुछ न्योछावर करने के लिये तैयार हैं।

कोई बात की फिकर, हमारे मन में नाहें।

जो डरे इन बात से, एक तरफ हो जाए।।४७।।

अब हमारे मन में किसी भी बात की चिन्ता नहीं है। जिसको इस काम से डर लगता है, वह एक तरफ अलग हो जाये।

हमको एक हुकम, तुम्हारा दरकार।

और बात न जानहीं, बिना तुम परवरदिगार।।४८।।

हे धाम धनी! हमको आपके केवल एक आदेश की ही आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त हम कोई और दूसरी बात नहीं जानते।

हम तो अपने वजूद को करें, कुरबान ऊपर इसलाम।

हमको और न सूझहीं, बिना करे एह काम।।४९।।

हम निजानन्द की राह में अपने शरीर को पूर्ण रूप से न्योछावर करने के लिये तैयार हैं। औरंगज़ेब को सन्देश देने के इस काम के अतिरिक्त हमें और कुछ भी नहीं दिखायी दे रहा है।

जोस इनों का देखके, श्री राज भए खुसाल।

तब दिलासा दई बड़ी, देख मोमिनों हाल।।५०।।

इन ब्रह्ममुनियों का जोश देखकर धाम धनी बहुत ही आनन्दित हुये। सुन्दरसाथ की इस समर्पणमयी अवस्था को देखकर धाम धनी ने उन्हें आशीर्वचन रूप में बहुत अधिक सांत्वना दी।

भावार्थ– धाम धनी ने इन प्रेम भरे शब्दों से उनके

मनोबल को और अधिक बढ़ाया कि तुम अक्षरातीत के अंग रूप हो। जब अक्षरातीत तुमसे पल–पल प्रेम करते हैं, तो माया की बड़ी से बड़ी शक्ति तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं कर सकती।

इनों को देखे आसिक, ऊपर दीन इसलाम।
एह बकसीस हक की, नाहीं और का काम।।५१।।

धाम धनी ने इन्हें निजानन्द की राह पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाले सच्चे आशिक के रूप में देखा। इस तरह से धर्म की राह पर न्यौछावर होना धाम धनी की कृपा से ही सम्भव है। धनी की मेहर के बिना अन्य कोई भी धर्म पर अपना सर्वस्व समर्पित नहीं करता।

बातें करें जोस में, एक पे एक सरस।

हुए मगन दीन में, करते हैं हंस हंस।।५२।।

सब सुन्दरसाथ समर्पण की भावना से इतना अधिक जोश में बातें कर रहे थे कि कोई भी किसी से कम नहीं था, बल्कि सभी एक–दूसरे से बढ़कर थे। धर्म के कार्य में वे पूर्णतया मग्न थे और खुलकर हँसते हुये बातें कर रहे थे।

रसोई कर श्री राज को, अरूगाया इत।

स्याम बाई राम राए, कदमों लागे इन बखत।।५३।।

सुन्दरसाथ ने अपने हाथों से भोजन बनाकर श्रीजी को प्रेमपूर्वक भोजन कराया। लालदास जी की पुत्री श्यामबाई तथा उनके पति रामराय ने धाम धनी के चरणों में उस समय आकर प्रणाम किया।

कोई ल्यावत मिठाई को, कोई और और साज।

सब खुसाल होए के, अरूगावत हैं श्री राज।।५४।।

कुछ सुन्दरसाथ भाव विह्वल होकर मिठाई ला रहे थे, तो कुछ और चीज ला रहे थे। इस प्रकार सभी सुन्दरसाथ अति आनन्द मग्न होकर धाम धनी को भोजन करा रहे थे।

इत खुसाल होए के, रजा दई श्री राज।

जाए पधारो एकान्त, अब देखो हमारा काज।।५५।।

सब सुन्दरसाथ ने अति प्रसन्न मन से श्री प्राणनाथ जी से कहा कि हे धाम धनी! अब आप किसी एकान्त स्थान में चले जाइए और यह देखिए कि हम आपकी छत्रछाया में किस प्रकार से अपना काम करते हैं?

महामत कहें ऐ मोमिनों, सुनियों एह बीतक।

अब आगे तुमको कहों, जो हुआ हुकम हक।।५६।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! अब तक के इस घटनाक्रम का वर्णन आपने सुना। अब धाम धनी के हुक्म से, इसके बाद जो कुछ भी घटित हुआ, उसे मैं आपसे कहूँगा।

प्रकरण ।।४२।। चौपाई ।।२१०४।।

औरंगज़ेब से भेंट

साथ सबे मिल बैठ के, लगे करने परियान।

अब हमको क्या करना, ए क्यों ल्यावे ईमान।।१।।

सब सुन्दरसाथ मिलकर औरंगज़ेब के पास सन्देश भिजवाने के सम्बन्ध में विचार–विमर्श करने लगे कि अब हमें क्या करना चाहिए? हम ऐसा कौन सा कार्य करें, जिससे उसके मन में कियामत एवं इमाम मुहम्मद महदी के प्रकट होने के सम्बन्ध में विश्वास आ जाये?

बिना आपा दिए, और ना लिया जाए।

एही दिल में विचारिया, और नही उपाए।।२।।

सन्देश देने के इस महान कार्य में स्वयं को पूर्ण समर्पित किये बिना औरंगजेब के दिल में विश्वास नहीं पैदा किया

जा सकता। सब सुन्दरसाथ ने अपने मन में विचार किया कि इसके अतिरिक्त और कोई भी मार्ग नहीं है।

भावार्थ– "अपना आपा देने" का तात्पर्य है– अपने अस्तित्व को मिटा देना अर्थात् धनी के इस कार्य में इस प्रकार समर्पित हो जाना कि अपने प्राणों की जरा भी चिन्ता न रहे। यदि समर्पण की नींव कच्ची है तो उस पर सफलता का भव्य भवन खड़ा नहीं हो सकता।

कायरों के दिल में, बड़ा जो पैठा डर।
दिल में मुनाफकी थी, बनाए बातें करें ऊपर।।३।।

कुछ सुन्दरसाथ ऐसे भी थे जिनके मन में इस धर्मयुद्ध के लिये वीरता के कोई भाव नहीं थे, बल्कि उनके अन्दर यह भय बैठा हुआ था कि यदि हम सन्देश देने जायेंगे तो कहीं मुसलमान हमें मार न डालें। वे ऊपरी

मन से तो इस प्रकार की बातें कर रहे थे कि जैसे वे भी चलने के लिये पूर्ण रूप से तैयार हैं, किन्तु आन्तरिक रूप से यही चाहते थे कि उन्हें किसी भी स्थिति में न जाना पड़े अन्यथा उनके प्राण संकट में पड़ सकते हैं।

एक आसिक इन भांत के, आगे धरे कदम।
पीछे खड़े रहने वाले, सौंपी अपनी आतम।।४।।

श्रीजी के प्रति प्रेम में पूर्णतया समर्पित ऐसे भी सुन्दरसाथ थे जो इस कार्य में हमेशा अपने कदम आगे रख रहे थे, जैसे शेख बदल और लालदास आदि। इनका अनुसरण करने वाले सुन्दरसाथ ने भी अपनी आत्मा श्रीजी के चरणों में सौंप रखी थी।

एक आसिक इन भांत के, तन मन दिया वार।

कुरबानी एह सुनते, ऊपर परवरदिगार।।५।।

अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के प्रेम में डूबे हुए ऐसे भी सुन्दरसाथ थे, जो उनके आदेश मात्र पर अपने आत्म-बलिदान के लिये पूर्णतया तैयार बैठे थे। उन्होंने अपना तन-मन अपने प्राणेश्वर को सौंप दिया था।

एक लखमन इनमें, और सेख बदल।

सिताब करें पहुंचावने, इनको न परे कल।।६।।

धनी के आदेश से इस सन्देश देने के कार्य में सबसे आगे थे श्री लालदास जी और दूसरे थे शेखबदल। वे सन्देश देने के लिये जल्दी मचा रहे थे। इन्हें इस काम के बिना शान्ति ही नहीं आ रही थी।

और मुल्ला काइम, चाकर पैसों का।

इनको उपली पहिचान, ए था नानिया फिरका।।७।।

समर्पण की इस राह पर चलने वाले कायम मुल्ला भी थे, जिनको पैसे देकर हिन्दुस्तानी भाषा में अनुवाद करने के लिये रखा गया था। ये नानिया फिरके से जुड़े थे और इनको श्री प्राणनाथ जी की सिर्फ बाहरी पहचान ही हो पायी थी।

भावार्थ– नानिया फिरका सूफी मत से जुड़ा हुआ है। यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि सूफी मत में तफ्सीर–ए–हुसैनी का अत्यधिक महत्व है।

और भीम भाई रहें, सूरत के महाजर।

छोड़ कबीला संग रहे, थे फिदा इसलाम पर।।८।।

भीम भाई सूरत के रहने वाले थे। ये अपना सम्पूर्ण

परिवार छोड़कर धर्म के कार्य में समर्पित हो गये थे। निजानन्द की राह में इनका तन–मन समर्पित था।

भाई सोम जी खंभात से, आए मिले थे इत।
घर इनके खंभात में, है कुरबान ऊपर बखत।।९।।

सोमजी भाई खम्भात के रहने वाले थे। ये दिल्ली में आकर श्रीजी से मिले थे। यद्यपि इनका घर–परिवार खम्भात में था, किन्तु समय की माँग पर धर्म पर बलिदान होने के लिये तैयार हो गये थे।

नागजी सूरत से, चले छोड़ कबीला खास।
इनको धाम धनी बिना, और न थी दिल आस।।१०।।

सूरत से नागजी भाई अपना घर–परिवार छोड़कर श्रीजी के साथ चल पड़े। इनके दिल में धाम धनी के

अतिरिक्त और किसी से आशा ही नहीं थी।

खिमाई बुन्देलखण्ड से, आया ले ईमान।

खिजमत करी तन धन सों, पूरी भई पहिचान।।११।।

खिमाई भाई बुन्देलखण्ड के रहने वाले थे। श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप पर इन्हें पूर्ण विश्वास था। इन्हें धाम धनी की पूरी पहचान हो गयी थी और इन्होंने अपना तन, मन, धन सेवा में समर्पित कर दिया।

दयाराम दिल्ली मिनें, था ईमान लिए जोस।

सेवा खिजमत में रहे, कबहूं ना थी फरामोस।।१२।।

दयाराम जी दिल्ली के रहने वाले थे। इनके मन में श्रीजी के प्रति अटूट विश्वास था और सन्देश देने के लिये अपार जोश। ये धनी की सेवा में हमेशा समर्पित रहते थे। माया

की नींद इन्हें कभी सता नहीं पायी।

चिन्तामन ठठे मिने, ल्याए थे ईमान।
खिजमत करी तन धन सों, पूरी भई पहिचान।।१३।।

कबीर पन्थ के आचार्य चिन्तामणि जी ठट्ठानगर के रहने वाले थे। वे तारतम ज्ञान का प्रकाश पाकर श्री प्राणनाथ जी के प्रति पूर्ण विश्वास लाये। इन्हें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की पूर्ण पहचान थी। इन्होंने अपना तन, मन, धन सेवा में समर्पित कर दिया था।

चंचल बड़े ईमान सों, रहे खिजमत में हुसियार।
आस कबीला छोड़ के, मिला परवरदिगार।।१४।।

चंचल दास जी को धनी के प्रति पूर्ण विश्वास था। ये सेवा के कार्य में बहुत ही प्रवीण थे। इन्होंने अपने परिवार

की आशा छोड़कर धनी के प्रति अपना सर्वस्व समर्पण कर दिया था।

रहे दुकान अपनी, एह जो गंगा राम।
ईमान से खिजमत करे, रहें सेवा के काम।।१५।।

गंगाराम जी की दिल्ली में अपनी दुकान थी। इन्हें भी श्रीजी पर अटूट विश्वास था और उसी भाव से सेवा में तल्लीन रहा करते थे।

बनारसी उगाही करें, ताजा ल्याया ईमान।
आया ये खिजमत में, कर धनी की पहिचान।।१६।।

बनारसी दास जी सुन्दरसाथ की सेवा के लिये धन एकत्रित किया करते थे। अभी कुछ समय पहले ही इन्होंने तारतम ग्रहण किया था। श्री प्राणनाथ जी के

स्वरूप की पहचान करके वे भी सेवा में समर्पित हो गये।

और साथ बहुत है, कोई ईमान कोई मुनाफक।
बैठे ए परियान को, पहुंचावने पैगाम हक।।१७।।

और भी बहुत से सुन्दरसाथ हैं, जिनमें से कुछ के मन में धनी के प्रति अटूट विश्वास (ईमान) है और कुछ दुविधाग्रस्त हैं। धनी का सन्देश औरंगज़ेब तक पहुँचाने के लिये बारह सुन्दरसाथ पूर्ण रूप से तैयार हो गये।

आपस में मसलत करी, जाए जुमें मेहेजद।
तहाँ जाए सनंधे पढ़िए, सिफत जो महम्मद।।१८।।

सब सुन्दरसाथ ने आपस में विचार किया कि हम मुसलमान फकीरों वाली वेश-भूषा बना लें और शुक्रवार के दिन जामा मस्जिद में जाकर मुहम्मद साहिब वाली

सिफत की सनद का गायन करें।

तब पुकार आपस में पड़े, सुनेगा सुलतान।

तब हमकों बुलावेगा, तब पैगाम सुनावें कान।।१९।।

सनद वाणी का हमारा गायन सुनकर, मुसलमान लोग आपस में इसकी ऊँचे स्वर में चर्चा करने लगेंगे, जिसे औरंगज़ेब सुन लेगा और हमें बुलायेगा। तब हम उसे श्रीजी का पैगाम सुना देंगे।

यह मसलत करके, जाए खड़े मेहेजद में।

गावत सनंधे जोस में, आसिक होनें सें।।२०।।

यह विचार करके ये १२ सुन्दरसाथ जामा मस्जिद में जाकर खड़े हो गये। धनी के प्रेम में डूबे होने से इन्होंने जोश में सनद वाणी का गायन प्रारम्भ कर दिया।

इमाम जो मेहेजद का, तिनने सुनी पुकार।

उतर आया ऊपर से, सुनी सिफत परवरदिगार।।२१।।

मस्जिद के पेश इमाम ने जब सनद वाणी का मधुर गायन सुना तो वह अपने ऊपर वाले कक्ष से उतर कर नीचे आया और उसने सुन्दरसाथ के गायन में अल्लाह तआला की महिमा को सुना।

नाम सुनत इमाम का, बहुत हुआ खुसाल।

मोमिनों मुख देख के, जोस भरे लिए हाल।।२२।।

सनद वाणी के गायन में जब उसने इमाम का नाम सुना, तो वह बहुत प्रसन्न हुआ। धनी के प्रेम के जोश मे डूबे हुए इन मोमिनों के तेजस्वी मुख को जब उसने देखा–

भावार्थ– ऐसा प्रतीत होता है कि सुन्दरसाथ ने सनद

ग्रन्थ से मुहम्मद साहब की महिमा का गायन करने के पश्चात् "सनद इमाम के प्रताप की" प्रकरण का गायन किया होगा।

देखे तारा दीन के, नजर करी आसमान।

रहमत रहमत करके, हुई हक सुभान।।२३।।

तो उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि ये मोमिन दीन के तारे हैं। उसने अपनी नज़र आकाश की तरफ करते हुए अल्लाह तआला से दुआ की कि इन मोमिनों पर रहमत (कृपा) करें।

भावार्थ– "आँखों के तारे" होने की तरह "दीन के तारे" होना भी एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है– धार्मिक क्षेत्र का वह प्रिय व्यक्ति जो अपने अलौकिक व्यक्तित्व से सबका प्रेम पात्र बन जाए।

मैं जाऊं सुलतान पे, लेके अपने साथ।

बात तुम्हारी मैं कहों, ले चला पकड़ के हाथ।।२४।।

उसने सुन्दरसाथ से कहा कि मैं आप लोगों को अपने साथ लेकर सुल्तान के पास जाऊँगा और आपकी सारी बात बादशाह से कराऊँगा। यह कहकर सुन्दरसाथ का हाथ पकड़े हुये वह बादशाह के पास चल दिया।

अन्दर जाए के ये कही, आया पैगाम इमाम।

मैं ल्याया लोग तिनके, तुम आइयो एह काम।।२५।।

सुन्दरसाथ को एक जगह खड़ा कर, वह स्वयं महल के अन्दर गया और औरंगज़ेब से बोला कि इमाम महदी का पैगाम आया है। मैं उनके मोमिनों को लेकर आया हूँ। आप महल से बाहर आकर उनसे मिल लीजिये।

मोहोल में से सुनके, निकल आया सुलतान।

हुआ ठाढ़ा चबूतरे पर, हाथ आसा एक सुने कान।।२६।।

यह बात सुन कर औरंगज़ेब बादशाह अपने महल दीवान–ए–खास से निकलकर बाहर (दीवान–ए–आम) आया। वह चबूतरे पर खड़ा हो गया। उसके हाथ में एक छड़ी थी और वह मोमिनों की बातें सुनने लगा।

मोमिन तले चबूतरे, खड़े जाए निकट।

जो लिखा लोमोफूज में, औरों भई खट पट।।२७।।

सभी १२ सुन्दरसाथ चबूतरे के नीचे खड़े हो गये थे। मूल स्वरूप ने अपने दिल में जो ले लिया था, वह तो होना ही था। इन मोमिनों को देखकर सारे दरबारियों में खटपट शुरू हो गयी।

भावार्थ– खटपट होने का तात्पर्य है कि घबराहट फैल

जाना। अधिकतर दरबारी इस बात से आशंकित थे कि हमने इन मोमिनों को कई महीनों से रोक रखा था। इन्हें किसी भी तरह बादशाह से मिलने नहीं देना चाहते थे। यदि इस बात का पता धीरे-धीरे बादशाह को चल जाये तो हमारा कुछ अनिष्ट हो सकता है, इसलिये आपस में धीरे-धीरे संकेतों द्वारा बातें करने लगे। इसी को इस चौपाई के चौथे चरण में खटपट करना कहा गया है।

तब पूछा सुलतान ने, इसारत सों आए।
तब बोले इत मोमिन, कलमा जुबान चलाए।।२८।।

इसके पश्चात् बादशाह ने मोमिनों को संकेत करके आने का कारण पूछा। तब मोमिनों ने अपने मुँह से कलमा "ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदर्रसूलअल्लाह" का उच्चारण किया।

फेर इसारत करी सुलतान ने, क्या मतलब है तुम।
तब इनने जवाब दिया, दीन इसलाम के आसिक हम।।२९।।

पुनः बादशाह ने संकेत किया कि आप लोगों के आने का क्या उद्देश्य है? तब सुन्दरसाथ ने उतर दिया कि हम दीन–ए–इस्लाम के आशिक हैं।

कछु मतलब अपना कहो, कछु मांगो मुझ से।
कह्या एक बात हम मांगत, रूबरू बातें करें तुम से।।३०।।

अन्त में बादशाह को कहना ही पड़ा कि यह तो मैंने सुन ही लिया। यह बताइए कि आप किस मतलब से आए हैं और मुझसे कुछ माँगिए। सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि बादशाह! हम आपसे एक ही चीज चाहते हैं कि हम और आप आमने–सामने दीन–ए–इस्लाम के सम्बन्ध में बातें करें।

हमारी बातों मिने, आवे न कोई दरम्यान।

पूछो सुनो तुम हमसे, और न सुनावें कान।।३१।।

किन्तु हमारी और आपकी बातों में कोई भी दखलअन्दाजी न करें। आप हमारी बातें सुनिए तथा उससे सम्बन्धित कोई भी बात हमसे पूछ सकते हैं। हम अपनी बातें और किसी को नहीं सुनाना चाहते।

फेर मोमिनों से पूछिया, कछू और कहो सबब।

तुम्हें तो कह सुनाया, हमें नाहीं मुरदार का मतलब।।३२।।

पुनः बादशाह ने सुन्दरसाथ से कहा कि यह तो ठीक है, किन्तु अपने आने का कारण बताइए। सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि हमने तो आपको पहले ही बता दिया कि हमें इस नाचीज़ दुनिया की कोई भी चीज़ नहीं चाहिए।

आसा लेके चूमियां, तीन बेर सुलतान।

तब मोमिन बोले जोस में, हम चौड़ा रूक्का सुनाया कान।।३३।।

बादशाह ने अपनी छड़ी लेकर तीन बार चूमा। तब सुन्दरसाथ वीरता के जोश में कहने लगे कि जामा मस्जिद के गुसलखाने पर हमने ही रूक्का चिपकाया था।

पांच नलुए पाँचन पर, भेजे तुम खातर।

एक काजी सेख निजाम पर, और रजवी खान पर।।३४।।

आपसे मिलने के लिए हमने आपके पाँच अधिकारियों को पाँच नलुये दिए थे। एक क़ाज़ी शेख इस्लाम पर, दूसरा शेख निज़ाम, और तीसरा रिज़वी खान को भी हमने नलुआ दिया था।

चौथा सीदी पोलाद पर, ना लिया आकिल खान।

सो सब तुम्हारे वास्ते, सुनो तुम सुलतान।।३५।।

चौथा रूक्का हमने सिद्दीक फौलाद को दिया था। आकिल खान ने लेने से इन्कार कर दिया। हे बादशाह! आप हमारी बात सुनिये, आपसे मिलने के लिए ही हमने ये सब नलुये दिये थे।

इत खड़े सेख सलेमान, कांपे आगे खड़ा सुलतान।

जिन ए मेरी बात को, अब सुनावें कान।।३६।।

बादशाह के आगे खड़ा शेख सुलेमान थर-थर काँप रहा था। वह डर रहा था कि ये लोग अब कहीं मेरी शिकायत बादशाह से न कर दें।

भावार्थ- ऐसा प्रतीत होता है कि औरंगज़ेब बादशाह ने शेख सुलेमान को नौकरी से पूर्ण रूप से निकाला नहीं

था, बल्कि विभाग का केवल स्थानांतरण कर दिया था।

तब पूछा सुलतान ने, है तुम पे किताब।
तब इन यारों कह्या, हम मंगावे सिताब।।३७।।

तब बादशाह ने पूछा कि क्या आप लोगों के पास कोई किताब है? तब सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि हम अभी मँगा लेते हैं।

फेर सुलतान नें कह्या, कछु मांगत हो तुम।
कह्या मांगें दीन महम्मदी, और न चाहें हम।।३८।।

पुनः बादशाह ने कहा कि आप लोग मेरे दरबार में आये हैं, तो कुछ मांगिए। सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि हम मुहम्मद (सल्ल.) के दीन-ए-इस्लाम पर मात्र चर्चा करना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त हमें आपसे और किसी

चीज़ की ख्वाहिश नहीं है।

मोमिन बोले अपने जोस में, डर दिल भया सुलतान।
और दूर खड़े सब कांपत, सुन सखत कलाम दरम्यान।।३९।।

सुन्दरसाथ ने जोशीले स्वर में उत्तर दिया था, जिसे सुनकर बादशाह के दिल में डर बैठ गया। तेज आवाज में मोमिनों के द्वारा कहे हुए शब्दों को सुनकर दूर खड़े अन्य दरबारी काँप रहे थे।

भावार्थ– धनी के प्रेम में डूबे हुए सुन्दरसाथ को औरंगज़ेब की बादशाहत से कोई भय नहीं था। इसलिये उन्होंने औरंगज़ेब से वैसे ही तेज स्वरों में बात की, जैसे एक सामान्य व्यक्ति से की जाती है। उनकी तेज आवाज को सुनकर बादशाह डर गया कि आज तक मेरे सामने किसी की इतनी तेज आवाज में बोलने की हिम्मत नहीं

हुई। जब भरे दरबार में ये लोग ऐसे बोल रहे हैं, तो एकान्त में मेरे साथ किस तरह का व्यवहार करेंगे?

इन में दस तन एक खिलके, दो तन मुसलमान।
तब इसारत ए करी, घर पहुंचाओ पोलाद खान।।४०।।

इसी बीच बादशाह के दरबारियों ने उसके कान में यह बात कह दी कि इसमें दो व्यक्ति (शेख बदल और कायम मुल्ला) मुसलमान हैं और शेष दस हिन्दू हैं। इनमें दिल्ली के चार व्यक्ति हैं- चंचल, बनारसी, दयाराम, और गंगाराम। इनकी दिल्ली में दुकान है। इनकी जाँच होनी चाहिए कि आखिर इनका आने का क्या उद्देश्य है? तब बादशाह ने, सच्चाई की जाँच करने के लिए, सब सुन्दरसाथ को सिद्दीक फौलाद के यहाँ भिजवाने का सन्देश दे दिया।

तब मोमिन दुदले भए, आया गुरजबरदार।

तिनने कह्या कोतवाल को, सुनो एह विचार।।४१।।

यह देखकर सुन्दरसाथ सशंकित हो गये। उसी समय एक हथियारबन्द सिपाही आया। उसने कोतवाल सिद्दीक फौलाद से कहा– मेरी यह बात आप सुनिये।

तब से आज दिन लों, ऐसा सखत न बोल्या कोए।

सुलतान के मुंह पर, ऐसा मजाल न काहू होए।।४२।।

जब से बादशाह दिल्ली के तख्त पर बैठे हैं, आज दिन तक किसी ने भी ऐसी सख्त आवाज में नहीं बोला है, जैसा आज इन मोमिनों ने बोला है। बादशाह के मुँह पर इस तरह बोलने की तो किसी की हिम्मत भी नहीं होती।

इनों बातें करते करते, कोई न आया दृष्ट।

इनकी बातां सुनते, काँपत सारी सृष्टि।।४३।।

जब ये मोमिन बादशाह से बातें कर रहे थे तो इन्हें अल्लाह तआला के सिवाय कोई और दिखाई ही नहीं देता था। इन्होंने बादशाह की शान का भी कोई ख्याल नहीं रखा। जब ये बादशाह से बातें कर रहे थे, उस समय दरबार के सारे लोग काँप रहे थे।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में "सृष्टि" शब्द का तात्पर्य दरबार के लोगों से है, न कि ब्रह्माण्ड के लोगों से। यहाँ पर अतिश्योक्ति अलंकार है, जहाँ बादशाह को परमात्मा और दरबार को ही सृष्टि मान लिया जाता है।

ओ तो कह पीछा फिरा, इसारत भई सीदी पोलाद।

तुम इनकी बातां सुनियो, पूछ देखो बुनियाद।।४४।।

वह सिपाही तो कोतवाल से कहकर चला गया। इसके पश्चात् बादशाह ने संकेत से कोतवाल सिद्दीक फौलाद को बुलाकर कहा– तुम इनकी सारी बातें सुनो और इनसे पूछताछ कर इनकी वास्तविकता की जाँच करो कि ये लोग कौन हैं?

इनों को नीके राखियो, खाने पीने की खिजमत।
दिलगीर होने न पावहीं, मैं सौंपे तुमको इत।।४५।।

इन लोगों को अच्छी तरह से रखना। खाने–पीने की अच्छी व्यवस्था करना, जिससे ये किसी भी तरह से दुःखी न हों। मैंने इन्हे तुम्हारे हाथों में सौंप दिया है।

इन समै दिल्ली मिने, घर घर पड़ी खड़ भड़।
जिनके घर के संग थे, तिने भया बड़ा डर।।४६।।

इस समय दिल्ली में घर–घर अशान्ति फैल गयी। सभी सुन्दरसाथ के घरवालों में किसी अशुभ की आशंका से बहुत अधिक डर बैठ गया।

भावार्थ– सुन्दरसाथ के परिवार वालों के डरने का कारण यह था कि औरंगज़ेब की कैद में जाने के बाद शायद ही कोई जीवित लौटकर आता। भाई मतिदास को आरे से चिरवाना, गुरू तेग बहादुर का सिर कलम करवाने, का भयानक दृश्य दिल्ली की जनता देख चुकी थी।

दयाराम के घर में, बड़ा जो हुआ सोर।
दयाराम के बदले, हम पहुंचावे और।।४७।।

दयाराम जी के घर में तो बहुत हा–हाकार मच गया। उनके घर वाले यही चाह रहे थे कि दयाराम को छुड़वा

लायें और पैसे से किसी और व्यक्ति को खरीदकर दयाराम की जगह भिजवा दें।

खाने पीने की बात जो, पुछाई कोतवाल इनों से।
मोमिनों मन बिचारिया, करें परियान आपस में।।४८।।

खाने-पीने के सम्बन्ध में कोतवाल ने सुन्दरसाथ से पूछा कि उन्हें कैसा भोजन चाहिए - शाकाहारी या माँसाहारी? मोमिनों ने अपने मन में विचार करके उत्तर दिया कि हम आपस में निर्णय करके आपको बतायेंगे।

दस तन को लेए के, किए दो तन बराबर।
संझा के समय मिनें, तब जाहिर हुई खबर।।४९।।

इन बारह सुन्दरसाथ में १० तन हिन्दू थे और २ तन मुसलमान, किन्तु सबके लिए एक ही प्रकार के

शाकाहारी भोजन की माँग की गयी। इस प्रकार सभी बारह सुन्दरसाथ समता के दृढ़ भाव में बँध गये। शाम के समय कोतवाल को यह बात मालूम हुई कि ये सभी लोग एक ही प्रकार का शाकाहारी भोजन करना चाहते हैं।

एह खबर सुनी काजीए नें, दिन दूसरे सेख इसलाम।
तब बुलाए अदालत में, पूछी बात तमाम।।५०।।

यह बात दूसरे दिन काज़ी शेख इस्लाम ने भी सुनी। तब उन्हें अदालत में बुलाकर सारी बातें पूछीं।

काफरों नें सुलतान को, सक ल्याए बीच ईमान।
तुमको ऐसा न चाहिए, जो रूबरू बातां सुनो कान।।५१।।

इस्लाम से खारिज हुए काफिर धर्माधिकारियों ने बादशाह के मन में संशय पैदा कर दिया और श्रीजी के

प्रति ईमान लाने से वंचित कर दिया। उन्होंने बादशाह से कहा कि आपको इन लोगों के साथ एकान्त में प्रत्यक्ष बैठकर बातें नहीं करनी चाहिएं।

क्या जाने किसी फन्द पर, भेजे होए दुस्मन।
तुम तिनसों बातें क्यों करो, रूबरू अपने तन।।५२।।

पता नहीं किसी शत्रु ने षड्यंत्र रचकर तो इन्हें नहीं भेजा है। ऐसी स्थिति में आपका उनसे प्रत्यक्ष सामने बैठकर बातें करना किसी भी स्थिति में उचित नहीं है।

पूछाओ बात गुलाम सों, वह कहेगा आए तुम।
जब मालूम होएगा, तब देखेंगे हम।।५३।।

आप अपने किसी सेवक से इन मोमिनों की बात करवाइए। उनकी सारी जानकारी लेकर वह आपको बता

देगा। जब उनकी असलियत मालूम हो जायेगी, तब हम उनसे माहौल के अनुसार बर्ताव करेंगे।

जो साहजहां के अमल में, कोई ऐसा ल्यावे तोफान।
तो तबहीं मारे गर्दन, और बात न सुने कान।।५४।।

यदि बादशाह शाहजहाँ के शासनकाल में कोई ऐसा उत्पात मचाता, तो वे उसी क्षण उसकी गर्दन कटवा देते। वे तो ऐसे लोगों से कोई भी बात नहीं करते।

इनको तो रहे उम्मेद, देखने को इमाम।
तिस वास्ते चुगली न सुनी, बात रद्द करी तमाम।।५५।।

औरंगज़ेब बादशाह को आखरूल इमाम मुहम्मद महदी के दीदार की बहुत चाहत थी। इसलिये उसने इन लोगों की चुगली नहीं सुनी और उनकी बातों को नकार दिया।

रूबरू बात करने का, मान लिया सुकन।

पाजी का पाजी भेज के, हकीकत पूछी मोमिन।।५६।।

इसलिये उसने, प्रत्यक्ष बात करने की, मोमिनों की अर्ज़ी को मान लिया। मोमिनों की वास्तविकता को जानने के लिये उसने जिस व्यक्ति को भेजा, वह दुष्टों का दुष्ट अर्थात् अति दुष्ट निकला।

भावार्थ– औरंगज़ेब ने अपने राज्य में ऐसे शातिर (काइयां) गुप्तचरों को नियुक्त कर रखा था, जो एक–एक बात की सूचना बादशाह को देते थे। ये मुहतसिब (पूछताछ करने वाले) सबके लिये सिरदर्द थे। इसलिये इस चौपाई में "पाजी का पाजी" कहा गया है।

तब इन बात सों, हुए मोमिन हुसियार।

श्री राज के ठौर को, किया न खबरदार।।५७।।

उस दुष्ट व्यक्ति की मानसिकता को भाँपकर सुन्दरसाथ सावधान हो गये। उसने बहुत चतुराई से श्रीजी के विषय में जानना चाहा, किन्तु सुन्दरसाथ ने यह पता ही नहीं चलने दिया कि वे कहाँ पर हैं?

तब सेख इसलाम सों, जब हुआ मजकूर।
तब तिनों से कही, देओ जवाब कर सहूर।।५८।।

जब काजी शेख इस्लाम से सुन्दरसाथ की वार्ता हुई, तब सुन्दरसाथ ने उनसे कहा कि आप कुरआन के चिन्तन के आधार पर हमारे प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

हमारे पैगम्बर नें, क्यों ए फुरमाया तुम।
हदीसा कुरान में यों कह्या, जो दीजे कसाला गुम।।५९।।

क्या हमारे पैगम्बर साहब एवं कुरआन तथा हदीसों का

यही कथन है कि दूसरों को सताया करो?

भावार्थ– प्रायः इस बात पर आपत्ति की जाती है कि दिल्ली में १२ सुन्दरसाथ को किसी भी तरह की शारीरिक यातना नहीं दी गयी। यदि उनको शारीरिक यातना नहीं दी गयी, तो बीतक की लगभग आधे दर्जन चौपाइयों (प्रकरण ४३/५९,६०, ४४/२, ४६/१२, ४७/१,६८) में "कसाला" शब्द का प्रयोग करने की क्या आवश्यकता थी? "कसाला" शब्द का अर्थ होता है कष्ट देना।

सुन्दरसाथ के साथ जो दुर्व्यवहार हुआ, वह रात के अन्धेरे में कारागार के अन्दर हुआ। इसलिये उसके साथ "गुम" शब्द का प्रयोग हुआ है। यदि यह कहा जाये कि उन्हें केवल मानसिक रूप से प्रताड़ित किया गया, शारीरिक कष्ट नहीं दिया, तो यह कहना उचित नहीं है।

सिद्दीक फौलाद जैसे जालिम कोतवाल के हाथों में पड़ने के बाद स्वप्न में भी यह कल्पना नहीं की जा सकती कि कोई शारीरिक प्रताड़ना से बच सकता है। सिद्दीक फौलाद कोई मनोवैज्ञानिक नहीं था, जो मानसिक प्रताड़ना से काम लेता।

यदि केवल मानसिक रूप से प्रताड़ित किया गया होता, तो इसी प्रकरण की ६१वीं चौपाई में मोमिनों का कष्ट देखकर काजी द्वारा रोने की बात कही गयी है। उस समय की मुगल सल्तनत का काजी शारीरिक प्रताड़ना पर ही आँसू बहा सकता है, मानसिक प्रताड़ना पर नहीं।

केवल मानसिक प्रताड़ना पर श्रीजी को कभी भी क्रोध नहीं आ सकता था। बीतक ४१/१ में स्पष्ट लिखा है–

"कानजी पहुँचा उसी दिन, बहुत गुस्से हुए तब।"

स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये महात्मा गांधी, लाल बहादुर

शास्त्री, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, आदि महापुरूषों ने कारागार में कष्ट झेला है, तो इससे इनका गौरव बढ़ता ही है, कम नहीं होता।

इसी प्रकार जिन सुन्दरसाथ ने धर्म की रक्षा के लिये खूँखार कोतवाल सिद्दीक फौलाद के हाथों से यातना झेली, उससे उनका गौरव और बढ़ जाता है।

जो खुदाए और रसूल पर, ल्याया होए ईमान।
तापर कसाला पहुंचत, सुनो कलमा कान।।६०।।

यह आपकी कैसी मानसिकता है कि जो खुदा और रसूल मुहम्मद (सल्ल.) पर ईमान लाता है, उस पर आप लोग जुल्म ढाते हैं? आप अपने कानों से कुरआन के वचनों को सुनकर (चिन्तन कर) देखिये कि उसमें क्या कहा गया है? क्या आपने कुरआन से ऐसा ही सुना है,

अर्थात् क्या कुरआन में ईमान लाने वालों पर अत्याचार करने का निर्देश है?

सुनके काजी रोइया, हमारे पैगम्बर कह्या नाम।
तब खलास करके, लगाए नेक काम।।६१।।

यह बात सुनकर काजी रो पड़ा और मन ही मन कहने लगा कि आप लोग हमारे पैगम्बर मुहम्मद (सल्ल.) का वास्ता दे रहे हैं। अब उसने उनके साथ कैदियों जैसा व्यवहार बन्द कर, सम्मानित तरीके से उनके साथ धर्म-चर्चा करने का निर्णय लिया।

भावार्थ- इस चौपाई के चौथे चरण में "नेक काम में लगाने" का तात्पर्य यह है कि उनसे कुरआन के गुह्य रहस्यों पर बातचीत करने का मन ही मन निर्णय लिया।

ना हम काहू का धन लिया, ना कछु किया छिनार।
चोरी भी हम ना करी, तो तुम ऐसा किया क्यों खार।।६२।।

न तो हमने किसी का धन लिया और न हमने कोई आचरणहीनता का कार्य किया। हमने चोरी भी नहीं की, फिर आपकी तरफ से हमारे साथ इतना बुरा व्यवहार क्यों हो रहा है?

भावार्थ– चोरी और चरित्रहीनता जैसे दुष्ट कर्मों पर राज्य सत्ता अनिवार्य रूप से शारीरिक दण्ड देती है। इसलिये यह कहना कि १२ सुन्दरसाथ को शारीरिक यातना नहीं दी गयी, सत्य को छिपाने जैसा है।

हम न सोहबत करें सुलतान की, न जाएं उनके घर।
हम रहेंगे तुम पे, सुनो तुम खबर।।६३।।

अब न तो हम बादशाह से मिलने के लिये उनके निवास

पर जाने के इच्छुक हैं और न उनसे किसी प्रकार की बात करने के इच्छुक हैं। हम आपके पास ही रहेंगे और हम यही चाहेंगे कि आप हमसे इमाम महदी के सन्देश को सुनें।

इन्ना इन्जुल्ना सूरत, पूछे तिनके माएनें।
बताए दिए तिन को, राजी हुआ जान पने।।६४।।

काजी शेख इस्लाम ने सुन्दरसाथ से इन्ना इन्जुलना सूरत का अर्थ पूछा। जब सुन्दरसाथ ने उसका गुह्य अर्थ स्पष्ट कर दिया तो इससे वह बहुत आनन्दित हुआ।

तब उनने सुलतान सों, कराई ए अरज।
इनों की खिजमत मैं करों, सुनो मेरी गरज।।६५।।

तब काजी शेख इस्लाम ने औरंगज़ेब बादशाह से यह

निवेदन (अर्ज़ी) करवाया कि इन मोमिनों की सेवा मैं करना चाहता हूँ। मेरा विश्वास है कि आप मेरी प्रार्थना को अवश्य स्वीकार करेंगे।

तबहीं हुकुम हुआ, ले जाओ अपने पास।
इनों की खिजमत कीजियो, दिल से छूटी आस।।६६।।

बादशाह का उसी समय आदेश हुआ कि इन मोमिनों को अपने पास ही रखो। इनकी अच्छी तरह से सेवा करना। अब सुन्दरसाथ के मन में जो बादशाह से बात करनी की इच्छा थी, वह भी समाप्त हो गयी, क्योंकि वे जान गये कि अब हमें केवल काजी शेख इस्लाम से ही बातें करनी पड़ेंगी।

उनने इसी बखत में कह्या, मंगाए मलीदे देवो इन।

खिजमत करो इनकी, ना दिलगीर होए आपन।।६७।।

बादशाह ने उसी समय यह निर्देश दिया कि इन मोमिनों को स्वादिष्ट चूरमा आदि मँगवाकर खिलाया जाए। इनकी आप अच्छी तरह से सेवा करें, जिससे हमारे बीच में रहने पर इन्हें किसी तरह के कष्ट का अहसास न हो।

ले गया अपनें घरों, रहनें को दई ठौर।

ऊपर चौकी रहे सुलतान की, लोग बातां करें और।।६८।।

काज़ी उन बारह सुन्दरसाथ को अपने घर लेकर गया और उनके लिये निवास की व्यवस्था कर दी। बादशाह के कुछ सैनिक सुन्दरसाथ के ऊपर पहरा दिया करते थे। इस स्थिति को देखकर लोग दुविधाग्रस्त होकर बातें करते थे।

दिन दूसरे बुलाए के, किया काजी मजकूर।

तहां बातां लगा पूछने, सब कहने लगे जहूर।।६९।।

दूसरे दिन काजी ने सब सुन्दरसाथ को बुलाकर उनसे कुरआन के सम्बन्ध में बाते की। वहाँ पर काजी ने कियामत तथा इमाम महदी के ज़ाहिर होने के सम्बन्ध में बातें पूछीं। सब सुन्दरसाथ ने इसका यथोचित उत्तर दिया।

भाई काजी के घर गए, जोस जोर हुआ बदल को।

तिनका जहूर देखके, भागा अपनें घरमों।।७०।।

इसके बाद काजी के भाई के घर सब सुन्दरसाथ गये। शेख बदल के ऊपर श्री राज जी का ऐसा जोश आया कि उनके चेहरे का तेज देखकर काज़ी का भाई भयभीत हो गया और भागकर अपने घर में छिप गया।

फेर दिन तीसरे काजीएं, बुलाए अपने पास।

दई किताब एक हदीस की, जिनमें मजकूर खास।।७१।।

पुनः तीसरे दिन क़ाज़ी ने सब सुन्दरसाथ को अपने पास बुलाया। सुन्दरसाथ ने उन्हें हदीस की एक किताब दी, जिसमें कियामत तथा इमाम महदी के प्रकट होने के सम्बन्ध में विशेष बातें दर्शायी गयी थीं।

तब काजी कहने लगा, ए किताब बनाई तुम।

तुम्हारी हकीकत सब लिखी, ए जो पढ़त हैं हम।।७२।।

उसे पढ़कर काजी कहने लगा कि ऐसा लगता है कि आप लोगों ने यह किताब स्वयं लिख रखी है क्योंकि जब हम इसे पढ़ते हैं तो इसमें वही सारी बातें लिखी मिलती हैं, जो आप लोग कहा करते हैं।

तब जवाब मोमिनों दिया, ए हमसे ना होए।

तुम तो स्याने बहुत हो, क्यों न बिचारो सोए।।७३।।

तब सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि ऐसा काम हम नहीं कर सकते। वैसे तो आप बहुत बुद्धिमान हैं, लेकिन आप इस बात का विचार क्यों नहीं करते कि क्या हम लोग इस प्रकार का जालसाजी का काम कर सकते हैं?

हम उर्दू बाजार से, ल्याए हदिया दे।

ते बैठे हैं जाहिर, जाए पूछो उनसे।।७४।।

हम लोग हदीस की इस किताब को न्योछावर देकर उर्दू बाज़ार से लाये हैं। जिनसे हमने खरीदी है, वे अपनी दुकान पर वहीं बैठे हैं। आप स्वयं जाकर उनसे सारी बात की जानकारी ले सकते हैं।

तब काजी न बोलिया, पूछने लगा और बात।

एक पहिले दिन का किस्सा, कर देओ विख्यात।।७५।।

तब काज़ी को कुछ भी उत्तर नहीं सूझा और प्रसंग बदलकर दूसरी बातें करने लगा। उसने कहा कि पहले दिन के किस्से के बारे में स्पष्ट रूप से बताने का कष्ट कीजिये।

खिलवत अन्दर बैठ के, सुनी संनधे दोए।

बिना एक महम्मद की, नेक कहों दोजक की सोए।।७६।।

अपने घर के बिल्कुल एकान्त स्थान में काज़ी शेख इस्लाम ने सुन्दरसाथ से सनद ग्रन्थ के दो प्रकरणों, "सनद बिना एक महम्मद की" और "सनद दोजख की", को सुना।

तब राजी होएके, कहे फेर फेर गाओ सोए।

खड़ा दारोगा बेतल माल का, सो नागर जात का होए।।७७।।

यह सुनकर काज़ी बहुत ही प्रसन्न हुआ और सुन्दरसाथ से पुनः बार–बार इन सनदों को गाकर सुनाने के लिये आग्रह करने लगा। वहीं पर मुसलमानों के लिए बने हुए सार्वजनिक धार्मिक कोष का एक अधिकारी खड़ा था, जो नागर जाति का हिन्दू था।

तिनको प्यार करके, कहया सुनो ए कान।

देखो तुम्हारे खिलके में, कैसा ल्याए ईमान।।७८।।

काज़ी शेख इस्लाम ने उससे बहुत प्रेमपूर्वक यह बात कही कि मेरी एक बात सुनो। तुम इन लोगों की ओर देखो। ये लोग भले ही मुस्लिम वेश–भूषा में हैं, किन्तु ये हिन्दू हैं, और इन्हे कुरआन तथा मुहम्मद साहिब पर

अटूट ईमान है।

ओ भागा इन भांत सों, जाने पैठों जिमी में।

मों ऊपर जुलम भया, कहा कहों इन सें।।७९।।

यह सुनते ही वह इतनी लज्जा से वहाँ से भागा कि जैसे धरती फट जाये और वह उसमें समा जाये। जाते-जाते वह यह बात कहने लगा कि धर्म परिवर्तन करने वाले इन हिन्दुओं से मैं क्या कहूँ? मेरे सामने यह बहुत बड़ा अत्याचार हो रहा है।

बड़ी दिलगिरी करके, भागा अपने ठौर।

छोड़ दिया काजीए नें, बड़ा जो हुआ सोर।।८०।।

वह हिन्दू बहुत दुःखी होकर भागते हुये अपने निवास चला गया। काज़ी ने उसे रोकने का कोई प्रयास नहीं

किया। इस घटना के कारण, वहाँ बहुत शोर–शराबा होने लगा।

अब लगा बातें पूछने, क्यों कहिए कयामत।

दसहीं अग्यारहीं बारहीं लों, लिखी किन सरत।।८१।।

अब काज़ी सुन्दरसाथ से पूछने लगा कि आप लोगों के अनुसार कियामत की परिभाषा क्या है? आप दसवीं, ग्यारहवीं, तथा बारहवीं सदी में कियामत का ज़ाहिर होना किस आधार पर कहते हैं?

तब जवाब मोमिनों दिया, ए बात बरहक।

मिने दसहीं अग्यारहीं बारमी, है लिखी इसारतें हक।।८२।।

तब सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि यह बात बिल्कुल सच है। कुरआन के ३०वें पारे में संकेतों में यह बात

स्पष्ट रूप से लिखी हुयी है कि दसवीं, ग्यारहवीं, तथा बारहवीं सदी में कियामत आएगी, तथा ईसा रूह उल्लाह एवं आखरूल इमाम मुहम्मद महदी ज़ाहिर होंगे।

भावार्थ– पारा २२ सूरा शबा ३४ आयत २९,३०; पारा २८ सूरा हश्र ५९ आयत १८; पारा २१ सूरे सजदा ३२ आयत ५; पारा आम ३० सूरे कद्र ९७ आयत ३; पारा आम ३० सूरे फज्र ८९ आयत २।

कुरआन का कथन है कि कियामत का जो वायदा अल्लाह ने किया है, वह अटल है। इसको विभिन्न स्थानों पर विभिन्न कथानकों के माध्यम से समझाया गया है। जैसे कि कहा गया है कि तुम कियामत के लिए जल्दी क्यों कर रहे हो, उसके लिए एक दिन निश्चित किया है, जो कि तुम्हारी गिनती के अनुसार १००० साल का होता है। इसी को हदीस में कहा है कि हर हजार साल के

बाद एक मुजद्दिद (धर्म सुधारक) अवतरित होता है, जो धर्म में आयी हुयी विसंगतियों को दूर करके सत्य, न्याय, एवं प्रेम–सौहार्द की पुनर्स्थापना करता है, जिससे समस्त मानवता प्रफुल्लित होती है। इस प्रकार १००० साल से लेकर १३०० साल तक ही ब्रह्मज्ञान का अवतरण व प्रचार–प्रसार हुआ।

तेरहीं में तहकीक, सब माइनें साबित।
ए हादी से पाइए, खोल दे हकीकत।।८३।।

निश्चित रूप से तेरहवीं सदी में कुरआन के सभी गुह्य रहस्यों का फैलाव होने लगेगा। कुरआन की हकीकत तथा मारिफत के भेद, आप हमारे हादी आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्जमां से पा सकते हैं। वे सारे रहस्यों को जाहिर करने में सक्षम हैं।

तब एक दूसरे कों, सामें लगे देखन।

ए तो बड़ा मुकदमा, बीच गिरोह मोमिन।।८४।।

तब सभी एक-दूसरे को अचम्भित होकर इस प्रकार देखने लगे, जैसे उनकी आँखे कह रही हों कि मोमिनों द्वारा कियामत और इमाम महदी के जाहिर होने का दावा करना बहुत बड़ी बात है।

भावार्थ- इस चौपाई के चौथे चरण का आशय यह है कि श्रीजी को सबसे पहले सुन्दरसाथ ने ही, कुरआन की साक्षियाँ और सनद ग्रन्थ के अवतरण के पश्चात्, इमाम महदी के रूप में पहचाना, जिसका सन्देश औरंगज़ेब तक पहुँचाने का प्रयास किया गया। लेकिन शरीअत के बन्धनों में फँसे हुये मौलवी-मुल्लाओं ने, न तो इमाम महदी को पहचाना और न औरंगज़ेब को समर्पित होने दिया।

सवाल एक सक्सें किया, तुमको एते दिन बीच दीन।
क्यों न करी निमाज़ को, ल्याए थे आकीन।।८५।।

काज़ी के साथ बैठे हुये एक व्यक्ति ने सुन्दरसाथ (मोमिनों) से प्रश्न किया कि आप लोगों को इस्लाम पर ईमान रखे हुये इतना समय हो गया, लेकिन आपने अब तक एक बार भी नमाज अदा क्यों नहीं की?

भावार्थ– नमाज़ वास्तव में जिक्र–ए–सुब्हान है। इसमें अपनी जिह्वा एवं मन से अपने प्रियतम को रिझाना होता है। इसमें जाहिरी शरीअत के अनुसार किए जाने वाले क्रियाकलाप को कैसे परम्परागत माना जा सकता है, जबकि शिया, सुन्नी, अहले हदीस, आदि भिन्न–भिन्न तरीकों से नमाज़ पढ़ते हैं। नमाज़ एक विशेष विधि नहीं है।

कुरआन के अनुसार "सलात" कायम करने का निर्देश

है, जिसका आशय प्रार्थना करने से है। इसमें भावों की अभिव्यक्ति किसी भी भाषा में हो सकती है। सबसे उत्तम नमाज़ कुरआन के पारः २ सूरे बकर की आयत २३८ में "अस्त्र की नमाज़" को कहा गया है, जिसे बीतक साहिब में साढ़े चार बजे चितवनि करना कहा गया है।

तब जवाब मोमिनों दिया, हमारी निमाज़ कजा न होए।
जो मतलब दुनिया वास्ते, काम किया होए सोए।।८६।।

तब सुन्दरसाथ ने उत्तर दिया कि हमारी नमाज़ तो कभी भी बन्द नहीं होती। वह बन्द तो तब होती, यदि हम झूठी दुनिया के लिए जीवित होते या सांसारिक ख्वाहिशों को पूरा करने के लिए काम करते।

तब निमाज़ कजा होवे, जो हम पकड़े मुरदार।

हम वास्ते दीन इसलाम के, काम करें परवरदिगार।।८७।।

यदि हम झूठे संसार में फँसे होते, तो हमारी नमाज़ को भंग हुआ माना जा सकता था। हमारा जीवन सच्चे इस्लाम (निजानन्द) के प्रति समर्पित है और हम अल्लाह की हकीकत के पैग़ाम को फैलाने का नेक काम कर रहे हैं।

तब हमारी निमाज़ को, कबहूं ना होए नुकसान।

बैठे उठे चले बातें करे, सो सब निमाज़ ही जान।।८८।।

इस अवस्था में हमारी नमाज़ पल भर के लिये भी बन्द नहीं कही जा सकती। इसलिये हमारा बैठना, उठना, चलना, तथा बातें करना, सब कुछ नमाज़ ही है।

भावार्थ- वस्तुतः नमाज़ का अर्थ प्रार्थना होता है।

नमाज़ छः प्रकार की होती हैं– दो शरीअत की (जिस्मानी और नफ्सानी), एक तरीकत की, एक हकीकत की, और मारिफत की दो नमाज़ अर्श अज़ीम की।

मौलवी लोगों ने जिस नमाज़ की बात कही है, वह मात्र शरीअत की है, जो वस्तुतः प्राथमिक कक्षा की बन्दगी कही जा सकती है। जिन ब्रह्ममुनियों ने अक्षरातीत श्रीजी के चरणों में अपने को सौंप दिया था, उनके दिल में पल–पल धाम धनी के सिवाय और किसी का अस्तित्व आ ही नहीं सकता था। इसलिये उनको शरीअत की नमाज़ पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं है।

तब कह्या एक दूसरे सों, देओ इनको जवाब।
मोंह वाए सारे रहे, मोंगे रहे विचार किताब।।८९।।

तब सब एक–दूसरे से कहने लगे कि इन मोमिनों के प्रश्नों का उत्तर क्यों नहीं देते? सभी इस विषय पर मौन रहे, अर्थात् उनके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला और उनके मुख खुले के खुले रह गये।

फेर तीसरे दिन को, बुलाए पूछी बात।
सुनाओ मोहे सनंधे, हम पावें अपनी जात।।९०।।

पुनः तीसरे दिन काज़ी शेख इस्लाम ने मोमिनों को बुलाकर सारी बातें पूछीं। उसने यह भी कहा कि आप लोग अपना सनद ग्रन्थ सुनाइये, जिससे हमें अपने स्वरूप का बोध हो जाये।

लखमन भीम बैठ के, सुनाई एक सनंध।
इमाम के मिलाप की, पर देखें ना हिरदे अंध।।९१।।

लालदास जी और भीम भाई ने बैठकर सनद ग्रन्थ से "इमाम के मिलाप" का प्रकरण सुनाया, किन्तु शरीअत के बन्धन में फँसे हुए मुल्ला लोगों की अन्तर्दृष्टि ही नहीं थी कि वे सत्य की पहचान कर पाते।

मिलाप हुआ मेंहदी सों, तब कहया महामती नाम।
अब मैं हुई जाहिर, देखा वतन श्री धाम।।९२।।

जब श्री इन्द्रावती जी की आत्मा का अपने प्रियतम अक्षरातीत से मिलन हुआ, तब उन्हें "महामति" कहलाने की शोभा मिली। श्री इन्द्रावती जी की आत्मा ने स्पष्ट रूप से घोषित कर दिया कि अब मैं महामति के रूप में उजागर हो गयी हूँ। अब मैंने अपने मूल घर को भी यथार्थ रूप से देख लिया है।

भावार्थ– महदी का तात्पर्य हकी सूरत से है। कतेब

परम्परा में जिसको महदी कहा जाता है, उसे ही हिन्दू परम्परा में महामति कहा जाता है। इसे तारतम वाणी के इन शब्दों से समझा जा सकता है–

महम्मद हुआ मेंहेदी, सैयद केहेलाया सही।
खिताब दिया जब खसमें, तब भेली इमाम भई।।

सनंध ४२/१२

अर्थात् अव्वल का मुहम्मद (बसरी सूरत) ही आखिर में महदी कहलाया। अहमद, मलकी सूरत का नाम है। बसरी सूरत ही श्री इन्द्रावती जी की आत्मा में विराजमान हुयी, तो उनकी आत्मा को महदी की शोभा मिली। तीनों सूरतें जब एकाकार हो गयीं, तब इन्हें इमाम की शोभा मिली। इस तथ्य को तारतम वाणी में इस प्रकार दर्शाया गया है–

जब ईसा मेंहेदी महंमद मिले, तब मिले सब आए।
फेर पीछा क्या देखहीं, परदा दिया उड़ाए।।
पेहेचान मेंहेदी महंमद, और ईसा अली मोमिन।
ए कजा दिल भीतर, निसां हुई हम सबन।।

सनंध ३६/६६,६८

एह बात सुनके, कहया अब रखो किताब।
तीन बेर फेर फेर के, पूछा इनके बाब।।९३।।

इस बात को सुनकर काज़ी ने कहा– अब आप अपने सनद ग्रन्थ को रख दीजिए। महदी से मिलाप के सम्बन्ध में उसने पुनः–पुनः तीन बार पूछा।

मिलाप भया इमाम सों, एह बात बरहक।

हम तो उमेदवार हैं, तिन में नाहीं सक।।९४।।

काजी ने कहा कि इमाम से महदी का मिलन हुआ है, इसमें कोई भी संशय नहीं है और हम भी उनसे मिलने की आशा रखते हैं।

भावार्थ– इमाम तीनों सूरतों के मिलन का वह स्वरूप है, जिसमें अक्षरातीत लीला कर रहे होते हैं, इसे खुलासा ग्रन्थ में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है–

महंमद आया ईसे मिने, तब अहमद हुआ स्याम।

अहमद मिल्या मेंहेदी मिने, ए तीन मिल भये ईमाम।।

खुलासा १५/२१

जबकि महदी (हक्की सूरत) का तात्पर्य महामति जी से है, जो श्री इन्द्रावती जी की आत्मा की शोभा का नाम है। संक्षेप रूप में यही कहा जा सकता है कि तीनों सूरतों

का समन्वित रूप इमाम है और एक हकी सूरत का व्यक्तिगत नाम महदी है। इसे ही हिन्दू पक्ष में श्री महामति श्री प्राणनाथ कहा गया है।

पर अब बात तुम छिपाओ, जिन करो जाहिर पहिचान।
जब जाहिर होएंगे, तब हम कदम ग्रहें ले ईमान।।९५।।

लेकिन अब तुम्हें इस बात को छिपाये रखना है। अभी तुम उनकी पहचान को जाहिर न करो। जब वे स्वतः जाहिर हो जायेंगे, तब हम भी उनके चरणों में आकर उन पर ईमान ले आएंगे।

भावार्थ– काजी शेख इस्लाम को यह भय था कि यदि बादशाह औरंगज़ेब को इमाम महदी के स्वरूप की पहचान हो गयी, तो वह सम्भवतः अपनी सम्पूर्ण बादशाहत को छोड़कर उनके चरणों में जा सकता है।

ऐसी स्थिति में शरातोरा का राज्य समाप्त हो जाएगा।

मोमिन तो हैं गरीब, बकरी जेता बल।

पढ़े बाघ ज्यों बोलहीं, ए सीधे निरमल।।९६।।

सुन्दरसाथ विनम्रता की प्रतिमूर्ति होते हैं। उनकी भौतिक शक्ति उस बकरी के समान होती है, जो किसी को हानि नहीं पहुँचाती। इनके विपरीत पढ़े-लिखे और उच्च पदों पर विराजमान जीव सृष्टि के लोग, दूसरों का खून पीने वाले बाघ के समान होते हैं, जो सीधे और सच्चे सुन्दरसाथ पर गरजा करते हैं।

भावार्थ- ब्रह्मसृष्टियों का बल तो साक्षात् धनी का होता है। इनके दिल में धनी की बैठक होती है। इस सम्बन्ध में किरंतन ९०/१९ में कहा गया है-

मोमिन बल धनीय का, दुनी तरफ से नाहें।

तो कहे धनी बराबर, जो मूल स्वरूप धाम माहें।।

किन्तु, इतना होते हुए भी ब्रह्मसृष्टियों का भौतिक बल किसी को प्रताड़ित नहीं करता। इसके विपरीत जीव सृष्टि का बल दूसरों के रक्त और माँस पर निर्भर रहने वाले क्रूर बाघ के समान है।

महामत कहे ऐ मोमिनों, ए काजी के घर की बीतक बात।

अब कहों हादीए की, जिन खबर सुनी विख्यात।।९७।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! काजी के घर घटित होने वाले घटनाक्रम का मैंने वर्णन किया है। अब मैं उस प्रसंग का वर्णन कर रहा हूँ, जब कान्हजी भाई के माध्यम से श्रीजी के पास सारी सूचना जाती है।

प्रकरण ।।४३।। चौपाई ।।२२०१।।

अवज्ञाकारियों पर रोष

मुलाकात सुलतान की, सुनी श्री राज नें जब।
कान जी पहुंचा उसी दिन, बहुत गुस्से हुए जब।।१।।

जब श्रीजी ने कान्हजी भाई के माध्यम से सुन्दरसाथ की औरंगज़ेब से मुलाकात के बारे में सुना, तो मोमिनों के साथ हुए दुर्व्यवहार को सुनकर उन्हें बहुत क्रोध आया। कान्हजी भाई यह सूचना लेकर उसी दिन पहुँच गये थे।

भेजे इनों तिनको, दिया कसाला जोर।
अब लिए कहां जात हैं, मारों इस ही सोर।।२।।

श्रीजी कहने लगे कि मैंने अपना सन्देशवाहक बनाकर सुन्दरसाथ को भेजा था, किन्तु उन्होंने उनको बहुत

अधिक यातनायें दीं। अब अत्याचार करने वाले ये मुसलमान कहाँ जाएँगे? अब उनका विनाश निश्चित है।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण से यह स्पष्ट होता है कि सुन्दरसाथ को रात्रि के समय कठोर यातनायें दी गयी थीं। अन्यथा न तो श्री जी को क्रोध आता और न इस चौपाई के दूसरे चरण में "जोर कसाला" शब्द का प्रयोग होता।

श्री प्राणनाथ जी तो इस घटना से इतने मर्माहित हो गये थे कि जिबरील को महाप्रलय का आदेश तक दे डाला, किन्तु मूल स्वरूप के आदेश से ही यह ब्रह्माण्ड रखना पड़ा। इस सम्बन्ध में श्रीमुखवाणी में कहा गया है–

ए नेक रखी रात खेंच के, सो भी वास्ते तुम।
ना तो लेते अंदर, केती बेर हैं हम।। सनंध ३८/६६

मैं भेजे मोमिन को, दे अपना पैगाम।

तो गुना बैठा इनों पर, कोई न बचावे इन काम।।३।।

मैंने सुन्दरसाथ को अपना सन्देश देकर बादशाह के पास भेजा था। इन्होंने मेरे सुन्दरसाथ के साथ जो दुर्व्यवहार किया है, उसका इन्हें गुनाह लगा है और कोई भी इन्हें उसके दण्ड से बचा नहीं सकता।

जैसा मारना पैगम्बर, तैसा तिनके दोस्त।

जाहिर होसी जहान में, इनों ऊपर अफसोस।।४।।

मेरे ऊपर प्रहार करने पर जितना पाप लगता है, उतना ही पाप मेरा सन्देश ले जाने वाले सुन्दरसाथ पर प्रहार करने से लगता है। अब मुसलमानों के जुल्म-ओ-सितम की बात सारी दुनिया में फैल जाएगी और सभी यह खेद व्यक्त करेंगे कि मुसलमानों ने अत्याचार किया था।

सबों की लानत इनों पर, लिखी अल्ला कलाम।

महम्मद से मुनकर हुए, इनों छोड़ा दीन इसलाम।।५।।

कुरआन में लिखा है कि शरीअत की राह पर चलकर जुल्म ढाने वाले इन मुसलमानों को हर कोई फटकार लगाएगा। इन्होंने मुहम्मद साहिब के आदर्शों को भी नहीं माना। वास्तविकता तो यह है कि इन्होंने इस्लाम की सच्ची राह को भी छोड़ दिया।

भावार्थ– कुरआन के सूरः बकरः की आयत ८७–८८ एवं पारः ४ सूरः आले इम्रान ३ आयत १३७ में कहा गया है कि तुम लोगों से पहले भी बहुत से प्रसंग गुजर चुके हैं। तुम सारी पृथ्वी की सैर करके देख लो कि झुठलाने वालों का अन्जाम कैसा होता है?

पर इत ए क्या करें, जो लिखी लोमोफूज।
तिसी माफक होत हैं, और न आवे बूझ।।६।।

लेकिन ये बेचारे क्या करें? धाम धनी ने जो अपने दिल में पहले ले रखा है, उसी के अनुकूल संसार में होता है, भले ही यह बात किसी को समझ में नहीं आती है।

पहिले सिपारे मिने, पाने बासठ में बयान।
वरक तपसीर का चौदमां, तहां लिखी ए पहिचान।।७।।

कुरआन के पहले पारे तथा बासठवें पृष्ठ में यह बात दर्शायी गयी है। इसी प्रकार तफ्सीर-ए-हुसैनी के चौदहवें वर्क में यह प्रसंग वर्णित है।

आयत– मा य–वद्दुल–लज़ी–न क–फ़रू

मिन् अहलिल् किताबि व लल्मुश्रिकी–न

(कुरआन मज़ीद पारा १ अलिफ्–लाम–मीम, सूरः बकरः २, आयत १०५)

जो लोग काफिर (कृतघ्न) हैं, कतेब पक्ष वाले इस बात को पसन्द नहीं करते।

मायने– खुदाए न दोस्त तिनका, ए जो हैं काफर।

जिनने ढांप्या हक को, किया परदा सब ऊपर।।८।।

जिन्होंने अल्लाह के सन्देश को छिपा दिया और संसार के लोगों को उसे ग्रहण नहीं करने दिया, निश्चित ही वे काफिर लोग हैं। ऐसे लोगों पर अल्लाह तआला (श्री राज जी) का प्रेम नहीं बरसता।

भावार्थ– तारतम वाणी के प्रचार में जो लोग बाधायें

खड़ी करते हैं, उन्हें भी उसी प्रकार का गुनाह लगेगा, जैसा उपरोक्त चौपाई में दर्शाया गया है।

मायने– ए जो एहेल किताब है, बीच गिरो जहूदन।
ना मुसरक कहिए तिनको, खुदाए भेजे तुम पर इन।।९।।

इस कुरआन किताब के वारिस, अर्थात् उसके गुह्य रहस्यों को जानने वाले, हिन्दुओं के अन्दर प्रकट हो चुके हैं। इसलिए अब इन्हें मुश्रिक (अनेक देवी–देवताओं की उपासना करने वाला) नहीं कहा जा सकता। परब्रह्म ने तुम्हारे पास इन्हें अपना सन्देश देकर भिजवाया है।

भावार्थ– यद्यपि वेदों, उपनिषदों, और दर्शन शास्त्रों में एकमात्र परब्रह्म की ही उपासना का विधान है, अन्य किसी की नहीं, किन्तु पौराणिक मान्यता वाले सनातनी हिन्दू अनेक देवी–देवताओं की उपासना करते हैं।

इसलिए कुरआन की दृष्टि में इन्हें मुश्रिक (बहुदेववादी) कहा गया है।

इस्लाम के अवतरण से पहले समस्त अरब जगत में यहूदी मत फैला हुआ था। यहूदियों में एक परब्रह्म के अतिरिक्त अनेकों की उपसाना होती थी। इसलिए आगे कुरआन के जिस सन्दर्भ में यहूदी शब्द का प्रयोग होगा, उसका आशय पौराणिक हिन्दुओं से लिया जाएगा।

आयत–

अंय्यु–नज़्ज़–ल अलैकुम् मिन् ख़ैरिम्–मिर्रब्बिकुम्।

(क़ुरआन १/२/१०५)

कि तुम पर तुम्हारे परमेश्वर की तरफ से जो खैर (बरकत) प्रकट हो।

मायने– भेजे उन जहूदन को, ऊपर पैगाम इसलाम।
बड़ी नेकी ए जानियो, पावे राह खलक तमाम।।१०।।

परमधाम की आत्मायें जिन हिन्दुओं के तनों में अवतरित हुई हैं, उन्हीं के ऊपर इस्लाम की हकीकत एवं मारिफत के ज्ञान का सन्देश (निजानन्द) दिया गया है। उस ज्ञान को ग्रहण करने और कराने में बहुत बड़ी नेकी है। सारी दुनिया इन्हीं से अपना मार्गदर्शन प्राप्त करेगी।

भावार्थ– जब मुहम्मद (सल्ल.) को मे'राज हुआ तो उन्होंने श्री राज जी से ९० हज़ार हरूफ़ सुने। शरीअत के हरूफ़ों को ही कुरआन में खोला गया है। उन्होंने तरीकत का ज्ञान केवल हज़रत अली को दिया। हकीकत के शब्द ही हरूफ़–ए–मुक्तेआत हैं और मारिफत के शब्द उनकी जिह्वा पर चढ़ ही नहीं सके, क्योंकि वे एकमात्र

श्री प्राणनाथ जी के ही स्वरूप से अवतरित होने थे। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी में कहा गया है–

कह्या सुभाने मुझको, हरफ नब्बे हजार।
कह्या तीस जाहिर कीजिए, और तीस तुम पर अखत्यार।।
बाकी जो तीस रहे, सो राखियो तुम छिपाए।
बका दरवाजे खोलसी, आखिर को हम आए।।

खुलासा १२/११,१२

कह्या जाहेर रसूले, मैं हरफ सुने हैं कान।
सो आए केहेसी इमाम, मैं लिखे नहीं फुरमान।।
जो हरफ जुबां चढ़े नहीं, सो क्यों चढ़े कुरान।
और जुबां ले आवसी, इमाम एही पेहेचान।।

सनंध ३९/१,२

इस प्रकार इस्लाम का सच्चा स्वरूप श्री प्राणनाथ जी

की तारतम वाणी (कुल्जुम) में ही निहित है। शरीअत के जिस मार्ग को आजकल इस्लाम समझा जा रहा है, वह वास्तविक इस्लाम नहीं कहला सकता।

इन सेती नजीक, होवे परवरदिगार।
ए वही मुराद महम्मद की, ए हुज्जत कुरान उस्तवार।।११।।

परब्रह्म इन ब्रह्ममुनियों (मोमिनों) के पल–पल अंग–संग हैं। मुहम्मद (सल्ल.) ने भी कियामत के समय इन्हीं ब्रह्ममुनियों के साथ आने की इच्छा की है, जिसका स्पष्ट वर्णन कुरआन–ए–पाक में किया गया है।

जहां जमा सब चीजों का, ए जो रबानी कलाम।
जहूद तिनके दुस्मन, बिन एहेल किताब तमाम।।१२।।

सच्चिदानन्द परब्रह्म के आवेश से अवतरित हुई इस

तारतम वाणी में अध्यात्म जगत का सर्वोपरि ज्ञान समाहित हो चुका है। कुरआन के गुह्य भेद को जानने वाले सुन्दरसाथ से अन्य पौराणिक हिन्दू, विपरीत मान्यताओं के कारण, द्वेष रखते हैं।

भावार्थ– तारतम वाणी में वेद–कतेब का एकीकरण करके परम सत्य की पहचान करायी गयी है, किन्तु इस रहस्य से अनभिज्ञ हिन्दू और मुस्लिम दोनों ही सुन्दरसाथ से वैमनस्यता रखते हैं।

करें जहूद लड़ाई मुझ सों, दूजे सरियत मुसलमान।
मैं पाई सिफत महम्मद की, अब छोड़ों नही फिरकान।।१३।।

मूर्ति–पूजा करने वाले कर्मकाण्डी हिन्दू तथा शरीअत का पालन करने वाले मुसलमान– दोनों ही मुझसे विवाद करते हैं। अब मैंने आखिरी मुहम्मद श्री प्राणनाथ जी की

महिमा को पहचान लिया है। इसलिए अब मैं इस सनंध (सनद) ग्रन्थ को नहीं छोड़ सकता।

भावार्थ– इस चौपाई के बाह्य अर्थ से ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें रसूल मुहम्मद साहिब तथा कुरआन की महिमा दर्शायी गयी है, किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर निष्कर्ष यह निकलता है–

सनद ग्रन्थ का २९वां प्रकरण है– "अब सो कहां है मुहम्मद"। इसमें स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है कि मुहम्मद का स्वरूप श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में निहित है। इसके पूर्व के प्रकरण "बिना एक मुहम्मद" की २९वीं चौपाई भी यही सिद्ध करती है कि मुहम्मद का तात्पर्य श्री प्राणनाथ जी से ही है।

पांच चीज जीव सब उड़ गए, मसी बका से ल्याए औखद।
सो खिलाए जिवाए कोई न सक्या, बिना एक महंमद।।

सनंध २८/२९

खुलासा ग्रन्थ में भी यह बात दर्शायी गयी है कि श्री राज जी वेद–कतेब दोनों को छुड़ा कर तारतम वाणी को आत्मसात् कराने के लिए इस संसार में आये हैं।

मेटन लड़ाई बन्दन की, और जादे पैगम्बर।
धनी आए वेद कतेब छुड़ावने, ए तीन बातें चित में धर।।

खुलासा १३/९३

जब श्रीजी दूसरों को वेद–कतेब छुड़वा रहे हैं, तो स्वयं कुरआन को क्यों पकड़ेंगे?

इससे यह स्पष्ट होता है कि यहाँ श्री प्राणनाथ जी एवं तारतम वाणी का प्रसंग है, कुरआन और रसूल मुहम्मद साहिब का नहीं।

एह झगड़ा दीन का, मसनन्द पैगम्बर।

बाजे इसलाम की नकल करें, देवें ता ऊपर।।१४।।

धर्म का यह झगड़ा रसूल मुहम्मद साहिब की गद्दी, अर्थात् आखरूल इमाम मुहम्मद महदी कौन होगा, के लिए था। शरीअत की राह पर चलने वाले मुसलमान स्वयं को इस्लाम का सच्चा पैरोकार (समर्थक) कहते थे और स्वयं को मोमिन मानकर अपने को हिन्दुओं से श्रेष्ठ मानते थे।

भावार्थ– मुहम्मद (सल्ल.) के पर्दे में होने के पश्चात् हज़रत अबू बक्र, उमर, उस्मान, अली वली उल्लाह, आदि खलीफाओं का युग चला। इसके पश्चात् केवल छः माह के लिए इमाम हुसैन को खलीफा बनाया गया था, लेकिन मुआविया के विरोध के कारण उन्होंने त्याग पत्र दे दिया। तत्पश्चात् इमाम हुसैन को यजीद ने क़त्ल करके

इस्लाम को विखण्डित कर दिया।

इसके पश्चात् इमामों का युग चला। सुन्नी मत के अनुसार ४ इमाम हुए। शिया मत के अनुसार १२ इमाम हुए, जिनमें से १२वें इमाम आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्ज़मां (श्री प्राणनाथ जी) हैं। जिसके पास हकीकत और मारिफत वाला इल्म-ए-लदुन्नी होगा, वही इमाम महदी की शोभा को धारण करता है, किन्तु शरीअत की राह पर चलने वाले अन्य मुस्लिम ही अपने को सच्चा मुसलमान मानते हैं और अपने में इमाम महदी की खोज करते हैं। वे अन्तिम इमाम मुहम्मद महदी पुत्र अब्दुल्ला को ही इमाम मुज़दिद अलिफ सानी मानते हैं।

और मुसरिकों के दिल में, खाइस थी कछु और।
पैगम्बर की वारसी, बलीद मुगीर के पहुंचे ठौर।।१५।।

मुश्रिकों, अर्थात् बादशाह के दरबारियों, के दिल में कुछ और ही चाहना थी। आखरूल इमाम मुहम्मद महदी का दावा करने वाले मोमिन वलीद और मुबीर के स्थान दिल्ली पहुँचे।

भावार्थ– इस चौपाई में ज़ाहिरी किस्से को बातिनी अर्थ में प्रयुक्त किया जाएगा। जिस प्रकार मुहम्मद साहिब के विरोधी लोगों को मुश्रिक कहा गया है, उसी प्रकार आखिरी मुहम्मद श्री प्राणनाथ जी के विरोधी लोगों को यहाँ मुश्रिक कहा गया है, जो औरंगज़ेब के दरबारी थे। इनकी दिली ख्वाहिश यह थी कि भले ही हिन्दू तन में इमाम महदी क्यों न आ जायें, लेकिन हम उन्हें स्वीकार नहीं करेंगे क्योंकि ऐसा करने पर हमारी शरातोरा की सल्तनत चली जाएगी।

औरंगज़ेब के दरबार के चार सदस्यों– काजी शेख इस्लाम, शेख निज़ाम, रिज़वी खान, और आकिल खान– के निर्णय के आधार पर सिद्दीक फौलाद जुल्म ढाया करता था। जिस प्रकार मुआविया का सलाहकार मुबीर तथा मुआविया के बेटे यजीद का सलाहकार बलीद था, और इन लोगों ने अली के वारिस हसन हुसैन पर जुल्म ढाया और उन्हें शहादत देने (शहीद होने) के लिए मजबूर किया, उसी प्रकार पैगम्बर की वारसी इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्ज़मां (सैयद मुहम्मद इब्न–ए–इस्लाम) के ज़ाहिर होने का दावा करने वाले १२ सुन्दरसाथ जब दिल्ली बादशाह के दरबार में पहुँचे, तो मुबीर और वलीद के स्वरूप पाँचों दरबारियों ने इनके साथ दुर्व्यवहार किया।

आयत– वल्लाहु यख़्तस़्सु बि–रहमतिही मंय्यशाऊ।

(कुरआन १/२/१०५)

और परमेश्वर तो जिसको चाहता है, अपनी कृपाशीलता के साथ विशिष्ट कर लेता है।

मायने– देवे खुदा खासतर, वही अपनी पैगम्बरी।
जिन किसी को चाहे, तिन ऊपर उतरी।।१६।।

जब परब्रह्म विशेष रूप से अपना सन्देश संसार में भिजवाना चाहते हैं, तो अपनी इच्छानुसार जिसका चयन करते हैं, उसके ऊपर उनकी वाणी अवतरित होती है।

भावार्थ– परब्रह्म की इच्छा सत्य और पूर्ण न्याय के आधार पर होती है। जिन तीन सूरतों (बसरी, मल्की, हक्की) के माध्यम से उनका इल्म संसार में फैला, यदि

कोई सांसारिक व्यक्ति उनकी नकल उतारना चाहे तो उसे असफलता ही हाथ लगती है।

आयत– वल्लाहु जुल्फ़ज़्लिल्–अज़ीम।

परमेश्वर अत्यन्त विद्वता का स्वामी है।

मायने– खुदा बुजरक साहेब, चाहे जिस दे फजीलत।
दे पैगम्बरी तिन को, भांत करामात अजमत।।१७।।

परब्रह्म सबके स्वामी और सबसे महान हैं। अपनी इच्छानुसार वह जिसे सम्मान देना चाहें, देते हैं, जिसको सन्देशवाहक बनाना चाहते हैं, बना देते हैं, अपनी अलौकिक शक्तियाँ देकर उससे चमत्कार दिखला सकते हैं, और समस्त संसार में उसे प्रतिष्ठित करवा सकते हैं।

बुजरकी जो इसकी, न आवे बीच सुमार।

मेहरबानगी उसकी, जादां गिनती पार।।१८।।

परब्रह्म की महिमा को कभी भी सीमाबद्ध नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार उसकी मेहर (कृपा) भी अनन्त है जिसका माप नहीं किया जा सकता।

आयत– मा नन्सख मिन् आ–य़तिन् औ नुन्सिहा

नअति बिख़ैरिमिम् नहा औ मिसिल अलम तअ़्लम।

हम जिस आयत को रद्द कर देते हैं या भुला देते हैं, तो उससे अच्छी या वैसी ही और आयत भेज देते हैं।

मायने– जिनको मैं रद करों, ले माएने कुरान से।

ऊपर माफक मसलत, होसी खलकों में।।१९।।

कुरआन की शरीअत की जिन बातों को सनद ग्रन्थ की हकीकत एवं मारिफत की बातों से मैं रद्द कर देता हूँ, संसार के लोग उपरोक्त कथनों के ऊपर बहुत अधिक विचार–विमर्श करेंगे।

भावार्थ– तारतम ज्ञान के अवतरित होने से पहले वेद एवं कुरआन की अपार महिमा रही है, लेकिन इनसे किसी को भी परब्रह्म के धाम, स्वरूप, एवं लीला का बोध नहीं हो पा रहा था, किन्तु तारतम वाणी के अवतरण ने सृष्टि के प्रारम्भ से चली आ रही आध्यात्मिक समस्याओं का समाधान कर दिया। इसलिए इस चौपाई के दूसरे चरण में "कुरान" शब्द का आशय "सनद" ग्रन्थ से है।

और माफक जमाने उसके, भुलावना करे उनको।
निकाले इनों के दिल से, फरामोस होवे इन मों।।२०।।

संसार में शरीअत का प्रभाव अधिक है जो सबको फरामोशी में भुलाए रखता है। संसार के लोग शरीअत में फँसे होने के कारण ही माया की नींद में डूबे रहते हैं। इसलिए मैं हकीकत और मारिफत का जो ज्ञान लाया हूँ, वह इनके दिल में डालकर शरीअत के कथनों को निकाल देता हूँ।

भावार्थ– सारा संसार शरीअत और तरीकत की बन्दगी में ही उलझा रहता है, लेकिन इससे किसी को परब्रह्म का साक्षात्कार नहीं हो पाता। हाँ, भक्ति का अहं अवश्य बढ़ा रहता है। यथार्थ बोध के लिए हकीकत और मारिफत की राह अपनाने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी का कथन है–

इस्क बंदगी अल्लाह की, सो होत है हजूर।

फरज बंदगी जाहेरी, सो लिखी हक से दूर।।

खुलासा १०/५८

ल्याऊं बेहतर उससे, मनसूक जो आइतें।

तिनका दृष्टान्त देत हों, तुम सुनियो चित दे।।२१।।

शरीअत और तरीकत की जिन आयतों को रद्द कर दिया है, उनसे बेहतर हकीकत और मारिफत की आयतें (चौपाइयाँ) मैंने सनद ग्रन्थ में अवतरित की हैं। उसे मैं एक दृष्टान्त देकर समझाता हूँ, आप चित्त देकर सुनिए।

एक गाजी मानिन्द, साथ दस तन के।

तिस दसों को रद्द करके, किए दो तन बराबर ए।।२२।।

शरीअत के कथनानुसार धर्म पर न्यौछावर होने वाला एक मुस्लिम दस बहुदेववादी हिन्दुओं के बराबर होता है, किन्तु तारतम ज्ञान के प्रभाव से जब सबकी एक परब्रह्म पर निष्ठा हो गयी तो शरीअत की यह मान्यता रद्द हो गयी, और एक हिन्दू तन या एक मुस्लिम तन में किसी भी तरह का भेद नहीं रह गया। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण वे १२ सुन्दरसाथ हैं, जिन्होंने औरंगज़ेब से होने वाले धर्म युद्ध में एक समान वेश-भूषा तथा खान-पान को बनाए रखा।

भावार्थ- इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "दो तन" को बराबर करने का आशय हिन्दू और मुस्लिम के बाह्य तन को हटाकर आत्म-स्वरूप को देखने से है। १२ सुन्दरसाथ में २ तन (शेख बदल और कायम मुल्ला) मुसलमान थे, तथा १० तन (लालदास, भीमभाई,

खिमाई भाई, चिन्तामणि, चंचल, दयाराम, गंगाराम, बनारसी, सोम जी, और नागजी) हिन्दू थे। बाह्य दृष्टि से देखने पर ऐसा लगता है कि दोनों मुस्लिम सुन्दरसाथ दस हिन्दू सुन्दरसाथ के बराबर हैं, किन्तु यथार्थ में ऐसा नहीं है।

हिन्दू–मुस्लिम भेदभाव वाली १० तन की (मुस्लिम को हिन्दू से १० गुना शक्तिशाली कहने वाली) मान्यता को रद्द करके दोनों को आत्मिक दृष्टि से एक कर देना ही दो तनों को बराबर कर देना है।

मैं ल्याऊं मानिन्द उनके, और करूं मैं रद्द।

वास्ते नफे मोमिन के, माफक सवाब इनके कद्द।।२३।।

परमधाम की ब्रह्मसृष्टियों के अनुकूल ही मैंने हकीकत और मारिफत के ज्ञान का अवतरण किया है, और

शरीअत की बातों को रद्द कर दिया है। ब्रह्मसृष्टियों की अपार महिमा को देखते हुए, उन्हें सुयश तथा आत्मिक लाभ देने के लिए ही मैंने ऐसा किया है।

साथ रिवायत मसलत के, ए फिरना किबले का।
बेतल मुकद्दस से, तरफ काबे के हुआ।।२४।।

नमाज पढ़ने की दिशा पर होने वाले विचार-विमर्श के कारण, अल्लाह द्वारा जिबरील के माध्यम से सन्देश आया कि इनके नमाज की दिशा बदल दी जाए और मक्का की तरफ नमाज पढ़ने की छूट दी जाये, जिसके परिणामस्वरूप सभी मुस्लिम, यरोशलम में स्थित वैतुलमुकद्दस की तरफ मुँह करके नमाज़ पढ़ने की जगह, मक्का में स्थित काबे की तरफ मुँह करके नमाज़ पढ़ने लगे।

भावार्थ– यरोशलम में बैतुलमुकद्दस ऐसा स्थान है, जिसको यहूदी लोग अपना मन्दिर मानते हैं। मुस्लिम उसे अक्सा मस्जिद कहते हैं तथा ईसाई उसे अपना चर्च समझते हैं। प्रारम्भ में मुस्लिम लोग उसी बैतुलमुकद्दस की तरफ ही मुँह करके नमाज़ पढ़ा करते थे, तो यहूदी लोगों ने हँसी उड़ानी शुरू कर दी कि आखिर इन्हें भी हमारे ही धर्म स्थान की तरफ सिर झुकाना पड़ता है। तब जिबरील द्वारा सन्देश दिया गया कि इन लोगों को काबे की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ने को कहा जाये।

इसका गुह्य अर्थ यह है कि सुन्दरसाथ तारतम ज्ञान के अवतरण के पहले गादी पर विराजमान बिहारी जी को ही अपना धाम धनी मानता था, किन्तु तारतम वाणी ने स्पष्ट कर दिया कि युगल स्वरूप तो श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान होकर लीला कर रहे हैं।

इसी प्रकार अरब से आने वाले चारों वसीयतनामों से भी यह स्पष्ट हो गया कि इमाम महदी हिन्द में जाहिर हो चुके हैं, तथा जिबरील फरिश्ता नूरी झण्डे को इमाम महदी के पास लेकर चला गया। साथ ही साथ कुरआन की शफकत तथा फकीरों की बरकत भी इमाम महदी के पास चली गयी।

ना जानत लोग सरियत के, खिताब मुनकरों का रद्द।
ए मुनकरी करी पैगम्बर से, तो हुए स्याह मुंह जरद।।२५।।

शरीअत की राह पर चलने वाले बादशाह के दरबारियों को यह मालूम ही नहीं था कि इमाम महदी के पैगाम को न मानने से उनकी सारी शोभा ही छिन गयी। गुनाहों के कारण उनका मुँह काला हो गया तथा न्याय के दिन मिलने वाली दोज़ख की सज़ा के डर से इनके चेहरे पर

पीलापन छा गया।

भावार्थ– इतिहास साक्षी है कि जब से औरंगज़ेब ने श्रीजी के पैग़ाम को ठुकराया, तभी से मुगल साम्राज्य पतन के गर्त में गिरने लगा। उसके परिवार के सभी सम्बन्धी एक–एक कर दुनिया से चल बसे तथा मुगल साम्राज्य भी छिन्न–भिन्न होकर नष्ट हो गया। आज उस मुगल वंश का एक भी व्यक्ति इस दुनिया में नहीं है।

बीच रद्द करनें जहूदों के, काफर लड़ाई करते।
होवे इन बात से पसेमान, खुदा परवाह नही इनके।।२६।।

हिन्दुओं का विनाश करने के लिए मुसलमान लोग उनसे लड़ाई करते हैं। इस गुनाह से उन्हें न्याय के दिन शर्मिन्दगी झेलनी पड़ेगी। ऐसे लोगों पर परब्रह्म अल्लाह

तआला की कृपा कभी भी नहीं होती।

ए है हिकमत इलाही, करी पातसाह मसलत।
जो गाफिल हुकुम पैगाम से, सो रद्द बीच कयामत।।२७।।

इस सनद ग्रन्थ में अखण्ड का तत्वज्ञान है। इस ज्ञान के आधार पर सुन्दरसाथ ने औरंगज़ेब बादशाह से बातचीत करने का प्रयास किया था। जिन्होंने, श्रीजी के आदेश से गए हुए, सुन्दरसाथ से सन्देश लेने में लापरवाही दिखायी, वे लोग कियामत के समय नष्ट हो जायेंगे।

फुरमाया खुदाए नें, ए थे भूलन वाले।
तो ए हुए मुनकर, तैयार हुए लड़ने के।।२८।।

अल्लाह तआला ने कुरआन में पहले से कह रखा था कि

ये काफिर लोग सत्य को भूल जायेंगे। इसलिए उन्होंने इमाम महदी के सन्देश को स्वीकार नहीं किया और उल्टा लड़ने को तैयार हो गए।

नही रखते हो मालूम, अब जानोगे तुम।
जब खराब होओगे, हक के हुकुम।।२९।।

मेरे पैग़ाम को नकारकर मोमिनों पर जुल्म ढाने वालों! तुम्हें अल्लाह की शक्ति का अन्दाज़ा नहीं है। जब अल्लाह तआला के हुक्म से नेस्तो-नाबूद हो जाओगे, तब तुम्हें उनकी शक्ति का अन्दाज़ा होगा।

भावार्थ- श्रीजी के मुख से निकले हुए ये शब्द ही औरंगज़ेब सहित मुगल साम्राज्य के विनाश का कारण हैं।

आयत– अन्नल्ला–ह अ़ला कुल्लि शैइन् क़दीर।

(कुरआन १/२/१०६)

क्या तुम्हें ज्ञात नहीं है कि परमेश्वर हर किसी पर सामर्थ्यवान है।

मायने– नेस्त करने ऊपर, इनों के ताई खुदाए।

है सब चीजों पर साबती, कादर है इप्तदाए।।३०।।

सत्य को झुठलाने वाले ऐसे नास्तिकों को अल्लाह तआला नष्ट कर देता है। वह सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रत्येक वस्तु को बनाने में पूर्ण समर्थ है।

चाहे ताको रद्द करे, करे चाहे नही पैदाए।

है सत्ता सब ऊपर, जो चाहे सो करे खुदाए।।३१।।

अल्लाह तआला जिसे चाहे नष्ट कर दे और जिसे चाहे पैदा कर दे। वह सर्वोपरि है अर्थात् सर्वश्रेष्ठ है। वह जो चाहे कर सकता है।

आयत–

अलम् तअ़्लम् अन्नल्लाह लहूमुल्कुस्समावाति वल्अ़र्जि।

(कुरआन १/२/१०७)

तुम्हें ज्ञान नहीं कि आकाशों और पृथ्वी की सत्ता परमेश्वर की ही है।

मायने– साथ मोमिनों के तहकीक, है बेसक खुदाए।
सब लायकी तिनको, ए लिखा इस्तदाए।।३२।।

इस बात में कोई भी संशय नहीं है कि निश्चित रूप से

परब्रह्म ब्रह्मसृष्टियों के साथ हैं। सृष्टि के प्रारम्भ से ही धर्मग्रन्थों में लिखा है कि उसमें सब कुछ करने का सामर्थ्य है।

पातसाही जिमी आसमान की, है उनको सजावार।
जैसा चाहे तैसा करे, कोई न बरजन हार।।३३।।

धरती और आकाश पर स्वामित्व की योग्यता एकमात्र उसी में है। उसकी जो इच्छा हो, वही कर सकता है, उसे रोकने वाला कोई नहीं है।

आयत–

व मा लकुम् मिन् दूनिल्लहि मिंव्वलिय्ंयव ला नसीर।

(कुरआन १/२/१०७)

और परब्रह्म के अतिरिक्त कोई भी तुम्हारा मित्र या सहायक नहीं है।

मायने– छूट खुदाए तुमको, कोई न दोस्त होए।
नफा पहुंचावे दीन में, ढूंढ़े पाइये न कोए।।३४।।

अल्लाह तआला के अतिरिक्त अन्य कोई भी आपका सच्चा दोस्त नहीं है। उसके अतिरिक्त ढूँढने पर भी ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा , जो धर्म की राह में लाभ पहुँचाने वाला हो, अर्थात् यथार्थ सत्य में ले जाने वाला हो।

महामत कहें ऐ मोमिनों, ए कुरान की साख।
ए तुमारी बीतक, कै भांतों लिखी लाख।।३५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह कुरआन

की साक्षी है, जिसमें आपकी बीतक अनेक (लाखों) प्रकार से लिखी हुयी है।

द्रष्टव्य– "लाख" का कथन अतिश्योक्ति अलंकार के रूप में है, जिसका आशय "बहुत" से होता है।

प्रकरण ।।४४।। चौपाई ।।२२३६।।

लैल–तुल–कद्र

ऐसी साहेदियां कई, हैं बीच अल्लाह कलाम।

सब बातें एही लिखी, अब सब पढ़ेंगें इसलाम।।१।।

कुरआन में इस प्रकार की बहुत सी साक्षियाँ संकेतों के रूप में लिखी हुई हैं। उन सब में मोमिनों का वृत्तान्त इसी प्रकार संकेतों में लिखा हुआ है। अब इल्म –ए– लदुन्नी (तारतम ज्ञान) के उजाले में सब लोग कुरआन को पढ़कर इस्लाम के वास्तविक स्वरूप को जान जायेंगे।

ए जो किस्से कुरान के, अलफ लाम मीम से लेकर।

सो जहां लो खतम हुआ, सिपारे आम लो एही खबर।।२।।

कुरआन अलिफ् लाम् मीम के पहले सिपारे से प्रारम्भ

होता है और तीसवें सिपारे पर समाप्त होता है। इन सबमें किस्सों के माध्यम से संकेत में ब्रह्मसृष्टियों का वृत्तान्त वर्णित है।

छत्तीसमी सूरत लों, कुल अऊजो बेरब्बनास।
जहाँ कुरान खतम हुआ, सब किस्से मोमिनों के खास।।३।।

कुरआन के ३०वें पारे की ३६वीं सूरत "कुल अऊजो बे रब्बिनास" के साथ ही कुरआन पूर्ण हो जाता है। इनमें वर्णित सभी प्रसंग अलग-अलग नामों से मोमिनों के ही हैं।

ए साहिदी इन्ना इन्जुलना, लिखी बीच इन सूरत।
रसूल साहिब बातां करते, आगे असहाबों के इत।।४।।

इन्ना इन्जुलना सूरत में सूरा लैल में यह साक्षी लिखी

हुयी है कि एक बार मुहम्मद साहिब अपने साथियों के साथ चर्चा कर रहे थे कि।

एक गाजी बनी असराईल नें, लोहा बांधा महिनें हजार।
बीच राह खुदाए के, तरफ परवरदिगार।।५।।

इसराईल के पुत्र ने एक हज़ार महीने तक खुदा की राह में माया से युद्ध किया।

भावार्थ– इब्राहीम पैगम्बर की दो पत्नियाँ थीं– हज़रा और सारा। हज़रा से इस्माईल का जन्म हुआ तथा सारा से इस्हाक् का जन्म हुआ। लोकनिन्दा के कारण इब्राहीम ने हज़रा को अपने छोटे पुत्र इस्माईल के साथ अरब से निष्कासित कर दिया था। बाल्यावस्था में प्यास से तड़पते हुए इस्माईल ने जो जल निकाला, वह आब–ए–जमजम कहलाता है। इब्राहीम की दूसरी पत्नी सारा से

इस्हाक् की उत्पत्ति हुयी। इस्हाक् के पुत्र याकूब, जिन्हें इस्राईल की उपाधि मिली, के अनुयायी यहूदी कहलाये, जिसका क्षेत्र फिलिस्तीन, इस्राईल, आदि है।

उपरोक्त चौपाई में बनी इस्राईल का तात्पर्य श्री प्राणनाथ जी के अनुयायी सुन्दरसाथ से है, जिन्होंने अपने प्रियतम अक्षरातीत को पाने के लिए माया से युद्ध किया।

तब यार ताज्जुब भये, या रसूल अलेहु सलाम।
हम छोटी उमर से, क्यों पहुंचे इसलाम।।६।।

तब मुहम्मद साहिब के साथियों को आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा कि हे रसूल अलैहि इस्लाम! हम अपनी इस छोटी सी उम्र में इस्लाम को कैसे जान सकते हैं?

एह सकस कौन था, जिनका एह मरातब।

तब जवाब रसूलें दिया, जबराईल एह सूरत लाया तब।।७।।

वह व्यक्ति कौन था, जिसकी यह इतनी गरिमा है कि वह हज़ार महीने तक अकेले युद्ध करता रहा? तब जिबरील के द्वारा यह सूरत (सूरे कद्र) अवतरित करने पर मुहम्मद (सल्ल.) ने उत्तर दिया।

आयत– इन्ना अन्जलनाहु फ़ी लै–ल़तिल् क़दरि (१)

व मा अद्रा–क मा लै–लतुल क़द्रि (२)

ख़ैरूम् मिन् अल्फ़ि शह्रन (३)

त–नज़्ज़लुल्–मलाइकतु वरुहु फ़ीहा

बि–इज्नि रब्बिहिम् मिन् कुल्लि अम्रिन् (४)

सलामुऩ हि–य ह़त्ता मत़–ल़अिल् फ़ज्रि (५)

(कुरआन मजीद पारा अ़म–म ३०, सूरः कद्र ९७, आयत १–५)

१. हमने इसे (कुरआन को) शबे कद्र में अवतरित किया।

२. और आपको ज्ञात है कि शबे कद्र क्या है?

३. शबे कद्र हज़ार महीने से उत्तम है।

४. उसमें फ़रिश्ते (देवता) और रूहें (ब्रह्मआत्मायें) अपने परब्रह्म के आदेश से प्रत्येक कार्य हेतु उतरते हैं।

५. यह (रात्रि) प्रातःकाल के होने तक सुरक्षित है।

मायने– मैं उतारे बीच रात के, करो तुम विचार।

किए साथ लैल तुल कदर में, ब्रज रास में विहार।।८।।

हे साथ जी! इस प्रकार की लम्बी रात्रि (लैल तुल

कद्र), जिसके प्रथम दो चरणों में तुमने व्रज और रास में लीला की, इसका तुम विचार करो।

फेर तीसरे लैल तुल कदर कही, सो तीसरा तकरार।
हजार महिने से बेहतर, बांधे इने हथियार।।९।।

पुनः लैल तुल कद्र (इस प्रकार की रात्रि) के तीसरे चरण (तकरार) में परमधाम की आत्मायें अवतरित हुयीं। यहाँ पर इन्होंने १००० माह से भी अधिक समय तक इश्क और ईमान रूपी हथियार लेकर माया से युद्ध किया।

हजार महिने के तेरासी बरस, भए महिना ऊपर चार।
इन तें कहे बेहेतर, ताको मोमिन करो बिचार।।१०।।

एक हजार महीने के ८३ वर्ष और ४ माह होते हैं।

जागनी लीला का इससे भी अधिक श्रेष्ठ समय इसके बाद आता है। हे साथ जी! आप उसके विषय में विचार कीजिए।

भावार्थ– वि.सं. १६३८ से १७२२ तक ८३ वर्ष और ४ माह पूरे हो जाते हैं। वि.सं. १७२२ में श्रीजी दीव बन्दरगाह पधारे। १७२२ से जागनी का तीव्र दौर चलता है, जिसमें श्रीजी दीवबन्दर, ठट्ठानगर, मस्कत, अब्बास, सूरत में जागनी लीला करते हैं। वहाँ से ५०० सुन्दरसाथ के साथ मेड़ता होते हुए दिल्ली पहुँचते हैं। वहाँ से हरिद्वार में विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप में सुशोभित होते हैं। तत्पश्चात् औरंगज़ेब से शरातोरा के विरुद्ध युद्ध छेड़ा जाता है।

वहाँ से उदयपुर, मन्दसौर, औरंगाबाद, रामनगर होते हुये ५००० सुन्दरसाथ के साथ पन्ना जी पहुँचते हैं,

जहाँ पर परमधाम की चारों किताबें (खिल्वत, परिक्रमा, सागर और श्रृंगार) का अवतरण होता है। सुन्दरसाथ को श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में प्रत्यक्ष युगल स्वरूप के दर्शन होते हैं और सभी कृत्य-कृत्य हो जाते हैं। इसलिए जागनी के इस कार्यकाल को पहले के १००० महीनों से अधिक श्रेष्ठ माना गया है।

इनों लोहा बांधिया, एक सौ बीस बरस।

दो नाजी गिरोह नाजल भई, आई उतर अजीम अरस।।११।।

इस जागनी लीला में ब्रह्मसृष्टियों ने १२० वर्ष तक माया से युद्ध किया। इस लीला में निजधाम से दो सृष्टियाँ अवतरित हुईं, ब्रह्मसृष्टि और ईश्वरीय सृष्टि। ये दोनों ही धर्म पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाली हैं।

भावार्थ- "लोहा लेना" या "मोर्चा बाँधना " एक

मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है, युद्ध करना। ईश्वरीय सृष्टि के मूल तन अभी नहीं हैं, इसलिए वे वि.सं. १६३८ के पहले रास के तनों में ही विद्यमान थीं , जबकि ब्रह्मसृष्टियाँ अपने मूल तनों में परमधाम चली गयी थीं। इस प्रकार श्री श्यामा जी सहित ब्रह्मसृष्टियों की सुरता अपने उन मूल तनों से आईं, जो परमधाम में हैं। जबकि ईश्वरीय सृष्टि रास मण्डल के नूरी तनों से आईं। अक्षर ब्रह्म और महालक्ष्मी की सुरता अक्षर धाम में विराजमान अपने मूल तन से आई है।

एक गिरोह मलायक नूर से, आई रूहें अरस अजीम।
तामें सिरदार तीनों सूरत, कही अलिफ लाम मीम।।१२।।

ईश्वरीय सृष्टियाँ अक्षर से अर्थात् अक्षर ब्रह्म के ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत रास मण्डल के तनों से आईं। इसी प्रकार

ब्रह्मसृष्टियाँ सर्वोपरि परमधाम में विराजमान अपने मूल तनों से आईं। इस जागनी लीला में तीनों सूरतों– बसरी, मलकी और हकी– की महत्वपूर्ण भूमिका है। इन्हें ही अलिफ, लाम और मीम भी कहते हैं। दूसरे शब्दों में इन्हें मुहम्मद (सल्ल.), सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी, और श्री प्राणनाथ जी कहते हैं।

नव सै नब्बे नव मास से, रूह अल्ला जनम का नाम।
तहाँ से एक सौ बीस बरस लों, लड़ाई करी तमाम।।१३।।

मुहम्मद (सल्ल.) को पर्दे में (देह त्याग किये) हुये जब ९९० वर्ष ९ माह व्यतीत हो गये, तब श्री देवचन्द्र जी का जन्म (श्री श्यामा जी का प्रकटन) वि.सं. १६३८ में हुआ। उसके पश्चात् १२० वर्षों तक, अर्थात् १७५८ तक, परमधाम की आत्माओं ने माया (दज्जाल या

कलियुग) से युद्ध किया।

इन लड़ाई के बीच में, मोमिन मुतकै दरम्यान।
लड़ाई करी दज्जाल सों, लेकर दृढ़ ईमान।।१४।।

दज्जाल (कलियुग) के साथ होने वाले इस युद्ध में ईश्वरीय सृष्टि और ब्रह्मसृष्टियों ने प्रियतम अक्षरातीत के प्रति अपना अटूट ईमान (विश्वास) लेकर युद्ध किया।

तिन लड़ाई के किस्से कुरान में, लिखके भेजे हक।
सो खोलें अपने आप ही, या तीन सूरत रसूल बुजरक।।१५।।

माया के साथ होने वाले इस युद्ध के अनेक प्रसंग धाम धनी द्वारा कुरआन के अन्दर संकेतों में लिखवाये गये हैं, जिनके भेद स्वयं अक्षरातीत जानते हैं या मुहम्मद साहिब की तीन सूरतें।

भावार्थ– मुहम्मद का अर्थ होता है– महिमा से परे। मुहम्मद किसी शरीरधारी व्यक्ति का नाम नहीं है, अपितु अक्षरातीत की शक्तियों ने तीन अलग–अलग रूपों में लीला की है, जिन्हें मुहम्मद कहते हैं। इसलिए कहा गया है कि मुहम्मद अल्लाह का नूर है। कुरआन के सूरे मुहम्मद में यह वर्णन है कि जब दुनियाँ नहीं थी तब भी मुहम्मद थे, और जब दुनिया नहीं रहेगी तब भी मुहम्मद रहेंगे।

अरब में बसरी सूरत को रसूल (सन्देशवाहक) के रूप में आना पड़ा था, इसलिए मलकी और हकी को भी मुहम्मद की सूरत कह दिया जाता है क्योंकि इन तीनों के साथ मुहम्मद शब्द जुड़ा होता है। जबकि वास्तविकता यह है कि ये तीनों श्री राज जी की सूरते हैं। बसरी सूरत में जहाँ अक्षर की आत्मा लीला करती है, मलकी सूरत में श्री श्यामा जी की आत्मा, और हकी सूरत में श्री

इन्द्रावती जी की आत्मा पाँचों शक्तियों (जोश जिबरील, श्री श्यामा जी, अक्षर ब्रह्म की आत्मा, श्री राज जी की आवेश शक्ति, और जाग्रत बुद्धि की शक्ति) के साथ लीला करती है। आगे की चौपाई इसी तथ्य को दर्शाती है।

रसूल मुहम्मद रूह अल्ला, और मेंहदी इमाम।
ए चारों एकै तन हैं, ताको नाम इसलाम।।१६।।

अक्षरातीत श्री राज जी, मुहम्मद (सल्ल.), सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी, और श्री प्राणनाथ जी– ये चारों एक ही स्वरूप हैं और इनके द्वारा परमधाम को पाने का दर्शाया हुआ मार्ग निजानन्द (इस्लाम) है।

भावार्थ– निजानन्द या इस्लाम शब्द से तात्पर्य किसी साम्प्रदायिक या मज़हबी मान्यता से नहीं है। इस शब्द

को मात्र पूजापाठ या रोज़ानामा, जकात तथा जिहाद की अवधारणाओं में नहीं बाँधा जा सकता, अपितु इस्लाम या निजानन्द का तात्पर्य तीनों सूरतों के द्वारा लाए हुये परमधाम के उस तत्व ज्ञान में निहित है जो इस सृष्टि में आज तक नहीं था।

इन सेती जुदा पड़े, सोई है मुसरक।
जो कोई इनों से लड़े, सोई दज्जाल बेसक।।१७।।

जो इन चारों स्वरूपों के निर्देशों से अपने को अलग रखे, निश्चित रूप से वह नास्तिक है, और जो कोई इनका विरोध करता है, उसके दज्जाल होने में कोई संशय नहीं है।

भावार्थ– इस चौपाई को पढ़कर उन सुन्दरसाथ को आत्म–मन्थन करना चाहिए कि श्री प्राणनाथ जी को

सन्त, कवि, शिष्य या आचार्य कहने के गुनाह का क्या प्रायश्चित हो सकता है?

उतरी गिरोह अरस से, इनों के रब हुकुम।
कुल आमर इसलाम की, दई हक सुभान इन कुम।।१८।।

अक्षरातीत श्री राज जी के आदेश से परमधाम की आत्मायें एवं ईश्वरीय सृष्टि इस नश्वर जगत में अवतरित हुईं। धाम धनी ने ही इन्हें निजानन्द (इस्लाम) के तत्व ज्ञान को फैलाने की कुल आदेश शक्ति दे रखी है।

भावार्थ– परमधाम की आत्माओं में अपने प्रियतम के प्रति अटूट प्रेम और विश्वास (इश्क और ईमान) होता है। इस क्षेत्र में उनकी बराबरी सृष्टि का कोई भी प्राणी नहीं कर सकता, इसलिए धाम धनी ने उनके दिल में अपना धाम बनाया है। सारे ब्रह्माण्ड को अखण्ड मुक्ति देने का

मुद्दा भी इन्हीं के ऊपर है। "मुक्त देसी ब्रह्माण्ड को, आए ब्रह्म आतम सत" कीर्तन का यह कथन इसी तथ्य को प्रदर्शित करता है।

इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "हुकुम" का आशय तारतम वाणी की एक चौपाई के कथन से समझा जा सकता है-

सो तो दिया मैं तुमको, सो खुले न बिन तुम।
जो मेरी सुध दयो औरों को, तित चले तुमारा हुकम।।

सिनगार २९/२९

अर्थात् तारतम वाणी के प्रकाश में परमधाम की आत्मायें जिस-जिस को अक्षरातीत की पहचान कराती जायेंगी, उस-उस व्यक्ति को बेहद मण्डल की अखण्ड मुक्ति प्राप्त होगी।

जो महाप्रलय से पहले परमधाम का ज्ञान प्राप्त नहीं कर

पायेगा, उसे ७वीं या ८वीं मुक्ति तो अवश्य मिलेगी , किन्तु प्रायश्चित की अग्नि में जलकर।

जहाँ लों इनकी आमर, सो अखण्ड होए हैयात।
सो लैल मेट फजर करें, सो पहुंचे असल जात।।१९।।

जहाँ तक ब्रह्मात्माओं के आदेश की शक्ति फैलेगी , अर्थात् तारतम ज्ञान का प्रकाश फैलेगा, वहाँ तक के प्राणी बेहद मण्डल की अखण्ड मुक्ति को प्राप्त करेंगे। ब्रह्मात्माएँ जिसके हृदय की अज्ञानता रूपी रात्रि का अन्धकार मिटाकर अखण्ड ज्ञान का उजाला कर देंगी, वे अपने शुद्ध वास्तविक स्वरूप को प्राप्त हो जाएंगे।

भावार्थ– ब्रह्मसृष्टि का वास्तविक स्वरूप परात्म है। उनके जीव सत्स्वरूप की पहली बहिश्त में नूरी तन को प्राप्त कर लेंगे। पञ्चभौतिक तनों में बँधा हुआ जीव (बद्ध

चैतन्य) विकारग्रस्त होता है। तारतम ज्ञान के प्रकाश में, जब वह अपने को परब्रह्म का अंग मानने लगता है, तो उसकी यह भावना उसे प्रकृति से परे ले जाती है। इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "असल जात" का यही आशय है।

इन लैल को सब कोई, ढूंढ़त चौदह तबक।
सो किने न पाई आज लों, सो मोमिन खोलें मेहर हक।।२०।।

धर्मग्रन्थों में वर्णित लैल-तुल-कद्र की इस रात्रि को, जिसमें व्रज, रास और जागनी की लीला हुई है, चौदह लोकों के इस ब्रह्माण्ड का प्रत्येक मनीषी जानने की जिज्ञासा रखता है, किन्तु आज तक कोई भी इस रहस्य को नहीं जान पाया कि महारास की लीला कहाँ खेली गयी? परब्रह्म के साथ लीला करने वाली सखियाँ कौन

थीं? परब्रह्म की कृपा से यह गुह्यतम् रहस्य मात्र ब्रह्मसृष्टियों के पास है।

सबों पहुंचाए कदमों, खोलें भिस्त के द्वार।

सब दौड़ी खलक टिड्डी ज्यों, तिनों पाया परवरदिगार।।२१।।

तारतम ज्ञान के प्रकाश में ब्रह्मसृष्टियों ने सबको प्रियतम अक्षरातीत के स्वरूप की पहचान करा दी और उनके लिए अखण्ड मुक्ति का द्वार खोल दिया है। सारा संसार तारतम ज्ञान के प्रकाश में टिड्डियों की तरह दौड़ते हुए आएगा और उन्हें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द का दर्शन होगा।

एही सिफत मोमिनों की, सो आवत नही जुबान।

कह कह के केता कहूं, नहीं ताकत सुनने कान।।२२।।

ब्रह्मात्माओं की यही अपार महिमा है, जिसका वर्णन मेरी जिह्वा नहीं कर सकती। कहते-कहते मैं कितना कहूँ? किसी के कानों में यथार्थ रूप में इसे सुनने की शक्ति ही नहीं है।

देख अपनी आँख सों, सब पुकारेगी आम।
उठा परदा मुँह मुसाफ से, सबों खोले अल्ला कलाम।।२३।।

हे बादशाह! तुम अपने अन्दर की आँखों से सत्य को देखो। परमधाम की आत्माएँ इस संसार में आ चुकी हैं, इस बात को सारी दुनियाँ भी पुकार-पुकार कर कह रही है। कुरआन के मुख से पर्दा उठ चुका है। तारतम ज्ञान के प्रकाश में कुरआन के गुह्य भेदों को ब्रह्ममुनि (मोमिन) सबके लिए उजागर कर रहे हैं।

जुध किया दज्जाल ने, जाहिर हुआ सोए।

तुमसों मैं केता कहों, अब सब में जाहिर होए।।२४।।

यह बात चारों ओर फैल चुकी है कि दिल्ली में शरातोरा को मानने वालों ने १२ सुन्दरसाथ का विरोध किया और उन्हें यातनायें भी दीं। आपसे मैं इस बात पर कितना कहूँ, अब यह घटनाक्रम चारों ओर उजागर हो ही जाएगा।

महामत कहे ऐ मोमिनों, नेक साहिदी दई तुम।

अब तुमको बीतक कहों, तुम याद करो मिल कुम।।२५।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे सुन्दरसाथ जी! यह मैंने कुरआन के विषय में थोड़ी सी साक्षी आपको दी है। अब मैं आपसे आगे के घटनाक्रम का वर्णन करने जा रहा हूँ। आप सब सुन्दरसाथ मिलकर उसे याद कीजिए।

प्रकरण ।।४५।। चौपाई ।।२२६१।।

पैगाम ढांप्या गिरोह ने

इस प्रकरण में यह बात दर्शायी गयी है कि किस प्रकार शरातोरा के कट्टर अनुयायियों ने इमाम महदी के पैगाम को मानने से इन्कार कर दिया।

अब तुम सुनियो मोमिनों, कहों जो बीतक तुम।
लड़ाई करी दज्जाल सों, जमा एक ठौर थे हम।।१।।

हे साथ जी! अब आपसे मैं जिस प्रसंग का वर्णन कर रहा हूँ, उसे सुनिए। हम १२ सुन्दरसाथ ने शरातोरा के अनुयायियों से युद्ध किया था, जिसके परिणामस्वरूप हमें कैदखाने में रहना पड़ा था।

जब सरे तोरे को, हम ले गए पैगाम।
तब ढांका जिन गिरोह नें, मरातबा इमाम।।२।।

जब हम श्रीजी का सन्देश लेकर शरातोरा के बादशाह औरंगजेब के पास गये, तब बादशाह के कट्टरपन्थी दरबारियों (अधिकारियों) ने स्वार्थवश इमाम महदी को जाहिर नहीं होने दिया और उनकी महिमा को ढक दिया।

खुदा लानत है जिनको, तापर फिरस्ते फेरे लानत।
सब मोमिनों की लानत, हुई बखत कयामत।।३।।

ऐसे जिन लोगों पर परब्रह्म की ओर से धिक्कार (फिटकार) मिल जाती है, उन्हें कियामत के समय ब्रह्मसृष्टियों और ईश्वरीय सृष्टियों की भी फटकार झेलनी पड़ेगी।

सब आम लानत देवहीं, जिन इस इसलाम।
हुई ख्वारी सब में, पुकारत खलक तमाम।।४।।

इस्लाम मत के जिन अग्रगण्य धर्माधिकारियों ने ईमाम महदी के पैगाम को ठुकरा दिया है, उन्हें संसार के सभी लोग धिक्कारते हैं। सभी लोगों का ऐसा कहना है कि अपने गुनाहों के कारण ये लोग नष्ट हो जायेंगे।

लिखी सिपारे दूसरे, सयकूल जाको नाम।
दज्ञाल बैठा दिल पर, भानी राह इसलाम।।५।।

कुरआन के दूसरे सिपारे, जिसका नाम सयकूल है, में यह बात लिखी हुयी है कि सबके दिल पर इबलीस अर्थात् दज्ञाल का वास है और वह किसी को भी निजानन्द की राह पर चलने नहीं देता है।

भावार्थ– कुरआन के पहले पारे, सिपारा २ सयकूल, आयत १६४ में दज्ञाल के प्रकट होने का निशान लिखा है कि मनुष्य की आँखों में इबलीश और दिल में

अजाजील का वास है। वह किसी को भी निजानन्द सम्प्रदाय का अनुगामी बनने से रोकता है। वास्तव में यही दज्जाल के दो हथियार हैं, जिनके द्वारा वह समस्त मानवों को अपने नियन्त्रण में करके संसार में अपनी सत्ता को चला रहा है।

सब खलक राह पावती, जो ए फेरत ना पैगाम।
दीदार होता दुनी को, पढ़ों भान दिया वह काम।।६।।

यदि शरातोरा के कट्टर समर्थकों ने पैग़ाम से मुँह नहीं फेरा होता (इनकार नहीं किया होता), तो सारी दुनियाँ को परमधाम की राह प्राप्त हो गयी होती और उन्हें श्री प्राणनाथ जी के रूप में परब्रह्म का प्रत्यक्ष साक्षात्कार हो गया होता। किन्तु काज़ी शेख़ इस्लाम, शेख़ निज़ाम, तथा आकिल खान, जैसे इल्म का अहंकार रखने वाले

लोगों ने ऐसा होने नहीं दिया।

कानों तो बहरे कहे, भई आँखों ऊपर मोहोर।
दीदे दिल अंधे कहे, तो सुन्या न एता सोर।।७।।

कुरआन में ऐसे लोगों को कानों से बहरा कहा गया है। इनकी आँखों पर मुहर लगी होती है, अर्थात् इनमें परब्रह्म को पहचानने के लिए दिल की आँखें होती ही नहीं। इसलिए इन्होंने इमाम महदी द्वारा भेजे गए अति प्रभावशाली सन्देश को भी सुनना स्वीकार नहीं किया।

भावार्थ– "कानों से बहरा" तथा "आँखों से अँधा" होने का आशय दिल के कानों से बहरा होना तथा दिल की आँखों से अन्धा होना है। ऐसे लोग सत्य को सुनते हुए भी अनसुना कर जाते हैं तथा अन्तःचक्षु न होने से इमाम महदी के रूप में आए हुए परब्रह्म को देखने पर भी एक

साधारण मानव समझ बैठते हैं।

मोमिन फरज उतारिया, पहुंचावते पैगाम।
हुआ मसरक मगरब जाहिर, सब सुन्या खलक आम।।८।।

सुन्दरसाथ ने औरंगज़ेब बादशाह को श्रीजी का सन्देश पहुँचाकर अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया। पूर्व और पश्चिम, अर्थात् वेद और कतेब, का एकीकरण रूपी तत्वज्ञान तारतम ज्ञान के प्रकाश में उजागर हो गया, जिसका रस जन-साधारण को भी मिला।

भावार्थ- मग़रब अर्थात् पश्चिम में सूर्य उगने का तात्पर्य, हिन्दुओं में इमाम महदी का अवतरित होना अवश्य है, लेकिन वह प्रसंग अलग है। यहाँ पर मशरक और मग़रब का तात्पर्य पूर्व और पश्चिम, हिन्दू और मुस्लिम, या वेद और कतेब पक्ष से है।

तो भी ए ना देखहीं, दज्जाल में नाहीं विचार।

के हमसे क्या गया अरू क्या रह्या, ए न हुए खबरदार।।९।।

इतना होने पर भी बादशाह के दज्जाल स्वरूप दरबारियों ने यह विचार नहीं किया कि इमाम महदी के पैगाम को ठुकराने से हमने कितनी बहुमूल्य चीज़ खो दी है और अब हमारे पास क्या है? सत्ता के मद में ये अन्धे बने रहे और इस तरह अल्लाह को पाने के इस सुनहरे अवसर के प्रति सावधान नहीं रहे।

भावार्थ– जिस अल्लाह की रहमत पाने के लिए ये जीवन भर पाँचों वक्त नमाज़ पढ़ते रहे, हज़ करते रहे, और रोज़े रखते रहे, इमाम महदी के रूप में उसी अल्लाह को पाने का जब समय आया तो इन लोगों ने मुँह फेर लिया। इनकी इससे बड़ी बदनसीबी और क्या हो सकती है? हुकूमत के घमण्ड ने इन्हें इतना अन्धा बना दिया था कि

वे सत्य के विषय में सोचने की शक्ति ही खो बैठे थे।

बेत अल्ला पुकारही, सो भी सुने न कान।

वसीयत नामें चार आए, ताकी भी न करें पहिचान।।१०।।

मक्का के बैतुल्लाह से चार वसीयतनामे आये और उनमें पुकार–पुकार कर यह बात कही गयी थी कि इमाम मुहम्मद महदी हिन्द में ज़ाहिर हो चुके हैं, फिर भी उन्होंने उसे अनसुना कर दिया और वसीयतनामों की महत्ता को नहीं समझा।

भावार्थ– बैतुल्लाह से तात्पर्य खान–ए–काबा की उस इमारत से है, जिसकी मुसलमान जिलहज्ज महीने की दसवीं तारीख़ में तवाफ (परिक्रमा) देने जाते हैं।

मस्जिद–ए–नबवी से चार वसीयतनामें आये और आकाशवाणी हुई, इसके बावजूद ज़ाहिरी मुस्लिम,

तारतम ज्ञान न होने के कारण, उसका तात्पर्य समझ नहीं सके।

वास्ते मतलब दुनी के, छोड़ दिया इसलाम।
पैगम्बर को पीठ दई, रहे बीच दुनी के काम।।११।।

इन लोगों ने अपने सांसारिक स्वार्थों के लिए इस्लाम (निजानन्द) की सच्चाई को स्वीकार नहीं किया। अज्ञानता में इमाम महदी से विमुख रहे और मायावी कार्यों में अपनी सारी उम्र गुज़ार दी।

मोमिनों ऊपर कसाला, किया इनों ने जोर।
उन लड़ाई के बखत में, किया दज्जाले सोर।।१२।।

शरातोरा के समर्थक इन अत्याचारी लोगों ने सुन्दरसाथ को यातनायें दीं। उस धर्मयुद्ध में दज्जाल रूपी इन

दरबारियों ने बादशाह को भ्रमित कर दिया।

तिस बखत हादीए ने, लिख भेजी पाती उत।

सुनियो सो हकीकत, नेक कहों मैं इत।।१३।।

उस समय श्रीजी ने दिल्ली में कैद उन १२ सुन्दरसाथ के लिए जो पत्र लिखकर भेजा, उसकी वास्तविकता को सुनने का कष्ट करें। उसका थोड़ा-सा विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

जब थे कोतवाल के हवाले, तब लिख भेजे खास कलाम।

वास्ते दिलासा मोमिनों, जिन दलगीर होवे इन काम।।१४।।

जब हम १२ सुन्दरसाथ सिद्दीक फौलाद के अधीन कैद थे, तब धाम धनी ने हमें सान्त्वना देने के लिए प्रेम भरे शब्दों से विशेष पत्र लिखकर भेजा, जिससे कि इस

धर्मयुद्ध में हमें दुःखी न होना पड़े।

ऐ पेंगमर हक का, तुमे भेजे ऊपर इसलाम।
तो इनों मारा पैगाम को, तो हुई लानत तमाम।।१५।।

यह सन्देश स्वयं श्री राज जी का था, जिसे देकर धर्म कार्य के लिए मैंने तुम्हें भेजा था। शरातोरा के समर्थकों ने सन्देश देने वालों को यातना दी, इसलिए इन्हें चारों ओर से धिक्कार मिली।

अब ए होत सरमिंदे, गरम होत दोजक।
तुम पर मेहर हादीए की, है नजीक तुमारे हक।।१६।।

अपने गुनाहों के कारण अब ये लोग शर्मिन्दगी का अनुभव कर रहे हैं। इनको सज़ा देने के लिए दोज़ख की दहकती हुयी आग प्रतीक्षा कर रही है। तुम्हारे ऊपर तो

श्री श्यामा जी की पल-पल मेहर बरस रही है और श्री राज जी तुम्हारे अति निकट हैं।

तुम बैठे नजीक हक के, तुमें पलक न करें दूर।
तुमारे मूल सरूप सों, जो हमेसा था मजकूर।।१७।।

तुम परमधाम के मूल मिलावा में धाम धनी के सम्मुख विराजमान हो, वे तुम्हें एक पल के लिए भी दूर नहीं कर सकते। तुम्हारे मूल स्वरूप परात्म के साथ तो हमेशा ही प्रेम की वार्ता चलती रहती थी।

तिस वास्ते तुमको, अजमावत हैं इत।
दिखाए बलाए कसाले, ए मुकदमा कयामत।।१८।।

इसलिए प्रियतम अक्षरातीत इस संसार में कियामत के प्रकट होने की घोषणा करवाकर, तुम्हें तरह-तरह की

आपत्तियों और कष्टों का अनुभव करा रहे हैं, जिससे तुम्हारे प्रेम की परीक्षा ली जा सके।

जो लड़ाई तुम करी, सो होसी रोसन चौदह तबक।
मौत दज्जाल की इन में, सो तुमहीं भानी सब सक।।१९।।

तुमने शरातोरा के विरूद्ध जो युद्ध किया है, उसकी महिमा चौदह लोकों में फैल जाएगी। तुम्हारे प्रेम , समर्पण, और त्याग की अग्नि में आसुरी शक्तियों का विनाश हो जाएगा। अज्ञानता के अन्धकार में भटकने वाले लोगों के संशय भी तुम ही दूर करोगे।

भावार्थ– जागनी लीला का प्रत्येक घटनाक्रम योगमाया में अखण्ड हो जाएगा। इसी प्रकार औरंगज़ेब को सन्देश देने में सुन्दरसाथ ने जो त्याग की भावना दिखायी, उसकी गरिमा योगमाया के ब्रह्माण्ड में इस १४ लोकों के

सभी प्राणियों को मालूम हो जाएगी, क्योंकि वहाँ सबके अन्दर जाग्रत बुद्धि होगी।

ए भूले तुमको देख के, ले मायने ऊपर के।
अबलीस रान्या इन से, ले ऊपर के अरथे।।२०।।

बादशाह और उसके दरबारी, तुम्हारे हिन्दू तन में होने के कारण तथा कुरआन के शब्दों के मात्र बाह्य अर्थ को लेने के कारण, सत्य से भटक गये। अपनी बाह्य दृष्टि के कारण ही इब्लीश आदम के स्वरूप को पहचान नहीं सका, जिसके परिणामस्वरूप उसे बहिश्त से बाहर निकलना पड़ा।

सूरत देखी आदम की, बीच निसबत थी हक।
तासों रह्या गाफिल, हुई लानत ऊपर सक।।२१।।

इब्लीश ने आदम के मात्र बाह्य मानवी रूप को ही देखा। उसके अन्दर विद्यमान अल्लाह तआला की रूह को नहीं पहचाना, इसलिए उसने आदम को सिजदा नहीं किया। परिणामस्वरूप उसके इस संशय के कारण उसे धिक्कार खानी पड़ी।

सो अबलीस सबों दिल पर, करत पातसाही।
तो इलहाम फेरा हक का, दुस्मनी से आई।।२२।।

अब वही इब्लीश दुनियाँ के सभी जीवों के दिल के ऊपर बादशाहत (राज्य) करता है। इस इब्लीश के वशीभूत होने से ही बादशाह औरंगज़ेब तथा उसके दरबारियों ने श्रीजी के सन्देश को स्वीकार नहीं किया। सृष्टि के प्रारम्भ से ही इब्लीश की आदम से शत्रुता चली आ रही है।

जान बूझ आपको, बुरा न चाहे कोए।

पर ए काम अबलीस के, मारी राह इसलाम की सोए।।२३।।

नहीं तो जानबूझ कर कोई भी अपना बुरा नहीं चाहता, किन्तु यह इब्लीश ही है जो सबकी बुद्धि को भ्रमित करके निजानन्द (इस्लाम) की वास्तविक राह से भटका देता है।

भावार्थ– इब्लीश, अजाजील के मन की शक्ति है। कतेब की भाषा में इसे दज्जाल या शैतान भी कहते हैं, तथा हिन्दू परम्परा में इसे कलियुग या अज्ञान रूपी राक्षस कहा गया है।

लिख्या लोमोफूज में, जो सेजदा आदम पर।

सो अबलीसे ना किया, आप को बड़ा जान्या यों कर।।२४।।

लौह-ए-महफूज में लिखा है कि स्वयं को बड़ा मानने

के कारण इब्लीश ने आदम को सिज्दा नहीं किया और अल्लाह के आदेश को नकार दिया।

भावार्थ– जिस समय आदम की रचना की गयी, समस्त फरिश्तों को उसका अभिवादन करने को कहा गया, परन्तु अजाजील ने अवहेलना की तो उसको वहाँ से (अखण्ड धाम से) निकलना पड़ा।

यह प्रसंग पूर्व में लौह –ए–महफूज नामक भविष्य पट्टिका पर भी अंकित है।

इसका प्रसंग यह है कि कोई भी व्यक्ति अपना बुरा नहीं चाहता। प्रकटतया अजाजील को अभिवादन का आदेश दिया गया, परन्तु उसके दिल में यह भाव डाला गया कि तुम्हें अभिवादन नहीं करना है। अतः उसने इसी सिद्धान्त के अनुसार प्रतिपालन किया। अन्यथा परमधाम में अद्वैत रूपी स्थान पर द्वैत रूपी अवहेलना

का प्रश्न उत्पन्न ही नहीं हो सकता।

यह प्रसंग कुरआन के पारा १ सूरे बक्र २ की आयत ३० से लेकर ३९ तक में दिया गया है।

सेजदा सब जिमी पर, किया ऊपर खुदाए।
सो सारे सेजदे रद्द हुए, तोख लानत गले हुआ ताए।।२५।।

इब्लीश ने अल्लाह तआला के नाम पर सारी धरती पर इस प्रकार सिज्दा किया कि दो अँगुल भी जमीन खाली नहीं रही, किन्तु अल्लाह के आदेश को न मानने के कारण उसके पूर्व के सारे सिज्दे रद्द हो गये। अब उसके गले में लानत अर्थात् धिक्कार का फन्दा पड़ गया।

देखो कौन आदम कौन अबलीस, सब जिमी सेजदा किया तित।
बची न दो अंगुल जिमी, सो कहां जिमी है इत।।२६।।

हे साथ जी! आप इस बात पर विचार कीजिए कि कौन आदम है और कौन इब्लीश? इब्लीश ने सारी धरती पर कहाँ सिज्दा किया? वह धरती कहाँ है, जिसकी दो अँगुल ज़मीन भी सिज्दे के बिना नहीं बची?

भावार्थ- इबलीस सभी प्राणियों के दिलों में बैठा है, चाहे हिन्दू हो या मुसलमान या अन्य किसी भी मत को मानने वाला हो। तारतम ज्ञान के अभाव में वह शरीअत की ही बन्दगी जानता है। परिणामस्वरूप वह साकार-निराकार को पार कर अल्लाह का दीदार नहीं कर पाता। यद्यपि वह बन्दगी (सिज्दा) अल्लाह की ही करता है, किन्तु पहचान न होने के कारण वह निष्फल हो जाती है। पृथ्वी के स्थल भाग पर प्राणियों का वास तो है ही, जल और वायु में भी प्राणी रहते हैं, और उनके दिल में भी इब्लीश की बैठक है। इस प्रकार प्राणियों से भरी सारी

सृष्टि (जीवों का दिल) ही वह धरती है, जहाँ इब्लीश बन्दगी करता है।

दो अँगुल ज़मीन के न बचने का आशय यह है कि वायु में भी ऐसे सूक्ष्म जीव रहते हैं, जो आँखों से दिखाई नहीं पड़ते और उनके दिल में भी इब्लीश का वास है, किन्तु घटनाक्रम के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि दिल्ली की नगरी ही वह धरती है, जहाँ औरंगज़ेब बादशाह अपनी बन्दगी के कारण प्रसिद्ध था, किन्तु अभिमान से भरे होने के कारण वह इमाम महदी के स्वरूप को पहचान नहीं सका। वह न उनके चरणों में सिज्दा कर सका और न उनके सन्देश को स्वीकार कर सका।

इस घटनाक्रम में, बन्दगी के बिना दो अँगुल ज़मीन का न बचना, औरंगज़ेब की शरीअत की बन्दगी नमाज़ और तसवी फेरने का, आलंकारिक वर्णन है।

ए विचार देखो दिल से, कौन आदम बिना रसूल।
सेजदा ना किया किननें, किन नें भान्या एह सूल।।२७।।

आप अपने दिल में इस बात का विचार कीजिए कि औरंगज़ेब को सन्देश देने वाले श्री प्राणनाथ जी (इमाम महदी) के अतिरिक्त आदम और कौन हो सकता है? वे कौन हैं जिन्होंने आदम को सिज्दा नहीं किया? अर्थात् औरंगज़ेब और उसके वे सलाहकार दरबारी ही इब्लीश के स्वरूप हैं, जिन्होंने इमाम महदी के रूप में विराजमान अल्लाह तआला के स्वरूप को सिज्दा नहीं किया। और अल्लाह के सन्देश को ठुकराने वाले कौन हैं? निःसन्देह औरंगज़ेब और उसके दरबारियों ने ही श्रीजी के सन्देश को मानने से इनकार कर दिया।

महामत कहे ऐ मोमिनों, यह बीतक सरियत।

हुए स्याह मुंह सरमिंदे, हुआ दौर कयामत।।२८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह कियामत के समय शरीअत के विरूद्ध होने वाले युद्ध का प्रसंग है, जिसमें श्रीजी के सन्देश को न मानने वालों का मुख लज्जा से काला पड़ गया।

प्रकरण ।।४६।। चौपाई ।।२२८९।।

आगे आपने पत्री लिखी सो शुरु

श्री प्राणनाथ जी द्वारा लिखे हुये पत्र का प्रारम्भ किया जाता है।

अब कहो मैं मजल की, जो हुई लड़ाई सरियत।
भया कसाला मोमिनों पर, साबित करने कयामत।।१।।

अब मैं उस प्रसंग की चर्चा कर रहा हूँ, जिसमें शरीअत के विरूद्ध सुन्दरसाथ ने युद्ध किया था। जब सुन्दरसाथ ने शरीअत के बादशाह औरंगज़ेब के समक्ष कियामत को जाहिर करने का प्रयास किया, तो उनको बादशाह के दरबारियों के द्वारा प्रताड़ित किया गया।

तब पाती लिखी हादीए नें, करने खातिर जमा मोमिन।
सिखापन सब विध की, सुनियो दिल रोसन।।२।।

तब श्रीजी ने सुन्दरसाथ को एकजुट बने रहने के लिए स्वयं अपने हाथों से पत्र लिखा। इसमें सुन्दरसाथ के लिए हर तरह की शिक्षा दी गयी है। हे साथ जी! अब आप अपने हृदय को प्रसन्नता से भर लीजिये और उसे सुनिए।

भावार्थ– प्रियतम अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के द्वारा सुन्दरसाथ को पत्र लिखना इसलिये आवश्यक था, क्योंकि उससे सुन्दरसाथ का मनोबल दृढ़ बना रहता, एकता में कोई कमी नहीं आ सकती थी, और सुन्दरसाथ को भी यह अहसास हो जाता कि धाम धनी हमारे सिर पर पल–पल विराजमान हैं।

ए पाती दिल्ली मिने, थे कैद में हम।

तिस वखत ले आइया, कान जी बदल हुकुम।।३।।

श्री लालदास जी कहते हैं कि जब मैं अन्य सुन्दरसाथ के साथ दिल्ली के कारागार में था, उस समय कान्हजी भाई और हुक्म की शोभा लिये हुये शेख बदल इस पत्र को लेकर आए।

भावार्थ– यद्यपि शेख बदल भी लालदास जी के साथ कैद में थे, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें कभी–कभी जमानत पर आने–जाने की स्वीकृति मिल जाती थी।

लड़ाई के बखत में, उलटी भई फते।
तब दिलासा सैयन को, पाती लिखी एह।।४।।

शरीअत के विरूद्ध होने वाले धर्मयुद्ध में हमारी अधूरी विजय हुई, क्योंकि हमें अपनी हिन्दू वेश–भूषा छोड़कर जाना पड़ा था। तब सुन्दरसाथ को सान्त्वना देने के लिए

धाम धनी ने यह पत्र लिखा।

भावार्थ– "उल्टी विजय" का तात्पर्य यह होता है कि सुन्दरसाथ को बादशाह औरंगज़ेब से मिलने के लिए मुस्लिम फकीरों की वेश–भूषा को धारण करना पड़ा। औरंगज़ेब से भेंट हो जाने पर भी कियामत और इमाम महदी के प्रकट होने के सम्बन्ध में बातचीत नहीं हो पाई। इसके अतिरिक्त सिद्दीक फौलाद से प्रताड़ना का कष्ट झेलने के बाद, काजी शेख इस्लाम सुन्दरसाथ के आध्यात्मिक ज्ञान के सामने नतमस्तक हो जाता है और स्वीकार भी कर लेता है कि इमाम महदी आ चुके हैं, फिर भी वह सुन्दरसाथ पर दबाव देता है कि आप इसे ज़ाहिर नहीं कर सकते और सुन्दरसाथ उस दबाव के आगे विवश हो जाते हैं।

अपने हाथों दस्तखत, लिखे मिने कलाम।

तिनकी नकल कहत हों, सुनियों मोमिन इसलाम।।५।।

उस पत्र को श्रीजी ने स्वयं अपने हाथों से लिखा तथा अपने हस्ताक्षर किये। निजानन्द की राह पर चलने वाले हे सुन्दरसाथ जी! आप उसे सुनिए, मैं उसे पत्र के भाव को चौपाइयों के शब्दों में वर्णित कर रहा हूँ।

मेरे प्राण के प्रीतम, साथ मेरे सिरदार।

आतम के आधार हो, जीव के जीवन उस्तवार।।६।।

आप सब सुन्दरसाथ में शिरोमणि हैं। आप मेरे प्राणों के प्रियतम, मेरी आत्मा के आधार हैं, तथा निश्चय ही आप मेरे जीव को जीवन देने वाले हैं।

मेरे प्रेम भीने श्री साथ जी, मेरे सांचे सूर धीर।

पांव भर दिखावत रूहों को, तुम बैठे हो हक के तीर।।७।।

मेरे प्रेम में डूबे हुए मेरे साथ जी! आप मेरे धर्म के सच्चे धीर-वीर हैं। आप स्वयं आगे आकर सुन्दरसाथ का मार्गदर्शन करने वाले हैं। आप तो प्रियतम अक्षरातीत के बिल्कुल पास विराजमान हैं।

भावार्थ- "सूर धीर" शब्द का तात्पर्य होता है, ऐसा वीर जिसमें धीरता का गुण कूट-कूटकर भरा हो। जो युद्ध के मैदान में इतना धैर्यशाली हो कि किसी भी संकट से घबराये नहीं और लक्ष्य तक पहुँचने का मनोबल रखे।

औरंगज़ेब के साथ होने वाले धर्मयुद्ध में इन १२ सुन्दरसाथ के अन्दर यह गुण कूट-कूटकर भरा हुआ था। इसलिये इस चौपाई के दूसरे चरण में सुन्दरसाथ को "शूर धीर" कहा है।

जिन लज्जा वैराट बांधिया, तिन लज्जा दिया सिर भान।
सब साथ का सिर ऊंचा किया, सो हुई तुमें पहिचान।।८।।

जिस लोक-लज्जा की मर्यादा से सारा संसार बँधा हुआ है, आपने उस लोक-लज्जा को पूर्णतया त्याग दिया है, और अपने अनुपम त्याग द्वारा आपने सब सुन्दरसाथ का मस्तक सम्मानपूर्वक ऊँचा कर दिया है। ऐसा इसलिए हो पाया क्योंकि आपको धाम धनी के स्वरूप की पहचान हो चुकी है।

भावार्थ- "शिर फोड़ना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है, पूर्णतया नष्ट कर देना। बिना पहचान किए कोई भी महान कार्य नहीं कर सकता , चाहे वह कितना ही बुद्धिमान एवं धनवान क्यों न हो। मुकुन्द दास जी एवं गोवर्धन दास जी विद्या एवं धन की दृष्टि से बहुत बढ़े-चढ़े थे, किन्तु उस समय तक श्री प्राणनाथ जी के

स्वरूप की पूर्ण पहचान नहीं कर सके थे, इसलिए इस महान कार्य में वे भाग न ले सके।

आपोपा निसंक डारिया, मेरे साथ सब सोभा जोग।
एक दूजे से सिरोमन, आगे कदम धरे इन भोग।।९।।

हे मेरे सब सुन्दरसाथ! आपने अपने "मैं" के बन्धन को पूर्णतया छोड़ दिया है। आप सभी महान शोभा के योग्य हैं। सब एक-दूसरे से बढ़कर हैं और इस महान कार्य में आप हमेशा अपने कदम बढ़ाने के लिए तत्पर हैं।

साथ समस्त भाई लखमन, भाई भीम नागजी दोए।
चिंतामन दयाराम, ए चारों कहे सोए।।१०।।

भीम भाई, नाग जी भाई, चिन्तामणि जी, और दयाराम जी, इन चारों सुन्दरसाथ ने लक्ष्मण भाई (लालदास

जी) के साथ कदम से कदम मिलाकर धर्म कार्य में योगदान दिया।

चंचल गंगाराम जो, बनारसी जो सोम।

और भाई खिमाई, ए दसों दाखिल बीच कोम।।११।।

चंचल दास जी, गंगाराम जी, बनारसी दास जी, सोम जी भाई, और खिमाई भाई ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। ये दसों सुन्दरसाथ परमधाम की महान शोभा वाले ब्रह्मसृष्टियों में शामिल हैं।

भावार्थ– सुन्दरसाथ की वास्तविक कौम (वंश) केवल ब्रह्मसृष्टि ही है। इन्हें ४ वर्णों और १२०० काल्पनिक जातियों के बन्धन में नहीं बाँधा जा सकता।

और भाई अनन्त राम, तुम सांचे सूर धीर।

लालबाई स्यामबाई रामराए, तुम रहत हो तीर।।१२।।

हे भाई अनन्तराम! तुम धर्म के सच्चे शूरवीर हो। लाल बाई, श्याम बाई, तथा रामराय! तुम प्रियतम परब्रह्म के निकटस्थ हो।

तथा साथ समस्त सूर धीर, और जो लड़ने वाले इन समे।

और जो कोई आसा करे, ए कह्या तिन सें।।१३।।

मेरे धर्म के समस्त शूरवीर सुन्दरसाथ! यह पत्र मैं उन सुन्दरसाथ के लिए लिख रहा हूँ, जो धर्म के इस युद्ध में सच्ची भावना के साथ, लड़ने वाले हैं या लड़ने की आशा रखते हैं, कि हमें धर्म कार्य के लिये अपने को न्योछावर करने का मौका मिला है।

वे सब श्री राज के चरण तले, रहियो आरोग तुम।

सुख समाधान आनन्द मंगल की, ए पाती लिखी हम।।१४।।

मेरी यही चाहना है कि आप सब श्री राज जी के चरणों की छत्रछाया में हमेशा ही स्वस्थ रहें। आपके सुख-समाधान एवं आनन्द मंगल की कामना करते हुये मैंने यह पत्र लिखा है।

दृष्टि तुम पर श्री राज की, हूजो सदा सनकूल।

लिखी वे जो मजलें, सो साथ का मूल।।१५।।

आपके ऊपर धाम धनी की पल-पल कृपा दृष्टि बरस रही है, इसलिए आप हमेशा आनन्द में मग्न रहिए। कुरआन में संकेत में जो बातें लिखी हुई हैं , उसमें सुन्दरसाथ की जागनी की मूल बातें छिपी हुई हैं।

भावार्थ- कुरआन के अधिकतर प्रसंग सद्गुरु धनी श्री

देवचन्द्र जी, श्रीजी, एवं सुन्दरसाथ से सम्बन्धित हैं, किन्तु उन्हें संकेतों में लिखा गया है।

इस चौपाई के तीसरे चरण में जिस "मंजिल" शब्द का प्रयोग हुआ है, उसका आशय जागनी के विभिन्न स्तरों से है, क्योंकि सुन्दरसाथ की जागनी का मूल इन घटनाक्रमों में निहित है।

इन्द्रावती की वासना, मैं लिखे प्रणाम कोटान कोट।
अविधारियो तिन को, लीजो धनी की ओट।।१६।।

मैं इन्द्रावती की आत्मा, आपको करोड़ों बार प्रणाम करती हूँ। आप मेरे इस प्रणाम को स्वीकार कीजिए और धनी की छत्रछाया में आनन्दमग्न होकर रहिए।

ए श्री राज की दया से, मिल भेला होयेगा साथ।

तब सुख समाधान आनन्द होए, धनी ऐं पकड़े हाथ।।१७।।

धाम धनी की कृपा से एक दिन सभी सुन्दरसाथ एकसाथ हो जायेंगे। तब सबके हृदय में सुख और आनन्द की वर्षा होगी। उस समय हमें यह अनुभव होगा कि श्री राज जी पल-पल हमारा हाथ पकड़े रहते हैं।

तुम्हारे सुख समाधान आनन्द की, पाती को चाह जे।

तुमारी हकीकत सब, कही भाई बदले।।१८।।

मुझे यह चाहना थी कि पत्र के माध्यम से तुम्हारे सुख-समाधान एवं आनन्द का समाचार मिल जाए। इसलिये कान्हजी भाई और शेख बदल ने आकर आपकी सारी स्थिति से मुझे अवगत करा दिया।

ए जो मूल से कही, सो भई सब मालूम।

बड़ा जुध किया दज्जालें, तैसा लिखा रसूलें वास्ते तुम।।१९।।

औरंगज़ेब को सन्देश देने के समय से लेकर अब तक का सम्पूर्ण समाचार मुझे मालूम हो गया है। शरीअत की राह पर चलने वाले कट्टरपन्थी लोगों ने आप लोगों के साथ भयानक युद्ध किया, यह बात मुहम्मद साहिब ने कुरआन में बहुत पहले से लिख रखी है।

भावार्थ– पारा ९ सूरे आराफ ७ आयत १६७ में लिखा है कि परवरदिगार ने यहूद को आगाह किया कि तुमको कियामत तक बुरी–बुरी तकलीफें होती रहेंगी। वास्तव में यह प्रसंग मोमिनों के लिए है कि सत्य की राह में उन्हें अनेकों कष्ट उठाने पड़ेंगे।

तैसा ही ए जुध भया, और भी होएगा इत।

लिखे माफक होएगा, ए जानो मुकदमा कयामत।।२०।।

जिस प्रकार का यह धर्मयुद्ध हुआ है, ऐसा ही युद्ध भविष्य में अभी और होगा। जैसा मुहम्मद साहिब ने लिख रखा है, वह तो होना ही है, क्योंकि शरीअत के इस युग में हमने कियामत के जाहिर होने का दावा किया है।

और आखर को तुमारा, ऊपर होएगा बोल।

रसूलें भी यों लिख्या, कुरान हदीसों कौल।।२१।।

अन्ततोगत्वा, एक दिन आपके इन कथनों की प्राथमिकता होगी, अर्थात् आपने जिस कियामत और इमाम महदी के आने का दावा किया है, उसे सबको स्वीकार करना ही पड़ेगा। रसूल मुहम्मद साहिब ने

कुरआन–हदीसों में ऐसा ही लिख रखा है।

भावार्थ– पारा ३ तिलकर्रूसुल, सुरः आले इम्रान, आयत १९ में वर्णन है कि ऐ पैगम्बर! वास्तव में सच्चा दीन इस्लाम है, लेकिन जो खुदा की आयतों को न माने, तो खुदा उनका जल्द हिसाब लेने वाले हैं और उनको सजा देने वाले हैं।

आयत २६ में लिखा है कि कहो, ए बादशाहों के मालिक! तू जिसे चाहे बादशाही बख्शे और जिससे चाहे छीन ले। जिसको चाहे इज़्ज़त दे, जिसको चाहे ज़िल्लत बख्शे यानी बदनामी दे।

हकीकत ऐ समझियो, आपन माया सों हुए बेजार।
सिताबी काम क्यों न होत है, सब मिल क्यों न होत तैयार।।२२।।

हे साथ जी! इस वास्तविकता को आप समझिए कि

जब हम इस जागनी लीला में माया से परेशान हो जाते हैं, तो यह सोचने लगते हैं कि यह काम जल्दी से क्यों नहीं हो जाता और सब सुन्दरसाथ जाग्रत होकर जल्दी से परमधाम चलने के लिए तैयार क्यों नहीं हो जाते?

पर भाई एह काम, बोहोत बड़ा तुम जान।
जो दिन जिन भांत लिखा है, सो तेती होए पहिचान।।२३।।

किन्तु साथ जी! आप इस बात को अच्छी तरह से जान जाइए कि जागनी का यह कार्य बहुत ही बड़ा है। धाम धनी ने अपने दिल में जिस कार्य को जिस समय होना लिखा है, वह उसी समय होगा, और जिस आत्मा को धनी की जितनी पहचान होनी लिखी है, उतनी ही होगी।

तुम सूर धीर पना किया, सो तुम जिन जानों किया हम।
ए हकें सोभा दई तुमको, ए होए न बिना हुकम।।२४।।

तुमने यह जो औरंगज़ेब को सन्देश देने का वीरतापूर्ण कार्य किया है, उससे अपने मन में ऐसा नहीं लेना कि हमने कर दिखाया है। यह तो धाम धनी ने तुम्हें शोभा दी है। उनके आदेश के बिना यह कार्य कभी भी नहीं हो सकता था।

ए काम बहुत बड़ा हुआ, अजू भास्या न तुमारे मन।
तुमको हलका लगत है, है बात बड़ी मोमिन।।२५।।

तुम्हारे द्वारा जो यह कार्य हुआ है, इसकी गरिमा बहुत अधिक है, जिसका तुम्हें अहसास नहीं है। यद्यपि तुम्हें यह बहुत छोटा कार्य लग रहा है, किन्तु ब्रह्मात्माओं की दृष्टि में इसकी बहुत अधिक महत्ता है।

एते दिन इन जहान में, बोहोत डरते लेते नाम।

हमको गरदन मारेगा, लेते नाम इमाम।।२६।।

आज दिन तक संसार में लोग इमाम महदी का नाम भी बहुत डरते-डरते लिया करते थे, क्योंकि उन्हें डर था कि ऐसा करने से मुसलमान हमें मार डालेंगे।

भावार्थ- मुगल सल्तनत के उस कट्टरतावादी युग में, जब इमाम महदी का नाम लेना एक हिन्दू के लिए मौत को निमन्त्रण देना होता था, तब १२ सुन्दरसाथ ने शरातोरा को चुनौती देते हुए औरंगज़ेब बादशाह तक अपनी बात पहुँचायी थी।

आज हम ऐसे स्वतन्त्र भारत के नागरिक हैं, जिसमें हर व्यक्ति को अपने विचारों की अभिव्यक्ति करने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। फिर भी हम दूसरे मतावलम्बियों के सामने कुछ भी बोलने में घबराते हैं, आखिर ऐसा क्यों? हमारे

पास वह आत्मबल क्यों नहीं है कि हम उन ब्रह्ममुनियों के पदचिह्नों पर चल सकें?

आपन छिप छिप रल झलते, फिरते थे सब ठौर।
अब तुम जाहिर भए, लसकर महम्मदी करो सोर।।२७।।

हम लोग मुसलमानों से छिप-छिपकर रहा करते थे तथा हर जगह डरते फिरते थे। अब तुम खुलेआम जाहिर हो चुके हो कि तुम मुहम्मद साहिब के दर्शाये हुये मार्ग पर ईमान रखने वालों में से हो। इसलिए कियामत एवं इमाम महदी के आने की गूँज चारों ओर फैला दो।

अब तुम इन जैसे होए के, पैठे इन अन्दर।
थाना मेंहदी का थापिया, बैठे इनके मंदिर।।२८।।

अब तुमने भी अपनी हिन्दू वेश-भूषा को छोड़कर इनके

समूह में पैठ बना ली और काज़ी शेख इस्लाम के घर पर इमाम महदी का स्थान भी घोषित कर दिया।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में इमाम महदी का थाना स्थापित करने का भाव यह है कि इमाम महदी पर आस्था रखने वाले सुन्दरसाथ का समूह वहाँ विराजमान है। इसी प्रकार चौथे चरण में काज़ी शेख इस्लाम के घर को भी मन्दिर शब्द से सम्बोधित किया है। स्पष्ट है कि स्वर्ण कलशों तथा सोने–चाँदी की मूर्तियों से सुसज्जित स्थान को ही केवल मन्दिर नहीं कहते हैं, चैतन्य का जहाँ निवास हो वह मन्दिर कहलाता है। वस्तुतः हृदय ही वह मन्दिर है, जिसमें प्रियतम की छवि विराजती है।

जब जाहिर तुम करी, अपना जो लसकर।

गाम गाम सहर सहर, थाने थाने जाहिर होवे इन पर।।२९।।

जब तुमने स्वयं को इमाम महदी के अनुयायियों के रूप में ज़ाहिर कर दिया है, तो अब गाँव-गाँव, नगर-नगर, तथा प्रत्येक धर्म के अन्दर से यह बात चारों ओर फैल जाएगी कि इमाम महदी के मोमिनों ने शरीअत के बादशाह औरंगज़ेब के घर जाकर हकीकत का पैग़ाम दे ही दिया।

अब तुमारो तेज, दिन दिन बढ़ता जाए।

बढ़ती बढ़ती रोसनी, सब खलकों को पहुंचाए।।३०।।

अब तुम्हारे व्यक्तित्व का तेज दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जाएगा। तुम्हारे ज्ञान की आभा से सारा संसार प्रकाशित हो जाएगा।

भावार्थ- प्रायः "तेज" शब्द से सूर्य के तेज, या तेजस्वी पदार्थों के तेज से भाव लिया जाता है, किन्तु

यहाँ व्यक्तित्व के तेज से आशय है, जिसमें ज्ञान, भक्ति, विवेक, वैराग्य, शील, सन्तोष, आदि गुण कूट-कूटकर भरे होते हैं।

और दज्जाल की कला, दिन दिन पल पल।
घटती घटती घटहीं, उड़ जासी ख्वाब अकल।।३१।।

और दज्जाल (धर्म विरोधी लोगों) की शक्ति प्रतिदिन पल-पल कम होती जाएगी। तारतम ज्ञान के प्रकाश में उचित समय पर उनकी भी स्वप्न की बुद्धि समाप्त हो जाएगी।

दृष्ट दज्जाल की बाहिर, तुम को दई दृष्ट अंदर।
तुम ऊपर उतरा असराफील, सब्दों इन ऊपर।।३२।।

शरीअत की राह पर अत्याचार करने वाले धर्म विरोधी

लोगों की दृष्टि बहिर्मुखी होती है, जबकि धाम धनी ने तुम्हें हकीकत का ज्ञान देकर अन्तर्मुखी दृष्टि प्रदान की है। इस्राफील फरिश्ता तुम्हारे लिए ही अवतरित हुआ है, ताकि तुम सभी धर्मग्रन्थों के रहस्य को जान सको।

तुम जुध करते रहियो, तुमको लोचन दिये अनन्त।
और दज्ञाल की एक आँख, आखर इनको अन्त।।३३।।

इस अज्ञान रूपी राक्षस (दज्ञाल) से तुम हमेशा युद्ध करते रहना। धाम धनी ने तुम्हें अनन्त ज्ञानदृष्टि प्रदान की है। अज्ञानी लोगों की तो मात्र एक बहिर्मुखी दृष्टि ही होती है, आखिर जिसका एक न एक दिन अन्त होना निश्चित है।

और एक समझियो, तुम दज्जाल सें।

जुध किया भली भाँत सों, सो सब हुआ हुकमें।।३४।।

एक बात और समझ लो कि तुमने शरातोरा से जो इतनी अच्छी तरह से युद्ध किया है, वह सब कुछ श्री राज जी के हुक्म (आदेश) से ही होना सम्भव था।

दज्जाल की लड़ाई में, ज्यों पहिली सुअर की चोट।

त्यों लड़ाई इन सों, आखर धनी की ओट।।३५।।

जिस प्रकार सुअर के द्वारा प्रहार करने पर, उससे सीधे न टकराकर, उसके भयानक प्रहार से अपनी रक्षा की जाती है और उसके बाद उस पर प्रहार किया जाता है, उसी प्रकार तुम धनी की मेहेर की छाँव तले दज्जाल के साथ होने वाले युद्ध में पूरी सावधानी के साथ युद्ध करो।

भावार्थ– औरंगज़ेब के सभी अधिकारी शरातोरा के

कट्टर समर्थक थे। बारह सुन्दरसाथ के लिए सम्भव नहीं था कि किसी प्रकार की कटु भाषा या उग्र व्यवहार से इनको परास्त किया जा सके। कहाँ वे १२ निहत्थे सुन्दरसाथ और कहाँ दूसरी तरफ लाखों की फौज के साथ बड़े-बड़े अधिकारी। ऐसी अवस्था में सुन्दरसाथ ने बहुत ही शालीनतापूर्वक अपने व्यवहार से काज़ी शेख इस्लाम को रुला भी दिया और आध्यात्मिक ज्ञान के क्षेत्र में नतमस्तक भी कर दिया।

सो चोट पहिले बचाइए, पीछे घाव मारो पीठ पर।

मरोर न सके कांध को, लड़ ना सके क्यों ए कर।।३६।।

सुअर की पहली सीधी चोट से न टकराकर अपनी रक्षा करनी चाहिए। पुनः उसकी पीठ पर प्रहार करना चाहिए। वह अपनी गर्दन को तुरन्त मोड़ नहीं सकता, इसलिए

वह अपने प्रतिद्वन्दी से तुरन्त लड़ने में असमर्थ होता है।

भावार्थ– इस चौपाई में इस बात की तरफ संकेत किया गया है कि शरातोरा के कट्टर समर्थक हकीकत और मारिफत के ज्ञान से पूर्णतः अनभिज्ञ होते हैं। इस चौपाई में श्रीजी के द्वारा यह सिखापन दी गई है कि इन कट्टरपन्थी मुसलमानों से बहस न करके हकीकत – मारिफत के ज्ञान द्वारा उन्हें नतमस्तक करना है।

तिस वास्ते ए यों कह्या, सब जानवर के कांध में संध।
इनके एकै नली गले मिने, हक तरफ है अंध।।३७।।

इस प्रकार की बात मैंने इसलिए कही है कि सभी जानवरों के कन्धे में सन्धि (दो हड्डियों का मेल) होती है, जिससे वह अपने सिर को घुमा सकता है, किन्तु सुअर के गले में सन्धि नहीं होती, बल्कि एक ही सीधी

नली (हड्डी) चली गई होती है। इसलिये वह अपने सिर को तुरन्त इधर–उधर मोड़ नहीं पाता। इसी प्रकार बहिर्मुखी दृष्टि वाले सच्चिदानन्द परब्रह्म के प्रति अन्धे बने रहते हैं, अर्थात् उनके स्वरूप की पहचान नहीं कर पाते।

भावार्थ– शरीअत (कर्मकाण्ड) की राह पर चलने वाला, चाहे कोई मुस्लिम हो या हिन्दू या क्रिश्चियन, तत्व ज्ञान से सर्वथा दूर ही रहता है। वह परब्रह्म के धाम, स्वरूप, और लीला का चिन्तन करके प्रेम लक्षणा वाले ध्यान की गहराइयों में डूब नहीं पाता , बल्कि अपने सीमित ज्ञान तथा सामान्य पूजा–पाठ, नमाज, एवं प्रार्थना की औपचारिकताओं को ही पूरा कर अहंकार की ऐसी रेशमी चादर ओढ़ लेता है, जिससे वह जीवन में कभी भी मुक्त नहीं हो पाता। ऐसी अवस्था में प्रियतम परब्रह्म का साक्षात्कार कर पाना उसके लिए असम्भव

सी बात हो जाती है। इस चौपाई के चौथे चरण का यही भाव है।

एह बात तुम समझियो, बचाइए सामी चोट।
सोतो तुम बचाए लई, अब होए तुमारे कदमों लोट पोट।।३८।।

तुम इस बात को अच्छी तरह से समझ लो कि तुम्हें सबसे पहला काम अपने विरोधियों की सामने की चोट से अपनी रक्षा करना है, और इस कार्य में तुम सफल हो गए हो। अब तुम्हारे ऊपर प्रहार करने की मानसिकता रखने वाले तुम्हारे चरणों में लोट-पोट होंगे।

भावार्थ- सिद्दीक फौलाद के द्वारा दी गयी यातना के बावजूद भी सुन्दरसाथ ने अपना धैर्य बनाए रखा। इसे ही "सुअर की चोट" से अपनी रक्षा करना कहा गया है। अपने ज्ञान से जिस प्रकार काज़ी-मुल्लाओं को उन्होंने

नतमस्तक कर दिया, वही भाव इस चौपाई के चौथे चरण में सांकेतिक रूप से दर्शाया गया है।

दाभतुल अरज का, मजकूर लिखा अलेहु सलाम।
तहां छाती लिखी सेर की, सींग पहाड़ी बैल इस ठाम।।३९।।

मुहम्मद (सल्ल.) ने दाब्ह–तुल–अर्ज जानवर का वर्णन किया है। उसकी छाती को शेर के समान क्रूर बताया गया है और उसके शिर में पहाड़ी बैल के सींग उगे हुए कहे गए हैं।

भावार्थ– जिस प्रकार पहाड़ी बैल अपने सींगों से डालियों को क्षतिग्रस्त करता रहता है, उसी प्रकार दाब्ह–तुल–अर्ज जानवर की प्रवृत्ति वाले मनुष्य भी शेर की तरह क्रूर हृदय वाले तथा पहाड़ी बैल के सींग की तरह झगड़ालू स्वभाव के होते हैं।

और पीठ लिखी गीदड़ की, तुम लड़ना तिन से।

ए सूरत सब ब्रह्मांड की, तिस वास्ते लिख्या तुमें।।४०।।

दाब्भ-तुल-अर्ज जानवर की पीठ को गीदड़ की पीठ के समान कोमल अर्थात् धार्मिक आचरण से दूर रहने वाला कहा है। तुम्हें इस प्रकार की दुष्प्रवृत्ति वाले लोगों से युद्ध करना होगा। यह इस संसार की वास्तविकता है। इसलिए तुम्हें सावधान करने के लिए मैंने यह पत्र लिखा है।

तिस वास्ते तुम इनसों, छले करना जुध।

तिस वास्ते ऐसा लिखा, बस न होए बिना बुध।।४१।।

इसलिए इन लोगों से तुम्हें छलपूर्वक ही युद्ध करना होगा। बिना जाग्रत बुद्धि के ज्ञान के इनसे युद्ध नहीं जीता जा सकता। तुम्हें सावधान करने के उद्देश्य से मैंने ऐसा

लिखा है।

भावार्थ– छलपूर्वक युद्ध करने का तात्पर्य किसी प्रकार की धोखाधड़ी या कपटपूर्ण आचरण करना नहीं है , बल्कि परिस्थिति के अनुसार अपनी बुद्धिमत्ता के द्वारा कार्य करने से है। जब तारतम वाणी में, "तन दिल दोऊ एकै, रूह कहियत है सोए" श्रृंगार २६/८ तथा "जैसा बाहेर होत है, जो होए ऐसा दिल" किरंतन १३२/४ कहा जाता है, तो बीतक में कपटपूर्ण व्यवहार का आचरण करने के लिए श्रीजी के तरफ से क्यों कहा जाएगा?

श्री प्राणनाथ जी ने उन्हें ज्ञान की तलवार से होने वाले धर्मयुद्ध में यह नीति बतायी कि कट्टरपन्थी मुसलमानों से शरीअत के नियमों, अरबी–फारसी के व्याकरण सम्बन्धी नियमों, तथा भाषायी ज्ञान के सम्बन्ध में

विवाद नहीं करना, बल्कि इन्हें हकीकत एवं मारिफत के ज्ञान से जीत लेना, क्योंकि ये तत्वज्ञान से कोसों दूर हैं।

पहिले इनके रूचता, तुम बोलियो जुबान।
इनके होए इन्हें बस करो, रूचता ही करो बयान।।४२।।

इनके साथ इस तरह की बातचीत तुम्हें करनी चाहिए, जो इन्हें अच्छी लगे। इनसे हमेशा मीठा बोलना, जिससे इनको ऐसा लगे कि तुम उनके अपने हो और उस प्रकार तुम उन्हें अपने वश में कर सकते हो।

भावार्थ– इस चौपाई के पहले चरण का तात्पर्य चाटुकारिता से नहीं लेना चाहिए, बल्कि प्रत्येक स्थिति में सत्य, प्रिय, और हितकारी ही बोलना चाहिए। इतिहास साक्षी है कि औरंगज़ेब की कैद में जाने के बाद कोई विरला ही जीवित लौटा है। इसलिए श्रीजी ने

सुन्दरसाथ को यह विशेष शिक्षा दी है कि कैद में रहते हुए मुसलमानों से कभी भी अक्खड़ भाषा में बात नहीं करनी चाहिए।

इनके गुलाम होए के, तुम करियो उत काम।
ए थोड़ी इसारत लिखी, वास्ते दीन इसलाम।।४३।।

तुम विनम्रता की प्रतिमूर्ति बनकर वहाँ सारे कार्य करना। मैंने संकेतों में थोड़ी सी बात इसलिए की है, ताकि तुम निजानन्द की सच्ची राह पर चलते रहो।

भावार्थ– इस चौपाई के पहले चरण में "गुलाम" शब्द का आशय विनम्रता को धारण करने से है, नौकर बनने या अधीनस्थ होने से नहीं। अक्षरातीत के प्रेम की राह पर चलने वाले कभी किसी का गुलाम बन ही नहीं सकते।

पीछे तो तुम बुधवान हो, खिजमत कै भांत दिखाइयो रंग।

बचन चोखा कहियो, हम रहे तुमारे संग।।४४।।

वैसे तो तुम स्वयं ही बुद्धिमान हो। अपनी सेवा भावना को अनेक प्रकार से दर्शाना। किसी भी बात का शालीनतापूर्वक बेधड़क होकर उत्तर देना, मैं तो पल-पल तुम्हारे साथ ही हूँ।

जो खैरात पातसाही, लेते हैं फकीर।

हम गुजराने तिन पर, तुम हमारे मुरब्बी मीर।।४५।।

आप काज़ी शेख इस्लाम आदि अधिकारियों से कहना कि बादशाह की ओर से फकीरों को जो दान मिलता है, हमारा गुजरान उसी से हो जाएगा। उनसे यह भी कहना कि आप हमारे मुरब्बी (गुरु) और मीर (ज्ञानी) हैं।

तिस वास्ते तुमारे कदम, छोड़े ना दम हम।

तुमको कछू देने कहे, तो मांगियो हवेली तुम।।४६।।

इसलिए हम आपके चरणों को एक पल के लिए भी नहीं छोड़ सकते हैं। यदि आपको कुछ देने के लिए कहें तो उनसे एक हवेली माँग लेना।

खाने को पेट माफक, और मुल्ला पढ़ावने कलाम।

और कागद बेतलमाल से, होए रसूल अलेहुसलाम।।४७।।

उनसे अपनी भूख के अनुकूल भोजन तथा कुरआन-हदीस की शिक्षा देने के लिए मौलवी की माँग करना। मुहम्मद (सल्ल.) जो कुरआन लेकर आए, उसे तथा हदीसों को पुस्तकालय से मँगवा लेना।

सो तुम इनसों मांगियो, हमको दे तालीम।

हमको तरबियत करो, जो कलाम अरस अजीम।।४८।।

इस प्रकार तुम उनसे माँग करना कि आप हमारे लिए कुरआन की शिक्षा की व्यवस्था कीजिए और उसमें जो अर्स-ए-आज़म (परमधाम) की बातें हैं, उसे सुनाकर हमें आनन्दित कीजिए।

जो तुमको न देवहीं, अपनें जान पने।

पर तुम खिजमत न छोड़ियो, ज्यों चाह होए इने।।४९।।

यदि वे कुरआन को अपना समझकर तुम्हारे लिए उसकी शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए राजी न हों, तो भी तुम उनका सम्मान करना नहीं छोड़ना, जिससे तुम्हारे प्रति उनके मन में भी चाहत बनी रहे।

भावार्थ- मुग़ल कैदखाने में थोड़ा सा भी कटु व्यवहार,

कैदी के लिए खतरे की घण्टी हुआ करता था। इसलिए श्रीजी ने उन्हें इस खतरे से आगाह करते हुए बादशाह के अधिकारियों का सम्मान करने की बात कही है। इस चौपाई के तीसरे चरण में "खिदमत" का अर्थ, "सेवा" नहीं, "सम्मान" होगा।

इनका रूचता नाचियो, रिझाइयो भली भांत।
इतनी अरज कीजियो, बात कहें एकान्त।।५०।।

बादशाह के अधिकारियों के साथ वैसा ही व्यवहार करना, जो उन्हें अच्छा लगे। अवसर मिलने पर यह प्रार्थना अवश्य करना कि हम एकान्त में बादशाह से कुछ बातें करना चाहते हैं।

कोई लड़काई बुध सों, राखियो नही सोहबत।
भारी कर बुलाइयो, जब तुमें पूछें इत।।५१।।

किसी चंचल या अल्पबुद्धि वाले व्यक्ति से घनिष्ठता नहीं करना। जब तुमसे कोई तुम्हारे विषय में पूछता है, तो उससे सम्मानपूर्ण शब्दों में बात करना।

ज्यों बुलाओ अपने लड़के को, एह जवाब करो तुम।
जो सवाब तुम लेत हो, तो अरज सुनावे हम।।५२।।

बादशाह के अधिकारियों से कहना कि यदि आप धर्म चर्चा का पुण्य लेना चाहते हैं, तो हम आपसे एक प्रार्थना करते हैं कि जिस प्रकार आप अपने पुत्रों को प्रेमपूर्वक बुलाते हैं, उसी प्रकार की भाषा में आप हमारे प्रश्नों का समाधान कीजिए।

जब कहें के कहो तुम, तब काजी हजरत।

तिनसे तुम यों ही कहो, बात सुनो हमारी एकान्त।।५३।।

जब वे तुमसे बोलने के लिए कहें, तब तुम उन्हें क़ाज़ी या हज़रत कहकर सम्बोधित करना। उनसे तुम इस प्रकार बात करना कि आप हमसे कियामत या इमाम महदी के सम्बन्ध में केवल एकान्त में ही बात करें।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में प्रयुक्त "काजी" और "हजरत" शब्द से यही निष्कर्ष निकलता है कि पूर्वोक्त सभी चौपाइयों में श्रीजी ने सुन्दरसाथ को बादशाह के अधिकारियों से सम्बन्धित व्यवहार की ही शिक्षा दी है। यदि बादशाह से सीधे व्यवहार का प्रसंग होता, तो क़ाज़ी और हज़रत शब्द का प्रयोग नहीं होता। चौपाई ४५ से चौपाई ५२ तक में बादशाह से सीधे व्यवहार का प्रसंग नहीं है, बल्कि क़ाज़ी शेख इस्लाम एवं

अन्य अधिकारियों से बात करने का प्रसंग है।

जो कोई आवे हमारा, ताए सुनावें सनंधें कुरान।
ओ आकीन ल्यावे रसूल पर, जिनको होए पहिचान।।५४।।

उनसे यह भी कह देना कि यदि हमारा कोई हिन्दू भाई हमसे मिलने आता है, तो उसे हम सनद वाणी तथा कुरआन सुनाएँगे, जिससे उसे मुहम्मद (सल्ल.) की पहचान हो जाये और वह उन पर ईमान लाये।

जिन भांत हमको, आकीन दिया श्री मेहराज।
त्यों हम रसूल दिखाए के, यों करें इसलाम का काज।।५५।।

जिस प्रकार श्री मिहिरराज जी ने हमारे अन्दर रसूल मुहम्मद (सल्ल.) के प्रति विश्वास दिलाया है, उसी प्रकार हम भी मुहम्मद साहिब की पहचान कराकर इस्लाम का

कार्य करेंगे।

भावार्थ– इस्लाम शान्ति की शिक्षा देता है, इसलिए इस्लाम की ओट में किसी को डरा–धमकाकर, लोभ देकर, या हिंसा के बल पर मुहम्मद साहिब पर ईमान दिलाना, इस्लाम का कार्य नहीं है, बल्कि इस्लाम को कलंकित करना है।

इस चौपाई के दूसरे चरण में "मिहिरराज" शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है, क्योंकि पत्र लिखने पर कोई भी अपने हाथ से अपनी महिमा सूचक शब्द श्री प्राणनाथ (इमाम महदी) कैसे लिख सकता है?

हमसों मुलाकात करे, खाए पिए हम में।
साफ दिल होए रसूल पर, होए आकीदा इसलाम से।।५६।।

जो हिन्दू हमसे मुलाकात करेगा, वह हमारे साथ खाने–

पीने का सम्बन्ध रखेगा ही, तथा वह पवित्र दिल होकर मुहम्मद साहिब पर और इस्लाम पर विश्वास भी लाएगा।

तब कलमा कहे मुख से, मांगे नही तुम से।
आस तुमारी ना करें, ना डर दिखाओ उने।।५७।।

तब वह स्वेच्छा से प्रसन्नतापूर्वक अपने मुख से कलमा कहेगा, और इसके बदले में आपसे कुछ माँगेगा नहीं और संसार की किसी भी वस्तु की आशा नहीं करेगा। इसलिए आप भय दिखाकर किसी को मुसलमान बनाने का प्रयास न कीजिए।

और जो तुम जाहिरी, खिलाने लगो गोस्त उन्हें।
तो ढिग ना आवे तुमारे, बड़ा दोस होवे इनसें।।५८।।

यदि आप उनके ऊपर शरीअत थोपकर ज़बरदस्ती

उनको गाय का माँस खिलाओगे, तो आपसे घृणा करने के कारण कोई भी आपके पास नहीं आयेगा, तथा ऐसा करना खुदा की दृष्टि में बहुत बड़ा गुनाह होगा।

एक ठौर लेके, जागा होने देओ तुम।
जब होवे उने पहिचान, तब फुरमाया करें सब कुम।।५९।।

उनसे कहना कि वे तुम्हारे लिए एक स्थान की व्यवस्था कर दें और वहाँ से हम मुहम्मद (सल्ल.) की पहचान कराएंगे। जब उन्हें मुहम्मद साहिब के वास्तविक स्वरूप की पहचान हो जाएगी, तब वे आपका कहा हुआ सारा काम करेंगे।

तब रसूल ऊपर आकीन, ल्यावेंगे सब कोए।
तब फुरमाया क्यों ना करें, आवे हुकम तले सब सोए।।६०।।

इस प्रकार सौहार्दपूर्ण वातावरण में सभी हिन्दू मुहम्मद साहिब पर विश्वास लाएँगे। तब सभी एक परब्रह्म के आदेशों को शिरोधार्य करेंगे और सत्य ज्ञान के सिद्धान्त को मानेंगे।

भावार्थ– उपरोक्त दोनों चौपाइयों का आशय यह न समझना चाहिए कि यहाँ हिन्दुओं को मुसलमान बनाने की बात कही गयी है, बल्कि यहाँ एक वैश्विक धर्म की स्थापना की कल्पना की गयी है, जिसमें किसी प्रकार का साम्प्रदायिक भेदभाव न रह जाए।

यहाँ श्रीजी के कथन का आशय यह है कि जब हिन्दुओं को यह पता चल जाएगा कि जिन श्री कृष्ण की वे पूजा करते हैं, उन्हीं श्री कृष्ण की शक्ति मुहम्मद साहिब के रूप में आयी, तथा हमारे विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक को ही कतेब ग्रन्थों में आखरूल इमाम मुहम्मद महदी

साहिबुज्ज़मां कहा गया है, तो हिन्दू-मुस्लिम का सारा वैर समाप्त हो जाएगा, तथा हिन्दू देवी-देवताओं की मिथ्या पूजा-अर्चना को छोड़कर एक सच्चिदानन्द परब्रह्म की आराधना करने लगेगा।

हम पेहले मिलाप किया, सेख सलेमान से।
तब भी हम ए ही कह्या, पर ओ बात ना सुने।।६१।।

हमने पहले शेख सुलेमान से भेंट की थी, और उससे हिन्दू-मुस्लिम (वेद-कतेब) के वैश्विक एकीकरण की बात की थी। हमने उसे यह भी समझाया था कि यदि तुम औरंगज़ेब से हमारी भेंट करवा देते हो, तो सारे संसार में एक सत्य की स्थापना हो सकती है, किन्तु उसने हमारी बात को अनसुना कर दिया।

हम हाथ सेख सलेमान के, ए बात कहलाई सुलतान।
रखो हमारे भेष को, तब सब खलक सुनें कान।।६२।।

शेख सुलेमान के माध्यम से मैं बादशाह तक यह बात कहलवाना चाहता था कि हमारी हिन्दू वेश–भूषा में ही हमसे बातें करो और हमारी इस वार्ता को सारा संसार सुनेगा, ताकि एक सच्चे विश्व धर्म की स्थापना हो सके, जिसमें हिन्दू–मुस्लिम का कोई भेद न रह जाये।

तो हम बोहोत खलक को, समझावें कलाम।
तब कलमा कहे रसूल का, ए सब खलक तमाम।।६३।।

यदि औरंगज़ेब के साथ हमारी वार्ता हो जाती तो हम एक बहुत बड़े जनसमूह को कुरआन की बातें समझा सकते थे, और सारी जनता मुहम्मद साहिब के लाये हुए कलमें "ला इलाह इल्लल्लाह" तथा तारतम ज्ञान के "क्षर

अक्षर अक्षरातीत" पर एक साथ विश्वास लाती।

पीछे हलके हलके सब कोई, कोई न फेरे फुरमान।
कबूल करेंगे तहकीक, तब इनों होए पहिचान।।६४।।

बाद में धीरे-धीरे सभी लोग तुम्हारे निर्देश को मानेंगे। जब उन्हें वास्तविक सत्य धर्म की पहचान हो जायेगी, तब उसे वे निश्चित रूप से ग्रहण करेंगे।

पर तब सेख सलेमान नें, सुनाई नहीं सुलतान।
अब पातसाह को सुनाए के, जो आवे इनें पहिचान।।६५।।

लेकिन उस समय शेख सुलेमान ने हमारी बातें औरंगज़ेब को नहीं बतायीं। अब आप लोग अवसर मिलने पर कुरआन की हकीकत का वर्णन करना, जिसे उसे सत्य की पहचान हो जाए।

पीछे तुम निकलोगे, हटे ना कोई पीछे।

सब दौड़ेंगे आपै से, पैठने इसलाम में।।६६।।

कुछ समय के पश्चात् निश्चित रूप से तुम कैदखाने से बाहर निकलोगे ही और तुममें से कोई भी सत्य की राह से पीछे नहीं हटेगा। तुम्हारे इस श्रेष्ठ आचरण से सभी लोग निजानन्द की सच्ची राह को ग्रहण करने के लिए दौड़ेंगे।

भावार्थ– औरंगज़ेब की शरातोरा के विरूद्ध सुन्दरसाथ ने औरंगज़ेब तथा काज़ियों–मौलवियों को विश्व धर्म का सन्देश दिया, और यातना झेलने के बाद भी इनका विश्वास ज़रा भी नहीं डगमगाया। इसका दूरगामी परिणाम यह हुआ कि निजानन्द मार्ग का एक ऐसा आंगन तैयार हो गया, जिसमें संसार का प्रत्येक मतावलम्बी शाश्वत् ब्रह्मानन्द का रसपान कर सकता है।

जो फुरमाया रसूल का, सिर चढ़ावते तब।

हमारा साथ बोहोत है, आवे दौड़ के सब।।६७।।

मुहम्मद (सल्ल.) ने जिस कियामत तथा इमाम महदी के प्रकट होने का जिक्र किया है, यदि उसको औरंगज़ेब सहित सभी दरबारी स्वीकार कर लेते, तो अपने बहुत से सुन्दरसाथ विश्व धर्म के स्वरूप सर्वपन्थ एकीकरण के इस अभियान में सरलतापूर्वक दौड़ते हुये सम्मिलित हो जाते।

भावार्थ– वस्तुतः निजानन्द की राह उस वैश्विक धर्म की राह है, जिसमें रूढ़ियों, कर्मकाण्डों, तथा जाति–पाति, एवं ऊँच–नीच के क्षुद्र विचारों के लिए कोई स्थान नहीं है।

श्री मेहराजें तिन को, दिया रसूल पर ईमान।

पर हम पर कसाला पड़ा, ताथे हटे न ल्यावें पहिचान।।६८।।

श्री मिहिरराज जी ने (मैंने) सुन्दरसाथ में मुहम्मद साहिब के प्रति अटूट ईमान पैदा किया था, किन्तु सन्देश देने वाले सुन्दरसाथ को जो यातना दी गयी, उसका परिणाम यह निकला कि कई सुन्दरसाथ इस वैश्विक एकीकरण के अभियान से हट गए, तथा उन्हें मुहम्मद साहिब एवं इमाम महदी की वास्तविक पहचान नहीं हो सकी।

खुद को पूछ के, काजी मनावें तुमारा मन।

तुम जानो त्यों समझाओ, ज्यों दाखिल होवे इन।।६९।।

यदि काजी शेख इस्लाम स्वयं बादशाह से पूछकर आप लोगों को बादशाह से बातचीत करने के लिए राज़ी कर

ले, तब आप लोगों को जैसा उचित लगे उस तरह से बादशाह को समझाना, जिससे इल्म-ए-लुदन्नी के उजाले (तारतम ज्ञान के प्रकाश) में वह भी वैश्विक एकीकरण के मार्ग में सम्मिलित हो जाए।

तिन पर जोर जुलम न करें, न पकड़े कलमें को।
हदीसां देखे होवे, कलमा कहने मों।।७०।।

उन्हें यह समझाना कि हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिए तलवार के बल से किसी पर जुल्म न ढाये। ऐसा करने पर कोई भी कलमे को दिल से स्वीकार नहीं कर सकता। इस सम्बन्ध में कोई भी यह देख सकता है कि हदीसों में और कुरआन के वचनों में क्या कहा गया है?

भावार्थ- कुरआन के पारा २२, सूरः ३३ अहजाब, आयत ४५ में लिखा है कि ऐ मुहम्मद! हमने तुम्हें गवाही

देने वाला और डराने वाला बनाकर भेजा है। और आयत ५६ में लिखा हे कि जो लोग खुदा और उसके पैगम्बर को तकलीफ पहुँचाते हैं, उन पर खुदा दुनियाँ और आखिरत में लानत कराता है। उनके लिए उसने ज़लील करने वाला अजाब तैयार किया है।

पारा ११, सूर यूनुस १०, आयत ४० में लिखा है कि इस तरह जो लोग इनसे पहले थे, उन्होंने झुठलाया था। देख लो उनका क्या अन्जाम हुआ?

कोई पकड़ काहू की ना करे, ठौर ठौर समझावें सेर।
तिनको कुरान से, सब करे हम जेर।।७१।।

आप लोग बादशाह से यह भी कहना कि किसी हिन्दू को जबरन पकड़कर मुसलमान न बनाया जाए। ऐसा करने वालों को बार-बार समझाया जाए। यदि वे इसके

लिए राजी नहीं होते हैं, तो हम उन्हें कुरआन से समझाकर नतमस्तक करेंगे।

ठौर ल्यावें सबन को, तब आवें श्री मेहराज।
तब आवे वह फकीर, जहां खड़े तुम आज।।७२।।

तुम बादशाह से कहना कि जिस शरातोरा को अपनाकर अपने को सच्चा मुसलमान सिद्ध कर रहे हो, जब वह फकीर इमाम महदी आएंगे तो हकीकत और मारिफत की राह बताकर सबको सच्चे मुसलमान की राह पर स्थित करेंगे।

ए भी वही इसलाम है, हम खड़े उन पर सब।
तुम चाहत दीन महम्मद का, बड़ी करत तलब।।७३।।

वही यथार्थ रूप से इस्लाम का सच्चा स्वरूप है, जो

हमारे इमाम महदी ने हमें दर्शाया है और जिसका हम अनुसरण कर रहे हैं। हे बादशाह! यद्यपि तुम मुहम्मद साहिब के दीन-ए-इस्लाम को बहुत चाहते हो और आन्तरिक रूप से इमाम महदी से मिलने की भी इच्छा करते हो।

चाहिये कूवत हक सुभान की, फकीर करत जो काम।
सो तो सब हिकमत से, रास होवे इन ठाम।।७४।।

धर्म के विस्तार के लिए परब्रह्म (अल्लाह तआला) की आध्यात्मिक शक्ति होनी चाहिए। आखरूल इमाम मुहम्मद महदी ने उस आध्यात्मिक सम्पदा को प्राप्त कर लिया है और वे वैश्विक एकीकरण का जो कार्य कर रहे हैं, वह युक्तिपूर्ण तरीकों से अनुकूल परिस्थितियों में अवश्य पूरा होगा।

जोर से कीजे मुसलमान, तो साफ न होए दिल उन।
राजी न होवे इन पर, तो क्यों पावे कदम मोमिन।।७५।।

यदि आप तलवार के बल से किसी हिन्दू को जबरदस्ती मुसलमान बनाओगे, तो उसका दिल कभी भी मुहम्मद साहिब और इस्लाम के प्रति पवित्र भावना नहीं रख सकेगा। जब वह मानसिक रूप से सन्तुष्ट ही नहीं होगा, तो वह मोमिनों की राह पर कैसे चल सकता है?

भावार्थ– धर्म अन्तरात्मा की पुकार है, जीवन है, प्राण है, और श्रृंगार है। उसे भय या लोभ के द्वारा कलमा या मन्त्र सुनाकर जबरन थोपा नहीं जाना चाहिए। इस्लाम और ईसाई मत के अनुयायियों ने सबसे बड़ी भूल की है कि उन्होंने तलवार और धन से अपने धर्म को फैलाना चाहा। उनके इस कार्य को धर्म की दृष्टि से कभी भी न्यायोचित नहीं कहा जाएगा। इस प्रकार का कार्य तो

धर्म का आवरण ओढ़कर राज सत्ता को पाने के लिए किया जाता है।

तिस वास्ते एती तुम, जब कह के बुलाओ लड़के।
तब समझाओ तिन को, पीछे बुध माफक करियो ऐ।।७६।।

इसलिये हे सुन्दरसाथ जी! आप लोग इस बात का ध्यान अवश्य रखना कि जब किसी को बुलाना पड़े, तो इतने प्रेम से बुलाना कि जैसे अपने प्रिय पुत्र को बुलाया जाता है। जब कोई आपके पास आता है, तो उसे प्रेमपूर्वक समझाइये और अपनी बुद्धि के अनुकूल उससे सद्व्यवहार कीजिए।

और बोहोत कह के, मता ना जानो तुम।
थोड़ा थोड़ा कहियो, फेर लिख कर भेजें हम।।७७।।

किसी जिज्ञासु के समक्ष एक ही बार सारा ज्ञान कह देना समझदारी नहीं है। उसे थोड़ा–थोड़ा बताना चाहिए, जिससे कि वह उसे आत्मसात् करता जाये। इस सम्बन्ध में मैं पुनः आपको लिख कर भेजूँगा।

पर एक बात बड़ी हुई, जो करे तुमारा विस्वास।
अपना भी भेष राख के, काम करने की थी आस।।७८।।

अपनी हिन्दू वेशभूषा त्याग कर बादशाह तक पहुँच जाना जागनी अभियान की एक बहुत बड़ी उपलब्धि है, किन्तु यदि वह आपकी हिन्दू वेशभूषा पर विश्वास कर लेता, तो मेरी इच्छा यही थी कि आप लोग अपनी मूल वेशभूषा में ही जाते।

और हिन्दू के भेस से, होए नही ए काम।

इन भेस सों मजलिस, परतीत न करे इसलाम।।७९।।

किन्तु हिन्दू वेशभूषा में जाने पर औरंगज़ेब से मिलने का काम ही नहीं हो सकता था। मुसलमानों की सभा में हिन्दू वेश से जाने पर इस्लाम धर्म के कट्टर अनुयायी विश्वास ही नहीं कर सकते थे।

ना इनें आवे परतीत, ना मजलिस बैठे।

सो तो होने का नहीं, ना इन्हें विस्वास जेठे।।८०।।

हिन्दू वेश में जाने पर मुस्लिम लोगों को न तो विश्वास होता और न ही उनकी सभा में जाने का अवसर मिलता। उस अवस्था में किसी भी प्रकार से उनका अधिक विश्वास नहीं पाया जा सकता था।

तिस वास्ते तुम इन के, होए के सेवक।

एक मित्र पना करो इनों सों, तब ए पहिचानेंगे हक।।८१।।

इसलिये आप लोग इनके साथ सेवक की तरह अति विनम्र स्वभाव वाला बन जाइए और इनसे मित्रवत् व्यवहार कीजिए, जिससे ये खुलकर आप लोगों के साथ चर्चा करें एवम् धनी की पहचान करें।

तुम होवोगे मुरीद उनके, सिध होवे सब काम।

पर ए आस्ते आस्ते होवहीं, दाखिल इन इसलाम।।८२।।

यदि आप लोग उनके सामने शिष्य जैसे जिज्ञासु एवं विनम्र बने रहेंगे, तो सभी कामों में सफलता मिल जायेगी। किन्तु सभी को निजानन्द की राह में लाने का काम धीरे-धीरे ही हो सकेगा।

भावार्थ- यदि सुन्दरसाथ उग्र स्वभाव वाले मुल्ला लोगों

के सामने बहस करते तो परिणाम उल्टा हो सकता था, इसलिये श्रीजी का निर्देश था कि उनके सामने शिष्य की तरह चुपचाप सुनें तथा अवसर मिलने पर तारतम ज्ञान द्वारा उन्हें नतमस्तक कर दें।

जब एती बात को, कबूल करे मुख से।
तुम बुलाइयो लड़के, भेले रहियो इन में।।८३।।

जब आपकी बातों को वे लोग अपने मुख से स्वीकार कर लें, तब भी आप उनसे प्रेमपूर्वक ही व्यवहार करना तथा उनके साथ घुल–मिलकर रहना।

तुम हिन्दुओं के भेस से, जिन करो सरम।
पहिले तुम सिर भान्या सरम का, तुम जानत एह मरम।।८४।।

हिन्दू भेष का परित्याग करने के कारण आप किसी भी

प्रकार का संकोच न करें। आपने तो पहले ही लोक लज्जा का त्याग कर दिया है। आप इस रहस्य को अच्छी तरह से जानते हैं कि त्रिगुणातीत मार्ग पर चलने वाले लोक लज्जा से सर्वथा परे हो जाते हैं।

कोई तुमको मिले, ताए चोखा दीजो जवाब।
देखो सब सास्त्रों को, क्या लिखा इन के बाब।।८५।।

मुस्लिम वेशभूषा धारण करने के लिए यदि कोई हिन्दू तुम्हें शर्मिन्दा करता है, तो उसे तुम करारा जवाब देना। उनसे कहना कि पहले अपने शास्त्रों को पढ़कर देखो कि उनमें इस सम्बन्ध में क्या लिखा है?

भावार्थ– स्वयं को सनातनी कहलाने वाले रूढ़िवादिता की बीमार मानसिकता से ग्रसित होते हैं। वे छूत–छात को ही अपनी धार्मिक पवितत्रा, निन्दा को ही वेदपाठ,

कर्मकाण्ड को ही भक्ति, जातीय श्रेष्ठता को परमपद की प्राप्ति, और जड़ पूजा को अपने जीवन का आधार मानते हैं। उनमें वेदों में वर्णित धर्म के वैश्विक स्वरूप को समझने की प्रवृत्ति ही नहीं होती। ऐसे ही लोगों के विरोध करने पर श्रीजी ने सुन्दरसाथ को करारा जवाब देने का निर्देश दिया है।

तीन काण्ड वेद वेदान्त के, वल्लभाचारज के मत।
संकराचारज नें क्या कह्या, क्या कह्या गीता में इत।।८६।।

ज्ञान, कर्म और उपासना की व्याख्या करने वाले वेदों, वेदान्त के सूत्रों, तथा वल्लभाचार्य के मत में क्या कहा गया है। आदि शंकराचार्य तथा श्रीमद्भगवद् गीता की वाणी इस सन्दर्भ में क्या कहती है? उसका भी चिन्तन कीजिए।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाई में विरोध करने वाले हिन्दुओं को इन ग्रन्थों का चिन्तन कर अपनी संकीर्णता छोड़ने का निर्देश दिया गया है।

अदित पुरान भागवत में, जैसा लिखा कलाम।
तिन ऊपर तुम चलो, बीच दीन इसलाम।।८७।।

आदित्य पुराण तथा श्रीमद्भागवत् में जिन श्रेष्ठ वचनों का संकलन है, उनको तुम अपने आचरण में लाओ। यही वास्तविक दीन इस्लाम या निजानन्द का मार्ग है।

तोलो मत सबन की, और अलेह सलाम।
ज्यादा कम है किन की, सब मिल बैठे इन ठाम।।८८।।

हे साथ जी! सभी हिन्दू धर्मग्रन्थों और हदीसों के ज्ञान की समीक्षा करो। इसके पश्चात् यह निष्कर्ष निकालो कि

किस ग्रन्थ में किस विषय से सम्बन्धित बातें ज्यादा श्रेष्ठ हैं और किस ग्रन्थ में कम? यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार करो तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि संसार के सभी धर्मग्रन्थों (वेद–कतेब) का ज्ञान तारतम वाणी में समाहित हो चुका है।

नबी नारायण की, सनंध मारियो मोंहों पर।
तब होवेंगे सरमिंदे, तुम करो चरचा यों कर।।८९।।

यदि कोई रूढ़िवादी हिन्दू तुम्हें परेशान करता है, तो उन्हें नबी–नारायण की सनद का प्रकरण सुनाना, तब उन्हें अपनी भूल का अहसास होगा और वे लज्जित होंगे। ऐसे लोगों से निडर होकर, तुम्हें इसी प्रकार चर्चा करनी चाहिए।

भावार्थ– नबी और नारायण की सनद को मुँह पर मारने

का आशय यह है कि हिन्दुओं को इस बात के लिए लज्जित करना है कि वेद का प्रतिपाद्य विषय अक्षर या अक्षरातीत हैं, जिनको छोड़कर वे आदिनारायण को सर्वोपरि माने बैठे हैं। इस प्रकार स्वयं वेद विरूद्ध आचरण करके, अक्षरातीत की भक्ति करने वाले सुन्दरसाथ को क्यों छोटा समझ रहे हैं?

ए तो सब में रसमें, लड़त हैं अहंकार।

जब फुरमान के मायने, जाहिर खोले परवरदिगार।।९०।।

हिन्दू और मुसलमानों के विरोध का मुख्य कारण रीति-रिवाजों की भिन्नता तथा अहंकार की अधिकता है। जब स्वयं अक्षरातीत ने श्री प्राणनाथ जी (इमाम महदी) के स्वरूप में प्रकट होकर सभी धर्मग्रन्थों (वेद-कतेब) के गुह्य रहस्यों को उजागर कर दिया है।

तब सब सरमिंदे होएंगे, रहे न काहू को गुमान।
जो बसबसा छाती पर, करत है सैतान।।९१।।

तब उनको पढ़ने पर हिन्दू-मुस्लिम सभी अपनी भूलों पर शर्मिन्दगी महसूस करेंगे और किसी के अन्दर कोई अहंकार नहीं रह जाएगा। यह अहंकार ही वह शैतान या कलियुग है, जो सबकी छाती पर चढ़ा रहता है अर्थात् सबको अपने अधीन किए रहता है।

पकड़ बैठे अन्धेर को, और बढ़ता गुमान।
सो सबे गल जाएंगे, और मरेगा सैतान।।९२।।

तारतम ज्ञान के अवतरण से पहले हिन्दू-मुस्लिम सभी अज्ञानता के अन्धकार में भटक रहे थे, और उनका अहंकार क्रमशः बढ़ता ही जा रहा था, किन्तु तारतम वाणी के उजाले में अज्ञान रूपी राक्षस (शैतान) का वध

हो जाएगा, और सभी धनी के प्रेम में द्रवित हो जाएँगे अर्थात् धनी के प्रेम भाव में डूब जाएंगे।

तब सिर नीचा करके, आवेंगे भेड़ो न्यांत।

अब सब जमा होत हैं, पर इन उल्टी ग्रही सब बात।।९३।।

अज्ञानता का आवरण हटते ही सभी लोग भेड़ों की तरह प्रियतम अक्षरातीत के चरणों में आयेंगे। सभी ब्रह्मसृष्टियाँ और ईश्वरीय सृष्टियाँ धनी के चरणों में आ रही हैं, किन्तु शरीअत के बन्धनों में फँसे हुए इन मुसलमानों ने सारी बातों का उल्टा ही अर्थ ले रखा है, अर्थात् ये हकीकत और मारिफत की राह अपनाना ही नहीं चाहते।

दरवाजा इसलाम का, कुंजी गंज खुदाए।

सो हकें मेहर कर, दई तुमको पहुंचाए।।९४।।

प्रेम के सागर प्रियतम अक्षरातीत ने अपार कृपा करके आपको तारतम ज्ञान की कुँजी दी है। इससे आप निजानन्द का द्वार खोल सकते हैं।

भावार्थ– तारतम वाणी (श्रीमुखवाणी) के ज्ञान से ही धनी के स्वरूप की पहचान होती है, जिससे उन्हें अपने दिल में बसाया जा सकता है। धनी की शोभा को दिल में बसाने पर ही वास्तविक निजानन्द प्राप्त होता है, मात्र तारतम की छः या एक चौपाई को याद करने से नहीं।

तुम सिर ऊंचो देखियो, जिन नीचा देखो तुम।
जो तुम पर एक दोस बदले, तो दावा लेते कुम।।९५।।

आपने बहुत ही महान कार्य किया है, इसलिये हमेशा ही अपने सिर को ऊँचा करके चलिये। किसी के कहने मात्र से शिर झुकाकर (लज्जित होकर) चलने की कोई

आवश्यकता नहीं है। यदि तुम्हारे अन्दर कोई एक दोष गिनाता है, तो भी तुम स्वयं को ब्रह्मात्मा का दावा लेकर स्वाभिमान पर खड़े रहो।

भावार्थ– "कुम" शब्द का तात्पर्य खड़े होने से है। जिस प्रकार मुर्दे को भी जीवित करने की शक्ति ईसा के द्वारा उच्चारित शब्द कुम में थी, इसी प्रकार मोमिनों को भी ऐसी शक्ति प्रदान की, जब वे श्रीजी का सन्देश प्रसारित करने गए।

गोविन्द भेड़ा तुम जानत, ताको बल न चले लगार।
एक पांच बरस को बालक, ऐ ताए न सके मार।।९६।।

तुमने गोविन्द पटेल नामक भूत की बनायी हुयी मायावी प्रेत नगरी के बारे में तो सुना ही होगा। तुम धनी की मेहेर भरी ऐसी छाँव के तले हो कि इस माया नगरी का

मायाजाल, तुम्हें कभी भी मोह में नहीं डाल सकता। धनी की कृपा को प्राप्त कर लेने वाले एक पाँच वर्ष के बालक को भी अपने फँदे में फँसाने की शक्ति इस माया नगरी में नहीं है।

तुम साथी सिरोमन, एक दूजे थे सिरदार।
गोविन्द भेड़ा तुमें क्या करे, हकें पहिले किए खबरदार।।९७।।

आप सभी एक-दूसरे से बढ़कर प्रमुख शिरोमणि सुन्दरसाथ हो। धाम धनी ने तारतम ज्ञान से आपको पहले ही सावचेत कर दिया है। भला यह मायावी भूत नगरी तुम्हारा क्या बिगाड़ लेगी?

अब तुम तो जने बार हो, और भागे तुम सों।
सो अब ही आन मिलत है, सब एक होए तुम में।।९८।।

भले ही अभी तुम १२ हो और जो सुन्दरसाथ मुसलमानों के डर से तुम्हारा साथ छोड़कर चले गए, वे भी तुमसे भविष्य में आकर मिलेंगे। इस प्रकार सब सुन्दरसाथ संगठित रूप में एक हो जाएँगे।

अब तो तुम बार हो, तुमें मिलसी बारे हजार।
और ताबे तुमारे होएंगे, तुमहीं हो सिरदार।।९९।।

अभी तो आपकी संख्या मात्र १२ दिखाई दे रही है, किन्तु जागनी तो १२००० की होनी है। आने वाले सभी सुन्दरसाथ तुम्हारे आदर्शों के अनुगामी (अनुचर, अनुसरण करने वाले) होंगे। आप सब सुन्दरसाथ में प्रमुख हो।

तुम अपने सुकन को, अब जाहिर करो तुम।

तामें तुमारा आवेस, इस्क जाहिर होए बीच कुम।।१००।।

वहाँ पर अब तुम अपने तारतम ज्ञान के वचनों के द्वारा इमाम महदी और कियामत के प्रकट होने की बात को स्पष्ट रूप से उजागर कर दो। उन वचनों में तुम्हारे हृदय का प्रेम भरा आवेश होगा, जिसके द्वारा धनी का इश्क प्रकट हो जाएगा।

गाम गाम देस देस, हिन्दू मुसलमान।

कदम तुमारे बन्दहीं, करके पहिचान।।१०१।।

प्रत्येक गाँव-गाँव और देश-देश में हिन्दू तथा मुसलमान तुम्हें ब्रह्ममुनि के रूप में पहचानेंगे और तुम्हारे चरणों की वन्दना करेंगे।

अब तुम तुमारी नजर को, जिन करो तुम और।

जो कदी तुमें दिल में, आवे नही एह ठौर।।१०२।।

अब तुम अपनी दृष्टि को अपने मूल लक्ष्य से इधर-उधर न भटकाओ। कदाचित तुम्हें दिल में ऐसा लगता है कि मुझे कामा पहाड़ी में नहीं रहना चाहिए।

तो हम और ठौर जाए के, मारें मोरचा फेर।

लड़ाई करे दज्जाल सों, फेर आवें दूसरी बेर।।१०३।।

तो मैं कहीं और जाकर जागनी कार्य करूँगा और औरंगज़ेब की शरातोरा को चुनौती दूँगा। मैं पुनः दूसरी बार दिल्ली आऊँगा। अपने हकीकत-मारिफत के ज्ञान से इन कट्टरपन्थी लोगों से धर्मयुद्ध किया जाएगा।

एह विचार तो करें, जो तुमें उल्टे होए।

जेते कोई मुसलमान, सब चरन बन्देंगे सोए।।१०४।।

किन्तु कामा पहाड़ी को छोड़कर कहीं और जाने का विचार करना तो तब उचित है, जब ये मुसलमान आप लोगों के साथ दुर्व्यवहार करें। एक दिन ऐसा समय अवश्य आएगा, जब यही मुसलमान आपके चरणों में शीश झुकाएँगे।

भावार्थ– कामा पहाड़ी दिल्ली से मथुरा के बीच में ऐसा स्थान है, जो एकान्त में है। औरंगज़ेब को सन्देश देने के समय श्रीजी यहीं पर ठहरे रहे।

तुमको सब कोई धन धन, करेगा संसार।

जो बानी इस्क देखेंगे, एह तरफ परवरदिगार।।१०५।।

जब संसार के लोग प्रियतम अक्षरातीत की पहचान

करने वाली आपकी प्रेममयी तारतम वाणी को सुनेंगे, तो इस संसार का हर प्राणी आपको धन्य-धन्य कहेगा।

जो जोस तुमारा देखहीं, तो मारे बिना मरे।
जोलों तुमारी बात को, सुलतान चितसों ना धरे।।१०६।।

जब लोग आपके ज्ञान के जोश को देखेंगे, तो बिना मारे ही मर जायेंगे अर्थात् पूर्ण रूप से समर्पित हो जायेंगे। जब तक आप लोगों की बातों को बादशाह अपने दिल में बसा नहीं लेता है, तब तक आप धैर्यपूर्वक वहीं निवास कीजिए।

सो भी इस वास्ते, सुलतान न दिया कान।
एक तो नजर ऊपर की, दूजी बातून की ना पहिचान।।१०७।।

औरंगज़ेब बादशाह ने हमारी बातों पर ध्यान इसलिए भी

नहीं दिया क्योंकि शरीअत के बन्धनों में फँसे होने के कारण उसकी दृष्टि बर्हिमुखी थी। दूसरा, उसकी अन्तर्दृष्टि नहीं खुली थी कि वह मेरे स्वरूप को पहचान पाता।

और इनके दिल में, हुआ है चौकस।
जो हम पर दगा करनें, आए मेटन मेरा जस।।१०८।।

सारे दरबारियों ने बादशाह के दिल में यह संशय पैदा कर दिया, जिससे वह अपनी सुरक्षा के प्रति सावधान हो गया था। वह सोचने लगा कि मोमिनों के भेष में लोग मेरे साथ धोखा करने आए हैं और मेरी सल्तनत को हटाकर मेरा यश समाप्त करने आए हैं।

भावार्थ– सारे दरबारियों ने बादशाह के कान भर दिए थे कि इन बारह मोमिनों में छः तो दिल्ली के हैं, जिनमें

कायम मुल्ला और शेख बदल ही मुसलमान हैं, शेष चार हिन्दू हैं। इन चार हिन्दूओं में चंचल, दयाराम की दिल्ली में दुकानें हैं। इन दस हिन्दुओं का मुस्लिम भेष में आना यह संशय पैदा करता है कि कहीं आपके किसी दुश्मन ने इन्हें न भेजा हो। आपका इनसे एकान्त में बातें करना उचित नहीं है, क्योंकि ये कभी भी धोखा दे सकते हैं।

औरंगज़ेब बहुत ही शंकालु स्वभाव का व्यक्ति था। इसी शंका में उसने सुन्दरसाथ से बात करना उचित न समझा। यद्यपि उसने प्रारम्भ में चुगलखोरों की बातों में ध्यान नहीं दिया और मोमिनों से बात करने का तीव्र इच्छुक बना रहा, किन्तु धीरे-धीरे उसका मनोबल कमज़ोर होता गया और वहम् का रोग बढ़ता गया। परिणामस्वरूप, सुन्दरसाथ के चार महीने तक दिल्ली में रहने पर भी उनको बुलाकर कभी बात करने में उसने

दिलचस्पी नहीं ली।

और तीसरा एह, जो जाहिर होत इमाम।

तब सरा तोरा दोऊ उठे, तो कोन पकड़े काम।।१०९।।

और तीसरी बात यह थी कि औरंगज़ेब यह सोचा करता था कि यदि इमाम महदी जाहिर हो जायेंगे तो शरातोरा का राज्य समाप्त हो जाएगा। ऐसी स्थिति में इस देश पर हुकूमत करने वाला कौन होगा?

और बाहिर के अरथ में, मेंहदी ईसा दज्जाल।

पकड़ेंगे वजूद को, मिट जासी सब हाल।।११०।।

बाह्य अर्थों में मुस्लिम लोग ऐसा मानते हैं कि कियामत के समय आखरूल इमाम मुहम्मद महदी, ईसा रूह अल्ला, तथा दज्जाल, जब मानव तन में आयेंगे तो भयंकर

युद्धों के कारण हमारी यह शान–शौकत तथा सुख–सुविधायें समाप्त हो जायेंगी।

भावार्थ– कियामत का आना खुशी की घड़ी है, क्योंकि इसी समय इमाम महदी को प्रकट होना है। जबकि शरीअत के बन्धनों में फँसे हुए मुसलमान कियामत का नाम सुनते ही डर जाते हैं। वे सोचते हैं कि कियामत का तात्पर्य महाप्रलय हो जाना है।

दज्जाल का कोई तन नहीं होता। अज्ञान रूपी राक्षस ही वह दज्जाल है, जो सबके मन में बैठकर सभी को अधर्म में लगाए हुए है।

वे लड़ेंगे तलवार सों, बड़ा जुध होए दारून।

सत्तर हजार काफरों को, मारेंगे मोमिन।।१११।।

कुरआन–हदीसों का बाह्य अर्थ लेने वाले मुसलमान

लोग यही समझते हैं कि कियामत के समय जब इमाम महदी आयेंगे तो काफिरों के साथ मोमिनों का बहुत भयंकर युद्ध होगा, जिसमें एक-एक मोमिन ७०-७० हजार काफिरों को अकेले मार डालेंगे।

भावार्थ- इसका बातिनी अर्थ यह है कि मनुष्य के शरीर में प्रायः ७० हजार नाड़ियाँ है। प्रश्नोपनिषद् में ७२००० नाड़ियों का वर्णन है। इन नाड़ियों में बहने वाले रक्त में मन की दूषित इच्छाओं का प्रवाह बहता रहता है। जब तारतम ज्ञान के प्रभाव से ब्रह्ममुनि धनी के प्रेम में डूबकर मन को निर्मल कर लेंगे, तो उनकी ७० हज़ार नाड़ियों को भी निर्मल माना जाएगा। इसे ही ७० हज़ार काफिरों का कत्ल करना कहा गया है। जिस प्रकार काफिर अल्लाह तआला की महिमा को स्वीकार नहीं करते, उसी प्रकार मन में दूषित वासनाओं के भरे

रहने पर प्रियतम से प्रेम नहीं हो पाता।

लोहू सब वैराट में, होए जाएगा सब।

हाथियों के खरिहान, ए जुध होवे जब।।११२।।

जब यह महाभयंकर युद्ध होगा तो सारे संसार में चारों तरफ काफिरों का खून ही खून दिखायी देगा। जिन हाथियों पर बैठकर वे युद्ध कर रहे होंगे, चारों ओर उन मरे हुए हाथियों के झुण्ड ही झुण्ड दिखाई देंगे।

भावार्थ– एक परब्रह्म को न मानकर अन्य काल्पनिक देवी–देवताओं तथा जड़ पदार्थों की पूजा करने वालों एवं नास्तिक लोगों को इस चौपाई में काफिर कहा गया है।

ब्रह्मसृष्टियों के तारतम ज्ञान रूपी तलवार से, नास्तिकता एवं बहुदेववाद का समापन होकर, एक अद्वैत ब्रह्म की महिमा का फैल जाना ही काफिरों के खून का

सारे संसार में फैल जाना है। नास्तिकता, बहुदेववाद, एवं जड़-पूजा ही काफिरों की शक्ति है, जिसे खून के रूप में दर्शाया गया है।

जिस प्रकार एक वीर योद्धा हाथी के ऊपर बैठकर युद्ध करता है, उसी प्रकार वैज्ञानिक प्रगति की चकाचौंध नास्तिकता को बढ़ाती है, तथा देवी-देवताओं, पीरों और फकीरों की मज़ारों पर होने वाली पूजा मनोकामनाओं को पूरा करती है एवं चमत्कारों का बढ़ावा देती है। इसका परिणाम यह होता है कि साधारण जनमानस में इनके प्रति श्रद्धा बढ़ती है और परब्रह्म के प्रति विमुखता पैदा हो जाती है। इस प्रकार नास्तिकता एवं बहुदेववाद को बढ़ाने वाले संसाधनों को हाथी कहा गया है।

श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी के अलौकिक प्रकाश

को जो भी व्यक्ति प्राप्त कर लेगा, वह अनन्य परा प्रेम लक्षणा भक्ति का अनुसरण करेगा तथा स्वप्न में भी एक अक्षरातीत को छोड़कर अन्य किसी देवी–देवता, समाधि–मजार, या अन्य किसी जड़ वस्तु की पूजा नहीं करेगा। इसे ही मरे हुए हाथियों के झुण्ड के झुण्ड दिखायी देना कहा गया है।

ना दाना पानी रहेगा, ना कछु रहेगा घास।

तिस वास्ते इनको अरथ उपलो, जानत नाहीं खास।।११३।।

उस युद्ध में न तो काफिरों के खाने के लिए अन्न रहेगा और न हाथियों के खाने के लिए घास या पानी। इस प्रकार मुस्लिम लोग बाह्य अर्थों में ही अटके रहते हैं, आन्तरिक भावों को नहीं समझते।

भावार्थ– अनन्य परा प्रेम लक्षणा भक्ति में निष्ठा रखने

वाले सुन्दरसाथ, किसी भी देवी-देवता या पीर-फकीर की मज़ार पर नतमस्तक होना स्वीकार नहीं करते हैं। वे न तो भौतिक सुखों की चकाचौंध के पीछे भागते हैं और न तांत्रिक क्रियाओं के चमत्कारों के वशीभूत होते हैं। इस प्रकार इनके मन्दिरों या मज़ारों पर न जाने से उन स्थानों पर जो सूनापन झलकता है, उसे ही अन्न, जल, और घास का न रहना कहा गया है।

जैसे-जैसे वाणी का प्रकाश फैलता जाएगा, वैसे-वैसे नास्तिकता एवं बहुदेववाद संसाधनों (मन्दिर एवं मज़ारों) में सूनापन बढ़ता जाएगा।

और जो कयामत की, बड़ी जानी दहसत।

करामात मेरे सरूप पर, मुझे आदमी देखे इत।।११४।।

शरीअत के बन्धनों में फँसे इन मुसलमानों में कियामत

के नाम से ही भय व्याप्त है। मैंने भी अपने स्वरूप पर ऐसा जादू कर रखा है कि वे मुझे एक साधारण मनुष्य के रूप में देखा करते हैं।

भावार्थ– प्रकृति की मर्यादा निभाने के लिए श्रीजी ने अपने वास्तविक स्वरूप को छिपाया हुआ है। जिसकी अन्तर्दृष्टि खुली होती है, केवल वही श्री प्राणनाथ जी के वास्तविक स्वरूप को पहचान सकता है, अन्यथा साधारण मुसलमानों की कौन कहे, बड़े–बड़े विद्वान भी इसमें धोखा खा जाते हैं।

विगत ३०० सालों से तारतम वाणी एवं बीतक का चिन्तन–मनन करने पर भी सुन्दरसाथ श्री प्राणनाथ जी को यथार्थ रूप से नहीं पहचान पा रहा है, तो शरीअत के जाल में फँसे हुए उन मुस्लिम लोगों को भला कैसे दोष दिया जा सकता है?

जैसे और आदमी, मोहे देखे तिन माफक।

तो क्यों कर आवे ईमान, भागे क्यों कर सक।।११५।।

संसार में जैसे और मनुष्य रहते हैं, मुझे भी वैसे ही देखते हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें मेरे ऊपर ईमान (विश्वास) कैसे आ सकता है और उनके संशय कैसे समाप्त हो सकते हैं?

जब तुमारे सुकन, अब फेर करो पुकार।

तुमको इस ही वास्ते, किए बाहिर खबरदार।।११६।।

यदि बादशाह, कियामत तथा इमाम महदी के प्रकट होने सम्बन्धी, आपकी कही हुई बातों को सुनने के लिए आपको बुलवाए तो पुनः उसे समझाने का प्रयास करना। इसलिए बाहर रहते हुये आपको पत्र के द्वारा मैंने सावचेत कर दिया है।

अब तुम छिपे ना रहो, बड़ें उमराव होवें आधीन।
सो तुम सों तालीम लेइंगे, जिन चिन्ता करो बीच दीन।।११७।।

आप लोग किसी भी बात की चिन्ता न कीजिए। आपके तारतम ज्ञान के वशीभूत होकर बड़े–बड़े धर्माधिकारी आपके अधीन हो जायेंगे और वे आपसे आध्यात्मिक ज्ञान की शिक्षा लेंगे। जब आप निजानन्द की राह पर समर्पित हो, तो आपको किसी भी बात की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

और कहूं नजर जिन करो, ना बैठक कीजो बन्ध।
तुमारी बात छिपी ना रहे, बड़े ठौर मिल हुए अन्ध।।११८।।

अपनी दृष्टि को प्रियतम अक्षरातीत के अतिरिक्त और कहीं भी न जाने दो। आपस में मिल–बैठकर की जाने वाले सत्संग की प्रक्रिया को कभी भी बन्द नहीं करना।

कियामत और इमाम महदी के प्रकट होने के सम्बन्ध में तुमने जो बातें कही हैं, वे अब छिपी नहीं रह सकती। तारतम ज्ञान के अभाव में सभी बड़े-बड़े धर्म स्थानों के अनुयायी अन्धकार में ही भटक रहे हैं। उनमें परमधाम को देखने की दृष्टि है ही नहीं।

जैसे काम पर गए हो, सो तैसा ही दिखाइयो बल।
ना तो सक आवेगा इनको, वही राखियो कल।।११९।।

जिस महान उद्देश्य के लिये आप मुगलों की कैद में गए हैं, वहाँ पर वैसे ही अपने महान आत्मबल को दर्शाना और अपनी गरिमा को पूर्ववत् बनाए रखना, अन्यथा बादशाह को आप लोगों पर शक हो जाएगा कि ये लोग मोमिन नहीं हैं।

मैं तुमारे सिर पर, खड़ा हों एक पाए।

और दिस हिन्दुअन की, नीके राखिये बनाए।।१२०।।

मैं तुम्हारे शिर पर एक पाँव से खड़ा हूँ, अर्थात् मेरा वरद् हस्त पल-पल तुम्हारे साथ है। कट्टर शरीअत को मानने वालों की कैद में रहते हुए भी अपने हिन्दुत्ववादी रहन-सहन को अच्छी तरह बनाए रखना।

जो तुमारे बल सों, उत मेरा जोरा होए।

और बल मेरे से, ए तुम को माने सोए।।१२१।।

यदि तुम्हारे सांगठनिक तथा ज्ञान बल से किसी को मेरे स्वरूप की पहचान हो जाए, तो मुझे पत्र द्वारा सूचित कर देना। जब वे आध्यात्मिक बल को सर्वोपरि मानने लगें अथवा मेरे धाम हृदय में विराजमान अक्षरातीत की कृपा के बल से शाही दरबारी तुम्हें अर्श-ए-आज़म के मोमिन

मानकर तुम्हारा सम्मान करने लगें, तो वह भी मुझे अवश्य बताना।

सब भला होएगा, तुम जिन होओ दिलगीर।
जो मोरचा तुम लिया, सो हकें दिया कर धीर।।१२२।।

तुम्हारे साथ जो कुछ होगा, वह धाम धनी की कृपा से अच्छा ही होगा। इसलिए तुम अपने मन में किसी तरह का दुःख न मानो। शरातोरा के विरूद्ध तुमने जो युद्ध छेड़ा है, उसमें धाम-धनी ने आपको धैर्य की स्थिति में रखते हुए विजय दिलाई है।

जरा तुम मन में, दगदगा ल्याओ जिन।
ए लड़ाई है बचनों की, सो करनी ले आकीन।।१२३।।

अपने मन में किसी भी प्रकार का संशय मत लाओ।

शरातोरा से जो अपना युद्ध है, वह ज्ञान के द्वारा लड़ा जा रहा है, इसलिए धाम धनी पर अटूट विश्वास लेकर यह अभियान जारी रखना है।

अब वस्त प्रकासहीं, अपनें ही बल से।

पर एह बात जो, ना होए सिताबी से।।१२४।।

अब धाम धनी की कृपा के बल से उनमें सत्य ज्ञान का प्रकाश अवश्य फैलेगा, किन्तु यह कार्य बहुत जल्दी नहीं होगा, बल्कि धीरे-धीरे होगा।

माया छल रूप है, ताको छल ही से जीताए।

आगे भगवान के, बल बोहोत कहलाए।।१२५।।

यह माया छल रूप है और इसे छल से ही जीता जा सकता है। यद्यपि विष्णु भगवान के अन्दर बहुत शक्ति

कही जाती है।

तो भी असुरन सों, जीते हैं छल से।

हर जी व्यास सों जुध किया, सो तुम जानत हो दिल में।।१२६।।

फिर भी असुरों से वे छलपूर्वक ही विजय प्राप्त कर पाए हैं। मैंने भी हरिजी व्यास से ज्ञान का युद्ध किया था। इस बात को आप अच्छी तरह से अपने दिल में जानते हैं।

एक बचन हर जी कहे, मैं दस बेर लागों चरन।

जब लाग आयो, तब उठाए कियो मरन।।१२७।।

जब हरिजी व्यास एक बात कहते थे, तो मैं दस बार उनके चरणों में प्रणाम करता था। लेकिन जब मुझे अवसर मिला, तब मैंने उन्हें पूरी तरह से नतमस्तक कर दिया (उठा कर मार डाला)।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाइयों के कथनों से यह संशय होता है कि जब तारतम वाणी में अन्दर–बाहर एक होने की बात कही गयी है, तो यहाँ पर विष्णु भगवान का दृष्टान्त देकर छल से दूसरों को जीतने की बात क्यों कही गयी है? क्या स्वयं श्रीजी इतने असहाय हैं कि उन्हें छल का सहारा लेना पड़ा?

इस जिज्ञासा के समाधान के लिये, हमें छल और नीतिपूर्ण कार्य की व्याख्या समझनी होगी। योगेश्वर श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि धर्म रक्षार्थ अनासक्ति भाव से कोई भी कार्य करने पर पाप नहीं लगता। योगेश्वर श्री कृष्ण ने भीष्म पितामहः, द्रोणाचार्य, कर्ण, दुर्योधन, जरासन्ध, आदि का वध अपनी नीति से किया था। यदि वे अपनी नीति का प्रयोग नहीं करते, तो इन लोगों को मारना सम्भव नहीं होता और धर्म की नौका डूब जाती।

इसी प्रकार भगवान राम बालि के सामने आकर युद्ध करते, तथा लक्ष्मण को मेघनाथ का वध करने हेतु यज्ञशाला में नहीं भेजते, एवं स्वयं रावण के वध के लिए विशेष शक्ति वाला बाण मँगवाकर प्रयोग नहीं करते, तो भी धर्म की रक्षा होनी सम्भव नहीं थी। राम और कृष्ण के किसी भी कार्य में लोभ, लालच, या तृष्णा की थोड़ी भी गन्ध नहीं थी, इसलिए इन्हें मर्यादा पुरूषोत्तम और योगेश्वर कहते हैं। कोई भी इन्हें छली या पापी नहीं कहता।

यदि श्रीजी हरिजी व्यास जैसे विद्वान से व्याकरण के किसी विषय पर शास्त्रार्थ करते, तो समय लम्बा खिंचता और कोई भी निर्णय नहीं हो सकता था। चुपचाप हरिजी व्यास की निरर्थक कहानियों को सुनते रहना तो श्रीजी के अलौकिक व्यक्तित्व की महानता है। अखण्ड धाम का

प्रसंग आने पर हरिजी व्यास से प्रश्न पूछना नीतिपूर्ण कार्य का अंग है। इसे छल का मार्ग नहीं कहा जा सकता। वस्तुतः छल वह है जिसमें मन, वाणी, कर्म से किसी का दिल दुखाया जाए, अपने स्वार्थ एवं वासनाओं की पूर्ति के लिए किसी से उसका कुछ छीना जाए, अनासक्त भाव से धर्म रक्षार्थ किया गया कोई भी कार्य छल शब्द से सम्बोधित नहीं किया जा सकता।

उपरोक्त चौपाइयों में दार्शनिक झिक-झिक (बहस) से बचने के लिए बोलचाल की भाषा में छल शब्द का प्रयोग अवश्य कर दिया गया है, किन्तु इसका आशय नीतिपूर्ण कार्य से है।

तब फेर तिन नें, पकड़े मेरे कदम।

तिस वास्ते तुम बारहों, सब सरे सौंप्या तुम।।१२८।।

तब पुनः हरिजी व्यास ने मेरे चरणों में अपना सब कुछ समर्पित किया, इसलिए शरातोरा के विरूद्ध होने वाले युद्ध में आप बारह सुन्दरसाथ को मैंने नीतिपूर्ण ढंग से कार्य करने का उत्तरदायित्व सौंपा है।

जैसा बाजा बजे, तैसा ही कीजो निरत।
पर बड़ी एह बात हैं, हिल मिल एक रस होना इत।।१२९।।

इसलिए जिस तरह का बाजा बजे वैसा ही नृत्य करना, अर्थात् परिस्थितियों के अनुकूल नीतिपूर्ण ढंग से कार्य करना। किन्तु सबसे बड़ी बात यह है कि आप १२ सुन्दरसाथ को आपस में प्रगाढ़ स्नेह के बन्धन में बंधकर एक मन वाला होना जरूरी है, अन्यथा विरोधाभास की स्थिति में कोई भी महान लक्ष्य पूर्ण नहीं हो सकता।

पीछे तुमको सब, आप ही खुल जाए।

आस्ते आस्ते होएगा, आप ही हक बताए।।१३०।।

कुछ समय के पश्चात् आपको सफलता प्राप्त करने के सारे रहस्य स्वतः विदित हो जायेंगे, किन्तु यह कार्य धीरे-धीरे होगा और जब-जब आवश्यकता होगी, धाम धनी आपके दिल में विराजमान होकर सब कुछ बताते जाएँगे।

पहिले ए सुचित कर, सुनने बैठे जब।

सो उनके हिरदे, बचन लगे तब।।१३१।।

शाही दरबारी जब आपको पहले से सूचना देकर आयें और आपकी चर्चा सुनने बैठ जायें तो उनको अति प्रेम से चर्चा सुनाइये, जिससे उनके हृदय में आपके वचनों की चोट लगे।

तब उनें दया उपजे, जब वह घाएल होए।

तब चित दे इनों सुने, और तुम पर अनेक आवे सोए।।१३२।।

जब वे आपकी ज्ञान चर्चा से बहुत अधिक प्रभावित हो जायेंगे, तब उनके मन में दया भावना पैदा हो जाएगी। उस समय उनकी बातों को सावधान होकर सुनना चाहिए। इस प्रकार के सद्व्यवहार से बहुत से लोग आपसे मिलने आयेंगे।

तिनको तुम बचन कहो, तब मिट जाय अन्तराए।

जाको होवे प्रकास, सो आपे ही जग जाए।।१३३।।

आने वाले उन जिज्ञासुओं से जब आप अखण्ड ज्ञान की बातें करेंगे, तो भेद की रेखा समाप्त हो जाएगी। जिसके अन्दर तारतम ज्ञान का प्रकाश हो जाएगा, वह धनी की कृपा से स्वयं ही जाग्रत हो जाएगा।

तुम आकले होए ना उरझियो, सब काम दुरस्ती से होए।
आकले काम सैतान के, ठंडे हक से होवे सोए।।१३४।।

तुम उतावले होकर किसी उलझन में नहीं फँस जाना। सभी काम धैर्यपूर्वक करने से ठीक होते हैं। शैतान के प्रभाव में आने पर मनुष्य उतावलेपन में कार्य करता है, जबकि श्री राज जी की कृपा की छत्रछाया में रहने पर धीरतापूर्वक उचित समय पर कार्य होता है।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण का भाव यह नहीं समझ लेना चाहिए कि कोई भी काम केवल धीरे–धीरे ही करना चाहिए। परिस्थितियों के अनुसार विवेकपूर्वक कार्य को उचित समय पर पूर्ण करना चाहिए। इस चौपाई का मुख्य आशय यही है कि उतावलेपन में कोई भी तुगलकी निर्णय नहीं लेना चाहिए।

भाई बदल कानजी, भेजे हैं तुम पास।

तुम परियान पक्का कीजियो, कानजी पास राखियो खास।।१३५।।

शेखबदल तथा कान्ह जी भाई को मैंने आपके पास भेज दिया है। कान्हजी भाई को विशेष रूप से पत्र लाने के लिए अपने पास रखना तथा मेरे पत्र पर दृढ़तापूर्वक विचार–विमर्श करना।

जो होए तुमारी आज्ञा, तो हम पड़ें बाहिर।

जो सकड़ाई में रखोगे, तो हम रहें जाहिर।।१३६।।

यदि आप लोगों की स्वीकृति हो तो मैं यहाँ से जागनी कार्य के लिए अन्यत्र जाना चाहता हूँ, परन्तु आप लोग यदि मुझे यहीं तक सीमित रखना चाहते हैं तो मेरा कार्यक्षेत्र मात्र यहीं तक रह जाएगा।

पर हम उरझे रहेंगे, उपराला तुमें न सकें कर।

आपना ना पाल सकें, तब काम होवे क्यों कर।।१३७।।

किन्तु यहाँ पर मेरा समय निरर्थक ही व्यतीत हो रहा है, और यहाँ से मैं तुम्हारी किसी तरह से सहायता भी नहीं कर पा रहा हूँ, जबकि यहाँ मैं अपनी देखभाल भी ठीक से नहीं कर पा रहा हूँ।

जो तुम ए मोरचा, सिर ले ढाया।

सखत दिल करके, तुमने पसारा किया।।१३८।।

औरंगज़ेब के संदेश देने का उत्तरदायित्व लेकर आप सब सुन्दरसाथ ने इस शरातोरा के खिलाफ युद्ध छेड़ दिया है। इस कार्य के लिए आपने अपने दिल को बहुत दृढ़ किया और तब जागनी के इस महान कार्य का फैलाव किया।

भावार्थ– "शिर गिरना" एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य होता है, बोझ ढोना या उत्तरदायित्व को निभाना। इसी प्रकार दिल को सख्त करने का आशय दृढ़ संकल्पवान होने से है, क्रूर होने से नहीं।

जैसे चित तुमारे, मेहेजद गए थे जब।
फेर उस ही चितसों, सरीखी करो अब।।१३९।।

जिस उमंग के साथ बादशाह से मिलने के लिए आप लोग जामा मस्ज़िद गए थे, पुनः उसी उत्साह से आपको अपने कार्य में लगे रहना है।

और मोरचे की तलास, मैं भेजों तुमारे पास।
या भेजों खुद पे, वे आए करें बात।।१४०।।

मेरी इच्छा यह है कि मैं यहाँ से बाहर जाकर अन्य

राजाओं को जाग्रत करूँ तथा उन्हें तुम्हारी सहायता के लिए भेजूँ, या ऐसे राजा जो स्वयं बादशाह से युद्ध में टक्कर लें और इमाम महदी के प्रकट होने की सीधी बात करें।

ओ फकीर महम्मद, और उनके आवे कलाम।
पीछे तें जैसी तुम लिखो, तिन ऊपर चले हमारा काम।।१४१।।

वे राजा लोग ही बादशाह से बात करेंगे कि फकीर सैयद मुहम्मद इब्न-ए-इस्लाम ने स्वयं को आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्ज़मां घोषित किया है। इसके पश्चात् आप पत्र में जैसा लिखेंगे, उसी के अनुसार मेरा कार्यक्रम होगा।

भावार्थ- स्वयं अक्षरातीत होते हुए भी श्रीजी ने छोटी से छोटी बात में सुन्दरसाथ को अपनी राय देने की पूर्ण

स्वतन्त्रता दी थी, जो यह सिद्ध करता है कि किसी महान लक्ष्य में जब सबकी सहभागिता होती है तो वह सरलता से पूर्ण हो जाता है। तानाशाही मानसिकता से कभी भी महान लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सकता।

जो मैं ठौर उहाँ करों, तो तुमारा उपराला होए।
तुमको कहने को होए, तुमको मिलने चाहे सोए।।१४२।।

यदि मैं यहाँ से बाहर जाकर जागनी कार्य करूँ तो आपकी सहायता भी हो सकती है, और यदि आप लोग मुझसे कुछ कहना चाहते हैं तो संदेशवाहक के माध्यम से कह सकते हैं, और यदि मिलना चाहें तो आकर मिल भी सकते हैं।

जिस वास्ते हुई इनायत, सो ल्यावते थे तुम पे।
पर तुम पीछे फिरे, इसलाम पर खड़े ऐ।।१४३।।

शरीअत की राह पर चलने वाले उन शाही दरबार के लोगों से तुम कहना कि उन्हे मार्ग दर्शाने के लिये ही तो अल्लाह की मेहर से सनद किताब नाज़िल हुई है, लेकिन उन्होंने उसे नकार दिया। वे इस्लाम के अनुयायी तो कहलाते हैं, परन्तु इस्लाम की सच्ची राह से दूर हैं। वास्तविक इस्लाम की राह पर चलने वाले तो हम हैं।

और तुम भी इसलाम पर, ए पे तुम करो क्या।
जो दिन रसूलें फुरमाया, सो ढील बीच देख्या।।१४४।।

श्रीजी सुन्दरसाथ को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि इस्लाम की वास्तविक राह पर तुम हो, लेकिन तुम क्या कर सकते हो? मुहम्मद साहिब ने सकुमार की जागनी के

लिए जो समय निश्चित किया है, उसे पूर्ण होने (घटित होने) में अभी देर है।

भावार्थ– पारा ६ सूरे माइदा ५ की आयत ४२ में लिखा है कि खुदा इन्साफ करने वालों को दोस्त रखता है, और आयत ४३ में लिखा है कि जो लोग उससे फिर जाते हैं वे लोग ईमान ही नहीं रखते, क्योंकि संसार में प्रचलित शब्द तो ला–मकान (निराकार) में ही लीन हो जाते हैं, जबकि प्रेम ही आगे चलता है।

मशाइख और उलेमा भी खुदा की किताब के निगहबान थे, तो क्यों नहीं वे धर्म के मर्म को समझ कर उसे आत्मसात् करते हैं और सरल सुपथ पर अग्रसर होते हैं? जो खुदा के नाजिल (फुरमाये हुए) हुक्मों के मुताबिक हुक्म न दें, तो ऐसे लोग भी काफिर हैं।

तो इनों ने अब, पीठ दई तुमें।

अब होए रसूल का हुकम, हम जाए पास उनें।।१४५।।

यही कारण है कि बादशाह तथा उसके अधिकारियों ने आपकी बात को अनसुना कर दिया। मुहम्मद (सल्ल.) ने कुरआन में जो कहा है, उसके अनुसार मैं किसी राजा को सन्देशवाहक के रूप में बादशाह के पास भेजूँगा।

भी हक सुभान ने जिनको, सोभा देने वाले हैं और।

हमको तहां खेंच के, पहुंचावे उनके ठौर।।१४६।।

श्री राज जी जिस राजा को शोभा देना चाहेंगे, मुझे उस राजा के यहाँ ले जायेंगे और उसे जाग्रत करेंगे।

इन भांत का तुम भी, जनम का चाह किया।

ऐसा जान हम तुम पर, एह मता दिल लिया।।१४७।।

आपके अन्दर भी प्रारम्भ से ही यह चाहना थी कि हम औरंगज़ेब के पास जाकर, उसे इमाम महदी तथा कियामत के आने का सन्देश दें। यह जानकर ही मैंने आप लोगों के द्वारा औरंगज़ेब को खुदाई इल्म का सन्देश पहुँचाने का अपने मन में निश्चय किया था।

सांची सोई होवहीं, जो हक के दिल में होए।

जो हमारा सोर सराबा सुने, तो आँख उनकी भी खुले सोए।।१४८।।

श्री राज जी के दिल में जो बात होती है, वही सच्ची होती है। जो व्यक्ति इल्म-ए-लदुन्नी की आवाज को सुन लेगा, वह भी अपनी भूल छोड़कर सावधान हो जाएगा और धनी के चरणों में आ जाएगा।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में शोर–शराबे का तात्पर्य तारतम ज्ञान की गूँज अर्थात् प्रचार से है, निरर्थक कोलाहल से नहीं। "आँख खुल जाना" एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य होता है "सावधान हो जाना।"

और तुमको कहने को, होवे इसकी ठौर।
तिस वास्ते विचार के, सिताब पत्री लिखियो और।।१४९।।

औरंगज़ेब की जागनी के सम्बन्ध में आप लोगों को यदि कोई बात कहनी है, तो आपस में विचार–विमर्श करके शीघ्र ही पुनः पत्र लिखना।

आज इस ठौर में, हमारा नही फिरनें का दिन।
पर क्या करें हक को, एही गमता है मन।।१५०।।

यद्यपि वर्तमान समय में, लौकिक दृष्टि से, मुझे इस स्थान को छोड़कर कहीं और अभी नहीं जाना चाहिए, किन्तु मैं क्या करूँ? धाम धनी की ऐसी ही प्रेरणा हो रही है।

तो हमारा क्या चलत, भया तहकीक ऐ।

महामत कहे ऐ मोमिनों, और कहो हकीकत जें।।१५१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! जो मूल स्वरूप श्री राज जी ने अपने मन में ले लिया है, उसके विपरीत हमारा कुछ भी बस नहीं चलता है। इसलिए मुझे यहाँ से आगे अब जाना ही होगा। इसके बाद जो घटना होती है, उसे मैं कहने जा रहा हूँ।

भावार्थ– पूर्वोक्त दोनों चौपाइयों का कथन यही सिद्ध करता है कि श्री महामति जी में अक्षरातीत का आवेश

विराजमान है, जिसे श्री राज जी, श्री प्राणनाथ जी, श्रीजी, एवं धाम धनी कहते हैं। इस आवेश स्वरूप की जो इच्छा होगी, श्री महामति जी को वही करना होगा। उपरोक्त पत्र के माध्यम से श्री महामति जी की ही भावना व्यक्त की जा रही है, श्री राज जी की नहीं। मूल स्वरूप और आवेश स्वरूप एक ही हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि मूल स्वरूप मूल -मिलावे में नूरी स्वरूप में विराजमान हैं, जबकि आवेश स्वरूप श्री महामति जी के पँचभूतात्मक तन में लीला कर रहा है।

प्रकरण ।।४७।। चौपाई ।।२४४०।।

छोटी पत्री

आगे छोटी पत्री वोही में पुरजी

इस प्रकरण में श्रीजी के द्वारा लिखे हुए पत्र के वे अंश उपस्थित हैं, जो पूर्व के प्रकरण में नहीं आ सके। इसमें कहीं–कहीं सुन्दरसाथ के पत्रों के अंशों का भी समावेश किया गया है। पुर्जी का तात्पर्य पर्ची से होता है, जिसका आशय होता है आंशिक रूप से लिखा हुआ पत्र। पूर्व प्रकरण की अपेक्षा इस प्रकरण में कम चौपाइयाँ होने से इसे छोटी पत्री भी कहा है।

ऐ समाचार सुनियो, हम सूरत और सिद्ध पुर।
और उदय पुर मेरते, लिखे आये हम पर।।१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह समाचार सुनिए कि मेरे पास सूरत, सिद्धपुर, उदयपुर, और मेड़ते

से सुन्दरसाथ के द्वारा लिखे हुए पत्र आए हैं।

साथ भाई बदल के, लिख कर कहे बचन।
पाती भी लिखी इत, विध करत हों रोसन।।२।।

मैंने कान्हजी भाई तथा शेख बदल के हाथ से जो पत्र लिखकर आपके पास भिजवाया है, उसमें मैंने जागनी के सम्बन्ध में बहुत सी बातें कही हैं, जिसकी वास्तविकता को यहाँ दर्शाया जा रहा है।

भावार्थ- पत्र तो श्रीजी के कर कमलों द्वारा ही लिखा गया है, किन्तु इस प्रकरण से पूर्व प्रकरण के बचे हुए अंश को लिपिबद्ध श्री लालदास जी ने किया है। इसे तीसरी चौपाई में सुन्दरसाथ के द्वारा कहा गया है।

हम सकुमार बाई की, बात का किया विचार।

ये तो साहिबी बोहोत बड़ी, घूना घून नाहीं सुमार।।३।।

हमने औरंगज़ेब की आत्मा की जाग्रति के सम्बन्ध में विचार किया कि वह जाग्रत क्यों नहीं हुई ? तो यह निष्कर्ष निकला कि उसकी साहेबी बहुत बड़ी है, उसके पास अपार दौलत तथा सेना है।

धुर लगे मजलिस, कर ना सके कोए।

और अपनी बात को, क्यों समझे संदेसे सोए।।४।।

उसके अत्यधिक सत्ता प्रभाव के कारण, कोई भी उसके दरबार के आस-पास सभा करके चर्चा नहीं कर सकता था। ऐसी अवस्था में अपनी बात को केवल पत्र के माध्यम से उसे कैसे समझाया जा सकता है?

जो संदेसा देए के, पीछे फिरिए घर।

जोलो घूटन घूटन सों बांध के, सुनावे ना इन पर।।५।।

केवल पत्र के माध्यम से सन्देशा देकर यदि हम शान्त बैठ जाते हैं, तो भला वह कैसे जाग्रत हो सकता है? जब तक उसके आमने-सामने बैठकर उसे चर्चा न सुनायी जाए, तब तक उसकी जागनी का प्रश्न ही नहीं है।

एह बात तो तब होए, तिस वास्ते लिख्या तुम।

ज्यों ब्राह्मण गायत्री सूद्र को, कहे सुनावें नाहीं हम।।६।।

यह बात मैंने तुम्हें इसलिए लिखी है कि चर्चा सुनने के बाद ही उसके सभी संशय मिट सकते हैं और वह तभी जाग्रत हो सकता है। जिस प्रकार कर्मकाण्डी-पौराणिक ब्राह्मण शूद्रों को गायत्री मन्त्र नहीं सुनाते हैं।

त्यों कुरान का मजकूर, हिन्दुओं न सुनावें कान।
न उनकी बात आप सुने, तो क्यों कर होए पहिचान।।७।।

उसी प्रकार औरंगज़ेब बादशाह भी हिन्दुओं को कुरआन की चर्चा नहीं सुनने देता और न वह स्वयं उनकी बात सुनता है। ऐसी स्थिति में उसको इमाम महदी तथा कियामत की पहचान कैसे हो सकती है?

तिस वास्ते आपन को, जात भेस उपले।
सब गोविन्द भेड़े की तुमको, पहिचान जात भेख के।।८।।

इसलिए हमें बाह्य जाति-पाति तथा बाह्य वेश-भूषा को महत्व नहीं देना चाहिए। यह सारा संसार गोविन्द भेड़े के प्रेत-मण्डल के समान है, तुम इसे अच्छी तरह जानते हो। तुम्हें जाति-पाति एवं वेश-भूषा की अच्छी पहचान है और तुम जानते हो कि इसका बन्धन प्रेत नगरी के ही

समान है।

सो तो सास्त्र वेदान्त, साध पंथ पैड़ों में।

सब कोई उड़ावे इनको, सब है चरचा इन में।।९।।

सभी शास्त्रों, वेदान्त के वचनों, तथा साधु-सन्तों के मत-पन्थों में जाति-पाति तथा बाह्य वेश-भूषा के बारे में काफी चर्चा की गयी है, किन्तु आत्म-कल्याण की दृष्टि से इन्हें नकार दिया गया है।

कुरान देखे पीछे, बात महम्मद अलेहु सलाम।

सब कड़ी हमारे घर की, है हमेसा दीन इसलाम।।१०।।

मुहम्मद स० अ० व० के द्वारा कही हुई कुरआन के चिन्तन से हमें यह साक्षी मिली कि इसमें तो हमारे परमधाम की सारी बातें सन्केतों में दी गयी हैं। वास्तव में

यही शाश्वत निजानन्द का मार्ग है।

भावार्थ– इस चौपाई में कथित "कुरान" शब्द का आशय "सनद" ग्रन्थ से है, क्योंकि कुरआन के तीस पारों का बातिनी रहस्य सनद ग्रन्थ के तीस प्रकरणों में समाहित हो गया है।

इस चौपाई के पहले चरण में श्रीजी के द्वारा कहा हुआ उचित प्रतीत नहीं होता, बल्कि सुन्दरसाथ के द्वारा कहा हुआ है। इस सम्बन्ध में खुलासा ग्रन्थ में कहा गया है–

पढ्या नाहीं फारसी, न कछू हरफ आरब।
सुन्या न कान कुरान को, और खोलत माएने सब।।

खुलासा १५/५

यद्यपि साक्षियाँ तो कुरआन में ही हैं, किन्तु उनका आशय सनद ग्रन्थ से ही विदित होता है।

तो हम जात भेख का, क्यों ना भानें सिर।

संकोच करों किस वास्ते, ए भेख बदला यों कर।।११।।

ऐसी स्थिति में हम वेश-भूषा और जाति-पाति की थोथी मान्यताओं का समूल नाश क्यों न कर दें? हम इस बात का क्यों संकोच करें कि हमने मुसलमानों का भेष धारण किया है?

भावार्थ- इस चौपाई के तीसरे चरण में "करों" का तात्पर्य "करें" से है। यहाँ पर "करो" लिखना अशुद्ध है। बिन्दु मात्र के रहने, न रहने, से अर्थ भी परिवर्तित हो जाता है।

ऐसा जान हम बारह जने, पैठे बीच दरबार।

सो हमको सकुमार ने, कहया मजलिसे यों कर।।१२।।

यह जानकर हम १२ सुन्दरसाथ औरंगज़ेब के दरबार में

गए। वहाँ औरंगज़ेब ने सभा के बीच में हमें धन्य-धन्य कहा।

धन धन कहे सब हमको, पीछे उनके मन में।
हमारा भासा अवगुन, क्यों हिन्दू मुसलमान ऐसे।।१३।।

वहाँ उपस्थित अन्य सभी लोगों ने भी हमारे लिए ऐसा ही कहा। इसके बाद कुछ दरबारियों ने बादशाह के मन में संशय भर दिया, जिससे उसके मन में हमारे प्रति अवगुण दिखायी देने लगा कि ये दस हिन्दू मुसलमानों की वेश-भूषा में इस प्रकार यहाँ क्यों आए हैं?

किन ने भेजे आए हैं, कछू दगा है इन मन।
ऐसा जान के साथ को, किए कोतवाल हवाले मोमिन।।१४।।

ये लोग किसके भेजने पर यहाँ आए हैं? ऐसा लगता है

कि इनके मन में मेरे प्रति कोई धोखे की भावना है। इस तरह का संशय करने के कारण, उसने सुन्दरसाथ को कोतवाल सिद्दीक फौलाद के हाथों सौंप दिया।

काजीए कह्या कोतवाल को, जो सांच झूठ देखो तुम।
ए कौन है कहां से आए, तुम चरचा कहो हम।।१५।।

काज़ी शेख इस्लाम ने कोतवाल से कहा कि तुम इन लोगों को ले जाकर वास्तविकता की जाँच करो कि इसमें क्या सच्चाई है और क्या झूठ है? ये लोग कौन हैं और कहाँ से आए हैं? इस विषय में इनसे पूछताछ करके मुझे बताओ।

बहुत बातें हमसों करी, तिस पीछे कह्या सुलतान।
जो ए झूठे नहीं दगा नहीं, हैं मोमिन खास ईमान।।१६।।

कोतवाल ने उन लोगों से बहुत-सी बातें की और उसके पश्चात् सारी बातें बादशाह को बता दी कि ये लोग सच्चे आदमी हैं, अल्लाह के ऊपर ईमान रखने वाले उनके नेक बन्दे मोमिन हैं। इनके मन में किसी प्रकार की धोखाधड़ी की इच्छा नहीं है।

तब चौकी बैठाई थी, ताको दिए उठाए।

हवेली का हुकम हुआ, इनों दिए बैठाए।।१७।।

तब हमारे ऊपर निगाह रखने के लिए जो सिपाहियों का पहरा था, वह हटा दिया और हमें हवेली में रखने का आदेश दिया गया। तत्पश्चात् हमें उसमें ले जाया गया।

विकार इनके मन में, आया था सो गया।

अब हम रहे हैं, काम सुचत का भया।।१८।।

इस घटना के पश्चात् औरंगज़ेब बादशाह के मन में हमारे प्रति जो भ्रम था, वह समाप्त हो गया। यह बहुत अच्छा काम हुआ, जो बादशाह का संशय दूर हो गया। अब हम लोग शान्तिपूर्वक रह रहे हैं।

जिन सनंधे समझेगा, त्यों समझावें हम।
अब हमारे काजी सों, मिलाप कर दिया तुम।।१९।।

हे धाम धनी! अब बादशाह "सनद ग्रन्थ" के जिस प्रकरण से समझेगा, उससे हम उसे वैसे ही समझायेंगे। आपने कृपा करके काज़ी शेख इसलाम से भी बात करवा ही दी है।

द्रष्टव्य– बड़ा कियामतनामा प्रकरण ४ के इन कथनों से स्पष्ट होता है कि औरंगज़ेब बादशाह छिपकर श्रीजी के चरणों मे आया था–

लागन हिंदू मुसलमान, गजनवी महमूद सुलतान।

ढाए हिंदुओं के खाने बुत, दिल में इमाम की ज्यारत।।

अपने जमाने था उस्तुवार, कुतब औलियों का सिरदार।

बंदगी माहें था बड़ा, सफ तले की रेहेता खड़ा।।

तलब द्वा फातियाओं की कर, चाहता था तो अजमंतिसा अवसर।

फकीर सुलतानसों बातें भई, तब आकीन आया सही।।

इमामें कह्या यों कर, पेसकसी ल्यावें हम घर।

बस्ती कोस पाँच हजार, मुलक मदीने कई सहेर बाजार।।

एक हजार सात सै हाथी, लाख घोड़े सूर में साथी।

एती आएके पेसकसी करी, ओढ़ के पुरानी कमरी।।

आप होएके नंगे पाए, तलेकी सफ में खड़ा आए।

आजिज होए नमाया सीस, कहे मोको करो बकसीस।।

बड़ा कयामतनामा ४/२,३,४,५,६,७

प्रायः इन चौपाइयों का सम्बन्ध श्रीजी और श्री छत्रसाल जी के मिलाप से लिया जाता है, किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार करें तो यह औरंगज़ेब के श्रीजी से मिलन का प्रसंग है, जिसमें वह छिपकर आता है। क्योंकि हिन्दुओं के मंदिर श्री छत्रसाल जी ने कहीं नहीं गिराए। "ढाए हिन्दुओं के खाने बुत" का कथन मात्र औरंगज़ेब के लिये ही घटित हो सकता है। इमाम महदी से मिलने की इच्छा औरंगज़ेब के अन्दर भी थी और इसी कारण उसने मन्दिरों को तीव्रता से तुड़वाना शुरू कर दिया क्योंकि उसे मालूम था कि इस गुनाह में उसे जल्दी ही इमाम महदी मिल जायेंगे।

वृत्तान्त मुक्तावली के प्रकरण ६० में यह प्रसंग वर्णित है, जिसमें यह बात कही गयी है कि शेख वाजिद नामक फकीर ने कलंदर के तकिए में श्रीजी से औरंगज़ेब की

भेंट करायी थी। उस समय चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया थी। वह श्रीजी के चरणों में नतमस्तक तो हुआ, लेकिन शरीअत छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुआ।

कोतवाल सों भी भया है, कागद सब सुलताने।
मंगाये अपने पास, जमा किये अपने।।२०।।

कोतवाल से भी हमारी बातचीत हुई है। उसने हमारे बारे में जो भी अनुभव किया, वह सब कुछ लिखित रूप में बादशाह के पास भेज दिया है और बादशाह ने उसे अपने पास रख लिया है।

अब ए उच्चार करेगा, जेती बात जाहिर।
सो समझावते खलक में, पड़ेगी बाहिर।।२१।।

जब बादशाह कोतवाल द्वारा भेजे गए पहचान पत्रों को

पढ़ेगा और उसके बारे में किसी से भी कहेगा, तो बाहर के समाज में चारों ओर यह बात फैल जाएगी कि इमाम महदी और इनके मोमिन जाहिर हो चुके हैं।

और बात की हम सों, जब करेंगे तलब।
तब हम तुमको लिखेंगे, तुम एकान्त बैठो अब।।२२।।

हे धाम धनी! अभी तो आप कहीं एकान्त में चले जाइए। जब हमसे बादशाह किसी अन्य बात को जानने की इच्छा करेगा, तब हम आपको पत्र के द्वारा सूचित करेंगे।

अब तो हम जाहिर, लसगर है इमाम।
थाना थिर कर बैठे, ऐते दिन छाना करते काम।।२३।।

अभी तो हमारे बारे में यहाँ पर यह बात प्रसिद्ध हो गयी है कि हम इमाम महदी के अनुयायी हैं। इसके पहले

बादशाह से मिलने के लिए हम छिप–छिपकर रहा करते थे, जबकि आज स्थिति यह हो गयी है कि हमारा निवास ही अब एक धर्मकेन्द्र के रूप में जाना जा रहा है।

सुलतान की जान में, होए बैठे जाहिर।
अब तो हमको लखे, लख किए बाहिर।।२४।।

अब हम लोग बादशाह की जानकारी में खुले आम जाहिर होकर बैठे हुए हैं। उसने हमारी वास्तविकता को जान लिया है और हमें कैद से बाहर कर दिया है।

तिस वास्ते हम भी, एक ही तरफ होयेंगे।
तुमको दिल्ली के परवाने, खप होए तो भेजेंगे।।२५।।

(अब श्रीजी की तरफ से उत्तर लिखा जा रहा है) इसलिए अब मैं भी एकमात्र औरंगज़ेब की जागनी के

सम्बन्ध में कार्य करूँगा और जब भी आवश्यकता होगी तुम्हारे पास दिल्ली में पत्र भेजता रहूँगा।

जब लों इन चरचा का, लगेगा इन्हें बेसक।
ऐसे कागद और दिलासा, लिख भेजें हुकम हक।।२६।।

जब तक बादशाह और उसके अधिकारियों को चर्चा की इच्छा रहेगी, तब तक सब सुन्दरसाथ वहीं पर रहेंगे। मूल स्वरूप की प्रेरणा से, सान्त्वना भरे ऐसे अनेक पत्र मैं आप लोगों के लिए भेजता रहूँगा।

योंकर इन साथ को, ना उपजे विकार।
गम दिल में ना होवहीं, रहे सनमुख परवरदिगार।।२७।।

इस प्रकार मेरे पत्र भेजते रहने से सुन्दरसाथ के मन में निराशा का विकार पैदा नहीं हो पायेगा। उनके दिल में

किसी प्रकार का दुःख भी नहीं रहेगा और वे पल-पल धनी के प्रेम में सम्मुखता का अनुभव करेंगे।

तुम भी पाती उनको, लिख भेजो निसंक कर।
सिरे तुम सब साथ के, सामें हुए यों कर।।२८।।

आप लोग निर्भय होकर जगह-जगह सुन्दरसाथ को पत्र लिखिए और सारे घटनाक्रमों का वर्णन कीजिए। आपने शरा-तोरा के बादशाह औरंगज़ेब से टक्कर ली है, इसलिए सब सुन्दरसाथ में आप शिरोमणि हैं।

और बड़े मोहोरें मोहबड़के, आए लगे तुम।
तिस वास्ते सब साथ को, पाव भरे हक हुकम।।२९।।

इस मायावी जगत के बड़े-बड़े पदों पर आसीन बादशाह के अधिकारियों से आपने धर्मयुद्ध किया है।

इसलिए मूल स्वरूप के आदेश से आपने स्वयं आगे कदम बढ़ाकर सुन्दरसाथ का मार्गदर्शन किया है।

भावार्थ– "मोहबड़" का तात्पर्य इस मायावी जगत से है। इस मायावी जगत में धर्म, राजनीति, समाज, आदि अनेक क्षेत्रों में जो बड़े–बड़े पदों पर आसीन व्यक्ति होते हैं, उन्हें ही इस शतरंज रूपी मायावी खेल के मोहरे कहा है।

अपना आपा निसंक, तुम डारयो सब साथ।
तिस वास्ते लाहा ल्योगे तुम, पर हकें पकड़े हाथ।।३०।।

हे साथ जी! निश्चित रूप से आपने अपना सर्वस्व धनी की राह में न्योछावर कर दिया है। इसलिए धनी के प्रेम का लाभ तो आपको मिलेगा ही, किन्तु आपको अध्यात्म के इस स्तर पर पहुँचाने में धनी ने पल–पल आपका

हाथ पकड़े रखा है।

दज्जाल के घाव तुमको, मोहों सिर पर लगे।

आपन जुध कहते हते, सो तुम जुध किए ए।।३१।।

बादशाह के अधिकारियों के द्वारा की गई चोट आपके सिर और मुख पर लगी है। हम माया से युद्ध करने की बात कहा करते थे, किन्तु आप १२ सुन्दरसाथ ने तो प्रत्यक्ष युद्ध करके दिखा दिया है।

भावार्थ– "सिर" स्वाभिमान का प्रतीक है तथा "मुख" शोभा का प्रतीक है।

जिन ब्रह्ममुनियों की चरण धूलि से ब्रह्माण्ड को पवित्र होना है, उन्हें सिद्दीक फौलाद जैसे क्रूर और निष्ठुर कोतवाल के हाथों यातना झेलना सिर पर चोट खाना है।

औरंगज़ेब से मिलने के लिए ऐसे एक–एक अधिकारी से

सिफारिश करना, जो जीव सृष्टि थे, पुनः भेष बदलकर जाना, अपने मुँह पर चोट झेलना है।

औरों को कहने की पाती का, ए जो हुआ अब जोए।
तुमारे कहने का, एह करने का होए।।३२।।

यहाँ जो कुछ भी घटनाक्रम हुआ है, उसे पत्र द्वारा सब सुन्दरसाथ तक पहुँचा देना। उन पत्रों में आप उनसे यह कहना कि आप लोगों को भी इसी तरह जागनी कार्य हेतु सर्वस्व समर्पण करना होगा।

सो तो तुम किया, अब खबर राखियो तुम।
इन मोरचे खबर, एह लिखते हैं हम।।३३।।

आप लोगों ने जो शरातोरा के विरुद्ध युद्ध किया है , उसके हर घटनाक्रम की जानकारी रखते रहें। इस

धर्मयुद्ध की सूचना पत्रों के द्वारा मैं भी सुन्दरसाथ को भेज रहा हूँ।

तुम भेला जो कोई मिले, तिनकी कीजो तलास।
जेती वस्त तुम पास है, जैसे धनी की है आस।।३४।।

वहाँ आपसे जो भी व्यक्ति मिलने आए, उस समय यह देखना कि उसमें धनी के प्रति सुन्दरसाथ जैसा ईमान और एकमात्र धनी की ही आशा की भावना है या नहीं?

भावार्थ- संसार के सभी रिश्ते-नातों को छोड़कर एकमात्र धनी की आशा वही करेगा, जिसने अपना सर्वस्व उनके चरणों में सौंप दिया हो। ईमान के साथ सर्वस्व समर्पण का यह खास गुण रखना ही ब्रह्मसृष्टियों की विशेष पहचान है।

जैसे तुम आप हो, तैसा फुरमाया धाम।

तैसे भारी हूजियो, तैसे कीजो काम।।३५।।

परमधाम की ब्रह्मसृष्टियों की जो महिमा धर्मग्रन्थों में कही गई है, वैसे ही आप प्रत्यक्ष रूप में हैं। इसलिए अपनी गरिमा के अनुसार ही वहाँ रहना तथा वैसे ही कार्य करना।

जैसा कलामों में है, तैसा ही भरयो पाए।

एते दिन तुम मिने, आकार पकड़ बैठाए।।३६।।

ब्रह्मसृष्टियों की जैसी महिमा धर्मग्रन्थों में वर्णित है, आप वैसा ही आचरण करना। मेरा शरीर भी आप जैसा ही है और ऐसे शरीर में धाम धनी आज तक विराजमान होकर लीला करते रहे हैं।

तिस वास्ते मेरा, चला जात मुलाज।

अब मरजादा चलियो, राखियो मेरी लाज।।३७।।

आप सुन्दरसाथ के सर्वस्व त्याग के कारण वहाँ पर मेरा सम्मान बना हुआ है। आपसे किसी तरह की भूल होने पर वह समाप्त हो जाएगा। वहाँ पर धर्म की मर्यादा का पालन करते रहना और मेरी लाज बचाए रखना।

अब तुम एक दूजे से, भारी हूजियो तुम।

अपने गुन बस कीजियो, बड़े मोहरे को लगे तुम।।३८।।

आप सब सुन्दरसाथ एक दूसरे से अधिक गरिमामयी व्यवहार करने का प्रयास करें। माया के त्रिगुणात्मक बन्धनों के कारण होने वाली इच्छाओं को जीतना। इस समय आप लोग धनी के कार्य हेतु शरातोरा के सबसे बड़े बादशाह से लड़ रहे हैं।

भावार्थ– सत्व, रज, तम प्रकृति के तीनों गुण हैं, इन्हीं के कारण जीव माया के बन्धन में बँधा रहता है और कर्मफल का भोग करता रहता है। एकमात्र प्रेम ही वह त्रिगुणातीत मार्ग है, जिसके द्वारा इन तीनों गुणों को जीता जा सकता है।

तिस वास्ते नया जो आवेगा, तुमारी वानी चाल देख के।
तिस वास्ते भारी होइयो, चाल भारी दिखाइयो ऐ।।३९।।

आपके बोलचाल एवं व्यवहार को देखकर ही कोई नया व्यक्ति सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित होगा। इसलिए वहाँ पर अपने श्रेष्ठ आचरण को बनाए रखना, जिससे आपकी गरिमामयी स्थिति बनी रहे।

हो तुम जान सिरोमन, जो तुम साथ समस्त।

तुम बुधवान विचष्यन, तुम पे बड़ी वस्त।।४०।।

मेरे प्राणाधार सुन्दरसाथ! आप सब सुन्दरसाथ में शिरोमणि हैं, विलक्षण बुद्धि वाले हैं, और आपके पास तारतम ज्ञान रूपी अनमोल सम्पदा है।

तुम बड़ी बुध के खावन्द, क्या बहुत लिखिए तुम।

अजान को लिखिएत हैं, तिस वास्ते बेर बेर कहा लिखें हम।।४१।।

आप जाग्रत बुद्धि के स्वामी हैं अर्थात् आपके अन्दर जाग्रत बुद्धि विराजमान है। किसी अनजान (अल्पज्ञ) को सिखापन बार-बार दिया जाता है, इसलिए आपको सिखापन सम्बन्धी कोई भी बात मैं बार-बार कैसे लिखूँ?

चार दिन आपन को, है पत्री से मिलाप।

आकार मिलाप ना होवहीं, तिस वास्ते जानो आप।।४२।।

चार दिन अर्थात् कुछ दिनों के लिए पत्रों के माध्यम से हमारा मेल-मिलाप होगा। यद्यपि शरीर से हमारा मिलाप नहीं हो रहा है, फिर भी हमारे हृदय के तार जुड़े हुए हैं। इसलिए इस विवशता को आप स्वयं जानते हैं।

दोए सुकन तिस वास्ते, चांप के लिखे कलाम।

हमको चार दिन जाना पड़े, वास्ते इसहीं काम।।४३।।

भविष्य में होने वाले जागनी कार्य को ध्यान में रखते हुए मुझे कुछ दिनों के लिए बाहर जाना पड़ सकता है। इसलिए आप सुन्दरसाथ को सिखापन एवं सान्त्वना देने हेतु मुझे कुछ बातें जोर देकर लिखनी पड़ी हैं।

सो भी कारज कारन, जान परत आगे।

नातो हमारा जाना न होए, सो जानो तुम ए।।४४।।

ऐसा जान पड़ता है कि किसी विशेष कारण से ही मुझे वहाँ जाना पड़ रहा है, अन्यथा मेरा वहाँ जाना नहीं हो सकता। इस बात को आप अच्छी तरह जानते हैं।

तुम पाती लिखियो, सब साथ ऊपर।

और नवतनपुरी, तथा खंभालिए पर।।४५।।

हे साथ जी! अब नवतनपुरी तथा खम्भालिया के सब सुन्दरसाथ को पत्र लिखकर सम्पूर्ण समाचार से अवगत कराना।

तथा पोरबन्दर, तथा मंडई ठठे।

तथा सूरत खंभात, तथा अहमदाबाद के।।४६।।

इसी प्रकार पोरबन्दर, मण्डई, ठट्ठानगर, सूरत, खम्भात, तथा अमदाबाद के भी सुन्दरसाथ को पत्र अवश्य लिखना।

और भरूच सिद्धपुर, तथा उदयपुर मेरते।

सब साथ ऊपर, पाती लिखते रहियो ऐ।।४७।।

भरूच, सिद्धपुर, उदयपुर, मेड़ता के सब सुन्दरसाथ को पत्र लिखकर अवश्य भेजना।

बोहोत खुसाल होए के, वस्त का दिखाइयो बोझ।

महम्मद ईसा इमाम, बड़ा बोझ दिखाइयो खोज।।४८।।

जहाँ भी पत्र लिखना, बहुत प्रसन्नतापूर्वक लिखना, और उसमें यह बात दर्शाना कि हम कितने महान कार्य के लिए गए हैं? पत्र में बसरी सूरत (मुहम्मद सल्ल.), मलकी सूरत (सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी), तथा हकी सूरत (श्री प्राणनाथ जी) की महिमा को दर्शाना कि तीनों सूरतों का सम्मिलित स्वरूप किस प्रकार आत्माओं की खोज करते हुए अपने उत्तरदायित्व का वहन करता है।

सब को वस्त दिखाए के, खण्डनी लिखियो तुम।
गल गलते रोते जिन लिखो, कहो चोखा लिखत हैं हम।।४९।।

पत्र में सबको यथार्थ सत्य की पहिचान कराकर उनकी रूढ़िवादिता का खण्डन करना। मुस्लिम वेशभूषा धारण करने तथा मुसलमानों के बीच में रहने के कारण अपने मन में हीन भावना से ग्रसित होकर गिड़गिड़ाते हुये या

रोते हुये कोई भी पत्र नहीं लिखना , बल्कि ओजस्वी भाषा में पत्र लिखना, जिससे सबको यह पता चल जाए कि यह पत्र कितनी करारी चोट करने वाली भाषा में लिखा गया है।

जो कोई तुमको, उत देवे दुख।
तिसका सिर हम भान के, उत देवें सुख।।५०।।

यदि कोई आपको किसी प्रकार की घृणा के कारण दुःखी करता है, तो मैं उसके अभिमान को दूर करके आपके हृदय को पुनः सुख दूँगा।

भावार्थ– "सिर भानना या तोड़ना" एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य होता है अहंकार को दूर करना। अब से लगभग ५० वर्ष पूर्व हमारे देश में इतनी अधिक छूत – छात की भावना थी कि किसी निम्न वर्ण या मुस्लिम के

साथ रहने या खाने वाले को बहुत घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। श्रीजी के कथन का यही आशय है कि यदि आपके प्रति कोई ऐसी घृणा दर्शाएगा, तो जिस रूढ़िवादी पौराणिक मान्यता के कारण वह घृणा कर रहा है, उस विकृत मानसिकता को नष्ट करके आपको आनन्दित करूँगा।

अथवा कोई साथ में, उलटा होए देवे कसोट।
सो तुम हमको लिखियो, ताए बांध मंगाये करें चोट।।५१।।

अथवा यदि कोई सुन्दरसाथ भी आप लोगों से रूढ़िवादी मानसिकता के कारण घृणा करता है और आपके हृदय को दुःखी करता है, तो आप पत्र लिखकर हमें सूचित करना। मैं उसको शीघ्रतापूर्वक अपने पास बुलाकर ज्ञान द्वारा उसकी विकृत मानसिकता को नष्ट

करूँगा।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित किसी को बँधवाकर मँगाना एक मुहाविरा है, जिसका आशय होता है कि कोई आने में आनाकानी करे तो उसे दबाव देकर शीघ्र आने के लिए विवश कर देना। प्रायः अपने सेवकों तथा अनुयायियों के बीच में बुलाने के सम्बन्ध में यह वाक्य कहा जाता है।

हम जो भेख बदल के, पैठे बीच दरबार।
सों उलटों सीधा करनें, तरफ परवर दिगार।।५२।।

हे साथ जी! आप बाहर के सुन्दरसाथ को इस तरह का पत्र लिखकर भेजिए कि मुसलमानों की वेशभूषा धारण करके हम (बारह सुन्दरसाथ) जो बादशाह के दरबार में गए हैं, उसका यही आशय है कि कुरआन की आयतों

का विकृत अर्थ करके अल्लाह की बन्दगी के नाम पर शरीअत की ओट में जो हिन्दुओं पर अत्याचार ढाया जा रहा है, उस उल्टे मार्ग से हटाकर मुसलमानों को हकीकत का इल्म देकर इस्लाम के सच्चे स्वरूप की पहचान दर्शाना तथा कियामत एवं इमाम महदी की पहचान देकर खुदा को पाने की सीधी राह बता देना।

मुसलमान सों हम तो डरें, जो श्री देवचन्द्र जी परखी न होए।
खोजी रई बाई वासना परखी, सब साथ जानत हैं सोए।।५३।।

मुसलमानों के पास जाने या उनके बीच रहने से तो हम तब डरते, जब उनमें से किसी को सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने तारतम न दिया होता। सब सुन्दरसाथ जानते हैं कि सद्गुरू महाराज ने खोजी बाई, जो मुस्लिम विधवा थी, के अन्दर रई बाई की आत्मा को परखा था।

जात भेस जो तुम रख्या, ताको श्री देवचन्द्र जी भान्या सिर।
सो ना सकते जाहिर कर, अब समझे फिरके बहत्तर।।५४।।

पत्र में उन बाहर के सुन्दरसाथ को यह लिखना कि आप लोगों ने अपनी जाति तथा वेश-भूषा को जो इतना महत्व दे रखा है, उसे तो सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने पहले ही समाप्त कर दिया था। किन्तु कुरआन की हकीकत और मारिफत को जाहिर कर वेद एवं कतेब का एकीकरण उनके तन से नहीं हो सका था। अब जागनी की इस लीला में मुसलमानों के ७२ फिरकों को यह बात समझ में आ जायेगी कि इस्लाम का वास्तविक स्वरूप क्या है?

भावार्थ- उपनिषदों के कथन " एकम् एव अद्वितीयं" तथा कुरआन के कथन "कुल्ह हू अल्ला अहद्" के अनुसार, जब सारी सृष्टि का परमात्मा एक ही है तो फिर

जाति–पाति और वेश–भूषा के आधार पर भयानक युद्ध और रक्तपात क्यों? स्वयं को मोमिन कहने वाले मुसलमान, कुरआन की किस आयत के आधार पर हिन्दुओं को काफिर कहकर उनका गला काटते हैं? श्री प्राणनाथ जी की वाणी में यह सामर्थ्य है कि संसार के सभी मत–मतान्तरों को एक झण्डे के नीचे खड़ा कर सकती है।

तो हम राज की आज्ञा से, जाहिर किए चौदे तबक।
विकार सारा विस्व का, मेट दई सब सक।।५५।।

श्री राज जी की आज्ञा से, चौदह लोकों वाले इस ब्रह्माण्ड में कियामत तथा इमाम महदी के प्रकट होने की बात को हमने जाहिर कर दिया है। सारे संसार (वेद–कतेब पक्ष) में एक–दूसरे की मान्यताओं पर जो संशय

करने का विकार था, उसे हमने तारतम ज्ञान के प्रकाश से समाप्त कर दिया है।

ऐसी पाती लिख के, उठाए खड़े करो।

चार बचन जिन भांत के, तैसे तहां धरो।।५६।।

सब सुन्दरसाथ को इस तरह से लिखकर पत्र भेजिए। वे भ्रमवश माया में सो रहे हैं। अपने पत्रों में तारतम ज्ञान का प्रकाश भरकर उन्हें नींद से उठा दीजिए और जागनी कार्य की सेवा के लिए तत्पर कर दीजिए। सुन्दरसाथ को जगाने के लिए जहाँ जैसी आवश्यकता हो, वहाँ इस तरह की (उपरोक्त) दो-चार बातें लिखकर सबको प्रबोधित कीजिए।

तैसे ही तिन ऊपर, लिख के भेजो तुम।

जिनको जैसा घटता, ताको पाती लिखो सब कुंम।।५७।।

आप दिल्ली से बाहर के सुन्दरसाथ को इस प्रकार के पत्र लिखकर भेजिए। जिसको जिस तरह के शब्दों से उचित प्रतीत हो, उसको उसी भावना से पत्र लिखिए।

द्रष्टव्य– पत्र लिखते समय, जिस तरह अलग–अलग सम्बन्धों (जैसे– बड़े, छोटे या समकक्ष) के सम्बोधन में अलग–अलग प्रकार के शब्द प्रयोग किये जाते हैं, उसी प्रकार अलग–अलग विचारधारा तथा मानसिकता वाले लोगों के लिए उसी तरह के शब्दों का प्रयोग उचित रहता है।

तैसी बिहारी जी को, और नागजी अखई।

नवतनपुरी भेजियो, जवाब आवत क्यों कर सही।।५८।।

बिहारी जी महाराज, नाग जी भाई, और अखई भाई को नवतनपुरी पत्र भेजिये, तथा प्रतीक्षा कीजिए कि वहाँ से किस प्रकार का उत्तर आता है?

देखें बिहारी जी क्या लिखते, ए जवाब लेओ सिताब।
ए पत्रियां लिख के, दुरूस्त करो अब किताब।।५९।।

देखें, बिहारी जी उत्तर में क्या लिखते हैं? उनके पास भेजे गए पत्र का शीघ्र उत्तर लाना। इन पत्रों को लिखने के पश्चात् सनद ग्रन्थ की उपयोगिता के सम्बन्ध में रूढ़िवादी लोगों की मानसिकता ठीक करो।

भावार्थ– सनद ग्रन्थ में आए हुए अरबी के शब्दों को देखकर पौराणिक एवं रूढ़िवादी मानसिकता वाले सुन्दरसाथ उसे त्याज्य–सा समझने लगते हैं, किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि यह ब्रह्मवाणी किसी अवतार –

तीर्थंकर की वाणी नहीं है, बल्कि उस सच्चिदानन्द परब्रह्म की वाणी है, जो असंख्य पृथ्वियों, सूर्यों, तथा नक्षत्रों, आदि का स्वामी है, उसे मात्र किसी वर्ग विशेष के बन्धन में कैसे कैद किया जा सकता है?

वस्तुतः यह सनद ग्रन्थ पृथ्वी मण्डल पर प्रचलित वेद और कतेब दोनों की मान्यताओं का एकीकरण करने वाला है। इसलिए इस चौपाई के चौथे चरण में यह बात दर्शायी गयी है कि जिन सुन्दरसाथ की संकुचित सोच तारतम ज्ञान के धरातल पर एक विश्व धर्म का महल खड़ा करने की अपेक्षा एक कट्टरवादी पौराणिक सम्प्रदाय मात्र खड़ा करने की भावना से ग्रसित है, उन्हें यह आत्ममन्थन करना होगा कि कहीं वे वाणी एवं धर्म के मूल सिद्धान्तों के विपरीत तो नहीं जा रहे हैं?

अब तो तुम केसरी सिंह हो, ऊपर पहिरी पाखर।
काहू मुलाहजा जिन करो, कासिद को भेजो आखर।।६०।।

हे साथ जी! जागनी अभियान में आप केशरी सिंह की तरह वीर पुरूषार्थी हैं। हाथी के ऊपर पहने जाने वाली लोहे की पाखर की तरह, आपने इश्क और ईमान का कवच धारण कर रखा है। इसलिए कट्टर एवं रूढ़िवादी लोगों से लज्जित होने की आवश्यकता नहीं है। अन्ततोगत्वा यदि वे पत्रों के माध्यम से नहीं समझते हैं, तो उन्हें समझाने के लिए अपना पत्रवाहक भी भेजो।

कासिद तहां लों भेजियो, उनके दिल की ल्याओ खबर।
कोई तुम से आप छिपावहीं, सो मालूम होवे इन पर।।६१।।

दिल्ली से बाहर रहने वाले सुन्दरसाथ के दिल में क्या चल रहा है, यह जानना जरूरी है, इसलिए जब तक यह

मालूम न चल जाए, तब तक अपना सन्देशवाहक उन तक भेजते रहिए। सम्भव है कि पत्र में कोई अपने मन की बात छिपा भी जाए, किन्तु जब अपने यहाँ से सन्देशवाहक जाएगा तो उनके दिल के सारे छिपे हुए भावों की जानकारी हो जाएगी।

जो जैसा तैसी तिनों, लिखियों तुम कलाम।
ज्यों आगे अगिन के, मोम पिघलत तमाम।।६२।।

जो सुन्दरसाथ जिस भाव का है, उसके अनुसार ही उनको पत्र लिखिए। आपके शब्दों में ऐसा प्रभाव होना चाहिए कि उसको पढ़ने वाला वैसे ही द्रवित होकर आपका अपना बन जाए, जैसे अग्नि के सम्पर्क में आने पर मोम पिघल जाती है।

और दयाराम के भाइयों नें, आगे आए दरबार।

बातें इन भांते करी, ताए हम रूपैया देवें चार हजार।।६३।।

दयाराम के भाइयों ने शाही दरबार में आकर इस तरह की बातें चलायीं कि हम उस व्यक्ति को चार हजार रूपये देंगे।

जो इनको मार डारहीं, ऐसी बात सुनाई कान।

हमारी सरम जाएगी, जो होएगा मुसलमान।।६४।।

जो हमारे भाई दयाराम को मार डालेगा, क्योंकि यदि वह मुसलमान हो जाएगा तो हमारी प्रतिष्ठा धूल में मिल जाएगी, इसलिए वह दिन देखने से पहले उसे मरवा देना उचित है। इस तरह की बातें वे कर रहे थे।

तिस वास्ते इहां इनको, गोविन्द भेड़े की निसबत।

मार डारत भाई को, पैसे दे के इत।।६५।।

इसलिए, इस संसार के जीवों को माया नगरी से सम्बन्ध रखने वाला कहा गया है, जो अपनी लोक-लज्जा के वशीभूत होकर अपने सगे भाई को भी पैसे देकर दूसरों से मरवा डालने की चाहना रखते हैं।

वास्ते अपनी सरम के, सब में एही स्वारथ।

गोविन्द भेड़े इन भांत के, ए नजर में राखियों अरथ।।६६।।

हे साथ जी! इस बात को हमेशा अपने दिल में बसाये रखना। माया नगरी के प्रायः सभी जीव इस प्रकार अपने स्वार्थ में लिप्त होते हैं कि अपनी इज्ज़त के लिए सगे भाई को भी मरवा सकते हैं।

ऐसो होए स्वारथी, गोविन्द भेड़ा चौदे तबक।

एह बचन दृष्टान्त वास्ते, लिखा बेसक।।६७।।

चौदह लोकों का यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड माया नगरी का प्रपञ्च है। आपको दृष्टान्त देकर समझाने के उद्देश्य से मैंने दयाराम भाई का प्रसंग लिखा है।

भावार्थ– तृष्णाओं से बँधे हुए ये जीव प्रेम से कोसों दूर होते हैं। संसार का प्रत्येक रिश्ता (सम्बन्ध) किसी न किसी स्वार्थ पर आधारित होता है। इन सम्बन्धों में पवित्र, निश्छल, समर्पित, एवं अखण्ड प्रेम की आशा करना मृगतृष्णा के जल में स्नान करने के समान होता है।

यह कैसी विडम्बना है कि इस संसार के बड़े–बड़े विद्वान भी यह जानते हैं कि एकमात्र परब्रह्म ही प्रेम का सागर है, किन्तु उसमें डुबकी लगाना तो दूर, उसे देखने

में भी रूचि नहीं दिखाते , बल्कि आकाश में चमकने वाली बिजली की भान्ति क्षणिक वासनाओं के पीछे भागते रहते हैं। भागते–भागते बुढ़ापा आ जाता है, किन्तु मोह का बन्धन उनसे छूट नहीं पाता है।

तुम जान सिरोमन हो, भूलोगे न तुम।
सब बात का बोझ जो, उठाए के लीजो कुंम।।६८।।

तुम मेरे प्राण हो, सुन्दरसाथ में शिरोमणि हो। मुझे विश्वास है कि तुम मेरी बातों को भुलाओगे नहीं। मैं आशा करता हूँ कि मैंने जिन–जिन बातों का पत्र में वर्णन किया है, उसे आचरण में अवश्य चरितार्थ करोगे।

तुम साथ मिने सिरदार, छाती काढ़ के कहे सुकन।
वेद बन्ध की मरजाद, ताका सिर भाना मोमिन।।६९।।

आप सभी सुन्दरसाथ में प्रमुख हैं, इसलिए मैंने ये बातें आपको अति आत्मविश्वास के साथ कही हैं। आपने वेद (धर्मग्रन्थों) के बन्धन की मर्यादाओं को पूर्णतया तोड़ दिया है।

भावार्थ– "छाती काढ़ कर कहना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है– अति आत्मविश्वास, अति उत्साह, या स्वाभिमान से किसी बात को प्रस्तुत करना।

प्रायः धर्म क्षेत्र में यह मान्यता प्रचलित है कि हिन्दू धर्म के सभी ग्रन्थ मूल वेदों की ही व्याख्या हैं, इसलिए बोलचाल में धर्मग्रन्थों की बात को वेद की बात के रूप में प्रस्तुत करने की परम्परा चल गयी है।

तत्कालीन भारतीय समाज में शूद्र या मुसलमान के हाथ का खाना उच्च वर्ग के लोगों के लिए धर्मभ्रष्ट जैसा होता था, किन्तु चिन्तामणि जैसे गादीपति, भीम भाई

जैसे वेदान्त के आचार्य, लालदास जी जैसे धनाढ्य व्यवसायी ने बिना किसी झिझक के मुस्लिम वेश-भूषा में मुसलमानों के हाथ का दिया हुआ भोजन किया। वस्तुतः छूत-छात का बन्धन पुराणों का है, वेदों का नहीं। वेदों में सार्वभौम सत्य की व्याख्या की गयी है। वेदों तथा पुराणों में अनेक विषयों पर तीव्र मतभेद हैं , किन्तु पौराणिक मान्यता को ही वेद की मान्यता के रूप में दर्शाया गया है। इस चौपाई के तीसरे चरण में "वेद बन्ध" की मर्यादा का यही भाव है।

लोक मरजादा छोड़ के, मोरचा ढहाए मिने पैठे।
तिन साथ में से, रहियो एक जागा के।।७०।।

आपने धनी के आदेश से लोक-लज्ञा की मर्यादाओं को छोड़ दिया। शरीअत के गढ़ में पहुँचकर उनका मोर्चा

ध्वस्त कर दिया। आप सभी सुन्दरसाथ मूलतः एक ही परमधाम के रहने वाले हैं, इसलिए अनेक जातियों एवं मत–पन्थों से जुड़े रहने पर भी आपस में एक होकर रहना।

तुम जुदे इनसे जिन पड़ो, नातो चेहरा होए तुमे।
पीछे कहोगे ना कह्या, तुम समझो इन से।।७१।।

अभी शरीअत की राह पर चलने वाले इन मुस्लिम लोगों से अलग होने का समय नहीं है। यदि अभी यहाँ से चले जाओगे तो तुम्हारी बदनामी होगी। मैंने तुम्हें इसलिए यह बात कही है कि तुम इससे समझ जाओ अन्यथा बाद में यह नहीं कहना कि हमको तो कहा ही नहीं गया था, हम क्या करते?

जब लाग देखूंगा, तब मैं लेऊं बुलाए।

या बुलाओ मुझको, बैठो साथ मिलाए।।७२।।

जब मैं उचित अवसर देखूँगा, तब मैं आप सभी सुन्दरसाथ को अपने पास बुलाऊँगा। अथवा यदि मेरी आवश्यकता हो तो सब सुन्दरसाथ मिलकर मुझे सूचित करना, मैं आकर आप लोगों के साथ बैठूँगा।

बिना मसलत, जिन करो कोई काम।

सब परियाने कीजियो, देख अपना धाम।।७३।।

बिना आपस में विचार-विमर्श किए, कोई भी कार्य नहीं करना। परमधाम का मूल सम्बन्ध निभाते हुए, आप सब सुन्दरसाथ आपस में एक-दूसरे के विचारों का आदान-प्रदान करते रहना।

हम तुमारी पाती का, करेंगे विचार।

जब तुम जवाब लिखोगे, तब हम चलें बाहर।।७४।।

आप लोगों ने मेरे पास जो पत्र भेजा है, मैं उस पर विचार करूँगा। जब आप लोग मेरे पत्र का उत्तर लिखेंगे और मुझे जाने की स्वीकृति देंगे, तभी मैं यहाँ से कहीं बाहर जाऊँगा।

हंस खेल हरख के, बांधोगे कमर।

तुम लीजो बोझ उठाए के, रहो दिल दृढ़ कर।।७५।।

मुझे विश्वास है कि आप सब सुन्दरसाथ हँसते-खेलते हुए प्रसन्नतापूर्वक जागनी कार्य के लिए हमेशा तत्पर रहेंगे। आप सब सुन्दरसाथ अपने दिल को मजबूत बनाइये और आपके ऊपर जो जागनी का उत्तरदायित्व सौंपा गया है, उसको निभाइये।

जो कदी आकार से, मैं जुदा रहों दो दिन।

अन्तर गत दृष्टान्त, हुआ इलहाम रोसन।।७६।।

ऐसी सम्भावना हो सकती है कि मैं शरीर से कुछ दिन (दो दिन) के लिए आप लोगों से अलग रहूँ। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है कि मेरे धाम हृदय में विराजमान श्री राज जी मुझे बाहर जाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

तिस वास्ते भीम भाई की, खबर पूछियो उदयपुर।

अजूं भी न समझया, तिनका कहा करों क्यों कर।।७७।।

इसलिए उदयपुर में भीम भाई के पास पत्र लिखकर उनका भी समाचार पूछ लेना। वे अभी भी समझ नहीं पाए हैं। उनको और क्या कहा जाये? वे माया में डूबे हुए हैं।

भावार्थ– इस चौपाई में जिस भीम भाई का वर्णन किया

है, वे सूरत के वेदान्त के विद्वान भीम भाई नहीं हैं, जो अपना सर्वस्व छोड़कर धनी के चरणों मे समर्पित हो गए थे। क्योंकि बीतक के प्रकरण ४९ चौपाई ५२ में यह स्पष्ट दर्शाया गया है कि दिल्ली की कैद से जो सुन्दरसाथ चलकर उदयपुर आए, उसमें भीम भाई का भी नाम है, जबकि श्रीजी के सभी पत्र उदयपुर पहुँचने से पूर्व ही लिखे गये हैं।

एक लखमन भीम भाई, स्यामदास खिमाई।
सामलदास गरीब दास, और संग लालबाई।।

बी० सा० ४९/५२

बी. ३२/२ में भी कहा गया है कि भीम भाई ने आजीवन धनी की सेवा की–

"सेवा करी उमर लों, गाए के प्रेम वचन।"

तिनसे क्या समझेंगा, नींद अन्तर हैं जोर।

ए राज के हुकमें भई, ताए क्यों ए ना सकें मरोर।।७८।।

वे माया की इतनी गहरी नींद में डूबे हैं कि पत्र लिखने से भला उनको क्या समझ आने वाला है? यह माया भी श्री राज जी के आदेश से ही उत्पन्न हुई है, इसलिए उसे उनकी कृपा के बिना भला कैसे जीता जा सकता है?

तिस वास्ते एह भोम, है हांसी का ठौर।

कोई न होवे जागृत, बिना हुकम कोई और।।७९।।

इसलिए माया की यह भूमिका हँसी का ही स्थान है। इसमें बिना श्री राज जी के आदेश (इच्छा) के कोई भी जाग्रत नहीं हो सकता।

अनेक भांत के मोहजल, नये नये उठत तरंग।

इन में जो सावचेत, कोइक है धनी का अंग।।८०।।

इस अथाह मोहसागर में अनेक प्रकार की नयी-नयी तरंगें उठती रहती हैं। इनमें धनी की अंगरूपा कोई ब्रह्मसृष्टि ही माया से सावचेत रह पाती है।

भावार्थ- मनुष्य के सभी दुःखों का कारण तृष्णा है। यह तीन प्रकार की होती है-

१. लोकेषणा- संसार में प्रतिष्ठा की इच्छा,

२. वित्तेषणा- धन की इच्छा, और

३. दारेषणा- सगे-सम्बन्धियों का मोह।

इन्हीं तृष्णाओं के बन्धन में जीव विभिन्न योनियों में भटकता रहता है। संसार की समस्त कामनायें इन्हीं तीनों तृष्णाओं के अन्तर्गत आ जाती हैं। इस चौपाई में मोहजल की नयी-नयी तरंगों का यही आशय है।

मेरे तांई तो इन समें, लिया है मोल तुम।

तिस वास्ते तुमारी आतम से, मेरी होए न जुदी आतम।।८१।।

मेरे प्राणाधार सुन्दरसाथ! आपने अपने समर्पण से मुझे मोल ले लिया है, अर्थात् मैं आपके प्रेम के अधीन हो चुका हूँ। इसलिए मेरी आत्मा आपकी आत्मा से कभी भी अलग नहीं हो सकती।

ए निश्चे सत जानियो, मुतफे कुंन अलेह।

आपोपा जरूर संभारना, बोझ आया सिर पर ऐह।।८२।।

आप इस बात को निश्चित रूप से सत्य मानिये कि सर्व सम्मति से आपके सिर पर जागनी कार्य का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है, इसलिए इसे निभाने में आपको अवश्य ही समर्पित होना होगा।

भावार्थ– "मुतफिक्क अलेह" का तात्पर्य होता है, सर्व

सम्मति से।

इहां की हकीकत, भाई सेख बदल कहेंगे।
ताको सही जानियो, सुनियो कानों से।।८३।।

कान्ह जी तथा शेख बदल मेरे यहाँ से आपके पास जा रहे हैं। वे यहाँ की सारी वास्तविकता आपको बता देंगे। उसको अपने कानों से सुनकर पूर्ण रूप से सत्य मानना।

सेख बदल आए पीछे, हमको बड़ो भयो सुख।
हम तुमको मिलेंगे, तब हंस के भाने दुख।।८४।।

जब शेख बदल मेरे पास आए, तो मुझे बहुत ही सुख हुआ। जब हम सभी मिलेंगे तब हम प्रसन्नतापूर्वक बहुत हँसी करेंगे, जिससे वर्तमान समय का वियोग का कष्ट दूर हो जाएगा।

हमको बड़ा हरख है, सब सुख में रहियो कुंम।

दिन जागनी के आए नजीक, स्याबास लालबाई तुम।।८५।।

जागनी की वर्तमान स्थिति से मैं इस समय बहुत अधिक प्रसन्न हूँ। आप सब सुन्दरसाथ आनन्द में मग्न रहें। आत्म-जाग्रति की वेला बहुत ही निकट है। लालबाई! तुम्हारी समर्पण भावना को देखकर, मैं तुम्हें धन्य-धन्य कहता हूँ।

भावार्थ- जागनी की वास्तविक लीला खिल्वत, परिक्रमा, सागर, और श्रृंगार के अवतरण के समय ही होती है। उसी का सन्केत इस चौपाई के तीसरे चरण में किया गया है।

तुम सूर धीर पना किया, आगे धरे कदम।

अब सेख बदल आये सुख, पावे तुमारी आतम।।८६।।

आपने जागनी कार्य में अदम्य (जिसकी बराबरी न की जा सके) वीरता का परिचय दिया है और आने वाले सुन्दरसाथ के लिए आदर्श के रूप में आगे बढ़कर जागनी का नेतृत्व किया है। जब शेख बदल आपके पास पहुँचेंगे, तो निश्चित है कि मेरी बातें सुनकर तुम्हें बहुत अधिक सुख होगा।

सुख समाधान आनन्द की, रहो लिखते पाती।

सब साथ को परणाम, लालबाई को कहती।।८७।।

हे साथ जी! आप निःसंकोच होकर अपने हृदय के सुख तथा आत्मा के आनन्द को बताने के लिए पत्र लिखते रहिये। मैं इन्द्रावती की आत्मा सब सुन्दरसाथ सहित लाल बाई को प्रणाम करती हूँ।

महामत कहे ऐ मोमिनों, ए पाती की हकीकत।

अब मुकदमा कहों, फरदा रोज कयामत।।८८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे सुन्दरसाथ जी! श्रीजी और सुन्दरसाथ के बीच होने वाले पत्रों के आदान-प्रदान की यह वास्तविकता है। अब ११वीं-१२वीं सदी, जिसे कल का दिन कहा गया है, में सबको अखण्ड मुक्ति देने वाले परमधाम के ज्ञान का अवतरण होना है। ऐसे समय में उस अखण्ड ज्ञान के द्वारा सुन्दरसाथ ने अज्ञानता के विरुद्ध जो युद्ध छेड़ा है, अब उसका वर्णन कर रहा हूँ।

भावार्थ- इस चौपाई के तीसरे चरण में "मुकदमा" शब्द का प्रयोग हुआ है, उसका तात्पर्य दुनियावी मुकदमे से नहीं लेना चाहिए। यहाँ यह भाव दर्शाया गया है कि वादी और प्रतिवादी के रूप में एक ओर तारतम ज्ञान तथा

इश्क का बल लेकर परमधाम की ब्रह्मात्मायें हैं, तो दूसरी तरफ अज्ञानता का मायावी अन्धकार लिए हुए धर्म के बड़े–बड़े अधिकारीगण (तारतम ज्ञान से रहित विद्वान, मठाधीश, महन्त, मौलवी, मुल्ला, आदि)। वादी अन्धकार को मिटाना चाहता है, तो प्रतिवादी अन्धकार को फैलाना चाहता है। दोनों के बीच में न्यायाधीश की भूमिका मूल स्वरूप श्री राज जी निभा रहे हैं। इस संघर्षमयी लीला को ही "मुकदमा" शब्द से सम्बोधित किया है।

प्रकरण ।।४८।। चौपाई ।।२५२८।।

अब दिल्ली छोड़ उदेपुर आए

कामा पहाड़ी से होए, आए बीच आमेर।

दिन एक दोए रह के, पीछे आए सांगानेर।।१।।

श्रीजी कामा पहाड़ी से होकर राजस्थान के आमेर नगर में आए। वहाँ एक-दो दिन रहकर पुनः सांगानेर आए।

भावार्थ- राजस्थान के राजाओं को जाग्रत करने तथा औरंगज़ेब के अत्याचार का उन्मूलन करने हेतु श्रीजी राजस्थान में आए। उस समय आमेर में राजा विष्णु सिंह का राज्य था, जो कछवाहा वंशी क्षत्रिय था। यद्यपि राज्य की राजधानी जयपुर थी, किन्तु सुरक्षा की दृष्टि से राजा का निवास आमेर के किले में था। श्री प्राणनाथ जी ने विष्णु सिंह को पत्र लिखा कि वह अन्य राजाओं को एकत्रित कर औरंगज़ेब के साथ युद्ध करे। उसके द्वारा

अस्वीकार किए जाने पर श्रीजी सांगानेर चले आए।

थे मुकुन्ददास उदयपुर, उहां से आए सांगानेर।
तहां चरचा करने लगे, सुना सोर लड़ाई का जोर।।२।।

उस समय मुकुन्द दास जी उदयपुर में धर्म प्रचार कर रहे थे। उदयपुर से वे सांगानेर आए। वहाँ वे धर्म चर्चा करने लगे। वहीं पर उन्हें विदित हुआ कि श्रीजी के आदेश से कुछ सुन्दरसाथ ने औरंगज़ेब की शरीअत को चुनौती दी है।

तब उहां से चले, आए पोहोंचे आमेर।
उहां श्री जी साहिब जी की खबर सुनी, फेर आए सांगानेर।।३।।

तब वहाँ से वे चलकर लगभग ३५ किलोमीटर दूर आमेर पहुँचे। आमेर में मुकुन्द दास जी को पता चला कि

श्रीजी तो सांगानेर आए हैं। अब मुकुन्द दास जी श्रीजी के दर्शन हेतु पुनः आमेर से सांगानेर की ओर चलते हैं।

तहां राह बीच में, सेख बदल मिले।

तिनसों मिल चल के, आए पैंडे मवासियों के।।४।।

वहाँ रास्ते में मुकुन्द दास जी की शेख बदल जी से भेंट हो गई। दोनों जब मार्ग में चल रहे थे , तो वे मवासी आदिवासियों की बस्ती के पास से गुजरे।

तिनों ताके मारनें, थे पैसे बीच कम्मर।

डर लगा बोहोतक, भागे उतथें फेर कर।।५।।

मुकुन्द दास जी ने अपनी कमर में पैसे छिपा रखे थे। आदिवासी (वनवासी) लोगों ने जब दोनों को मारने के लिए मन में बुरी नीयत ले ली, तो मुकुन्द दास जी को

बहुत डर लगा और वे वहाँ से वापस भाग छूटे।

तहां से आए पुर में, तहां एक दुकान पर।

श्री जी साहिब जी बैठे देखे, एक खाट ऊपर।।६।।

वहाँ से दोनों पुर (पुरमण्डल) नामक एक गाँव में आए। वहाँ एक दुकान में एक खाट के ऊपर बैठे हुए श्री प्राणनाथ जी को उन दोनों ने देखा।

छबील दास आगे खड़ा, और मलूकचन्द नाम।

दोऊ दुखी पड़े हते, छुदा जोर थी इस ठाम।।७।।

छबील दास और मलूक चन्द दोनों श्रीजी के आगे खड़े थे। दोनों ही भूख से बहुत व्याकुल थे, जिससे उनके चेहरे से दुःख के भाव झलक रहे थे।

घर में कछु न पाइए, जो मंगावे बाजार से।

पहिचाने सेख बदल नें, कदमों लागे इन समें।।८।।

उस समय श्रीजी, छबीलदास, या मलूकचन्द के पास एक रूपया भी नहीं था कि बाजार से कुछ खाने की वस्तु मँगाते। शेख बदल ने उन्हें पहचाना और आकर श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया।

मुकुन्द दास आए मिले, थे बसनी रूपैये सौ चार।

मोल मंगाए बाजार से, चला कार वेहेवार।।९।।

मुकुन्द दास जी ने भी आकर श्रीजी के चरणों मे प्रणाम किया। उनकी गाँठ में ४०० रूपए पड़े हुए थे। उन्होंने बाजार से खाने की चीजें मँगवाई। इस प्रकार सबकी भूख से निवृत्ति हुई।

भावार्थ– अक्षरातीत जिस तन में विराजमान होकर

लीला कर रहे हैं, उस तन को कामा पहाड़ी से उदयपुर जाते समय न जाने कितने दिन भूखा रहना पड़ा होगा। जिनके चरण कमलों के प्रताप से पन्ना की धरती हीरा उगलने लगी, यदि वे चाहते तो अपनी इच्छा मात्र से वहाँ भी रत्नों का ढेर लगा सकते थे और भूख को अपने पास नहीं फटकने देते, किन्तु उन्होंने प्रकृति की मर्यादा को निभाते हुए हमें यह शिक्षा दी है कि धर्म प्रचार के कार्य में सादगी और त्याग का ही महत्व है।

वर्तमान समय में धर्म के अग्रगण्य व्यक्तियों में जो वैभव–विलास की होड़ मची है, वह धर्म के नाम पर दाग है। धर्म के अग्रगण्य व्यक्तियों से यही आशा की जाती है कि उनका जीवन भी तप और त्याग पर खड़ा होना चाहिए। वैभव–विलास तो मात्र गृहस्थ के लिए है, धर्म प्रचारकों के लिए नहीं। बुद्ध, महावीर, जनक, और

भर्तृहरि के देश में भौतिक सुखों में डूबे रहना , आध्यात्मिकता की चादर को धूमिल करने के समान है।

थे पैसे सेख की गिरह में, रूपैया सौ तीन।
उन आए आगे रखे, लगे बातें करने आकीन।।१०।।

शेख बदल की थैली में तीन सौ रूपए थे। उन्होंने अपने सारे रूपये श्रीजी के चरणों में रख दिए, और धनी के प्रति अपने अटूट विश्वास और प्रेम की बातें करने लगे।

भावार्थ– दिल्ली में स्थित सुन्दरसाथ को बाद में ध्यान आया कि हमने श्रीजी को बाहर जाने के लिए रजामंदी तो जाहिर कर दी, किन्तु रास्ते के खर्च के सम्बन्ध में कुछ सोचा ही नहीं। ऐसी स्थिति में शेख बदल अपने घर से ३०० रूपये लेकर श्रीजी को खोजने निकल पड़े। शेख बदल जी न तो विरक्त हैं और न धर्मोपदेशक, किन्तु

उनका त्याग और समर्पण से भरा हुआ जीवन सबके लिए प्रेरणादायी है। वस्तुतः धन की शोभा संग्रह करने से नहीं, बल्कि महान उद्देश्य के लिए समर्पित करने से है।

किया परियान रात को, मुकुन्ददास मिल के।
मुकुन्ददास के मन में, खेद हुआ दिल में।।११।।

रात्रि के समय मुकुन्द दास जी श्रीजी के साथ विचार-विमर्श करने लगे। दिल्ली में सुन्दरसाथ के साथ होने वाले दुर्व्यवहार का समाचार पाकर, मुकुन्द दास जी के मन में वास्तविक रूप से कष्ट हुआ।

श्री जी साहिब जी के दिल की, लगे बातें पूछन।
देखें कैसी मसलत करत हैं, हुआ कसाला ऊपर मोमिन।।१२।।

मुकुन्द दास जी इस तरह से श्रीजी से बातें करने लगे

कि जैसे वे यह जानना चाहते हों कि सुन्दरसाथ को दिल्ली में यातना का कष्ट झेलने के पश्चात् श्री प्राणनाथ जी के मन में क्या चल रहा है और उस घटना के सम्बन्ध में वे क्या कहते हैं?

तब श्री जी साहिब जीएं कह्या, अब ना छोड़ों इनें।
और इलाज कर मारहों, जड़ उखाड़ों बुनियाद पने।।१३।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने कहा- शरीअत की ओट में अत्याचार करने वाले इन मुसलमानों को अब मैं नहीं छोड़ूँगा। मैं किसी अन्य मार्ग से इनका प्रभाव समाप्त कर दूँगा और मुगल सल्तनत की नींव को जड़ सहित उखाड़ दूँगा।

भावार्थ- इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "और इलाज" का तात्पर्य शारीरिक अस्वस्थता की चिकित्सा

नहीं है, बल्कि किसी हिन्दू राजसत्ता के द्वारा मुगल सल्तनत को मुँहतोड़ उत्तर देना है। श्रीजी के मुख से मुगल सल्तनत के लिये निकला हुआ अशुभ वाक्य उसके पतन का कारण बन गया।

जोर देखी हिम्मत, श्री जी साहिब जी के मन में।
अब कहां को जाएंगे, विचार कहो हम सें।।१४।।

मुकुन्द दास जी समझ गये कि श्रीजी के अन्दर शरातोरा के विरूद्ध लड़ने के लिये अपार साहस है। तब उन्होंने श्री प्राणनाथ जी से पूछा कि आप यहाँ से कहाँ जायेंगे? कृपया अपना विचार बतायें।

इत जरगा पंथी बोहोत हैं, तहां आदमी मिले लाख।
धनी बाबे का पंथ है, ए अपनी पूरे साख।।१५।।

इस क्षेत्र में जरगा पन्थ के लाखों अनुयायी हैं। इस मत को धनी बाबा का पन्थ भी कहते हैं। इनके ग्रन्थों में अपनी बहुत सी साक्षियाँ हैं।

ए बात सुनके, मुकुन्ददास पर हुआ हुकम।
तू देख बातें करके, उत बुलाओ हम।।१६।।

यह बात सुनकर श्री प्राणनाथ जी ने मुकुन्द दास जी को आदेश दिया कि तुम लोगों में जाकर ज्ञान की चर्चा करो। जब उन लोगों में जिज्ञासा और भाव देखना, तो मुझे वहाँ पर बुलाना।

मुकुन्द दास मलूक चन्द, चले उहाँ से जब।
भील दौड़े तिन पर, भाग के छूटे तब।।१७।।

जब मुकुन्द दास जी तथा मलूक चन्द जी वहाँ से चले,

तो मार्ग में भीलों ने उन्हें लूटने के उद्देश्य से उनका पीछा किया। तब भागकर उन दोनों ने अपनी जान बचायी।

मुकुन्द दास विचार के, आया उदयपुर।
गया लाधू मसानी के इहां, करी श्री जी साहिब जी की फिकर।।१८।।

मुकुन्द दास जी काफी सोच-विचार कर उदयपुर में लाधू मसानी के पास गये। वहाँ वे हमेशा श्रीजी के बारे में ही सोचा करते थे। वहाँ उन्होंने श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक महिमा के बारे में चर्चा की।

उनसों जाए बातां करी, श्री जी साहिब जी के मिलाप।
कबूल करी उननें, बुलाए ल्याओ तुम आप।।१९।।

और उनसे श्रीजी को अपने यहाँ बुलाकर चर्चा कराने के लिये भी कहा। यह सुनकर लाधू मसानी राजी हो गया

और उसने मुकुन्द दास जी से आग्रह किया कि आप ही श्रीजी को सम्मानपूर्वक यहाँ लाने का कष्ट करें।

इन समें बनमाली दास, आए खंभात से।
संग राम बाई गोदावरी, आए पहुंची इन समे।।२०।।

इस समय खम्भात से बनमाली दास श्रीजी के चरणों में पुरमण्डल गाँव में आए। उनके साथ राम बाई और गोदावरी भी धाम धनी के चरणों में आईं।

मुलाकात करी इनों ने, तन मन दिया धन।
मेला मोमिनों का हो चला, खुसाल हुआ मन।।२१।।

इन तीनों ने धाम धनी के चरणों में अपना तन , मन, धन न्योछावर कर दिया। अब सुन्दरसाथ समूहबद्ध (झुण्ड के झुण्ड) मिलने लगे, जिससे सबके मन में

प्रसन्नता छा गई।

श्री बाई जी और साथ, रहें आगरे में।

मुकुन्ददास आए पोहोंचे, पाई खबर उनसे।।२२।।

इस समय तक श्री बाई जी और महिला सुन्दरसाथ आगरा में रह रहे थे। श्रीजी के निर्देश पर मुकुन्द दास जी आगरा पहुँचे। उनके माध्यम से श्री बाईजी सहित सब सुन्दरसाथ को दिल्ली की सारी सूचना मिली।

लाधू मसानी आइया, बीच दीन इसलाम।

तिनने बुलाए तब, दई जगा रहने की ठाम।।२३।।

मुकुन्द दास जी के मुख से चर्चा सुनकर लाधू मसानी ने निजानन्द का मार्ग अपना लिया, अर्थात् धाम धनी के प्रति उन्हें विश्वास हो गया। उन्होंने मुकुन्द दास जी से

श्रीजी के बुलाने का आग्रह किया और सब सुन्दरसाथ सहित श्रीजी के ठहरने के लिए स्थान की व्यवस्था की।

तब श्री बाई जी को बुलाए, आप चले उदयपुर।
साथ सब संग चले, पीछे दज्जालें किया सोर।।२४।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने श्री बाईजी को आगरा से अपने पास बुला लिया और उसके पश्चात् सब सुन्दरसाथ सहित उदयपुर के लिए प्रस्थान किया। उनके जाने के पश्चात् मायावी लोग तरह-तरह की बातें करने लगे।

भावार्थ- श्रीजी के निर्देश पर मुकुन्द दास जी ने उदयपुर में जाकर लाधू मसानी को जाग्रत किया। लाधू मसानी के द्वारा श्रीजी को बुलाने का आग्रह करने पर वे पुनः धाम धनी के पास आए। तत्पश्चात् श्री प्राणनाथ जी ने उन्हें आगरा में श्री बाईजी सहित सभी महिला

सुन्दरसाथ को लाने के लिए भेज दिया। मुकुन्द दास जी आगरा से सब सुन्दरसाथ को लेकर उस पुरमण्डल ग्राम में आते हैं, जहाँ श्रीजी सहित सुन्दरसाथ विराजमान थे। अब यहाँ से सब सुन्दरसाथ को लेकर श्रीजी उदयपुर के लिए प्रस्थान करते हैं।

लाधू भाई के आए, उतरे उनके घर में।
आदर भाव उन किया, हुई सेवा भली उनसे।।२५।।

सब सुन्दरसाथ सहित श्रीजी उदयपुर में लाधू के भाई के यहाँ ठहरे। उन्होंने बहुत आदर भाव के साथ सबका स्वागत किया और अच्छी तरह से सेवा की।

भावार्थ– ऐसा प्रतीत होता है कि चौपाई में लाधू और भाई के बीच में से "के" शब्द छूट गया है। लाधू मसानी उदयपुर के राज परिवार से जुड़े हुए व्यक्ति थे। उन्हें

मुकुन्द दास जी ने जाग्रत किया था। श्रीजी पहले लाधू मसानी के भाई के यहाँ ठहरते हैं, तत्पश्चात् मुकुन्ददास जी द्वारा सूचना मिलने पर लाधू मसानी के यहाँ जाते हैं। यह बात आगे की चौपाई से स्पष्ट हो जाती है।

फेर लाधू मसानी के इहां, मुकुन्ददास दई खबर।
उनसों मुलाकात करी, उन दिल में भई असर।।२६।।

पुनः लाधू मसानी के यहाँ जाकर, मुकुन्द दास जी ने श्रीजी के आने की सूचना दी। लाधू मसानी ने आकर श्रीजी से भेंट की। उनके दिल में श्रीजी के अलौकिक व्यक्तित्व का विशेष प्रभाव पड़ा।

भावार्थ– इस चौपाई से यह बात स्पष्ट होती है कि मुकुन्द दास जी के द्वारा सूचना देने पर लाधू मसानी स्वयं चलकर श्रीजी के चरणों में आते हैं। उस समय

श्रीजी लाधू के भाई के यहाँ विराजमान होते हैं। लाधू मसानी के द्वारा हवेली की व्यवस्था करने पर श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ वहाँ पर जाते हैं। यह बात निम्नलिखित चौपाई से भी स्पष्ट हो जाती है।

तब उन हवेली दई, उतरे उन ठौर।
तहां चरचा होने लगी, रही बात न हक बिन और।।२७।।

तब लाधू मसानी ने एक हवेली की व्यवस्था करा दी। श्रीजी सब सुन्दरसाथ सहित उसमें विराजमान हो गए। अब वहाँ चर्चा का प्रवाह चल पड़ा। इसमें श्री राज जी के सिवाय और किसी बात का जिक्र ही नहीं होता था।

नया मंडान होए चला, साथ आवत बीच इसलाम।
हुई वेद कतेब की चरचा, इत पाया विसराम।।२८।।

चर्चा के प्रभाव से नये–नये सुन्दरसाथ की जागनी होने लगी और वे निजानन्द के मार्ग को अपनाने लगे। उस समय वेद और कतेब दोनों पक्षों की चर्चा हो रही थी , जिसमें सभी ने बहुत अधिक शान्ति का अनुभव किया।

इत चरचा होने लगी, जहां तहां हुई खबर।
सब दीदार को आवत, चरचा सुनने पर।।२९।।

वहाँ पर श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा का प्रकाश फैलने लगा, जिसका समाचार चारों ओर फैल गया। सब लोग श्रीजी के दर्शन एवं उनकी चर्चा सुनने के लिए आने लगे।

अपने साथ के लोग जो, ताके चित भए सनमुख।
दीदार श्री जी साहिब जी के, बड़ो जो पायो सुख।।३०।।

सुन्दरसाथ पर चर्चा का ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनका चित्त संसार से हटकर पूर्णतया धनी की तरफ लग गया। अपने सामने श्री प्राणनाथ जी का प्रत्यक्ष दर्शन पाकर सबको बहुत ही सुख हुआ।

दोए राजपूत हवेली मिने, तिन उत बैठे सुनी बान।
तिनों को तारतम की, कछुक भई पहिचान।।३१।।

पास की हवेली में दो राजपूत रहा करते थे। वे वहीं बैठे-बैठे श्रीजी की चर्चा सुना करते थे। चर्चा सुनते-सुनते उनको तारतम ज्ञान की महत्ता की थोड़ी सी पहचान हुई।

इन समें नूर महम्मद सों, होए गई मुलाकात।
गला चरचा सुन के, नीके सुनी बात।।३२।।

इस समय नूर मुहम्मद से श्रीजी की भेंट हुई। उसने श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को बहुत अच्छे से सुना और उनके प्रेम में गलित-गात (पूर्ण समर्पित) हो गया।

इत एक सैयद बारात से, सुनी चरचा दीन इसलाम।
ईमान ल्याया इन समें, देख मोमिनों काम।।३३।।

उस समय वहाँ पर एक बारात आई हुई थी, जिसमें बाराती के रूप में आए हुए एक सैय्यद ने दीन-ए-इस्लाम के गुह्य रहस्यों की चर्चा सुनी। वह सुन्दरसाथ के त्याग और प्रेम को देखकर इतना प्रभावित हुआ कि वह भी निजानन्द की राह का अनुयायी बन गया।

और भीखू सोनी आइया, और राधा रूकमन।

और सुन्दर सोना, आई कदमों मोमिन।।३४।।

भीखू सोनी, राधा, रूक्मणी, सुन्दर, और सोना ने धाम धनी के चरणों में स्वयं को सौंप दिया।

इहां मयाराम वासुदेव, और सुकदेव देरासरी।

ए आए साथमें, श्री राज की मेहर उतरी।।३५।।

यहाँ पर एक मयाराम, वासुदेव, शुकदेव, और देरासरी के ऊपर धाम धनी की मेहर बरसी, और वे सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुए।

इत जगीसा अमोला, इत आया केतेक साथ।

चरचा उच्छव करत हैं, जाके धनीएं पकड़े हाथ।।३६।।

जगीशा और अमोला के अतिरिक्त और भी बहुत–सा सुन्दरसाथ धाम धनी के चरणों में आया। तारतम ज्ञान की चर्चा वाले उत्सवों में वही भाग ले सकता है, जिसका धाम धनी हाथ पकड़ते हैं।

यों मास चार भए, जो साथ लड़े संग सुलतान।
तिनों ने अरज करी, लिखी ए पहिचान।।३७।।

इस प्रकार शरातोरा के बादशाह औरंगज़ेब के साथ युद्ध करने वाले सुन्दरसाथ को वहाँ पर रहते हुए चार महीने बीत गए। उन्होंने वहाँ की वास्तविकता को पत्र में लिखते हुए धाम धनी के चरणों में प्रार्थना की।

ए सरियत सों हम लड़े, देख आए नैनों निदान।
बिना सोंटे इन पर, ए क्योंए न ल्यावें ईमान।।३८।।

हे धाम धनी! हमने शरातोरा से अब तक युद्ध किया है, किन्तु हमने प्रत्यक्ष अनुभव किया है कि जब तक इन पर परब्रह्म का कहर रूपी दण्ड नहीं पड़ेगा, तब तक ये किसी भी प्रकार से वास्तविकता पर ईमान लाने वाले नहीं हैं।

ए नीके हम देखिया, इनको नही ईमान।
तो पैगाम को फेरिया, सुन्या न हुकम सुभान।।३९।।

इस बात को हमने अच्छी तरह से जान लिया है कि उनको सचमुच में अल्लाह तआला पर ईमान नहीं है। इसलिए तो इन्होंने धाम धनी के आदेश को सुना भी नहीं और उनके द्वारा भेजे हुए सन्देश को भी मानने से इन्कार कर दिया।

अब हम राह देखत हैं, जो हमको आवे हुकम।

तिन माफक हम करें, जैसा लिख भेजो तुम।।४०।।

अब तो हम सब सुन्दरसाथ इस बात की प्रतीक्षा कर रहे हैं कि जैसा आपका आदेश आए वैसा ही हम करें, अर्थात् यदि आप हमें यहाँ ही रहने के लिए कहेंगे तो हम खुशी-खुशी रहने के लिए तैयार हैं, किन्तु यदि आप आने की स्वीकृति दें तो हम तो आपके दर्शन के लिए तरस रहे हैं। इसलिए आप जैसा उचित समझें, पत्र द्वारा अपना आदेश लिखकर भेजें।

तब पाती लिखी उन पर, उठके आइयो तुम।

इन पर सोंटा होएगा, कादर के हुकम।।४१।।

तब श्रीजी ने उन दिल्ली के सुन्दरसाथ को लिखा कि आप वहाँ से शीघ्र-अतिशीघ्र चले आओ। अब धाम धनी

के आदेश से इनके ऊपर कहर रूपी दण्ड बरसेगा, तभी ये सुधर सकते हैं।

पाती सेख बदल ल्याइया, दिल्ली बीच मोमिन।
सुनके सुख पाइया, दिल हुआ रोसन।।४२।।

श्रीजी के लिखे हुए पत्र को लेकर शेख बदल जी दिल्ली में सुन्दरसाथ के पास आए। पत्र में लिखी हुई बातों को सुनकर सुन्दरसाथ बहुत ही आनन्दित हुआ। सबके दिल में प्रसन्नता का फूल खिल उठा।

जाए सेख इसलाम पे, हमको रजा देओ तुम।
हम जावेंगे अपने ठौर, हमको करो हुकम।।४३।।

सब सुन्दरसाथ मिलकर काज़ी शेख इस्लाम के पास गये और उनसे आग्रह किया कि आप हमें जाने की

स्वीकृति दीजिए। हम अपने मूल निवास पर जायेंगे। इसके लिए हम आपके आदेश की प्रतीक्षा करते हैं।

तब काजी ने कह्या, मैं रजा कराऊं सुलतान।
तुम परसों आइयो, आम खास सुनाऊं कान।।४४।।

तब क़ाज़ी शेख इस्लाम ने उत्तर दिया कि मैं इसके लिए बादशाह को राज़ी करूँगा। आप लोग परसों आ जाइएगा। दरबार के विशिष्ट तथा सामान्य लोगों को भी आपके जाने की सूचना दे दी जाएगी।

तब एक दिन बीच डार के, ले चला हजूर।
सुलतान सामे ठाढ़े किए, आप हजूर किया मजकूर।।४५।।

तब एक दिन बीच में छोड़कर, सुन्दरसाथ क़ाज़ी शेख इस्लाम के पास गए। क़ाज़ी ने उन्हें ले जाकर बादशाह

के सामने उपस्थित कर दिया और स्वयं बादशाह से बातें करने लगा।

ए बिदा होत हैं, जात अपनी ठौर को।

ए वही लोग हैं, जिन लड़ाई करी सरे मों।।४६।।

अब ये आपसे विदा होकर अपने मूल निवास को लौटना चाहते हैं। ये वही लोग हैं, जिन्होंने शरातोरा के विरुद्ध युद्ध किया।

तब काजी ने कह्या, एही मोमिन उस दिन।

तुमसों जिन मजकूर किया, ल्याए ईमान मोमिन।।४७।।

काज़ी शेख इस्लाम कहता गया कि इन्हीं मोमिनों ने उस दिन आपसे बातें की थीं। ये दीन-ए-इस्लाम पर सच्चा ईमान लाने वाले हैं।

देख्या सामें सुलतान ने, तीन बेर फेर फेर।

सिर नवाए देखिया, दे खुदा इनों खेर।।४८।।

बादशाह ने सुन्दरसाथ की ओर तीन बार नजर करके देखा। पुनः सिर नीचा करके उसने दुआ की, "हे खुदा! इन पर खैर बरसा, कृपा कर।"

एक सौ रूपैया खरच, देने का किया हुकम।

सिताबी ले दौड़िया, लेओ मोमिनों तुम।।४९।।

बादशाह ने मोमिनों को मार्गव्यय के लिए सौ रुपये देने का आदेश दिया। दरबार का कर्मचारी रूपये लेकर शीघ्रता से दौड़ते हुए आया और सुन्दरसाथ से बोला कि आप इन्हें ले लीजिए।

जब रजा दई सुलतान ने, तब राजी हुए मोमिन।

बिदा होए के चले, रहे एक दूसरे दिन।।५०।।

जब बादशाह ने उन्हें जाने की स्वीकृति दे दी, तब सुन्दरसाथ इस बात पर सन्तुष्ट हुए। वे बादशाह से विदा होकर चल पड़े, किन्तु उदयपुर के लिए प्रस्थान करने से पूर्व एक–दो दिन दिल्ली में ही रुके रहे।

आए पोहोंचे उदयपुर, मुलाकात करी श्री राज।

भेख बदल सामिल भए, भए इसलाम के काज।।५१।।

सुन्दरसाथ ने उदयपुर आकर श्रीजी से भेंट की। उन्होंने अपना मुस्लिम फकीरों वाला भेष हटा दिया, तथा सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हो गए, एवं निजानन्द के प्रकाश को फैलाने के कार्य में संलग्न हो गए।

एक लखमन भीम भाई, स्याम दास खिमाई।

सामलदास गरीबदास, और संग लालबाई।।५२।।

आने वाले सुन्दरसाथ में लक्ष्मण सेठ (लालदास) जी, भीम भाई, श्याम दास, खिमाई भाई, श्यामल दास (चिंतामणि जी), और गरीबदास जी थे। इनके साथ श्री लालदास जी की पत्नी लालबाई भी थीं।

स्यामबाई राम राए, ए आए पोहोंचे कदम।

मिलते ही सुख पाइया, इनों सौंपी आतम।।५३।।

लालदास जी की पुत्री श्याम बाई और दामाद राम राय भी धनी के चरणों में आ गए। श्रीजी का दर्शन करते ही इन्हें अपार आनन्द हुआ तथा इन्होंने अपनी आत्मा धाम धनी के चरणों में सौंप दी।

इन समें उदयपुर में, बड़ो भया चरचा को पूर।

दरसन राज के होवहीं, बड़ा रोसन हुआ जहूर।।५४।।

इस समय उदयपुर में धाम धनी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा का तीव्र प्रवाह चल पड़ा। जब श्रीजी चर्चा करते थे, तो सुन्दरसाथ को प्रत्यक्ष श्री राज जी के दर्शन होने लगे। इस प्रकार, वहाँ तारतम ज्ञान का बहुत अधिक प्रकाश फैलने लगा।

साथ आहेड़ का आइया, और मोटी बाई।

मसकरी राज सों करें, खुसखबरी राज सों पाई।।५५।।

श्रीजी की अलौकिक चर्चा के प्रभाव से आहेड़ के लोग आए और सुन्दरसाथ के समूह में शामिल हुए। इनमें एक मोटी बाई भी थी। वह हमेशा श्रीजी से हँसी किया करती थी। धाम धनी से ऐसा करने का सौभाग्य उन्हे प्राप्त हुआ

था।

रांणे ने ए बात सुनी, अपनी मजलिस में।

नित्य लोग आए कहें, अस्तुत निंदा सुनें।।५६।।

उदयपुर के राणा ने अपनी राजसभा में सुन्दरसाथ और श्रीजी के उदयपुर आगमन का समाचार सुना। उसकी राजसभा के सदस्य प्रतिदिन ही राणा के सामने आकर निन्दा-स्तुति किया करते थे।

कोई कहे बड़े साध हैं, इनके अनन्त लोचन।

कोई कहे ए ठग हैं, इनों भेख धरा मोमिन।।५७।।

उनमें से कोई तो यह कहता था कि ये श्रीजी बहुत बड़े महात्मा हैं। इनकी अनन्त ज्ञान दृष्टि है, अर्थात् इनका ज्ञान अगाध है। निन्दा करने वालों में से कोई यह भी

कहता था कि ये ठग हैं और इन्होंने दिखावे के लिये ब्रह्ममुनियों का भेष धारण कर लिया है।

कोई कहे मुसलमान हैं, भेजे है सुलतान।
तुमको मुसलमान करनें, कहे वचन बिन पहिचान।।५८।।

कुछ निन्दक तो राणा से सीधे यह भी कह देते थे कि ये मुसलमान हैं और आपको भी मुसलमान बनाने के लिये औरंगज़ेब ने इन्हें भेजा है। इस प्रकार राज दरबार के लोग श्री प्राणनाथ जी की पहचान न होने से तरह-तरह की बातें करते थे।

कोई कहे कुरान पढ़त हैं, कोई कहें वेद कतेब।
इन भांत राणे आगे, बातां बतावें ऐब।।५९।।

कोई कहता था कि ये तो कुरआन पढ़ते हैं। कोई यह

भी कहता था कि ये वेद पक्ष और कतेब पक्ष दोनों (भागवत, वेदान्त, कुरआन, तथा हदीस) ही पढ़ते हैं। इस प्रकार निन्दक लोग राणा के आगे, श्री प्राणनाथ जी में तरह-तरह के दोष निकाल कर बातें किया करते थे।

राणें पंडित भेज दिए, जाए के देखो तुम।
उहां कैसी चरचा होत है, सुनाओ सारी हम।।६०।।

राणा ने अपने पण्डितों को इस उद्देश्य से श्रीजी के पास भेजा कि वहाँ जाकर तुम इस बात की जाँच करो कि वहाँ किस प्रकार की धर्म चर्चा होती है? उसका सारा वर्णन मुझे सुनाओ।

वे तो आए पेटारथू, इनों नाहीं काम आतम।
देखी तो चरचा बड़ी, क्या जवाब देओ तुम।।६१।।

सभी राज पण्डित पेटारथू थे। इन्हें आत्म-कल्याण से कुछ भी लेना-देना नहीं था। जब उन्होंने श्रीजी के मुखारविन्द से अखण्ड ज्ञान की अलौकिक चर्चा सुनी, तो वे चिन्ता में पड़ गये। उन्हें यह भय सताने लगा कि यदि श्री प्राणनाथ जी ने कोई प्रश्न कर दिया तो उनका क्या उत्तर दिया जायेगा?

द्रष्टव्य- ज्ञान, भक्ति, और त्याग से रहित वे लोग, जिनका सारा ध्यान मात्र भोजन पर ही रहता है, "पेटारथू" कहलाते हैं।

और चालीस प्रस्न भागवत के, पन्द्रह वेदान्त के सुनाए कान।
इन प्रस्नों की हमको, कर देओ पहिचान।।६२।।

श्रीजी ने चर्चा के उपरान्त राज पण्डितों से श्रीमद्भागवत् के चालीस तथा वेदान्त के पन्द्रह प्रश्नों के विषय में पूछा।

उन्होंने उनसे यह भी आग्रह किया कि हमें इन प्रश्नों का समाधान करके उत्तर देने का कष्ट करें।

जवाब न आवे उनको, दिया न जाए उत्तर।
तब सब मिलके विचारहीं, करने लगे फिकर।।६३।।

उन पण्डितों ने अपनी बुद्धि की बहुत अधिक दौड़ लगायी, किन्तु उनमें से किसी को एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं सूझा। तब वे सभी आपस में मिलकर अपनी आजीविका के विषय में चिन्तित हो गये और विचार करने लगे।

ए तो बुरे वैरागी, हमारा भानेंगे रूजगार।
इनकी निंदा कीजिए, तुम सब मिल होवो खबरदार।।६४।।

ये वैरागी लोग तो बहुत ही बुरे हैं। इनके यहाँ रहने से तो

हमारी रोजी–रोटी का धन्धा ही बन्द हो जायेगा, अर्थात् जब हम श्रीजी के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पायेंगे तो राणा की ओर से मिलने वाली दक्षिणा बन्द हो जायेगी। ऐसी स्थिति में हमारे घर का गुजारा कैसे होगा? अन्ततोगत्वा उन्होंने यह निर्णय किया कि इस आने वाले संकट के प्रति हम सावधान हो जायें तथा सभी मिलकर एक स्वर से इनकी निन्दा करें।

इनका बड़का ब्रह्मा, जब गर्भ अस्तुत करी।
फेर परीक्षा आया देखनें, भूल बड़ी दिल धरी।।६५।।

श्रीमद्भागवत् में वर्णित है कि श्री कृष्ण लीला के समय सर्वोपरि–वेदज्ञ ब्रह्मा जी ने कारागार में आकर गर्भ स्थित भगवान की स्तुति की। पुनः कुछ वर्षों के पश्चात् उन्हीं श्री कृष्ण जी की परीक्षा लेने आये कि देखूँ इनमें कैसी

शक्ति है? उन्होंने अपने दिल में यह बहुत बड़ी भूल की।

गर्भ में पहिचानिया, भूल गया बाहिर।

सो भूल आज लों, सब में भई जाहिर।।६६।।

गर्भ में उन्हें श्री कृष्ण जी के स्वरूप की पहचान थी, किन्तु जन्म होने के पश्चात् उस तन में विराजमान शक्ति को भूल गये और परीक्षा लेने आ गए। उनकी उस भूल की चर्चा आज तक सारे समाज में होती है।

दूसरे ऋषेस्वर, करते थे जगन।

अन्न मांग्या तिन पे, वे रहे कर्म में मगन।।६७।।

कुछ कर्मकाण्डी ब्राह्मण यज्ञ कर रहे थे। व्रज लीला के समय श्री कृष्ण जी ने ग्वाल-बालों को भेजकर उनसे भोजन मँगवाया था, किन्तु उन्होंने यह कहकर देने से

मना कर दिया कि यज्ञ पूरा होने के बाद ही हम किसी को भोजन दे सकते हैं। इस प्रकार वे अपने कर्मकाण्ड में लगे रहे।

भावार्थ– समाधि अवस्था में वेद मन्त्रों का साक्षात्कार करने वाला ऋषि कहलाता है। ऋषीश्वर का अर्थ ऋषिराज होता है, अर्थात् सर्वोपरि ऋषि। किसी समाधिस्थ योगी के लिए श्री कृष्ण जी के स्वरूप की पहचान करना ज्यादा कठिन नहीं है। यहाँ जिन ब्राह्मणों का उल्लेख किया गया है, वे कर्मकाण्डी और याज्ञिक ब्राह्मण थे, समाधिस्थ ऋषि–मुनि नहीं थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि ऋषिश्वर शब्द का प्रयोग व्यंगात्मक भाषा में किया है। यह वैसे ही है, जैसे लाभानन्द तान्त्रिक को "लाभानन्द यति" कहकर वर्णित किया है।

पहिचाना इनकी स्त्रियों ने, भई सोभा तिन।

आज लों ब्रह्माण्ड में, चरचा होत आगे मोमिन।।६८।।

याज्ञिक ब्राह्मणों की पत्नियों ने यह जान लिया कि इन ग्वाल बालों को श्री कृष्ण जी ने भेजा है। इन्होंने बहुत ही प्रेम और श्रद्धा के भाव से उन ग्वाल बालों को भोजन दिया, जिससे उनके प्रेम–भाव की महिमा आज तक सारे संसार में ब्रह्मसृष्टियों के बीच में गाई जाती है।

भृगु बड़का इनका, लात मारी छाती भगवान।

ए तिनकी नसल, होए असल माफक पहिचान।।६९।।

भृगु ऋषि इनमें से सर्वोपरि माने जाते हैं। इन्होंने त्रिदेव की परीक्षा लेने के लिए विष्णु भगवान की छाती में लात मारी थी। राजा के ये पण्डित उन्हीं के वंशज हैं। अपने पूर्वजों भृगु और याज्ञिक ब्राह्मणों की तरह श्री प्राणनाथ

जी के स्वरूप में आए हुए परब्रह्म को भला ये कैसे पहचानेंगे?

भावार्थ– रजोगुणात्मक बुद्धि के द्वारा मन कर्म में संलग्न रहता है और इस अवस्था में परब्रह्म के स्वरूप की पहचान होना सम्भव नहीं हैं। वस्तुतः चारों वर्ण कर्म के आधार पर माने जाते हैं, जन्म के आधार पर नहीं, किन्तु दुर्भाग्यवश कलियुग में जन्म के आधार पर ब्राह्मण बना जा रहा है, कर्म के आधार पर नहीं। राज पण्डित तो रजोगुण और तमोगुण से युक्त होते ही हैं। इसलिए उनसे भूल होना स्वाभाविक है।

ऐसी पौराणिक मान्यता है कि ब्रह्मा जी की भूल नारद जी के श्राप के कारण हुई। इसी प्रकार भृगु ऋषि को तीनों देवताओं की श्रेष्ठता की परीक्षा का उत्तरदायित्व मिला था, इसलिये उन्होंने जान–बूझकर उनकी

महानता की परीक्षा के लिए लात मारी थी, द्वेष वश नहीं।
प्रेममयी त्रिगुणातीत अवस्था में आए बिना परब्रह्म की पहचान करना अब सम्भव नहीं है। माया की गर्म हवा का झोंका बड़े-बड़े विद्वानों, योगियों, और तपस्वियों को भी व्यथित कर देता है। ज्ञान, भक्ति, विवेक, वैराग्य, शील, और सन्तोष से रहित व्यक्ति कभी भी ब्राह्मण नहीं कहला सकता, भले ही वह जन्म से कितने ही ऊँचे गोत्र का क्यों न हो?

इनों जाए राणें आगे, लगे निंदा करने।
ए वैरागी किसी न काम के, कबहूं न देखिए इने।।७०।।

इन राज पण्डितों ने जाकर उदयपुर के राणा के आगे निन्दा करनी शुरू कर दी। वे कहने लगे कि ये वैरागी तो किसी भी काम के नहीं हैं। इनका मुँह भी देखना पाप है।

और दूसरे अंकूर, तैसी आवत बुध।

तिस वास्ते राणें को, कछु न भई सुध।।७१।।

दूसरी विशेष बात यह है कि अँकुर के अनुकूल ही बुद्धि होती है, इसलिए राणा को श्रीजी के स्वरूप की जरा भी पहचान नहीं हो सकी।

भावार्थ– जिस प्रकार दिन के समय भले ही सूर्य बादलों में छिपा रहे, फिर भी रात्रि की अपेक्षा तापक्रम और उजाले की मात्रा दिन में अधिक होती है। ठीक उसी प्रकार, जिस जीव पर आत्मा विराजमान होती है, उस जीव में कोरे जीवों (आत्म विहीन जीवों) की अपेक्षा हृदय की कोमलता, समर्पण भावना, ईमान (विश्वास), तथा प्रेम (इश्क) अधिक होता है।

यों करते एक दिन, राणा चला ताल पर।

श्री जी साहिब जी तहां चले, श्री बाई जी रहे साथ खातर।।७२।।

इस प्रकार, श्रीजी के प्रति संशयग्रस्त राणा, एक दिन उदयपुर के ताल (झील) गया। संयोगवश, उसी समय श्रीजी साहिब, श्री बाई जी और सुन्दरसाथ के साथ वहाँ पहुँचे।

तहां जाए एक हवेली में, डेरा किया तित।

लोग आवे चरचा को, हुआ आनन्द बड़ा इत।।७३।।

वहाँ जाकर बगल में एक हवेली लेकर श्री प्राणनाथ जी सहित सब सुन्दरसाथ ठहरे। जब श्रीजी चर्चा करने लगे, तो नगर के अन्य लोग भी चर्चा सुनने आने लगे। इस प्रकार सबको बहुत अधिक आनन्द का अनुभव होने लगा।

इन समें अवगुन साथ के, ताको लेने लगे हिसाब।

सब साथ पर खण्डनी, जोर हुई इनके बाब।।७४।।

इस समय कुछ सुन्दरसाथ के अन्दर उन सुन्दरसाथ के प्रति भेदभाव की भावना पैदा हो गयी, जो दिल्ली में ४ महीनों तक मुसलमानों की कैद में रहे थे। श्रीजी को सुन्दरसाथ में भेदभाव का यह विकार सहन नहीं हुआ। चर्चा में इस सम्बन्ध में श्रीजी ने भेदभाव करने वाले सुन्दरसाथ की तीखे शब्दों में खण्डनी की तथा अपना स्पष्ट निर्णय दिया कि अब सबको वैरागी भेष धारण करना ही होगा।

भेख बदलाये सबन के, श्रवनी पहिनाई कानन।

और साज सब फकीरी, सो दिया हाथ मोमिन।।७५।।

श्री प्राणनाथ जी ने सबसे पहले स्वयं वैरागी वेश-भूषा

धारण की और सब सुन्दरसाथ को वैसा ही करने का निर्देश दिया। सबके शिर के बाल मुँडवाकर कानों में श्रवणी पहना दी गई। इसके अतिरिक्त सुन्दरसाथ की सारी वेश-भूषा वैरागियों और फकीरों की कर दी गई।

रोए धोए राजी भये, नाच कूद हुए खुसाल।
काढ़े अपने अवगुन, ले जबराईल संग हाल।।७६।।

कुछ सुन्दरसाथ को यह वैरागी भेष धारण करने में बहुत कष्ट हुआ। अन्त में उन्हें रो-धोकर राजी होना ही पड़ा, किन्तु कुछ सुन्दरसाथ ऐसे भी थे, जिन्होंने स्वेच्छा से अति प्रसन्न होकर वैरागी भेष धारण किया। इस वेश-भूषा में उन्होंने स्वयं को आनन्दित माना। इस प्रकार सुन्दरसाथ के मन में जो भेदभाव का विकार था, वह समाप्त हो गया, और वे धनी के जोश के साथ प्रेम की

राह पर चल पड़े।

इन समें दयाराम, चंचल गंगाराम।

और बनारसी आइया, सो आए पहुंचे इस ठाम।।७७।।

इस समय दिल्ली से दयाराम, चंचल, गंगाराम, और बनारसी दास ने आकर धाम धनी के चरणों में प्रणाम किया।

सूरत से मोहन चतुर्भुज, आए लगे कदम।

और साथी आए केतेक, तिनों सौंपी आतम।।७८।।

सूरत से मोहन भाई और चतुर्भुज ने आकर धनी के चरणों में प्रणाम किया। उनके अतिरिक्त और भी बहुत से सुन्दरसाथ आए, जिन्होंने अपनी आत्मा धाम धनी के चरणों में सौंप दी।

इन समें पठान सौदागर, इनायत खान नाम।

दूसरा मुराद खान, अब्दुलनवी उस ठाम।।७९।।

इस समय एक पठान सौदागर थे, जिनका नाम इनायत खान था, वे श्रीजी के चरणों में आए। इसके अतिरिक्त मुराद खान तथा अब्दुल नबी ने भी निजानन्द की राह अपनायी।

और अलादाद खान, और यार खान।

इलयास खान नवाबकर, और मिहीन को भई पहिचान।।८०।।

अलादाद खान, यार खान, इलियास खान, नवाबकर, और मिहीन खान को श्रीजी साहिब के स्वरूप की पहचान हुई और इन्होंने इल्म-ए-लदुन्नी (तारतम ज्ञान) ग्रहण किया।

उसमान हसन खान, और अहमद खान।

ए आए दीदार को, अव्वलखाँ को भई पहिचान।।८१।।

उस्मान, हसन खान, अहमद खान, और अव्वल खान श्री प्राणनाथ जी का दर्शन करने के लिए आए। श्री राज जी की कृपा से अव्वल खान को श्रीजी की विशेष पहिचान हो गई।

दीदार पाया राह में, थे घोड़े पर असवार।

आगे जलेब में चले, वैरागी थे खबरदार।।८२।।

ये लोग अपने घोड़ों पर सवार होकर सेना में आगे-आगे चले जा रहे थे कि अचानक राह में इन्होंने श्रीजी का दर्शन प्राप्त किया। इन्हें देखकर किसी अनिष्ट की आशंका से वैरागी वेश-भूषा में शोभायमान सुन्दरसाथ भी सतर्क हो गये।

अव्वल खान पूछिया, जो है महम्मद नूर।

मोको खबर तुम देओ, इन वैरागी का मजकूर।।८३।।

अव्वल खान ने नूर मुहम्मद से पूछा कि तुम मुझे इस वैरागी भेष में नजर आने वाले शख्स की पूरी पहचान बताओ।

जो तूं छिपावेगा मुझको, तो होऊंगा दावनगीर।

ए कौन है कहां से आइया, ए कैसा फकीर।।८४।।

यदि तू मुझसे कुछ छिपाएगा तो रोज–ए–महशर (न्याय के दिन) को मैं तुम्हारा दामन पकड़कर इन्साफ माँगूगा। मुझे इस बात का सटीक जवाब चाहिए कि यह कैसा फकीर है, कौन है, और कहाँ से आया है?

तब नूर महम्मदें कह्या, है सामिल दीन इसलाम।

है कलमा कुरान इन पे, कमर बांधी दीन के काम।।८५।।

तब नूर मुहम्मद ने कहा कि यह दीन-ए-इस्लाम में शामिल हैं। इनके पास कुरआन की हकीकत और मारिफत का इल्म है, और ये इस्लाम की सच्ची राह जाहिर करने में लगे हुए हैं।

ए तो हकुल आकीन था, सुनते इ ल्याया ईमान।

आया उत दीदार को, कर दई अपनी पहिचान।।८६।।

अव्वल खान में परमधाम का अँकुर होने से, उसमें अटूट विश्वास की भावना कूट-कूट कर भरी थी। नूर मुहम्मद के मुख से ऐसी बात सुनते ही उसे तुरन्त ईमान आ गया और वापस लौटकर श्रीजी के दर्शन करने आया। श्रीजी ने उसके ऊपर मेहर कर अपने स्वरूप की

पहचान करायी।

चाबुक अपने हाथ लेए के, मारत अपनें अंग।
तब मने किया राज नें, आए बैठो हमारे संग।।८७।।

वह अपने हाथों में अपना चाबुक लेकर प्रायश्चित की इस भावना से अपने शरीर को मारने लगा कि तेरा परवरदिगार आए बैठा है और तू आज दिन तक उन्हें भूला रहा। तब श्रीजी (श्री राज जी) ने उसे ऐसा करने से रोका और प्रेम भरे शब्दों में कहा कि यहाँ मेरे पास आकर बैठो।

भावार्थ– अव्वल खान के द्वारा प्रायश्चित का यह आचरण, धर्म के उन अग्रगण्य सुन्दरसाथ को यह चिन्तन करने के लिए विवश करता है कि वे श्री प्राणनाथ जी को गुरू, शिष्य, कवि और सन्त कहने में क्यों गौरव

महसूस कर रहे हैं?

उहाँ पट का काम चले, लिखावें बैठे राज।

मुकुन्द दास दरोगा रहे, बैठा था इन काज।।८८।।

वहाँ पर पाताल से लेकर परमधाम तक के नक्शों का निर्माण कार्य चल रहा था। स्वयं श्रीजी उसकी विषय-वस्तु लिखवा रहे थे और इस कार्य की देखभाल के लिए मुकुन्द दास जी को प्रबन्धक के रूप में मनोनीत किया गया था।

आए पठान मिल के, करने को दीदार।

होने लगी चरचा, सवाल किया परवरदिगार।।८९।।

कुछ पठान मिलकर श्रीजी का दर्शन करने के लिए आए। उनसे कुरआन सम्बन्धी विषयों पर श्रीजी की चर्चा

हुई। उन पठानों में से किसी एक व्यक्ति ने धाम धनी से प्रश्न किया।

हमारे तुम कहो, कलमा रसूल का।
तो हम होवें तुमारे, एता चाहता था।।९०।।

यदि आप हमारे मुहम्मद (सल्ल.) का कलमा कह दें तो हम भी आपके अनुयायी हो जाएँगे। वह इतनी ही परीक्षा लेना चाहता था।

जबराईल इन समें, श्री जी को बैठा जोस।
मेरे महम्मद बीच में, कौन आवे बड़ा अफसोस।।९१।।

इस समय श्रीजी को जोश आया और उनके मुख से ये शब्द निकले कि बहुत अफसोस की बात है। भला मेरे और मुहम्मद (सल्ल.) के बीच आने वाले आप लोग कौन

हैं?

भावार्थ– श्री प्राणनाथ जी के कहने का आशय यह है कि एक साधारण इन्सान समझकर जो उनसे कलमा कहलवाना चाहते हैं, वह नहीं जानते कि मुहम्मद उन्हीं के अन्दर विराजमान हैं।

अव्वलखान की रूह पर, आए जबराइलें किया जोर।
जोस देख काफर डरे, करने लगे सोर।।९२।।

अव्वल खाँ के ऊपर भी जिबरील ने अपना प्रभाव दिखाया। उनका जोश देखकर मुसलमान डर गये और तरह–तरह की बातें करते हुए शोर मचाने लगे।

तब उठ खड़े रहे, बिदा मांगी सबन।
घरों जाए सोर किया, लगे निंदा करने मोमिन।।९३।।

इसके पश्चात् वे सब लोग उठकर खड़े हो गए और जाने की स्वीकृति माँगने लगे। उन्होंने अपने घर जाकर इस सम्बन्ध में शोर मचाना शुरू किया और सुन्दरसाथ की निन्दा करने लगे।

एक दिन किरंतन में, राणा आया करन दीदार।
मोंह छिपाए ठाढ़ा रह्या, देखा रासलीला बिहार।।९४।।

एक दिन जब सुन्दरसाथ रास लीला के कीर्तन गा रहे थे, उस समय राणा श्रीजी का दर्शन करने आया। पण्डितों के बहकावे में आने के कारण, वह दूर से ही खड़े होकर श्री प्राणनाथ जी तथा रास लीला करते हुए सुन्दरसाथ का दर्शन करता रहा। उसने अपना मुख भी छिपा रखा था, ताकि कोई उसे पहचान न पाए।

इतना ही था अंकूर, तेता लिया फल।

आज्ञा थी तोलों रह्या, भई तेती आतम निरमल।।९५।।

राणा राज सिंह में अखण्ड धाम का कोई अँकुर नहीं था और उसी के अनुकूल ही उसको फल भी प्राप्त हुआ। श्री राज जी की जितनी आज्ञा थी, उतनी ही देर तक वह कीर्तन सुनता रहा और श्रीजी का दर्शन करता रहा। उसी के अनुपात में उसका जीव निर्मल हुआ।

भावार्थ– राज सिंह उदयपुर का महाराज अवश्य था, किन्तु उसका चैतन्य हद के ब्रह्माण्ड का था। परिणामतः अपने पण्डितों के बहकावे में आने के कारण , अपने सामने आये हुए अक्षरातीत का सुख नहीं ले सका।

इनों के दिल में सक रहे, ल्याया ईमान अब्बल खान।

तिनसों मसकरी करें, भई इनको पूरी पहिचान।।९६।।

राणा राज सिंह के मन में हमेशा श्रीजी के प्रति संशय बना रहा, किन्तु अव्वल खान ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर लिया। इस बात पर राणा राज सिंह हमेशा अव्वल खान की यह कहकर हँसी उड़ाया करते थे कि तुम्हें तो एक हिन्दू वैरागी के अन्दर अपने अल्लाह तआला नजर आते हैं, क्योंकि तूने इनकी पूरी पहिचान कर ली है।

इन समें अमरा जी, वह पहिले ल्याया ईमान।
रामसिंह गंगा के घर में रहे, कछु इनको भई पहिचान।।९७।।

इस समय यहाँ अमरा जी ने सबसे पहले तारतम ज्ञान ग्रहण किया। वे राम सिंह गंगा के घर में रहा करते थे। अमरा जी के सत्संग से इन दोनों को भी श्रीजी की थोड़ी पहचान हो गई।

भावार्थ– ऐसा प्रतीत होता है कि गंगा, राम सिंह की

पत्नी रही होगी, तभी इन दोनों का नाम एक साथ दिया गया है।

और भोगी दास जो, ए आया करन दीदार।
मीठी लगी चरचा, पहिचाना परवरदिगार।।९८।।

भोगी दास श्रीजी का दर्शन करने के लिए आये और उनके मुखारविन्द से चर्चा सुनने लगे। उन्हें चर्चा बहुत प्यारी लगी तथा उन्हें श्रीजी के स्वरूप में अक्षरातीत के स्वरूप की पहचान हो गई।

महामति कहे ए मोमिनों, ए तलाब करो याद।
फेर कहों उदयपुर की, जो बीतक बुनियाद।।९९।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! उदयपुर के इस ताल को याद कीजिए, जहाँ महत्वपूर्ण लीला हुई।

अब मैं पुनः उदयपुर नगर में होने वाली बीतक का वर्णन कर रहा हूँ।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "बुनियाद" शब्द का आशय यह है कि श्रीजी ने पहले उदयपुर नगर में जागनी की, उसके पश्चात् उदयपुर के ताल के पास की हवेली में गए। तत्पश्चात् पुनः उदयपुर नगर में आकर जागनी लीला की। इसकी स्मृति दिलाने के लिये बुनियाद शब्द का प्रयोग किया गया है।

प्रकरण ।।४९।। चौपाई ।।२६२७।।

उदयपुर प्रसंग

फेर उहां से आये उदयपुर, उतरे हवेली में।

साथ सब आये मिल्या, सुख पाया मिलाप से।।१।।

उदयपुर के ताल से श्रीजी पुनः उदयपुर नगर में आए और एक हवेली में ठहरे। वहाँ सब सुन्दरसाथ आकर श्रीजी से मिले और मिलकर बहुत आनन्दित हुए।

इन समें गोवरधन भट्ट, सूरत से आया।

धोली बाई साथ थी, तिन को संग ल्याया।।२।।

इस समय सूरत से गोवर्धन भट्ट आये। अपने साथ अपनी पत्नी धोली बाई को भी लेकर आये।

ए दोऊ आए कदमों लगे, साथ सों किया मिलाप।

बातें सुनी इत उत की, लगे चर्चा करनें आप।।३।।

इन दोनों ने आकर श्री प्राणनाथ जी के चरणों में प्रणाम किया और सुन्दरसाथ से भी मिले। उन दोनों ने दिल्ली और उदयपुर का सारा प्रसंग सुना। श्रीजी ने इस हवेली में रहकर अपनी अमृतमयी चर्चा प्रारम्भ कर दी।

इन समें पातसाह ने, करी मुहींम राणे पर।

आये अजमेर से भेजिया, मथुरिया इन पर।।४।।

इस समय औरंगज़ेब बादशाह राजस्थान में आया हुआ था। उसने उदयपुर के राणा पर आक्रमण करने का विचार किया। उसने अजमेर से मथुरिया नामक एक ब्राह्मण को अपना दूत बनाकर राणा के पास भेजा।

भावार्थ– औरंगज़ेब के मन में यह था कि मेवाड़ का

शिशोदिया वंश स्वतन्त्रता प्रेमी रहा है। अपने परदादा अकबर के साथ युद्ध करने वाले महाराणा प्रताप की बात उसे अच्छी तरह मालूम थी। वह शरा–तोरा के बल पर सारे हिन्दुस्तान को इस्लाम की छत्रछाया के नीचे लाना चाहता था। उसने सोचा कि यदि उदयपुर का राजवंश इस्लाम धर्म ग्रहण कर लेगा तो सारे हिन्दुस्तान में इस्लाम धर्म फैलाने में सरलता होगी।

जसवन्त सिंह की महारानी उदयपुर घराने की थी। दिल्ली से आने पर दुर्गादास जी ने महारानी को उदयपुर भिजवा दिया था। इससे भी औरंगज़ेब क्रुद्ध था तथा युद्ध का बहाना खोज रहा था।

आओ मेरे दीन में, ल्याओ तुम ईमान।

पांच परगने देऊं तुमें, जो होवे मुसलमान।।५।।

दूत ने राजा से कहा कि बादशाह ने कहा है कि यदि तुम मेरे इस्लाम धर्म में विश्वास लाकर मुसलमान बन जाते हो, तो मैं तुम्हें पाँच परगने दूँगा।

गरीब दास पुरोहित को, आग्या करी तिन।
सो ले गया राजसिंह पे, कही कानों लाग कानन।।६।।

मथुरिया दूत ने गरीब दास पुरोहित को बादशाह की ओर से आज्ञा दी कि तुम मेरा सन्देश राणा तक पहुँचाओ। गरीब दास, मथुरिया को राणा के पास ले गया, और उसने राणा के कानों में दूत की बात सुनाई।

सुनते ही रीस करी, तुझे ना छोड़ता मैं।
पर क्या करों पुरोहित भया, अब भाग जा इत से।।७।।

यह सुनते ही राणा राज सिंह को क्रोध आ गया और

उसने अपने पुरोहित को फटकारते हुए कहा- यदि तू पुरोहित नहीं होता तो इस तरह की बात कहने पर मैं तुझे अवश्य मार डालता, किन्तु मैं क्या करूँ? तू पुरोहित है, इसलिए बच रहा है। तेरी भलाई इसी में है कि अभी यहाँ से भाग जा।

देओ धक्के इन दूत को, जो ऐसी बात सुनावे कान।
दलगीर हुआ दिल में, मन में बड़ा गुमान।।८।।

उसने अपने सैनिकों को संकेत करते हुए कहा कि इस तरह की बात करने वाले धूर्त को धक्का मारकर यहाँ से निकाल दो। औरंगज़ेब का दूत होने से मथुरिया अपने मन में बहुत अभिमान रखता था, किन्तु राणा के दरबार में उसका अपमान होने से वह दुःखी हो गया।

ओ तो दूत फिर गया, इत खड़ भड़ पड़ी जोर।
इन समें दज्जाल नें, किया जो बड़ा सोर।।९।।

वह दूत बादशाह औरंगज़ेब के पास वापस चला गया और उसने यहाँ का सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। इधर राणा के राज्य में औरंगज़ेब के आक्रमण के भय से हलचल मच गयी। उस समय दज्जाल रूपी पण्डितों ने श्री जी के विरूद्ध बहुत अधिक शोर मचाया।

तब श्री जी साहिब जी कहलाइया, हम रदबदल करें इत।
दौर नजीक पहुंचिया, बखत रोज कयामत।।१०।।

तब श्रीजी ने अपने सन्देशवाहक को राणा के पास कहलवा भेजा कि आप किसी भी तरह की चिन्ता न करें, हम औरंगज़ेब बादशाह से स्वयं बात करेंगे। अब कियामत होने का समय बहुत ही निकट आ गया है।

तुम कछू ना बोलियो, रद बदल करें हम।

इन राह से दीन की, ए आवें तले हुकम।।११।।

आपको औरंगज़ेब से बात करने की कोई आवश्यकता नहीं है, उससे मैं स्वयं बात करूँगा। मैं उससे धार्मिक वार्ता करके अपने हुक्म के नीचे लाऊँगा।

ए बात राणें सुनी, हम ऐसे नही पात्र।

जो रदबदल करें दीन की, ऐसे नहीं हमारे गात्र।।१२।।

जब राणा ने यह बात सुनी तो स्पष्ट कह दिया कि हमारे पास इतने प्रचुर संसाधन नहीं है कि औरंगज़ेब से धार्मिक वार्तालाप का बोझ सहन किया जा सके। इसलिए ऐसा करवा पाना मेरी सामर्थ्य के बाहर है।

भावार्थ– राणा के कहने का आशय यह था कि धार्मिक वार्तालाप में कई दिन लग सकते हैं और उतने दिनों तक

औरंगज़ेब की विशाल सेना का खर्च उठाना सम्भव नहीं है। यद्यपि गात्र का अर्थ शरीर ही होता है , किन्तु इस चौपाई के चौथे चरण में "गात्र" शब्द से आशय संसाधनों से है, मानवीय शरीर से नहीं।

हम से बोझ पातसाहों का, क्यों कर उठाया जाए।
हम सुनत बात डरत हैं, ए हमसे न होए उपाए।।१३।।

मेरा यह छोटा सा राज्य औरंगज़ेब की विशाल सेना का खर्च कैसे वहन कर सकता है? हम तो खर्चे की बात सुनकर ही डर जाते हैं। इसलिए औरंगज़ेब से धार्मिक वार्तालाप की व्यवस्था मुझसे नहीं हो पाएगी।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण का अर्थ यह कदापि नहीं समझना चाहिए कि राणा राज सिंह को औरंगज़ेब से युद्ध करने में डर था। सच्चे राजपूत मरने से

कभी नहीं डरते, किन्तु अपना सम्मान खोने से अवश्य डरते हैं। राणा राज सिंह को यही डर था कि जब वह इतनी बड़ी फौज के लिए राशन और ठहरने की व्यवस्था नहीं कर पाएगा तो सारे देश में उसकी बेइज्ज़ती हो जाएगी।

तब हजूर दज्जाल था, सो निंदा करने लगा जोर।
हम आगे ही तुझ से कही, वे करने लगे सोर।।१४।।

उस समय पण्डितों का समूह राणा राज सिंह के सामने बैठा हुआ था। वे श्रीजी और सुन्दरसाथ की खूब निन्दा करने लगे कि महाराज! ये वैरागी लोग झूठे हैं। हमने तो आपसे यह बात पहले ही कही थी। इस प्रकार उनके निन्दा भरे शब्दों का शोर वहाँ गूँजने लगा।

निकाल छोड़ो इन को, कोई कहे लूट लेओ तुम।

सब राणा सुनत है, पर कछू न किया हुकम।।१५।।

वे कहने लगे कि महाराज! इन वैरागियों को यहाँ से निकाल दिया जाए। कोई कहता था कि इन्हें लूट लिया जाए। राणा राज सिंह चुपचाप सबकी सुनते रहे, लेकिन ऐसा करने का किसी को आदेश नहीं दिया।

राणा भीमसेन पासे था, इन सुनी बातें कान।

इन ठौर वैरागी लूट लेओगे, तो हम होवें बदनाम।।१६।।

उस समय राणा भीम सेन राज सिंह के पास में ही बैठा था। जब उन्होंने इस प्रकार की बातें सुनी तो राणा को यह सलाह दी कि इन हिन्दू वैरागियों को यदि हम लूटते हैं तो पूरे देश में हमारी बदनामी हो जाएगी।

भेज दिया कोतवाल को, तुम बिदा होओ चार दिन।

सब सुख समाधान होवहीं, फेर आइयो साधुजन।।१७।।

राणा ने कोतवाल को कहकर भिजवाया कि तुम उनसे यह कहना कि हे महात्मागण! आप दो-चार दिनों के लिए यहाँ से बाहर चले जाइए। जब औरंगज़ेब के आक्रमण के पश्चात् राज्य में सुख-शान्ति फैल जाए तो आ जाइएगा।

लसकर चारों तरफों, दज्ञालें फैलाया चोफेर।

पावे न कोई निकसनें, बड़ा जो किया सोर।।१८।।

औरंगज़ेब की शाही सेना ने उदयपुर को चारों तरफ से इस प्रकार घेर लिया था कि कोई भी उदयपुर को छोड़कर बाहर नहीं निकल सकता था। इस प्रकार उसके हमले का भय चारों ओर फैल गया था।

श्री जी साहिब जी ने बिचारिया, हुआ हमको हुकम।

ए आज्ञा है राज की, इहां से उठो तुम।।१९।।

श्रीजी ने अपने मन में विचारा कि धाम धनी की मेरे दिल में ऐसी प्रेरणा हो रही है कि अब मुझे उठकर यहाँ से चल देना चाहिए।

भावार्थ– इस चौपाई में यह संशय होता है कि क्या श्रीजी साहिब को श्री राज जी का आदेश आ सकता है? जब बीतक में श्रीजी साहिब को २०० से अधिक बार श्री राज जी कहा है, तो वे क्यों कह रहे हैं कि मुझे यहाँ से चलने के लिए श्री राज जी आदेश दे रहे हैं।

इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि मूल स्वरूप के अनुसार ही आवेश स्वरूप लीला करता है। यद्यपि, आवेश स्वरूप की शोभा भी मूल स्वरूप जैसी ही है, किन्तु इस संसार की मर्यादाओं के अनुसार मूल

स्वरूप से जो प्रेरणा आवेश स्वरूप में आती है, उसे यहाँ आज्ञा (हुक्म) कह दिया गया है।

श्रीजी का पंचभौतिक तन भी सुन्दरसाथ जैसा ही है। धूप, शीत, वर्षा, भूख, प्यास, आदि का कष्ट भी उस तन को अन्य जैसा ही होता है। इन अवस्थाओं से गुजरते हुए तन में भले ही साक्षात् अक्षरातीत लीला कर रहे हों, किन्तु उस तन के प्रति हर पल मूल स्वरूप की तरह अक्षरातीत की भावना बनाए रखना कठिन होता है। इसलिए जब मूल स्वरूप की प्रेरणा आवेश स्वरूप वाले तन में आती है, तो उसको यहाँ के भावों में व्यक्त करना ही पड़ता है।

ऐह सामा सूत हम संग, निबहे नहीं लगार।

इतही बांट दीजिये, ऐसा किया विचार।।२०।।

सब सुन्दरसाथ ने ऐसा विचार किया कि हमारे पास इतने वस्त्र आदि सामान हैं कि इन्हें साथ लेकर यात्रा करना सम्भव नहीं है, इसलिए इन्हें यहीं पर बाँट देना चाहिए।

फेर कोतवाल आइया, ल्याया हुकम दूसरी बेर।
रानें रजा दई तुमको, यों कर कह्या फेर।।२१।।

कोतवाल पुनः आया और उसने दूसरी बार राजा का आदेश इस प्रकार कह कर सुनाया कि महात्मा लोगों! राणा ने आप सबको यहाँ से चले जाने के लिए कहा है।

अब इत रहने का, धरम न रह्या लगार।
हमारा जो अखत्यार, है हाथ परवरदिगार।।२२।।

श्रीजी ने अपने मन में सोचा कि अब यहाँ थोड़े समय के

लिए भी रहना धर्म के अनुकूल नहीं है। हमारे रहने या जाने का सारा उत्तरदायित्व तो धाम धनी के हाथ में है।

एही हमको काढ़त, छुड़ाए दियो ए ठौर।

जहां खेंचे तहां जायेंगे, अब ढूंढों ठौर और।।२३।।

ऐसा लगता है कि श्री राज जी ही हमको यहाँ से निकाल रहे हैं। वे हमसे उदयपुर को छुड़ा देना चाहते हैं। जहाँ श्री राज जी हमें खींचकर ले जाएँगे, हम वहीं अपने रहने के लिए कोई और स्थान ढूँढ लेंगे।

इन समें महा सिंह, करने आया दीदार।

पहिनाया सिरोपाव इनको, अब तुम हूजो खबरदार।।२४।।

इस समय महा सिंह श्री प्राणनाथ जी का दर्शन करने के लिए आए। श्रीजी ने उन्हें शिरोपाव (सिर से पाँव तक के

वस्त्र) पहनाकर सम्मानित किया और कहा कि तुम सावधान होकर रहना।

हम तो बिदा होत हैं, तुमारे मुलक से।
तुम बैठ ना सकोगे, बैरान होओ इनमें।।२५।।

हम तुम्हारे मुल्क से अब जा रहे हैं। तुम युद्ध के कारण यहाँ शान्ति से बैठ नहीं सकोगे। यहाँ की धरती वीरान हो जाएगी।

और जेते उमराउ, और जेते पासवान।
और साथ आपना, जाको थी पहिचान।।२६।।

राणा के जितने मन्त्री और कर्मचारी तथा अपने सुन्दरसाथ, जिन्होंने श्रीजी को पहचाना था।

तिन सबों को सिरोपाव, घरों दिए पोहोंचाए।

निरगुन भेख पेहेरन का, मोमिनों दिया बताए।।२७।।

उन सबके घरों जाकर सिर से पैर तक के वस्त्र भेंट में दे दिए गए और श्रीजी ने सुन्दरसाथ को स्वयं वैरागियों का भेष धारण करने का आदेश दिया।

पहने चीरक बस्तर, सब सरगुन दिया डार।

हुए चलने को तैयार, छोड़ा कार वेहेवार।।२८।।

सभी सुन्दरसाथ ने विरक्त लोगों के द्वारा पहने जाने वाले श्वेत वस्त्रों को धारण किया और अपने गृहस्थ जीवन के वस्त्रों का पूर्णतया परित्याग कर दिया। इसके पश्चात् सब सुन्दरसाथ यहाँ का कार्यभार छोड़कर चलने के लिए तैयार हो गए।

भावार्थ– निर्गुण भेष एवं निर्गुण आहार का तात्पर्य

विरक्तों की वेश–भूषा एवं आहार से होता है।

विरक्त का आहार अत्यन्त सात्विक एवं अल्प मात्रा में होता है। यह आहार खट्टे–तीखे (लहसुन, प्याज, मिर्च–मसाले, आदि), ऊष्ण, एवं अति लवण से रहित होता है।

यद्यपि सन्यास मत में भगवे वस्त्र धारण किये जाते हैं, किन्तु वैदिक मान्यता में ब्रह्मचारी एवं वानप्रस्थी के लिए श्वेत वस्त्रों को ही धारण करने का विधान है। अथर्ववेद के ऋषभ सूक्त में सूर्योदय से पूर्व जो आकाश में लालिमा होती है, ब्रह्म की त्वचा की कान्ति की उपमा उसी रंग से दी गयी है। उसी को आधार मानकार सन्यास जीवन में भगवे वस्त्र का विधान है, किन्तु श्वेत रंग में संसार के सभी रंग (लाल, पीले, हरे, नीले, काले, आदि अनन्त रंग) समाहित हो जाते हैं। इस प्रकार अनन्त परब्रह्म की

प्राप्ति का यह द्योतक है, इसलिए ब्राह्मी अवस्था प्राप्त परमहंसों ने इस रंग को अपनाया है। श्रीजी के अति प्राचीन वस्त्रों को देखने से यही मालूम पड़ता है कि श्रीजी सहित सभी सुन्दरसाथ ने मात्र श्वेत वस्त्र ही धारण किये थे, भगवे वस्त्र नहीं।

बासन बस्तर सरगुन, बख्स दिया सबन।
तूंबा कूबड़ी गोदड़ी, ए भेख पहना मोमिन।।२९।।

सुन्दरसाथ ने तरह-तरह के बर्तन तथा गृहस्थ जीवन में प्रयुक्त होने वाले सभी वस्त्रों को बाँट दिया, और स्वयं तूँबा (कद्दू का जल पात्र), कूबड़ी (टेढ़ी छड़ी), तथा गोदड़ी (पुराने कपड़ों का बना ओढ़ना या बिछौना) धारण कर उदयपुर से निकल पड़े।

अब कहूं साथ उदयपुर का, जिन सौंपी आतम।
आए दीन इसलाम में, सिर चढ़ाया हुकम।।३०।।

अब उदयपुर के उन सुन्दरसाथ का नाम वर्णित करने जा रहा हूँ, जिन्होंने अपनी आत्मा धाम धनी को सौंप दी। इन सुन्दरसाथ ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर निजानन्द की राह अपनायी और श्रीजी के आदेश को शिरोधार्य किया।

एक तो लाधू मसानी, और अमरा जी नाम।
और आया देवजी, हर सुन्दर आया इसलाम।।३१।।

सर्वप्रथम लाधू मसानी और अमरा जी का नाम आता है। इसके बाद देव जी तथा हरिसुन्दर ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और भाई मंगलजी, और आया गिरधर।

गेहेला मना हिम्मत, ए आये मुहब्बत पर।।३२।।

भाई मंगल जी, गिरधर, गेहेला, मना, और हिम्मत, ये श्रीजी के अटूट प्रेम में बँधकर निजानन्द की राह में आए।

आए केसवदास बेनीदास, और आए सोभा भीमा।

और भोगी बीर जी आये, इनों भास्या सुख जमा।।३३।।

केशवदास, बेनीदास, शोभा, भीमा, और भोगीवीर जी ने धाम धनी के चरणों में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। उन्हें धाम धनी के चरणों में ही सारे सुख का भण्डार प्रतीत हुआ।

और आये प्रेमदास जगन्नाथ, और पीछे आए लखमीदास।

और सोनी नारायण, ले धाम धनी की आस।।३४।।

प्रेम दास और जगन्नाथ जी के तारतम लेने के पश्चात् लक्ष्मीदास और नारायण सोनी ने एकमात्र धाम धनी की आशा को ही सर्वोपरि माना और न्योछावर हो गए।

और साथ समस्त में, एक भाई वासुदेव।

इनकी माता सहुद्रा, पलेवास में पाया भेव।।३५।।

उदयपुर के समस्त सुन्दरसाथ में एक शिरोमणि सुन्दरसाथ वासुदेव भाई भी थे। इनकी माता का नाम सहुद्रा बाई था, जिन्हें धनी के चरणों में शरणागत हो जाने पर इस खेल का सारा रहस्य विदित हो गया।

भावार्थ– पलीवास का तात्पर्य शरणागत होने से है।

मोटी बाई कुंजा बाई, कमला बाई नाम।

और खुसाली कही, ए आए इस ठाम।।३६।।

मोटी बाई, कुँजा बाई, कमला बाई, और खुशाली ने उदयपुर में तारतम ज्ञान ग्रहण कर धाम धनी के चरणों से अपना नाता जोड़ा।

और आई लाल बाई, और आई नागर।

और भूरो भतू, तजी माया राज खातर।।३७।।

लाल बाई, नागर बाई, भूरो, और भत्तू ने श्री राज जी को पाने के लिए माया का परित्याग कर दिया।

केसर और भानाबाई, और गंगाबाई गंगी।

और आई लाड़बाई, ल्याई दीन में अपने संगी।।३८।।

केशर, भाना बाई, गंगा बाई, गंगी, और लाड़बाई ने अपनी संगी सहेलियों को लेकर निजानन्द की राह अपनायी।

कृष्णा बाई लाल बाई, और सोना फूला नाम।
जीवी और देवबाई, ए दाखिल इसलाम।।३९।।

कृष्णा बाई, लाल बाई, सोना, फूला, जीवी, और देव बाई तारतम ज्ञान ग्रहण करके सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुईं।

सहू और गंगाबाई, और जगू बाई तारू।
बछू बाई फूलबाई, किया राजें उपरारू।।४०।।

सहू, गंगाबाई, जग्गू, तारू बाई, बच्छू बाई, और फूल बाई ने धाम धनी के चरणों में स्वयं को समर्पित किया,

जिसके परिणामस्वरूप धाम धनी ने माया के प्रहारों से इनकी रक्षा की।

भोगन और मथुरी, आई गोरी और मनू।
पीठ दई दुनियां को, नीके जानो सुपनू।।४१।।

भोगन, मथुरी, गौरी, और मनु ने दुनिया को पीठ देकर धनी के चरणों से प्रेम किया, जिसके परिणामस्वरूप इन्होंने इस स्वप्नमयी जगत की वास्तविकता को जान लिया।

अमेखी और दानी खेती, और मनी बेरानी नाम।
नानी बाई गोमा बाई, ए पीछे आई इसलाम।।४२।।

अमेखी, दानी, खेती, मनी, और बेरानी ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया। इसके पश्चात् नानी बाई और गोमा बाई ने

भी निजानन्द की राह को स्वीकार किया।

गोमा और वीर बाई, और नाथी लखी।

भाग बाई तारा बाई, खेली ब्रज रास में सखी।।४३।।

गोमा, वीर बाई, नाथी, लखी, भाग बाई, और तारा बाई पहले व्रज और रास की सखियाँ थीं, जो इस जागनी के ब्रह्माण्ड में आयीं।

अनदू और मनी बाई, पूर बाई और गंग।

भाना बाई अमृत बाई, सुख पावे राज के सग।।४४।।

अनदू, मनी बाई, पूर बाई, गंग, भाना बाई, और अमृत बाई को श्रीजी के साथ रहने में ही आनन्द मिलता है।

अमृत दे करमा बाई, और चीमा सहोदरी।

और कान बाई मना दे, मेहर राज की उतरी।।४५।।

अमृत दे, कर्मा बाई, चीमा, सहोदरी, कान बाई, और मना दे पर श्री राज जी ने ऐसी मेहर की कि वे माया से पूरी तरह अलग हो गयीं।

चीमा बाई सजनी, और दीपा बाई नाम।

और साथ समस्त सब, उदेयपुर के ठाम।।४६।।

चीमा बाई, सजनी, दीपा बाई, और शेष समस्त सुन्दरसाथ ने उदयपुर में तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

यामें कोई आगे कोई पीछे, आए बीच इसलाम।

कोई तो समझन के पख, कोई दीदार के विश्राम।।४७।।

इनमें से किसी ने पहले तारतम लिया, तो किसी ने बाद में। किसी ने तो पाताल से परमधाम का तत्व ज्ञान समझ कर तारतम ज्ञान ग्रहण किया, तो किसी ने श्रीजी के दीदार से मिलने वाले आनन्द के कारण।

जब सुलतान चढ़ा राणे पर, तब भागा सारा देस।
तब उहां से निकलने पड़ा, जुदे पड़े दरवेस।।४८।।

जब औरंगज़ेब बादशाह ने उदयपुर पर आक्रमण किया, तो उदयपुर के सभी लोग जगह-जगह भागने लगे। उस समय राजा के दबाव से वैरागी भेष धारण किये हुए सुन्दरसाथ को भी वहाँ से निकलना पड़ा।

उहां सेती चल के, आए रामपुर के गाम।
पासे पुरा दुधलाई, पूरनदास के ठाम।।४९।।

वहाँ से चलकर श्रीजी रामपुर गाँव में पहुँचे। उसके पास ही दुधलाई नामक एक छोटा सा पुरा (गाँव) था, जहाँ पर पूरनदास चारण रहा करते थे।

महामत कहें ऐ मोमिनों, ए उदेयपुर की बीतक।
अब कहों मन्दसोर की, जो बीतक हुकम हक।।५०।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह उदयपुर की बीतक का प्रसंग है। अब मैं मन्दसोर के घटनाक्रम का वर्णन करता हूँ, जो श्री राज जी के आदेश से घटित हुआ।

प्रकरण ।।५०।। चौपाई ।।२६७७।।

मन्दसोर की बीतक

श्रीजी सुन्दरसाथ सहित उदयपुर से चलकर जब मन्दसौर आए, तो वहाँ घटित होने वाले सारे प्रसंगों का मैं वर्णन करता हूँ।

अब कहों मन्दसोर की, आये उदेयपुर से चल।
जब औरंग चढ़ा राने पर, हुआ मुलक चल विचल।।१।।

अब मैं मन्दसौर का प्रसंग वर्णित करता हूँ। जब औरंगज़ेब ने उदयपुर के राणा पर आक्रमण किया, तो सारा उदयपुर राज्य उजाड़-सा हो गया।

भावार्थ- ऐतिहासिक तथ्य यह भी है कि उदयपुर के राणा राज सिंह ने जोधपुर नरेश के साथ मिलकर एक संगठन बनाया, जिससे औरंगज़ेब की सेनाएँ बार-बार हारती रहीं, किन्तु औरंगज़ेब ने कूटनीतिक तरीके से

उस संगठन को तोड़ दिया।

सम्बत् सत्रह सै छत्तीसा, लगा सैंतीसा जब।

मन्दसोर के बीच में, आए पोहोंचे तब।।२।।

जब वि.सं. १७३६ का समय बीत गया था तथा १७३७ का प्रारम्भ था, उस समय श्रीजी सुन्दरसाथ सहित मन्दसौर में आए।

इन समें फकीरी का, भेख धरा अनूप।

सोभा छब सरूप की, बारों कोटक रूप।।३।।

इस समय श्रीजी ने ऐसा अनुपम विरक्त भेष धारण कर रखा है कि उस स्वरूप की शोभा सुन्दरता के समक्ष करोड़ों सुन्दर रूप फीके हो जाएं।

गोटा सोभे सिर पर, ऊपर कनढपी।

दोए पुरत लोइ धागे भरी, ए पेहेनत हैं टोपी।।४।।

श्रीजी के शिर पर बँधा हुआ कपड़ा (गोटा) शोभायमान हो रहा है। दो परत के ऊनी धागे से बनी हुयी कनढप्पी या टोपी को श्रीजी अपने शिर के ऊपर धारण करते हैं।

भावार्थ– कनढप्पी और टोपी में यह अन्तर है कि कनढप्पी कान को ढके रहती है और टोपी कान से ऊपर होती है।

अति सुन्दर तिलक बन्यो, दोए रेखा बीच बिन्द।

गोपी चन्दन सुपेत का, मुख सोभित मानों चन्द।।५।।

श्रीजी के माथे पर अति सुन्दर तिलक लगा हुआ है। उसमें दो पतली रेखाओं के बीच में छोटा–सा बिन्दु है। यह तिलक श्वेत रंग के गोपी चन्दन का है। उनका मुख

चन्द्रमा के समान अति सुन्दर सुशोभित हो रहा है।

श्रवनी सोभे कानों मिने, दोए बाले कंचन के।

अत राजत छब प्यार की, लगा प्यार फकीरी से।।६।।

कानों में दो श्रवणी तथा कंचन के दो बाले सुशोभित हो रहे हैं। उनकी यह प्रेम भरी छवि बहुत अधिक शोभायमान हो रही है। श्रीजी को इस वैरागी वेश-भूषा से बहुत लगाव हो गया है।

भावार्थ- श्रीजी ने जो वैरागी भेष धारण किया, वह किसी एक पन्थ का वैरागी भेष नहीं था, बल्कि प्रायः सभी पन्थों की मुख्य वेश-भूषा का सम्मिलित रूप था।

कनढप्पी कबीर पन्थ में पहनी जाती है। इसी प्रकार तिलक, कण्ठी, और चार मालाओं की वेश-भूषा वैष्णव सम्प्रदाय से सम्बन्धित है। कानों में श्रवणी और सोने के

बाले नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी धारण करते हैं। शिर मुँडवाना दस नाम सन्यासियों की परम्परा में आता है। इसी प्रकार गुदड़ी का प्रयोग प्रायः गुरू गोरखनाथ के अनुयायी नाथ पन्थी किया करते हैं। मेखली उदासीन वैष्णव तथा कई अन्य सन्त मतों के महात्मा धारण करते हैं।

यदि यह कहा जाए कि श्रीजी ने कंचन के बाले धारण नहीं किए थे, बल्कि कंचन रंग के समान दिखने वाली चन्दन या तुलसी की मालाएँ थीं, तो यह उचित नहीं है। शिव को अपना आराध्य मानने वाले प्रायः नाथ पन्थी लोग कानों में धातु की बनी हुई श्रवनी या बाले ही पहना करते हैं। चन्दन या तुलसी की कितनी भी छोटी माला इतनी वजनी होती है कि कान उसका भार सहन नहीं कर सकते।

पेहेनी कण्ठी तुलसी की, और बड़ी माला चार।

अति सोभित अंग मेखली, लोइ धागे भरी सुमार।।७।।

श्रीजी ने अपने गले में तुलसी की कण्ठी और चार बड़ी मालाएँ पहनी हुई हैं। उनके शरीर में लम्बा चोला बहुत ही सुशोभित हो रहा है। ऊनी धागों से बनी हुई चादर भी उन्होंने धारण कर रखी है।

भावार्थ– विरक्त लोगों के द्वारा घुटने के नीचे तक जो वस्त्र धारण किया जाता है, उसे अल्फी, मेखली, या चोला कहते हैं, जिसे श्रीजी जाड़े के मौसम में धारण करते हैं।

और गोदड़ी ओढ़न की, हाथों लई बनाए।

सेली सुमरनी मुक्तका, अंग सोभित हैं ताए।।८।।

श्रीजी ने अपने हाथों से पुराने कपड़ों की गुदड़ी भी बना

रखी है। उन्होंने अपने गले में सेली धारण कर रखी है। एक हाथ में छोटी–सी माला (सुमरिनी) ले रखी है तथा दूसरे हाथ मे छड़ी ले रखी है। इस प्रकार उनके अंग–अंग में वैराग्य की तरह–तरह की वेश–भूषा सुशोभित हो रही है।

भावार्थ– सेली प्रायः ऊनी या रेशमी धागों से बनायी जाती है। इसका प्रयोग सूफी फकीर किया करते हैं।

उपरनी धोती अंगोछा, पहरे और बांधें कम्मर।
एह छबि ब्रह्मांड में, सोभा सब ऊपर।।९।।

वे आधी धोती को पहन लेते हैं और आधी को ओढ़ लेते हैं, तथा कमर में अंगोछा बाँध लेते हैं। श्रीजी की यह शोभा ब्रह्माण्ड में सर्वोपरि है।

भावार्थ– गर्मी के मौसम में श्रीजी आधी धोती को पहन

लेते हैं और आधी को ओढ़ लेते हैं।

एक पात्र तूंबे का, और तूंबा कम्मर।

साज सबे झोली मिने, राखत कांध ऊपर।।१०।।

श्रीजी के एक हाथ में कद्दू का बना हुआ एक जल पात्र रहता है तथा दूसरा जल पात्र कमर में बँधा रहता है। अन्य सारा सामान झोली में रखा रहता है, जिसे श्रीजी अपने काँधे पर लटका लेते हैं।

पेहेनी पांव में पनहीं, चलत चटकनी चाल।

संग केतेक मोमिन, चलत होत खुसाल।।११।।

श्रीजी अपने पैरों में खड़ाऊ पहनते हैं और वे उल्लास भरी (चुस्त) चाल से चलते हैं। उनके साथ कई सुन्दरसाथ होते हैं, जो उनके साथ-साथ चलने में बहुत

आनन्द अनुभव करते हैं।

सबों ने भेख पेहेन्या, देख अपनें साहिब।

चाह खेल देखन की, हुई बड़ी खुसाली तब।।१२।।

सब सुन्दरसाथ ने भी अपने प्रियतम अक्षरातीत को विरक्त भेष में देखकर स्वयं उस भेष का अनुसरण किया। इस मायावी खेल को देखने की इच्छा के पूर्ण होने से सुन्दरसाथ में बहुत अधिक आनन्द है।

भावार्थ– सुन्दरसाथ विरक्त भेष में भी खुश इसलिए हैं, क्योंकि उनके अन्दर तारतम ज्ञान का प्रकाश आ चुका है। वे यह सोचते हैं कि जब अक्षरातीत हमारे साथ विरक्त भेष में चल रहे हैं, तो हम क्यों न चलें? माया के खेल में यह भी एक विचित्र प्रकार का अनुभव है।

श्री बाई जी भेख बनाइया, सोभित हैं निरगुन।

साज फकीरी राखत, जंग दज्जाल से करें मोमिन।।१३।।

श्री बाईजी ने सन्यासिनी जैसा भेष धारण किया। वे अपने साथ वैराग्य की वेश–भूषा का सारा सामान रखती हैं। इस प्रकार सुन्दरसाथ ने माया से युद्ध किया।

भावार्थ– विरक्त भेष लेने से पहले सुन्दरसाथ की वेश–भूषा अलग–अलग प्रकार की थी। इससे ऊँच–नीच और अमीर–गरीब की कुछ न कुछ खाई बनी रहती थी। शरीर को सुन्दर बनाने की चाहत भी बनी रहती थी। वैराग्य भेष धारण करने से ये सारे बन्धन समाप्त हो गये। इसी को दज्जाल से युद्ध करना कहा गया है।

राह बीच राम पुरा, तहां निकट चारन का गाम।

तहां उठाई हवेली, लगे ईंटें पारने के काम।।१४।।

रामपुरा के रास्ते में, पास में ही, चारणों (गायन करने वालों) का गाँव था। वहाँ सुन्दरसाथ ने हवेली बनाने के लिए ईंटे बनाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया।

बनाए ठाढ़ी हवेली करी, सरूप रहें तिन में।
पूरनमल चारन, वह गाम था उनसे।।१५।।

जब हवेली बनकर तैयार हो गयी, तो उसमें श्री बाई जी सहित सभी महिला सुन्दरसाथ के रहने की व्यवस्था की गयी। पूरणमल चारण उस गाँव का प्रधान (मुखिया) था।

रही उनकी माता खिजमत में, करे उपली पेहेचान।
इनके सरूप देख के, उपला था ईमान।।१६।।

पूरणमल चारण की माताजी श्रीजी की सेवा में रहा करती थीं। उन्हें श्रीजी की केवल बाह्य पहचान ही थी।

श्री प्राणनाथ जी की वैरागी वेश–भूषा को देखकर उनका विश्वास भी बाहरी था, अर्थात् उन्हें धाम धनी के वास्तविक स्वरूप की पहचान नहीं हो पायी थी।

जब दज्जाल नें जोरा किया, दिल बैठा बेरीसाल।
वह भाई राजा का था, हुआ दज्जाल का हाल।।१७।।

उस समय कलियुग (दज्जाल) ने अपना प्रभाव दिखाना शुरू किया। वह बेरीसाल के अन्दर जा बैठा, जो वहाँ के राजा का भाई था। अज्ञानता तथा अभिमान के बढ़ने से, वह दज्जाल का साक्षात् स्वरूप बन गया।

बुरी नजर करी साथ पर, लूट लेऊं फकीरन।
तब चारन के घरों गए, फरियाद करी मोमिन।।१८।।

सुन्दरसाथ पर उसकी नीयत बहुत बुरी हो गयी। उसने

अपने मन में विचार किया कि मैं इन वैरागियों को लूट लूँ। तब सुन्दरसाथ पूरणमल चारण के घर गये और अपनी सुरक्षा के लिए उनसे आग्रह किया।

तब चारन की माता ने, बांधी जोर कम्मर।
इन वैरागियों सामी देखे, मारों तिनें खर।।१९।।

तब चारण की माताजी लड़ने के लिए तैयार हो गयीं। उन्होंने बेरीसाल से कहा कि जो इन वैरागी लोगों को बुरी दृष्टि से देखेगा, उन्हें मैं गधे की तरह पीटूँगी।

या तों मैं मरों तिन पर, हत्या देऊं उन।
इनसे बुरा क्यों देखे, मेरे घर आए साधुजन।।२०।।

या तो मैं तुम्हे मार डालूँगी या इन वैरागियों की सुरक्षा में स्वयं मर जाऊँगी, और तुम्हारे ऊपर हत्या का गुनाह

दे दूँगी। मेरे घर साधु–सन्त आए हैं और तूँ इनकी तरफ बुरी नजर से देख रहा है।

तब स्याह मोंह ले पीछे फिरे, उत से बेरीसाल।
चला न कछुये तिन का, बुरा हुआ हवाल।।२१।।

तब वहाँ से अपना काला मुँह लेकर बेरीसाल पीछे लौट गया। उसका वहाँ पर कुछ भी वश नहीं चल सका और उसकी हालत बुरी हो गयी।

वह हवेली छोड़ के, आए मन्दसोर।
तहां आए के बैठे, हरपरसाद घरों ठौर।।२२।।

उस हवेली को छोड़कर सुन्दरसाथ सहित श्रीजी मन्दसौर आ गये। वहाँ हरिप्रसाद जी के घर पर आकर विराजमान हुए।

तहां पातसाही लसगर, रहे मन्दसोर के गिरदवाए।
गावत सनंधे तहां बैठ के, कोई कोई सुनने को आए।।२३।।

उस समय मन्दसौर के चारों ओर औरंगज़ेब की शाही सेना पड़ाव डाले हुए थी। सुन्दरसाथ वहाँ सनद वाणी का गायन करने लगे, जिसे सुनने के लिए सेना में से कोई न कोई सिपाही आ जाता था।

इत सुनने को आवत, पठान दौलत खान।
सुन सनंधे घायल भया, भला ल्याया ईमान।।२४।।

सनद वाणी का गायन सुनने के लिए पठान दौलत खान आया। जब उसने सनद वाणी के कुछ अंश सुने, तो उसके हृदय को बहुत चोट लगी और वह धाम धनी पर ईमान (विश्वास) लाया।

और सेरखान कोहटी, सुनी सनंधे कान।

संग केतेक पठान, तबहीं ल्याए ईमान।।२५।।

शेरखान कोटी ने भी जब सनद वाणी का गायन सुना तो उसने कई पठानों के साथ तारतम ग्रहण किया।

बिना एक महम्मद की, सनंध पढ़ी तब।

दौलत खान पठान को, जोस आया तब।।२६।।

सनद ग्रन्थ से जब सुन्दरसाथ ने "बिना एक मुहम्मद" प्रकरण को पढ़ा, तो दौलत खान पठान को उस समय जोश आ गया।

भावार्थ– जिस प्रकार कोई व्यक्ति क्रोध या प्रेम से एकरूपता स्थापित कर लेता है, तो उसे क्रोधावेश या भावावेश वाला कहा जाता है, उसी प्रकार अनन्य भावदशा में स्थित होने पर प्रकृति से उपरामता

(अलगाव) का अनुभव होता है। इस अवस्था में परब्रह्म से एकात्म अवस्था प्राप्त होती है, उसमें ब्राह्मी अवस्था की जो झलक दिखायी देती है, उसको जोश कहते हैं।

ब्रह्म के जिस स्वरूप में आत्मा डूबी होती है, वह आवेश है और उसका बाहर फैलता हुआ प्रकाश जोश है।

कई बार भावदशा में केवल जोश की ही झलक आ पाती है। यह परब्रह्म के साक्षात्कार से पूर्व की अवस्था होती हैं। जैसे– बिना एक मुहम्मद के प्रकरण को सुनने के बाद दौलत खान को भावावेश में जोश आया, लेकिन उसको परब्रह्म का साक्षात्कार नहीं हुआ।

इसी तरह का प्रसंग काजी शेख इस्लाम के घर पर भी हुआ था, जब शेख बदल के जोश को देखकर क़ाज़ी का भाई उठकर भागा था।

बिना एक महम्मद है, और न काढ़े बोल।

फेर फेर एही कहे, एही काढ़त मुख कौल।।२७।।

उस समय दौलत खान के मुख से "बिना एक मुहम्मद" के सिवाय और कोई शब्द ही नहीं निकलता था। वह बार-बार अपने मुख से यही कहा करता था, "बिना एक मुहम्मद, बिना एक मुहम्मद"।

किरपाराम इत आइया, तहां पाती ले पुकार।

उदेयपुर का साथ पहाड़ों मिने, हुआ विलाप करन हार।।२८।।

उस समय श्रीजी के पास रोते-बिलखते कृपाराम जी आए। वे उदयपुर के सुन्दरसाथ की ओर से पत्र लेकर आए थे। उन्होंने रो-रोकर वहाँ का सारा समाचार श्रीजी को सुनाया कि किस प्रकार औरंगज़ेब की सेना से प्रताड़ित होकर उदयपुर का सुन्दरसाथ पहाड़ों में

छिपकर विलाप कर रहा है।

विलाप इनका सुन के, दिल में हुआ दरद।

मुंह दरगाह बीच करके, पुकार करी महम्मद।।२९।।

सुन्दरसाथ का दुःख में रोना सुनकर स्वयं श्री महामति जी को बहुत दुःख हुआ। उन्होंने मूल मिलावे में ध्यान करके, सुन्दरसाथ के कष्टों की निवृत्ति के लिए मूल स्वरूप श्री राज जी से प्रार्थना की।

पांच किरंतन करके, फेर दाखिल किए कलाम।

तबहीं पोहोंची हक को, हुई मेहर ऊपर इसलाम।।३०।।

उनकी वह प्रार्थना मूल स्वरूप श्री राज जी द्वारा स्वीकार हुयी। परिणामस्वरूप निजानन्द की राह पर चलने वालों पर उनकी मेहर बरसी, अर्थात् उदयपुर में

चल रहा उपद्रव शान्त हो गया। सुन्दरसाथ को इसी प्रकार कष्टों से निवृत्त करने के लिए कीर्तन ग्रन्थ के पाँच प्रकरण उतरे, जिन्हें तारतम वाणी में सम्मिलित कर लिया गया।

भावार्थ– इस चौपाई का आशय यह कदापि नहीं लेना चाहिए कि कीर्तन के पाँच प्रकरण बनाकर श्रीजी ने जब प्रार्थना की, तो श्री राज जी को वह प्रार्थना स्वीकार हुई और उदयपुर का संकट टला।

यह ध्यान रखने योग्य बात है कि तारतम वाणी का प्रत्येक शब्द श्री राज जी के आवेश से कहा गया है। श्री महामति जी ने स्वयं कहा है कि "मेरी बुद्धे लुगा न निकसे" अर्थात् मैंने इस वाणी का एक अक्षर भी नहीं कहा है, इसे कहने वाले तो स्वयं श्री राज जी हैं, "श्री मुख वाणी धनियें कही"।

यदि श्री महामति जी ने अपनी ओर से कीर्तन बनाकर प्रार्थना की, तब तो यह आवेशित ब्रह्मवाणी नहीं कहला सकती। जब श्री महामति जी ने आत्मिक रूप से मूल स्वरूप से प्रार्थना की तभी वह स्वीकार हो गयी, किन्तु श्री महामति जी के भावों को शब्द रूप में श्री राज जी के आवेश ने ही व्यक्त किया, जो कीर्तन ग्रन्थ के प्रकरण ३६ से ४१ तक में वर्णित हैं, किन्तु ३६वें प्रकरण को भूमिका रूप में मान लेने पर पाँच प्रकरण ३७ से ४१ तक बनते हैं।

इसलिए यहाँ पाँच प्रकरणों का प्रसंग दर्शाया गया है। इन छः प्रकरणों के श्रद्धापूर्वक पाठ एवं चिन्तन-मनन से लौकिक कष्टों से निवृत्ति हो जाती है।

इन समें इबराइम, करने आया दीदार।

सोहोबतें राजी भया, फेर आया दूसरी बेर।।३१।।

इस समय इब्राहिम श्रीजी का दर्शन करने आया। वह श्रीजी की संगति में आकर बहुत खुश हुआ। इसके बाद वह फिर दूसरी बार आया।

तब लाल की सोहोबत सें, बातें हुई इस ठाम।

एक किस्सा कुरान का, करो हमारा काम।।३२।।

तब लालदास जी से भेंट होने पर कुरआन की टीका के सम्बन्ध में बातचीत हुई। लालदास जी ने इब्राहिम से आग्रह किया कि कुरआन के एक प्रसंग का आप हिन्दुस्तानी भाषा में अनुवाद करवा दीजिए। आप हमारा यह विशेष कार्य करवाने का कष्ट करें।

तब उनने उतराइया, सूरत एक कुरान।

तिनमें केतिक आयतें, श्री जी यें सुनी कान।।३३।।

तब इब्राहिम ने कुरआन की एक सूरत को हिन्दुस्तानी भाषा में अनुवादित किया। उनमें से कुछ आयतों को श्रीजी ने अपने कानों से भी सुना।

सुनते ही सुख उपज्या, यामें बात हमारी सब।

जो उतरावे तुम को, तो बड़ा काम होवे अब।।३४।।

उस अनुवाद को सुनते ही, यह जानकर, श्रीजी को बहुत सुख हुआ कि इसमें तो हमारी (व्रज, रास, जागनी, एवं परमधाम की) सारी बातें हैं। श्रीजी ने लालदास जी से कहा कि तुम इब्राहिम से इस सम्बन्ध में बातें करो। यदि वह कुरआन का हिन्दुस्तानी भाषा में टीका करवा देता है, तो सुन्दरसाथ के लिए बहुत बड़ा

काम होगा।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाइयों से यह निष्कर्ष निकलता है कि टीका हिन्दुस्तानी भाषा में ही हो रही थी, उर्दू या फारसी भाषा में नहीं। दिल्ली के प्रसंग में यह बात आती है कि बाईस प्रश्नों की पाती हिन्दुस्तानी भाषा में ही तैयार की गयी थी, जिस पर आशाजीत ने असहमति जताई थी कि इस हिन्दुस्तानी भाषा में लिखे हुये पत्र को औरंगज़ेब नहीं पढ़ेगा। उस पाती को फारसी में लिखने के लिए कायम मुल्ला को बुलाया गया था। इसलिए स्पष्ट है कि कुरआन के टीका का हिन्दुस्तानी भाषा में ही अनुवाद कराया गया, जिससे कि सब सुन्दरसाथ लाभान्वित हो सकें।

तब उनसों बातें करी, कहे मैं उतराऊं कलाम।

कछुक लोभ दिखाया, राजी हुआ इस ठाम।।३५।।

तब लालदास जी ने टीका के सम्बन्ध में इब्राहिम से बातें की और कुछ धन का लोभ भी दिखाया। इस बात पर वह राज़ी हो गया और उसने कहा कि आपकी इच्छानुसार मैं कुरआन की टीका करवा दूँगा।

प्रात को आए खड़ा हुआ, सुरू हुआ सिपारा सोलमा।

दो जुज उतराए दिए हाथ में, बड़ी राज को हुई तमा।।३६।।

अगले दिन इब्राहिम प्रातःकाल ही आ गया। सबसे पहले कुरआन के सोलहवें पारे का टीका प्रारम्भ हुआ। उसके दो प्रकरण का टीका कराकर जब श्री लालदास जी ने श्रीजी को दी, तो उसे देखकर श्री प्राणनाथ जी को और टीका कराने की इच्छा हुई।

इत एक मजिल भई, बड़ी खुसाली दिल।

बीतक अपनी बांच के, होत दिल निरमल।।३७।।

जब कुरआन की एक मंजिल पूरी हो गयी, तो श्रीजी के दिल में इस बात की बहुत अधिक प्रसन्नता हुई कि जब सुन्दरसाथ इसको पढ़कर परमधाम, व्रज, रास, एवं जागनी में घटित होने वाले प्रसंगों को देखेगा , तो कुरआन के प्रति उसका मन इस सन्दर्भ में संशय रहित हो जाएगा कि यह केवल मुसलमानों का ग्रन्थ नहीं है।

भावार्थ– प्रायः कुरआन को मुस्लिम जगत् का ही ग्रन्थ माना जाता है, किन्तु जब उसमें बीतक के प्रमुख घटनाक्रमों की साक्षी मिल जाएगी तो वह भाषा और साम्प्रदायिक परिधि से परे होकर एक वैश्विक धरातल पर सोचेगा। इसे ही इस चौपाई के चौथे चरण में निर्मल होना कहा गया है।

एक ठौर रात को बंगले, उतारत हैं कुरान।

लाल इबराइम बैठत, राज पासे पौढ़े सुने कान।।३८।।

रात्रि के समय बंगले में एक स्थान पर कुरआन का टीका हो रहा था। इस कार्य के लिए लालदास जी और इब्राहिम बैठे थे, तथा श्रीजी पास में ही लेटे-लेटे टीका को सुनते जा रहे थे।

उतरावते एक सुकन, पढ़ा इबराईम नें।

ए तो कोई रावसी, कलम मारी उननें।।३९।।

टीका कराते-कराते इब्राहिम ने एक प्रसंग पढ़ा और कहने लगा कि यह तो किसी राफ्जी (राह से भटके हुए) ने कलम चला दी है अर्थात् लिख दिया है।

भावार्थ- इब्राहिम एक कट्टर सुन्नी मुसलमान था। वह कहने लगा कि यह तो कोई राफ्जी शिया मुस्लिम का

लिखा हुआ है, जिसमें उसने सुन्नी को खारिज़ी के रूप में लिख दिया है।

आधुनिक युग में इस्लाम में प्रायः दो सम्प्रदाय मुख्यतः प्रचलित हैं– शिया और सुन्नी।

शिया वर्ग सुन्नीयों को ख़ारिज़ी अर्थात् इस्लाम से बहिष्कृत मानता है, जबकि सुन्नी सम्प्रदाय शियाओं को राफ़्जी अर्थात् राह से विमुख होना मानते हैं। प्रायः भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, इत्यादि देशों में दोनों ही समुदायों के लोग एक दूसरे को मार–काट कर संतुष्टि अनुभव कर रहे हैं। क्या यही धर्म है? जबकि इस्लाम का आशय तो समर्पण से है।

तब श्री जी ऐ कह्या, फेरके पढ़ो सुकन।

ए तुम क्या कह्या, फेर हमें सुनाओ कानन।।४०।।

तब श्रीजी ने कहा कि उस प्रसंग को पुनः पढ़ो। यह तुम क्या कह रहे हो कि किसी ने कलम चला दी है? मुझे वह पुनः सुनाओ।

तब कह्या इबराइम नें, जो सुनी मुसलमान।
महम्मद की उम्मत के, अरजी न पहुंचे कान।।४१।।

तब इब्राहिम ने कहा कि जो अल्लाह तआला पर अटूट ईमान रखने वाले, मुहम्मद (सल्ल.) की उम्मत के, सुन्नी मुसलमान हैं, उनकी अर्ज़ी अल्लाह तआला कदापि स्वीकार नहीं करते।

भावार्थ– इब्राहिम को यहाँ संशय इसलिए हो गया कि ईमान वालों की अर्ज़ी तो अल्लाह तआला को अवश्य स्वीकार करनी चाहिए, किन्तु यहाँ लिखा है कि उनकी अर्ज़ी अर्थात् सुन्नी कट्टरवादियों की प्रार्थना स्वीकार नहीं

होती।

कोई पोहोंचे ना सके, मरातबा मोमिन।

तुम हरफ न फिराओ इनका, जैसा लिखा होए सुकन।।४२।।

श्रीजी ने इब्राहिम से कहा कि यहाँ पर परमधाम के मोमिनों का प्रसंग है, जिनकी बराबरी इस दुनिया का कोई भी व्यक्ति नहीं कर सकता। इसलिए तुम उस शब्द को परिवर्तित न करो। जैसा अर्थ लिखा है वैसा ही करो।

और वाही सुकन को, समझत नाहीं तुम।

कोई क्या जाने उन क्या लिख्या, सो समझत नाहीं हम।।४३।।

तुम यह नहीं समझ पा रहे हो कि उस तरह का शब्द क्यों लिखा गया है? भला मुहम्मद (सल्ल.) तथा अल्लाह के सिवाय और कोई क्या जान सकता है कि वहाँ ऐसा

क्यों लिखा गया है? उसे हम लोग नहीं समझ सकते।

भावार्थ– श्रीजी के कहने का आशय यह था कि अल्लाह तआला परमधाम की ब्रह्मात्माओं की अनावश्यक लौकिक इच्छाओं की पूर्ति नहीं करते। उसको हम नहीं समझते, ऐसा कहना शिष्टाचार का प्रतीक है अन्यथा श्रीजी तो सब कुछ जानते हैं।

लगता एक चबूतरा, तहां पढ़नें बैठे श्री राज।
बीतक देख राजी हुये, भए पूरन मनोरथ काज।।४४।।

वहीं पास चबूतरे पर श्रीजी टीका पढ़ने के लिए बैठ गए। उसमें ब्रह्मसृष्टियों के साथ घटित होने वाले सम्पूर्ण घटनाक्रमों की साक्षी देखकर श्रीजी बहुत आनन्दित हुए। उन्हें ऐसा लगा कि अब सुन्दरसाथ के सम्पूर्ण मनोरथ एवं कार्य पूर्ण हो गए।

अब अपनी बात के, सब बिध भए कारज।

अब तुमें करना कछु ना पड़े, रही न कोई गरज।।४५।।

इस टीका के द्वारा वेद और कतेब के एकीकरण के उद्देश्य से सारे विश्व को एक करने के लक्ष्य से सम्बन्धित जो बाह्य कार्य थे, वह हर प्रकार से पूर्ण हो गए। हे साथ जी! अब आपको कुरआन का अर्थ जानने के लिए कुछ विशेष परिश्रम करने की जरूरत नहीं पड़ेगी और इसके लिए किसी मुल्ला-मौलवी को बुलाने की आवश्यकता नहीं है।

अब ए सब साथ को, लिखो खुस खबर।

मेहर भई श्री राज की, सो लिखी तुम ऊपर।।४६।।

श्रीजी ने लालदास जी को निर्देश दिया कि बाहर के सब सुन्दरसाथ को यह शुभ सूचना पत्र के द्वारा लिखकर

भेज देना कि धाम धनी की मेहर से कुरआन का टीका हिन्दुस्तानी भाषा में हो रहा है। अब हमारे लिए वेद-कतेब के एकीकरण का रास्ता बहुत सुगम हो गया है। इस प्रकार की अलौकिक मेहर केवल सुन्दरसाथ पर ही हो सकती है और केवल यही सारे विश्व को एक कर सकते हैं।

लिखने बैठे संझा को, सो जहां लों अरूण उदे।
इबराइम जाए अपने घरों, लाल दातुन पानी करे।।४७।।

सन्ध्या के समय लालदास जी और इब्राहिम लिखने बैठ जाते हैं, प्रातःकाल की लालिमा फैलने तक लिखते रहते हैं। तब इब्राहिम अपने घर चला जाता है और लालदास जी दन्त-धावन इत्यादि क्रियाओं में लग जाते हैं।

यों करते उतरे, सिपारे जो चार।

सोलह सत्रह अठारह उन्नीस, ताको करनें लगे विचार।।४८।।

इस प्रकार चार सिपारे १६वें, १७वें, १८वें तथा १९वें का टीका हो गया। उस टीका को श्रीजी ने अपनी अन्तर्दृष्टि से देखा और उसके बातिनी रहस्यों पर विचार किया।

फेर सिपारा तीसमा, जाकी छतीसमी सूरत।

सो लिया उतार के, फेर लगे आलिफ लाम मीम से इत।।४९।।

इसके पश्चात् पुनः ३०वें पारे की ३६वीं सूरत का टीका प्रारम्भ हो गया। इसका टीका पूरा करने के पश्चात् पुनः पहले पारे अलिफ-लाम-मीम से टीका शुरू हो गया।

फेर दूसरो तीसरो, लगे चौथो उतारन।

पांचमा सुरू हुआ, उतार चले मोमिन।।५०।।

इसके पश्चात् दूसरे, तीसरे, और चौथे पारे का टीका हो गया। इसी क्रम में पाँचवे सिपारे का टीका प्रारम्भ हुआ और श्री लालदास जी की लेखनी उस पर चलती रही।

तब इबराइम के दिल में, आए बैठा दज्जाल।

लेऊं तपसीर छीन के, तो मन को करों खुसाल।।५१।।

तब इब्राहिम के मन में पाप आ गया कि यह मैं क्या करवा रहा हूँ? इन काफिर हिन्दुओं को मैं कुरआन की टीका करवा रहा हूँ। अब तो मेरा मन तभी खुश होगा, जब मैं अपनी करायी हुई टीका को वापस ले लूँगा।

तब लगा खरखसा करने, बीच बैठावे साहिद।

मोमिन गरीब देख के, देवे डर सरियत हद।।५२।।

इस बुरी नियत से वह झगड़ने लगा और शरीअत का वास्ता देने लगा कि किसी गैर–मुस्लिम को कुरआन का टीका रखने का कोई अधिकार नहीं है। मोमिनों को सीधा–सादा, विनम्र देखकर शरीअत के शासन का भी डर दिखाने लगा।

मांगने लगा तपसीर को, मैं ले जाऊं अपनें घर।

तब लालें पेहेचानियां, दज्जाल की नजर।।५३।।

वह चिल्लाकर कहने लगा कि मेरा कराया हुआ टीका मुझे वापस कर दो। मैं उसे अपने घर ले जाऊँगा। तब श्री लालदास जी समझ गये कि इसके अन्दर दज्जाल आ चुका है।

फितुवा उठावनें कों, करता है ए काम।

मैं तपसीर इनको क्यों देऊं, ए फिरा दीन–इसलाम।।५४।।

और यह झगड़ा मचाने के लिए इस तरह असभ्य भाषा में बोल रहा है। यह तो अपने धर्म के आदर्श से भटक गया है, भला मैं इसको टीका क्यों दूँ?

भावार्थ– यह कैसी विडम्बना है कि संसार के सभी धर्मग्रन्थ एक स्वर से कहते हैं कि हर मानव के चैतन्य (जीव) में परमात्मा की छवि अंकित होती है, किन्तु अन्ध–परम्पराओं और अशिक्षा के कारण उच्च वर्ग के हिन्दुओं ने निम्न वर्ग के हिन्दुओं को गायत्री मन्त्र एवं वैदिक शिक्षा से रहित कर दिया तथा मुसलमानों को म्लेच्छ कहा।

उसी प्रकार, मुसलमानों ने भी अपनी क्रूर मानसिकता के कारण हिन्दुओं को काफिर की संज्ञा दी। भले ही, वह

अक्षरातीत की भक्ति क्यों न करते हों, तलवार के बल से करोड़ों हिन्दुओं को धर्म परिवर्तन करने के लिए मजबूर किया। इन संकीर्ण सोच वाले मुसलमानों के लिए वह कैसा परमात्मा है, जो केवल कलमे से ही खुश हो सकता है, गायत्री मन्त्र से नहीं?

इसी प्रकार रहीम, रसखान, चाँद बीबी, और जायसी को हम म्लेच्छ नहीं कह सकते, तथा अक्षर-अक्षरातीत को मानने वाले हिन्दुओं को कोई काफिर नहीं कह सकता। एकमात्र तारतम ज्ञान में ही वह शक्ति है , जो सम्पूर्ण विश्व को एक आँगन में ला सकती है।

तब श्री जीएं जानिया, उनके मन की बात।

तब जवाब चोखा दिया, करी तोफान की विख्यात।।५५।।

तब श्रीजी समझ गये कि इस इब्राहिम के मन में

दुर्भावना आ चुकी है और अब यह उपद्रव मचाना चाहता है। तब श्रीजी ने टीका देने से स्पष्ट मना कर दिया। यह सुनकर इब्राहिम मुसलमानों को एकत्रित कर उपद्रव मचाने की धमकी देने लगा।

मोमिन दिल दलगीर भए, ए बात सुनी कान।
अब क्या करना इनसे, भई न इन्हें पहेचान।।५६।।

जब सुन्दरसाथ में यह बात फैल गयी कि इब्राहिम झगड़ा मचाने की धमकी दे रहा है, तो सुन्दरसाथ झगड़े के भय की आशंका से चिन्तित हो गए। वे सोचने लगे कि इब्राहिम से कैसे निपटा जाए? वह श्रीजी के स्वरूप की पहचान तो कर नहीं पाया, इसलिए झगड़ा मचाना चाह रहा है।

ए बात सुनी पठान नें, दौड़ के आया कदम।

देखे श्री जी साहिब जी को दलगीर, उन सौंपी थी आतम।।५७।।

मुहब्बत खान पठान ने जैसे ही यह बात सुनी कि इब्राहिम ने सुन्दरसाथ के साथ नापाक हरकतें की हैं, तो वह दौड़ते हुये आया और श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया। उसने धाम धनी के चरणों में अपना सर्वस्व सौंप दिया था। जब उसने श्रीजी को कुछ व्यथित-सा देखा, तो उसे सहन नहीं हुआ।

सो काहे भए आप दलगीर, सो बात सुनाई कान।

इबराइम उठाया फितना, जो गरीब लोग ईमान।।५८।।

पठान कहने लगा, हे मेरे हादी! आप इस तरह से चिन्तित क्यों हो रहे हैं? श्रीजी ने इब्राहिम के साथ घटित हुई सारी घटना का वर्णन कर दिया कि इब्राहिम

ने धनी पर अटूट विश्वास रखने वाले इन विनम्र सुन्दरसाथ के साथ झगड़ा मचा दिया है।

सुन सुकन मुहब्बत खान, बोहोत हुआ गुस्से।
सिर भानों इबराइम का, मन्दसोर के बीच में।।५९।।

सारी बात सुनकर मुहब्बत खान गुस्से में लाल हो गया और कहने लगा कि इसी मन्दसौर के बीच में मैं इस इब्राहिम का सिर फोड़ दूँगा।

इहां से उठ धाइया, गया इबराइम के घर।
कुतका लिया कांध पे, जाए सवाल किया जोरू पर।।६०।।

श्रीजी के पास से लगातार तेज कदमों से चलते हुये वह सीधे इब्राहिम के घर पहुँचा। वह अपने कंधे पर एक बहुत मोटा डण्डा लिये हुआ था और उसने इब्राहिम की पत्नी

से सवाल किया।

कहां गया इबराइम, दई गाल जुबान।

तब वह मुनकर भई, गए निकाह सुनावनें कान।।६१।।

अपने मुख से गाली निकालते हुए पठान ने पूछा कि इब्राहिम का बच्चा कहाँ है? तब उसकी पत्नी ने कहा कि वे यहाँ पर नहीं है, किसी का निकाह पढ़ाने (शादी करवाने) गये हुए हैं।

ए चला गया तहां ही, जाए के किया सोर।

इबराइम निकल आया, क्यों एता मुझ पर जोर।।६२।।

इब्राहिम की पत्नी से पता लेकर, मुहब्बत खान वहीं चला गया जहाँ वह (इब्राहिम) निकाह पढ़ा रहा था। वहाँ जाते ही उसने कटु शब्दों में शोर मचाना शुरू कर दिया।

इब्राहिम निकाह पढ़ाना छोड़कर बाहर निकलकर आया और झुकते हुए बोला कि आप मुझसे इतने खफा क्यों हैं?

मैं तो तुम्हारा गुलाम, करों फुरमाया सोए।
तें क्यों दुख दिया हादीय को, ऐसा झूठ तुझसे होए।।६३।।

हुजूर! मैं आपका गुलाम बन्दा हूँ। आप जो कुछ कहेंगे, मैं वही करूँगा। यह सुनकर मुहब्बत खान कहने लगा कि तुमने मेरे हादी को इतना दुःख दिया है, फिर भी तू अनजान बनकर इस तरह पूछ रहा है, जैसे कि तूने कुछ किया ही नहीं। ऐसी झूठी हरकत तेरे जैसा नाचीज़ ही कर सकता है।

तें मेरे आगे कह्या, ए मेरे मुरब्बी।

मैं गुलाम इनका, अब तें क्यों फेरी अपनी सबी।।६४।।

पहले तो तू मेरे सामने कहता था कि यह मेरे मुरब्बी (पूज्यपाद) हैं और मैं इनका गुलाम हूँ। अब तेरी नियत कैसे बदल गयी?

मार डांरू तुझको, द्वा रसूल की ना छोड़ों क्यों ए कर।

तब लगा उनके कदमों, आगे गीदड़ हुआ इन पर।।६५।।

रसूल की कसम, तुझे अभी मार डालूँगा। मैं किसी भी तरह से तेरी जान बख्शने वाला नहीं हूँ। अब इब्राहिम गीदड़ की तरह थर-थर काँपने लगा और चरणों में गिर पड़ा।

जाए कदमों लाग उनके, जाए राजी कर मोमिन।

नातो तुझे ना छोड़हों, हुए दिलगीर दिल रोसन।।६६।।

उसको अपने कदमों में गिरा हुआ देखकर, मुहब्बत खान कहने लगा कि कम्बख्त, मेरे कदमों में क्यों गिर रहा है? जा, मेरे हादी और मोमिनों के कदमों में गिर, और उन्हें राजी कर। यदि उनका रंजीदा (दुःखी) दिल खुश नहीं होता है, तो मैं किसी भी कीमत पर तेरी जान बख्शने वाला नहीं हूँ।

प्रात समें उठ के, इबराइम आया धाए।

आए श्री जी के कदमों लगा, सिर ना उठाया जाए।।६७।।

तड़के सबेरे ही इब्राहिम दौड़ा-दौड़ा आया और श्रीजी के चरणों में अपना सिर रख दिया। बहुत कहने पर भी वह सिर नहीं उठा रहा था।

तब नूर महम्मद बोलिया, उठ खड़ा हो मुरदार।
मारों कटारी पेट में, इतही हो जाए सुमार।।६८।।

तब नूर मुहम्मद ने कड़कती हुई आवाज में कहा– ऐ मुरदार! उठकर खड़ा हो जा। मेरी तो ख्वाहिश यही है कि मैं तेरे पेट में कटारी भोंक दूँ और यहीं तेरा काम तमाम कर दूँ।

पर क्या करों डरता हूं हादी से, इनका हुकम नाहे।
एती बेअदबी करके, फेर जीवता उठ के जाए।।६९।।

लेकिन मैं क्या करूँ? मैं अपने हादी से डर रहा हूँ, क्योंकि तेरा कत्ल करने के लिए इनका हुक्म नहीं है। नहीं तो इतनी बेअदबी (दुर्व्यवहार) करने के बाद, तूँ यहाँ से जिन्दा जा ही नहीं सकता था।

कहया मैं तुम्हारा गुलाम, मुझसे भई भूल।
अब तुम माफ करो, मैं तुमसे किया न सूल।।७०।।

इब्राहिम गिड़गिड़ाकर श्रीजी के चरणों में गिर पड़ा और कहने लगा कि मैं आपका गुलाम हूँ, मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गयी है। अब आप मुझे माफ कर दीजिए। यह सच है कि मैंने आपके साथ नेक बर्ताव नहीं किया।

मैं ग्रहे तुम्हारे कदम, सो मैं ना छोड़ों कब।
सब मोमिनों के कदमों लगा, वाको माफ किया तब।।७१।।

मैंने आपके कदमों को पकड़ लिया है और कभी भी इन्हें नहीं छोडूँगा। इसके बाद वह एक-एक कर हर सुन्दरसाथ के चरणों में अपना सिर रखता गया, तब श्रीजी और सब सुन्दरसाथ ने उसे क्षमा कर दिया।

तब उनके भाई नें, पांचमा सिपारा।

वह लिखावनें लगा, हुआ जो पूरा।।७२।।

अब इब्राहिम के भाई ने टीका कराने का उत्तरदायित्व लिया और पाँचवे सिपारे का टीका करवाना प्रारम्भ किया। अन्ततोगत्वा, उस सिपारे का टीका पूरा हो गया।

इन समें दज्जाल नें, सोर किया जोर।

रहे साथी सब जुदे जुदे, काहू चित ना हुआ मरोर।।७३।।

इब्राहिम ने मुस्लिम छावनी में जाकर सिपाहियों को भड़का दिया, जिसके कारण सुन्दरसाथ को पकड़ने के लिए चारों ओर सिपाही ही सिपाही दिखायी देने लगे। श्रीजी के निर्देश पर सभी सुन्दरसाथ पूरे नगर में दूर-दूर फैल गए, फिर भी धनी के प्रेम में डूबे रहने के कारण उनके मन में कोई दुःख नहीं हुआ।

भावार्थ– इब्राहिम ने मुसलमानों की छावनी में यह कहकर सबको भड़काया था कि शरीअत किसी गैर–मुस्लिम को कुरआन पढ़ने की इजाजत नहीं देती। ये काफिर हिन्दू लोग कुरआन का तर्जुमा कर रहे हैं। लिहाज़ा इस तरह की हरकत से इन्हें रोका जाए।

छिप रहे जुदे जुदे, आवे दीदार को एक बेर।
झोरी भर के ल्यावहीं, टुकड़े मांगे फेर।।७४।।

सब सुन्दरसाथ पूरे नगर में दूर–दूर तक फैलकर छिप गए। वे दिन में श्रीजी के दर्शन के लिए मात्र एक बार आया करते थे। सभी अपनी–अपनी झोली में भिक्षा माँगकर लाया करते थे।

भावार्थ– टुकड़े माँगने का अर्थ केवल रोटी के टुकड़े माँगना नहीं होता, बल्कि भिक्षा में मिला हुआ कुछ भी

(दाल, चावल, खीर, आदि) भोजन का अंश (टुकड़ा) ही होता है।

श्री राज आरोगत हेतसों, ए किनकी झोरी के।

सो बतावत अपने, ए ल्याया मैं।।७५।।

श्रीजी भिक्षा में आये हुए भोजन को प्रेमपूर्वक ग्रहण करते हैं। उसमें से किसी चीज को उठाकर पूछते हैं कि यह किसकी झोली का है? जिसकी झोली का वह टुकड़ा होता है, वह खुश होकर कहता है कि धाम धनी, यह मेरी झोली का है, इसे मैं लाया हूँ।

राजी होवें तिन पर, बातें हंस हंस करें बनाए।

मैं अजमावत तुम को, इन मजलों पहुंचाए।।७६।।

जिस-जिस सुन्दरसाथ से श्रीजी भिक्षा के बारे में पूछते

हैं, वह सुन्दरसाथ बहुत प्रसन्न होता है। इस प्रकार भिक्षा माँगने पर भी उनके चेहरे पर शिकन नहीं आती, बल्कि हँसते हुए तरह–तरह की बातें करते हैं। श्रीजी उनसे कहते हैं कि मैं तो तुम्हारे त्याग और समर्पण की परीक्षा ले रहा था, इसलिए तुम्हें इस स्थिति में पहुँचाया है कि आज तुम्हें भिक्षा माँगनी पड़ी।

भावार्थ– आत्मा और प्रियतम अक्षरातीत के बीच में अहं ही सबसे बड़ा पर्दा है। पन्ना जी में परमधाम की वाणी (खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार) का अवतरण होना है और सुन्दरसाथ को प्रत्यक्ष दीदार का भी सुख देना है, इसलिए धाम धनी ने जानबूझकर ऐसी स्थिति पैदा की है कि सुन्दरसाथ अपने अहं को विसर्जित करने के लिए कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाएं।

मोमिन राजी होए के, बातां करें खुस दिल।

ए दिन हम कब पावहीं, रहे एक दूजे हिलमिल।।७७।।

सुन्दरसाथ आपस में एक–दूसरे से घुल–मिलकर प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं और प्रसन्न मन से प्रेम भरी बातें करते हैं। वे कहते हैं कि हे धाम धनी! यह कितने सौभाग्य की बात है कि हम यहाँ भिक्षा माँगकर आपको भोजन कराते हैं। परमधाम में तो आपने कभी इस तरह की लीला ही नहीं की। इस तरह का सौभाग्यशाली दिन भला हमें कब मिलने वाला है कि हम भिक्षा माँगकर आपको रिझाया करें।

तुम सिर भाना दज्जाल का, कुटम्ब कबीला आस।

रहे बोहोत बल सूरत में, संग जोस जबराईल खास।।७८।।

श्रीजी उत्तर देते हैं कि हे सुन्दरसाथ! आपने कलियुग

रूपी दज्जाल का शिर तोड़ दिया है, अर्थात् माया को आपने ठोकर मार दी है। आपने घर–परिवार की भी आशा छोड़ दी है। इस त्यागमय जीवन में सुन्दरसाथ के चेहरे पर आत्मिक बल का प्रकाश झलका करता था। ऐसा लगता था कि उनके साथ धनी का जोश जिबरील विशेष रूप से क्रीड़ा कर रहा था।

श्री बाई जी नें इन समें, सेवा करी मोमिन।

दिल बनाए आगे धरें, हमेसा दिल रोसन।।७९।।

इस समय श्री बाई जी ने सुन्दरसाथ की बहुत अधिक सेवा की। उनका दिल हमेशा सुन्दरसाथ के प्रति आत्मिक प्रेम से भरा रहता था। सुन्दरसाथ द्वारा लायी हुयी भिक्षा को एकत्रित कर अति प्रेम से परोसती थीं।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में भ्रान्तिवश

"दिल बनाए" को "दाल बनाए" भी कह दिया जाता है, किन्तु यह अनुचित है। जब सुन्दरसाथ की संख्या हजारों में थी, तो हजारों सुन्दरसाथ के लिए श्री बाई जी अकेले दाल क्यों बनायेंगी? और महिला सुन्दरसाथ भी जब हजारों में थीं, तो इस सेवा को वे क्यों नहीं कर सकती थीं? "दिल बिगड़ना" एक मुहाविरा है, जिसका आशय होता है, किसी के प्रति मन में घृणा का भाव रखना। इसी प्रकार "दिल बनाना" पूर्व मुहाविरे का विपरीत है, जिसका अर्थ होता है दूसरे के दिल से एकरस हो जाना।

श्री बाई जी सब सुन्दरसाथ को समान दृष्टि से देखती थीं और उनके द्वारा भिक्षा में लाये हुए भोजन को एकत्रित करके सबमें समान रूप से बँटवाती थीं। हजारों सुन्दरसाथ द्वारा लाई हुयी भिक्षा बहुत अधिक मात्रा में होती थी। श्री बाई जी स्वयंसेवकों को समान मात्रा में

बाँटने का निर्देश देकर, उसके अलग-अलग भाग कर देती थीं। हजारों सुन्दरसाथ को अकेले परोसना श्री बाई जी के लिए व्यवहारिक दृष्टि से सम्भव नहीं था। यद्यपि, इस कार्य में मुख्य वितरक श्री बाई जी ही थीं, इसलिए इस चौपाई में श्री बाई जी के लिए "आगे धरें" शब्दों का प्रयोग हुआ है, जिसका आशय होता है कि वह परोसती थीं।

एक दूजे को सेवहीं, हर भांत कर चित।
हेत करें मिनों मिनें, कहूं सक न पैठत।।८०।।

सभी सुन्दरसाथ एक-दूसरे की सच्चे मन से हर प्रकार से सेवा करते हैं। आपस में भी एक-दूसरे से बहुत ही गहरा स्नेह रखते हैं। किसी में भी एक-दूसरे के प्रति किसी तरह का संशय पैदा नहीं होता।

नान्हा भाई चलया, मन्दसोर के में।

ताले माफक ए रहया, उतने ही सुख सें।।८१।।

मन्दसौर में नान्हा भाई का धामगमन हो गया। उनके भाग्य में जो उम्र थी, उसी के अनुसार उन्होंने धनी के चरणों का सुख लिया।

मुकुन्द दास को उत थें, भेजे भावसिंह पास।

तुम जाए उनकी खबर लेओ, है जीवता कछु आस।।८२।।

श्रीजी ने रामपुर के पास स्थित दुधलाई से ही मुकुन्द दास जी को औरंगाबाद के राजा भाव सिंह के पास भेज दिया था। उन्होंने मुकुन्द दास जी को निर्देश दिया था कि तुम औरंगाबाद जाकर यह जानकारी लो कि क्या भाव सिंह में धनी के प्रति जीवित होने अर्थात् जाग्रत होने के कुछ लक्षण हैं?

भावार्थ– जो संसार के प्रति मन से जीवित रहता है, वह परमधाम और धनी के प्रति मरा रहता है, किन्तु जो संसार के प्रति अपने मन से मर जाता है, वह धनी के प्रति जीवित हो जाता है। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी में कहा गया है–

जो पेहले आप मुरदे हुए, तिन दुनी करी मुरदार।
हक तरफ हुए जीवते, उड़ पहुँचे नूर के पार।।

श्रृंगार २४/९५

इस चौपाई के चौथे चरण का आशय यह है कि मुकुन्द दास जी को यह जाँच करनी थी कि राजा भाव सिंह में कुछ आध्यात्कि प्रवृत्ति है या नहीं, अर्थात् संसार को छोड़कर धनी के प्रति कुछ चाहत है या नहीं? यहाँ मरने का तात्पर्य मन से मरना है, शरीर से मरना नहीं। वस्तुतः इस चरण में संकेत में यही बात कही गयी है कि राजा

भाव सिंह संसार के प्रति मन से कुछ मरा हुआ है या नहीं, और परब्रह्म के प्रति कितनी चाहत रखता है?

जो हमको उत बुलावहीं, तो हम आवें उत।
तहां जाए के लिखियो, जैसा देखो तित।।८३।।

यदि राजा भाव सिंह मुझे बुलाते हैं, तो मैं वहाँ आ जाऊँगा। वहाँ जाकर तुम जैसी स्थिति देखना वैसा मुझे पत्र लिखना।

मुकुन्द दास जाए पोहोंचे, भावसिंह सों किया मिलाप।
चरचा उनसों रस पड़ी, उन कबूल किया आप।।८४।।

मुकुन्द दास जी औरंगाबाद जा पहुँचे और राजा भाव सिंह से मिले। राजा भावसिंह को मुकुन्द दास जी की चर्चा में बहुत आनन्द आया और उन्होंने श्रीजी को

बुलाने के लिए मुकुन्द दास जी से आग्रह किया।

तब उहाँ से कासद, भेज दिया सिताब।

मन्दसोर आए पोहोंचिया, पाती ले किताब।।८५।।

तब मुकुन्द दास जी ने औरंगाबाद से ही श्रीजी को लाने के लिए अपना सन्देशवाहक भेज दिया। सन्देशवाहक किताब रूपी पत्र लेकर श्रीजी के चरणों में पहुँचा।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में पत्र को किताब से उपमा इसलिए दी गयी है, क्योंकि पत्र में कई पन्नों का संग्रह होने से वह एक छोटी किताब की तरह दिखता था।

उनमें भली भांत के, लिखे थे सुकन।

पढ़ के आप राजी भए, सब साथ मोमिन।।८६।।

उस पत्र से वहाँ के समाचार के साथ-साथ श्रीजी के प्रति बहुत प्रेम भरे वचन लिखे थे, जिसे पढ़कर श्रीजी और सुन्दरसाथ बहुत प्रसन्न हुये।

अब मन्दसोर से, चलने का किया उपाय।
साथ हुए सब तैयार, खबर सबों पोहोंचाए।।८७।।

अब सबने मन्दसौर से चलने का निर्णय किया। यह सूचना सबको दे दी गयी और सब सुन्दरसाथ वहाँ से चलने के लिए तैयार हो गए।

सब साथ भेले भए, हुए चलनें को हुसियार।
आठ महीने इत रहे, हुआ हुकम परवरदिगार।।८८।।

मन्दसौर में जगह-जगह बिखरे हुए सुन्दरसाथ एकत्रित हो गये और वहाँ से चलते समय शाही फौज से सुरक्षित

रहने के लिए भी सावधान रहे। मन्दसौर में रहते हुए आठ महीने बीत चुके थे। अब यहाँ से चलने का धाम धनी का आदेश हुआ।

महामत कहे ऐ मोमिनों, ए मन्दसोर की बीतक।
अब इहां से आगे चले, सो कहों हुकम हक।।८९।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह मन्दसौर के घटनाक्रम का वर्णन हुआ है। अब यहाँ से श्रीजी सहित सुन्दरसाथ आगे चले, तो मार्ग में होने वाले प्रसंग का धाम धनी के आदेश से मैं वर्णन कर रहा हूँ।

प्रकरण ।।५१।। चौपाई ।।२७६६।।

उज्जैन की बीतक

इस प्रकरण में उज्जैन में घटित होने वाले प्रसंगों का वर्णन किया गया है।

इहां से आए सीतामऊ, तहां से नोलाई।
तहां से आए उज्जैन, अठाईस मजलें भई।।१।।

मन्दसौर से चलकर श्रीजी के साथ सब सुन्दरसाथ सीतामऊ आए। वहाँ से नोलाई होते हुए अट्ठाइस दिनों में उज्जैन आए।

भादों सुदी छठ को, रहे धनबाई के घर।
भाई भगवान चौधरी, ईमान ल्याया इन पर।।२।।

भादो मास की शुक्ल पक्ष की षष्ठी को धनबाई के घर

श्रीजी ठहरे। वहाँ पर भगवान भाई चौधरी ने तारतम ग्रहण किया।

इनों ने उच्छव किया, बाबू जी है नाम।
नान जी बेटा तिनका, राज पधारे मेडी ठाम।।३।।

बाबू जी ने अपने घर पर प्रीतिभोज (सबको भोजन कराने का कार्यक्रम) का उत्सव किया। उनके पुत्र का नाम नान्ह जी था। धाम धनी उनके घर की दूसरी मंजिल में ठहरे।

बूला बेटा भगवान का, कान जी भाई मन।
दामोदर दास धनबाई के, ल्याए ईमान मोमिन।।४।।

भगवान दास के बेटे का नाम बूला था। उन्होंने तथा कान्ह जी भाई, मान जी भाई, तथा धन बाई, एवं

दामोदर दास, आदि ब्रह्ममुनियों ने श्रीजी के चरणों में विश्वास लाकर तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

लालजी इत आइया, बूला बेटा इनका।

और कान जी दूसरा, बेनी भाई आया इनका।।५।।

लाल जी बाई ने अपने पुत्र बूला के साथ निजानन्द के मार्ग को अपनाया। दूसरे कान्ह जी भाई तथा बेनी भाई ने भी श्रीजी के चरणों मे तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

लालजीएं उच्छव किया, पधराये श्री राज।

मोहन के घर उच्छव, पूरे मनोरथ काज।।६।।

लाल जी भाई ने अपने घर पर प्रीतिभोज का उत्सव किया और धाम धनी को अपने घर पधराया। इसके पश्चात् मोहन भाई के घर भी प्रीतिभोज का उत्सव हुआ।

श्री प्राणनाथ जी ने वहाँ पर पधारकर सबकी इच्छाओं को पूर्ण किया।

ए जो श्री राम आइया, आया धन जी इस ठाम।
श्री राज पधारे इनके घर, भए पूरन मनोरथ काम।।७।।

श्री राम जी तथा धन जी ने भी तारतम ज्ञान ग्रहण कर अपना जीवन सार्थक किया। श्रीजी ने इनके घर भी आकर इनकी मनोकामनाओं को पूर्ण किया।

कान जी के घरों, दई रसोई इन।
हाव भाव बोहोत किया, बिना अंकूर न होए मोमिन।।८।।

कान्ह जी भाई ने भी अपने घर पर श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ को भोजन कराया। उसने प्रेम का हावभाव तो बहुत दिखाया, किन्तु उसके अन्दर परमधाम का

अँकुर नहीं था, इसलिए तारतम ज्ञान ग्रहण नहीं कर सका।

जीवली के घरों, पधारे श्री राज।

रसोई भली भाँत सों, करी श्री राज के काज।।९।।

जीवली के घर पर धाम धनी प्रेमपूर्वक पधारे। उसने श्रीजी के लिए बहुत ही भावपूर्वक भोजन बनाया।

ऊका धन जी के घरों, करी रसोई भली भाँत।

श्री राज को पधराए के, रसोई अरूगाई कर खांत।।१०।।

ऊका भाई तथा धन जी भाई के घर पर बहुत अच्छी तरह से रसोई बनायी गयी, तथा धाम धनी एवं सब सुन्दरसाथ को पधराकर बहुत प्रेम भाव से भोजन कराया।

बाल बाई रसोई करके, श्री राज पधराए घरों।

दरसन किया बुलाये के, मन में हरख धरों।।११।।

बाल बाई ने भोजन बनाकर धाम धनी को अपने घर पर पधराया और उनका दर्शन प्राप्त कर अपने मन में बहुत आनन्द प्राप्त किया।

भूदर फूल बाई नें, राज पधराए इन।

राम बाई के घरों, किए पूरे मनोरथ मन।।१२।।

भूदर बाई तथा फूल बाई ने सुन्दरसाथ सहित श्री प्राणनाथ जी को अपने घर पर पधराया। राम बाई के घर पर पधार कर भी धाम धनी ने उनकी मनोकामनाओं को पूर्ण किया।

कान जी के घरों, पधराए कर हेत।

मुरली आनन्द स्याम जी, उनने बुलाए तित।।१३।।

मुरली, आनन्द, तथा श्याम जी ने कान्हजी भाई के घर पर धाम धनी को सुन्दरसाथ सहित प्रेमपूर्वक पधराया और उनका सत्कार किया।

पधारे मोहन के घरों, और साहूकरों के।

भले भाव सों पधराए, साहूकारों के नए नए।।१४।।

श्रीजी सुन्दरसाथ सहित मोहन भाई तथा अन्य साहूकारों के घर पधारे। नए-नए साहूकारों ने धाम धनी सहित सुन्दरसाथ को बहुत श्रद्धा भाव के साथ पधराकर अपने को धन्य-धन्य माना।

भावार्थ- इस प्रकार श्रीजी बाईस दिन तक उज्जैन में रहे। बीतक में चार घटनाक्रमों में बाईस दिनों का प्रसंग

है–

१. अपने धामगमन के पूर्व सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने श्री मिहिरराज जी को बाईस दिन तक अपने साथ रखकर आध्यात्मिक आनन्द का रसपान कराया।

२. सिद्धपुर में श्रीजी २२ दिन तक ठहरे रहे।

३. प्रेम जी, नाग जी, और संग जी दिल्ली में २२ दिन तक रहे। इसमें प्रेम जी तो श्रीजी के साथ रह गये, लेकिन नाग जी और संग जी पुनः बिहारी जी के पास चले गए।

४. उज्जैन में भी श्रीजी ने २२ दिन तक निवास किया।

फेर तेईसमें दिन इहां से, नोलाई आन पोहोंचे।

एक दिन तहां रह के, पोहोंचे नुनेरे।।१५।।

इसके पश्चात् २३वें दिन श्रीजी सुन्दरसाथ सहित

नोलाई पहुँचे। वहाँ पर एक दिन रहकर नुनेरे पहुँच गए।

तहां एक दिन रह के, पोहोंचे बुढ़ानपुर में।
तहां एक दिन रह के, चले मजल इत सें।।१६।।

वहाँ (नुनेरे) एक दिन रहकर समस्त सुन्दरसाथ के साथ बुढ़ानपुर पहुँच गए। वहाँ श्रीजी एक दिन रहकर औरंगाबाद के लिए चल पड़े।

भावार्थ– मंज़िल का अर्थ लक्ष्य होता है। श्रीजी को औरंगाबाद पहुँचना था, इसलिए इस चौपाई के चौथे चरण में औरंगाबाद के लिए मंज़िल शब्द का प्रयोग हुआ है।

तहां से आए औरंगाबाद, भावसिंह के घर।
तहां की बीतक कहों, जिन भांत इन पर।।१७।।

बुढ़ानपुर से श्रीजी औरंगाबाद में भावसिंह के घर पर पधारे। वहाँ जिस प्रकार से घटनाक्रम घटित हुआ, उसे मैं कहता हूँ।

महामत कहें ऐ मोमिनों, ए मन्दसोर से बीतक।

आगे औरंगाबाद की, बात बड़ी बुजरक।।१८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह आपने मन्दसौर से आगे उज्जैन का घटनाक्रम सुना। अब औरंगाबाद के घटनाक्रम का वर्णन करने जा रहा हूँ, जिसकी बातें बहुत अधिक महिमामयी हैं।

प्रकरण ।।५२।। चौपाई ।।२७८४।।

औरंगाबाद वृत्तान्त

राणा के मुलक से, आए रामपुरे के ठौर।

दूधलाई डेरा किया, तहां किया दज्जाले सोर।।१।।

श्रीजी उदयपुर से सुन्दरसाथ के साथ रामपुर के पास दुधलाई में आकर ठहरे। वहाँ बेरीसाल ने सुन्दरसाथ को लूटने का असफल प्रयास किया।

तब वहां से मुकुन्ददास को, और जो केसवदास।

खिमाई और वल्लभ, भेजे भावसिंह पास।।२।।

तब वहाँ से श्रीजी ने मुकुन्द दास जी को राजा भाव सिंह को जाग्रत करने के लिए भेजा। उनके साथ केसव दास, खिमाई, और वल्लभ दास जी भी गए।

गये भावसिंह के उत, केसव वल्लभ बैठे दुकान।

खिमाई भाई संग रहें, मुकुन्द दास निरगुन जान।।३।।

ये चारों सुन्दरसाथ भाव सिंह की राजधानी औरंगाबाद पहुँचे। केशव भाई और वल्लभ एक दुकान में ठहरे रहे, उनके साथ खिमाई भाई भी थे। मुकुन्द दास जी ने भी वैरागी-भेष धारण किया हुआ था।

केतेक महीने फिरे, भेख राख्यो निरगुन।

वेदान्त को पख खोजिया, रहे बीच निरगुन।।४।।

कई महीने तक अपने वैरागी-भेष में मुकुन्द दास जी भाव सिंह से मिलने का प्रयास करते रहे। उन्होंने तारतम ज्ञान के प्रकाश में वेदान्त के गहन रहस्यों की खोज की। इस कार्य में वे हमेशा वैराग्य अवस्था में ही रहे।

भावार्थ- उपरोक्त चौपाइयों से स्पष्ट होता है कि केशव

दास जी और वल्लभ ने किसी दुकान में अपना निवास बना लिया था, किन्तु मुकुन्द दास जी ने किसी गृहस्थ के आवास को निवास नहीं बनाया बल्कि विरक्त अवस्था में वेदान्त के चिन्तन में लगे रहे। सम्भवतः उन्होंने अपने निवास का स्थान भी उसी के अनुकूल चुना होगा।

जब लगे मुरकने, तब दिल में किया विचार।
मैं फिरा काहे जाऊं, जनाऊं जित बेहेवार।।५।।

राजा से मिलने के सारे प्रयास निष्फल हो जाने पर जब वे निराश होकर लौटने लगे, तब उन्होंने अपने दिल में विचार किया कि मैं असफल होकर धनी के सम्मुख कैसे जाऊँ? मैं अपने कुशल व्यवहार के द्वारा यहीं पर सफलता अवश्य प्राप्त करूँगा।

भीख मांगे दोऊ सरूप, ताके लिये बस्तर।

थेलिया रेसमी बनाए के, प्रसाद थैली करी तत्पर।।६।।

मुकुन्द दास जी ने भिक्षा माँगकर दो रूपये एकत्रित किए और उससे रेशमी कपड़ा खरीदकर उसकी थैलियाँ बनाईं तथा राजा को भेंट में देने के लिए उसमें प्रसाद डाल दिया।

प्रस्न भागवत वेदान्त के, ले डारे थैली में।

एक प्रसाद की थैली कर, किया मिलाप तिन सें।।७।।

उस थैले में भागवत तथा वेदान्त के प्रश्नों को भी लिखकर डाल दिया। प्रसाद वाली एक थैली लेकर उन्होंने राजा से मिलने का प्रयास किया।

महन्त राम दास रहे, तिन देखे बीच बाजार।

मिलाप मुकुन्द दास को, पहुंचाया नाले पार।।८।।

महन्त राम दास औरंगाबाद में रहा करता था। उसने मुकुन्द दास जी को नगर के बीच बाजार में ही देख लिया और उन्हें पीटते–पीटते औरंगाबाद के नाले के उस पार पहुँचा दिया।

जो औरंगाबाद रहेगा, तो हम मारेंगे फेर।

जो बदराह करे भावसिंह को, तो हम मारें दूसरी बेर।।९।।

उसने मुकुन्द दास जी को यह चेतावनी भी दे दी कि यदि तुम औरंगाबाद में रहोगे और भाव सिंह को भटकाने का प्रयास करोगे, तो मैं तुम्हें दूसरी बार पुनः मारूँगा।

भावार्थ– महन्त रामदास राजदरबार का प्रमुख पण्डित था। मुकुन्ददास जी से उसके द्वेष का मुख्य कारण यह

था कि उसके मन में भय था कि यदि राजा मुकुन्ददास जी से प्रभावित हो जाएँगे, तो उसकी दक्षिणा बिल्कुल कम हो जाएगी या बँद हो जाएगी।

यों करके जब छोड़िया, तब मुकुन्द दास कियो विचार।
दज्जाल मिलने न देवहीं, मैं होऊं खबरदार।।१०।।

इस प्रकार, जब मुकुन्ददास जी को चेतावनी देकर छोड़ दिया, तब मुकुन्ददास जी ने अपने मन में विचार किया कि यह दुष्ट मुझे राजा से मिलने नहीं दे रहा है। अब मुझे और सावधानी से काम करना होगा।

एक देहुरा देवी का, मैं बैठूं तिन में।
उत भावसिंह आवत, पाती देऊं हाथ सें।।११।।

राजा के महल से कुछ दूरी पर जो देवी का मन्दिर है,

मुझे उसमें छिपकर बैठ जाना चाहिए और जब भावसिंह वहाँ प्रणाम करने आयेंगे, तब मैं उन्हें प्रसाद की थैली के साथ हाथों–हाथ अपना पत्र दे दूँगा।

ऐसा विचार करके, जाय छिप के बैठे उत।
जब भावसिंह आइया, पाती प्रसाद दिया तित।।१२।।

इस प्रकार का विचार करके मुकुन्ददास जी मन्दिर में छिप कर बैठ गए। जब भावसिंह वहाँ आए, तब उन्होंने प्रसाद वाली थैली के अन्दर पाती रखकर भेंट स्वरूप दे दी।

भावसिंहे सिर चढ़ाए के, लई थैली उस बखत।
भीतर जाए के बुलाए, मुकुन्द दास को तित।।१३।।

उस समय भावसिंह ने बहुत आदरपूर्वक उस थैली को

ले लिया और अपने महल के अन्दर जाकर मुकुन्ददास जी को अपने पास बुलवाया।

भावार्थ– "सिर चढ़ाना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ है, आदरपूर्वक स्वीकार करना। ऐसा प्रतीत होता है कि देवी का मन्दिर भावसिंह के राजमहल के बाहर थोड़ी दूरी पर था। तभी राजा ने महल के अन्दर जाकर मुकुन्ददास जी को अपने पास बुलाया। वह नगर के पूर्ण रूप से बाहर नहीं था, क्योंकि यदि नगर के बाहर होता तो राजा अपने सैनिकों के साथ मन्दिर में जाता और मुकुन्ददास जी को नगर के बाहर से बुलवाने में काफी परेशानी होती।

पूछी हकीकत राज की, कहां हैं स्वामी कृष्ण दास।

तुमको क्यों कर भेजिया, कहो अपनी दिल आस।।१४।।

राजा भावसिंह ने मुकुन्ददास जी से श्रीजी के विषय में पूछा कि स्वामी कृष्णदास जी कहाँ है? आपको उन्होंने मेरे पास किसलिए भेजा है? आप अपने दिल की इच्छा बताइए।

भावार्थ– मुकुन्ददास जी ने श्रीजी का नाम पत्र में स्वामी कृष्णदास के रूप में लिखा था, किन्तु इसका आशय यह नहीं समझ लेना चाहिए कि श्रीजी का एक नाम स्वामी कृष्णदास भी है। यह एक अल्पकालिक नाम है, जो मुकुन्ददास जी के द्वारा लिखा गया है। यह वैसे ही है, जैसे दिल्ली में नलुओं के ऊपर सैय्यद मुहम्मद इब्न–ए–इस्लाम का हस्ताक्षर किया गया था।

खोल पाती पढ़ने लगा, मिने प्रस्न भागवत।
और लिखे वेदान्त के, विचार होने लगा तित।।१५।।

राजा भावसिंह मुकुन्ददास जी द्वारा लिखे हुए पत्र को पढ़ने लगे। उसमें लिखे हुए भागवत और वेदान्त के प्रश्नों के ऊपर विचार–मन्थन होने लगा।

तहां दज्ञाल बैठा था, राम दास महन्त।

तिन ईरषा के वचन कहे, सरूप बे बिराजत।।१६।।

वहाँ पर वही दुष्ट रामदास महन्त बैठा हुआ था, जिसने मुकुन्ददास जी को बुरी तरह यातनाएं दी थीं। मुकुन्ददास जी को देखकर वह ईर्ष्या से जल–भुन गया और उसी भाव में कहने लगा कि इनके मतानुसार तो परमात्मा के दो स्वरूप होते हैं।

ए दोए कृष्ण बतावत, जो कहू न सास्त्रों में

इनका मुख न देखिए, चरचा कैसी इनसे।।१७।।

किसी भी शास्त्र मे जो बात नहीं लिखी है, उसी को यह लोग दोहराते हैं कि श्री कृष्ण के दो स्वरूप हैं। ऐसे लोगों का तो मुख भी नहीं देखना चाहिए, फिर इनसे क्या चर्चा करनी?

तब भावसिंहे बोलिया, ऐसी काहे कहो तुम।
एतो भला बतावत है, निज सरूप बतावत हम।।१८।।

तब भावसिंह ने उत्तर दिया कि तुम इस प्रकार की बातें क्यों कर रहे हो? यह तो अच्छी बात बता रहे हैं और इन पत्रों के माध्यम से हमें निज स्वरूप की पहचान करा रहे हैं?

भावसिंहे जानिया, ए दज्जाल हराम खोर।
ए हैं इनके दुसमन, तो करत हैं सोर।।१९।।

भावसिंह समझ गए कि कलियुग रूपी यह रामदास कामचोर है। यह मुकुन्ददास जी से शत्रुता का भाव रखता है, इसलिए इस तरह से शोर मचा रहा है।

ठौर देओ मुकुन्द दास को, हमारी हवेली पास।
तब रामदास बोलिया, इनकी सेवा की मुझे आस।।२०।।

राजा ने अपने सेवक को आदेश दिया कि मुकुन्ददास जी के रहने की व्यवस्था मेरी हवेली के पास ही कर दी जाए। तब रामदास कहने लगा कि मुझे इनकी सेवा करने की इच्छा है।

उतारें हम अपने घरों, तब मुकुन्द दास कहे वचन।
इन सेवा हमारी भली करी, पीठ दिखाई इन।।२१।।

मैं इन्हें अपने घर ठहाराना चाहता हूँ। यह सुनते ही

मुकुन्ददास जी भय से काँप उठे और कहने लगे कि नहीं महाराज! इन्होंने तो पहले ही मेरी बहुत अच्छी सेवा की है, यह देखिए मेरी पीठ। ऐसा कहकर उन्होंने अपने वस्त्र हटाकर पीठ दिखायी।

देख पीठ भावसिंह को, बड़ा जो हुआ दुख।
धक्का दे उठाया दज्जाल, बुरी गारी दई मुख।।२२।।

भावसिंह ने जब घावों से भरी हुयी मुकुन्ददास जी की पीठ को देखा, तो उन्हें बहुत अधिक दुःख हुआ। उन्होंने अपने मुख से रामदास महन्त को गन्दी गाली देते हुए धक्का देकर भगा दिया।

जो मेरे इहां आवत, ताकी ऐसी सेवा करत।
निकसो हमारे डेरा से, जाओ देस में तित।।२३।।

भावसिंह कहते गये– मेरे यहाँ जो साधु–महात्मा आते हैं, तू उनकी ऐसी सेवा करता है। तुम अभी मेरे महल से निकल जाओ और किसी दूसरे देश में चले जाना। यहाँ तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं है।

मुकुन्द दास की निसां करी, प्रस्न पूछे पण्डितन।
करो इनका जवाब, होए दिल रोसन।।२४।।

भावसिंह ने सम्मानपूर्वक मीठे वचनों से मुकुन्ददास जी को सान्त्वना दी और पत्र में लिखे हुए प्रश्नों को पण्डितों से पूछा। उन्होंने पण्डितों से कहा कि मुझे इसका उत्तर दो, जिससे मेरे हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो।

आया ना जवाब उनों को, निन्दा लगे करनें।
भावसिंहे बरजिया, आवत ना जवाब तुम्हें।।२५।।

उन पण्डितों में से किसी को जब एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं आया, तो वे निन्दा करने पर तुल गए। भावसिंह ने उन्हें रोकते हुए कहा कि तुम तो निन्दा इसलिए कर रहे हो क्योंकि तुम्हें उत्तर नहीं आता।

कहया मुकुन्द दास नें, पंडित पूछें जो प्रस्न।
मैं ताको उत्तर देऊं, इनका मनाऊं मन।।२६।।

मुकुन्ददास जी ने राजा भावसिंह से कहा कि ये पण्डितगण जो भी प्रश्न पूछना चाहें, पूछ सकते हैं। मैं इनके सभी प्रश्नों का उत्तर देकर इनके मन को सन्तुष्ट कर सकता हूँ।

मैं पूछों जो इनको, ए ताको दें बताए।
जो हारे दोऊ मिने, सो पनही बांध के फिराए।।२७।।

और मैं जो भी प्रश्न पूछूँ, उसका उत्तर ये लोग दें। हम दोनों में जो भी हार जाएगा, उसके गले में जूते की माला डालकर नगर में घुमाया जाएगा।

प्रस्न असी पंडितन लिखे, तेईस मुकुन्द दास।
पन्द्रह दिन मोहलत दई, क्यों ए होए विस्वास।।२८।।

पण्डितों ने अस्सी (८०) प्रश्न लिखे और तेइस (२३) प्रश्न मुकुन्ददास जी ने लिखे। कुल पन्द्रह दिन की छूट दी गयी, जिससे इतनी अवधि में वे अपना उत्तर तैयार कर सकें। ऐसा इसलिए किया गया, ताकि पण्डितों को विश्वास हो जाए।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण का आशय यह है कि पन्द्रह दिन की अवधि देने से पण्डितों को विश्वास हो जाएगा कि उनके साथ कोई छल नहीं किया जा रहा,

बल्कि उत्तर देने के लिए उन्हें पर्याप्त समय दिया जा रहा है।

पंडित रोज पावत, रूपैया दस बीस।

जब उत्तर देओगे प्रस्न का, तब हम करें बकसीस।।२९।।

पण्डित लोग प्रतिदिन राजा से दस–बीस रूपये दक्षिणा में पाया करते थे, किन्तु महाराज ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि जब आप लोग इनके प्रश्नों का उत्तर देंगे, तभी मैं आपको दक्षिणा दूँगा।

मुकुन्ददास ने उसी दिन, प्रस्न खोल किए साफ।

देओ उत्तर हमारे प्रस्न का, करो भावसिंह इन्साफ।।३०।।

मुकुन्ददास जी ने पण्डितों द्वारा पूछे गए अस्सी प्रश्नों का उसी दिन स्पष्ट उत्तर दे दिया और राजा भावसिंह से

कहा कि महाराज! मेरे प्रश्नों का उत्तर दिलाकर मेरे साथ न्याय कीजिए।

उत्तर तो आवे नही, तब रात को किया विचार।

चल आए मुकुन्द दास पे, कहे हम पर होत है मार।।३१।।

सभी पण्डितों ने मिलकर बहुत प्रयास किया, लेकिन किसी भी पण्डित को एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं सूझा। तो वे आपस में विचार करके रात्रि के समय मुकुन्ददास जी के पास आए और बोले कि हमें तो इस तरह से "भूख की मार" झेलनी पड़ रही है।

जो स्वामी जीयें यों ही कहया, के रोटी भानों पंडितन।

तो हमारा क्या चारा, सन्तोष पकड़ें मन।।३२।।

यदि आपके स्वामी जी ऐसा ही कहते हैं कि पण्डितों

को खाने के लिए रोटी न दो, तो इसमें हमारा कोई वश नहीं चल सकता। हम अपने मन में सन्तोष लेकर भूखे रहकर ही गुजारा कर लेंगे।

ना तो हमारा छुटकारा करो, हम हारे दस बेर।
तब मुकुन्ददास नें कहया, हम कहेंगे फेर।।३३।।

यदि ऐसा नहीं है तो हमें शास्त्रार्थ की शर्त से छुटकारा दिला दीजिए। हम लिखकर देते हैं कि हम आपसे दस बार हार चुके हैं। तब मुकुन्ददास जी ने कहा कि मैं पुनः महाराज से कहूँगा।

तब कहया भावसिंह को, क्या ए उत्तर दें प्रस्न।
ए तो लीला अखण्ड की, इनका ना पोहोंचे मन।।३४।।

तब मुकुन्ददास जी ने भावसिंह से कहा कि बेचारे ये

पण्डित भला इन प्रश्नों का उत्तर क्या दे सकते हैं? इन प्रश्नों में तो अखण्ड धाम की लीला का वर्णन है, जहाँ किसी की बुद्धि जा ही नहीं सकती है।

तब आधा रोज छेकिया, आधे का हुआ हुकम।
प्रात को मिल के कहया, ए काम किया तुमारा हम।।३५।।

तब राजा की ओर से निर्देश दिया गया कि अब इनको प्रतिदिन मिलने वाली दक्षिणा में कटौती कर दी जाए और पहले की दक्षिणा का आधा हिस्सा ही दिया जाए। प्रातः के समय मुकुन्ददास जी ने पण्डितों से मिलकर कहा कि मैंने आप लोगों का काम कर दिया है। अब आप लोगों को पहले की दक्षिणा की आधी दक्षिणा मिल जाया करेगी।

दिन दूसरे तीसरे, नीके दिए कान।

तारतम नीके सुनिया, होए गई पहिचान।।३६।।

दूसरे–तीसरे दिन राजा ने अच्छी तरह से चर्चा सुनी, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें अक्षरातीत की पहचान हो गयी और उन्होंने श्रद्धान्वित होकर तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

भावार्थ– प्रकरण ५१, चौपाई ८५,८६,८७ में वर्णित है कि धाम धनी के प्रति विश्वास हो जाने के पश्चात् भावसिंह ने एक सन्देशवाहक श्रीजी के पास भिजवाया, जिसने मुकुन्ददास जी के हाथ से लिखे हुए पत्र को श्रीजी को दिया। श्रीजी उस पत्र को पढ़कर मन्दसौर से चलने के लिए तैयार हुए। इसी बीच, कुछ दिनों के पश्चात् भावसिंह ने मुकुन्ददास जी से आग्रह किया कि आप स्वयं जाकर श्रीजी को ले आइए, जो आगे की चौपाइयों

में दिया गया है।

औरंगाबाद और आकोट दोनों महाराष्ट्र के अन्तर्गत आते हैं तथा उनके बीच की दूरी लगभग २७४ कि.मी. है। मन्दसौर, उज्जैन मध्यप्रदेश के अन्तर्गत हैं, तथा बूँदी राजस्थान में है। मन्दसौर से औरंगाबाद की दूरी लगभग ५०० कि.मी. तथा मन्दसौर से उज्जैन की दूरी लगभग १५३ कि.मी. है। इसी प्रकार, उज्जैन से औरंगाबाद ४०० कि.मी. है। मन्दसौर से बूंदी की दूरी २६२ कि.मी. तथा औरंगाबाद से बूँदी की दूरी ८३१ कि.मी. है।

श्रावण के महीने में श्रीजी, मुकुन्ददास जी के साथ मन्दसौर से औरंगाबाद के लिए चले, किन्तु मन्दसौर से उज्जैन पहुँचने में बरसात के कारण २८ दिन लग गये। २२ दिन उज्जैन में रहने के बाद श्रीजी नोलाई आए। नोलाई में एक दिन ठहर कर नुनेरे गए। नुनेरे से १२ दिन

पश्चात् बुढ़ानपुर पहुँचे तथा बुढ़ानपुर से औरंगाबाद में भावसिंह के स्थान तक पहुँचने में १० दिन लग गए।

बुलाओ श्री जी साहिबजीय को, असवारी लेओ तुम।
लेओ हथिनी बूंदीय से, और घोड़ा देत हैं हम।।३७।।

भावसिंह ने मुकुन्ददास जी से कहा कि आप श्रीजी को तुरन्त बुलाकर लाइए। मैं वहाँ से श्रीजी को लाने के लिए घोड़े की सवारी देता हूँ और आप बूँदी से हथिनी ले लेना।

एक हवेली बूंदी में, रहनें को लिख दई।
तहां श्री बाई जी को राखियो, इन भांत सिखापन दई।।३८।।

भावसिंह ने बूँदी में एक हवेली खाली रखने के लिए अपने अधिकारियों को निर्देश देते हुए एक पत्र लिखा

और मुकुन्ददास जी को दे दिया, तथा मुकुन्ददास जी को अच्छी तरह से समझा दिया कि श्री बाईजी को बूँदी की हवेली में ठहराना।

मुकुन्द दास बिदा होए के, लई असवारी साथ।
तहां से पोहोंचे मन्दसोर, खरची दई थी हाथ।।३९।।

मुकुन्ददास जी भावसिंह से विदा होकर घोड़े की सवारी लेकर चल दिये और मन्दसौर पहुँच गए। भावसिंह ने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ का मार्ग व्यय भी दे दिया था।

आए मिले मन्दसोर में, ले चले श्री जी को।
आए पोहोंचे औरंगाबाद, भई मुलाकात हवेली मों।।४०।।

मुकुन्ददास जी मन्दसौर में आकर श्रीजी से मिले और

उन्हें साथ लेकर औरंगाबाद पहुँचे, जहाँ हवेली में भावसिंह से मुलाकात हुई।

भावसिंह आए के, लगा दोऊ कदम।

देख दीदार इन समें, कृत कृत जानी आतम।।४१।।

भावसिंह ने आकर श्रीजी के दोनों चरणों में अपना सिर रख दिया। धनी का दीदार करके उन्होंने स्वयं को धन्य-धन्य माना।

लगा सेवा करनें, उच्छव रसोई जब।

दई जागा हवेली अपनी, भई सेवा इनकी तब।।४२।।

राजा भावसिंह ने अपनी हवेली में श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ को ठहराया और शुद्ध हृदय से सबकी सेवा करने लगे। सुन्दरसाथ के लिए प्रीतिभोज के उत्सव होने

लगे। इस प्रकार सेवा में किसी भी प्रकार की कमी नहीं रहने दी गयी।

सुन नरसैयां के सब्द कीर्तन, तित हुआ मगन।
आप लगा नाचने, ज्यों करें मोमिन।।४३।।

नरसैंया के रचे हुए कीर्तनों को सुनकर भावसिंह इतने मग्न हो गये कि वे अन्य सुन्दरसाथ की तरह बेसुध होकर स्वयं नाचने लगे।

भगत भाव जोर रहे, सेवे परमेस्वर।
सक कछु न आवहीं, भगत भाव ऊपर।।४४।।

भावसिंह में भक्ति भाव प्रबल था। वे श्रीजी को साक्षात् परमात्मा मानकर सेवा कर रहे थे। उनके लिए भक्ति भाव सर्वोपरि था। मन में किसी भी तरह का संशय नहीं था।

तिन अपने अंदर, पधरावत श्री राज।

रास लीला के किरंतन, राजी होवे इन काज।।४५।।

वे अपने महल के अन्दर श्रद्धाभाव से धाम धनी को पधराते थे। रास लीला के कीर्तनों को सुनकर वे बहुत ही आनन्दित हुआ करते थे।

जब बात कही कुरान की, तब इन किया विचार।

ए साहिदी क्यों पावहीं, इनका करो करार।।४६।।

जब श्रीजी ने कुरआन के प्रसंगों की चर्चा की तो भावसिंह ने विचार करके कहा कि इसका आप निर्णय कीजिए कि जो आप कह रहे हैं, इसकी साक्षी कहाँ है?

भावार्थ– श्रीजी ने कुरआन के उदाहरण देकर भावसिंह को बताया कि जिस तरह से हिन्दू धर्मग्रन्थों में मुझे विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप कहा गया है, इसी

तरह से कुरआन-हदीसों में आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्जमां कहा गया है। कुरआन में परमधाम, व्रज, रास, तथा जागनी की भी साक्षी दी गयी है।

ए मुसलमान चार हैं, मेरे चाकर इत।

तिनको तुम समझाओ, मुकदमा कयामत।।४७।।

मेरे दरबार के चार अधिकारी मुसलमान हैं। आप उनको कुरआन के द्वारा कियामत के जाहिर होने का प्रसंग समझा दीजिए।

तब मैं औरंगजेब सों, बांध के कमर।

लड़ों वास्ते दीन के, सिर सोंप्या इन बात पर।।४८।।

तो मेरा शिर आपके चरणों में समर्पित हो जाएगा और मैं धर्म की रक्षा के लिए औरंगज़ेब से युद्ध करने के लिये

तैयार हो जाऊँगा।

तब श्री जी साहिब जी ऐं कह्या, सोंपो हमको मुसलमान।
तिनको हम समझावहीं, वे ल्यावे ईमान।।४९।।

तब श्रीजी ने भावसिंह से कहा कि अपने उन मुस्लिम अधिकारियों को मेरे पास भेज दो। उनको मैं कुरआन की चर्चा से समझा दूँगा। तब वे मेरे कथनों पर अटूट विश्वास ले आयेंगे।

वे कहें तुमको तहकीक, तुम्हारा इसलाम।
कुरान तरफ तुम्हारे, तुम कम्मर बांधो दीन के काम।।५०।।

और वे ही तुम्हें कहेंगे कि आपके निजानन्द का मार्ग ही वास्तविक इस्लाम का मार्ग है और कुरआन के सारे गुह्य भेद आपके पास हैं। अब आप सत्य धर्म की रक्षा के लिए

औरंगज़ेब से लड़ने के लिए तैयार हो जाइए।

ए बात मानी भावसिंह ने, मेरे मन बरहक।

तुम इन पर मेहनत करो, ए बात बड़ी बुजरक।।५१।।

राजा भावसिंह ने यह बात मान ली और कहा कि धाम धनी! मेरे मन में तो किसी तरह का संशय है ही नहीं। आप इनको कुरआन से समझाने का प्रयास कीजिए, क्योंकि इससे वेद और कतेब का एकीकरण हो जाएगा, जो बहुत बड़ी गरिमामयी बात है।

ए तहकीक कर उठे, होने लगी चरचा तिन से।

नित आवें दोए बखत, रहे इन काम में।।५२।।

श्रीजी और भावसिंह के बीच इस प्रकार का निश्चय हो जाने के पश्चात् कुरआन पक्ष की चर्चा प्रारम्भ हो गयी।

राजा भावसिंह के मुस्लिम अधिकारी दोनों समय चर्चा सुनने आने लगे। उनके लिए यही मुख्य कार्य रह गया।

भावार्थ– राजा भावसिंह ने अपने चारों मुस्लिम अधिकारियों को चर्चा के अतिरिक्त अन्य सभी कार्यों से छुट्टी दे दी। इस चौपाई के चौथे चरण का यही आशय है।

इन समें भट्ट भवानी, था उदेयपुर का मिलाप।
सो इत आए मिल्या, थीं भवानी प्रसन्न आप।।५३।।

इस समय भवानी भट्ट श्रीजी के चरणों में आए। वे पहले उदयपुर में धाम धनी से मिल चुके थे। इनके ऊपर भवानी की विशेष कृपा थी।

बुधगीता बुध स्तोत्र, ए ल्याया दखिण से।
इन समें मुजरा किया, सुख पाया इन में।।५४।।

भवानी भट्ट उदयपुर से दक्षिण भारत चले गए थे। वहाँ से वे बुद्ध गीता और बुद्ध स्तोत्र के ग्रन्थ ले आए। औरंगाबाद में आकर जब उन्होंने श्रीजी का दर्शन किया, तो उनके हृदय को बहुत अधिक सुख मिला।

भावार्थ– जिस लघु ग्रन्थ में किसी आराध्य की स्तुति की जाती है, उसे स्तोत्र ग्रन्थ कहते हैं, और यह आराध्य के नाम से ही जाना जाता है। बुद्ध गीता और बुद्ध स्तोत्र ग्रन्थ में भी विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप की पहचान दर्शायी गयी है।

नित चरचा में बांचन, आवे करन दीदार।

कछुक पेहेचान तारतम, दई धनी निरधार।।५५।।

वे प्रतिदिन चर्चा में बुद्ध गीता एवं बुद्ध स्तोत्र का पाठ करते एवं धनी का दर्शन करने आते थे। धाम धनी ने

तारतम ज्ञान द्वारा उन्हें अपनी थोड़ी–सी पहचान दे दी थी।

इन समें अव्वल खान, करने आया दीदार।
था उदेयपुर का मिलाप, इन पेहेचाने परवरदिगार।।५६।।

इस समय अव्वल खान श्रीजी का दर्शन करने आये थे। वे उदयपुर में पहले तारतम ज्ञान ग्रहण कर चुके थे और आते ही इन्होंने परवरदिगार अपने धाम धनी को पहचान लिया।

जहान महम्मद मिहीन खाँ, ए तिनको सुनाई कान।
तिनको बुलाए ल्याइया, और करने लगे पेहेचान।।५७।।

अव्वल खान ने जहान मुहम्मद और महीन खान को श्रीजी के बारे में बताया तथा चर्चा सुनने के लिए बुलाकर

लाये। दोनों ही चर्चा के द्वारा श्रीजी के स्वरूप की पहचान में लग गए।

मिहीन को ईमान आइया, ए ताबे हुआ तब।
दज्जाल सों लड़ने लगा, चाही लेने सोभा अब।।५८।।

महीन खान को चर्चा सुनते ही कियामत तथा इमाम महदी के प्रकटीकरण के ऊपर पूरा विश्वास आ गया, और वह तभी श्रीजी की आज्ञा से बँध गया। वह खुदा की राह में बाधक दज्जाल से युद्ध करने लगा। उसके मन में, स्वयं को धनी पर न्योछावर करके, शोभा लेने की इच्छा थी।

कहार बानों में पठान, चली चरचा तिन में।
सनंधें सुनी जहान महम्मदें, क्यों ए पेहेचान होए इनसें।।५९।।

कहारबान पठानों से श्रीजी की कुरआन के ऊपर चर्चा हुई। जहान मुहम्मद ने सनद ग्रन्थ की चर्चा सुनी। वह चाहता था कि किसी भी तरह से उसे सत्य की पहचान हो जाए।

भावार्थ– कहारबान पठानों की एक जाति है, जो प्रायः व्यापार किया करते थे।

एक जहान महम्मद को, असलू अंकूर ईमान।

था आप तमाम तपसीर, पढ़ों में आरबी खान।।६०।।

जहान मुहम्मद के अन्दर परमधाम का अँकुर था तथा अल्लाह तआला पर अटूट ईमान था। कुरआन का सम्पूर्ण अर्थ उसे याद था और पढ़े–लिखे लोगों में वह आरबी खान के नाम से जाना जाता था।

देता तालीम सबन को, जेते रहें पठान।

किन किन सुनी हकीकत, कहे बुरा भला अनुमान।।६१।।

जहान मुहम्मद वहाँ रहने वाले सभी पठानों को कुरआन की तालीम दिया करता था। जिस–जिस ने यह सुना कि हमारा उस्ताद जहान मुहम्मद श्रीजी की चर्चा सुनने जाता है, वे उसे अनुमानपूर्वक भटका हुआ मानकर भला–बुरा कहने लगे।

भवानी भट्ट ड़ेढ पहर लों, कथा कह होऐ फारग।

तब श्री राज आरोग के, पौढ़े सेज बुजरक।।६२।।

भवानी भट्ट प्रातः समय १० बजे तक बुद्ध गीता और बुद्ध स्तोत्र की कथा कहकर निवृत्त हो जाते थे। तब श्री प्राणनाथ जी भोजन करने के पश्चात् सुन्दर सेज्या पर लेटते हैं।

जब दिन पीछला, घड़ी रहत है सात।

तब श्री राज उठत है, करें साथ सों बात।।६३।।

जब सायं लगभग ३ बजकर २२ मिनट होते हैं, तब श्रीजी सैय्या से उठते हैं और सुन्दरसाथ से बातें करते हैं।

चरचा होए अत बड़ी, हुआ सिनगार का बखत।

संझा को आरती होवहीं, सब साथ खड़ा देखत।।६४।।

उस समय श्रीजी के मुखारविन्द से बहुत ही प्रभावपूर्ण चर्चा होती है। साढ़े ४ बजे के आसपास श्रीजी, युगल स्वरूप की शोभा-श्रृंगार का वर्णन करते हैं। सन्ध्या के समय लगभग ६ बजे श्रीजी की भावभीनी आरती उतारी जाती है, जिसे सब सुन्दरसाथ खड़े होकर देखते हैं।

एक तरफ लाल दास, दूजी भवानी भट्ट।
चरचा कुरान भागवत की, होत है लट पट।।६५।।

श्रीजी के एक तरफ लालदास जी बैठे होते हैं, तो एक तरफ भवानी भट्ट। श्रीजी के मुखारविन्द से कुरआन और भागवत की रसमयी चर्चा होती है, जिसे सुनकर सुन्दरसाथ आनन्द में विभोर हो जाते हैं।

श्री राज करत हैं मायनें, सुनने वाला साथ।
कोई सवाल करत हैं, कोई बानी लेवें हाथ।।६६।।

श्री प्राणनाथ जी कुरआन और भागवत के रहस्यों को स्पष्ट करते है, जिसे सुन्दरसाथ ध्यानपूर्वक सुनते हैं। चर्चा के बीच में, कोई-कोई सुन्दरसाथ जिज्ञासावश प्रश्न भी कर देते हैं, तो कोई सुन्दरसाथ अपने हाथों में तारतम वाणी लिये रहते हैं।

अव्वलखां ले आइया, जहान महम्मद को।

चरचा सुनी मास दोए लों, घायल भया तिन मों।।६७।।

अव्वल खान, जहान मुहम्मद को लेकर आए। जहान मुहम्मद ने दो महीने तक श्रीजी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी और चर्चा से वह बहुत ही प्रभावित हुआ।

पर था अरध पक्का, सुनी लीला फिरी सुरत।

लाल उत्तम सुनाई, लड़ाई भई उन बखत।।६८।।

किन्तु अभी वह परिपक्व नहीं हो पाया था। जल्दबाजी में लालदास जी और उत्तमदास जी ने जहान मुहम्मद से परमधाम की लीला का वर्णन कर दिया, जिससे उस समय उनके बीच लड़ाई हो गयी और जहान मुहम्मद का ध्यान चर्चा सुनने से पूर्णतया हट गया।

भावार्थ– कुरआन के कथनों से अल्लाह की सूरत का

वर्णन अल्लाह के सिवाय कोई नहीं कर सकता। ऐसा कहने का प्रयास करने वाला व्यक्ति काफिर कहलाता है।

लालदास जी और उत्तमदास जी ने परमधाम की लीला का वर्णन करते समय युगल स्वरूप की शोभा का वर्णन कर दिया था। इसी बात पर जहान मुहम्मद को गुस्सा आ गया था।

जात रहया घर को, कबहूं ना लेऊं जल।

मैं दो मास मेहनत करी, भई ना रूह निरमल।।६९।।

अब मैं घर जा रहा हूँ। मैं कभी यहाँ का जल भी ग्रहण नहीं करूँगा। मैंने यहाँ की चर्चा में दो महीने तक परिश्रम किया, फिर भी मेरी आत्मा निर्मल नहीं हुई।

उत्तमदास अरज करी, बुलाए ल्याऊं महम्मद जहान।

बरजा श्री जी साहिब जी ए, इनने सुनी चरचा कान।।७०।।

उत्तम दास जी ने प्रार्थना की कि हे धाम धनी! यदि आपकी स्वीकृति हो तो मैं जहान मुहम्मद को बुलाकर लाऊँ। तब श्रीजी ने उसको मना किया और कहा कि उसने मेरी चर्चा सुन रखी है।

सो दुचती होए गई, रहि ना सके घर में।

प्रात को उठ दौड़ेगा, करने लगे दिल सें।।७१।।

तुमने जल्दबाजी में युगल स्वरूप की शोभा का जो वर्णन कर दिया, उससे उसके मन में यह संशय पैदा हो गया कि ये लोग कुरआन के विपरीत अपने मन से कल्पना करके कह रहे हैं, किन्तु अब वह अपने घर में भी शान्ति से बैठ नहीं सकेगा। वह कल प्रातःकाल यहाँ

अवश्य आयेगा। यह सुनकर सब सुन्दरसाथ उसके विषय में ऐसा ही विचार करने लगे।

दिन दूसरे आइया, श्री जी साहिब जी के पास।
मुझे क्यों न समझावत, मुझे है कदमों की आस।।७२।।

वह दूसरे दिन श्रीजी के पास भागा-भागा आया और कहने लगा- आप मुझे सच्चाई क्यों नहीं समझाते हैं? मुझे आपके चरणों की ही आशा है।

तब श्री जी साहिब जीयें कहया, एक आठ दिन देओ चित।
सो भी एक पहर, देख कैसा होवे इत।।७३।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने उससे कहा कि तुम एक-आठ दिनों तक एकाग्र मन से प्रतिदिन एक प्रहर तक श्रद्धापूर्वक चर्चा सुनो। उसके बाद देखो, कि तुम्हें कैसा

अनुभव होता है?

आया चरचा सुनने, सवाल किया एक इत।

मुरदे क्यों कर उठेंगे, बखत रोज कयामत।।७४।।

श्रीजी की चर्चा के प्रारम्भ होने के समय वह आया और बैठ गया। उसने एक प्रश्न किया कि कियामत के समय मुर्दे किस प्रकार जीवित होकर उठेंगे?

दिया जवाब श्री जी साहिब जी ने, काढ़ दिखाया बीच फिरकान।

दुनी करी किन वास्ते, सो कर दई पेहेचान।।७५।।

श्री प्राणनाथ जी ने कुरआन के अन्दर से वह पारा निकाल कर उसे दिखाया और यह समझाते हुए पहचान करायी कि यह संसार किनके लिये बनाया गया है?

भावार्थ– क़ियामत से आशय का प्रमाण सूरः क़ियाम में है। इस शब्द क़ियाम से अभिप्राय रूकने से है। इस चौपाई में श्रीजी ने प्रत्युत्तर में कहा कि विभिन्न फिरकां समुदायों में प्रचलित महाप्रलय की अवधारणा भिन्न – भिन्न है। वास्तव में प्रलय या महाप्रलय दो प्रकार की है– एक सुगरा (छोटी) व दूसरी कुबरा (बड़ी) क़ियामत। कुरआन के २८, २२, १७वीं सूरः में इसकी पहचान दी गयी है।

इसक रबद के वास्ते, उतर आए मोमिन।
नूर जलालें मांगिया, देखों इस्क रूहन।।७६।।

परमधाम में होने वाले इश्क रब्द के कारण ही आत्मायें इस नश्वर जगत में आयीं। इसके साथ ही अक्षर ब्रह्म ने भी धाम धनी से परमधाम में आत्माओं के साथ होने

वाली प्रेममयी लीला को देखने की इच्छा की।

तिस वास्ते दिखाइया, दो तकरार दो बेर।

प्रात को ए तीसरा, रचा इण्ड जो फेर।।७७।।

इसलिये लैल–तुल–कद्र के दो प्रसंगों में , अर्थात् कालमाया एवं योगमाया के ब्रह्माण्ड व्रज और रास की ये दो लीलायें दिखायी गयीं, पुनः ज्ञान का उजाला करने के लिये यह तीसरा ब्रह्माण्ड पुनः बनाया गया है, जिसे जागनी का ब्रह्माण्ड कहते हैं।

भावार्थ– रास–रात्रि के पश्चात् होने के कारण इस जागनी ब्रह्माण्ड को प्रातः के उजाले का ब्रह्माण्ड कहते हैं। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि व्रज एवं रास में धाम धनी की पूर्ण पहचान नहीं थी। जिस ब्रह्माण्ड में तारतम ज्ञान के उजाले में प्रियतम परब्रह्म की

यथार्थ (हकीकत–मारिफत की) पहचान हो जाये, वह फज्र (प्रातःकाल) का ब्रह्माण्ड कहलाता है।

रास लीला खेल के, आए बरारब स्याम।
सो कागद कलाम अल्लाह का, ल्याया महम्मद अलेहु सलाम।।७८।।

रास लीला करने के पश्चात् श्री राज जी के जोश की शक्ति अक्षर ब्रह्म की आत्मा के साथ अरब में मुहम्मद (सल्ल.) के रूप में अवतरित हुई, जिसने खुदाई इल्म कुरआन को संसार में प्रकट किया।

करी सरत दसहीं ग्यारहीं, हम आवेंगे फेर।
जो रूहें थी ब्रज रास में, सो आवें दूजी बेर।।७९।।

मुहम्मद (सल्ल.) ने अपने चारों यारों से यह वायदा किया कि मैं (दूसरी एवं तीसरी सूरत के रूप में) दसवीं

तथा ग्यारवहीं सदी में पुनः आऊँगा। उस समय जिन आत्माओं ने व्रज एवं रास में लीला की थी, वे पुनः इस ब्रह्माण्ड में दूसरी बार आयेंगी।

तब काजी होए के, हिसाब लेवें हक।

सिफायत जो मोमिन की, करें महम्मद बुजरक।।८०।।

उस समय स्वयं परब्रह्म आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब्बुजमां के रूप में सबका काजी (न्यायाधीश) बनकर न्याय करेंगे और मुहम्मद साहिब ब्रह्मसृष्टियों की अनुशंसा (सिफारिश) करेंगे।

भावार्थ– सही बुखारी शरीफ जिल्द तीसरी पृ.सं. ६६४/९ में कहा गया है कि कियामत के समय में तुम अल्लाह का दीदार करोगे। मुहम्मद साहिब ने इसके सम्बन्ध में अपने साथियों से कहा था कि जब कियामत

का समय आयेगा, तो मैं अल्लाह तआला से तुम्हारी अनुशंसा (सिफारिश) करके तुम्हें अखण्ड बहिश्तें दिलाऊँगा। कुरआन-हदीसों में कही हुई इन बातों पर काफिर लोग हँसी उड़ाया करते थे कि ये सारी बातें गप्पें हैं, किन्तु अब वे सारी बातें सत्य प्रमाणित हो चुकी हैं। तारतम ज्ञान के प्रकाश में इमाम महदी सभी मत-पन्थों की भ्रान्तियों को मिटाकर एक सत्य सिद्धान्त की स्थापना करेंगे। इसी को इस संसार में न्याय करना कहा गया है।

अकलें भई लोक में, सब होवे एक दीन।

चौदह तबकों मिनें, सब ल्यावें आकीन।।८१।।

संसार में जाग्रत बुद्धि एवं निज बुद्धि के तारतम ज्ञान का प्रकाश फैल जाने से एक सत्य धर्म की स्थापना हो

जाएगी और चौदह लोकों के प्राणियों में एक परब्रह्म पर अटूट विश्वास हो जाएगा।

अक्षर अक्षरातीत बिन, रहे न कोई और।
नूर और नूरतजल्ला, जाहिर होवे सब ठौर।।८२।।

उस समय अक्षर और अक्षरातीत की पहचान सारे संसार में फैल जाएगी और संसार में सबके दिल में इनके अतिरिक्त अन्य किसी देवी-देवता के लिए स्थान नहीं रहेगा, अर्थात् अन्य किसी की भक्ति नहीं होगी।

जब नींद उड़ी नूरजलाल की, उठ बैठे अक्षर।
तब धाम को याद करें, चित चुभें योंकर।।८३।।

जब अक्षर ब्रह्म की निद्रा हट जाएगी, तब वे जाग्रत हो जायेंगे, और जैसे ही वे परमधाम की लीला को याद

करेंगे, वैसे ही उनके हृदय में कालमाया की जागनी लीला वाला यह ब्रह्माण्ड बस जायेगा अर्थात् अखण्ड हो जायेगा।

मोमिन मिलावे को, जब ए करें याद।
तब आठों भिस्त की, उठ बैठी बुनियाद।।८४।।

जब अक्षर ब्रह्म मूल मिलावे में धनी के सम्मुख बैठी हुयी ब्रह्मसृष्टियों की शोभा को याद करेंगे, उसी समय आठों बहिश्तें योगमाया के ब्रह्माण्ड में अखण्ड हो जायेंगी।

भावार्थ– ब्रह्मसृष्टियों और श्यामा जी की तरह ही वर्तमान में अक्षर ब्रह्म और महालक्ष्मी की परात्म पर भी फरामोशी है। यह खेल तभी तक चल रहा है, जब तक अक्षर की निद्रा है। इस सम्बन्ध में कलश हिन्दुस्तानी में कहा है–

भगवान जी आए इत, जागवे को तत्पर।

हम उठसी भेले सब, जब जासी हमारे घर।।

क. हि. २०/३४

अर्थात् जब धाम धनी के दिल में खेल खत्म करने की इच्छा हो, तब श्यामा जी सहित सभी सखियों की फरामोशी हट जायेगी और वे परात्म में जाग्रत हो जायेंगी। इसके साथ ही अक्षर ब्रह्म और महालक्ष्मी भी अपनी परात्म में जाग्रत हो जायेंगे।

जाग्रत अवस्था में जब वे परमधाम की लीला को देखेंगे, तो कालमाया के ब्रह्माण्ड में होने वाली जागनी लीला की भी उन्हें याद आ जायेगी। परिणामस्वरूप, अक्षर ब्रह्म के हृदय में यह सारा ब्रह्माण्ड आठ बहिश्तों के रूप में अखण्ड हो जायेगा।

जो ईमान ल्याए के, सोवे बीच कबर।

सो चुभे नूर के चित में, भूले नही क्यों ए कर।।८५।।

जो तारतम वाणी (इल्म–ए–लदुन्नी) के प्रकाश में अक्षरातीत परब्रह्म पर अटूट विश्वास लायेंगे, तो इस शरीर और संसार में रहने पर भी वे युगल स्वरूप को भुला नहीं पायेंगे और महाप्रलय के पश्चात् अक्षर के हृदय में अखण्ड हो जायेंगे।

भावार्थ– शरीर और संसार (पिण्ड और ब्रह्माण्ड) एक कब्र है, जिसमें जीव के ऊपर बैठी हुयी आत्मा मूल घर और मूल तन को नहीं जानती। जीव को भी यह मालूम नहीं रहता कि वह कहाँ से आया है और महाप्रलय के बाद कहाँ जायेगा? एक अक्षरातीत पर विश्वास लाने से पहले जीव इस शरीर एवं संसार में रह ही रहा था, किन्तु जब वह तारतम ज्ञान के उजाले में अपने हृदय में युगल

स्वरूप को बसा लेता है, तो निश्चित है कि उसका जीव अखण्ड बहिश्त का अधिकारी बन जाता है। इस चौपाई के दूसरे चरण में कब्र में सोने से तात्पर्य शरीर और संसार में रहने से, अर्थात् जीवन यापन करने से, है।

यों उठेंगे मुरदे, कबरों से कयामत।
तिन समें की रामत, करी महम्मद इत।।८६।।

इसे ही कियामत के समय कब्रों से मुर्दे का उठना , अर्थात् शरीरों में विद्यमान जीवों का अपने हृदय में परब्रह्म को (ज्ञान और प्रेम से) बसाना, कहा गया है। आखिरी मुहम्मद श्री प्राणनाथ जी इस समय वही जागनी लीला कर रहे हैं, अर्थात् कब्रों से मुर्दों को जगा रहे हैं।

ए दरवाजा खोलते, जोस आया जोर।

तब दज्जाल कांपया, करनें लगा सोर।।८७।।

जब श्रीजी अखण्ड ज्ञान का प्रकाश कर रहे थे, तब उनके मुखारविन्द पर बहुत अधिक जोश की आभा झलझलाने लगी। उस समय जहान मुहम्मद के अन्दर विद्यमान ज्ञान का अभिमान रूपी दज्जाल काँपने लगा और शोर करने लगा।

भावार्थ– ज्ञान का अहं भी एक प्रकार का अज्ञान ही है। जब यह अपनी मान्यता को खण्डित होते हुये देखता है तो तिलमिलाने लगता है, इसे ही दज्जाल का शोर मचाना कहा गया है। किन्तु जब उसे ऐसा लगता है कि मेरी मान्यता अब खण्डित होकर ही रहेगी, तो इसे दज्जाल का काँपना कहते हैं।

ल्याया दिन तीसरे, जहान महम्मद ईमान।

हकीकत मारफत की, होए गई पेहेचान।।८८।।

तीसरे दिन जहान मुहम्मद को श्रीजी के कथनों पर अटूट विश्वास हो गया तथा उसे परमधाम की हकीकत और मारिफत की स्पष्ट पहचान हो गयी।

आवत जहान महम्मद, और अव्वल खान।

और मिहीन आवहीं, बैठे चरचा में नित्यान।।८९।।

अब श्रीजी की चर्चा में जहान मुहम्मद, अव्वल खान, और मिहीन खान नित्य ही बैठकर रसपान किया करते थे।

और मुसलमान आवहीं, सब चरचा सुने।

तामें जहान महम्मद को, जोस आवे इन समें।।९०।।

इसके अतिरिक्त बहुत से मुसलमान आकर श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा का रसपान किया करते थे। जब श्रीजी चर्चा करते थे, तब जहान मुहम्मद को बार-बार जोश आ जाता था।

श्री राज पकड़े इनको, सिर पर धरे हाथ।

दिलासा बड़ी करे, तूं है हमारा साथ।।९१।।

तब धाम धनी जहान मुहम्मद को पकड़कर उसके सिर पर अपना वरद् हस्त रखते हैं, और उसे बहुत अधिक सान्त्वना देते हैं कि तू परमधाम की ब्रह्मसृष्टि है।

फेर सावधान होवहीं, जब सुने नाम लाहूत।

तब फेर गिरे जोस में, याद करे कयामत।।९२।।

ऐसा सुनकर वह पुनः सावधान हो जाता है, किन्तु जब चर्चा में लाहूत (परमधाम) का नाम सुनता है, तब जोश में पुनः गिर जाता है और कियामत तथा इमाम महदी के प्रकट होने को याद करने लगता है।

यों चरचा रात को होवहीं, जब रहे पीछली घड़ी चार।

तब साथ की बिदा होए, फेर करे विचार।।९३।।

इस प्रकार, रात्रि के समय प्रारम्भ होने वाली चर्चा, प्रातः के साढ़े चार बजे तक चलती रहती है। पुनः सुन्दरसाथ चर्चा स्थल से विदा होते हैं और आपस में बैठकर चर्चा की बातों पर विचार करते हैं।

तब श्री राज आरोग के, हिंडोले खाट पोढ़त।

पीछे साथी इन समें, रास की रामतें गावत।।९४।।

तब श्री प्राणनाथ जी अल्पाहार लेकर झूले वाले पलंग पर लेटते हैं और सुन्दरसाथ रास की रामतों का गायन कर आनन्दित होते हैं।

यों करते भोर होवहीं, लीला भई मास चार।

नित्याने उच्छव कीर्तन, हुआ साथ अंग करार।।९५।।

इस प्रकार प्रातःकाल हो जाता है। इस तरह की जागनी लीला ४ मास तक औरंगाबाद में चली। प्रतिदिन उत्सव और कीर्तन हुआ करते, जिससे सुन्दरसाथ को बहुत अधिक आनन्द का अनुभव हुआ।

पठान फते महम्मद, ए बात सुनी कान।

कह्या जहान महम्मद को, कर दे वैरागी की पेहचान।।९६।।

पठान फतह मुहम्मद ने जब यह बात सुनी कि जहान मुहम्मद एक हिन्दू वैरागी का शिष्य (शागिर्द) हो गया है, तो उसने जहान मुहम्मद से कहा कि तुम उस वैरागी की पहचान करा दो, जिनके ऊपर तुमने खुद को कुर्बान किया है।

चालीस हदीसें लिख दई, जो इनके करे मायने।

तो तहकीक जानियो, होवे खाविंद जमाने।।९७।।

पठान फतह मुहम्मद ने ४० हदीसें लिखकर जहान मुहम्मद को दीं और कहा कि यदि वे इसका अर्थ स्पष्ट कर दें तो मैं निश्चित रूप से मान लूँगा कि वे ही आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब्बुजमां हैं।

ल्याया हदीसें जहान महम्मद, कही आगे श्री जी साहिब।
तूं ही कर इनके मायनें, किल्ली रूह अल्ला की पावे जब।।९८।।

जहान मुहम्मद उन ४० हदीसों को श्रीजी साहिब के पास ले आया। तब धाम धनी ने उससे कहा कि तारतम ज्ञान (इल्मे लदुन्नी) पाकर क्या तू ही इनके अर्थ स्पष्ट नहीं कर सकता?

जब इनने तलब करी, किल्ली अल्ला कलाम।
तब जहान महम्मद को, भई पेहेचान इसलाम।।९९।।

जब जहान मुहम्मद ने श्रीजी से तारतम की इच्छा की, तब जहान मुहम्मद को इस्लाम (निजानन्द) की वास्तविकता की पहचान हो गयी।

तब सब खुल गई, हकीकत मारफत द्वार।

नजर भई बका मिने, किया दीदार परवरदिगार।।१००।।

तब जहान मुहम्मद ने ४० हदीसों के भेद स्पष्ट कर दिए। उन्हें परमधाम की हकीकत तथा मारिफत का भी भेद स्पष्ट हो गया। उनकी अन्तर्दृष्टि अखण्ड परमधाम में विचरण करने लगी और उन्होंने श्री राज श्यामा जी का प्रत्यक्ष दर्शन कर लिया।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाइयों के कथन से यह शंका होती है कि जब जहान मुहम्मद लगभग चार महीने से चर्चा सुन रहे थे, तो चालीस हदीसों को खोलने के लिए तारतम की क्या आवश्यकता पड़ी? यद्यपि जहान मुहम्मद कई मास से चर्चा सुन रहे थे, किन्तु वे अभी तक ज्ञान की मीठी लहरों में ही मग्न थे। सम्पूर्ण ज्ञान को प्रकट वाणी में लिखित ६ चौपाइयों में संक्षिप्त कर दिया

गया है। इन ६ चौपाइयां से उन्हें ज्ञान का वह सूत्र मालूम हो गया, जिसके द्वारा उन्होंने उन ४० प्रश्नों की गुत्थी को आसानी से सुलझा दिया। उनके मन में श्रीजी के प्रति अटूट श्रद्धा बढ़ गयी, जिससे उनकी अन्तर्दृष्टि खुल गयी।

किन्तु यह ध्यान रखने योग्य विशेष तथ्य है कि श्रीजी आजकल की प्रचलित रूढ़ीवादी परम्परा के अनुसार किसी को कान में तारतम नहीं कहा करते थे। परमात्मा का नाम या मन्त्र, छिपाने के लिए नहीं बल्कि उजागर करने के लिए होता है। किसी भी धर्मग्रन्थ में कान में मन्त्र कहने का विधान नहीं है। इस परम्परा की शुरूआत उस अन्ध युग में हुयी, जब कर्मकाण्डी ब्राह्माणों ने शूद्र और स्त्री को गायत्री या अन्य कोई भी मन्त्र देने का निषेध कर दिया। उन्होंने सोचा कि सार्वजनिक रूप से

कहने पर शूद्र और स्त्री भी सुन सकते हैं, इसलिए उन्होंने व्यक्तिगत रूप से अपने शिष्यों को कान में कहना शुरू कर दिया। दुर्भाग्यवश, तभी से "चींटी हार, ऊँट कतार" की तरह यह परम्परा निरर्थक ढोई जा रही है।

इस सम्बन्ध में यह तर्क दिया जाता है कि मन्त्र को सार्वजनिक रूप से देने पर मन्त्र की शक्ति घट जाती है, इसलिए उसे कान में ही कहना चाहिए।

प्रश्न यह है कि जिन मन्त्रों में परमात्मा की भक्ति का निर्देश दिया जाता है, उन मन्त्रों को कहने से उनकी शक्ति कैसे घट जायेगी?

तारतम धनी की पहचान कराता है। हरिद्वार में अवश्य पद्धति के रूप में पूछे जाने पर "मन्त्र तारतम सोय" कहा गया है, किन्तु यथार्थता यह है कि श्रीजी के मुखारविन्द से वाणी चर्चा सुनकर जिन्होंने उनके ऊपर अटूट विश्वास

रख लिया, उनको ही बीतक के अनेक प्रसंगो में तारतम लेने वाला कहा गया है। चारों वेदों या किसी आर्ष ग्रन्थ में कहीं भी ऐसा उल्लेख नहीं है कि कान में मन्त्र दिया जाए और उसमें फूँक मारी जाए।

रावण और कंस जैसों का नाम लेना तो कष्टकारी हो सकता है, किन्तु अक्षरातीत के धाम, स्वरूप, और लीला की पहचान कराने वाले तारतम को क्यों नहीं बोला जा सकता? यदि वेदों के गायत्री मन्त्र और कुरआन के कलमा को सार्वजनिक रूप से उच्चारित किया जा सकता है, तो तारतम का उच्चारण क्यों नहीं किया जा सकता? इस रूढ़िवादी परम्परा का पालन करके हम किस आधार पर दावा कर सकते हैं कि हमने कर्मकाण्ड और त्रिगुणात्मक बन्धनों को तोड़ दिया है?

तब गया फते महम्मद पे, एक पूछत तुमें सवाल।

जो इनका दे जवाब, होवे तेरा मुझ पर भाल।।१०१।।

जहान मुहम्मद, फतह मुहम्मद के पास गया और कहा कि मैं तुमसे एक प्रश्न पूछता हूँ। यदि तुम इसका उत्तर दे दोगे तो तुम्हारा मेरे ऊपर बहुत अहसान होगा।

खुदाए की सूरत का, मुझे दे उत्तर।

फरमाया फरमान हदीसों, कर मेरी जमा खातर।।१०२।।

मुझे इस बात का उत्तर दो कि कुरआन और हदीसों में खुदा की सूरत का वर्णन किया गया है या नहीं? मेरी खुशी के लिए उसकी साक्षी दो।

रूयेतरवी फिल लैलतुलम्याराज, ए कलाम बरहक।
के दिल तुमारे सक है, देओ जबाब माफक।।१०३।।

फतह मुहम्मद ने कहा कि कुरआन के पन्द्रहवें पारे में यह वर्णित है कि मैंने हक तआला को दो गोसे कमान की दूरी से देखा है। इसकी व्याख्या में तफ्सीर–ए–हुसैनी में कहा गया है कि मैंने हक तआला को रूह की आँखों से देखा है, यह बात निश्चित रूप से कही गयी है। तब जहान मुहम्मद ने पूछा– आप इसका उत्तर दीजिए। क्या आपके दिल में इस सम्बन्ध में कोई संशय है?

तब फते महम्मद कह्या, इनमें ना कछु सक।
जाहिर कर हम ना सकें, सरा जाहिर परस्त बुजरक।।१०४।।

तब फतह मुहम्मद ने कहा कि इसमें कोई भी शक नहीं है, किन्तु हम ज़ाहिर नहीं कर सकते। हम शरा–तोरा से

बँधे हुए हैं और यह हमारे लिए सर्वोपरि है।

सो हमको मारत, तिन वास्ते कह्यो न जाए।

हदीसों भए मायने, अब तुमारा क्या बसाए।।१०५।।

यदि हमने इस बात को जाहिर कर दिया, तो बादशाह हमें मार डालेगा। इसलिए हम वास्तविकता को कहने में असमर्थ हैं। जहान मुहम्मद ने कहा कि तुम्हारे द्वारा दी हुयी सारी हदीसों के अर्थ मैंने तुम्हें बता दिये हैं। अब इस सम्बन्ध में तुम्हारा क्या कहना है?

तब फते महम्मदें फेर कह्या, जोलो पातसाह न आवे बीच दीन।

तोलों आगा हम क्यों करें, पहले क्यों ल्यावे आकीन।।१०६।।

तब फतह मुहम्मद ने फिर कहा कि जब तक बादशाह स्वयं हकीकत के दीन की राह (निजानन्द) को न

पकड़े, तब तक हम स्वयं आगे नहीं आ सकते। हम उसके पहले कैसे विश्वास ला सकते हैं?

तब जहान महम्मदें कह्या, तुमारा ईमान ऊपर सुलतान।
ऐसा तुम क्यों कहों, जब देखो हक पेहेचान।।१०७।।

तब जहान मुहम्मद ने कहा कि तुम्हारा ईमान तो औरंगजेब बादशाह के ऊपर है। जब तुम्हें अल्लाह के स्वरूप की पहचान हो गयी है, फिर भी तुम ऐसा क्यों कह रहे हो?

ए खटपट भई आपस में, तब इनने छोड़ दिए पठान।
तुम मने करो जहान महम्मद, उत जावें नही निदान।।१०८।।

इस प्रकार उन दोनों में झगड़ा हो गया। तब जहान मुहम्मद ने पठानों का साथ छोड़ दिया। फतह मुहम्मद ने

पठानों से कहा कि तुम जहान मुहम्मद को मना करो कि वह उन हिन्दू वैरागियों के पास बिल्कुल न जाये।

मिल पठानो मनें किया, जहान महम्मद को सबन।
तूं क्यों वैरागी के कदमों लगे, तें क्या जान्या मोमिन।।१०९।।

सभी पठानों ने मिलकर जहान मुहम्मद को मना किया कि तूँ उस हिन्दू वैरागी के कदमों में सिर क्यों झुकाता है? तुमने उन्हें क्या मान लिया है?

लड़ाई होने लगी, सुनी श्री जी साहिब जी नें बात।
तब बरजा जहान महम्मद को, जिन तुम जिद करनें जात।।११०।।

इस पर जहान मुहम्मद से उनकी लड़ाई होने लगी। इस झगड़े की बात जब श्रीजी ने सुनी, तब उन्होंने जहान मुहम्मद को मना किया कि तुम मुसलमानों से झगड़ा न

किया करो।

एतो अमल दज्जाल, सो तो जाहिलों का बाप।

इनसों छले छूटिए, तुम जिन जोरा करो आप।।१११।।

इस समय शैतान का (आसुरी प्रवृत्ति वाले लोगों का) ही राज्य है, और वह मूर्ख एवं उद्दण्ड लोगों का पिता है। इनसे नीतिपूर्वक ही छुटकारा पाया जा सकता है। तुम्हें इनके साथ अपनी शारीरिक शक्ति से झगड़ा नहीं करना चाहिए।

भावार्थ– जहान मुहम्मद से जिन पठानों ने झगड़ा किया था, वे अत्यन्त ही मूर्ख और उद्दण्ड लोग थे। उन्हें धर्म और अध्यात्म के सच्चे स्वरूप से कुछ भी लेना–देना नहीं था। वे तो हमेशा किसी के बहकाने मात्र से ही लड़ने–मरने को तैयार रहते थे। इसलिए श्रीजी ने जहान

मुहम्मद को ऐसे लोगों से न उलझने की हिदायत दी है।

तब जहान महम्मदे कहया, मोहे दज्जाल लगा बरजन।
मैं तिनका कहया क्यों करूं, ईमान खतरा होवे मोमिन।।११२।।

तब जहान मुहम्मद ने कहा कि मुझे दज्जाल स्वरूप ये पठान यहाँ आने से रोक रहे थे। भला मैं उनके कहने पर क्यों चलूँ? मैं एक मोमिन हूँ और उनके दबाव में यदि आपके कदमों में न आऊँ, तो मुझे ईमान से गिरा हुआ कहा जाएगा।

मैं तो साहिब देखिया, जाहिर अपने नैन।
तहां खतरा होत है, ए मुखथे कहो न बेन।।११३।।

मैंने तो अपनी इन जाहिरी आँखों से आपको साक्षात् मालिक (अल्लाह तआला) के रूप में देखा है। आप अपने

मुख से कभी भी ऐसी बात न कहिये कि मैं किसी के डर से आपके पास आना बन्द कर दूँ। किसी के दवाब में आपके पास आने से रूक जाना मेरे ईमान में खतरा है।

भावार्थ– जहान मुहम्मद के इस कथन से धर्म के अग्रगण्य उन रूढ़िवादी लोगों को शिक्षा लेनी चाहिए जो श्री प्राणनाथ जी को सन्त, शिष्य, कवि, और आचार्य कहने में गौरव का अनुभव करते हैं।

पठानो परियान किया, जहान महम्मद डारे मार।
इन हमारे दीन से, छोड़ दिया वेहेवार।।११४।।

पठानों ने आपस में मिलकर यह विचार किया कि हम सभी मिलकर जहान मुहम्मद को मार डालें। इसने तो हमारे इस्लाम से सारा सम्बन्ध ही तोड़ दिया है।

पहले तो बैरागी से, करे लड़ाई जोर।

आपुस में सब मिल के, करने लगे सोर।।११५।।

सबसे पहले तो हम उस वैरागी से चलकर खूब लड़ाई करेंगे। इस प्रकार उन सभी ने आपस में मिलकर ऐसा निर्णय किया और मजहबी शोर-शराबा करने लगे।

तब रात को मिलके, आए जने दस बार।

श्री जी साहेब जी बैठे हते, आगे हुसेनी बाँचे उस्तवार।।११६।।

तब रात्रि के समय दस-बारह पठान मिलकर आये। उस समय श्रीजी चर्चा के लिए बैठे हुए थे। उनके आगे तफ्सीर-ए-हुसैनी रखी थी, जो दृढ़ श्रद्धा के साथ पढ़ी जा रही थी।

इत बैठी मजलस, भर के बाजू दोए।

मोमिनों आगे किताबें, रेहलों पर धरी सोए।।११७।।

श्रीजी के सामने दायें-बायें दोनों तरफ सुन्दरसाथ का समूह भरकर बैठा हुआ था। उनके आगे रेहलों पर किताबें रखी हुयी थीं।

दोऊ बाजू दीवी पीतल की, है बड़ी जोत रोसन।

चरचा आपुस में करें, श्री जी संग मोमिन।।११८।।

श्रीजी के दोनों ओर पीतल के दीपक रखे थे, जिनसे बहुत अधिक प्रकाश फैल रहा था। उस समय सुन्दरसाथ श्रीजी से आध्यात्मिक विषयों पर गहन चर्चा कर रहे थे।

देख दज्ञाल मजलस, करने लगा सोर।

ए भगत जी क्या है, हम करें लड़ाई जोर।।११९।।

पठानों का यह समूह इस धर्मसभा को देखकर शोर करने लगा- ऐ भगत जी! यह आप क्या कर रहे हैं? हम आपसे अच्छी तरह से निपटेंगे।

तुम टीका माला पेहेनत, और क्यों पढ़त कुरान।

एह रवा है नही, जो तुम कहो सुनों कान।।१२०।।

आप टीका-माला पहनकर कुरआन क्यों पढ़ रहे हैं? आप हिन्दू वैरागी हैं, इसलिए हमारी शरा यह इजाज़त नहीं देती कि आप कुरआन को पढ़ें और सुनें।

तब श्री जीयें कहया, हम बरजत हैं तुम।

खुदाए और रसूल की मुहब्बत, बांधत आपस में हम।।१२१।।

तब श्रीजी ने कहा कि क्या मैंने तुम्हें कभी मना किया है? मैं तो सभी के हृदय में खुदा और रसूल मुहम्मद साहिब के प्रति प्रेम का सम्बन्ध स्थापित कर रहा हूँ।

तिनको तुम ढाँपत हो, ए तुम्हें किन फुरमाए।

तब जहान महम्मद बोलिया, तुम्हें किने ए बताए।।१२२।।

तुम उस अलौकिक प्रेम को ढकना चाहते हो। ऐसा करने के लिए तुम्हें किसने कहा है? तब जहान मुहम्मद भी बोल पड़े कि इस तरह की बातें करने के लिए तुम्हें किसने कहा है?

मैं तो तुम्हारा उस्ताद, तुम लेते तालीम।
अब बातें करने लगे, बड़े होत अजीम।।१२३।।

मैं तुम्हारा उस्ताद हूँ और अब तक तुम मेरे से तालीम लेते रहे हो। तुम लोग इतने बड़े इल्मी हो गये हो, जो इस तरह से बढ़-बढ़कर बातें कर रहे हो।

यों करते जोस मिहीन को, जबराईल हुआ जोर।
आया जोस गाजी खान को, दज्जाल डरा देख सोर।।१२४।।

इस प्रकार जब बहस चल रही थी, तब मिहीन खान के चेहरे पर जिबरील का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगा। गाज़ी खान को भी जोश आ गया। इन मोमिनों के विरोध को देखकर पठानों में डर बैठ गया।

आया जोस अव्वल खान को, और जहान महम्मद।

यारो उठो जिमी फिरी, इत उड़ गई सब हद।।१२५।।

अव्वल खान और जहान मुहम्मद को भी जोश आ गया। विरोधी पठान घबराकर एक-दूसरे से कहने लगे, यारों! चलो यहाँ से। यहाँ तो हमें नीचा देखना पड़ रहा है, क्योंकि यहाँ तो हिन्दू-मुसलमान की सारी सीमा ही समाप्त हो गयी है।

भावार्थ- "जिमी फिरने" का तात्पर्य है, धरती का परिवर्तित हो जाना। यह एक प्रकार का मुहाविरा है, जो किसी गुनाह के कारण शर्मिन्दगी के लिए प्रयोग किया जाता है।

इस चौपाई के चौथे चरण का आशय यह है कि पठानों ने देखा कि हमारे मुसलमान भाई हिन्दू वैरागियों का पक्ष ले रहे हैं। इस बात पर उन्होंने कहा कि यहाँ पर तो

मज़हब के लिये कोई मर्यादा ही नहीं रह गयी है।

ए भगत जी हम जात हैं, हमको कीजे माफ।
हमतो अब जात हैं, हमारे दिल हुए साफ।।१२६।।

हे भगत जी! अब हम जा रहे हैं, हमें माफ कर दीजिये। हमारे दिल में अब आपके लिये कोई कड़वाहट नहीं है। हमें आपसे कुछ नहीं कहना है, हम जा रहे हैं।

उठ भागे यों कह के, जाए सिपाह में किया सोर।
यारो बड़ा जादूगर, हमारा कछू न चल्या जोर।।१२७।।

ऐसा कहते हुए वे उठकर भाग गये, किन्तु अपने समाज के लोगों के बीच में जाकर उन्होंने शोर मचाना शुरू कर दिया। वे कहने लगे– यारों! वह इतना बड़ा जादूगर है कि अपने मुसलमान भाई भी उसका एकतरफा पक्ष लेने

लगते हैं। उसके सामने तो हमारा कुछ भी वश नहीं चलता है।

इन समें भावसिंह का, वाका हुआ जब।
तब जोर किया दज्जाल नें, सोर बड़ा हुआ तब।।१२८।।

दुर्भाग्यवश, इसी समय भाव सिंह का देहान्त हो गया। फतह मुहम्मद जो भाव सिंह का वजीर था, उसने सिंहासन पर कब्जा कर लिया, जिसके परिणामस्वरूप बहुत शोर-शराबा हुआ अर्थात् विरोध हुआ।

भावार्थ- भाव सिंह श्रीजी के निर्देश पर औरंगज़ेब से युद्ध करने के लिए तैयार हो गये। लेकिन उन्होंने श्रीजी से चमत्कारिक ढंग से परमधाम देखने की तीव्र इच्छा प्रगट की। श्रीजी के बहुत मना करने पर भी वह नहीं माने और अपनी माँग पर अड़े रहे। श्रीजी ने अपनी कृपादृष्टि

से योगमाया की एक हल्की से झलक जैसे ही दिखायी, तो उसे भावसिंह सहन नहीं कर सके और तन छोड़ दिया।

इस चौपाई के चौथे चरण का आशय यह है कि फतह मुहम्मद के द्वारा भाव सिंह के सिंहासन पर जबरन अधिकार करने के बाद राज घराने में और फतह मुहम्मद के बीच में विरोध हुआ था, तथा फतह मुहम्मद ने सुन्दरसाथ के ऊपर भी कुदृष्टि की थी।

फते महम्मद ने तिन समें, किया चाकरों को हुकम।
ढूंढ काढ़ो बैरागी, दे कैद में हम।।१२९।।

फतह मुहम्मद ने उस समय अपने सेवकों को आदेश दे दिया कि उन वैरागियों को ढूंढ निकालो और उन्हें कैद में डालो।

श्री जी साहिब जी उनके पुरे, रहें जाए हवेली पास।

उत मुल्ला के घर, करते न काहू विस्वास।।१३०।।

श्रीजी साहिब फतह मुहम्मद के मुहल्ले में, उसी की हवेली के पास, एक मुल्ला के मकान में ठहर गए। इसलिए कोई विश्वास भी नहीं कर सकता था कि यहाँ पर श्रीजी रह रहे हैं।

लगे कुरान उतारने, लोभ दिखाया तिन।

ओतो राजी भया, बैठे लालदास चरन।।१३१।।

उस मुल्ला को धन का लोभ दिखाकर कुरआन की टीका कराने के लिए राजी कर लिया गया। लालदास जी और चरण दास जी कुरआन की टीका करवाने में लग गये।

तीन दिन तहाँ रहे, ए ढूंढ़े सहर में ठौर।

भवानी भट्ट मिला, किया तिन पर जोर।।१३२।।

तीन दिन तक सुन्दरसाथ और श्रीजी औरंगाबाद में ही रहे। फतह मुहम्मद के आदमी पूरे शहर में खोजते रहे। अचानक भवानी भट्ट पकड़ में आ गए और उन्होंने सबका भेद जानने के लिए भवानी भट्ट के साथ कठोरता का व्यवहार किया।

बरयाए के भाग के छूटा, ए जो भट भवानी।

हमें दिखाओ बैरागी , हम ढूंढ थके अपनी।।१३३।।

किन्तु अवसर मिलने पर भवानी भट्ट सैनिकों की कैद से जबरन छूट भागे। फतह मुहम्मद के सिपाही सबसे पूछते रह गये कि हमें वैरागियों का पता दे दीजिए। हम उन्हें खोज-खोज कर थक गये हैं।

तब भड़कल दरवाजे, लोकों दिया जवाब।

वेरागी तो जात रहे, तुम जिन भटको इन बाब।।१३४।।

तब भटकल दरवाजे के पास की जनता ने सैनिकों से कह दिया कि वैरागी लोग यहाँ से जा चुके हैं। अब आप लोग उनको खोजने में मत भटकिये।

भावार्थ– कर्नाटक में भटकल एक नगर है। औरंगाबाद से भटकल नगर के मार्ग पर जो द्वार है, उसे भटकल दरवाजा कहा जाता है।

जहान महम्मद आइया, फतू अल्ला के घर।

तहां वेरागी देख के, पूछी श्री जी की खबर।।१३५।।

जहान मुहम्मद किसी कार्यवश फत्हुल्लाह के घर आए। अचानक, वहाँ पास में सुन्दरसाथ को देखकर श्रीजी का समाचार पूछने लगे।

श्री जी साहिब जी बैठे हैं, इस हवेली में।

ए तो ठौर दज्जाल की, तुम डरत नही इनसें।।१३६।।

तब सुन्दरसाथ ने बताया कि धाम धनी इसी हवेली के अन्दर बैठे हुए हैं। यह सुनकर जहान मुहम्मद ने कहा कि आप लोगों को डर नहीं लग रहा कि यह फत्हुल्लाह का स्थान है।

इनके आदमी तुमको, ढूंढत फिरत सब ठौर।

ए मुहल्ला फतू अल्ला का, ए लड़ेगा तुमसे जोर।।१३७।।

फत्हुल्लाह के आदमी सारे नगर में आप लोगों को खोजते फिर रहे हैं। यह फत्हुल्लाह का मोहल्ला है। यदि उसे आप लोगों के बारे में पता चल जाएगा, तो वह आप लोगों से सख्ती से पेश आएगा।

सिताब निकलो यहां से, मोहे दिखाओ श्री जी साहिब।

साथ ल्याए कदमों, हकीकत कही तब।।१३८।।

आप लोग शीघ्र ही यहाँ से निकल जाइए। पहले मुझे श्रीजी साहिब जी के दर्शन कराइये। सुन्दरसाथ जहान मुहम्मद को श्रीजी के चरणों में ले गए और उन्होंने सारी वास्तविकता श्रीजी से बतायी कि किस प्रकार फत्हुल्लाह के सिपाही सब सुन्दरसाथ को खोज रहे हैं।

जब तक लगा दिन डूबने, श्री जी साहिब जी भेले लालदास।

तपसीर लिखते मुल्ला के, छोड़ी तिनकी आस।।१३९।।

सूर्यास्त होने के समय तक श्रीजी और लालदास जी उस मुल्ला के द्वारा कुरआन की टीका करवाते रहे। अब उसके पूरा होने की आशा सभी ने छोड़ दी।

बुलाए ल्याए चरन दास को, तपसीर छोड़ी तिन ठौर।

सात कोस चले गये, भया भावसिंह लसकर भोर।।१४०।।

चरण दास जी को बुलाकर अब तक लिखी गयी कुरआन की टीका उन्हीं के हाथों में सौंप दी, और रात के अन्धेरे में सुन्दरसाथ श्रीजी के साथ नगर से ७ (सात) कोस दूर चले गए। इधर भाव सिंह की सेना के सिपाहियों को खोजते-खोजते सवेरा हो गया, लेकिन कोई भी वैरागी उनकी पकड़ में नहीं आ सका।

तहां से राह चल के, मिला राह में भीमसेन।

तिनको ल्याए बुढ़ान पुर, कही बीतक सब ऐन।।१४१।।

वहाँ से रास्ते में भीमसेन से भेंट हुई। वह श्रीजी के साथ बुढ़ानपुर तक आए। श्रीजी ने औरंगाबाद का सारा घटनाक्रम भीमसेन को बताया।

मैं आया तुम्हारे दीदार को, कोईक दिन रहया कदम।

तिनसे सवाल लिखाए कुरान के, ले जाओ मलूकचन्द तुम।।१४२।।

भीमसेन ने कहा कि मैं आपका दर्शन करने के लिए आया हूँ। वह कुछ दिन तक धाम धनी के चरणों में रहे। श्री प्राणनाथ जी ने उनसे कुरआन के कुछ प्रश्नों को लिखवाया और मलूक चन्द जी को कहा कि तुम्हें यह सन्देश-पत्र जाकर देना है।

भेजे औरंगाबाद, फतू अल्ला पर।

एक हिदायतुला काजी पर, एक दीवान खातर।।१४३।।

मलूक चन्द जी को कुरआन के प्रश्नों की तीन प्रतियां देकर औरंगाबाद भेजा गया। एक फत्हुल्लाह के लिए, एक हिदायतुल्ला काज़ी के लिए, और एक दीवान अमानत खां के लिए।

तीन जिल्दें तीनों पर, और लिखी हकीकत।

रूक्का दलेल खान पर, दई हकीकत कयामत।।१४४।।

ये तीन प्रतियां तीनों के लिए थीं। इनमें कुरआन की हकीकत दर्शायी गयी थी। एक रूक्का दलेल खान के लिये भी था, जिसमें कियामत के प्रकट होने का वर्णन किया गया था।

वीरजी पठवायो औरंगाबाद, सेखबदल लाल खान।

इनें आकोट से बिदा किए, क्योंए होए पहिचान।।१४५।।

वीर जी, शेख बदल, तथा लाल खान को श्रीजी ने आकोट से औरंगाबाद के लिये भिजवाया, जिससे किसी भी तरह से भटके हुए मुसलमानों को इस्लाम की सच्ची राह मिल सके।

भावार्थ– इस प्रकार औरंगाबाद जाने वाले कुल चार

सुन्दरसाथ थे– १. मलूक चन्द जी २. वीर जी ३. शेख बदल और ४. लाल खान।

महामत कहें ऐ मोमिनों, ए औरंगाबाद की बीतक।
अब आकोट की कहों, जो बीतक है बुजरक।।१४६।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी ! यह औरंगाबाद का प्रसंग वर्णित किया गया है। अब आकोट में घटित होने वाले वृत्तान्त का मैं वर्णन करता हूँ, जो बहुत ही महत्वपूर्ण है।

प्रकरण ।।५३।। चौपाई ।।२९३०।।

शुक्राना– आकोट

दिल्ली, उदयपुर, मन्दसौर, तथा औरंगाबाद में होने वाली जागनी लीला में सुन्दरसाथ को बहुत अधिक कष्टों का सामना करना पड़ा था। बहुत से सुन्दरसाथ जागनी कार्य से विचलित होने लगे थे, उनको सान्त्वना देने के लिए धाम धनी ने उन्हें जो प्रबोध दिया, वही इस प्रकरण का मूल विषय है। इस प्रकरण में यह बात दर्शायी गयी है कि हमें सदा ही उस प्रियतम अक्षरातीत को धन्यवाद देते रहना चाहिये, जिनकी असीम कृपा पल–पल हमारे ऊपर बरस रही है।

अब तुम सुनियो साथ जी, सुकराना करो याद।
एक बातून तुम ऊपर, दिखाऊं तुमें बुनियाद।।१।।

हे साथ जी! अब आकोट के उस प्रसंग को सुनिए,

जिसमें सब सुन्दरसाथ ने एक स्वर से अपने धाम धनी के प्रति धन्यवाद की भावना व्यक्त की। अब आपको मैं यह पहचान कराने जा रहा हूँ कि आपके ऊपर धनी की कितनी बातिनी मेहर खेल में आने के प्रारम्भ से ही बरस रही है?

इन जिमी में आज लों, वेद कतेबों करी खोज।
पर ठौर अक्षर न पाइया, त्रिगुन थके खोज ले बोझ।।२।।

इस संसार में आज दिन तक वेद और कतेब का आधार लेकर सभी ज्ञानी जनों ने परब्रह्म को खोजने का प्रयास किया, लेकिन कोई भी यह नहीं जान सका कि अक्षर ब्रह्म का मूल ठिकाना कहाँ है? ब्रह्मा, विष्णु, शिव, आदि भी परब्रह्म की खोज का बोझ ढोते-ढोते थक गए, किन्तु सफल नहीं हुए।

भावार्थ– प्रायः पौराणिक मान्यता में ब्रह्मा, विष्णु, और शिव को त्रिगुण कहकर सम्बोधित किया जाता है क्योंकि ये तीनों गुणों के प्रतीकात्मक देवता माने गए हैं, किन्तु वैदिक मान्यता में सत्व, रज, और तम के बन्धन में बन्धे हुए सारे प्राणी त्रिगुणात्मक ही हैं।

और जो कोई खोजत, ले तिनके सुकन।
जिनों नेत नेत पुकारिया, खबर नही त्रिगुन।।३।।

इन त्रिदेवों के वचनों का आधार लेकर जिन्होंने (ऋषि-मुनियों ने) भी परब्रह्म को खोजने का प्रयास किया है, उन्होंने नेति-नेति कहकर मौन धारण कर लिया। इस प्रकार, न त्रिदेवों को परब्रह्म की पहचान हुई और न उनके अनुयायियों को।

जो तिन की खोज से, मकसूद न होवे इन।

सो सारे जाहिर कर, बैठाए इत मोमिन।।४।।

उपरोक्त मनीषियों की खोज से परब्रह्म को पाने का लक्ष्य पूरा नहीं हो सका, किन्तु स्वयं अक्षरातीत ने इन ब्रह्मसृष्टियों के धाम हृदय में अपनी पहचान सम्बन्धी सारे रहस्यों को उजागर कर दिया है।

अक्षर अक्षरातीत की, काहू नही पहिचान।

सो कर पकर बताइया, दृढ़ कर दिया ईमान।।५।।

आज दिन तक संसार में किसी को भी अक्षर और अक्षरातीत की पहचान नहीं थी, किन्तु स्वयं अक्षरातीत ने श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में प्रकट होकर ब्रह्मसृष्टियों का हाथ पकड़ा, अपनी पहचान दी, और उनके विश्वास को भी अखण्ड कर दिया।

दे गुन पख इन्द्री साहिदी, और सास्त्रों के वचन।

और भाखा सब साधों की, सिफत करे मोमिन।।६।।

ब्रह्मसृष्टियों के गुण, पक्ष, तथा इन्द्रियों की निर्विकारिता एवं प्रेम से उनकी महिमा की साक्षी मिलती है। इसी प्रकार, शास्त्रों के वचन एवं सन्तों की वाणियाँ भी ब्रह्मात्माओं की महिमा का गायन करती हैं।

भावार्थ– यद्यपि प्रत्येक पञ्चभूतात्मक शरीर में स्थित अन्तःकरण (पक्ष) व इन्द्रियाँ त्रिगुणात्मक ही होती हैं, किन्तु धनी के ज्ञान और प्रेम से ओत–प्रोत होने के कारण उनकी कार्यशैली अन्य प्राणियों से अलग होती है। यद्यपि ब्रह्मसृष्टि का जीव सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों से अवश्य प्रभावित रहता है, किन्तु जब तक वह धनी के प्रेम और ईमान में दृढ़तापूर्णक डूबा रहता है, तब तक उसमें त्रिगुणात्मक प्रवृत्ति का अभाव हो जाता है।

जो नहीं अक्षर जागृत में, धाम अंदर की सुध।

सो सैयों को दई, जागृत हृदय बुध।।७।।

अक्षर ब्रह्म जाग्रत हैं, फिर भी उन्हें परमधाम के अन्दर होने वाली लीला की जानकारी नहीं है, किन्तु धाम धनी ने जाग्रत बुद्धि के तारतम ज्ञान द्वारा उस अष्ट प्रहर की लीला का सारा ज्ञान हमें दे दिया है।

तिन बुध संग तारतम, सब कही हकीकत धाम।

सो वतन सैयन का, जाहिर किया इस ठाम।।८।।

श्री राज जी ने जाग्रत बुद्धि के साथ तारतम ज्ञान के प्रकाश में परमधाम की सारी लीला (हकीकत) का वर्णन किया है और इस स्वप्नमयी नश्वर जगत में सखियों के मूल घर को उजागर किया है।

धाम अन्दर की बीतक, संग मूल सरूप बिहार।

जो बात मूल सरूप के चित्त में, ताको सैयां खबरदार।।९।।

परमधाम में मूल स्वरूप श्री राज श्यामा जी के साथ जो अष्ट प्रहर की लीला हुआ करती है, या श्री राज जी के दिल में जो भी बातें होती हैं, उसे इस नश्वर जगत में भी ब्रह्मसृष्टियाँ जानती हैं।

जो अक्षर पावे नही, सो त्रिगुन पास क्यों होए।

सो सुपन के जीवों को, सब ठौर बताया सोए।।१०।।

युगल स्वरूप की शोभा या अष्ट प्रहर की जिस लीला का ज्ञान अक्षर ब्रह्म को भी नहीं है, वह भला त्रिदेवों के पास कैसे हो सकता है? वह अलौकिक ज्ञान अब तारतम ज्ञान के प्रकाश में जाग्रत होने वाले जीवों को भी प्राप्त हो गया है। ब्रह्मसृष्टियों की संगति से अब इन्हें भी

परमधाम के प्रत्येक पक्ष का ज्ञान है।

ए मेहर मोमिनों पर, सबों पाई इनों सोहोबत।

एह समें हकें किया, फरदा रोज कयामत।।११।।

फर्दा रोज कियामत, अर्थात् ग्यारहवीं, बारहवीं सदी, में तारतम वाणी के माध्यम से विशेष मेहर बरसायी है। अन्य जीव सृष्टि तथा ईश्वरीय सृष्टि ने भी इनकी संगति से उस मेहर को प्राप्त किया है।

भावार्थ– वि.सं. १७४५ में ग्यारहवीं सदी पूर्ण होती है। इस समय खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार का ज्ञान अवतरित हुआ, जिससे परमधाम की हकीकत और मारिफत जाहिर हो गयी। ईश्वरीय सृष्टि एवं जीव सृष्टि को ब्रह्मसृष्टि की संगति से ही यह लाभ प्राप्त हो सका।

इन भांत मेहर मोमिनों पर, कै अलेखे अपार।
सो इन जुबां केती कहों, दिए बातून खोल के द्वार।।१२।।

इस प्रकार सुन्दरसाथ के ऊपर धाम धनी की अपार और अवर्चनीय (वाणी से परे) मेहर पल-पल बरसी, जिसका वर्णन मैं इस जिह्वा से कितना कहूँ? धाम धनी ने वाणी के ज्ञान और प्रेम द्वारा परमधाम का द्वार खोलकर हकीकत एवं मारिफत (सत्य एवं परम सत्य) के गुह्य भेदों को जाहिर किया है।

अग्यारे सौ साल का, लिख भेजा अल्ला कलाम।
खोज करी सब सृष्ट नें, पाया न काहू निजधाम।।१३।।

ग्यारह सौ वर्ष पहले से ही धाम धनी ने कुरआन के माध्यम से अर्शे अज़ीम का वर्णन कर दिया था। सारी सृष्टि कुरआन पढ़कर खोज करते-करते थक गयी,

लेकिन किसी को भी परमधाम की जानकारी नहीं हुई।

सो आमर इसलाम की, सब हाथ दई मोमिन।
खुली हकीकत मारफत, सब तले इनके इजन।।१४।।

धाम धनी ने इल्म-ए-लदुन्नी के द्वारा कुरआन की सारी हकीकत और मारिफत का ज्ञान ब्रह्मसृष्टियों को दे दिया है, जिससे इस्लाम धर्म के ज्ञान का आन्तरिक अधिकार इनको प्राप्त हुआ है, और सभी इनके आदेश मानने वाले हो जायेंगे।

भावार्थ- यद्यपि, व्यवहार में यही देखा जा रहा है कि बहुत ही कम मुसलमानों ने निजानन्द की मान्यताओं को ग्रहण किया है, किन्तु इसका मूल कारण हमारे प्रचार तन्त्र की कमजोरी है। सारे इस्लामिक जगत में कुरआन-हदीसों की शिक्षा के लिए बड़े-बड़े संस्थान हैं,

किन्तु वे मात्र शरीअत के ही अनुयायी हैं। हकीकत और मारिफत का ज्ञान तो एकमात्र तारतम वाणी में निहित है।

यदि कोई मुसलमान अपनी साम्प्रदायिक संकीर्णता को छोड़कर सनद, खुलासा, मारिफत सागर, तथा कियामतनामा के ज्ञान को शुद्ध हृदय से ग्रहण कर लेगा, तो वह अवश्य श्रीजी और तारतम वाणी (कुलजम स्वरूप) पर नतमस्तक हो जाएगा। इसे ही इस चौपाई में मोमिनों के हाथ में इस्लाम के सम्पूर्ण हुक्म का आना कहा गया है।

जो आए इनके हुकम तले, सो आए बीच इसलाम।
सो सब उसका हो चुका, जिन खुले रब्बानी कलाम।।१५।।

संसार का जो भी मुस्लिम या अन्य आध्यात्मिक मतावलम्बी ब्रह्मसृष्टियों के निर्देशों को मानता है, उसे

वास्तविक दीन-ए-इस्लाम या निजानन्द की राह प्राप्त हो जाती है। उसे कुरआन तथा वेदादि अन्य धर्मग्रन्थों के गुह्यतम रहस्य विदित हो जाते हैं, और बेहद मण्डल तथा परमधाम के अखण्ड आनन्द पर भी उसका अधिकार हो जाता है।

एह तो बातून की, मेहर है ऊपर रूहन।
और ऊपर मेहर वजूद के, सो जाहिर देखो मोमिन।।१६।।

ब्रह्मसृष्टियों के ऊपर होने वाली धाम धनी की यह बातिनी (गुह्य) मेहर है। अब मैं उनके शरीर पर होने वाली उस मेहर का वर्णन करने जा रहा हूँ, जो प्रत्यक्ष दिखायी देती है। हे साथ जी! उसे सुनिये।

पहले मूल बृज मिने, तित पड़े बिघन।

सो सारे दफे हुए, हुए संसार में धन धन।।१७।।

सबसे पहले व्रज में आने पर अघासुर, बकासुर, आदि राक्षसों तथा इन्द्रकोप आदि के कष्टों को झेलना पड़ा। वे बाधाएँ धाम धनी की कृपा से समाप्त हो गयीं। आज सारे संसार में उन ब्रह्मसृष्टि रूपी गोपियों को धन्य-धन्य कहा जाता है।

आज लों ब्रह्मांड में, सब बन्दे बृज रेंन।

पावत नही ब्रह्मादिक, तित थे मोमिन बीच चेंन।।१८।।

आज तक इस ब्रह्माण्ड के बड़े-बड़े मनीषी, उस व्रज में गोपी रूप में लीला करने वाली ब्रह्मसृष्टियों की चरण धूलि की इच्छा करते रहे हैं। इसे ब्रह्मा आदि भी नहीं पा सके। ब्रह्मसृष्टियाँ तो गोपी रूप में उस आनन्दमय लीला का ही

अँग थीं।

फेर आए बीच रास के, कहया दूसरा दिन।

ना ताकत सुनने त्रिगुन को, तहां खेले मोमिन।।१९।।

उसके पश्चात् रास के ब्रह्माण्ड में सभी आत्माएँ आयीं, जिसे दूसरा दिन कहा गया है। उस योगमाया के ब्रह्माण्ड में ब्रह्मसृष्टियों ने महारास की लीला की, जिसे सुनने का सामर्थ्य त्रिदेव में भी नहीं है।

सब कोई वांछे तिनको, पावे नही खबर।

अटकले अखण्ड की, पावे न कोई फजर।।२०।।

इस सृष्टि का हर मनुष्य उस महारास के बारे में जानने की इच्छा रखता है, किन्तु जरा भी भनक नहीं मिल पाती। उस अखण्ड लीला के बारे में हर कोई अनुमान से

ही सोचता है, लेकिन किसी को उसकी धुन्धली किरण भी नहीं दिखती।

रास रात ढूंढन की, अटकल करें अनेक।
हाथ कछू न आवही, बिन मोमिन न पावे एक।।२१।।

महारास की रात्रि को ढूँढने के लिए बहुत से मनीषियों ने प्रयास किया, किन्तु वे अटकलों से आगे नहीं बढ़ पाये और उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। ब्रह्मसृष्टियों के अतिरिक्त उसके बारे में अन्य कोई भी नहीं जानता।

भावार्थ– चैतन्य महाप्रभु, वल्लभाचार्य, नरसी मेहता, आदि ने महारास के बारे में बहुत कुछ कहा है, किन्तु उसके गुह्य रहस्य को सुन्दरसाथ के अतिरिक्त और कोई भी नहीं जानता, क्योंकि धाम धनी के साथ होने वाली लीला में सुन्दरसाथ स्वयं थे।

रास लीला खेल के, आए बरारब स्याम।

सो वास्ते मोमिन के, पूरे किए मनोरथ काम।।२२।।

योगमाया के ब्रह्माण्ड में महारास की लीला करने के पश्चात् अक्षर ब्रह्म की आत्मा और धनी के जोश का स्वरूप अरब में अवतरित हुआ। उस स्वरूप के प्रकट होने का मूल उद्देश्य था, दसवीं सदी में संसार में आने वाली ब्रह्मात्माओं के लिये परमधाम और इमाम महदी (श्रीजी) की साक्षी हेतु कुरआन लाना। इससे ब्रह्मसृष्टियों की साक्षी का सारा कार्य पूर्ण हो गया।

एह दिन तीसरा, कहया माजजे देखाए अनेक।

अग्यारे सै बरस आगे कहया, कोई अरथ न पावे हरफ एक।।२३।।

यह तीसरे दिन की लीला है, जिससे मुहम्मद (सल्ल.) ने अनेकों (लगभग ७२) चमत्कार दिखाये। उन्होंने

ग्यारह सौ वर्ष पहले ही ब्रह्मात्माओं तथा इमाम महदी के रूप में परब्रह्म की शक्ति के प्रकट होने की बात की , किन्तु कोई भी मुस्लिम उनके कथनों के एक शब्द का भी गुह्य रहस्य नहीं जान पाया।

दिन चौथे मिने, धरा रसूलें कदम।
तिन पांउ सूझ ना किया, जागें न कोई आतम।।२४।।

चौथे दिन की लीला में श्यामा जी अपने धाम धनी का सन्देश तारतम ज्ञान के रूप में लेकर आयीं, किन्तु उनके दर्शाये हुए मार्ग को कोई भी पूर्ण रूप से अंगीकार नहीं कर सका। परिणामस्वरूप, श्री इन्द्रावती जी की आत्मा के अतिरिक्त अन्य कोई भी जाग्रत नहीं हुआ।

भावार्थ– "पाँव सूझ न करने" का तात्पर्य है, निर्देशित किये गये मार्ग का अवलम्बन न करना। उस समय

परमधाम की वाणी का अवतरण नहीं हुआ था, जिसके कारण सुन्दरसाथ वास्तविकता को पूर्ण रूप से समझ नहीं पाये। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा का प्रभाव चमत्कारों (आड़ीका लीला) की आँधी में उड़ गया।

इस चौपाई में श्यामा जी को रसूल (सन्देशवाहक) कहने का आशय यह है कि वह परब्रह्म के उस आदेश को लेकर इस संसार में अवतरित हुईं, जो तारतम वाणी में दर्शाया गया है–

सुन्दरबाई इन फेरे, आए हैं साथ कारन जी।

भेजें धनिऐं आवेस देय के, अब न्यारे न होऐं एक खिन जी।।

प्रकास हिन्दुस्तानी २/२

ल्याओ बुलाए तुम रूह अल्ला, जो रूहें मेरी आसिक।

रब्द किया प्यार वास्ते, कहियो केहेलाया हक।।

खिलवत १३/१

ए हकीकत रूहअल्ला की, सौ बरस रखी छिपाए।

धरा कदम दूसरा, दई रूहों को पोहोंचाए।।२५।।

श्यामा जी के पहले तन से होने वाली लीला की यह यथार्थता है कि वे १०० वर्षों (१६३८–१७३५) तक छिपी रही। जब उन्होंने अपने दूसरे (श्री मिहिरराज जी के) तन में लीला प्रारम्भ की, तो तारतम वाणी के द्वारा ब्रह्मात्माओं को अखण्ड धन की उपलब्धि हुई।

भावार्थ– वि.सं. १६३८–१७३८ के १०० वर्ष हिजरी साल के ९७ वर्षों में ही पूर्ण हो जाते हैं। इस प्रकार वि.सं. १७३५ में हिजरी साल के १०० वर्ष (१०९० तक) पूरे हो गये। (यह कुरआन का प्रसंग है, इसलिये यह गणना हिजरी साल के अनुसार होगी)

श्यामा जी के स्वामित्व (बादशाहत) के ४० वर्ष यहीं से प्रारम्भ होते हैं तथा परमधाम की चारों किताबों (खिल्वत, परिक्रमा, सागर, एवं श्रृंगार) का अवतरण भी १७३५ के पश्चात् ही हुआ, जिससे सबकी जाग्रति का मार्ग खुला। इस सम्बन्ध में श्रीमुखवाणी का यह कथन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है–

ब्रह्मसृष्ट हुती ब्रज रास में, प्रेम हुतो लछ बिन।

सो लछ अव्वल को ल्याए रूहअल्ला, पर न था आखिरी इलम पूरन।।

श्रृंगार १/४७

एह दिन पांचमा, इमाम की इमामत।

सो दरवाजा जाहिर किया, फरदा रोज कयामत।।२६।।

यह पाँचवे दिन की लीला है, जिसमें श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में जागनी लीला हुई। उन्होंने कियामत के

समय (ग्यारहवीं तथा बारहवीं सदी में) परमधाम की चारों किताबों के अलौकिक ज्ञान से ब्रह्मत्माओं के लिये परमधाम के साक्षात्कार का मार्ग खोल दिया।

भावार्थ– फर्दा रोज़ का समय होता है १०००+१०० अर्थात् ११०० वर्ष। इस प्रकार, तारतम वाणी में कहीं ग्यारहवीं सदी में तो कहीं बारहवीं सदी में कियामत का आना लिखा है। वि.सं. १७४५ में ग्यारहवीं सदी पूर्ण हो जाती है। श्यामा जी के स्वामित्व का समय १७३५ से प्रारम्भ होता है, इसलिये कहीं पर ग्यारहवीं सदी और कहीं पर बारहवीं सदी में कियामत (अखण्ड परमधाम के ज्ञान का प्रकटीकरण) के आने का उल्लेख है–

कारैं सदी में कयामत, लिखी मंझ कुरान।

सनंध ३५/२८

ए चीन्हों सूरत रसूल की, वास्ते काम किए मोमिन।
कै लोकों दिखाए माजजे, तोहे न पतीजे मन।।२७।।

प्रियतम परब्रह्म का सन्देश लेकर ये तीनों स्वरूप (मुहम्मद सल्ल. अलैहि वसल्लम, सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी, तथा श्री प्राणनाथ जी) आये। इन्होंने ब्रह्मसृष्टियों को जगाकर परमधाम ले जाने का कार्य किया। इसलिये इन तीनों स्वरूपों को जानने की आवश्यकता है। इन तीनों स्वरूपों के द्वारा तरह-तरह की चमत्कारिक लीलायें भी हुईं, किन्तु मायावी संसार उन्हें पहचान नहीं सका।

भावार्थ- "रसूल" शब्द का तात्पर्य सन्देशवाहक होता है। परमधाम से आने वाला प्रत्येक स्वरूप किसी न किसी रूप में धाम धनी के जोश-आवेश का ही होगा। वस्तुतः मुहम्मद शब्द का अर्थ होता है- महिमा से परे।

अरब में प्रकट होने वाला स्वरूप केवल सन्देश लेकर

आया था, क्योंकि उस समय ब्रह्मसृष्टियों का अवतरण इस संसार में नहीं हुआ था। पहली सूरत (स्वरूप) को रसूल (सन्देशवाहक) कहने से अन्य दोनों सूरतों को भी कुरआन–हदीसों की भाषा में यहाँ सन्देशवाहक कह दिया गया है, अन्यथा हकी सूरत के रूप में तो स्वयं पूर्णब्रह्म ने ही लीला की है। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी में कहा है–

प्रगटे पूरन ब्रह्म सकल में, ब्रह्मसृष्टि सिरदार।
ईश्वरी सृष्टि और जीव की, सब आए करो दीदार।।

किरंतन ५७/२

अब छठा दिन जुम्मे का, तहां मोमिन जमा भए।
ए सब होत तिन वास्ते, सुकन जबराईलें कहे।।२८।।

अब छठे दिन (शुक्रवार) की लीला में तारतम वाणी के

प्रकाश में ब्रह्मसृष्टियाँ जाग्रत हो रही हैं। अब यह लीला केवल उन्हीं के लिए चल रही है। धनी के जोश जिबरील के द्वारा तारतम वाणी का प्रकाश चारों ओर फैल रहा है।

भावार्थ– इस्लामिक जगत में "जुम्मे के नमाज़" का बहुत अधिक महत्व है। वस्तुतः तारतम वाणी (इल्म–ए–लदुन्नी) के प्रकाश में अपनी आत्मा को धनी के प्रेम में समर्पित कर देना ही जुम्मे की नमाज है।

ए माजजे मोमिन देखहीं, सब पांचों दिन के।

होय वारस बेटे बाप के, सब मता आया इन पे।।२९।।

इस छठे दिन की लीला में शेष अन्य पाँचों दिनों की लीलाओं के गुह्यतम रहस्यों को जानने का अलौकिक चमत्कार ब्रह्मसृष्टियाँ देख रहीं हैं। जिस प्रकार, पिता की सम्पत्ति का अधिकार पुत्र को प्राप्त होता है, उसी प्रकार

तीनों सूरतों (बशरी, मलकी, हकी) के द्वारा अवतरित अलौकिक ब्रह्मज्ञान ब्रह्मसृष्टियों के पास है।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित शब्दों का बाह्य अर्थ लेकर यह कदापि नहीं मान लेना चाहिए कि श्री प्राणनाथ जी से हमारा पिता–पुत्र का सम्बन्ध है। यह कथन तो केवल उपमा अलंकार के रूप में किया गया है।

सो जाहिर करत हैं, करनें को पहिचान।

पहिले मोमिन ईमान ल्याए, पीछे सब खलक सुने कान।।३०।।

वह अक्षरातीत धाम धनी अपनी पहचान देने के लिए ब्रह्मवाणी को जाहिर कर रहे हैं। तारतम वाणी को आत्मसात् करके पहले ब्रह्मसृष्टियाँ ईमान लाती हैं, इसके पश्चात् जीवसृष्टि वाणी को ग्रहण करके धनी पर विश्वास

लायेंगी।

महम्मद के माजजे, सो जाने इसलाम।

बातून मोमिन जानहीं, और जाहिर खलक आम।।३१।।

श्री प्राणनाथ जी के द्वारा दिखाये गये जाहिरी एवं बातिनी चमत्कारों को निजानन्द की राह पर चलने वाला ही जान सकता है। उनकी बातिनी मेहर को ब्रह्मसृष्टियाँ जानती हैं और जाहिरी मेहर को जीव सृष्टियाँ जानती हैं।

भावार्थ– श्रीजी के द्वारा पन्ना जी में हीरे निकालने की चमत्कारिक लीला को तो सारी दुनिया जानती है, किन्तु उनके दर्शन, वार्तालाप, या खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार में गोता लगाने पर मिलने वाले सुख को केवल ब्रह्मसृष्टियाँ जानती हैं।

मोजिजा अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता

है– ब्राह्मी चमत्कार। इस चौपाई के प्रथम चरण में कथित "मुहम्मद" शब्द से तात्पर्य हकी सूरत (श्री प्राणनाथ जी) से है, बसरी सूरत (मुहम्मद साहब) से नहीं। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी का कथन है–

इन महंमद के दीन में, जो ल्यावेगा ईमान।
छत्रसाल तिन ऊपर, तन मन धन कुर्बान।।

किरंतन ११८/१९

कई काफरों गुलबा किया, मानें नही पैगाम।
तिन सबों के सिर भान के, ल्याया जाहिर इसलाम।।३२।।

औरंगज़ेब के दरबारियों ने श्रीजी के पैग़ाम को स्वीकार नहीं किया, उल्टा विरोध में काफी शोर–शराबा किया। धाम धनी ने मुगल सल्तनत का पतन कराकर उनके अहंकार को नष्ट किया, तथा हकीकत एवं मारिफत वाले

सच्चे दीन इस्लाम (निजानन्द) का मार्ग प्रशस्त किया।

जो मिल्या जिन भांत सों, तिन सों मिले तिन विध।
अन्दर मेहर जाहेर कहर, ए भई महम्मद की सिध।।३३।।

श्री प्राणनाथ जी से जो जिस रूप में मिला, उसको वे उसी रूप मे मिले। श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की यही वास्तविक पहचान है कि उनके हृदय में मेहर का सागर भरा रहता है, जबकि बाह्य रूप में खण्डनी के वचन रूपी कहर को भी झेलना पड़ता है।

भावार्थ– श्रीजी के साथ होने वाली जागनी लीला में प्रेम जी, नाग जी, और संग जी, तथा जयराम भाई ने श्रीजी को पहले अपने गुरू भाई श्री मिहिरराज जी के रूप में देखा, तो उन्हें श्रीजी के स्वरूप में सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के दर्शन हुये, क्योंकि इन सुन्दरसाथ की

आस्था मात्र सद्गुरू महाराज के प्रति थी।

लालदास जी, भीम भाई, मुकुन्द दास जी, जहान मुहम्मद, महाराजा छत्रशाल जी, तथा अन्य ब्रह्ममुनियों ने श्रीजी को परमधाम के युगल स्वरूप के रूप में देखा, तथा अन्य कई सुन्दरसाथ ने उन्हें व्रज और रास के स्वरूप में भी देखा।

जिसने उनके स्वरूप को यथार्थ रूप से पहचाना, उसने यही अनुभव किया कि इनके हृदय में आठ सागरों का रस लहरा रहा है। किन्तु जिसने केवल उनके बाह्य रूप को देखा, उसने यही अनुभव किया कि श्रीजी बहुत ही कठोर बोलने वाले हैं, क्योंकि वे जयराम कंसारा को "चचोड़त ठौर मुरदार" कहते हैं, तो वल्लभाचार्य जी के अनुयायी वैष्णवों को "गर्भ माहें क्यों न गलया" कहते हैं। इसी प्रकार चिन्तामणि एवं वृन्दावन जी को भी खण्डनी

के तीखे वचन झेलने पड़ते हैं। दिल्ली में गोवर्धन दास जी तथा लालदास जी के विवाद में विशिष्ट सुन्दरसाथ को श्रीजी की खरी–खरी बातें सुननी पड़ती हैं।

नबी की नबूबत, बैठे जानी ना किन।

तो ए लड़ने को सामें खड़े, आकीन न आया जिन।।३४।।

जिन लोगों को यह पता नहीं चल पाया कि श्री मिहिरराज जी के कलेवर में स्वयं पूर्णब्रह्म ही लीला कर रहे हैं, वे अपने विश्वास की कमी के कारण उनसे ही लड़ने के लिए तैयार हो गए और श्री प्राणनाथ जी की जागनी लीला को समझ नहीं पाये।

भावार्थ– इस चौपाई में बसरी सूरत का प्रसंग देकर हकी सूरत की लीला को दर्शाया है। जिस प्रकार अरब के लोग मुहम्मद साहिब को पहचान नहीं पाए, उसी तरह से

श्रीजी के स्वरूप को भी सभी ने नहीं पहचाना। इस सम्बन्ध मे तारतम वाणी का कथन है–

आपण हजी नथी ओलख्या, जुओ विचारी मन।
विविध पेरे समझाविया, अने कही निध तारतम।।

रास १/४७

सबसे बड़ा दुर्भाग्यवान वह सुन्दरसाथ है, जो वाणी और बीतक का मन्थन करने के बाद भी डंके की चोट पर श्री प्राणनाथ जी को एक आचार्य, गुरू, शिष्य, या सन्त के रूप में परिभाषित करना चाहता है। लौकिक कामनाओं के वशीभूत हुआ, अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ को सुनना नहीं चाहता। अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को छोटा बनाकर उसे क्या मिलने वाला है? क्या इस दुनिया की झूठी मान प्रतिष्ठा भी उसके साथ जाएगी?

जब बोए आई इसलाम की, वोही आए बीच दीन।

तिनकी नसल जो बढ़ी, ताए बढ़ता गया आकीन।।३५।।

तारतम वाणी के प्रकाश में निजानन्द की सुगन्धि जिसको मिल गयी, वे ही सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुए। एक तरफ तो उनकी संख्या बढ़ती गयी, दूसरी तरफ धनी का प्रेम और ज्ञान पाकर उनका विश्वास उत्तरोत्तर बढ़ता गया।

बढ़ते बढ़ते बढ़या, आम आए बीच दीन।

तेही महम्मद के वास्ते, लड़े काफरों से ले आकीन।।३६।।

श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप पर विश्वास पल-पल बढ़ता ही गया, जिसके परिणामस्वरूप सामान्य लोग भी सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित होने लगे और निजानन्द के मार्ग को ग्रहण करने लगे। ये सुन्दरसाथ ही

श्री प्राणनाथ जी के सन्देश को पहुँचाने के लिए अटूट विश्वास के साथ शरा–तोरा के बादशाह औरंगज़ेब और उसके अधिकारियों से लड़े।

भावार्थ– औरंगज़ेब की शरा को चुनौती देने वाले सुन्दरसाथ अधिकतर सामान्य परिवारों से ही थे। जैसे, कायम मुल्ला तो पैसे देकर अनुवाद कराने के लिए बुलाये गये थे। इसी प्रकार, शेख बदल, नाग जी भाई, खिमाई भाई, बनारसी दास, चंचल, ये बहुत सामान्य परिवारों से थे। ये न तो किसी राजघराने से सम्बन्धित थे और न कोई बहुत धनवान थे।

अग्यारे सैं साल लों, बढ़ा दीन इसलाम।
किया था वायदा तिन सों, हक फेर आवेंगे तिन ठाम।।३७।।

मुहम्मद साहिब के द्वारा चलाया हुआ दीन–ए–इस्लाम

११०० वर्ष (११वीं सदी) तक संसार में फैलता रहा। उन्होंने अरब में अपने यारों से वायदा किया था कि कियामत के समय अल्लाह तआला के साथ मैं स्वयं आऊँगा।

भावार्थ– श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में मुहम्मद के रूप में आई हुई अक्षर की आत्मा भी विराजमान है, इस प्रकार मुहम्मद (सल्ल.) के द्वारा किया हुआ वायदा पूरा हो गया।

मेरी तीन सूरत को, पेहेचानियो अब तुम।
बसरी मलकी हकी, तुमें दिखावें हम।।३८।।

हे साथ जी! मेरी इन सूरतों मुहम्मद (सल्ल.), सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी, तथा श्री प्राणनाथ जी की पहचान कीजिए। अब मैं आपको इनकी यथार्थता दर्शाता हूँ।

ए पोहोंचे नजदीक खुदाए के, तित काहू की ना गम।

न फिरस्ते नजीकी न मुरसद, ल्याइयो ईमान तुम।।३९।।

इन तीनों स्वरूपों ने मूल मिलावे में जाकर उस पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत का साक्षात्कार किया है, जहाँ तक कोई जा नहीं सकता। अति निकट (सत्स्वरूप में) रहने वाले जिबरील और इस्राफील जैसे फरिश्ते जब वहाँ नहीं जा सके, तो इस सृष्टि के गुरुजन कहाँ से जा सकते हैं? इसलिए इन तीनों स्वरूपों पर आप अटूट विश्वास लाना।

गिरोह रब्बानी उतरे, हम आवें तिन वास्ते।

तुम उम्मेदवार तिनके, तुम पेहेचानियो मुझे।।४०।।

मुहम्मद साहिब ने ११०० वर्ष पहले ही अपने यारों से कहा था कि परमधाम की ब्रह्मसृष्टियाँ १०वीं सदी में

आयेंगी, उनके लिए मैं भी आऊँगा। तुम उनके दर्शन की चाहत बनाए रखना और उनके बीच मुझे भी पहचान लेना।

ए कलाम रब्बानी उतरे, सो वास्ते मोमिन।
तिन कौल कोई न ले सके, बिना मेरे दिल रोसन।।४१।।

परमधाम की यह तारतम वाणी ब्रह्मसृष्टियों के लिए ही आयी है। श्री महामति जी के धाम हृदय के अतिरिक्त अन्य कोई भी तारतम वाणी के गुह्यतम् रहस्यों को यथार्थ रूप से नहीं जान सकता।

भावार्थ– इस चौपाई का बाह्य अर्थ कुरआन तथा मुहम्मद साहिब पर घटित होगा, जिसका आशय यह होगा कि कुरआन ब्रह्मसृष्टियों को साक्षी देने के लिए आया है, जिसके गुह्य भेदों को मुहम्मद (सल्ल.) ही

जानते हैं।

इन बात से जानियो, एही मोमिन सके पहिचान।

जिनकी असल अरस में, हकें दिया ईमान।।४२।।

ब्रह्मसृष्टियों की गरिमा को इसी बात से जाना जा सकता है कि इन्हीं के पास कुरआन तथा तारतम वाणी के गुह्यतम् भेद होते हैं। इनके मूल तन परमधाम में होते हैं और धाम धनी ने इन्हें अटूट विश्वास (ईमान) दिया होता है।

और कोई न समझे, पहिले न आवे ईमान।

बिना अंकूर क्या करें, आवे नही पहिचान।।४३।।

ब्रह्मसृष्टि के अतिरिक्त और कोई भी तारतम वाणी को यथार्थ रूप से समझ नहीं पाता और न वह जल्दी से

धाम धनी पर ईमान लाता है। परमधाम का अँकुर न होने से जीवसृष्टि तारतम वाणी और धनी की महिमा को समझ नहीं पाती।

भावार्थ– ईमान तो ईश्वरीय सृष्टि के अन्दर भी होता है, किन्तु वह ज्ञान के द्वारा समझाने पर आता है। ब्रह्मसृष्टि के लिए संकेत मात्र ही पर्याप्त होता है और उसी से वह अटूट ईमान लेकर खड़ी हो जाती है।

हकीकत मारफत के, खोल दिए दरबार।
देखत अचरज पावहीं, पोहोंचे न परवरदिगार।।४४।।

इन ब्रह्मसृष्टियों के लिए धाम धनी ने हकीकत और मारिफत के ज्ञान द्वारा परमधाम का दरवाजा खोल दिया है। ब्रह्मसृष्टियों के बाह्य तनों को देखकर संसार के लोग इस बात पर आश्चर्य करते हैं कि क्या सचमुच इन्होंने

अध्यात्म के सर्वोच्च शिखर को छू लिया है? इनके मध्य में विराजमान श्रीजी के स्वरूप को भी ये पहचान नहीं पाते।

सातों निसान कयामत के, लिखे बीच बातून।
मोमिन देखें जाहिर, हुए जिनके दिल रोसन।।४५।।

कियामत के सातों निशानों का वर्णन कुरआन में गुह्य रूप से किया गया है। जिन ब्रह्ममुनियों के दिल में तारतम ज्ञान का उजाला हो गया है, वे कियामत के सातों निशानों को स्पष्ट रूप से पहचान जाते हैं।

हजरत ईसा आइया, ल्याया किल्ली गंज कलाम।
पहिचान भई मोमिन को, आए बीच इसलाम।।४६।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी परमधाम से तारतम ज्ञान

रूपी वह कुँजी लेकर आए हैं, जिससे संसार के सभी धर्मग्रन्थों के रहस्य स्पष्ट हो जाते हैं। इस तारतम ज्ञान के प्रकाश में सुन्दरसाथ को परमधाम और अक्षरातीत की पहचान हो गयी है और उन्होंने निजानन्द की राह अपनायी है।

आया दसमी सदी मिने, बातून हुई जाहिर।
रहे बरस चौहत्तर, चीन्हे न कोई बाहिर।।४७।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी दसवीं सदी में आए। वे इस संसार में ७४ (चौहत्तर) वर्ष तक रहे। उनके द्वारा परमधाम की गुह्य लीला ज़ाहिर हुई, लेकिन उन्हें प्रकट रूप से कोई पहचान नहीं सका।

कई माजजे तिन के, हुए बीच जिमीन।

इलम लुंदनी ल्याइया, पड़ा न काहू चीन।।४८।।

उन्होंने इस नश्वर जगत में बहुत–सी चमत्कारिक लीलाएँ की। वह क्षर से लेकर परमधाम तक की पहचान देने वाला अलौकिक तारतम ज्ञान लेकर आए, फिर भी उन्हें यथार्थ रूप से कोई पहचान नहीं सका।

सोर किया दज्जाल नें, नाजल के वखत।

एह मोकों मारेगा, बखत फरदा रोज कयामत।।४९।।

वाणी के अवतरण के समय दज्जाल ने बिहारी जी के अन्दर विराजमान होकर बहुत उत्पात किया। उसने सोचा कि ११वीं सदी (कियामत) के समय में इस वाणी का प्रकाश हो जाने से तो मेरा अस्तित्व ही नष्ट हो जाएगा, अर्थात् जब चारों ओर ब्रह्मवाणी का प्रकाश हो

जाएगा तो मेरी और मेरी गादी की महत्ता क्या रहेगी?

भावार्थ– इस चौपाई को बीतक के इस सन्दर्भ में देखा जा सकता है कि बिहारी जी ने हब्से में अवतरित होने वाले तीनों ग्रन्थों को अपने पास जब्त कर लिया था और उसको प्रचार न करने की हिदायत दी थी।

बानी वहाँ न पसरी, वह सरत उस दिन।
इन्तजार थे मोमिन, पर सुन सके न एक सुकन।।

बीतक १८/१४

पेहेना जामा दूसरा, आए बैठे बीच इमाम।
तब दज्जाल ने जानिया, इनें मेरे मारनें का काम।।५०।।

जब श्री श्यामा जी ने दूसरा तन श्री मिहिरराज जी का धारण किया और इमाम महदी के रूप में जाहिर हुए, तब दज्जाल (अज्ञान, कलियुग) समझ गया कि अब ये मुझे

मारना चाहते हैं।

तब इनके सामने, लड़ने हुआ तैयार।

मोमिन मोसों छुड़ाए के, पोहोंचावे परवरदिगार।।५१।।

तब वह अज्ञान रूपी दज्ञाल श्रीजी से इस बात पर लड़ने के लिए तैयार हो गया कि यह तो ब्रह्मसृष्टियों को मेरे चँगुल से छुड़ाकर मूल स्वरूप अक्षरातीत के चरणों में ले जाना चाहते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई में रूपक अलंकार के माध्यम से दज्ञाल (अज्ञान, कलियुग) को राक्षस के रूप में लड़ने की मुद्रा में चित्रित किया गया है। यथार्थ में दज्ञाल कोई शरीरधारी व्यक्ति नहीं है, बल्कि वह अज्ञान ही दज्ञाल है, जो सबको धनी की राह से भटकाता है।

मेरा जोरा इन से, चलत नही लगार।

तिस वास्ते छोड़ हों, चार फौज करों तैयार।।५२।।

श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक शक्ति के सामने मेरा ज़रा भी वश नहीं चल पा रहा है, इसलिए इनके ब्रह्ममुनियों को जाल में फँसाये रखने के लिए मैं चार सेनाएँ तैयार करूँगा।

एक बेईमान औरत, और बाजे बजावन हार।

तीसरे पढ़नें वाले इलम के, चौथे जादूगर होसियार।।५३।।

पहली भोगी प्रकृति की वेश्याएँ, दूसरा भक्ति का आधार छोड़कर सांसारिकता में अत्यधिक डुबोने वाला संगीत, तीसरे भौतिक विद्याओं के विशिष्ट विद्वान, और चौथे तान्त्रिक एवं हाथ की सफाई द्वारा चमत्कार दिखाने वाले चतुर लोग।

भावार्थ– आधुनिक भौतिकवादी युग में बड़े –बड़े महानगरों में होने वाले अश्लील नृत्य तथा दिन –रात चलने वाले अश्लील फिल्मों से भरपूर सैकड़ों टी .वी. चैनलों के मायाजाल में सारा संसार फँसा रहता है। विज्ञान की ओट में प्रत्यक्ष नास्तिकतावाद को बढ़ावा दिया जा रहा है। तान्त्रिक सिद्धियों एवं जादू के कार्यक्रमों को दिखाने वालों के पीछे जनता इतनी मन्त्रमुग्ध होकर भागती है कि वह परब्रह्म को भी पीछे छोड़ देती है।

जहां कहूं पावे मोमिन, खैंचे अपनी तरफ।
जिनमें ईमान असल का, सो सुने न एक हरफ।।५४।।

ये चारों सेनाएँ जहाँ भी किसी ब्रह्मसृष्टि को पाती हैं, अपनी तरफ खींचती हैं, किन्तु जिनमें परमधाम का अटूट ईमान होता है, वह इन चारों की एक भी बात नहीं

सुनते।

लगा सूर फूं कने, असराफील करना ए।

सन एक हजार नब्बे, सुन सैंया दौड़ के आए।।५५।।

जब हिजरी साल १०९० या वि.सं. १७३५ का समय था, तभी से श्री श्यामा जी के स्वामित्व (बादशाहत) के ४० वर्ष प्रारम्भ होते हैं और तब से जाग्रत बुद्धि का फरिश्ता इस्राफील सूर फूँकने लगता है, अर्थात् तारतम वाणी के अवतरण का मधुर प्रवाह तीव्र हो जाता है, जिसे सुनकर परमधाम की आत्मायें दौड़-दौड़कर कर आने लगीं और धनी के चरणों से लिपटने लगीं।

भावार्थ- "तुरही में इस्राफील के द्वारा सूर फूँकना" एक आलंकारिक वर्णन है। वस्तुतः जाग्रत बुद्धि से तारतम वाणी का अवतरण ही तुरही में सूर फूँकना है। वि.सं.

१७३५ के पश्चात् अनूपशहर में सनद, प्रकाश हिन्दुस्तानी, तथा कलश हिन्दुस्तानी की वाणी उतरी थी। इसके पश्चात् वि.सं. १७४८ में मारिफत सागर के अवतरण तक वाणी का अवतरण अखण्ड रूप से बना रहा, इसे ही इस्राफील के द्वारा सूर फूँकना कहा गया है।

काफरों के दिल बैठ के, बड़ा जो किया सोर।
मोमिन उतरे अरस से, ताको चित्त न हुआ मरोर।।५६।।

दज्जाल ने बादशाह के अधिकारियों, राणा के पण्डितों, बेरीसाल, इब्राहीम, तथा फतह मुहम्मद के अन्दर बैठकर ब्रह्ममुनियों को कष्ट देना चाहा, किन्तु परमधाम से अवतरित जिन ब्रह्ममुनियों का हृदय प्रेम में डूबा हुआ है, दज्जाल अपनी सारी शक्ति लगाकर भी उनके चित्त को विचलित नहीं कर सका।

खेस कबीला कुटुम्ब, सब दज्जाल को लसगर।

तिन में से छुड़ाए के,पहुंचाए अपने घर।।५७।।

जाति या वंश या परिवार के सगे–सम्बन्धी, जो धनी से दूर रखने का प्रयास करते हैं, सभी दज्जाल की सेना हैं। जाग्रत बुद्धि की तारतम वाणी ने ब्रह्मसृष्टियों को इनके बन्धनों से छुड़ाकर धनी के चरणों में पहुँचाया है।

भावार्थ– कबीला और कुटुम्ब समानार्थक हैं, अन्तर केवल इतना ही है कि कबीला शब्द अरबी का है और कुटुम्ब शब्द हिन्दी–संस्कृत का।

परिवार तथा सगे–सम्बन्धियों का मोहजाल इतना शक्तिशाली होता है कि उसके जाल में फँस जाने वाला व्यक्ति परब्रह्म को भुला देता है।

निगहबानी जबराईलें, करी ऊपर रूहन।

साफ रखे सबों अंगों, दिल रहे हमेसा रोसन।।५८।।

धनी का जोश जिबरील मायावी विकारों से ब्रह्मसृष्टियों की रक्षा करता है। वह उनके सभी अंगों (अन्तःकरण, इन्द्रियों, आदि) को मायावी विकारों से मुक्त करता है तथा उनके हृदय में तारतम ज्ञान का प्रकाश करता रहता है।

जब याद करने फजर को, लगा पोहोंचावने पैगाम।

तब दज्जाल ने चीन्हया, ए मारे मुझे इमाम।।५९।।

जब १२ सुन्दरसाथ श्री प्राणनाथ जी के निर्देश पर उनका सन्देश लेकर परमधाम के अपने कर्त्तव्य को पूरा करने के लिए औरंगज़ेब के पास गए, तब दज्जाल पहचान गया कि इमाम महदी मुझे मार डालेंगे।

तिन से लड़ने को, बांधी कम्मर जोर।

तब पैगाम पोहोंचाईया, किया बड़ा सोर।।६०।।

उसने १२ सुन्दरसाथ से लड़ने के लिए कमर कस ली, अर्थात् पूरी तरह से तैयार हो गया। जब सुन्दरसाथ ने औरंगज़ेब को श्रीजी का सन्देश देना चाहा, तब उसने बहुत अधिक उत्पात मचाया।

छुड़ावने ईमान को, करने लगा जुलम।

पैठ अपने लसकर में, सक सुभे उठावे कुंम।।६१।।

औरंगज़ेब के ईमान को गिराने के लिए वह तरह-तरह से अत्याचार करने लगा तथा दरबारियों के दिल में बैठकर बादशाह के मन में तरह-तरह से संशय पैदा करा दिया कि ये लोग धोखा देकर तुम्हें मारना चाहते हैं।

परवरदिगारें देखिया, लड़ाई के बखत।

बुलाया बेतुल्लाह को, साहिदी बखत कयामत।।६२।।

तब धाम धनी ने शरातोरा से होने वाले युद्ध के समय, मक्के से कियामत के जाहिर होने के सम्बन्ध में साक्षी रूपी वसीयतनामें लिखवाकर भिजवाये।

सरियत के सिरे से, लिखे वसीयत नामें चार।

तिनमें खबर कयामत की, पर काफर करे न विचार।।६३।।

शरीअत के प्रारम्भिक केन्द्र मक्का से चार वसीयतनामें दिल्ली में आए। इनमें कियामत के जाहिर होने की सारी बातें लिखी हुयी थीं, किन्तु बादशाह और उसके दरबारियों ने उस पर जरा भी विचार नहीं किया।

भावार्थ– मक्का से आने वाले चारों वसीयतनामों में यह बात दर्शायी गयी है कि हिन्दुस्तान में इमाम महदी के

द्वारा आखिरत का हिसाब होगा। जिबरील दुनिया की बरकत और फकीरों की शफकत तथा कुरआन मज़ीद को इस जहान से उठाकर अपने मकाम पर ले गया है। इसमें यह भी लिखा था कि जो इस बात को नहीं मानेगा, वह काफिर है।

दज्जाल दिल सबन के, जोर बैठा दुसमन।
जब पोहोंचे नामें वसीयत, धोए डारे सबन।।६४।।

दज्जाल अपनी पूरी शक्ति के साथ बादशाह और उसके दरबारियों के दिल में बैठ गया। जब मक्का से वसीयतनामें आए, तो बादशाह सहित दरबारियों ने उसे नकार दिया।

भावार्थ– "धो डालना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है, निरर्थक कर देना। बादशाह और उसके अधिकारियों ने सत्ता के मोह और अपने अहं के कारण

वसीयतनामों के रूप में आए हुए खुदाई सन्देश को भी स्वप्न की काल्पनिक बात मानकर झूठा करार दिया।

जब इमाम साहिब ने, पोहोंचाया पैगाम।
तब दज्जाल कम्मर बांध के, लड़ा सामें इसलाम।।६५।।

जब श्रीजी ने औरंगज़ेब बादशाह के पास अपना सन्देश भिजवाया, तो दज्जाल निजानन्द के अलौकिक ज्ञान से सबको दूर रखने हेतु पूरी तरह से लड़ने के लिए तैयार हो गया था।

ऐसे समय में मेरते से, भेजे पैगम्बर।
राठौर जसवंत सिंह सों, जाए कहो खबर।।६६।।

श्रीजी ने मेड़ता से जसवन्त सिंह राठौर के पास गोवर्धन भट्ट जी को सन्देशवाहक के रूप में भेजा था, ताकि वह

श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप की पहचान कर सके।

जब पैगाम गया उन पे, सुन्या नाहीं कान।

आजूज माजूज जो मारिया, बिना देखे ईमान।।६७।।

गोवर्धन भट्ट जी उनके पास श्रीजी का सन्देश लेकर अवश्य गए, किन्तु जसवन्त सिंह ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। धनी पर ईमान न होने के कारण, वह षड्यंत्रों के शिकार हो गए और मृत्यु को प्राप्त हुए।

फेर आए दिल्ली सहर में, तब भई सामी सरियत।

ए आया हमें उठावने, फरदा रोज कयामत।।६८।।

जब श्रीजी दिल्ली नगर में आए, तब दज्जाल शरीअत के साम्राज्य के रूप में खड़ा हो गया। दज्जाल सोचने लगा

कि इस ११वीं सदी में तो कियामत को प्रकट होना है और इमाम महदी ऐसे समय में हकीकत–मारिफत का इल्म देकर मुझे जड़ से समाप्त कर देंगे।

द्रष्टव्य– शरीअत का सामने खड़े होना या दज्जाल का सोचना, सभी आलंकारिक कथन हैं।

बात न सुनें इनकी, अपनी सुहबत में।
घेर लिया सुलतान को, बात न करें इन से।।६९।।

दज्जाल ने अपने मन में विचारा कि मैं दरबारियों के रूप में बादशाह के साथ रहूँ, ताकि औरंगज़ेब इनकी बात सुनने न पाये, इसलिए उसने दरबारियों के दिल में बैठकर बादशाह को चारों तरफ से घेर लिया, ताकि किसी भी तरह से इमाम महदी के मोमिन बादशाह से बात न करने पाएं।

जो पैगाम पोहोंचावहीं, तिनको डारे मार।

ताबे सब दज्जाल के, हुए ना खबरदार।।७०।।

दज्जाल ने सभी दरबारियों के मन में यह बात बैठा दी कि यदि बादशाह तक इमाम महदी का पैगाम पहुँच भी जाता है, तो बादशाह सहित सारे मोमिनों को भी मार डालना है, ताकि किसी भी तरह से शरा–तोरा का राज्य सुरक्षित रह जाए। सभी दरबारी दज्जाल के अधीन थे, इसलिए इमाम महदी का पैगाम पाने पर भी सावचेत नहीं हो सके।

जब सुलतानें सुनी, दौड़ा तरफ ईमान।

तब दज्जाल आड़े आए के, भान दई पहिचान।।७१।।

जब बादशाह ने इमाम महदी और कियामत के जाहिर होने की बात सुनी, तो उसे ईमान आने लगा। किन्तु

दज्जाल बादशाह के आड़े आ गया और उसके मन में आयी हुई पहचान को समाप्त कर दिया।

बसबसा करने लगा, ऊपर छाती के।
छूटत तुम से साहिबी, क्यों मानत हो ए।।७२।।

दज्जाल ने औरंगज़ेब के दिल पर पूर्णतया अधिकार कर लिया और कहने लगा कि यदि तुम इमाम महदी की छत्र-छाया में चले जाओगे तो शरा-तोरा के अधीन चलने वाला इतना बड़ा हिन्दुस्तान तुम्हारे हाथों से चला जाएगा। तुम इमाम महदी एवं कियामत के जाहिर होने के जाल में क्यों फँस रहे हो?

भावार्थ- बसबसा का आशय दबदबा होने से है। छाती पर दबदबा होने का अभिप्राय, दिल का पूर्ण रूप से दज्जाल के अधीन हो जाना है।

जो मेरे ताबे रहोगे, तो करो पातसाही तुम।

जो ताबे होत इमाम के, तो तुम पर होवे जुलम।।७३।।

लेकिन यदि तुम मेरे कहने पर चलोगे, अर्थात् इमाम महदी का पैगाम ठुकरा दोगे, तो सारे हिन्दुस्तान के बादशाह बने रहोगे, और यदि तुम इमाम महदी के कदमों में चले जाओगे, तो यह बादशाहत तुम से छूट जाएगी और यह तुम्हारे ऊपर एक अत्याचार जैसा है।

इत दज्जालें आए के, कहया मोमिन सें।

मेरी पातसाही मिने, क्यों खड़ भड़ पाड़ी तुमें।।७४।।

दज्जाल ने काज़ी शेख इस्लाम के दिल में बैठकर सुन्दरसाथ से कहा कि मैं यह मानता हूँ कि इमाम महदी और कियामत जाहिर हो चुके हैं, किन्तु आप इस बात को अभी उजागर नहीं कर सकते, क्योंकि ऐसा करने से

शरातोरा का सारा साम्राज्य खण्डित हो जाएगा।

इहाँ से जाओ भाग के, ना कैद में करो तुम।

मोमिन डरे तिन से, ताबे हुए हक हुकम।।७५।।

काज़ी शेख इस्लाम ने सुन्दरसाथ से कहा कि यदि आपने इस बात को प्रकट कर दिया कि कियामत और इमाम महदी आ चुके हैं, तो आपको आजीवन जेल में रहना पड़ेगा। इसलिए अच्छा यही होगा कि आप लोग अपनी बात को अपने तक ही सीमित रखें और यहाँ से चले जाएं। काज़ी शेख इस्लाम की बात को सुनकर सुन्दरसाथ डर गए और उन्होंने सारा भार श्री राज जी के हुक्म के ऊपर छोड़ दिया कि अब जो धाम धनी चाहेंगे, वही होगा।

दज्जाल गुस्से होए के, पैगाम दिया भान।
मोमिन कैद करके, फेरी दृष्ट सुलतान।।७६।।

दज्जाल आकिल खान व अन्य दरबारियों के दिल पर बैठ गया और क्रोध में आकर श्रीजी के द्वारा भेजे हुए सन्देश को पूरी तरह नकार दिया। उसने सिद्दीक फौलाद के माध्यम से सुन्दरसाथ को कैदखाने में डाल दिया, और अन्य दरबारियों के माध्यम से औरंगज़ेब की इमाम महदी के प्रति पवित्र धारणा एवं मिलने की चाहत को बदल दिया।

तब हक सुभाने देखिया, तखत से दिया उठाए।
सहे कै कसाले मोमिन, पनाह में लिए बचाए।।७७।।

तब धाम धनी ने मुसलमानों का यह अत्याचार देखकर बादशाह को तख़्त-ए-ताऊस से गिरा दिया। उसे ऐसा

लगा जैसे तख्त–ए–ताऊस पर कोई सिंह बैठा है और दहशत के मारे वह गिर गया। इस जागनी लीला में सुन्दरसाथ ने दज्जाल के द्वारा दिए हुए बहुत से कष्टों को सहा है, लेकिन धाम धनी ने अपनी शरण में रखकर उनकी रक्षा की है।

उदेयपुर आए पोहोंचे, दिया राणे को पैगाम।
तित दज्जाल बैठा था, लड़ा साथ इमाम।।७८।।

उदयपुर में आकर श्री प्राणनाथ जी ने वहाँ के राणा को पैगाम दिया, किन्तु वहाँ पण्डितों के रूप में दज्जाल बैठा था। उसने राणा को भटकाये रखा और श्रीजी से मिलने नहीं दिया। इस प्रकार वहाँ भी अज्ञान रूपी दज्जाल का श्रीजी से युद्ध हुआ।

पीछे सुलतान आए के, मार उठाया तिन।
राखे पनाह में इनको, पोहोंचे मन्दसोर मोमिन।।७९।।

इसके पश्चात् औरंगज़ेब ने उदयपुर पर आक्रमण कर दिया। मुगल सेना के अत्याचारों से धाम धनी ने सुन्दरसाथ की रक्षा की और वे सकुशल मन्दसौर पहुँच गये।

तब हक सुभान सों, इनों करी अरज।
सोर दज्जाल का देख के, वास्ते उम्मत के गरज।।८०।।

तब श्री महामति जी ने सुन्दरसाथ के ऊपर माया का अत्याचार देखकर, उसके भयावह कष्टों से छुटकारा दिलाने के लिये, धाम धनी से प्रार्थना की।

अरज सुनी सुभान नें, जबराईल भेज दिया।

दे दस सिपारे कुरान के, बोहोत खुसाल किया।।८१।।

श्री राज जी ने श्री महामति जी की प्रार्थना को स्वीकार किया तथा कुरआन के दस सिपारों का भाव कीर्तन ग्रन्थ के छः प्रकरणों में जिबरील द्वारा समाहित कर दिया। इससे सुन्दरसाथ को कष्टों से बचने का सीधा सा रास्ता प्राप्त हो गया और वे बहुत ही आनन्दित हो गये।

भावार्थ– जिबरील परमधाम से श्री महामति जी के पास नहीं आता है, बल्कि तारतम वाणी के शब्दों का प्रकटीकरण जोश के द्वारा होता है। उसी को यहाँ पर जिबरील द्वारा आकर वाणी को प्रकट करना कहा गया है। जब श्रीमुखवाणी स्पष्ट कह रही है कि "केहेलाया हिरदे बैठ साख्यात", अर्थात् धाम धनी ने श्री महामति जी के धाम हृदय मे साक्षात् आवेश स्वरूप से विराजमान

होकर तारतम वाणी को कहा है, तो जिबरील कहाँ से आयेगा और कहाँ जायेगा? इस प्रकार का कथन भाषायी सौन्दर्य और वाणी की श्रेष्ठता को दर्शाने हेतु किया जाता है, जिससे यह प्रमाणित हो कि वह परमधाम से अवतरित हुई है।

कुरआन के दस सिपारे और १६ सूरः ऐसे हैं, जिनमें अल्लाह तआला से कष्टों की निवृत्ति के लिए प्रार्थना की गयी है। वे इस प्रकार हैं– सूरः या सीन, रहमान, मुज्ज़म्मिल, नूह, फतह, मुल्क, जिन्न, कहफ़, तारीफ़, काफ़िरून, लहब, इख़्लास, फलक़, नास, फ़ातिहा, वाकिआत।

तहां से उज्जैन में, रहे केतेक दिन।

वास्ते दीन इसलाम के, थे कोई कोई मोमिन।।८२।।

मन्दसौर से चलकर श्रीजी उज्जैन में २२ दिन तक रहे। वहाँ कुछ ब्रह्मसृष्टियाँ थीं, जिन्हें जाग्रत कर निजानन्द की राह दर्शाने के लिए उन्हें वहाँ ठहरना था।

बुढ़ानपुर से होए के, पोहोंचे औरंगाबाद।
बुलाए भावसिंह ने, हुआ कछुक इन्हें स्वाद।।८३।।

बुढ़ानपुर से होते हुए श्रीजी सुन्दरसाथ सहित औरंगाबाद पहुँचे। वहाँ भावसिंह ने अपने महल में अति श्रद्धापूर्वक विराजमान किया और उसे कुछ आध्यात्मिक सुख का स्वाद मिला।

अपने अंकुर माफक, लाभ हुआ इने।
लगा माजजा मांगने, वाका हुआ तिन सें।।८४।।

भावसिंह के अन्दर ईश्वरी सृष्टि का अँकुर था, उसी के

अनुसार उसे आध्यात्मिक आनन्द का लाभ हुआ। वह हठ करके परमधाम दिखाने का चमत्कार माँगने लगा, जिसके परिणामस्वरूप उसका दिल योगमाया के तेज को सहन नहीं कर सका और शरीर छूट गया।

भावार्थ– जिस प्रकार एक भिक्षुक खरबों रूपयों को पाते ही पागल हो जाता है, उसी प्रकार परमधाम के अनन्त प्रेम और सौन्दर्य को सहन करने की ताकत माया के जीव के अन्दर नहीं होती।

ईश्वरी सृष्टि का अँकुर होने के कारण भावसिंह में श्रद्धा और ईमान तो था, किन्तु प्रेम और समर्पण नहीं था। यदि वह परमधाम की इच्छा को अपने अन्दर बनाए रखता अथवा धाम धनी से उचित समय पर दिखाने की केवल इच्छा व्यक्त कर देता और तुरन्त दर्शन कराने का हठ नहीं करता, तो सम्भवतः उसका जीवन सुरक्षित

रहता क्योंकि धाम धनी उसे बेहद का अनुभव तभी कराते, जब उसके हृदय में परमधाम के अखण्ड आनन्द, प्रेम, और सौन्दर्य को सहन करने की क्षमता आ जाती।

इस सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि सुन्दरसाथ को श्री महामति जी की तरफ से एक निर्देश है- "जब तुम आप देखाओगे, तब देखूँगी नैन नजर जी।"

हमें धनी से प्रेम करने का अधिकार है, किन्तु हमें जिद्द करके प्रेम का फल माँगने का अधिकार नहीं है।

इन समें इत दज्जाल नें, बड़ी करी तलास।
राखे मोमिनों को पनाह में, भानी दज्जाल की आस।।८५।।

इस समय फतह मुहम्मद के रूप में दज्जाल ने सुन्दरसाथ को कैदखाने में डालने के लिए बहुत खोज

की, किन्तु धाम धनी ने सुन्दरसाथ को अपनी शरण में रखा और सुन्दरसाथ को कैद करने की फतह मुहम्मद की इच्छा पूरी नहीं होने दी।

भेजा संदेसा खुदाए नें, बनी असराईल करो याद।
तुम पीछे खबर फेरून की, सो मैं खबर दई बुनियाद।।८६।।

अल्लाह तआला ने कुरआन के माध्यम से ब्रह्मसृष्टियों के लिए यह सन्देश दिया है कि उस समय को याद कीजिए जब फिरऔन असराईल की उम्मत यहूदियों को नष्ट करने के लिए तुला हुआ था, और उनकी सुरक्षा के लिए अल्लाह तआला ने हारून और मूसा पैगम्बर को निश्चित कर दिया। औरंगज़ेब को सन्देश देने के लिए जाने के पश्चात् मैंने कुरआन में यह प्रसंग देखा है, उस मूल बात को मैंने तुम्हें दर्शाया है।

भावार्थ– इस चौपाई में कुरआन का जो उद्धरण दिया गया है, उसमें बनी असराईल यहूदियों को कहा गया है, जिसका तात्पर्य सुन्दरसाथ से है। फिरऔन औरंगज़ेब बादशाह है, हारून महाराजा छत्रसाल जी, एवं मूसा पैगम्बर स्वयं श्री प्राणनाथ जी हैं।

दई तुमकों मैं कुलजम, इनको किया गरक।
पढ़ो मेरे कलाम को, भागे सारी सक।।८७।।

मैंने तुमको यह कुल्ज़ुम वाणी दी है। इस वाणी की ज्ञानधारा में शैतान की सेना वैसे ही डूब जाएगी, जैसे फिरऔन की सारी सेना दरिया–ए–कुल्ज़ुम में डूब गयी थी। यदि मेरी तारतम वाणी को पढ़ोगे, तो तुम्हारे अन्दर के सारे संशय मिट जायेंगे।

भावार्थ– कुल्ज़ुम शब्द अरबी भाषा का है, जिसका

अर्थ होता है– गहरा या लाल। तारतम वाणी में अध्यात्म जगत के उन गहनतम रहस्यों का स्पष्टीकरण है, जो आज तक सबके लिये अज्ञात थे। लाल रंग प्रेम का प्रतीक है। परब्रह्म के अलौकिक प्रेम (इश्क) को दर्शाने वाली यह ब्रह्मवाणी है। इस आधार पर इसका नाम कुल्ज़ुम पड़ा है।

तफ्सीर–ए–हुसैनी के १३वें पृष्ठ पर यह वर्णित है कि किस प्रकार दरिया–ए–कुल्ज़ुम में मूसा की चमत्कारिक लाठी के प्रभाव से पुल बन गया था, जिसके ऊपर से हारून की उम्मत पार हो गयी थी, किन्तु फिरऔन की सारी फौज उसी में डूब गयी थी, अर्थात् यह ब्रह्मवाणी ब्रह्मसृष्टियों को भवसागर से पार करने वाली है तथा माया (दज्ञाल) की शक्तियों को नष्ट करने वाली है।

दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार फिरऔन की सारी सेना

दरिया–ए–कुल्ज़ुम में गर्क हो गयी थी, उसी प्रकार सुन्दरसाथ के साथ दुर्व्यवहार करने पर औरंगज़ेब की सारी सत्ता समाप्त हो गयी।

महामत कहे ऐ मोमिनों, सुकराना ल्याओ बजाए।
दज्जाल सों लड़ाई, और क्यों कर लियो बचाए।।८८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आप पल–पल धनी को धन्यवाद दीजिए, जो दज्जाल से होने वाली लड़ाई में पल–पल आपकी सुरक्षा करते रहे हैं।

प्रकरण ।।५४।। चौपाई ।।३०१८।।

लाल दास लसकर (काजियों के पास) को गए

मराठों का दमन करने के उद्देश्य से औरंगज़ेब बादशाह २५ वर्ष तक दक्षिण भारत में रहा। उसने औरंगाबाद ज़िले में खुल्दाबाद को अपनी राजधानी बनाया, जिसका पूर्व नाम दौलताबाद था और इसे मुहम्मद तुगलक ने अपनी सैनिक राजधानी बनाया था। इसी खुल्दाबाद में आज भी औरंगज़ेब बादशाह की मजार बनी हुयी है। वहाँ बादशाह की सैनिक छावनी थी। काज़ी शेख इस्लाम भी वहीं पर आया हुआ था। इसलिए जब श्रीजी औरंगाबाद से बुढ़ानपुर आए, तो उन्होंने वहाँ से श्री लालदास जी को औरंगाबाद की सैनिक छावनी में भेजा।

उहां से आए बुढ़ानपुर, फेर पहुंचाया पैगाम।

भई लड़ाई सरीयत सों, बीच दीन इसलाम।।१।।

सब सुन्दरसाथ के साथ श्री प्राणनाथ जी औरंगाबाद से बुढ़ानपुर आये और उन्होंने श्री लालदास के माध्यम से काज़ी शेख इस्लाम के पास सन्देश भिजवाया। इस समय शरातोरा के विरूद्ध काजी शेख इस्लाम और श्री लालदास जी के बीच धर्मयुद्ध हुआ, ताकि वास्तविक दीन-ए-इस्लाम (निजानन्द) का मार्ग स्पष्ट हो सके।

लाल पैगाम लेइ के, गया उत सरियत।
करी काजी सों मुलाकात, लिख के भेजी तित।।२।।

श्री लालदास जी श्रीजी का सन्देश लेकर शरा-तोरा के बादशाह के निवास खुल्दाबाद गए। वहाँ उन्होंने काज़ी शेख इस्लाम से भेंट की। इसके लिए उन्होंने श्रीजी के लिखे हुए सन्देश के साथ अपने आने की बात लिखकर एक सेवक के माध्यम से काज़ी तक भिजवायी।

भावार्थ– सम्भवतः श्री लालदास जी ने श्रीजी के सन्देश के साथ अपने आने की सूचना एवं मिलने की इच्छा एक कागज पर लिखकर द्वार–सेवक के माध्यम से काज़ी तक भिजवायी होगी, ताकि उससे भेंट की जा सके।

काजी अन्दर बुलाए के, पूछनें लगा कलाम।
कहा हते क्यों कर आए, जवाब दिया इस ठाम।।३।।

काज़ी ने श्री लालदास जी को अन्दर बुलाया और सारी बात पूछने लगा कि अब तक कहाँ थे और अब यहाँ किसलिए आए हो? उसके उत्तर में श्री लालदास जी ने कहा।

हमको हादी भेजिया, तुम पर सेख इसलाम।

हमको जवाब दीजियो, जो भेजे तुम पर कलाम।।४।।

काज़ी साहिब! मुझे मेरे हादी ने आपके पास भेजा है। उन्होंने आपके लिए मेरे हाथ से जो सन्देश भिजवाया है, मुझे उसका उत्तर दीजिए।

पहिले तुम ल्याइया, मलूक चन्द अजमेर।

सवाल कलाम अल्लाह के, ताको जवाब करो इन बेर।।५।।

इसके पहले जब आप अजमेर में थे, उस समय भी मलूक चन्द जी ने श्रीजी का सन्देश आपको दिया था। मैं आपके पास आया हूँ, इसलिए कुरआन के इन प्रश्नों का उत्तर आप मुझे अवश्य दे दीजिए।

तब सेख इसलामें कह्या, ए तुमें खुले कलाम।

हम कहें तुमको, जथारथ इस ठाम।।६।।

तब शेख इस्लाम ने कहा कि मैं आपसे एक सत्य बात कहता हूँ कि कुरआन के भेद तो एकमात्र आप ही जानते हैं।

प्रात समें तुम आइयो, तुमकों कहें हम।

अब तो हम जात हैं, प्रात को कहियो तुम।।७।।

आप कल प्रातः के समय आइए, उस समय हम आपसे बातें करेंगे। इस समय तो मैं किसी आवश्यक कार्य से बाहर जा रहा हूँ। कल प्रातः आपसे अवश्य बात करूँगा।

दिन दूसरे प्रात को, गए लाल नूर महम्मद।

जाए के मूलाकात करी, जो साहिब सरियत हद।।८।।

दूसरे दिन प्रातःकाल श्री लालदास जी और नूर मुहम्मद ने जाकर काज़ी शेख इस्लाम से भेंट की, जो शरा–तोरा का सबसे बड़ा काजी था।

भई बातें सेख इसलाम सों, तहां बैठे थे यार।

मंगाए किताब सवाल की, करनें बैठे विचार।।९।।

वहाँ काज़ी शेख इस्लाम से बातें होने लगीं। वहाँ उनके कुछ दोस्त भी बैठे थे। श्रीजी के द्वारा भेजे गए प्रश्नों के ऊपर विचार करने के लिए सभी लोग किताबें मँगवाकर बैठ गए।

बोले लोग सरियत के, एतो लिखी गलत।

तब लालें जवाब दिया, कहा कहें तुमें इत।।१०।।

शरीअत की राह पर चलने वाले क़ाज़ी शेख इस्लाम के दोस्त कहने लगे कि ये तो किताबें ही गलत लिखी हैं। तब लालदास जी ने उत्तर दिया कि मैं आप लोगों को क्या कहूँ?

हदीसां कुरान की, तुम नाम धरत इत।

तो हम तुमसों क्या कहें, दावा रोज कयामत।।११।।

जब आप लोग कुरआन और हदीस के बारे में इस तरह की बात कर रहे हैं, तो आप लोगों से कियामत के जाहिर होने के विषय में मैं क्या बात करूँ?

तब सेख इसलामें कहया, हम ना कहेंगे गलत।

ए लिखनें में चूक है, है उमियों के दसकत।।१२।।

तब शेख इस्लाम ने कहा, हम इन किताबों को गलत नहीं कहेंगे, किन्तु लिखने में चूक हो गयी है, क्योंकि इन पर अनपढ़ लोगों के हस्ताक्षर हैं।

तब लालें जवाब दिया, इनका दोस कछू नाहीं।

तुम मायना लेओ अन्दर का, होए पहिचान तासों ताही।।१३।।

तब श्री लालदास जी ने उत्तर दिया कि लिखने वालों का कहीं कोई दोष नहीं है। यदि आप इनका आन्तरिक अर्थ लें, तो उसी से सच्चाई मालूम हो जाएगी।

लई किताब जो हाथ में, बैठा दिल पर दुसमन।

तिने दिल फिराइया, तित लड़े साथ मोमिन।।१४।।

काजी शेख इस्लाम ने अपने हाथ में किताब ले ली। काज़ी के दिल पर दज्जाल की बैठक हो जाने से, उसका दिल विरोध की मुद्रा में हो गया। सुन्दरसाथ उससे कुरआन के आध्यात्मिक विषयों पर विवाद करते रहे।

जवाब न होवे सवाल का, पोहोंचे ना हकीकत।

तब गुस्सा लेए के, बात कही मोंह सखत।।१५।।

काज़ी के पास श्रीजी द्वारा भेजे गए प्रश्नों का कोई जबाब नहीं था और वह सत्य तक पहुँच भी नहीं पा रहा था। तब वह क्रोध में आकर अपने मुख से कटु वचन कहने लगा।

फेर नवां किताब में, तिन बीच अल्ला कलाम।

तुम ऐ तो बात झूठी लिखी, ल्याए कीना इसलाम।।१६।।

तुम यह जो नयी किताब लाए हो, उसमें तुमने कुरआन के वचनों को उद्धृत कर झूठी बातें लिख रखी हैं। तुम इस्लाम के प्रति द्वेष भावना से ग्रसित होकर यह किताब लाए हो।

बड़ा डर किताब का, यों बोलत लगे सब।

लाल को गुस्सा चढ़या, लई हाथ से किताब तब।।१७।।

इस प्रकार क़ाज़ी के साथ उनके सारे दोस्त कुरआन का बहुत अधिक डर दिखाकर तरह-तरह की बातें करने लगे। यह सुनकर श्री लालदास जी को क्रोध आ गया और उन्होंने क़ाज़ी शेख इस्लाम के हाथ से किताब ले ली।

फेर काजी ने कहया, ए किताब राखे हम।

लई लाल के हाथ से, दई अपने खादम।।१८।।

पुनः काजी ने कहा कि इस किताब को हम अपने पास रखेंगे। उसने श्री लालदास जी के हाथ से किताब ले ली और अपने सेवक को दे दी।

तब काजी झुक के, करने लगा जवाब।

अब तुम कहा कहत हो, हमको इनके बाब।।१९।।

तब क़ाज़ी झुककर कपट भरी विनम्रता के साथ बातें करने लगा। वह कहने लगा कि इस किताब के सम्बन्ध में अब तुम क्या कहते हो?

तब लालें देखिया, फिरी द्रस्ट जो इन।

इन मारने का मन में लिया, ए बात ना सुने कान।।२०।।

तब श्री लालदास जी समझ गए कि इन लोगों की मानसिकता बिल्कुल बदल चुकी है। ये लोग अपने मन में मेरी हत्या के बारे में सोच रहे हैं। अब ये किसी भी प्रकार से सत्य की बात सुनना नहीं चाहते।

तब झुक के काजी ने कहया, मन में धर के रोस।

तुम हमसों कहा कहत हो, हुआ इन पर बड़ा अफसोस।।२१।।

तब काज़ी शेख इस्लाम ने अपने मन में क्रोध रखते हुए बनावटी विनम्रता से कहा कि तुम हमसे जो कुछ भी कहते हो, तुम्हारी इन मिथ्या बातों पर हमें बहुत ही अफसोस है।

तुम दावा करत हो, हमसों इमामत।

एही बात फेर फेर कहे, लालें जवाब दिया इत।।२२।।

तुम हमसे इमाम महदी और कियामत के ज़ाहिर होने की बातें करते हो और इस बात को बार-बार दोहराते हो। तब श्री लालदास जी ने उत्तर दिया।

हम तुम सों कहा कहों, कहावत हो हजरत तुम।

एही बात कहत हैं, एता कहत हैं हम।।२३।।

हजरत! आप तो इतने प्रतिष्ठित कहलाते हैं, भला हम आपसे क्या कह सकते हैं? हम तो वही बात कहते हैं, जो कुरआन-हदीसों में कही गयी है।

तब बोला सेख इसलाम, उन राह पाई नाहें।

तब लाल गुस्से भया, ना चाहिए काढ़ो जुबाएं।।२४।।

तब काज़ी शेख इस्लाम ने कहा कि पत्र लिखने वालों को खुद रास्ता नहीं मिला। यह सुनकर श्री लालदास जी को क्रोध आ गया और कहने लगे कि आपको अपने मुख से ऐसे शब्द नहीं बोलने चाहिए।

अब हम तुमको, कबहूं ना दें पैगाम।

अब हम फेर जात हैं, ले अपने घरों इसलाम।।२५।।

अब हम कभी भी आपको सन्देश देने के लिए दोबारा नहीं आयेंगे। अब हम वापस अपने इस्लाम के वास्तविक सिद्धान्तों के साथ अपने घर जा रहे हैं।

पीछे लगे बुलावने, सोहोबत के सब जन।

निकसी मुख थें मुनकरी, कबहूं मुख ना देखें तिन।।२६।।

इसके पश्चात् काज़ी के साथ रहने वाले उसके सभी दोस्त मन में कड़वाहट रखकर श्री लालदास जी को बुलाने लगे। उन्होंने श्रीजी के सन्देश को लेने से सीधे मना कर दिया था। ऐसे लोगों का कभी भी मुख नहीं देखना चाहिए।

इहां से चलके आए, घर मुफती अब्दुल रेहेमान।

जिनसों मिलाप करके, कहया पैगाम सुभान।।२७।।

यहाँ से चलकर श्री लालदास जी मुफ्ती अब्दुल रहमान के घर आए। उनसे मिलकर श्रीजी का सन्देश, जो कुरआन के प्रश्नों के रूप में लिखा हुआ था, उसे सुनाया।

कही हकीकत सरिएत, जो भई सेख इसलाम।

करी मुनकरी इनने, हम पहुंचाया पैगाम।।२८।।

शरातोरा के काज़ी शेख इस्लाम से जो बातें हुई थीं, वह सारी वास्तविकता भी उन्होंने कह सुनायी। श्री लालदास जी ने यह भी बताया कि हमने उनको सन्देश तो दिया, लेकिन उन्होंने मानने से इनकार कर दिया।

अब हम तुमको कहत हैं, जो हमें आवे कछू दोस।

तुम कहोगे हमको न कहया, पीछे बड़ो होसी अफसोस।।२९।।

आप कह सकते हैं कि आपसे तो कहा ही नहीं था , इसलिए हम श्रीजी का सन्देश आपसे कह रहे हैं, ताकि हमें कोई दोष न लगे। किन्तु इसे स्वीकार न करने पर, बाद में आपको बहुत अधिक अफसोस भी होगा।

हम तुम एक वतन के, तिस वास्ते उमेठत हैं कान।
हम देखा रसूल खुदाए का, तुम ल्याओ तिन पर ईमान।।३०।।

हम और तुम एक ही परमधाम के रहने वाले हैं, इसलिए दबाव देकर आपसे यह बात कही जा रही है। हमने इस संसार में खुदा के रसूल का दर्शन किया है। आप भी उन पर ईमान लाइये।

तब जवाब मुफतें दिया, रसूल आवे बखत कयामत।
सो तो अजू दूर है, तुम आज ल्याए क्या इत।।३१।।

तब मुफ्ती अब्दुल रहमान ने उत्तर दिया कि रसूल मुहम्मद (सल्ल.) तो कियामत के समय आयेंगे, जबकि कियामत आने में तो अभी बहुत देर है। आप आज ही कियामत की बात क्यों कर रहे हैं?

क्यों तुम जान्या दूर है, बीच किताब इकतलाफ।

समझ हमें कछू ना पड़े, क्यों दिल होवे साफ।।३२।।

यह सुनकर श्री लालदास जी ने उत्तर दिया कि आपने कैसे जाना कि कियामत अभी दूर है? आप किस किताब के आधार पर हमारी मान्यताओं का विरोध कर रहे हैं? तब मुफ्ती ने कहा कि उस किताब से हमें कुछ समझ में नहीं आता है। हम कैसे इस बात पर विश्वास कर सकते हैं कि कियामत आ गयी है?

तब जवाब लालें दिया, ल्याओ किताब तुम।

सब तारीखें समझाए के, एह बतावें हम।।३३।।

तब श्री लालदास जी ने उत्तर दिया कि उस किताब को आप ले आइये। उसमें लिखी हुयी तिथियों की गणना करके मैं बता दूँगा कि कियामत आ गयी है।

सवाल दिखाए कुरान के, ताको दिया जवाब।

ए तो आगे हो गये, ताके किस्से लिखे किताब।।३४।।

श्री लालदास जी ने कुरआन के कुछ प्रश्न दिखाकर स्वयं उसका उत्तर दिया। इस पर मुफ्ती कहने लगा कि इस किताब में जो किस्से लिखे हैं, ये किस्से तो पहले हो चुके हैं।

बड़ी भूल तुम बीच में, ले डारत किस्से कुरान।

वे रद जमाने हो गए, तुमको एही पहिचान।।३५।।

श्री लालदास जी ने कहा कि आप बहुत बड़ी भूल कर रहे हैं, जो कुरआन को किस्से-कहानियों की किताब मानते हैं। जिस ज़माने (युग) के ये किस्से हैं, वे जमाने तो अब हैं ही नहीं, रद्द हो चुके हैं। क्या आपको कुरआन की यही पहचान है? अर्थात् कुरआन में यदि किस्से-

कहानियाँ ही हैं, तो यह खुदाई इल्म कैसे हुआ?

ए सारे किस्से आज के, रसूल आए इत।

सरत लिखी सो भई, फरदा रोज कयामत।।३६।।

ये सारे किस्से तो आज के लिए घटित होते हैं। इस समय मुहम्मद (सल्ल.) आए हुए हैं। कुरआन में फर्दा रोज़ (कल के दिन), अर्थात् ग्यारहवीं सदी, में कियामत के आने का जिक्र है, अब वही समय चल रहा है।

आए असहाब रसूल के, जाहिर भए मोमिन।

आज तुमसो हम कहत हैं, हमें दोस दीजो कोई जिन।।३७।।

मुहम्मद (सल्ल.) के साथी मोमिन इस संसार में जाहिर हो गए हैं, इसलिए हम आपसे यह बात कह रहे हैं। भविष्य में अब हमें कोई दोष न देना कि आपको बताया

नहीं गया।

तीन दिन सोहोबत भई, आया हादी का हुकम।
अब तुम उत जिन रहियो, ए पाती लिखी हम।।३८।।

तीन दिनों तक मुफ्ती अब्दुल रेहेमान के साथ श्री लालदास जी की कुरआन पर चर्चा हुई। इसी बीच पत्र द्वारा श्रीजी का आदेश आ गया कि अब तुम किसी भी स्थिति में वहाँ न रहो। यह पत्र मैंने लिखा है।

नारायण दास ले आइया, सुन्या हक हुकम।
उते पानी ना पीजियो, सिताब बुलाए तुम।।३९।।

श्रीजी के लिखे हुए पत्र को लेकर नारायण दास जी आए थे। श्री लालदास जी ने उस पत्र को पढ़कर धाम धनी के आदेश को मान लिया। उस पत्र में लिखा था कि

लालदास जी! वहाँ पानी भी नहीं पीना है और पत्र को पाते ही वहाँ से चल देना है। मैंने तुम्हें शीघ्र बुलाया है।

ए तो लोग सरियत के, जिन तुम पर डारे तोहमत।
पोहोरा ए दज्जाल का, ए दुस्मन कयामत।।४०।।

शरा-तोरा के बँधे हुए ये मुसलमान लोग तुम्हारे ऊपर किसी तरह का आरोप न लगा दें। इस समय दज्जाल का आधिपत्य चल रहा है और वही कियामत को ज़ाहिर नहीं होने दे रहा है।

सुन पाती लालदास, संग चला नारायण।
नूर महम्मद आए मिला, सरिएत कबहूं ना ल्यावे ईमान।।४१।।

पत्र को पढ़ते ही श्री लालदास जी तुरन्त चल पड़े। उनके साथ नारायण दास जी भी थे। मार्ग में नूर मुहम्मद

भी आकर मिल गए। यह सच है कि शरीअत की राह पर चलने वाला व्यक्ति हकीकत और मारिफत पर कभी भी ईमान नहीं ला सकता।

चले पीछे दिन तीसरे, पोहोंचे हादी कदम।
मिलाप कर बातें करी, जो बीतक भई हम।।४२।।

खुल्दाबाद से चलने के तीसरे दिन श्री लालदास जी श्रीजी के चरणों में पहुँच गए। श्रीजी से मिलकर उन्होंने सारी बातें बताईं, जो काज़ी शेख इस्लाम और मुफ्ती अब्दुल रहमान के साथ घटित हुई थीं।

तब सुकराना राज का, बड़ा जो देखा इत।
काल के मुख थें काढ़ के, राखे पनाह में साबित।।४३।।

तब श्री लालदास जी ने धाम धनी की पल-पल बरसने

वाली अपार मेहर का अनुभव किया। काज़ी शेख इस्लाम ने श्री लालदास जी की हत्या कराने का निर्णय ले लिया था। इस प्रकार प्रत्यक्ष मृत्यु के मुख से निकालकर, धाम धनी ने श्री लालदास जी को अपनी शरण में सुरक्षित रखा।

महामत कहे ए मोमिनों, ए बीतक बुढ़ानपुर।
अब कहों आकोट की, राखे पनाह में ज्योंकर।।४४।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आपने अभी बुढ़हानपुर का घटनाक्रम सुना। अब मैं आकोट के उस वृतान्त का वर्णन करता हूँ, जिसमें धनी ने सुन्दरसाथ को अपनी शरण में रखकर रक्षा की।

प्रकरण ।।५५।। चौपाई ।।३०६२।।

रसूल से मुनकर

सिपारे दसमें मिनें, पाने सत्ताईस मिनें बयान।

किया मोमिनों मजकूर, सरे के सैतान।।१।।

कुरआन के सिपारे १० पृष्ठ २७ में लिखा है कि मोमिनों ने शरातोरा के शैतान बादशाह एवं उसके दरबारियों से बातें की।

मेहेतर थी कीनान का, काजी सरे का जेह।

रसूल की दावत से, मुनकर हुआ एह।।२।।

कोनैन देश का एक प्रतिष्ठित व्यक्ति, जो वहाँ के बादशाह के यहाँ शरातोरा का सबसे बड़ा काज़ी था, उसके पास मुहम्मद (सल्ल.) ने अपने खुदाई इल्म का सन्देश भेजा, किन्तु उसने मानने से इन्कार कर दिया।

भावार्थ– कुरआन के पारा १० आयत ४५–५४ में यह प्रसंग वर्णित है। इस चौपाई में कोनैन का बादशाह औरंगज़ेब है, जिसका अधिकारी शेख इस्लाम शरातोरा का सबसे बड़ा काज़ी है। वह श्रीजी के कियामत एवं इमाम महदी के ज़ाहिर होने के सन्देश को ठुकरा देता है।

जब मिला मिलावा मोमिनों, रूजू हुई सब जहान।
दिन छठा जुमें का, हुई पहिचान ईमाम।।३।।

जब छठे दिन में मोमिनों की जागनी लीला प्रारम्भ होती है, उस समय सारी दुनियाँ में यह बात उजागर हो गयी कि आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब्बुज़्ज़मां कौन हैं?

बैठे बातां करने, जिनमें जो बीतक।

दई साहिदी मोमिनों, गुझ खिलवत जहूर हक।।४।।

जब श्री लालदास जी काज़ी शेख इस्लाम से बातें करने लगे और उन्होंने याद दिलाया कि आपसे दिल्ली में, अर्स-ए-आज़म के अन्दर अल्लाह और उनकी रूहों के बीच होने वाले इश्क रब्द पर चर्चा हुई थी, तथा मोमिनों ने यह भी कहा था कि कुरआन में "अलस्तो बिरब्बिकुंम" आयत में साक्षी भी है।

तब काजी हुआ मुनकर, मोंसों नहीं मजकूर।

रूबरू ए मोमिनों, सब बोलत झूठा जहूर।।५।।

तब काज़ी शेख इस्लाम ने अपने सामने उपस्थित उन मोमिनों से साफ इन्कार कर दिया और कहा कि दिल्ली में इस विषय पर मेरी आपसे कोई बात ही नहीं हुई थी।

आप लोग इस तरह की झूठी बातें अपनी तरफ से गढ़ कर आए हैं।

सबों ने दई लानत, सरे के सैतान।
दुनियां में जाहिर भई, इन मारी राह सुभान।।६।।

इस प्रकार शरातोरा के शैतान काज़ी शेख इस्लाम को सभी ने फटकार लगाई और दुनियां में यह बात ज़ाहिर हो गयी कि इसी व्यक्ति ने हमें अल्लाह तआला की राह से भटका दिया है।

तो सरे के सैतान पर, सब को हुई लानत।
हमको लेने न दई, हकीकत जो मारफत।।७।।

इस प्रकार शरातोरा के शैतान काज़ी शेख इस्लाम को सबने धिक्कारा कि इस व्यक्ति के गुनाह के कारण हम

लोग अर्स-ए-आज़म की हकीकत और मारिफत की राह को नहीं अपना सके।

महामत कहे ए मोमिनों, ए लिखा बीच फुरमान।
मोहर करी दिल आंख पर, और जुबान कान कुफरान।।८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! कुरआन के अन्दर यह बात लिखी हुयी है कि काफिरों के दिल, आँख, जिह्वा (वाणी), और कानों पर मुहर लगी हुई है, अर्थात् उनका दिल अल्लाह तआला को अपने अन्दर बसा नहीं सकेगा। उनकी आँखें इस सत्य को देख नहीं सकती, इनकी जिह्वा इस सत्य को कह नहीं सकती, और न ही कान सुन सकते हैं।

भावार्थ- कुरआन का पारा १ सिपारा २ सयकूल की आयत १६४ में दज्ज़ाल के प्रकट होने का निशान लिखा

है कि मनुष्य की आँखों में इबलीस और दिल में अजाजील का वास है। इसी प्रकार, पारा १० सूरा तोबा आयत ८८ में वर्णित है कि हमने विधर्मियों के दिलों पर मोहर लगा रखी है। वह किसी को भी निजानन्द का अनुगामी बनने से रोकता है। वास्तव में यही दज्जाल के दो हथियार हैं, जिनके द्वारा वह समस्त मानवों को अपने नियन्त्रण में करके संसार की सत्ता को चला रहा है।

प्रकरण ।।५६।। चौपाई ।।३०७०।।

आकोट की बीतक

बुढ़ानपुर से आकोट, तहां रहे महिने चार।

खबर लई सब साथ की, करने लगे विचार।।१।।

श्रीजी बुरहानपुर से आकोट आए। वहाँ पर वे चार महीने तक ठहरे। वहीं पर उन्होंने सब सुन्दरसाथ की भ्रान्तियों को दूर किया तथा आगे की जागनी लीला के सम्बन्ध में विचार किया।

एक लिखी फतूअल्ला पर, रहे बीच औरंगाबाद।

तिनको सवाल कुरान के, लिख भेजे हैं आद।।२।।

उन्होंने एक पत्र औरंगाबाद में रहने वाले फत्हुल्लाह को लिखा, उसमें उन्होंने कुरआन के कुछ मूल प्रश्न लिखे।

भावार्थ– कुरआन का मूल विषय कियामत से सम्बन्धित है, जिसके अन्तर्गत उसके सभी निशान, इमाम महदी, तथा ईसा रूहुल्लाह का प्रकटन होना, आदि है। श्रीजी के द्वारा इन्ही विषयों पर प्रश्न लिखे गए।

और हकीकत लिखी, तुम लड़ने बांधी कमर।
होत एक दीन महम्मदी, तुम आड़े भए इन पर।।३।।

श्रीजी ने फत्हुल्लाह की वास्तविकता को दर्शाते हुए एक पत्र लिखा कि तुम शरीअत के समर्थन में मुझसे लड़ने के लिए तैयार हो गये थे। सब लोग हकीकत और मारिफत की राह पाकर मुहम्मद साहिब द्वारा दर्शाए गए सच्चे इस्लाम (निजानन्द) के अनुयायी बन सकते थे, लेकिन तुम इसमें बाधक बन गए।

आवते थे इसलाम में, तिन मारी सबन की राह।

बिन समझे बातें करी, दुसमन हुए खुदाए।।४।।

सब लोग सच्चे इस्लाम को ग्रहण करने के लिए तैयार थे, लेकिन तुमने सबको राह से भटका दिया और बिना समझे कुरआन के नाम पर तरह–तरह की बातें करते रहे। इस प्रकार तुमने खुदा के दुश्मन की भूमिका निभायी।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाइयों में जिस इस्लाम की चर्चा की जा रही है, वह वर्तमान समय में प्रचलित शरीअत का वह इस्लाम नहीं है, जिसमें केवल जाहिरी रोज़ा, नमाज़, हज़, ज़कात, दाढ़ी रखना, माँस खाना, एवं ज़िहाद के नाम पर दूसरों का खून बहाने के लिए उकसाया जाता है। बल्कि यहाँ उस इस्लाम का वर्णन है, जो बसरी सूरत (मुहम्मद साहिब) के द्वारा विश्व धर्म के

रूप में घोषित किया गया, जिसका उद्देश्य सारे विश्व को मानवता के सूत्र में बाँधना तथा सब के हृदय में प्रेम भरना है। किसी के खून करने की तो इसमें कल्पना भी नहीं की जा सकती। सच्चा मुसलमान कौन है? इसके सम्बन्ध में सनद ग्रन्थ में कहा गया है–

भली बुरी किनकी नहीं, डरता रहे सुभान।
सोहबत खूनी की न करे, या दीन मुसलमान।।

सनंध २१/२२

खून करना तो दूर, जो खूनी की संगति में भी नहीं रहेगा, वही सच्चा मुसलमान है। संसार के एक अरब से अधिक मुसलमानों में ऐसे कितने हैं, जो इस कसौटी पर खरा उतर सकते हैं। कुरआन के पारः १७ सूरे हज २२ आयत ३७ में यह वर्णित है कि खुदा तक केवल संयम (तकवा) पहुँचता है, वहाँ कुर्बानी के नाम पर पशुओं का

रक्त या माँस नहीं पहुँचता।

अब सवाल पठाए हैं, तिनको दीजो जवाब।

जो पढ़े तुम आरफ हो, तो कहो इनके बाब।।५।।

अब मैंने तुम्हारे पास कुछ प्रश्नों को लिखकर भेजा है, तुम अवश्य उनका उत्तर देना। यदि तुम कुरआन पढ़कर बहुत बड़े ज्ञानी बन गए हो, तो मेरे प्रश्नों के सम्बन्ध में लिखना।

हम आवत है दीन में, हमको करो मुसलमान।

दीन महम्मद के दाखिल करो, होए तुमारे गुलाम सुने कान।।६।।

हम दीन-ए-इस्लाम को ग्रहण करने के लिए तैयार हैं, लेकिन तुम हमें सच्चा मुसलमान बनाने के लिए तैयार हो जाओ। यदि तुम मुहम्मद साहिब द्वारा दर्शाये हुए सच्चे

इस्लाम में मुझे शामिल कर लेते हो, तो हम तुम्हारे गुलाम बनकर तुम्हारी सारी बातों को सुनने के लिए तैयार हैं।

हमको समझाओ तुम, रब्बानी कलाम।
जो लिखा सो सब करें, करो दाखिल बीच इसलाम।।७।।

तुम हमें कुरआन की हकीकत और मारिफत के ज्ञान के विषय में समझाओ और उसके अनुसार सच्चे इस्लाम में हमें सम्मिलित करो। हम वायदा करते हैं कि उसमें जो भी हकीकत की बात लिखी है, उसका हम पालन करेंगे।

तब तोड़ी तुम को, खाना पीना हराम।
जोलों हमारी निसां ना भई, तोलों जिन करो कोई काम।।८।।

जब तक मेरे प्रश्नों का उत्तर देकर मुझे सन्तुष्ट नहीं कर

देते, तब तक तुम्हारे लिए खाना–पीना हराम है, और तब तक तुम्हें कोई भी काम नहीं करना चाहिए।

हम लाखों कबीले हिन्दुअन के, होत दाखिल दीन इसलाम।
एह काम छोड़ के, कहा करो इस ठाम।।९।।

हम लाखों हिन्दू परिवारों के साथ सच्चे दीन–ए–इस्लाम में शामिल होने के लिए तैयार हैं। इसलिए इस नेक काम को छोड़कर तुम व्यर्थ के कामों में क्यों उलझे पड़े हो?

भावार्थ– इन चौपाइयों से धाम धनी ने फत्हुल्लाह को एक प्रकार से चुनौती दी है कि वह मात्र शरीअत की ओट में दूसरे मतावलम्बियों पर अत्याचार करना चाहता है। उसे सच्चे धर्म के वास्तविक स्वरूप की पहचान ही नहीं है।

जो सिफत कुरान में, लिखी नाजी फिरके की।

जो तुम हो उन में, तो कहो खबर वही उतरी।।१०।।

कुरआन के अन्दर नाज़ी फिरके (ब्रह्मसृष्टियों के समूह) की जो महिमा लिखी है, यदि तुम स्वयं को उनमें मानते हो तो इन वचनों (नाज़ी फिरके) का आशय समझाओ कि ये कौन हैं?

जो रूहें दरगाह मिनें, कही महम्मद बारे हजार।

जो तुम हो तिन में, तो करो हमको खबरदार।।११।।

मुहम्मद साहिब ने परमधाम की जिन १२००० रूहों का वर्णन किया है, यदि तुम स्वयं को उनमें मानते हो तो मुझे भी सावचेत करो।

जिन रूहों का मरातबा, लिखा अमेत सालून।

तिन मानंद कोई नहीं, तुम देओ जवाब हो कौन।।१२।।

कुरआन के अमेत सालून सिपारे में जिन रूहों की महिमा लिखी है, और उसमें कहा गया है कि उनके जैसा कोई भी नहीं, तो मेरे इस प्रश्न का उत्तर दो कि तुम स्वयं कौन हो? अमेत सालून में लिखी हुई रूहों में से हो या कुंन में से?

मोमिन नूर बिंलद से, उतरे दुनियां में।

जो तुम हो उन कौम में, तो करो जवाब हम सों।।१३।।

मोमिन अर्स-ए-आज़म से इस नश्वर जगत में आए हैं। यदि तुम अपने को मोमिन मानते हो, तो मेरे इन प्रश्नों का उत्तर दो।

बीच नसारों के गिरोह में, लाहूत का निसान।

जो तुम हो तिन में, तो कर देओ हमें पहिचान।।१४।।

ईसाइयों के ग्रन्थ बाइबिल में परमधाम का सांकेतिक वर्णन किया गया है। यदि तुम स्वयं को परमधाम का वासी मानते हो, तो मुझे भी उसकी पहचान कराओ।

जो लिखी सिफत यहूदन की, बीच अल्ला कलाम।

जिन बीच में महम्मद, करे पातसाही तमाम।।१५।।

कुरआन में हिन्दुओं (यहूदियों) की महिमा लिखी हुई है तथा यह भी बताया गया है कि मुहम्मद साहिब आखरूल मुहम्मद महदी के रूप में उनमें आकर सबका स्वामित्व करेंगे।

जो तुम हो तिन में, तो हमको देओ खबर।

गिरोह बनी असराईल की, जो है सब ऊपर।।१६।।

यदि तुम उनमें से हो, तो मुझे भी बताने का कष्ट करो। बनी असराईल, अर्थात् श्रीजी के अनुयायियों, की गरिमा सबसे श्रेष्ठ बतायी गयी है।

जो तुम हो उन में, तो कर देओ हमें पहिचान।

बांध्या बनी असराईलें, कयामत का निसान।।१७।।

यदि तुम स्वयं को उनमें मानते हो, तो मुझे यह बताओ कि बनी असराईल की पहचान क्या है? कियामत के सातों निशानों को बनी असराईल ने ज़ाहिर कर दिया है।

जो तुम हो तिन में, सो निसां करो तुम।

जो जवाब न आवे तुम को, तो बताये देवें हम।।१८।।

यदि तुम अपने को बनी असराईल की उम्मत मानते हो, तो तुम मुझे इन प्रश्नों के उत्तर से सन्तुष्ट करो। यदि तुम्हें इन प्रश्नों के उत्तर नहीं आते हों, तो मैं बताने के लिए तैयार हूँ।

इन भांत के निसान, लिख भेजे उन ऊपर।

जवाब न आवे तिन को,सरमिंदे हुए योंकर।।१९।।

कुरआन से सम्बन्धित इस प्रकार के प्रश्न लिखकर श्री प्राणनाथ जी ने उनके पास भेजा। उन्हें भला उत्तर कहाँ से आता? अन्ततोगत्वा उन्हें शर्मिन्दगी झेलनी पड़ी।

यों ही एक लिखा काजी पर, हिदायतुल्ला जाको नाम।

एक लिखा अमानत खां दीवान पर, रूक्का बहादुर खान इस ठाम।।२०।।

इसी प्रकार का एक पत्र श्रीजी ने काज़ी हिदायतुल्ला के नाम से लिखा। एक अमानत खाँ दीवान और एक बहादुर खाँ के लिये भी लिखा।

यों बैठ के आकोट में, पोहोंचाए पैगाम।

पर दिल मुरदे न पावहीं, पहिचान दीन इसलाम।।२१।।

आकोट में धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी ने सभी प्रमुख मुस्लिम अधिकारियों के पास सन्देश भिजवाया, किन्तु जीव सृष्टि भला हकीकत एवं मारिफत के ज्ञान वाले निजानन्द की पहचान कैसे कर सकती है?

भावार्थ– जीव सृष्टि के दिल को मुर्दा दिल कहा जाता है, क्योंकि इनके अन्दर श्रद्धा, विश्वास, सत्यता,

समर्पण, एवं प्रेम का अभाव होता है।

इहाँ भाई से भाग के, आया अब्बल खान।

रह न सके माया मिने,जाको हक पहिचान।।२२।।

अपने भाई के घर से भागकर अव्वल खाँ आकोट में श्रीजी के चरणों में आ गया। भला जिसने श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में अपने परवरदिगार अल्लाह तआला की पहचान कर ली हो, वह माया में कैसे रह सकता था?

बोहोत दिलासा करी, बीच तरीकत इसलाम।

तुमको दुनिया न लगे, हम जब बैठें एक ठाम।।२३।।

धाम धनी ने उसे निजानन्द का प्रेममयी मार्ग दर्शाते हुए बहुत सान्त्वना दी और स्पष्ट रूप से कह दिया कि तुम्हारे ऊपर माया का प्रभाव नहीं पड़ेगा। मैं जब एकान्त

स्थान (श्री पद्मावती पुरी धाम) में विराजमान होऊँगा।

भावार्थ– इस्लाम की तरीकत का तात्पर्य है– हृदय से की जाने वाली बन्दगी।

तब तुमें बुलावेंगे, जिन तुम होवो दलगीर।
तुम हमारी आत्मा, सांचे तुम सूर धीर।।२४।।

तो मैं तुम्हें अवश्य बुलवा लूँगा। तुम मुझसे अलग रहने का जरा भी दुःख नहीं मानो। तुम परमधाम की आत्मा हो और जागनी–पथ के सच्चे उच्च (धीर) वीर हो।

भावार्थ– जिस प्रकार सागर की लहरों या तेज हवाओं से पर्वत कभी भी विचलित नहीं होता, अपितु अपनी धीरता से शान्त खड़ा रहता है, उसी प्रकार बहुत उच्च स्तर के विद्वान को धीर, गम्भीर, विद्वान, या बहुत बड़े योद्धा को धीर–वीर कहकर सम्बोधित किया जाता है।

तुम चार दिन रहो भाइयों भेले, अब रोसन होत है काम।
तुम बैठे अरस अजीम में, निज वतन जो धाम।।२५।।

तुम अभी कुछ (चार) दिनों तक अपने भाइयों के साथ गुजारा कर लो। अब जागनी कार्य का प्रकाश बहुत तीव्र गति से फैलने वाला है। तुम्हारा मूल घर तो परमधाम है, जहाँ तुम अपने मूल तन से बैठे हुए हो।

आकोट के चौधरी, ताको भई पहिचान।
ज्यों लौकिक गुरू मानिए, इतना था ईमान।।२६।।

जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपने सांसारिक गुरु का सम्मान करता है, उसी प्रकार आकोट के चौधरी ने भी श्रीजी को अपना गुरु ही माना। उसको बस इतनी ही पहचान हो सकी और उसे इतना ही विश्वास था।

बार दो चार अपने घर, बुलाए करी मनुहार।

अरूगाए भली भाँत सों, कर आचार विचार।।२७।।

उसने दो-चार बार धाम धनी को सुन्दरसाथ सहित अपने घर पर भोजन के लिये बुलाकर बहुत सेवा की। सामाजिक परम्पराओं का पालन करते हुए उसने सबको अच्छी प्रकार से भोजन कराया।

साथ सबको बुलाए, प्रसाद लेवे को।

साथ राज के संग, बैठाए कबीले मों।।२८।।

उसने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ को भोजन के लिए निमन्त्रित किया और उन्हें अपने सब कुटुम्बियों के साथ बैठाकर आदरपूर्वक भोजन कराया।

चरचा किरंतन सेवा को, लियो सुख माफक अंकूर।
तहां रहे तिन माफक, उत तैसा हुआ मजकूर।।२९।।

उसने अपने अँकूर के अनुकूल चर्चा, कीर्तन, तथा सेवा का सुख लिया। श्री प्राणनाथ जी भी उसके भावों के अनुसार ही वहाँ रहे तथा उसके मानसिक स्तर के अनुसार ही वहाँ चर्चा भी की।

उत आए एक ब्राह्मण, सुनने को चरचा।
परगने बराड़ के, हाकिम का गुमास्ता।।३०।।

वहाँ श्रीजी की चर्चा सुनने के लिए एक ब्राह्मण आया, जो बराड़ परगने के अधिकारी का सेवक था।

तिन सुनी चरचा कबीर की, लगे कलेजे घाव।
खुल्या द्वार हकीकत का, ऐसा लगा आए दाव।।३१।।

उसने श्रीजी के मुखारविन्द से कबीर जी के बीजक ग्रन्थ के ऊपर चर्चा सुनी। वह चर्चा उसके दिल को छू गयी। उसे अक्षरधाम तक का पूरा ज्ञान हो गया और ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे प्रत्यक्ष रूप से अक्षरधाम का दर्शन भी हो रहा है।

भावार्थ– जब श्रीजी चर्चा करते थे, तो श्री राज जी का आवेश स्वरूप अनेक रूपों में दर्शन दिया करता था। सुन्दरसाथ अपनी खुली आँखों से सब कुछ देखता था। यह श्रीजी के शरीर से होनी वाली ब्रह्मलीला का विशेष सुख था।

भूल गया सरीर को, नजर पहुंची बका में।
और सान कछू न रही, हुआ सब तुमही सें।।३२।।

इसका परिणाम यह हुआ कि उसे अपने शरीर की कुछ भी सुधि न रही और वह अपने को पूर्णतया भूल गया। उसकी दृष्टि अक्षरधाम में विचरण करने लगी और उसके मुख से एक ही वाक्य निकलता था- "तू ही तू है, तुम से सब कुछ हुआ।"

घरों जाए पीछे फिरे, ज्यों ताना कोरी के।
आवें जाए फिर फिर फिरे, नजर भई इनें ए।।३३।।

जिस प्रकार कपड़ा बुनते समय जुलाहे का करधा बार-बार आता-जाता है, उसी तरह वह ब्राह्मण घर जाकर फिर वापस लौट आता। उसकी दृष्टि एकमात्र धाम धनी पर केन्द्रित हो गयी थी। यद्यपि वह बाह्य दृष्टि से घर

अवश्य जाता था, किन्तु वह पल भर भी रुक नहीं पाता था और तुरन्त वहाँ से श्रीजी का दर्शन करने के लिए चल देता था।

जो बात कहे उनको, तो कहे तुमही हो तुम।
और न मुंह से काढ़हीं, तुम पे आए हम।।३४।।

यदि उससे कोई बात कही जाती, तो वह उसको सुनाई नहीं पड़ती थी और न उस सम्बन्ध में उसका मस्तिष्क ही काम करता था। उसके मुख से केवल एक ही बात निकलती थी कि बस तू ही तू है और तुम्हारे साथ ही हम परमधाम से आए हैं।

जो चरचा कर समझाइये, तों बोल न निकसे और।
चित उनका लगा, मूल अक्षर के ठौर।।३५।।

यदि चर्चा करके उसको समझाने का प्रयास किया जाता, तो उसके मुख से "तू ही तू" के सिवाय और कोई शब्द ही नहीं निकलता था। मूल अक्षर के धाम में उसका चित्त पूरी तरह से एकाग्र हो चुका था।

पीछे फिरता ही रहे, समें प्रात के नदी पार।
श्री राज दातौन करत हैं, पैठा नदी में हुसियार।।३६।।

वह श्री प्राणनाथ जी के साथ हमेशा पीछे-पीछे रहने का प्रयास करता था। एक दिन श्रीजी नदी के उस पार दन्तधावन कर रहे थे, धाम धनी के पास जाने की तड़प में वह नदी के जल में उतर पड़ा।

समेत कपड़े चला गया, गिर पड़ा बीच में।
सुध न सान सरीर की, गिरी पाग उतर उन सें।।३७।।

वह कपड़े पहने ही नदी के अन्दर चला गया। अचानक बीच नदी में वह गिर पड़ा और उसकी पाग उसके शिर से उतरकर गिर गयी। फिर भी उसे अपने शरीर की जरा भी सुधि नहीं थी।

पैठे साथी दौड़ के, निकाला नदी से।

कपड़े सुखाए पहिनाए, कछू सुध न रही इने।।३८।।

सुन्दरसाथ उसको निकालने के लिए दौड़ पड़े तथा छलांग लगाकर नदी से उसे निकाला। उसके कपड़े उतारकर सुखाए गए तथा पुनः पहनाए गए। फिर भी उसे यह सुधि नहीं थी कि मैं नदी में गिर गया था या इस समय कहाँ हूँ?

पूछा उनें रसोई का, कहया चौका भए दिन तीन।
मैं जानत नहीं कछुए, ए लोगों कहया आकीन।।३९।।

जब उससे भोजन के बारे में पूछा गया, तब उसने कहा कि मुझे इस बारे में कुछ भी मालूम नहीं है कि मुझे भोजन करना है या नहीं। उसके पड़ोस के लोगों ने कहा कि हम विश्वास के साथ कह रहे हैं कि इसने तीन दिन से भोजन नहीं किया है।

ए भांत इनका फेर, पीछा हटाया चित।
फिराया फिरे नहीं, उनके भाई बुलाए इत।।४०।।

इस तरह से धाम धनी ने उसके चित्त को अक्षरधाम से हटा दिया, किन्तु घर वापस भेजने पर भी वह जाने को तैयार नहीं हुआ। अन्त में उसके भाई को वहाँ बुलाया गया।

डोली में बैठाए के, पहुंचाया अपने ठौर।

अंकूर माफक उन लिया, पावे न ज्यादा और।।४१।।

उसे डोली में बैठाकर उसके निवास पर पहुँचा दिया गया। उसमें अक्षर की सुरता थी और उसके अनुकूल ही उसने सुख लिया। उससे ज्यादा भला कैसे पा सकता था?

भावार्थ– इस चौपाई में यह संशय होता है कि श्रीजी के साथ चलने वाली ५००० की संख्या वाली जमात में १५०० ईश्वरीय सृष्टि भी थीं। किन्तु यहाँ यह क्यों कहा गया कि ईश्वरीय सृष्टि होने के कारण इतना ही सुख मिलेगा। क्या वह श्रीजी के साथ चलने का अधिकारी नहीं था?

इसका समाधान यह है कि बराड़ परगने के उस ब्राह्मण का हृदय निर्मल और भावुक था। उसने प्रेम मार्ग पर

इतनी तेजी से कदम बढ़ा दिया कि उसका बोझ सह पाना उसके जीव के वश में नहीं रह गया था। ईश्वरीय सृष्टि की जगह यदि किसी ब्रह्मसृष्टि के साथ उसका जीव जुड़ा होता, तो निश्चित है कि उसे मारिफत की अवस्था प्राप्त हो जाती। ईश्वरीय सृष्टि में ईमान और बन्दगी (विश्वास और भक्ति) की प्रमुखता होती है, प्रेम की नहीं। यदि ब्रह्मसृष्टि का अँकुर होता , तो उसका जीव उस अनुभव को आसानी से सहन कर लेता।

सुकदेव ब्राह्मण था, मुलक उदेयपुर का।
आतम सौंपी कदमों, अंकूर जेता तेता सुख लिया।।४२।।

शुकदेव उदयपुर का रहने वाला एक ब्राह्मण था। उसने अपनी आत्मा धनी के चरणों में सौंप दी और अपने अँकुर के अनुकूल ही सुख लिया (वह भी ईश्वरीय सृष्टि

था)।

फेर उहां से चले, आए कापस्तानी।

तहां बैठ चरचा करी, गिरोह जान अपनी।।४३।।

पुनः वहाँ से चलकर श्रीजी कापस्तानी आए। वहाँ पर कुछ ब्रह्मसृष्टियों के होने के कारण श्रीजी ने चर्चा की।

तहां ईमान ल्याइया, दगड़ा और दत्ता।

अमराजी आइया, सुन थोड़ी सी चरचा।।४४।।

वहाँ पर दगड़ा और दत्ता ने धाम धनी के चरणों में स्वयं को सौंप दिया। मात्र थोड़ी सी चर्चा सुनने पर अमराजी को श्रीजी पर विश्वास आ गया।

और कुटुम्ब कबीला अपना, ल्याया बीच दीन।

तामे अमराजी रह गया, जिनका बका आकीन।।४५।।

और उसने अपने सम्पूर्ण कुटुम्ब को सुन्दरसाथ के समूह में शामिल कराया। अमराजी श्रीजी की सेवा में ही रह गए, क्योंकि उनमें श्री राज जी के प्रति अटूट विश्वास था।

फेर दिन दस पांच रह के, आए एलचपुर पोंहोंचे।

तहां एक परसाजी ने, खिजमत करी ए।।४६।।

कापस्तानी में पाँच-दस दिन रहकर श्रीजी ऐलचपुर पहुँचे। वहाँ एक किसान ने सब सुन्दरसाथ की बहुत सेवा की।

जो तुम इते रहो, तो मैं सेवों तुमें।।
ज्वारी मेरे बहुत हैं, मैं सेवा करों तिन सें।।४७।।

उसने बहुत ही भावपूर्ण शब्दों में श्रीजी से कहा कि यदि आप यहीं रहते हैं, तो मैं आपकी सेवा करने के लिए तैयार हूँ। मेरे खेत में इस वर्ष ज्वार की पैदावार बहुत अच्छी हुई है, मैं उससे सब सुन्दरसाथ की सेवा करना चाहता हूँ।

तीन चार दिन सेवा करी, उच्छव रसोई।
फेर तहां से चले, केतिक मजलें राह में भई।।४८।।

उसने तीन-चार दिन तक बहुत ही भावपूर्वक श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ की सेवा की। प्रीतिभोज के मनमोहक उत्सव हुए। इसके पश्चात् श्री प्राणनाथ जी वहाँ से चल पड़े। मार्ग में कई पड़ाव पड़े।

मिला फकीर संग का, तिन साखियां दे करी सेव।

सुन चरचा गलित भया, पाया नहीं भेव।।४९।।

मार्ग में एक फकीर से भेंट हुई , जिसने कबीर की साखियाँ सुनाकर श्रीजी को आनन्दित किया। वह श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को सुनकर गलितगात हो गया, लेकिन उनके स्वरूप की पहचान न कर सका।

तहाँ से आए देवगढ़, तहाँ रहे दिन चार।

राम टेक का राजा था, तहां किया ना किन विचार।।५०।।

ऐलचपुर से श्रीजी देवगढ़ आए और वहाँ चार दिन तक रहे। राम टेकरी के राजा ने श्रीजी के सन्देश को बहुत हल्के में लिया। इसलिए वहाँ के लोगों में से किसी ने भी श्रीजी की चर्चा में ज्यादा चिन्तन नहीं किया।

उहां से चलके, आए राम नगर।

भई मजलें दरम्यान में, ए सुख सब ऊपर।।५१।।

देवगढ़ से चलकर कई दिनों के पड़ाव को पार कर श्रीजी सुन्दरसाथ सहित रामनगर आए। रामनगर की जागनी लीला का सुख सबसे अधिक है।

एक समद घोड़ा, असवारी को हाजर।

श्री राज तापर विराजत, संग मोमिनों का लसगर।।५२।।

श्रीजी की सवारी के लिए एक सफेद रंग का घोड़ा हमेशा सेवा में उपलब्ध रहता था। श्री प्राणनाथ जी उस पर विराजमान होते थे और साथ में सुन्दरसाथ का समूह पैदल चला करता था।

तहां मांगत टूंका चलहीं, झोरी भर ल्यावें।

श्री राज को अरूगाए के, साथ को बांट देवें।।५३।।

रास्ते में सुन्दरसाथ अपनी झोलियों में भिक्षा माँगकर लाते हैं। वे सबसे पहले श्रीजी को भोजन कराते हैं और तत्पश्चात् सारा भोजन सुन्दरसाथ में बाँट देते हैं।

सब साज फकीरी का, सोभित सब सनंध।

मोमिनों भेख पहिचानिया, क्या पहिचाने अंध।।५४।।

सब सुन्दरसाथ ने विरक्त भेष धारण किया हुआ है। इस प्रकार वे तप, त्याग, तेज, आदि अनेक प्रकार के गुणों से बहुत अधिक शोभायमान हो रहे हैं। सुन्दरसाथ ने विरक्त भेष और उसमें विराजमान अपने धाम धनी को पहचान लिया है। माया के अन्धे जीव भला उनकी क्या पहचान करेंगे?

एक लड़ाई राह में, दज्जालें करी दरम्यान।

भई गोंडों के गांव मिने, करी बिन पहिचान।।५५।।

रास्ते में चलते समय गोंडों के गाँव में बहुत विवाद हो गया। गोंडों के दिल में अज्ञान रूपी राक्षस बैठा था, जिस कारण उन्होंने श्रीजी के स्वरूप की पहचान नहीं की और सुन्दरसाथ से लड़ाई की।

रामनगर आए पहुंचे, रहे केतेकी पर।

तहां अस्तल बनाए के, गणेस महन्त के बराबर।।५६।।

श्रीजी सुन्दरसाथ सहित रामनगर में केतकी नदी के किनारे आ पहुँचे। वहाँ पर महन्त गणेश जी का एक आश्रम था, जिसके पास ही श्रीजी और सुन्दरसाथ के ठहरने के लिए एक स्थान बनाया गया।

पहिले आए छतई मिले, अपने कबीले समेत।

और आया सुकई, और चूरामन इत।।५७।।

सबसे पहले छतई भाई ने अपने परिवार सहित तारतम ज्ञान ग्रहण किया। इसके पश्चात् सुकई और चूड़ामणि भी सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुए।

और कुंजा वीर जी, और राम रतन।

और गंगा सन्ता बेटी, कुसल्या जातमाल मोमिन।।५८।।

कुँजा, वीर जी, राम रतन, गंगा, उनकी बेटी सन्ता, और कौशल्या जातमाल, आदि सुन्दरसाथ ने धनी के चरणों से अपना सम्बन्ध जोड़ा।

और सूरत आइया, अपने तन मन धन।

और देवकी नन्दन ईमान से, और स्तुति देत श्रवन।।५९।।

सूरत सिंह अपने तन, मन, धन के साथ श्रीजी के ऊपर समर्पित हो गए। देवकीनन्दन सच्चे ईमान से धाम धनी की शरण में आए और अति श्रद्धापूर्वक चर्चा का श्रवण करते थे।

और जगन्नाथ जातमाल, ए आए एचदे से।

मकरन्द दास जातमाल, और कबीला दाखिल इनमें।।६०।।

एचदे से जगन्नाथ जातमाल और मकरन्द दास जातमाल अपने सम्पूर्ण परिवार सहित धाम धनी की शरण में आ गए।

गोकल दास जातमाल, ले कबीला समेत।

और सुन्दर दास आए, ईमान मुख कहत।।६१।।

गोकुल दास जातमाल ने अपने परिवार सहित तारतम ज्ञान ग्रहण किया। सुन्दरसाथ अपने मुख से अटूट ईमान की बातें करते हुए श्री राज जी पर समर्पित हो गए।

जयंतीदास जातमाल, और कबीला ल्याया।

फेर पीछे से बुलाया, पहिले आपको ईमान आया।।६२।।

जयन्ती दास जातमाल अपने परिवार सहित श्रीजी के प्रति समर्पित हो गए। पहले इन्होंने स्वयं को धाम धनी के चरणों में सौंपा, तत्पश्चात् अपने परिवार को बुलाकर धनी से उनकी आत्मा का सम्बन्ध कराया।

और हरि राम भाई, और लड़ेती आई।

चन्दा ईमान ल्याए के, कबीला पीछे ल्याई।।६३।।

हरि राम भाई, लड़ेती, और चन्दा ने धाम धनी के चरणों से अपनी आत्मा का सम्बन्ध जोड़ा। इसके पश्चात् इन्होंने अपने परिवार को भी निजानन्द की राह पर चलाया।

और आया सुन्दर, था नानक पन्थ में।

और ननियां आई , बाई लाली आस इन सें।।६४।।

नानक पन्थ के अनुयायी सुन्दर ने भी निजानन्द का मार्ग अपनाया। नानियां बाई तथा लाली बाई ने भी स्वयं को श्री राज जी के चरणों में सौंप दिया।

और मूसे खां पठान, आया बुढ़ानपुर से।

ईमान ल्याए घर गया, रहया कबीले में।।६५।।

बुरहानपुर का रहने वाला मूसा खान पठान पहले तो श्रीजी पर ईमान अवश्य लाया, किन्तु जब वह घर गया तो परिवार में ही उलझ गया।

और रंचो बढ़ई, जयंति काके उपली पहिचान।

आवत है दीदार को, ले दिल में ईमान।।६६।।

रन्चो बढ़ई तथा जयन्ती काका को श्रीजी के स्वरूप की बाहिरी पहचान थी। वे अपने दिल में विश्वास लेकर प्रतिदिन श्रीजी का दर्शन करने आया करते थे।

मुरलीधर राह में, सुनके ए ल्याए ईमान।

उनको असल अंकूर की, उतहीं हुई पहिचान।।६७।।

मुरलीधर मार्ग में कहीं जा रहे थे , किन्तु सौभाग्य से श्रीजी की चर्चा श्रवण करने का अवसर मिला। उसका उन पर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने तुरन्त अपनी आत्मा धनी के चरणों में सौंप दी। उनके अन्दर परमधाम की ब्रह्मात्मा थी और उन्होंने वहीं पर श्रीजी के स्वरूप में अपने धाम धनी को पहचान लिया।

कानजी आहेड़ का, सो गया एचदे में।

गोकुलदास मकरन्द को, आए इसलाम तारतम सुनके।।६८।।

कान्ह जी भाई आहेड़ के रहने वाले थे। वे तारतम ज्ञान ग्रहण कर एचदे चले गए। गोकुल दास और मकरन्द तारतम ज्ञान ग्रहण करके निजानन्द की राह में आए।

कौसल्या ने सुनी, और देमां मथुरी।

और श्री राम राजाराम, और भागो भाग भरी।।६९।।

कौशल्या, देमा, मथुरी, श्री राम, राजाराम और भागो बाई जैसे भाग्यवान सुन्दरसाथ ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

राजू और भंडारिन, और राई कुंवर।

इनों सुन्या तारतम, देखा पटन्तर।।७०।।

राजू भाई, भण्डारिन, और राय कुँवर ने चर्चा सुनने के पश्चात् देवी-देवताओं और परब्रह्म में अन्तर देखा, और श्रद्धापूर्वक तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

हिमोती और खेमाबाई, और आसबाई।

संभू और मन्ना, और राम कुंअर आई।।७१।।

हिमौती, खेमा बाई, आस बाई, शम्भू, मन्नू और रामकुँवर बाई ने अपनी आत्मा का सम्बन्ध धाम धनी के चरणों से जोड़ा।

जीवनदास और नवलदास, और आए भाई कल्यान।

और महासिंह चौधरी, और दौलत खां पठान।।७२।।

जीवन दास, नवल दास, कल्याण भाई, महासिंह चौधरी, और दौलत खान पठान धाम धनी के चरणों में आये।

और पूरन नाऊ, और आसा राम।

और एक आसा लल्लू, और परसराम।।७३।।

पूरण नाई, आसा राम, आसा लल्लू, और परशुराम ने धाम धनी को अपनी आत्मा का आराध्य मान लिया।

और आए सेख खिदर, और अब्दुल रेहेमान।

और भिखारी दास, ले कबीले समेत ईमान।।७४।।

शेख खिदर और अब्दुल रेहेमान ने भी श्रीजी के स्वरूप पर अटूट विश्वास किया। भिखारी दास ने अपने पूरे परिवार के साथ तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और आए भाई रघुनाथ, कबीला इनका आया।

ए रामनगर की मजल, ए तो हिस्से माफक सुख पाया।।७५।।

रघुनाथ भाई ने अपने सारे परिवार के साथ धाम धनी के चरणों से अपनी आत्मा का सम्बन्ध जोड़ा। इन सारे सुन्दरसाथ ने रामनगर की जागनी लीला में अपनी आत्मा धाम धनी के चरणों में सौंप दी। इनके भाग्य में जितना सुख था, उतने ही सुख का इन्होंने अनुभव किया।

और बुढ़ानपुर से, आया बृन्दावन।
और नारायन दास, और बराड़ का साथ मोमिन।।७६।।

बुरहानपुर से वृन्दावन और नारायण दास तथा बराड़ से कई सुन्दरसाथ ने आकर धाम धनी के चरणों में अपनी आत्मा सौंप दी।

लच्छीदास खेमकरन, और आया कंनड जे।

और हरकृष्ण सुकदेव, और गिरधर बेकैद ऐ।।७७।।

लच्छीदास, खेमकरण, कन्नड़, हरिकृष्ण, शुकदेव, और गिरधर ने धनी के चरणों में स्वयं को सौंप दिया और माया के बन्धनों से मुक्त हो गए।

और खरगो माता उनकी, और आए जगरूप।

चरचा सुनत श्री राज की, सुन्दर रूप अनूप।।७८।।

जगरूप और उनकी माता खड़गो ने निजानन्द की राह अपनायी। वे श्रीजी के मुखारविन्द से युगल स्वरूप की अति अनुपम शोभा का वर्णन सुना करते थे।

और आया रामनगर में, ए जो गंगा राम।

और जो आया बदले, उन पाया आराम।।७९।।

दिल्ली से गंगाराम और शेख बदल रामनगर में आकर श्रीजी से मिले। धनी का दर्शन करके उन्हें अपार आनन्द का अनुभव हुआ।

पतिराम मोदी, और केसवदास।

और बल्लभदास संग, और मनिया खास।।८०।।

पतिराम मोदी, केशवदास, बल्लभदास, और मनिया ने विशेष रूप से निजानन्द के मार्ग को अपनाया।

और गिरधर बसन्त, और दयाल हसन।

और बिहारी फरास, और बिहारी रोसन।।८१।।

गिरधर, वसन्त, दयाल, हसन, विहारी दास फरास, और बिहारी, तथा रोशन ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

और गिरधर दरजी, और सूरज मल।
और गोविन्द राए ईमान, और लालमन निरमल।।८२।।

गिरधर दर्जी, सूरज मल, गोविन्द राय, और लालमन धनी की वाणी चर्चा से निर्मल होकर अपने अन्दर श्री राज जी के प्रति अटूट विश्वास लाए।

और देवराम, और पहाड़ी जाको नाम।
माता खेमकरन की, आई जातमाल के काम।।८३।।

खेमकरण जी की माता तथा देवराम जातमाल, जिनका दूसरा नाम पहाड़ी भी है, ने धनी के चरणों में तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

द्रष्टव्य– "जातमाल" का तात्पर्य माली जाति से है।

और देवी दास आइया, और आए भगवान।

सिद्धपुर पाटन से, दामोदर परवान।।८४।।

सिद्धपुर पाटन से इस समय देवी दास, भगवान, और दामोदर श्रीजी के चरणों में आए और उनके दर्शन से कृतार्थ हो गए।

और तिवारी उदई, थी लौकिक पहिचान।

श्री राज को घरों पधराए के, रसोई कराई प्रमान।।८५।।

उदय तिवारी को श्री प्राणनाथ जी की बाह्य पहचान थी। उन्होंने धाम धनी को अपने घर में पधराकर श्रद्धापूर्वक भोजन कराया।

चांद खान आइया, चरचा सुनने को।

दौड़ता ईमान को, रहा रामनगर मों।।८६।।

चाँद खान रामनगर में चर्चा सुनने के लिए श्रीजी के चरणों में आए। उन्हें ईमान भी आ गया, लेकिन वे वहीं पर रह गए।

महामत कहें ऐ मोमिनों, ए कही रामनगर की तुम।

और आगे अजूं बहुत, कहों हक के हुकम।।८७।।

श्री महामति जी कहते हैं– हे साथ जी! यह मैंने रामनगर की जागनी लीला का वृत्तान्त कहा है। इस लीला में आगे अभी बहुत–सी बातें हैं, जिन्हें मैं धाम धनी के आदेश से कहने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।५७।। चौपाई ।।३१५७।।

रामनगर की बीतक

ए बात हरिसिंह सुनी, करने आया दीदार।

सुजान साह की सोहोबत, किया सूरत सिंह खबरदार।।१।।

केतकी नदी के किनारे श्रीजी और सुन्दरसाथ के ठहरने की बात सुजान शाह के माध्यम से हरिसिंह को मालूम हुई। वे दर्शन करने आए और इस सम्बन्ध में उन्होंने सूरत सिंह को भी सावचेत किया।

सुनी चरचा आए के, बोहोत हुआ खुसाल।

घरों जाए न्योता किया, खबर पोहोंचाई हाल।।२।।

हरिसिंह ने आकर श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से चर्चा सुनी और बहुत आनन्दित हुये। उन्होंने, अपने घर जाकर, अपने सेवक के माध्यम से श्रीजी साहिब तथा

सब सुन्दरसाथ को भोजन करने का निमन्त्रण भिजवाया।

तुम मेरे घर पधारो, मैं सेवा करों तुम।
बात उनकी सुन के, भया उसे हुकम।।३।।

आप मेरे घर पधारिए, मैं आपकी सेवा करना चाहता हूँ। श्रीजी ने उसके निवेदन को स्वीकार कर आने की स्वीकृति दे दी।

हम आवेंगे तुम्हारे, जाए रसोई करो तैयार।
उनका भाव देख के, बातें करी मुनहार।।४।।

श्रीजी ने कह दिया कि तुम जाकर भोजन तैयार करो, मैं सुन्दरसाथ सहित भोजन करने के लिए आऊँगा। हरिसिंह के भक्तिभाव को देखकर श्रीजी ने सन्देशवाहक

के साथ बहुत स्नेह भरी बातें की।

रोज दूसरे उनने, बुलाए अपनें घर।

बड़ी बैठक करके, पधराए बिछौनों पर।।५।।

दूसरे दिन उसने सुन्दरसाथ सहित श्रीजी को अपने घर पर बुलाया और सबकी आवभगत करके बिछौनों पर पधराया।

सब साथ आए पोहोंचे, बैठाई चौकी पर।

आप धोती पेहेन के, रह्या प्रीसने पर।।६।।

सब सुन्दरसाथ हरिसिंह के घर आए। हरिसिंह ने उन्हें भोजन करने के लिए पत्थर की चौकियों पर बैठाया और स्वयं धोती पहनकर सुन्दरसाथ को भोजन परोसने लगा।

द्रष्टव्य– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "चौकी" शब्द का तात्पर्य चार पायों वाले तख्त से नहीं है, बल्कि पत्थरों की पट्टियों से लिया जा सकता है, क्योंकि हजारों सुन्दरसाथ के लिए लकड़ी के तख्तों की व्यवस्था करना सम्भव नहीं था। भोजन का थाल जिस पीढ़ी पर रखी जाती है, उसे भी चौकी कहते हैं।

जुगतें बैठाए श्री राज को, भली बैठक ऊपर।
साथ बैठा दोए पगथिए, करें सेवा दिल धर।।७।।

हरिसिंह ने अच्छी तरह से सुसज्जित किए हुए एक ऊँचे आसन पर श्री प्राणनाथ जी को बैठाया तथा सब सुन्दरसाथ दो पंक्तियों में बैठ गए। उसने सबकी सेवा शुद्ध हृदय से की।

पातर लगे प्रीसने, आप ऊपर ढोले बाए।

जुगते अंन जो प्रीसही, सब सामा पोहोंचाए।।८।।

हरिसिंह के साथियों द्वारा सुन्दरसाथ को पत्तल परोसे गये। वह स्वयं श्रीजी को पँखे से हवा करने लगा। अन्न से बने हुए सभी पकवान परोसे जाने लगे।

ऊपरा ऊपर प्रीसही, मेवा मिठाई पकवान।

कई जुगते अथानें, थी ऊपर की पहिचान।।९।।

मेवा-मिठाइयाँ, पकवान, तथा अनेक प्रकार के अचार एक के बाद एक क्रमशः परोसे जाने लगे। हरिसिंह को श्रीजी के स्वरूप की मात्र बाह्य पहचान ही थी।

श्री राज आरोगे साथ सब, हुए है त्रिपत।

ऊपर बीड़ी तम्बोल की, ले आगे धरी इत।।१०।।

धाम धनी के साथ सभी सुन्दरसाथ भोजन करके सन्तुष्ट हो गए। इसके पश्चात् पानों का बीड़ा सबके आगे रखा गया।

ले गए अटारी पर, श्री राज को एक ठौर।

तहां बैठ बिनती करी, हाव-भाव अत जोर।।११।।

हरिसिंह अपने भवन के ऊपरी भाग के एक एकान्त स्थान में श्रीजी को लेकर गया और वहाँ श्रीजी के चरणों में बैठकर बहुत अधिक प्रेम भाव के साथ प्रार्थना करने लगा।

मैं तुम्हारा दास हूं, मुझ पर करी मेहेनत।

मैं उदास हुआ इतसें, ए होए मुझसे जेर इत।।१२।।

मैं आपका दास हूँ। आप मेरे ऊपर कृपा कीजिए। मैं एक संकट से उदास रहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि मेरे ऊपर आने वाला वह संकट टल जाए।

भावार्थ– ऐसा प्रतीत होता है कि हरिसिंह राजदरबार में चल रहे किसी मुकदमे आदि में फँसे थे, इसलिए वह चिन्तित थे, क्योंकि प्रतिद्वन्दी को विजय मिल जाने पर उनके ऊपर भयानक संकट आ सकता था।

हुकम हुआ तिनसे, तेरा कारज होए सिध।

एह बात अंकूर की, आवे न जाग्रत बुध।।१३।।

उसकी इस प्रार्थना पर धाम धनी का हुक्म हो गया कि तुम्हारा कार्य सिद्ध हो जाएगा। यह बात तो परमधाम के

अँकुर पर ही निर्भर करती है कि वह धनी से केवल आत्मा का ही सुख माँगे। बिना जाग्रत बुद्धि के अखण्ड सुख की चाहत भी नहीं होती।

भावार्थ– हरिसिंह के अन्दर परमधाम का कोई अँकुर नहीं था। इसलिए वह संसार की एक छोटी–सी इच्छा की पूर्ति कराकर ही सन्तुष्ट हो गया। यदि उसने आत्मिक सुख, अर्थात् परमधाम आदि के दर्शन, की माँग की होती तो धाम धनी उसे अवश्य पूरी करते।

जेता था उनका हिस्सा, तेता लिया उन सुख।
बिदा होए चला दरबार को, तब पड़ा कसाला दुख।।१४।।

अपने अँकुर के अनुसार ही उसने सुख लिया, अर्थात् परमधाम का अँकुर न होने से उसने माया की कामना की और वह पूरी हो गयी। जब यह अपने मुकदमे के

सम्बन्ध में राजदरबार में गया, तो श्रीजी के आशीर्वाद से उसका यह भयानक संकट टल गया।

भावार्थ– "कसाला" और "दुःख" एकार्थवाची हैं। इनमें सिर्फ भाषा भेद है, अर्थात् कसाला शब्द फारसी का है और दुःख शब्द हिन्दी का है।

और किसोरी कुंवर नें, एह बात सुनी कान।
तब ऊपर की पहिचान से, ले आया ईमान।।१५।।

कुँवर किशोर सिंह ने जब इस चमत्कार की बात अपने कानों से सुनी, तो श्रीजी को एक चमत्कारिक सिद्ध महापुरूष मानकर तारतम ग्रहण कर लिया।

भावार्थ– हरिसिंह को राज दरबार से बहुत भयानक दण्ड मिलना था। किसी को भी विश्वास नहीं था कि वह इस दण्ड से मुक्त हो सकता है, किन्तु जब सबने

चमत्कारिक ढंग से उसे कष्ट मुक्त हुए देखा तो लोग समझ गए कि श्रीजी की कृपा से ही ऐसा सम्भव हुआ है।

अन्दर उनके महल में, केतेक ल्याए ईमान।

पर बंध दज्जाल के, सो कर न सके पहिचान।।१६।।

किशोर सिंह के महल में रहने वाले कई लोगों ने तारतम ज्ञान ग्रहण किया, किन्तु माया के वशीभूत होने के कारण वे उनके स्वरूप की पहचान नहीं कर सके।

किसोर सिंह ने अपना, न्योता पठवाए दिया।

पधरावें हम राज को, चित्त को चौकस किया।।१७।।

किशोर सिंह ने श्रीजी के पास अपना निमन्त्रण भिजवा दिया कि हमारी इच्छा है कि धाम धनी हमारे यहाँ पधारे। उसने श्रीजी की सेवा के सम्बन्ध में अपने चित्त को पूरी

तरह से दृढ़ कर लिया।

उठा आया दीदार को, चरचा सुनी कान।

दिल में बोहोत राजी भया, ज्यादा भया ईमान।।१८।।

श्रीजी का दर्शन करने के लिए वह स्वयं चलकर आया और उसने अपने कानों से श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा सुनी। चर्चा सुनकर उसे बहुत आनन्द हुआ और उसका विश्वास भी बहुत परिपक्व हो गया।

कोइक दिन पीछे, पधराऐ श्री राज।

साथी सब संग चले, कहे धन धन दिन है आज।।१९।।

कुछ दिनों के पश्चात् श्री प्राणनाथ जी और सब सुन्दरसाथ भोजन करने के लिये किशोर सिंह के घर पधारे। किशोर सिंह स्वयं को उस दिन धन्य-धन्य

माानने लगे।

रसोई बनाई जुगत सो, बैठाए श्री राज।

साथी गिरद घेर के, बैठे इनके काज।।२०।।

अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत श्रीजी साहिब जी के लिए किशोर सिंह ने बहुत ही भाव से रसोई बनवाई और श्रीजी को अति सुन्दर आसन पर विराजमान कराया। सब सुन्दरसाथ श्रीजी को चारों तरफ से घेर कर भोजन करने के लिए बैठ गए।

मेवा मिठाई पकवान, श्री राज आगे थाल धरी।

साथ सबों को प्रीस के, सेवा भली विध करी।।२१।।

मेवा, मिठाई, तथा पकवानों से सुसज्जित थाल श्रीजी के आगे रखा गया। सब सुन्दरसाथ को भोजन परोसकर

किशोर सिंह ने बहुत अच्छी तरह से सेवा की।

भाव दिखाया भली भांत सों, हुआ सेवा को सनमुख।
अंकूर माफक अपने, इन भी लिया सुख।।२२।।

सबकी सेवा करके उसने बहुत अच्छी तरह से अपने प्रेम भाव को दर्शाया और अपने अँकुर के अनुकूल उसने भी धनी का सुख लिया।

एक दासी उनकी आवती, फेर वह ल्याई ईमान।
देख दीदार हक का, कछुक भई पहिचान।।२३।।

किशोर सिंह की एक दासी थी, जो प्रतिदिन श्रीजी का दर्शन करने आया करती थी। उसे धाम धनी की कुछ पहचान हुई और बाद में उसने भी तारतम ज्ञान ग्रहण किया।

नित आवे दीदार को, कछुक सामा ल्याए।

मुजरा कर पीछे फिरे, ताको दई पहुंचाए।।२४।।

वह जब भी धनी का दर्शन करने आती थी, तो उन्हें भेंट में देने के लिए कुछ न कुछ सामान अवश्य लेकर आती थी। उसे श्रीजी के चरणों में भेंट कर दर्शन करने के उपरान्त पुनः लौट जाया करती थी।

आसाराम आइया, था कबीर पंथ में।

चरचा को आवे नित, सुनता ईमान से।।२५।।

आशाराम जी कबीर पंथ के अनुयायी थे। यह श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को सुनने के लिए प्रतिदिन आया करते थे और बहुत विश्वास के साथ सुना करते थे।

एक उच्छव इन किया, दिल में होए खुसाल।

मैं तुमारे कदमों रहो, मुझे बकसो ए हाल।।२६।।

अपने दिल में बहुत आनन्दित होकर आशाराम ने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ के लिए प्रतिभोज का एक उत्सव किया और धाम धनी से प्रार्थना की कि मेरे ऊपर ऐसी कृपा कीजिए कि मैं हमेशा आपके चरणों में ही रहूँ।

इन समें दज्जाल, जोरा लगा करनें।

आजूज माजूज उतरे, साथी लगे खेंचनें।।२७।।

इस समय माया (दज्जाल) ने सुन्दरसाथ के विरूद्ध अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। दज्जाल मिर्गी की भयानक बीमारी के रूप में प्रकट हुआ, जिससे सुन्दरसाथ के तन छूटने लगे।

रामनगर में हुआ, साथियों का चलना।

सुनियों नाम तिनके, जिन सोंप्या अपना।।२८।।

रामनगर में जिन-जिन सुन्दरसाथ ने अपना तन छोड़ा, आप उनके नाम सुनिये।

ईस्वरदास उदयपुर का, ले चला कबीला संग।

इन सौंपी आतम अपनी, पहुंचा संग कर जंग।।२९।।

उदयपुर के रहने वाले ईश्वरदास जी थे, जो अपने सम्पूर्ण परिवार के साथ श्रीजी के चरणों में आए थे। माया से युद्ध करते हुए ईश्वरदास जी ने अपना तन छोड़ दिया और अपनी आत्मा धनी के चरणों में सौंप दी।

तूंगा बेटा उनका, था लड़का छोटा।

भोम लिया अपना, आए धनी की ओटा।।३०।।

उनके बेटे का नाम तुँगा था, जो अभी बहुत ही छोटी उम्र का था। महामारी की चपेट में आकर उसने भी तन छोड़ दिया और धनी की शरण में पहुँच गया।

और धनियानी रूकमा, रही कोईक दिन।

पीछे अपने अंकूर पे, जाए मिली गोवरधन।।३१।।

गोवर्धन जी की पत्नी का नाम रूक्मा था। पति की देह त्याग के पश्चात्, वह कुछ समय तक संसार में रही। इसके पश्चात् अपने अँकुर के अनुकूल, अपने पति से जा मिली अर्थात् तन छोड़ दिया।

और कानजी रामजी चलिया, आया सूरत सें।

उन सौंपी आतम अपनी, रह्या छबीला बेटा इनमें।।३२।।

सूरत से आए हुए कान्ह जी तथा राम जी भाई ने भी अपना तन छोड़ दिया। उन्होंने अपनी आत्मा धनी के चरणों में सौंप रखी थी। इनका बेटा छबीला भी महामारी मिर्गी की चपेट में आ गया था, किन्तु धनी की कृपा से बच गया।

सामलदास चलिया, जाको चिन्तामन नाम।

था ठठे के साथ में, पोहोंचा अपने धाम।।३३।।

श्यामलदास जी ने भी यहाँ अपना तन छोड़ दिया, जिनका नाम चिन्तामणि था। ये ठट्ठानगर के रहने वाले सुन्दरसाथ थे। इनका भी धामगमन हो गया अर्थात् ये भी धाम धनी के चरणों में पहुँच गए।

निरमल दास चलिया, था महाजरों मिनें।

आया सूरत वतन से, सो पोहोंचा ठौर अपने।।३४।।

अपने घर–द्वार आदि सब को छोड़कर जागनी की राह पर चल पड़ने वाले निर्मल दास जी ने भी यहाँ अपना तन छोड़ दिया और धनी के चरणों में पहुँच गए। ये सूरत के रहने वाले थे।

दामोदर पाटन से, सौंपी अपनी आतम।

रहया अंकूर माफक सोहोबत, याको कछु न भई कुंम।।३५।।

पाटन के रहने वाले दामोदर जी ने भी अपनी आत्मा धनी के चरणों में सौंप दी। अपने अँकुर के अनुकूल ही ये धनी के साथ रहे। माया से युद्ध करते हुए, धनी के प्रति इनके विश्वास में जरा भी कमी नहीं आयी।

संग रहया कोइक दिन, ए जो फकीर मासूम।

सो चला इतहीं, ठौर पहुंचा इन कदम।।३६।।

मासूम नामक एक फकीर श्रीजी के साथ कुछ दिनों तक रहा। उसने भी रामनगर में अपना तन छोड़ दिया और धनी के चरणों में पहुँच गया।

मलूक चन्द चलिया, था राजपूत राठौर।

इन लड़ाई करी दज्जाल सों, हक बिना न रखे और।।३७।।

मलूक चन्द राठौर वंशीय राजपूत थे। इन्होंने भी अपना तन यहीं पर छोड़ दिया। इन्होंने माया के साथ बहुत बहादुरी से युद्ध किया और अपने दिल में धनी के अतिरिक्त और किसी को बसने नहीं दिया।

जोरू जो गुलजीय की, हमों उसका नाम।

ओ भी चली उन समें, छोड़ कार वेहेवार का काम।।३८।।

गुलजी की पत्नी का नाम हमो था। उसने भी संसार का सारा काम-धाम छोड़कर रामनगर में अपना तन छोड़ दिया।

मथुरी बुढ़ानपुर से, चली छोड़ कुटुम्ब परिवार।

रही अंकूर माफक सोहोबत, पहुंची परवरदिगार।।३९।।

बुरहानपुर की रहने वाली मथुरी, जो अपना कुटुम्ब-परिवार छोड़कर धनी के चरणों में आ गयी थी, अपने अँकुर के अनुकूल श्रीजी के साथ रही और धनी के चरणों में अपना तन छोड़ दिया।

गरीब फकीर बुढ़ानपुर से, चला बेटा उनका।

उन हिस्सा लिया अपना, जो सुख अंकूर में था।।४०।।

बुरहानपुर का रहने वाला गरीब नामक एक फकीर था, उसका बेटा रामनगर में चल बसा। अपने अँकुर के अनुकूल उसने सुन्दरसाथ में रहकर धनी का सुख लिया।

लाड़ कुंवर दिल्ली की, थी जोरू बनारसी।

रही हुकम माफक, जाए अपने सुख रची।।४१।।

लाड़ कुँवर दिल्ली की रहने वाली थी, जो बनारसी दास की पत्नी थी। वह धाम धनी के हुकम के अनुकूल रही और रामनगर में अपना तन छोड़कर धनी के अखण्ड सुख में लीन हो गई।

मानबाई माता नन्द राम की, थी राज की सेवा में।

सुख लिया ताले माफक, नन्दराम की सोहोबत से।।४२।।

नन्दराम जी की माता का नाम मानबाई था। वे हमेशा श्रीजी के सेवा में रहा करती थीं। उन्होंने नन्दराम जी की संगति से अपने भाग्य के अनुकूल धनी का सुख लिया और रामनगर में तन छोड़ दिया।

स्याम बाई बेटी लालबाई की, गढ़े में छोड़या आकार।

सुख लिया अंकूर माफक, फेर चली इन करार।।४३।।

श्री लालदास जी की धर्मपत्नी लालबाई की बेटी का नाम श्यामबाई था। उन्होंने गढ़े में अपना तन छोड़ दिया। अपने अँकुर के अनुकूल उन्होंने धनी के चरणों का सुख लिया और तन छोड़कर अखण्ड शान्ति में लीन हो गई।

गोमा खेमदास की, राह मिने चली।

रही अंकूर माफक सोहोबत, जाए अपने ठौर मिली।।४४।।

खेमदास जी की पत्नी का नाम गोमा था। वह अपने अँकुर के अनुकूल धनी के साथ रही और अपना तन छोड़कर अपने प्रियतम अक्षरातीत के चरणों में लीन हो गई।

सदानन्द त्रिलोकदास, उदयपुर से आए रहे।

सोहोबत सेवा मिने, ठौर अपने पोहोंचे ए।।४५।।

सदानन्द और त्रिलोकदास उदयपुर के रहने वाले थे। श्रीजी की सेवा और संगति का इन्होंने सुख लिया और अपना तन छोड़कर धनी के चरणों में लीन हो गए।

इन भांत दज्जाल ने, साथी लिए छिनाए।

एक को मजल पहुंचावें, तोलों दूजो रहने न पाए।।४६।।

इस प्रकार, दज्जाल ने अनेकों सुन्दरसाथ को मृत्यु के मुख में पहुँचा दिया। एक को श्मशान घाट तक पहुँचा कर आते थे, तब तक दूसरा नहीं रह पाता था।

कोइक दिन ऐसा रह्या, फेर दबा हुकम से।

साथ सब दुदला भया, रहे विचार करने में।।४७।।

कुछ दिन ऐसे ही चलता रहा। सब सुन्दरसाथ बहुत चिन्तित हो गए थे और आपस में विचार करने लगे कि इस संकट की घड़ी में हम क्या करें? कहाँ जायें? पुनः श्री राज जी के आदेश से दज्जाल का यह आतंक समाप्त हुआ, अर्थात् मिर्गी की यह महामारी चली गयी।

इन समें सुलतान का, हुआ हुकम पुरदलखान।

रहे राम नगर एक वेंरागी, तिनकी तुम करियो पहिचान।।४८।।

इस समय औरंगज़ेब बादशाह का पुरदल खान को आदेश आया कि रामनगर में वैरागियों का एक समूह रहता है। उनकी पहचान के सम्बन्ध में जाँच करो।

ए कौन हैं कहां से आए, हैं इनका मतलब कौन।

इन सुन हुकम खिदर को, भेजा ऊपर मोमिन।।४९।।

ये वैरागी लोग कौन हैं? कहाँ से आए हैं? तथा किस उद्देश्य से ये सारे देश में घूम रहे हैं? बादशाह का ऐसा आदेश सुनकर पुरदल खान ने अपने सेनापति शेख खिज्र को सुन्दरसाथ को पकड़ने के लिए भेज दिया।

भावार्थ– औरंगज़ेब एक बहुत ही शंकालु बादशाह था। उसे संसार में किसी पर भी विश्वास नहीं था, यहाँ तक

कि अपने पुत्रों पर भी नहीं। उसकी सेनाएँ पहले राणा राजसिंह से हार चुकी थीं। श्रीजी सहित सुन्दरसाथ का उदयपुर, औरंगाबाद, रामनगर, आदि हिन्दू राज्यों में रहना उसके मन में शंका पैदा कर रहा था कि इन राजाओं से श्रीजी का क्या सम्बन्ध है?

उसके मन में इमाम महदी से मिलने की चाहत तो थी, किन्तु उसे सत्ता का इतना गुमान और लालच था कि वह शरातोरा को किसी भी कीमत पर छोड़ने के लिए राज़ी नहीं था। उसके लिए शरातोरा को छोड़कर श्रीजी के हकीकत और मारिफत के इल्म की कोई विशेष महत्ता नहीं थी।

वह यही चाहता था कि सारे हिन्दुस्तान में यह सन्देश जाए कि मैंने तो इमाम महदी कहलाने वाले हिन्दू वैरागी को कैद कर लिया है, जबकि वह एकान्त में मिलकर

इमाम महदी से अपने जीवन के सर्वोच्च आध्यात्मिक उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहता था। इसी उद्देश्य से उसने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ को गिरफ्तार करने के लिए अपने सेनानायकों को आदेश दे रखा था।

आया अहदी होए के, करता बड़ा सोर।
गढ़े से पुकारिया, किया राजा ऊपर जोर।।५०।।

शेख खिज्र बादशाह के प्रतिनिधि के रूप में अपनी सेना की शक्ति का प्रदर्शन करता हुआ रामनगर आया। उसने गढ़े से ही रामनगर के राजा के ऊपर कठोर शब्दों में सन्देश भिजवा दिया।

मैं आया फकीरों पर, पकड़ देओ मेरे हाथ।
ना तो मुहिम तुम पर, ए चलें मेरे साथ।।५१।।

मैं इन वैरागियों को पकड़ने के लिए आया हूँ। तुम इन्हें पकड़कर मेरे हवाले कर दो, अन्यथा तुम लड़ने के लिए तैयार हो जाओ। इन वैरागियों को मेरे साथ बादशाह के पास चलना ही होगा।

हुकम पातसाह के, हम आए तुम पर।
जो ढील करो इन बात में, तो होत गुनाह तुम पर।।५२।।

बादशाह के आदेश से हम तुम्हारे राज्य में आए हैं। यदि मेरे द्वारा कही हुई इस बात को तुम पूरा नहीं करते हो, तो तुम्हें बादशाह की दृष्टि में गुन्हेगार बनना पड़ेगा।

ए बात राजा सुनके, भेज दिया कोतवाल।
तुम कहो जाए स्वामी कृष्णदास सों, ऐसा हुआ हवाल।।५३।।

यह बात सुनकर रामनगर के राजा ने अपने कोतवाल

को यह कहकर श्रीजी को समझाने के लिए भेजा कि तुम स्वामी कृष्णदास जी से जाकर ऐसा कहो कि औरंगज़ेब बादशाह की तरफ से हमारे लिए ऐसी परिस्थिति पैदा कर दी गई है।

भावार्थ– दिल्ली की तरह यहाँ भी श्रीजी ने अपना वास्तविक नाम छिपा रखा था। किसी सुन्दरसाथ ने श्रीजी को कहीं स्वामी कृष्णदास नहीं कहा, बल्कि यह नाम मुगलों को भ्रमित करने के लिए रखा गया था। ऐसा भय के कारण नहीं, बल्कि यह व्यवहारिक नीति का एक अँग था।

एक चार दिन तुम इहाँ से, बैठो जाए जागा और।
फेर के तुम आइयो, बैठियो अपनें ठौर।।५४।।

आप कुछ दिनों के लिए यहाँ से जाकर किसी और

जगह रह लीजिए। जब मुगल सेना यहाँ से चली जाएगी, तो आप पुनः अपने स्थान पर वापस आ जाइएगा।

पर पातसाही दबदबा, सहे न सकें हम।
एक लाठी आवे उनकी, सो फेर न सकें हुकम।।५५।।

क्योंकि औरंगज़ेब बादशाह की शक्ति का सामना करने की सामर्थ्य हमारे पास नहीं है। यदि बादशाह की तरफ से आदेश के रूप में एक लाठी भी आ जाए, तो भी उसे लौटाने का साहस हम नहीं कर सकते।

ताको श्री जी साहिब जी ने, झुक के दिया जवाब।
हम न डरें पातसाह से, आवे क्यों न सिताब।।५६।।

उसे धाम धनी ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया कि हम बादशाह से ज़रा भी नहीं डरते। हम तो चाहते ही हैं कि

वह शीघ्र किसी तरह से हमारे पास आए।

हम तो राह देखत हैं, क्यों ए कर बोलावे हम।

बैठे रहो घर अपने, जिन उपराला करो तुम।।५७।।

हम तो इस बात की राह देख रहे हैं कि बादशाह हमें किसी तरह से बुलाए। उससे हमारी भेंट होने पर, सुरक्षा के लिए, आप किसी भी तरह की चिन्ता न कीजिए। आप शान्तिपूर्वक अपने घर में बैठिए।

तब कोतवाल जाए के, करी राजा सों अरज।

बैरागी तो यों कहें, हम ना डरें इन गरज।।५८।।

तब कोतवाल ने जाकर राजा से प्रार्थना की– महाराज! ये वैरागी लोग तो इस प्रकार कहते हैं कि हमें बादशाह से कोई डर ही नहीं है।

आवन देओ उनको, हम समझेंगे उनसे।

तुम हमारे उपराले, ना रहियो मदत में।।५९।।

आप बादशाह को हमारे पास आने दीजिए। हम उनसे स्वतः ही निपट लेंगे। आप हमारी सुरक्षा के लिए किसी तरह की सहायता न कीजिए।

तब राजा ने फेर पठवाया, तुम जाए कहो यों कर।

हम तुम सों कहत हैं, अरज दूसरी बेर।।६०।।

तब राजा ने कोतवाल को पुनः भिजवाया और उससे कहा कि तुम उन साधु-महात्माओं से जाकर कह दो कि हम आपसे दूसरी बार यहाँ से चले जाने की प्रार्थना करते हैं।

हम अपने धरम को, इसी वास्ते डरात।

पकड़ ले जावें तुमको, तो सरम हमारी जात।।६१।।

एक हिन्दू राजा होने के नाते आप साधु–महात्माओं की रक्षा करना हमारा धर्म होता है। हमें डर इस बात का है कि यदि बादशाह की सेना आपको यहाँ से पकड़ कर ले जाएगी, तो सारे देश में हमारी बदनामी होगी कि एक हिन्दू राजा अपने राज्य के साधु–महात्माओं की रक्षा नहीं कर सका।

तुम दस बीस कोस, छिप के बैठो जाए।

फेर के इत आइयो, हम लेवेंगे बोलाए।।६२।।

आप लोग यहाँ से दस–बीस कोस की दूरी पर छिपकर बैठ जाइये। जब बादशाह की सेना चली जाएगी तो हम आपको बुलवा लेंगे, तब आप पुनः निवास पर आ

जाइएगा।

फेर के कोतवाल नें, आए करी अरज।

राजा यों कहत हैं, अपने स्वारथ गरज।।६३।।

पुनः कोतवाल ने आकर श्रीजी से प्रार्थना की कि राजा का कहना है कि हम आपको चले जाने के लिए इसलिए कहते हैं कि यदि आपको शाही फौज पकड़कर ले जाएगी तो सारे देश में हमारी बदनामी होगी। हमारी बदनामी न होने पावे, यही हमारा स्वार्थ है।

तब जवाब दिया श्री जी ऐं, तुम कछू न करो फिकर।

हम समझ लेएंगे इनको, आवने देओ हमारी नजर।।६४।।

तब धाम धनी ने उत्तर दिया कि आप कुछ भी चिन्ता न करें। बादशाह को हमारी आँखों के सामने आने दीजिए।

हम उनसे स्वतः ही निपट लेंगे।

कछू न चले इनका, जोरा हम ऊपर।

देखत ही गल जायेंगे, बानी सुन पटन्तर।।६५।।

हमारे ऊपर बादशाह का कोई भी बल नहीं चलेगा। सत्य का निरूपण करने वाली मेरी वाणी को सुनकर एवं मुझे देखकर, बादशाह स्वतः ही मेरा श्रद्धालु हो जाएगा।

जिन तुम अपने दिल में, ल्याओ दग दगा कोए।

ए आसान होएगा, आज्ञा से जेर होए।।६६।।

आप अपने मन में किसी तरह का भय मत कीजिए। परब्रह्म के आदेश से बादशाह आसानी से नमस्तक हो जाएगा।

फेर गया कोतवाल राजा पे, सब कही बीतक।

राजा सुन अचरज भया, इन्हें कछू न आवे सक।।६७।।

पुनः कोतवाल राजा के पास गया और श्रीजी से होने वाली सारी वार्ता का विवरण दिया। यह सुनकर राजा आश्चर्य में पड़ गया कि आखिर क्या कारण है कि इन बैरागियों को शाही सेना का ज़रा भी डर नहीं है?

जाए सुवंसराए तुम कहो, क्यों डरत नहीं तुम।

पातसाही लोकन से, पीछे क्या करेंगे हम।।६८।।

अन्त में राजा ने अपने मन्त्री सुवंशराय से कहा कि तुम जाकर उन वैरागियों से कहो कि आप लोगों को बादशाह से डर क्यों नहीं लगता? शाही सेना के आ जाने के बाद हम आपकी सुरक्षा की व्यवस्था कैसे करेंगे?

जब तुम को पकड़ के, ले जाएं हजूर सुलतान।
तब हमारे दिल में, होए बदनामी सुने कान।।६९।।

जब मुगल सैनिक आप लोगों को पकड़कर बादशाह के पास ले जायेंगे, तो इसकी बदनामी मुझे सारे देश में सुननी पड़ेगी कि एक हिन्दू राजा होकर हमने आपकी रक्षा नहीं की। इसका हमारे दिल में बहुत कष्ट होगा।

सुवंसराए सुन आइया, कही श्री जी साहिब जी से बात।
राजा जो कहलाई थी, ताकी करी विख्यात।।७०।।

राजा के इस निर्देश को सुनकर मन्त्री सुवंशराय श्रीजी के पास आया और उसने सारी बातें की। राजा ने श्री प्राणनाथ जी से जो बातें कहने के लिए कहा था, उसे अच्छी तरह से समझाकर कहा।

तब श्री जी साहिब जी ऐं कह्या, जिन डरो मन में।
अपना बल दिखाइया, कर चरचा उन से।।७१।।

तब धाम धनी ने उत्तर दिया कि मन्त्री जी! आप अपने मन में किसी तरह का डर न पालें। श्रीजी ने उनसे आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा करके अपने आत्मिक बल को दर्शाया और कहा कि मुगल सेना हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती।

उन जाए कही राजा सों, काहे को कहो तुम।
बिना मार अपनी, सब डर बताया हम।।७२।।

अन्त में मन्त्री सुवंशराय भी निराश होकर राजा के पास गया और उससे कहा कि आप बार-बार उन वैरागियों के पास अपना सन्देशा क्यों भिजवाते हैं? रामनगर राज्य के दण्ड के अतिरिक्त मैंने शाही सेना का तरह-तरह से भय

दिखाया, लेकिन वे तो किसी से डरते ही नहीं हैं।

जहां लग अपना कहना, सो कह के चुके सब।
अब इनके दिल में जो आवे, सो करेंगे तब।।७३।।

अपनी ओर से हमें जो कुछ कहना था, हम लोग कहकर थक चुके हैं। अब इन महात्मा लोगों के दिल में जो आए, वे करें। हमने अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया।

यों करते दिन दूसरे, शेख खिदर पहुंचे धाए।
मुलाकात राजा सों करी, पहिले एही बताए।।७४।।

इस प्रकार दूसरे दिन शेख खिज्र आ पहुँचे। उन्होंने सबसे पहले राजा से भेंट की और यह बात बताई।

हम आए तिन काम को, पकड़ देओ बेंरागी तुम।

हजूर में ले जाएंगे, हमको है हुकम।।७५।।

हम आपके राज्य के वैरागियों को पकड़कर बादशाह के पास ले जाने के लिए आए हैं। ऐसा करने के लिए बादशाह की ओर से हमें आदेश मिला है। तुम वैरागियों को पकड़कर मेरे हवाले कर दो।

जो तुम इनकी रक्षा करो, तो है मुहिम तुम पर।

केतो इनें पकड़ देओ, नातो बाँधो कमर।।७६।।

यदि तुम इनकी रक्षा करना चाहते हो, तो तुम्हें हमसे युद्ध करना होगा। या तो तुम इन्हें पकड़कर मुझे सौंप दो, या लड़ने के लिए तैयार हो जाओ।

तब राजा बोलिया, हम सों न कछू काम।

तुम जाए पकड़ो उनको, ले जाओ अपने ठाम।।७७।।

तब रामनगर के राजा ने कहा कि मेरा उन बैरागियों से कुछ भी लेना-देना नहीं है। तुम जाकर उन्हें पकड़ लो और जहाँ भी अपने स्थान पर ले जाना चाहो, ले जाओ। मुझे कोई भी आपत्ति नहीं है।

जो तुम आए हम पर, ले सुलतान हुकम।

सो हम चढ़ाया सिर पर, ले जाओ बेंरागी तुम।।७८।।

यदि तुम बादशाह का आदेश लेकर मेरे पास आए हो, तो मैं उस आदेश को शिरोधार्य करता हूं कि तुम इन वैरागियों को कैद करके ले जाओ।

उहाँ से फेर उठके, आए उतरे हवेली में।

भिखारी दास दीवान, बात करी उन सें।।७९।।

राजा के महल से आकर शेख खिज्र एक हवेली में ठहरे। अपने एक हिन्दू अधिकारी भिखारी दास दीवान से उन्होंने इस सम्बन्ध में बातें की।

अब हमें क्या करना, क्यों कर पकड़े हम।

तब भिखारी दासें कहया, पहले हमें पठाओ तुम।।८०।।

शेख खिज्र ने पूछा कि तुम यह बताओ कि अब हमें क्या करना चाहिए? इन हिन्दू वैरागियों को हम किस तरह से पकड़ें? तब भिखारी दास ने कहा कि पहले आप मुझे उनके पास भेजिए।

खबर ले उनकी, क्या है उनकी बात।

वाकिफ उनके होए के, पकड़ लेएंगे जात।।८१।।

मैं उनकी जानकारी लूँगा कि उनकी वास्तविकता क्या है? सच्चाई को पूरी तरह से जानकर हम उन्हें गिरफ्तार कर लेंगे।

भिखारीदास बिदा होए के, आए हादी कदम।

कदमों लाग सेजदा किया, हम आए ऊपर तुम।।८२।।

भिखारीदास शेख खिज्र से विदा लेकर श्रीजी के चरणों में आए। उन्होंने श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया और कहा कि हम आपके पास ही आए हैं।

क्या तुमारी खबर है, आया पातसाही फुरमान।

हम आए तुमें पकड़ने, ले जाएं पास सुलतान।।८३।।

हम यह जानना चाहते हैं कि आपकी वास्तविकता क्या है? औरंगज़ेब बादशाह का आदेश आया है कि हम आपको पकड़कर बादशाह के पास ले जाएँ। इसी उद्देश्य से हम यहाँ आए हैं।

तब हादी ने कह्या, हमको तो एही चाह।

जो हमको ए याद करें, कोई हमको उत पहुंचाए।।८४।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने उत्तर दिया कि मुझे भी तो यही चाहना है कि बादशाह हमको किसी तरह से याद करे और कोई व्यक्ति मुझे उस तक पहुँचा दे।

तुम लेओ हमारी खबर, वाकिफ होवो हकीकत।
सुनावें चरचा तुमको, सब समझो तुम इत।।८५।।

यह अच्छी बात है कि तुम मेरी वास्तविकता को जानना चाहते हो, किन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि तुम धैर्यपूर्वक बैठो और मेरी चर्चा सुनो। इससे तुम मेरे यथार्थ स्वरूप जान जाओगे।

कही हकीकत उनको, बात मूल की सब।
सवाल भागवत कुरान के, मिलाए दिखाए तब।।८६।।

श्रीजी ने सबसे पहले उन्हें परमधाम के इश्क रब्द से लेकर सृष्टि की उत्पत्ति, एवं व्रज, रास, तथा जागनी की वास्तविकता को दर्शाया। उन्होंने भागवत एवं कुरआन के प्रश्नों को मिलाकर यह स्पष्ट किया कि किस प्रकार दोनों ग्रन्थ एक ही सत्य को उद्घाटित कर रहे हैं।

जवाब करो तुम इनका, जो तुमे समझी जाए।

यातो सुनो हम पे, सब देवें बताए।।८७।।

श्रीजी ने भिखारी दास से कहा कि यदि तुम्हें इन प्रश्नों के उत्तर समझ में आते हों तो बताओ, अन्यथा तुम मुझसे इनका उत्तर सुनो। मैं सब कुछ स्पष्ट करके बताता हूँ।

तब भिखारी दासें कहया, हमें समझाओ तुम।

हम तो ल्याए ईमान, तुमारे कदम न छोड़ें हम।।८८।।

तब भिखारी दास ने कहा कि आप ही हमें समझाने की कृपा कीजिए। मुझे आप पर अटूट विश्वास हो गया है। अब मैं आपके चरणों को किसी भी स्थिति में नहीं छोडूँगा।

तीन रात और तीन दिन, कहया तारतम समझाए।

सवाल कुरान भागवत के, सब ठौर दिए बातए।।८९।।

तीन रात और तीन दिन तक श्रीजी ने तारतम ज्ञान से भिखारी दास को यथार्थ सत्य का बोध कराया। उन्होंने कुरआन और भागवत के सभी प्रश्नों का उचित समाधान करके सबका एकीकरण कर दिया, अर्थात् एक सत्य को दर्शा दिया।

भावार्थ– श्रीजी ने भागवत के ४० और कुरआन के २२ प्रश्नों का समाधान करके एक सत्य का निरूपण कर दिया। उन्होंने दर्शाया कि व्रज में सात दिन –सात रात तक इन्द्र का कोप करना, पुनः सखियों का योगमाया के रास मण्डल में जाना, किस प्रकार कुरआन के हूद नबी के घर तूफान आने तथा नूह नबी के घर तूफान आने के प्रसंग से जुड़ा हुआ है। इसी प्रकार किस तरह से

आदिनारायण, अक्षरब्रह्म, तथा अक्षरातीत को कुरआन में अजाज़ील, नूर जलाल, और नूर जमाल कहा गया है।

विरोध सारा भान के, बताया एक दीन।
मारा सक सैतान को, तबही ल्याया आकीन।।९०।।

संसार के सारे मतों के विरोध को समाप्त करके श्रीजी ने एक सत्य धर्म की राह बताई। इस प्रकार भिखारी दास के मन का संशय रूपी शैतान नष्ट हो गया और उसने उसी क्षण तारतम ज्ञान ग्रहण कर लिया।

गया सेख खिदर पे, कही हकीकत सब।
मैं देख्या हादी जमाने का, सेंख खिदरें पूछया तब।।९१।।

भिखारी दास शेख खिज्र के पास गए और सारी बातें बता दीं। उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि मैंने अपनी आँखों से

आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज़्ज़मां का दर्शन किया है। तब शेख खिज्र ने पूछा।

ए कैसी बात तुम कही, तुमें क्यों कर भई पहिचान।

सो मेरे आगे कहो, हादी आवने के निसान।।९२।।

भिखारी दास! ये तुम मुझसे कैसी बातें कर रहे हो? तुमने कैसे पहचाना कि ये आखिरी ज़माने के खाविन्द हादी हैं? उनके ज़ाहिर होने की पहचान के बारे में मुझे भी बताओ।

तब सवाल कहे कुरान के, और भागवत के प्रस्न।

इनको खोल के, कर दिया दिल रोसन।।९३।।

तब भिखारी दास ने कुरआन और भागवत के प्रश्नों को शेख खिद्र के सामने रखा तथा तारतम ज्ञान के प्रकाश में

इनका उत्तर स्पष्ट करके और दोनों ग्रन्थों का एकीकरण कर दिया, जिससे शेख खिज्र के दिल में सत्य ज्ञान का उजाला फैल गया।

सातों निसान क्यामत के, करी तिनकी चरचा जोर।
एक दाभतुल अरज, और दिखाया दज्जाल का सोर।।९४।।

इस प्रकार भिखारी दास जी ने कियामत के सात निशानों की विस्तारपूर्वक चर्चा की। उन्होंने बताया कि किस तरह से कियामत के समय में मनुष्य की प्रवृत्ति उस जानवर दाब्ह-तुल-अर्ज की तरह हो जाएगी, जिसका हृदय सिंह की तरह क्रूर होगा, पहाड़ी बैल की तरह लड़ने की मानसिकता हो जाएगी, आँखों में सुअर की तरह गन्दी दृष्टि बनी रहेगी, तथा धार्मिक कार्यों से दूर भागने की गीदड़ जैसी प्रवृत्ति हो जाएगी? भिखारी

दास जी ने यह भी स्पष्ट किया कि किस प्रकार से अज्ञान रूपी राक्षस पूरी शक्ति के साथ सबके अन्दर छाया रहेगा?

और आजूज माजूज, आए ईसा हजरत।
असराफीलें सूर फूंकिया, सब बताए दिए इत।।९५।।

माया में फँसे रहने से दिन और रात्रि रूपी याजूज – माजूज कैसे सबकी आयु को हर रहे हैं? ईसा रूहुल्लाह सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के रूप में किस प्रकार से प्रकट हुए और अपने दूसरे जामें में इमाम महदी के रूप में लीला कर रहे हैं? जाग्रत बुद्धि का स्वरूप अस्राफील फरिश्ता किस तरह से तारतम ज्ञान का प्रकाश कर रहा है? ये सारी बातें भिखारी दास जी ने स्पष्ट कर दीं।

सूरज ऊगा मगरब से, जाहिर हुए इमाम।

ऐसे माएने खोल के, बताए दिए तमाम।।९६।।

अर्श-ए-अज़ीम की हकीकत एवं मारिफत का इल्म लेकर आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब हिन्दुओं के अन्दर (पश्चिम में) प्रकट हो गए हैं, जबकि मुसलमान यह सोच रहे हैं कि वे हमारे अन्दर (पूर्व में) प्रकट होंगे। इस प्रकार भिखारी दास जी ने कुरआन के इन गुह्य भेदों को खोलकर शेख खिज्र के सामने जाहिर कर दिया।

हुआ एक दीन सबमें, भानी सारी सक।

राह सरातल मुस्तकीम, दिखाई मारफत हक।।९७।।

उस समय शाही सेना के जो लोग भिखारी दास जी के इन कथनों को सुन रहे थे, उनको यह आभास हुआ कि यह भिखारी दास तो एक शाश्वत सत्य धर्म की बात कर

रहा है, जिसमें किसी का शक रह ही नहीं सकता। इस अलौकिक ज्ञान ने सबको अल्लाह तआला (परब्रह्म) की पहचान करा दी तथा उसको पाने का सीधा-सरल रास्ता भी बता दिया।

हकीकत मारफत के, खोल दिये सब द्वार।
तब सेख की सुध गई, करने लगा विचार।।९८।।

तारतम ज्ञान के प्रकाश में भिखारी दास जी ने परमधाम की हकीकत और मारिफत की पहचान देते हुए अखण्ड का द्वार उन सब के लिए खोल दिया। इस अलौकिक ज्ञान चर्चा को सुनकर शेख खिज्र बेसुध हो गया और विचार करने लगा।

सैयद अब्दुल रेहेमान, और रघुनाथ था संग।

तिन साहिदी सब दई, भागा दज्जाल का जंग।।९९।।

भिखारी दास के साथ सैय्यद अब्दुल रहमान और रघुनाथ भी श्रीजी के पास गए थे। उन्होंने जब प्रत्यक्ष रूप में साक्षी दी कि ये सारी बातें सत्य हैं, तो शेख खिज्र के दिल में जो थोड़ा-बहुत संशय रूपी दज्जाल था, वह भी समाप्त हो गया।

भावार्थ- सारी चर्चा सुनने के पश्चात् भी शेख खिज्र के मन में थोड़ा-सा संशय था कि यह मेरा हिन्दू अधिकारी कुरआन की ऐसी गुह्य बातें कह रहा है जिसे मैं आज तक नहीं जानता था, किन्तु जब उसी के मुस्लिम साथी सैय्यद अब्दुल रहमान ने भी दावे के साथ कहा कि भिखारी दास की सारी बातें सत्य हैं, तो शेख खिज्र का सारा संशय समाप्त हो गया और उसके मन की उथल-

पुथल दूर हो गयी। इसे ही चौपाई के चौथे चरण में "दज्जाल से युद्ध करना" कहा गया है।

तुम चलो उतहीं, करावें दीदार।

जो देखो हकीकत उनकी, तो पाओ परवरदिगार।।१००।।

उन तीनों ने शेख खिज्र से यह भी कह दिया कि यदि आप वहाँ चलते हैं, तो हम आपको उनका दर्शन कराते हैं। यदि आप उनकी वास्तविकता को समझ जायेंगे, तो आपको उनके अन्दर अल्लाह तआला की सूरत नज़र आएगी।

भावार्थ- यह चौपाई उन सुन्दरसाथ के लिए आत्म-मन्थन की प्रेरणा दे रही है, जो अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की महिमा को लघुतर करने में अपनी सारी ऊर्जा व्यय कर रहे हैं।

सेख वैसे ही उठिया, असवारी करी तैयार।

आगे तें खबर करी, हम आवत करन दीदार।।१०१।।

यह सुनते ही शेख खिज्र तुरन्त उठ पड़ा और चलने के लिए अपने घोड़े को तैयार किया। उसने श्रीजी के पास पहले यह सूचना भिजवा दी कि हम आपका दर्शन करने के लिये आ रहे हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के पहले चरण में "वैसे" शब्द का आशय यह है कि शेख खिज्र का हृदय श्रीजी के दीदार के लिए इतना तड़पने लगा कि न तो उन्होंने कुछ खाने–पीने के बारे में सोचा और न ही कोई विशेष वेशभूषा धारण की।

सेख आए के पहुंचिया, ले भीर अपनी।

देख दीदार कदमों लगा, पाए अपनी वतनी।।१०२।।

शेख खिज्र अपनी सारी सेना के साथ केतकी नदी के किनारे श्रीजी के निवास पर आ गये। श्रीजी का दर्शन करके, उन्होंने श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया। धाम धनी ने उनके अन्दर परमधाम की आत्मा को देखा।

होने लगी चरचा, कयामत का मजकूर।
सनंधे सुनी तिनने, सब देखा हक जहूर।।१०३।।

अब श्रीजी के मुखारविन्द से कियामत के विषय में मधुर चर्चा होने लगी। जब शेख खिज्र ने सनद ग्रन्थ का गायन सुना, तो उन्हें लगा कि यह तो अल्लाह के नूर का पसारा हुआ है।

इन समें दज्जाल नें, किया बड़ा सोर।
रहत मुसलमान बेदड़े, तिनों किया अति जोर।।१०४।।

इस समय अज्ञान रूपी दज्ञाल ने बहुत उत्पात मचाया। वहाँ पड़ोस के गाँव में कुछ बेदड़े मुसलमान रहा करते थे, उन्होंने वहाँ आकर बहुत अधिक आतंक फैलाने का प्रयास किया।

उनों जान्या सेख पुकारता, आया पकड़ने को।
तो हम जावें मदत, होवे काम दीन के मों।।१०५।।

उन्होंने यह समझा था कि शेख खिज्र इन हिन्दू वैरागियों को पकड़ने के लिए आया है और इस कार्य में सहायता के लिए हमें पुकार रहा है। यदि हम उसकी सहायता के लिए जाते हैं, तो यह दीन-ए-इस्लाम का बहुत बड़ा कार्य होगा और हमें इसका सबाब मिलेगा।

उहां कुरान तपसीर धरी थी, करने लगा जिद्द।

ए हिन्दुओं को रवा नहीं, तुम क्यों चरचा करो महम्मद।।१०६।।

श्रीजी के आगे कुरआन की टीका रखी हुई थी। मुसलमान तेज़ आवाज में बोलने लगे कि ऐ बाबा जी! तुम मुहम्मद की चर्चा क्यों करते हो? हिन्दुओं को ऐसा करने का अधिकार नहीं है।

भावार्थ– इस प्रकार का कथन ही यह दर्शाता है कि मज़हबी उन्माद या कट्टरता धर्म के शाश्वत सिद्धान्तों के पूर्णतः प्रतिकूल होती है। परमात्मा या महापुरूषों के लिए किसी समाज या स्थान विशेष का महत्व नहीं होता, वे सारी सृष्टि के लिए होते हैं। यह तो मानव मन की संकीर्णता है, जो महापुरूषों को एक समाज और स्थान के बन्धन में बाँधकर दूसरों को उनका नाम लेने से भी मना करते हैं।

तब सेख को गुस्सा चढ़ा, इन्हें उठाए देओ मुडदक।

देओ धक्के इनको, करने लगा हरकत हक।।१०७।।

अपने परवरदिगार के प्रति इस तरह का दुर्व्यवहार करते देखकर शेख खिज्र को गुस्सा आ गया और उन्होंने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि इन बेईमान लोगों को फटकारते हुए यहाँ से धक्के देकर बाहर निकाल दो।

सबों ने दई लानत, उठाया मजलस सें।

स्याह मोंह ले उठिया, बैठा दज्जाल इन में।।१०८।।

सभी सैनिकों ने मुसलमानों को फटकार लगाते हुए सभा से बाहर निकाल दिया। इन मुसलमानों के अन्दर दज्जाल बैठ गया था, जिससे इन्हें अपमानित होकर अपना काला मुँह लिये हुए सभा से बाहर निकलना पड़ा।

सेख सब साथ सों, ले आया ईमान।

फेर आया डेरे को, करके पूरी पहिचान।।१०९।।

शेख खिज्र अपने सभी सैनिक साथियों के साथ श्रीजी के प्रति विश्वास (ईमान) लाए। इसके पश्चात् उन्हें पूर्ण पहचान हो गई कि यही आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब हैं और तब वह अपने निवास पर आए।

दिन दूसरे गया, राजा की सोहोबत।

हैफ हे राजा तुझको, ऐसा पहलवान रहे इत।।११०।।

दूसरे दिन वह रामनगर के राजा से मिलने गए और उससे बोले कि राजा! तुझे धिक्कार है। तेरे नगर में अलौकिक व्यक्तित्व वाले इतने बड़े महापुरूष रहते हैं।

तूं तिनके दीदार को, गया नाहीं कब।

तो मैं तुझको क्या कहों, तुझे पहिचान ना भई लों अब।।१११।।

तू उनके दर्शन करने के लिए आज तक कभी नहीं गया? मैं तेरी इस बदनसीबी को क्या कहूँ कि तुझे आज तक उनके स्वरूप की पहचान नहीं हुई?

तब राजा बोलिया, अबहीं तुम करते पुकार।

भली भई तुमहीं फिरे, तुमहीं करने लगे करार।।११२।।

तब राजा ने उत्तर दिया कि अभी कुछ दिन पहले ही तो आप उनको पकड़ने के लिए शोर मचाते हुए आए थे। यह तो अच्छा हुआ कि आपकी बुद्धि बदल गई। अब आप उन्हीं को सब कुछ मानकर उनसे शान्ति की आस लगाए बैठे हो।

तब सेख बोलिया, हमें ना कछू खबर।

हम भेजे आए उनके, इन काम ऊपर।।११३।।

तब शेख खिज्र कहने लगे कि मैं क्या कर सकता था? मुझे तो उनके स्वरूप के बारे में कुछ पता ही नहीं था। मुझे तो बादशाह के हुक्म से आना पड़ा था और श्री प्राणनाथ जी को पकड़कर बादशाह के पास ले जाने का काम सौंपा गया था।

जब हम देखा हादीए को, ए तहकीक बरहक।

हमको भई पहिचान, हमारी सारी भानी सक।।११४।।

यह बात निश्चित रूप से सत्य है कि हमने उन्हें इस जमाने के हादी के रूप में देखा है। उन्होंने मेरे संशयों को नष्ट कर दिया है तथा मुझे उनके स्वरूप की पूर्ण पहचान भी हो गयी है।

अब हम उनके गुलाम, जो हमको ए फुरमाए।

सो सब हमें करना, दें पैगाम पहुंचाए।।११५।।

अब तो मैं उनका गुलाम हूँ। वे मुझे जो भी आदेश देंगे, उसका पालन मैं अवश्य करूँगा। उनके इमाम महदी के रूप में जाहिर होने की बात मैं बादशाह तक भी पहुँचाऊँगा।

तब लोगों ने कह्या, राजा सों सुकन।

है इनके पास भुरकी, सो हाथ रहे मोमिन।।११६।।

शेख खिज्र के चले जाने के पश्चात् राजा के दरबारियों ने उससे यह बात कही कि श्री प्राणनाथ जी के पास तान्त्रिक क्रिया से सिद्ध की हुयी भस्म (भभूत या राख) है, जिसे उनके अनुयायी वैरागी अपने हाथ में लिये रहते हैं।

जो कोई जात है, सिर पर डारत तिनके।

सोई उनका होत है, तुम समझियो सोहोबत में।।११७।।

जब भी कोई श्रीजी से मिलने जाता है, तो वैरागी लोग उसके सिर पर वही भभूत डाल देते हैं, जिसके वशीभूत होकर वह व्यक्ति श्री प्राणनाथ जी को ही अपना सब कुछ मानने लगता हैं। यदि आप उनसे मिलने जा रहे हैं, तो यह बात समझ लीजिए और इससे सावधान रहिए।

राजा कहे मैं जाऊंगा, बैठों ना सोहोबत।

दूर से दीदार करूंगा, वास्ते सेख खिदर के इत।।११८।।

राजा ने उत्तर दिया कि शेख खिज्र ने मुझे बहुत शर्मिन्दा किया है, इसलिए मुझे विवश होकर जाना पड़ेगा, किन्तु मैं उनके पास नहीं बैठूँगा, बल्कि दूर से ही दर्शन कर लूँगा।

दिन दूसरे राजा ने, न्योता किया सबन।

बाग में आप आए के, दीदार किया मोमिन।।११९।।

दूसरे दिन राजा ने श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ को भोजन के लिए अपने बाग में निमन्त्रण दिया। जब सब सुन्दरसाथ भोजन कर रहे थे, तो उसने दूर से ही सुन्दरसाथ सहित श्रीजी का दर्शन किया।

हादी के सनमुख, खड़ा रहा न बैठा जे।

दिल मे दहसत इनको, जिन अपने करें ए।।१२०।।

उसके मन में यह डर बना हुआ था कि कोई मुझे वशीभूत करने के लिए मेरे शिर पर भुरकी न डाल दे। इसलिए वह श्रीजी के पास नहीं बैठा, बल्कि उनके सामने खड़े होकर दूर से ही प्रणाम कह दिया।

ओ ऐसे ही पीछा फिरा, सुनी न चरचा कान।

बिन अंकूरे क्या करे, कर ना सका पहिचान।।१२१।।

उसने अपने कानों से श्रीजी की चर्चा का एक शब्द भी नहीं सुना और खाली हाथ वापस चला आया। जिस जीव के ऊपर अखण्ड धाम का अँकुर न हो, भला वह क्या कर सकता है? माया का जीव होने के कारण ही रामनगर का राजा श्रीजी के स्वरूप की पहचान नहीं कर सका।

फेर सेख खिदरें मांगिया, हमको करो हुकम।

तैसा हम हजूर में, लिखा करें बाब तुम।।१२२।।

इसके पश्चात् शेख खिज्र ने श्रीजी से यह स्वीकृति माँगी कि आप जैसा आदेश करें वैसा ही आपके सम्बन्ध में लिखकर बादशाह के पास भेज दें।

तब कह्या हादी नें, तुमको क्या कहें हम।

जैसा तुमारी अकलें, देखा होए हमें तुम।।१२३।।

तब आखिरी जमाने के खाविन्द श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि इस विषय में मैं तुम्हें क्या कहूँ? जैसा तुम्हारी बुद्धि ने मेरी पहचान की है।

तैसा तुम लिखा करो, पहुंचाओ पुरदल खान।

वह भेजे सुलतान को, होए अंकूर पहिचान।।१२४।।

तुम हू-ब-हू वैसा ही लिखकर पुरदल खान तक पहुँचा दो। वह औरंगज़ेब बादशाह तक पहुँचा देगा। यदि उसमें अँकुर होगा, तो वह मुझे पहचान लेगा।

भावार्थ- इस चौपाई का आशय यह नहीं लेना चाहिए कि औरगज़ेब में परमधाम का अँकुर नहीं था। स्वयं श्रीजी ने अपने मुख से औरंगज़ेब के अन्दर सकुमार की

वासना मानी है। अँकुर तो बिहारी जी में भी था, लेकिन वह अन्त समय तक जाग्रत नहीं हो पाए। यह भाषायी सौन्दर्य है, जिसके अन्तर्गत यह कहा गया है कि यदि उसमें परमधाम का अँकुर होगा तो वह मुझे पहचान लेगा।

केतेक दिन सेख रहया, लिख भेजी पहिचान।
केतेक लोग सेख के रह गए, जिनको जोर ईमान।।१२५।।

कुछ दिन तक शेख खिज्र श्रीजी के चरणों में रहा। उसने आखरूल जमां इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्ज़मां के रूप में श्रीजी की पहचान लिखकर पुरदल खान के पास पहुँचा दी। शेख खिज्र की सेना के कुछ सैनिकों में श्रीजी के प्रति इतना विश्वास था कि वे वहीं पर धनी के चरणों में रह गये।

भिखारी दास सेख पहुंचाए के, फेर आए कदमों।

कबीला अपना ल्याइया, सब सोंप्या हादी को।।१२६।।

भिखारी दास शेख खिज्र को उसके गन्तव्य स्थान तक पहुँचा कर पुनः धनी के चरणों में लौट आए। वे अपने साथ अपना सारा परिवार भी लेकर आए और अपना सब कुछ धाम धनी के चरणों में सौंप दिया।

फेर अहदी गुलाम महम्मद, दौड़ा धमोनी से।

तिनने सुनी बातें, वास्ते लोभ के।।१२७।।

इसके पश्चात् धमोनी से गुलाम मुहम्मद, बादशाह का प्रतिनिधि बनकर आया। उसके मन में वैरागियों को गिरफ्तार करके बादशाह का प्रिय पात्र बनने का लोभ था। उसने शेख खिज्र के द्वारा श्रीजी के प्रति समर्पित हो जाने की बातें भी सुनी थीं।

था खेस पुरदल खान का, पुकार किया उत सें।

राजा से जाए कहो, वेंरागी पकड़ देओ हमें।।१२८।।

वह पुरदल खान के खानदान का था। उसने अपने सन्देशवाहक के द्वारा कठोर शब्दों में राजा के पास सन्देशा भिजवाया कि उन वैरागियों को पकड़कर मेरे हवाले कर दिया जाए।

तब राजा डरिया, इन पर दबदबा पातसाही।

इन्हें हम अपने गांव क्यों रखें, बदी बदकारों बताई।।१२९।।

यह सुनकर रामनगर का राजा बहुत डर गया। उसने सोचा कि बादशाह औरंगज़ेब इन वैरागी महात्माओं को अपने आधिपत्य में रखना चाहता है। इसलिए बार-बार मुगल सेना के आने की सम्भावना बनी रहती है। ऐसी स्थिति में हम इन्हें अपने राज्य में क्यों रखें ? उसके

दरबार के बुरे लोगों ने भी उससे श्रीजी की बुराई करनी शुरू कर दी।

तब राजा ने भेजे, गुमास्ते अपनें।
तुम जाओ हमारे देस से, हम न सह सकें खरखसें।।१३०।।

तब राजा ने अपने सेवकों को श्रीजी के पास यह कहकर भेजा कि आप सभी लोग हमारे राज्य से बाहर चले जाइए। आप लोगों के यहाँ रहने के कारण ही हमें बादशाह की ओर से आने वाली इतनी परेशानियाँ झेलनी पड़ रही हैं। हम इसे और सहन नहीं कर सकते।

देखी नजर राजा की, दहसत भरी कहर।
तब उहाँ से उठ चले, जिमी देखी जहर।।१३१।।

श्रीजी ने अनुभव किया कि राजा के दिल में औरंगज़ेब

के प्रति दहशत (भय) है, जिसके कारण उसके हृदय में सुन्दरसाथ के लिए अत्याचारी मानसिकता (कहर) भरी हुई है। उन्हें रामनगर की वह सारी भूमि विष के समान कष्टकारी प्रतीत होने लगी। इसलिए श्रीजी सब सुन्दरसाथ सहित वहाँ से उठकर चल दिए।

सम्वत् सत्रह सै उन्तालीसे, मास अगहन सुदी दस में।
चले रामनगर से, फेर आए चौदस गढ़ें में।।१३२।।

सम्वत् १७३९ में अगहन मास के शुक्ल पक्ष की दसवीं को श्रीजी सब सुन्दरसाथ सहित रामनगर से चले और चतुर्दशी को गढ़ा पहुँचे।

द्रष्टव्य– जबलपुर के पास गढ़ा नाम का एक छोटा–सा गाँव था। श्रीजी रामनगर से चलकर यहीं पर आए थे।

तब उतरे जाऐ बाग में, अहदी पहुंचा धाए।

सो तो गया रामनगर, पाँच अपने पहुंचाए।।१३३।।

श्रीजी सहित सुन्दरसाथ गढ़े के एक बाग में जाकर ठहरे। इधर बादशाह का भेजा हुआ प्रतिनिधि गुलाम मुहम्मद रामनगर पहुँचा। उसने अपने पाँच सैनिकों को सुन्दरसाथ की खोज करने के लिए गढ़ा भेज दिया था।

तिनने रोके बाग में, तब आए पहुंचे देवकरन।

तिनसे बातें होने लगी, लड़े चार पहर मोमिन।।१३४।।

इन पाँच सैनिकों ने सब सुन्दरसाथ को बाग में रोके रखा। इसी बीच देवकरण जी वहाँ पहुँच गए। उनसे उन सैनिकों की बातें होने लगीं। चार प्रहर तक सुन्दरसाथ उन सैनिकों से उलझे रहे।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में लड़ने का तात्पर्य

तलवार से लड़ना नहीं, बल्कि ज्ञान से लड़ना है। श्रीजी और देवकरण जी की उपस्थिति में पाँचों मुस्लिम सैनिकों में यह साहस नहीं था कि हजारों सुन्दरसाथ के ऊपर तलवारों से प्रहार करते।

सनंधे हादी ने कही, सुनते ही हुए जेर।
दिन उगते पहिले भगे, बड़ी हुई हमें खेर।।१३५।।

श्रीजी ने सनद ग्रन्थ के कुछ उद्धरणों को सुनाया, जिसे सुनते ही वे धनी के चरणों में नतमस्तक हो गए। दिन उगने से पहले ही वे यह कहते हुए भाग खड़े हुए कि अल्लाह की हमारे ऊपर बहुत बड़ी मेहर हुई है।

एतो बली खुदाए का, हमसे बेअदबी कछू होए।
तो होता बुरा हमारा, हम ठौर न पावें सोए।।१३६।।

ये तो खुदा का वली है। यदि हमसे इनके प्रति कोई बुरा व्यवहार हो जाता तो हमारा नाश हो जाता। दुनिया में हमारा रहने का ठिकाना ही नहीं रहता।

भावार्थ– वली–ए–खुदा या वलीउल्लाह का तात्पर्य उस सच्चे फकीर अर्थात् परब्रह्म के प्रियतम से होता है, जिसकी खुदा से दोस्ती होती है, और वही उसके इलाही खजाने (आत्मिक धन) का वारिस होता है।

हादी वहां से चल के, गढ़े पहुंचे धाए।

वहां भगवन्त राय का, बेटा हाकिम ताए।।१३७।।

श्रीजी उस बाग से चलकर गढ़े में आए। वहाँ भगवन्त राय का बेटा हाकिम राय था।

उनने दिल में यों लिया, लूट लेऊं वेंरागिन।

एही हराम खोरी के, लोकों आगे कहे सुकन।।१३८।।

उसने अपने मन में सोचा कि मैं इन वैरागियों को लूट लूँ। इस प्रकार पाप कर्म का विचार उसने अपने आदमियों के बीच में कह सुनाया।

ए सुनी गंगाराम बाजपेई, उहां था आसन।

आया बार दोए दीदार को, जान सनमन्ध आपन।।१३९।।

वहीं पास में गंगाराम वाजपेयी का निवास था। वे श्रीजी से अपने आध्यात्मिक सम्बन्ध के कारण, दो बार उनके दर्शन करने के लिए आ चुके थे।

तिन जाए बरज्या उनको, क्यों एह करने लगा काम।
वेरागियों को लूटते, होएगा बदनाम।।१४०।।

गंगाराम वाजपेयी ने हाकिम राय से जाकर यह कहा कि इन महात्माओं को लूटने का यह बुरा काम क्यों कर रहे हो? उनको लूटने से तुम सारे देश में बदनाम हो जाओगे।

और ए ऐसे नहीं जो कोई लूट ले, मरे मारेंगे तुम।
काहे को भूल के सुकन, मुंह से काढ़ दिखाओ हम।।१४१।।

और ये इतने कमजोर भी नहीं हैं कि कोई इन्हें लूट ले। वे युद्ध में मरने-मारने के लिए भी तैयार हैं। भूल से भी इस तरह के पापपूर्ण विचार तुम अपने मन में क्यों लाते हो? और अपने मुँह से इस तरह के कटु वचन क्यों निकालते हो?

लागी लानत गढ़े को, उस दिन से हुआ खुवार।

सो रोज कयामत लों, ठौर न आवे लगार।।१४२।।

उस दिन गढ़े को परब्रह्म की तरफ से धिक्कार लगी। उस दिन से उसका पतन हो रहा है। कियामत के दिन तक इस स्थान का उद्धार नहीं हो सकता।

भावार्थ– जहाँ के लोग ब्रह्ममुनियों, परमहंसों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं, वहाँ विनाश अवश्य होता है। श्रीजी और सुन्दरसाथ के प्रति हाकिम राय के मन में उपजे पाप ने उस स्थान को कलंकित कर दिया, जिसके कारण वह आज तक पनप नहीं सका।

महामत कहें ऐ साथ जी, ए गढ़े की बीतक।

कछुक पीछे रही है, सो कहों हुकम हक।।१४३।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आपने गढ़े का

यह प्रसंग सुना। पीछे की कुछ बातें छूट गई हैं, जिसे मैं धाम धनी के आदेश से कह रहा हूँ।

प्रकरण ।।५८।। चौपाई ।।३३००।।

गढ़ा का वृत्तान्त

गढ़े की मजल में, आया याद रामनगर।

तिनकी मजल कहत हों, सुनियो साथ खबर।।१।।

जागनी लीला में श्रीजी और सुन्दरसाथ के गढ़े के पड़ाव का वर्णन करते समय रामनगर के कुछ प्रसंगों की याद आ रही है, जिसका मैं वर्णन करता हूँ। हे साथ जी! आप उसे सुनिए।

सूरत सिंह ईमान ल्याइया, देख के दीदार।

सक मन में ना रही, देखा धनी निरधार।।२।।

श्रीजी का दर्शन करने के पश्चात् सूरत सिंह के मन में किसी तरह का संशय नहीं रह गया और उन्होंने श्रीजी को साक्षात् पूर्ण ब्रह्म के रूप में देखा। उनके हृदय में श्री

प्राणनाथ जी के प्रति अटूट विश्वास आ गया।

सुनिया तारतम इनने, देखी हक सूरत।

ए बात मैं किनसों कहों, कौन ल्यावे प्रतीत इत।।३।।

सूरत सिंह ने श्रीजी से तारतम का श्रवण किया और श्रीजी को साक्षात् धाम धनी के रूप में अनुभव किया। उन्होंने अपने मन में सोचा कि इस बात को तो केवल मैं जानता हूँ कि श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में साक्षात् परब्रह्म ही लीला कर रहे हैं, लेकिन यह बात मैं किससे कहूँ? मेरी इन बातों पर भला कौन विश्वास करेगा?

गया दीवान देवकरन पे, एक सुनी मैं बात।

तुमारे आगे कहत हों, मैं देखी हक जात।।४।।

वे दीवान देवकरण के पास गए और उनसे बोले कि मैंने

एक बात सुनी है, जो तुमसे कहना चाह रहा हूँ। मैंने इस नश्वर जगत में साक्षात् परब्रह्म एवं उनकी ब्रह्मात्माओं को देखा है।

चलो मेरे साथ तुम, मैं कराऊं दीदार।
केतकी पर रहत हैं, देखो धनी निरधार।।५।।

यदि तुम मेरे साथ चलो, तो मैं तुम्हें साक्षात् परब्रह्म के दर्शन करा सकता हूँ। इस समय वे केतकी नदी के किनारे जागनी लीला कर रहे हैं। वहाँ चलने पर तुम्हें निश्चित रूप से परब्रह्म के दर्शन हो जायेंगे।

ल्याए दीवान देवकरन को, देख के लगे कदम।
सक कछू ना ल्याइया, सिर पर चढ़ाया हुकम।।६।।

सूरत सिंह देवकरण को लेकर केतकी नदी के किनारे

आए। उन्होंने श्रीजी का दर्शन कर उनके चरणों में प्रणाम किया। देवकरण जी के मन में भी किसी तरह का शक नहीं रहा। उन्होंने धाम धनी की प्रत्येक आज्ञा को शिरोधार्य किया।

थोड़ी चरचा सुन के, दिल की भागी सक।
मैं महाराज सों कहों, ओ ईमान ल्यावें बेसक।।७।।

थोड़ी चर्चा सुनने के पश्चात् उनके दिल के सारे संशय समाप्त हो गए। उन्होंने अपने मन में सोचा कि मैं श्रीजी की बात महाराजा श्री छत्रसाल जी से कहूँगा, वे निश्चित रूप से ईमान ले आयेंगे।

अब सेवा के साथी कहों, जो रामनगर में।
मोदी खाने की सेवा दई, सो हुई पतिराम सें।।८।।

अब रामनगर में सेवा करने वाले सुन्दरसाथ का वर्णन किया जा रहा है। अनाज एवं सभी वस्तुओं के भण्डार गृह की सेवा पतिराम जी को दी।

केसवदास और जेनती, हुए सामिल पतिराम के।
और जेनती पानी पिलावत, साथ की सेवा करी ऐ।।९।।

केशवदास और जयन्ती भाई पतिराम जी के साथ सहयोग करते थे। जयन्ती भाई सुन्दरसाथ को पानी पिलाने की विशेष सेवा करते थे।

हाट से सौदा ल्यावत, इन समें गोकुलदास।
कुल अखत्यार खान सामा को, था गरीबदास खास।।१०।।

बाजार से सामान खरीदकर लाने का उत्तरदायित्व गोकुल दास जी के ऊपर था। भोजन प्रबन्धन से लेकर

अन्य सभी व्यवस्थाओं के केन्द्र में गरीब दास जी विशेष थे।

रसोई में खेमदास, और गंगाराम।

और सन्त दास गोवरधन, पीछे सूरजमलें किया काम।।११।।

रसोई के लिए भोजन बनाने की व्यवस्था में खेमदास, गंगाराम, सन्तदास, और गोवर्धन जी रहते थे। बाद में सूरजमल ने भी इसमें सेवा की।

इन सबों पर दरोगा, रहता वृन्दावन।

लकड़ी जंगल की टहल, रहें बराड़ी साथ सबन।।१२।।

इन सबके ऊपर निर्देशक (दरोगा) के रूप में वृन्दावन जी रहते थे। भोजन बनाने के लिए जँगल से लकड़ियाँ लाने की सेवा बराड़ी के सुन्दरसाथ किया करते थे।

गावनें में रहत हैं, ए जो निरमल दास।

तिन सेती सामिल रहे, भाई मुकुन्द दास खास।।१३।।

गाने की सेवा में निर्मलदास जी रहते थे। उनके साथ भाई मुकुन्ददास जी विशेष रूप से रहते थे।

श्री बाई जी गावनें में रहें, संग गोदावरी।

बुआबाई हमों गावें, सनंधां जो उतरी।।१४।।

श्री बाई जी वाणी गाने की सेवा में रहती थीं, उनके साथ गोदावरी बहिन रहती थी। बुआ बाई और हम्मो सनद वाणी के गायन की सेवा में रहती थी।

और चौकी दो जिनस की, ए गावें बारे अपनें।

निरमल दास नित्याने, रिझावें राज सब में।।१५।।

गाने वालों की दो मण्डलियाँ थीं, जो अपनी-अपनी बारी से गाया करती थीं। नित्य वाणी गाकर धाम धनी को रिझाने की सेवा निर्मल दास जी करते थे।

और आरती में रहत हैं, लाल मुकुन्द दास।
उत्तम दास पखावज में, सब सिरे निरमल दास।।१६।।

श्रीजी की आरती में श्री लालदास जी और मुकुन्द दास जी की विशेष रूप से सेवा रहती है। उत्तम दास जी पखावज बजाते हैं। इन कार्यों में निर्मल दास जी सबसे आगे रहते हैं।

द्रष्टव्य- पखावज एक प्रकार का वाद्य यन्त्र है, जो ढोलक और मृदंग से मिलता-जुलता है।

और बनमालीदास सामिल, रहें आरती में तैयार।

सेवा अपनी मिनें, नए नए करें विचार।।१७।।

बनमाली दास आरती की सेवा में हमेशा तैयार रहते हैं। अपनी सेवा को ये नए-नए भावों से पूरा करते हैं और धाम धनी को रिझाते हैं।

खिमाईदास ताल बजावत, कनड़ गावने में।

कल्याण कला जमावत, ए सेवे आरती समें।।१८।।

खिमाई दास ताली बजाते हैं, तथा कन्नड़ गायन में तल्लीन रहते हैं। कल्याण भाई अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। कल्याण जी अपनी संगीत की कला द्वारा आरती के समय सुर और ताल का सामञ्जस्य बनाए रखते हैं।

और साथ सब ठाढ़ा रहे, छबीलदास बजावें संख।
आरती संझा समें होत है, करे मगन होए निसंक।।१९।।

आरती में सब सुन्दरसाथ खड़े रहते हैं। छबीलदास जी शंख बजाते हैं। श्रीजी की आरती सन्ध्या समय हुआ करती है। सब सुन्दरसाथ श्रीजी के प्रति पूर्ण रूप से संशयरहित होकर आरती करते हैं और आनन्द में मग्न रहते हैं।

अग्यारह उच्छव कौसल्या को, पधराए घरों राज।
सेवा करी भली भांत सों, पूरे मनोरथ काज।।२०।।

कौशल्या के यहाँ प्रीतिभोज के ग्यारह उत्सव हुए। उन्होंने बहुत अच्छी तरह से धाम धनी और सुन्दरसाथ की सेवा की। श्री राज जी ने उनकी सारी इच्छाओं को पूर्ण किया।

दोए उच्छव तिवारी उदई, घरों पधराए अपने।

एक भतीजा घासी, जान गुरू वेरागी पने।।२१।।

प्रीतिभोज के दो उत्सव उदय तिवारी के यहाँ हुए। उन्होंने अपने घर पर श्री प्राणनाथ जी और सुन्दरसाथ को पधराया। उनका एक भतीजा था, जिसका नाम घासी था। उसने श्रीजी का वैराग्य भेष देखकर उन्हें अपना गुरू बनाया।

रामजनी भगवती, तिनकी महतारी ने।

उच्छव कर पधराए, जान पने अपने।।२२।।

रामजनी ने और भगवती की माताजी ने श्रीजी को परमधाम का अपना धनी मानकर प्रीतिभोज का उत्सव किया और सुन्दरसाथ सहित श्रीजी को पधराया।

मकरन्द ने उच्छव किया, तन मन धन सोंपे।

कदमों लाग ठाढ़ा रहे, कछू रख्या ना पीछे।।२३।।

मकरन्द भाई ने भी प्रीतिभोज का उत्सव किया तथा अपना तन, मन, धन श्रीजी के चरणों में समर्पित कर दिया। वे धाम धनी के चरणों में प्रणाम करके सेवा में हमेशा खड़े रहते थे। उन्होंने अपने भविष्य के लिए एक फूटी कौड़ी भी नहीं रखी।

अमरा दत्ता दगड़ा, आए बराड़ से।

किया उच्छव उमंग सों, सनमुख हुए साथ में।।२४।।

अमरा, दत्ता, और दगड़ा बराड़ के रहने वाले सुन्दरसाथ थे। इन्होंने बहुत आनन्दपूर्वक प्रीतिभोज का उत्सव किया तथा सुन्दरसाथ की सेवा के लिए प्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित हुए।

देवी काका जयन्ति, इन किया उच्छव ए।

श्री राज पधराए इन घरों, संग लिए सेवे।।२५।।

देवी दास तथा जयन्ती काका ने भी अपने यहाँ प्रीतिभोज का उत्सव किया। इन्होंने श्री प्राणनाथ जी को अपने घर पर पधराया और बहुत प्रेम भाव से साथ रहकर सेवा की।

हीरामन बढ़ई नें, करी उच्छव रसोई।

श्री राज साथ को बुलाए, सेवा इनसे भली भई।।२६।।

हीरामन जी ने अपने घर पर धाम धनी सहित सुन्दरसाथ को बुलाया। उन्होंने प्रीतिभोज का उत्सव मनाया और बहुत अच्छी सेवा की।

सातमी मजल आए गढ़े, एक मास तेरह दिन।

हुकम हुआ श्री राज का, जाओ सुलतान पे मोमिन।।२७।।

रामनगर से सात पड़ाव के पश्चात् श्रीजी गढ़े में आए थे। वहाँ पर वे एक महीना तेरह दिन तक ठहरे। वहीं पर उन्होंने सुन्दरसाथ को आदेश दिया कि वे औरंगज़ेब के पास जाकर इमाम महदी और कियामत के जाहिर होने का सन्देश दें।

गढ़े में आए मिली, बाई धरमा डोकरी।

ईमान ल्याई सुनते, कछू सक ना इन करी।।२८।।

गढ़े में ही धरमा बाई नामक एक बुढ़िया माता श्रीजी के चरणों में आई और थोड़ी सी चर्चा सुनने के पश्चात् उसे धाम धनी के प्रति विश्वास आ गया। उसके मन में जरा भी संशय नहीं हुआ।

अनन्त राम आइया, और आया घनस्याम।

हरबाई संग इनके, और सदानन्द इस ठाम।।२९।।

अनन्तराम, घनश्याम, हरबाई, और सदानन्द जी ने यहीं पर धाम धनी के चरणों से अपना सम्बन्ध जोड़ा।

गंगाराम उज्जैन का, और वासू केसर।

उदैती खिमोती दयाली, मोहन धनबाई इन पर।।३०।।

उज्जैन के रहने वाले गंगाराम, वासू, केशव, उदैती, खिमोती, दयाली, मोहन, तथा धनबाई ने भी तारतम ज्ञान ग्रहण कर निजानन्द की राह अपनाई।

फकीरी बेनी बेहेन थी, करमेती परवान।

मानिक और पूर बहू, और लखमी आई जान।।३१।।

फकीरा, बेनी बहन, करमेती, मानिक, पूरबहू, और लक्ष्मी ने यहाँ पर अपनी आत्मा धाम धनी को सौंप दी।

और गोवरधन, और भट्ट मुकुन्द जी।
देवीदास हरखो गढ़ा में, आए रूह कदमों दी।।३२।।

गोवर्धन, मुकुन्द भट्ट, देवी दास, और हरखो बाई ने गढ़े में अपनी आत्मा धाम धनी के चरणों में सौंप दी तथा निजानन्द के मार्ग पर कदम बढ़ाया।

बिन्दा बिहारी सन्त दास, वैस्य दुरजन सिंह जे।
खांडेराए रूप सिंह, कीरत सिंह कदमों पहुंचे।।३३।।

विन्दा, बिहारी, सन्त दास वैश्य, दुर्जन सिंह, खाँडे राय, रूप सिंह, तथा कीर्ति सिंह तारतम लेकर धाम धनी के चरणों में आए।

दरसा धरमोल रतन, और कुसल सिंह मधुकर।

मयाराम वैद्य उहां का, लालसिंह भदोरिया योंकर।।३४।।

दरसा, धर्मोल, रतन, कुशल सिंह, मधुकर, गढ़ा निवासी मयाराम वैद्य, तथा लाल सिंह भदौरिया ने भी तारतम ज्ञान लिया और सुन्दरसाथ के समूह में सम्मिलित हुए।

इन समें लालदास को, हुआ हजूर का हुकम।

जाए कहो सुलतान को, ल्याए फेर पैगाम ऊपर तुम।।३५।।

इस समय श्री लालदास जी को श्रीजी का आदेश हुआ कि तुम औरंगज़ेब बादशाह के पास जाकर यह कहो कि हम आपके लिए इमाम महदी और कियामत के जाहिर होने का सन्देश लेकर आए हैं।

पूस सुदी पांच को, बीरजू दई खबर।

राम नगर राजा ने, अस्तल खोद्यो भली तर।।३६।।

पूस मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को वीरजू ने श्रीजी को यह सूचना दी कि रामनगर के राजा ने हमारी बनाई हुई हवेली को खोदकर पूरी तरह से नष्ट कर दिया है।

सुन कान दुःख पाइया, हुआ गढ़ा खराब।

ज्यों खोदो अस्तल को, ताको रहे न पकड़ो ताब।।३७।।

अपने कानों से यह सुनकर श्रीजी को दुःख हुआ, जिसका परिणाम यह हुआ कि जिस तरह से राजा ने हवेली को खोद-खोदकर खराब किया था, वैसे ही भूकम्प में पूरा गढ़ा नगर ध्वस्त हो गया। भला श्रीजी की अलौकिक शक्ति का विरोध करने का सामर्थ्य, मद में अन्धे उस राजा में कहाँ से हो सकता है?

भावार्थ– यहां यह जिज्ञासा होती है कि हवेली तो रामनगर की गिरायी गयी, किन्तु भूकम्प का दण्ड गढ़े को क्यों मिला? इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि गढ़े में ही हाकिमराय ने सुन्दरसाथ को लूटने की मानसिकता बनायी थी तथा रामनगर की हवेली को गिराने की सूचना गढ़े में ही मिली। इसलिए गढ़ा ही जिबरील की टेढ़ी नजर में आया। वह भी रामनगर राज्य के अन्तर्गत ही था।

जब देवकरन विदा भए, तब पूछी श्री राज नें बात।
तुम अपना ठौर छोड़ के, और मुलक क्यों जात।।३८।।

जब देवकरण जी श्रीजी के पास से जाने लगे, तब श्री प्राणनाथ जी ने उनसे पूछा कि तुम अपने राज्य को छोड़कर दूसरे राज्य में यहाँ किसलिए रह रहे थे?

तब दीवानें ए कही, एक बात पर आए रिसाए।

तबसे इहां रह गए, उहां जाने न पाए।।३९।।

तब दीवान देवकरण जी ने यह बात कही कि मैं एक बात पर क्रोधित हो गया था और नाराज होकर यहाँ रहने लगा था। इस प्रकार मैं कभी अपने राज्य में जा नहीं पाया।

तब श्री राज नें कहया, तुम आए इन काज।

एक वस्त लेए के, पहुंचावने महाराज।।४०।।

तब धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि तुम मेरा सन्देश लेकर महाराजा छत्रसाल जी को पहुँचाने के लिए ही यहाँ आए थे। तुम्हारा क्रोधित होकर यहाँ आना तो मात्र एक बहाना था, अर्थात् मूल स्वरूप की प्रेरणा से ही देवकरण जी रामनगर में रहने लगे थे।

हम सब राजा देखे, पै काहू न देखा अंकूर।

सकुण्डल इन्हें परखी, तो इनसों होसी मजकूर।।४१।।

मैंने बहुत से राजाओं को देखा, लेकिन किसी के अन्दर परमधाम का अँकुर नहीं मिला। छत्रसाल जी के अन्दर साकुण्डल की आत्मा है, इसलिए अब उनसे निश्चित ही बातचीत होगी।

जब लाल को हुकम हुआ, तब जाए देख्या कुरान।

सोलह सिपारे मिनें, मूसे हारून का बयान।।४२।।

जब श्रीजी ने लालदास जी को औरंगज़ेब के पास जाने का आदेश दिया, तब उन्होंने कुरआन खोलकर देखा। कुरआन के सोलहवें सिपारे में मूसा और हारून का प्रसंग दिया गया है।

तहां लिखा मूसे ने, खुदायसों करी अरज।

मैं क्यों कर लड़ो फेरून सों, जोलों मेरी न करो गरज।।४३।।

वहाँ लिखा है कि मूसा पैगम्बर ने अल्लाह तआला से प्रार्थना की कि जब तक आप मेरी सहायता न करें, तब तक मैं फिरऔन बादशाह से कैसे लड़ सकता हूँ।

मैं फकीर ओ पातसाह, मैं पहुंच न सकों तिन।

जो मेरा भाई देओ मुझको, तो लड़ों ले साथ मोमिन।।४४।।

मैं एक फकीर हूँ, जबकि फिरऔन बादशाह है। मैं सांसारिक दृष्टि से उसकी बराबरी कैसे कर सकता हूँ? यदि आप मेरी सहायता के लिए मेरा भाई मुझे दे दीजिए, तो मैं मोमिनों के साथ फिरऔन बादशाह से युद्ध कर सकता हूँ।

तब खुदाए ने दिया, मूसे को भाई हारून।

अब फेरून का ना चले, कर ना सके खून।।४५।।

तब अल्लाह तआला ने मूसा पैगम्बर को भाई के रूप में हारून दिया, और यह बख्शीश कर दी कि अब फिरऔन का कुछ भी वश नहीं चलेगा, तथा वह किसी का खून भी नहीं बहा सकेगा।

भावार्थ– कुरआन के इस प्रसंग में श्री प्राणनाथ जी को मूसा पैगम्बर, महाराजा श्री छत्रसाल जी को हारून, तथा औरंगज़ेब को फिरौन कहा गया है।

हारून पहले गरीब थे, लेकिन मूसा पैगम्बर की कृपा से बादशाह बन गए। इसी प्रकार श्री प्राणनाथ जी की कृपा दृष्टि से छत्रशाल जी महाराजा बन गए और उन्होंने औरंगज़ेब की सेनाओं को दर्जनों (५२) लड़ाइयों में हार का स्वाद चखाया, जबकि श्रीजी के निर्देश को न मानने

से औरंगज़ेब का पतन हो गया। आज इस दुनियाँ में औरंगज़ेब के वन्श का दीपक जलाने वाला भी कोई नहीं बचा है।

एह आएत राज को, देखाई लालदास।
आपन को एक राजा मिले, सो चाहिए मोमिन खास।।४६।।

श्री लालदास जी ने यह आयत ले जाकर श्रीजी के सामने प्रस्तुत की। तब श्रीजी ने कहा कि हमें एक ऐसा राजा मिलना चाहिए जिसमें परमधाम का अँकुर हो, तो औरंगज़ेब को टक्कर दी जा सकेगी।

एह विचार करते, लाल रह्या लसकर सें।
चरन दास गरीबदास, पहुंचाए लसकर में।।४७।।

श्री प्राणनाथ जी के मन में इस तरह का विचार होने पर

श्री लालदास जी औरंगज़ेब से मिलने नहीं गए और उनकी जगह चरणदास तथा गरीबदास जी को औरंगज़ेब से मिलने के लिए भेज दिया गया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे और चौथे चरण में "लसकर" शब्द का प्रयोग हुआ है, जिसका अर्थ सेना (फौज) होता है। विदित हो कि उस समय औरंगज़ेब बादशाह दिल्ली में न रहकर अपनी सेना के साथ दक्षिण भारत में रहता था और मराठों का दमन करने के लिए उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। जैसे बुरहानपुर से लालदास जी खुल्दाबाद गए थे और काज़ी शेख इस्लाम से भेंट की थी, उसी प्रकार अब भी वहीं जाना था, क्योंकि शाही सेना का काज़ी भी बादशाह के साथ रहा करता था।

धरमा मिली लाल को, राह में जाते।

तुम्हारी बात देव जी ने, करी छत्रसाल आगे।।४८।।

श्री लालदास जी की रास्ते में धरमा बाई से भेंट हुई। उन्होंने श्री लालदास जी को यह बात बताई कि देवकरण जी ने श्री छत्रसाल जी से श्रीजी और सुन्दरसाथ के विषय में चर्चा कर दी है।

एह बात सुन लाल नें, आए आगे करी श्री राज के।

बात अपनी होने लगी, छत्रसाल आगे।।४९।।

यह बात सुनकर श्री लालदास जी ने धाम धनी को बताया कि देवकरण जी के द्वारा श्री छत्रसाल जी से आपकी और सुन्दरसाथ की चर्चा होने लगी है।

तब देवजी पास पठाए, सन्त दास धरम दास।

पाती लिख पहुंचाई, कहियो संदेसो खास।।५०।।

तब धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने सन्त दास और धरम दास जी को देवकरण जी के पास भेजा, साथ में उन्हें एक पत्र लिखकर देवकरण जी के लिए दे दिया, और कहला दिया कि इसमें लिखा हुआ विशेष सन्देश महाराजा छत्रसाल जी तक अवश्य पहुँचा देना।

फेर अगरिए से भेजे, लाल उत्तम जीवन।

और गोविन्द दास को, भेजे ऊपर मोमिन।।५१।।

पुनः श्रीजी ने अगरिए से लालदास, उत्तमदास, जीवन दास, और गोविन्द दास जी को महाराजा छत्रसाल के पास भेजा।

बूढ़ी बूढ़ा मों आई, कमलावती रतन।

राघव दास रेवादास, ए चारों मिल मोमिन।।५२।।

बूड़ा-बूड़ी गाँव में कमलावती, रतनबाई, राघव दास, तथा रेवादास इन चारों ब्रह्मात्माओं की जागनी हुई।

लखीराम ने परने मिने, लिखाया नाम अपना।

मैं तुम्हारे साथ आऊं, मैं जहान जाना सुपना।।५३।।

लखीराम ने पन्ना जी में धाम धनी के चरणों में स्वयं को सौंप दिया, और यह प्रार्थना की कि हे मेरे प्राणेश्वर अक्षरातीत! मैं आजीवन आपके चरणों की छत्रछाया में रहना चाहता हूँ। मुझे यह अनुभव हो गया है कि यह सारा संसार स्वप्नवत् झूठा है।

रामदास नें उच्छव किया, मिने रहमतर।

तिनें कहया मैं हों तुम्हारा, जग सुपना दिया कर।।५४।।

रामदास जी ने धाम धनी की मेहर से प्रीतिभोज का उत्सव किया और धाम धनी के चरणों में निवेदन किया कि मेरा सर्वस्व आपके प्रति समर्पित है। मेरे लिए यह संसार स्वप्न के समान मिथ्या है।

संतावरी दीपा मिली, गोकुल दास की माँ।

अग्यारह दिन बिलहरी रहे, सब चले होए जमां।।५५।।

श्रीजी ग्यारह दिन तक बिलहरी में रहे। वहाँ पर संतावरी, दीपा, तथा गोकुल दास की माँ श्रीजी के चरणों में आईं। इस प्रकार क्रमशः सुन्दरसाथ की जागनी होती चली गई।

महामत कहे ए मोमिनों, ए गढ़ा की बीतक।

आगे कहो परना की, जो है हुकम हक।।५६।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह गढ़े का वृत्तान्त है। अब मैं श्री राज जी के आदेश से पन्ना जी में घटित होने वाले घटनाक्रम का वर्णन करने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।५९।। चौपाई ।।३३५६।।

श्री जी व महाराज जी की भेंट

इस प्रकरण में श्रीजी और महाराजा छत्रशाल जी के मिलन को दर्शाया गया है।

पहिले सूरत सिंह सुनी, बीच राम नगर।
देवजी को दिखाइया, तो कहया पैगम्बर।।१।।

सबसे पहले रामनगर में सूरत सिंह ने श्रीजी के विषय में सुना और देवकरण जी को भी पहचान करायी, इसलिए उन्हें (सूरत सिंह को) पैगम्बर कहा गया।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "पैगम्बर" शब्द का आशय सूरत सिंह से है, क्योंकि उन्होंने श्रीजी को अक्षरातीत के रूप में पहचाना और यही बात देवकरण जी को बतायी, जो इस प्रकरण से पूर्व के प्रकरण की चौपाई २–५ में दी गयी है।

इसी प्रकार जब श्रीजी का पैगाम लेकर देवकरण जी महाराजा छत्रशाल जी के पास जाते हैं, तो उन्हें भी पैग़ाम ले जाने वाला अर्थात् पैगम्बर कहा गया है, जो इसी प्रकरण की चौपाई ४ में दर्शाया गया है।

आए राज रामनगर, तहां बिराजे बरस दोए।

मिले दीवान देवकरन, ईमान ल्याए सोए।।२।।

श्रीजी रामनगर में दो वर्ष तक विराजमान रहे। वहाँ दीवान देवकरण जी श्रीजी के चरणों में अटूट विश्वास लेकर आए।

उमंग अंग में आइया, कहों जाए छत्रसाल।

एह हकीकत सुनके, होवेगा खुसाल।।३।।

देवकरण जी के हृदय में इस बात का बहुत उत्साह था

कि मैं श्रीजी के प्रकट होने की बात महाराजा छत्रशाल जी से कहूँगा। इस बात को सुनकर वे बहुत ही आनन्दित होंगे क्योंकि वे बारह वर्षों से उनकी बाट देख रहे हैं।

इन वास्ते रामनगर से, चल के मऊ आए।
खबर करी महाराज को, दिया पैगाम पोहोंचाए।।४।।

इसलिए वे रामनगर से चलकर मऊ आए और महाराजा छत्रशाल जी से मिलकर विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप श्री प्राणनाथ जी के प्रकट होने की सारी बात बता दी और श्रीजी का पत्र के द्वारा दिया हुआ सन्देश भी छत्रशाल जी को दिया।

नौरंग अकस राखत है, है लड़ाई इसलाम।
दावत सब ठौरों करी, बुलाओ अपने ठाम।।५।।

देवकरण जी ने महाराजा छत्रशाल जी को यह बात भी बतायी कि औरंगज़ेब बादशाह श्रीजी से वैर भाव रखता है, किन्तु यह लड़ाई राज्य की सम्पत्ति के लिए नहीं बल्कि धर्म के लिए है। श्रीजी ने औरंगज़ेब से लड़ने के लिए देश के कई राजाओं को प्रोत्साहित किया, लेकिन कोई तैयार नहीं हुआ। इसलिए श्रीजी को अपने यहाँ अवश्य निमन्त्रित करना चाहिए।

अंकूर असल का, सुनत ही करे चेतन।
बलदीवान के आगे, बात करी देवकरन।।६।।

जिस तन में परमधाम का अँकुर होता है, वह इस बात को सुनते ही हृदय में समर्पण का उत्साह भर लेता है। महाराजा छत्रशाल जी भी यह बात सुनकर धनी के प्रति सर्वस्व समर्पित करने हेतु बहुत अधिक उत्साह से भर

गए और चाचा बलदीवान के पास जाकर उन्होंने देवकरण जी की कही हुयी बात को बताया।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "चेतन करने" का भाव यह है कि उसमें समर्पण करने की भावना बहुत अधिक प्रबल हो जाये।

सामान्यतः विषयों में फँसा हुआ हृदय केवल अपने ही विषय में सोचता है, इसलिए उसको निर्जीव या सोया हुआ कहा गया है।

कुछ विद्वानों के द्वारा बलदीवान जी को महाराजा छत्रशाल जी का चचेरा बड़ा भाई कहा जाता है, किन्तु वास्तविकता यह है कि वे उनके चाचा थे। छत्रशाल जी के पिता का नाम चम्पतराय और माता का नाम सारन्धा था। इतिहास प्रसिद्ध है कि दारा शिकोह की सेना को हराकर औरंगज़ेब को सिंहासन पर बैठाने में छत्रशाल जी

के माता–पिता का ही हाथ था, किन्तु वही औरंगज़ेब दिल्ली के तख्त–ए–ताउस पर बैठने के पश्चात् चम्पतराय का दुश्मन बन गया। स्वाभिमानी चम्पतराय और सारन्धा ने बुन्देलखण्ड की स्वतन्त्रता का युद्ध जारी रखा, किन्तु बुन्देलखण्ड के ही कुछ विश्वासघातियों के कारण उन्हें अपना तन छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा।

दिल में विचारते, लालदास पहुंचे।

आए उत्तम दास आनन्द सों, बानी राज की गावते।।७।।

अपने दिल में छत्रशाल जी की जागनी के विषय में विचार करते–करते लालदास जी मऊ पहुँच गए। इसी प्रकार उत्तम दास जी भी आनन्दपूर्वक धाम धनी की वाणी गाते–गाते मऊ पहुँचे।

सुने स्लोक महाराज नें, भागवत के कहे लालदास।
तब श्री जी साहिब के चरन की,दिल में लई आस।।८।।

जब श्री लालदास जी ने श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप से सम्बन्धित श्रीमद्भागवत् के श्लोकों को कहा, तो उन्हें सुनकर महाराजा छत्रशाल जी के दिल में यह प्रबल इच्छा हो गयी कि मैं श्रीजी के चरण कमलों का दर्शन प्राप्त करूँ।

श्री जी साहिब जी को बुलावने, जाओ देवजी तुम।
लाल उत्तम को ले जाओ, सामे आए बुलावन हम।।९।।

महाराजा छत्रशाल जी ने देवकरण जी को निर्देश दिया कि श्री प्राणनाथ जी को लेने के लिए तुम जाओ और साथ में लालदास जी और उत्तम दास जी को भी ले जाओ। श्रीजी का सामने से स्वागत करने के लिए मैं

स्वयं यहाँ रहूँगा।

तहां से विदा होए के, आए अगरिए पहुंचे।

रिझाए मिलते राज को, सेवा करी समेत कबीले।।१०।।

मऊ से चलकर देवकरण जी अगरिया पहुँचे और छत्रशाल जी की बात सुनाकर श्रीजी को आनन्दित किया। देवकरण जी ने अपने पूरे परिवार के लोगों सहित श्रीजी एवं सुन्दरसाथ की बहुत अधिक सेवा की।

चले अगरिए से, परने पहुंचे आए।

डेरा किया अमराई में, ठौर झंडे की चित्त ल्याए।।११।।

सब सुन्दरसाथ के साथ श्रीजी अगरिए से चलकर पन्ना जी आए और किलकिला नदी के किनारे आम के घने वृक्षों के नीचे अपना निवास बनाया। श्रीजी ने अपने चित्त

में ले लिया कि जागनी लीला का मुख्य झण्डा यहीं गाड़ा जाएगा।

नदी किलकिला तीर पे, उतरे परमहंस आए।
तिन में सिरदार अक्षरातीत, देख अपना ठौर सुख पाए।।१२।।

किलकिला नदी के किनारे पर परमधाम से आये हुए ब्रह्ममुनियों (परमहंसों) ने अपना डेरा डाला। उनके साथ उनके सर्वस्व एवं आराध्य अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी थे। इस स्थान को जागनी ब्रह्माण्ड के मुख्य केन्द्र के रूप में देखकर वे बहुत ही आनन्दित हुए।

भावार्थ– सम्पूर्ण बीतक साहिब में श्री प्राणनाथजी को चार बार अक्षरातीत कहा गया है। इस चौपाई के अतिरिक्त ३३/२९, ६०/५७ तथा ६८/७२ में श्री प्राणनाथ श्रीजी साहिब को साक्षात् अक्षरातीत कहा गया

है।

यह कैसी मानसिकता है कि बीतक के इन कथनों की अवहेलना करके अपने बौद्धिक चातुर्य, संख्या बल, धन बल, एवं पद का वास्ता देकर श्री प्राणनाथ जी को जबरन सन्तों और आचार्यों की श्रेणी में रखा जा रहा है। यदि हम किसी स्वरूप की महिमा नहीं बढ़ा सकते तो उसको छोटा करने का अधिकार हमको किसने दे दिया है?

यह सच है कि व्रज–रास में अक्षरातीत ने ही लीला की, किन्तु अब हम व्रज–रास के ब्रह्माण्ड में नहीं बल्कि जागनी ब्रह्माण्ड में हैं। इसलिए जागनी ब्रह्माण्ड में जिस स्वरूप को अक्षरातीत की शोभा दी गयी है वही हमारा आराध्य हो सकता है, अन्य कोई नहीं। क्या "सनद" ग्रन्थ के इस कथन "कोई दूजा मरद न कहावहीं, एक

मेहेंदी पाक पूरन।" सनद ४२/१६ को भी कोई अन्यथा कर सकता है? यदि इसे भी झूठा करने का प्रयास किया जाये तो इसे समाज का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा।

डेरा करत परना के, दौड़े देखत गोंड़ लोक और।

साध वेरागी कोऊ आए उतरे, देखें हम जाए वा ठौर।।१३।।

सुन्दरसाथ को किलकिला नदी के किनारे ठहरा हुआ देखकर पन्ना के वनवासी गौड़ लोग भागे-भागे आए। वे समझ गए कि कुछ साधु-महात्मा नदी के किनारे आए हुए हैं। हम जाकर देखें कि कहीं उन्होंने नदी का ज़हरीला जल तो नहीं पी लिया?

सब ने आए दरसन करे, कही सुनो सब साध।

या नदी को जल न पीजियो, याके पिए जाए प्राण व्याध।।१४।।

सभी वनवासी लोगों ने आकर श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ का दर्शन किया और कहा कि हे महात्मा जनों! इस नदी का जल भूलकर भी नहीं पीना, क्योंकि यह विषैला हो चुका है और इसको पीने से प्राण चले जायेंगे।

भावार्थ– देवी भागवत में वर्णित है कि वैकुण्ठ में एक बार गंगा और लक्ष्मी में विवाद हो गया, जिसके कारण दोनों ने एक–दूसरे को मृत्युलोक में जाने का श्राप दे दिया, किन्तु दोनों ही मृत्युलोक में जाने से दुःखी हो गयीं। विष्णु भगवान ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि तुम मृत्युलोक में जाने से चिन्तित न हो, क्योंकि कलियुग में सच्चिदानन्द परब्रह्म और उनकी आत्माओं का अवतरण होना है। श्रीजी के हरिद्वार में पधारने से गंगा का उद्धार तो हो ही गया। लक्ष्मी जी किलकिला नदी के

रूप में वास करने लगीं, जिनका उद्धार श्रीजी की चरण धूलि से हुआ और उनका विषैला जल मीठा हो गया। पौराणिक ग्रन्थों (सुन्दरी तन्त्र) में कहा गया है–

पद्मावती केन शरदे विन्ध्य पृष्ठे विराजिता।

इन्द्रावती नाम सा देवी भविष्यति कलौ युगे।।

नदी के जल के विषैला हो जाने के भौतिक कारण भी हो सकते हैं, किन्तु यह निर्विवाद सिद्ध है कि किलकिला का विषैला जल श्रीजी के चरणामृत से ही शुद्ध हुआ।

तब सब साथ ने मिल के, धोये चरण अंगूठा राज।

डारयो चरणामृत नदी में, पीछे नहायो सकल समाज।।१५।।

तब सब सुन्दरसाथ ने मिलकर अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के चरणों के अँगूठे को धोया और उस चरणामृत को नदी में डाल दिया। परिणामस्वरूप पल भर में ही वह

जल अति स्वच्छ और मीठा हो गया। इसके पश्चात् सब सुन्दरसाथ ने उसमें स्नान किया तथा उसको पिया भी।

भेजी खबर महाराज को, आप पोहोंचे आए इत।
कह भेजी महाराज ने, मोहे बने न आवत तित।।१६।।

उस समय महाराजा छत्रशाल जी मऊ के अन्दर थे। श्रीजी ने महाराजा छत्रशाल जी को सूचना भेजी कि मैं पन्ना आया हुआ हूँ और किलकिला नदी के किनारे ठहरा हूँ, किन्तु महाराजा छत्रशाल जी ने यह कहलवा भेजा कि मेरा इस समय वहाँ आ पाना सम्भव नहीं है।

साथ सरूप दे को छोड़ के, आप छड़े पधारें इत।
तो कारज सब सिध होवहीं, हम पावें सुख नित।।१७।।

आप कृपा करके बच्चों, वृद्धों, एवं महिला वर्ग को वहीं

पर छोड़कर, केवल युवा वर्ग के साथ यहाँ दर्शन देने का कष्ट करें तो मेरा सारा कार्य सिद्ध हो जायेगा और हमें भी आपकी कृपादृष्टि से अखण्ड सुख की प्राप्ति होगी।

भावार्थ– महाराजा छत्रशाल जी के ऐसा कहने का कारण यह था कि अफगन खान ने विशाल सेना के साथ उनकी राजधानी मऊ पर हमला कर दिया था। ऐसी स्थिति में प्रजा को असहाय छोड़कर आना उनके कर्त्तव्य के विपरीत था।

तब चले आप परने से, मऊ पहुंचे जाए।
श्री बाई जी साथ सरूप दे, छोड़ चले सब आहें।।१८।।

श्रीजी पन्ना से चलकर मऊ पहुँचे। उन्होंने श्री बाई जी तथा अन्य महिला सुन्दरसाथ, वृद्धों, और बच्चों को वहीं छोड़ दिया, तथा युवा वर्ग के साथ मऊ सहानिया आए।

मऊ में तिंदुनी दरवाजे, डेरा किया वाहिं।

राजा भेख बदल के, दरसन कियो ताहिं।।१९।।

मऊ में तिन्दुनी दरवाजे के पास उन्होंने अपना डेरा डाला। महाराजा छत्रसाल जी ने भेष बदल कर दूर से ही उनका दर्शन किया।

फेर दूजी बेर भेख बदल के, कर सिकार को साज।

साथ सबों के बीच में, बैठे थे श्री राज।।२०।।

पुनः दूसरी बार वह एक शिकारी का भेष धारण कर वहाँ पहुँचे, जहाँ सब सुन्दरसाथ के बीच में प्राणेश्वर अक्षरातीत विराजमान थे।

तहां जाए ठाड़े भए, तरह मूढ़ की ल्याए।

कही बाबा जू राम राम, बाबा बैठो इत आए।।२१।।

वहाँ कुछ दूरी पर वे एक अनपढ़-गँवार की तरह खड़े हो गए और श्रीजी को सम्बोधित करते हुए, बोले बाबा जू! राम-राम! श्रीजी ने भी प्रत्युत्तर में कहा कि बाबा! यहाँ आकर बैठो।

आए बैठे बिछौने पर, बहुत किनारे दूर।

कही बाबा और आगे आओ, बैठो इत हजूर।।२२।।

छत्रशाल जी बिछौने पर से बहुत दूर एक किनारे बैठ गए। श्री प्राणनाथ जी ने उनसे कहा- बाबा! और आगे आकर मेरे सामने यहाँ बैठो।

तहां से उठ आगे गए, तो भी बुलाए आगे।

कही अब तो परे तुम फंद में, अब कहाँ जाओ भागे।।२३।।

छत्रशाल वहाँ से उठकर थोड़ा-सा और आगे आकर बैठ गए। फिर श्रीजी ने कहा कि और आगे आकर बैठो। अब तो तुम मेरे फन्द में आ गये हो, भागकर कहाँ जाओगे?

तब कही महाराज नें, नहीं ऐसो ब्रह्मांड में कोए।

जो हम पर फन्दा डारहीं, ए काम बुध जी से होए।।२४।।

तब महाराजा छत्रशाल जी ने कहा कि एकमात्र विजयाभिनन्द बुद्ध जी को छोड़कर इस ब्रह्माण्ड में ऐसा कोई नहीं है, जो मेरे ऊपर फन्दा डाल सके।

उनके हम चाकर हैं, बारह बरस से।

तिनकी छाप के रूपैया, देखो तुम हम से।।२५।।

मैं बारह वर्षों से एकमात्र श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप का सेवक हूँ। यह देखिए मेरे गले में उनकी छाप का पहना हुआ सिक्का है।

भावार्थ– लगभग वि.सं. १७२८ में जब छत्रशाल जी सोये हुए थे, तो स्वप्न में श्रीजी ने उन्हें कहा था कि छत्ता! मैं तेरे पास आ रहा हूँ। जब उनकी नींद टूटी तो उन्होंने देखा कि सचमुच उनके हाथों में श्री विजयाभिनन्द बुद्ध जी की मुहर (सिक्का) पड़ी थी, जिसमें उनका चित्र अंकित था। उन्होंने श्रद्धाभाव से उस मुहर को हमेशा अपने गले में डाल लिया और प्रतीक्षा करने लगे कि कब उन्हे श्री विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप के दर्शन होंगे।

एह हकीकत कह के, उठे उत थें महाराज।

गए अपने महल में, कही भई बीतक जो आज।।२६।।

जब महाराजा छत्रशाल जी ने यह बात कही तो श्रीजी ने छत्रशाल जी को बिछौना थोड़ा-सा हटाने के लिए कहा। जैसे ही उन्होंने बिछौना हटाया, उसके नीचे उन्हें बहुत-सी मुहरों का ढेर दिखायी पड़ा। श्रीजी ने उनमें से एक मुहर उठाकर छत्रशाल जी को देखने के लिए कहा। जब छत्रशाल जी ने देखा तो दोनों मुहरों तथा श्रीजी के वर्तमान रूप में समानता होने से वे समझ गये कि ये ही साक्षात् विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप हैं। अब वे लज्जित होकर वहाँ से गये और महल में जाकर आज का सारा घटनाक्रम कह सुनाया।

अन्दर जाए के ए कही, जिन्हें करना होए दीदार।
सो सबहीं कीजियो, आया परवरदिगार।।२७।।

रनिवास के अन्दर जाकर भी उन्होंने कहा कि आज हमारे यहाँ साक्षात् पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द परब्रह्म आए हुए हैं, जिसे भी उनके दर्शन की इच्छा हो वह जाकर कर आए।

रानी देवकुंवर थी मऊ में, उन सुनी महाराज मुख एह।
ब्राह्माणियों में भेस बदल के, दरसन कियो इने तेह।।२८।।

सबसे बड़ी रानी देव कुँवरी उस समय मऊ में थीं। जब उन्होंने महाराजा छत्रशाल जी के मुख से ऐसा सुना तो उन्होंने भी अपना भेष बदल लिया और ब्राह्मण महिलाओं के साथ आकर उन्होंने श्रीजी का दर्शन किया।

भावार्थ– बड़ी रानी देव कुँवरी ने भी भेष बदल कर यह जाँचना चाहा कि आखिर महाराजा की बात कितनी सही है?

फेर जाहिर होए के, आगे भीर चलाए।
बलदिवान महाराज ने, भेंट करी बनाए।।२९।।

पुनः राजकीय सम्मान के साथ, सबके सामने सेना को आगे करके, चाचा बलदीवान तथा महाराजा छत्रशाल जी ने श्रीजी का दर्शन किया।

वह बखत महाराज को, थी महूम अफगन।
भई असवारी तैयार, आए लगे चरन।।३०।।

अभी स्वागत कार्य चल ही रहा था कि अगफन खाँ ने युद्ध का बिगुल बजा दिया। इसलिए विवश होकर

महाराजा छत्रशाल जी को अफगन खाँ के विरूद्ध युद्ध करने के लिए तैयार होना पड़ा। युद्ध में जाने के लिए महाराजा छत्रशाल जी का घोड़ा तैयार हुआ और आशीर्वाद लेने हेतु उन्होंने श्रीजी के चरणों में प्रणाम किया।

श्री राज रूमाल लेए के, सिर पर धरा महाराज।
हाथ धरा सिर ऊपर, होए पूरन मनोरथ काज।।३१।।

धाम धनी ने अपना रूमाल महाराजा छत्रशाल जी के शिर पर रख दिया और अपना वरद् हस्त उनके सिर पर रखते हुए छत्रशाल जी को आशीर्वाद दिया कि विजय की तुम्हारी इच्छा अवश्य पूर्ण होगी।

इन समै लोग लसकर के कहें, जो हम ए पावे फते।

तो एही हमारा हक हैं, लोक मांगे ए माजजे।।३२।।

इस समय महाराजा छत्रशाल जी की सेना के लोग कहने लगे कि यदि हम अफगन खाँ के विरूद्ध इस युद्ध में जीत जाते हैं, तो हम मान लेंगे कि श्री प्राणनाथ जी ही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा हैं। चमत्कार माँगना तो संसार की प्रवृत्ति ही है।

भावार्थ– महाराजा छत्रशाल जी के सैनिक इसलिए घबरा रहे थे क्योंकि अफगन खान के पास ८००० (आठ हजार) सैनिक थे और छत्रशाल जी के पास मात्र १००० (एक हजार)। अफगन खान की ८००० की सेना में ३००० घुड़सवार सैनिक थे।

श्रीजी का वरदान पाकर महाराजा छत्रशाल जी ने अचानक ही अफगन खान के शिविर पर धावा बोल

दिया। उस समय अफगन खान नाच–गाने के आनन्द में मस्त था। अचानक भयानक युद्ध छिड़ गया। महाराजा छत्रशाल जी की तलवार के वार को अफगन खान ने झुककर बचा लिया। जब अफगन खान तलवार का वार करने वाला था, तो उसके हाथ से तलवार वैसे ही छूट गयी जैसे पीछे से किसी ने खींच लिया हो। अगले ही क्षण छत्रशाल जी की तलवार अफगन खान के सीने पर थी और वह हाथ जोड़कर प्राणों की भीख माँग रहा था।

अब महाराजा छत्रशाल जी को अहसास हो गया कि श्रीजी ने आशीर्वाद देते समय कहा था कि मैं पल–पल तुम्हारे साथ रहूँगा। अफगन खान के हाथ से तलवार का छूट जाना श्रीजी की कृपा के बिना सम्भव नहीं था। यदि धाम धनी की कृपा नहीं होती तो वे युद्ध में जीत नहीं सकते थे।

जब उससे फते करके, आए श्री महाराज।

तब लोकों ने कह्या, बिना श्री राज ना होए ए काज।।३३।।

जब अफगन खान पर विजय प्राप्त करके महाराजा छत्रशाल जी अपने महल में लौटे, तो सभी लोग एक स्वर से कहने लगे कि बिना श्री प्राणनाथ जी की कृपा के यह विजय प्राप्त नहीं हो सकती थी।

फेर श्री महाराजें देखिया, पट जो तारतम।

अब बहेवार छुटत मुझसे, जाग खड़ी आतम।।३४।।

अब महाराजा छत्रशाल जी ने श्रीजी के चरणों में बैठकर तारतम पट के द्वारा पाताल से परमधाम तक का सारा ज्ञान प्राप्त कर लिया। उनके मन में यह विचार आने लगा कि अब मुझसे सांसारिक कार्य-व्यवहार नहीं होगा, मुझे तो अब केवल धनी के चरण कमल चाहिए। तारतम ज्ञान

के प्रकाश में उनकी आत्मा जाग्रत हो उठी।

मऊ सेती परना मिने, पहुंचे श्री जी साहिब।
मंझली ने पहिचानिया, सेवा करी तब।।३५।।

मऊ से चलकर श्री प्राणनाथ जी पन्ना जी पहुँचे। मझली रानी सुशीला जी ने पहचाना और उन्हें अक्षरातीत मानकर पूर्ण समर्पण के साथ सेवा की।

भावार्थ– महाराजा छत्रशाल जी का जन्म ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया को वि.सं. १७०६ में हुआ था। उनकी तीन रानियाँ थी। सबसे बड़ी महारानी का नाम देव कुँवरि था, दूसरी रानी का नाम सुशीला जी था, तथा तीसरी रानी का नाम कमला था।

और सब अन्दर की, रहे पीछे तिन।

जब महाराज आए पहुंचे, सबों बातां करी आगे इन।।३६।।

हवेली के अन्दर रहने वाले अन्य लोगों ने भी सुशीला महारानी जी का अनुकरण किया, अर्थात् श्रीजी की सेवा की। जब महाराजा छत्रशाल जी आए, तो उनके सामने सबने श्रीजी के प्रति अपने हृदय का श्रद्धा भाव व्यक्त किया।

गिरे दंडवत आए के, सनमुख साथ में पास।

सीस धरयो दोऊ चरन पर, दीनो जगत निकास।।३७।।

महाराजा छत्रशाल जी ने सुन्दरसाथ के सामने धाम धनी श्री प्राणनाथ जी के दोनों चरणों में अपना सिर रख दिया और दण्डवत प्रणाम किया। उन्होंने अपने हृदय से सांसारिक मोह का पूर्णतया परित्याग कर दिया।

भावार्थ– श्रीजी किलकिला नदी के किनारे जिस अमराई घाट पर ठहरे थे, मऊ से लौटने के बाद भी वहीं ठहरे। उनकी सेवा के लिए चौपड़े की हवेली से महारानी सुशीला जी, तथा अन्य सेवकगण वहाँ पर आ गए। महाराजा छत्रशाल जी भी मऊ से वहीं पर आए।

आए महाराज उत से, रसोई के बखत।
अस्नान कर ठाढ़े हते, श्री जी साहिब जी तित।।३८।।

महाराजा छत्रशाल जी अमराई घाट में उस समय आए, जब भोजन का समय हो चुका था और श्रीजी वहाँ पर स्नान करके खड़े हुए थे।

कनातें ठाढ़ी करीं, बैठे श्री महाराज।
थाल श्री बाई जी ल्याई, आगे धरी श्री राज।।३९।।

श्रीजी को भोजन करने के लिए चारों ओर मोटे कपड़े की दीवाल के रूप में कनातें खड़ी की गयीं। महाराजा छत्रशाल जी श्रीजी को भोजन कराने के लिए वहीं पर बैठ गए। श्री बाईजी भोजन की थाली लेकर आयीं और उन्होंने उसे धाम धनी श्री प्राणनाथ जी के आगे रख दिया।

चार जने महाराज संग, लिया इत प्रसाद।

ईमान ल्याए अरस पर, ए सेवा करी आद।।४०।।

श्रीजी के भोजन कर लेने के पश्चात् महाराजा छत्रशाल जी एवं उनके साथ आए हुए चार अन्य व्यक्तियों ने भी भोजन किया। इन सबने परमधाम के अलौकिक ज्ञान को ग्रहण किया और श्रीजी को अक्षरातीत मानकर सेवा करनी प्रारम्भ कर दी।

कुली दज्जाल कांपिया, किया बड़ा सोर।

ए निहचें मोकों मारेंगे, इन दोऊ से चले न मेरा जोर।।४१।।

यह देखकर कलियुग रूपी दज्जाल काँप उठा। उसने बहुत शोर मचाया। वह सोचने लगा कि इन दोनों स्वरूपों के सामने मेरी कोई शक्ति कार्य नहीं करेगी और निश्चित ही ये दोनों मुझे मार डालेंगे।

भावार्थ– कलियुग या दज्जाल एकार्थवाची हैं, अन्तर केवल भाषा भेद का है। मानव मन में बैठा हुआ अज्ञान रूपी वह राक्षस ही कलियुग या दज्जाल है, जो उसे परब्रह्म के चरणों से दूर कर देता है। इस चौपाई में कलियुग या दज्जाल को रूपक अलंकार के माध्यम से दर्शाया गया है।

वस्तुतः छत्रशाल जी के राज परिवार में कुछ ऐसे लोग थे, जिनको यह स्वीकार नहीं था कि महाराजा छत्रशाल

जी अपना सिर किसी वैरागी महात्मा के चरण कमलों में रखें और उनका दिया हुआ प्रसाद ग्रहण करें। महाराजा छत्रशाल जी की श्रद्धा एवं समर्पण के विरोध में प्रतिक्रिया स्वरूप उनका बड़बड़ाना ही इस चौपाई के दूसरे चरण में शोर करना कहा गया है।

काहू काहू के दिल में, कलयुग आए बैठा।
बदफेली दिल में करी, जो था सेना में जेठा।।४२।।

किसी-किसी के दिल में अज्ञान रूपी कलियुग साक्षात् आकर बैठ गया। राज परिवार में बलदीवान उम्र की दृष्टि से सबसे बड़े थे। उनके दिल में श्रीजी के प्रति कटुता के विचार पैदा हो गए। उन्हें किसी भी कीमत पर यह स्वीकार नहीं था कि छत्रशाल श्रीजी के चरणों पर सिर रखें और सुशीला महारानी उनकी सेवा करें।

डगावने महाराज को, बहुत करी दज्जाल।

ना भए राज तरफ दलगीर, हमेसा रहे खुसहाल।।४३।।

महाराजा छत्रशाल जी के विश्वास को तोड़ने के लिए चाचा बलदीवान जैसे लोगों ने बहुत प्रयास किया, किन्तु परमधाम का अँकुर होने से छत्रशाल जी श्रीजी की तरफ से जरा भी उदासीन नहीं हो सके। वे हमेशा ही उनके प्रेम में डूबे रहे।

हिंमत परवत सिंह, और साह रूप।

और नारायन दास, और सकत सिंह अनूप।।४४।।

हिम्मत सिंह, पर्वत सिंह, शाहरूप, नारायण दास, शक्ति सिंह, और अनूप ने धाम धनी के चरणों में आकर निजानन्द के शाश्वत मार्ग को ग्रहण किया।

और ईमान ल्याइया, ए जो दुरग भान।

जगत सिंह सुन दौड़िया, ए ल्याया ईमान।।४५।।

दुर्गभान ने भी अटूट विश्वास के साथ अपने आप को धाम धनी के चरणों में सौंप दिया। इतने लोगों को तारतम लेते देखकर जगत सिंह ने भी तीव्र निष्ठा के साथ धनी के चरणों में विश्वास धारण किया।

सम्बत सत्रह सै चालीसे, पधारे परना में।

सेवा श्री जी महाराजें करी, क्यों कहूं इन जुबां सें।।४६।।

वि.सं. १७४० में श्रीजी पन्ना जी पधारे। उन्हें साक्षात् अक्षरातीत का स्वरूप मानकर महाराजा छत्रशाल जी ने जिस प्रकार की सेवा की, उसका वर्णन मैं इस जिह्वा से कैसे करूँ?

काहू करी ना करसी, ए जब को उपज्यो इण्ड।

सब की सेवा सास्त्रों में, लिखी है जो ब्रह्मांड।।४७।।

जब से इस सृष्टि की उत्पत्ति हुयी है, तब से आज दिन तक महाराजा छत्रशाल जी के जैसी सेवा, न तो किसी ने की है और न ही करेगा। ब्रह्माण्ड में सेवा के क्षेत्र में जो भी अग्रगण्य हुये हैं, उन सबका वर्णन शास्त्रों में किया गया है।

भावार्थ– आरूणि, एकलव्य, उपमन्यु, मर्यादा पुरुषोत्तम राम, आदि की गुरू सेवा उपनिषद् , महाभारत, रामायण, आदि धर्मग्रन्थों में वर्णित है, लेकिन इनमें से किसी ने भी अपने गुरूदेव को परब्रह्म के रूप में मानकर उस भाव से सेवा नहीं की, जिस भाव से महाराजा छत्रशाल जी ने की।

जैसे जिन पगले भरे, तैसा ही लिखा तिन।

इन हिसाब कर देखियो, खास गिरोह मोमिन।।४८।।

जिसने जिस प्रकार के त्याग, समर्पण, और सेवा के विषय में आचरण करके दिखाया है, उनके बारे में धर्मग्रन्थों में वैसा ही लिखा है। किन्तु हे साथ जी! उनकी सेवा और महाराजा छत्रशाल जी की सेवा का आप मूल्यांकन करके देखें, तो आपको पता चलेगा कि ब्रह्मात्माओं में शिरोमणि महाराजा छत्रशाल जी की सेवा सर्वोपरि है।

चौपड़े की हवेली मिने, तहां पधराए श्री राज।

चले आप सुखपाल ले, कांध पर कुंवर महाराज।।४९।।

महाराजा छत्रशाल जी ने सुखपाल में श्रीजी को बैठाया और उस सुखपाल को स्वयं अपने कन्धे पर लेकर

अमराई घाट से चौपड़े की हवेली में ले आए, जहाँ उन्हें सिंहासन पर विराजमान किया।

सुखपाल धरी जाए द्वार में, अत उछरंग होए।
चले आप भीतर को, दिन मान्यो सुफल जो सोए।।५०।।

महाराजा छत्रशाल जी ने सुखपाल को दरवाजे में रख दिया। आज उनका हृदय आनन्द से भरपूर था। वे श्रीजी को सुखपाल से उतारकर हवेली के अन्दर ले जाने लगे। आज के दिन उन्होंने स्वयं को धन्य-धन्य माना।

भीतर जाते द्वार में, रानी मझली ने आए।
किया पांवड़ो साडी को, अत प्रेम दिल में ल्याए।।५१।।

जब श्रीजी हवेली के अन्दर आ रहे थे, तो मझली रानी सुशीला जी ने अपने दिल में बहुत प्रेम लेकर अपनी

साड़ी का पाँवड़ा बिछा दिया।

तब महाराजे ए कही, तू मेरे आगे क्यों होए।

यों कहि उठाई साड़ी को, कियो पांवड़ों पाग को सोए।।५२।।

तब महाराजा छत्रशाल जी ने कहा कि तुमने मुझसे पहले क्यों साड़ी बिछा दी? ऐसा कहकर उन्होंने साड़ी का पाँवड़ा हटा दिया और अपनी पाग का पाँवड़ा बिछा दिया।

पलंग बीच में जाएगा, रही कछुक पास।

तहां बिछाई साड़ी को, बैठे सिंहासन खास।।५३।।

किन्तु छत्रशाल जी की पाग के पाँवड़े और पलंग के बीच में अभी जगह बाकी रह गयी। तब श्रीजी की प्रेरणा से सुशीला महारानी ने अपनी साड़ी का पाँवड़ा पुनः

बिछाया और तब उस पलंग रूप सिंहासन पर श्रीजी विराजमान हुए।

विशेष– इस चौपाई में पलंग को ही सिंहासन के रूप में दर्शाया गया है।

अपनो आपा सब दियो, और दियो सब साज।
आरती निछावर करके, कही धन धन दिन है आज।।५४।।

महाराजा छत्रशाल जी ने आरती उतारने से पूर्व न्योछावर राशि के रूप में अपना सर्वस्व अहं एवं सम्पूर्ण राज्य की चाबी चरणों में समर्पित कर दी, तथा अति उल्लास में कहने लगे कि आज का दिन मेरे लिए धन्य–धन्य है, क्योंकि आज मेरे घर साक्षात् प्राणेश्वर अक्षरातीत आए हैं।

एही टीका एही पांवड़ो, एही निछावर आए।

श्री प्राणनाथ के चरन पर, छत्ता बलि बलि जाए।।५५।।

अपने अहं का त्याग ही टीका है, अपनी पाग का ही पाँवड़ा है, इसी को न्योछावर राशि मानकर महाराजा छत्रशाल जी अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी पर बार-बार बलिहारी जाने लगे (समर्पित होने लगे)।

श्री बाई जी को जोड़े राज के, बैठाए कर सनेह।

कहनी में न आवहीं, लगो जुगल सों नेह।।५६।।

उन्होंने श्री बाई जी को श्री प्राणनाथ जी के बगल में अति प्रेमपूर्वक बैठाया। उन्हें इस युगल स्वरूप से इतना प्रेम हो गया, जिसका वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता।

साथ समस्त के बीच में, जुगल धनी बैठाए।

कही तुम साक्षात अक्षरातीत हो, हम चीन्हा तुमें बनाए।।५७।।

महाराजा छत्रशाल जी ने समस्त सुन्दरसाथ के बीच में श्री बाई जी और श्री प्राणनाथ जी को विराजमान किया और कहा कि हमने आपको पहचान लिया है। आप साक्षात् अक्षरातीत हो।

श्री ठकुरानी जी साथ संग ले, पधारे मेरे घर।

धनी बिना तुम्हें और देखे, सो नही मिसल मातवर।।५८।।

आप श्री श्यामा स्वरूप श्री बाई जी और सब सुन्दरसाथ को लेकर मेरे घर पधारे हैं। आपको अक्षरातीत के अतिरिक्त अन्य किसी रूप में देखने वाला ब्रह्मसृष्टियों के समूह में से हो ही नहीं सकता।

भावार्थ– उपरोक्त दोनों चौपाईयाँ क्या कह रही हैं? इस

सम्बन्ध में उन अग्रगण्य सुन्दरसाथ को आत्म-मन्थन करना चाहिए कि वे किस मानसिकता से ग्रसित होकर श्री प्राणनाथ जी को सन्त, आचार्य, गुरू, या शिष्य की श्रेणी में रखने का अपराध कर रहे हैं? क्या छत्रशाल जी ने भूलवश श्री प्राणनाथ जी को अक्षरातीत कह दिया? या लालदास जी ने श्री प्राणनाथ जी को भूलवश २२६ बार श्री राज, २२ बार हक, और ४ बार अक्षरातीत कह डाला?

यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य विशेष तथ्य है कि परमधाम के वहदत के सम्बन्ध से श्री बाई जी को महाराजा छत्रशाल जी ने श्री श्यामा जी माना, अन्यथा श्री श्यामा जी तो श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान हैं। श्री बाई जी (तेज कुँवरी जी) के अन्दर अमलावती बाई की वासना थी।

अब तो कछू ना हमारो, दे चुके हम सीस।

आपा रहयो न आप बस, करो जानों सो बकसीस।।५९।।

महाराजा छत्रसाल जी भाव विह्वल होकर प्रार्थना करने लगे, मेरे प्राणेश्वर अक्षरातीत! मेरा अब कुछ भी नहीं है। मेरा सर्वस्व (शरीर का रोम-रोम) आपके चरणों में प्रस्तुत है। अब न तो मैं स्वयं कुछ हूँ और न मेरे किसी अहं का अस्तित्व है। इस समर्पित तन से सेवा लेने के लिए, अब आप जैसा चाहें वैसी कृपा करें।

तब बोले श्री राज जी, देखे राणा पातसाह सब।

पर जो कछू करनी अंकूर की, सो इत देखी हम सब।।६०।।

तब धाम के धनी प्रियतम अक्षरातीत ने कहा कि मैंने बड़े-बड़े राजा (भाव सिंह), राणा (राज सिंह), और बादशाह (औरंगजेब) को देखा है, लेकिन जो प्रेम और

समर्पण परमधाम की ब्रह्मसृष्टि कर सकती है, उसे हम सबने यहाँ छत्रसाल जी के रूप में प्रत्यक्ष देख लिया है।

आगे साध सन्तों ने, कह्यो गुरू सिस्य को धरम।
सो तो अब इहां भयो, उड़यो सबों को भरम।।६१।।

सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर आज दिन तक गुरु और शिष्य के धर्म को सन्तजनों ने बहुत अच्छी तरह से बताया है। वह कथन प्रत्यक्ष रूप में आज यहाँ चरितार्थ हो रहा है। एक वास्तविक सद्गुरू और एक समर्पित शिष्य में कैसी भावना होनी चाहिए, इस विषय में लोगों के मन में जो संशय था, आज का दृश्य देखकर उनका भ्रम टूट गया।

द्रष्टव्य– यह कथन श्री लालदास जी के द्वारा है, जो अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के प्रति महाराजा छत्रसाल जी के अटूट प्रेम को रेखांकित कर रहे हैं।

पहिले दाता हम भए, गुरू को दीनों सीस।

पीछे दाता गुरू भए, सब कछु कियो बकसीस।।६२।।

सबसे पहले तो शिष्य को अपना अहं रूपी सिर देना होता है। इसके पश्चात् गुरु के द्वारा अपनी सारी आध्यात्मिक सम्पदा उसे सौंप दी जाती है।

भावार्थ- अध्यात्म में अहं सबसे बड़ी बाधा होती है। सच्चे सद्गुरु में परमात्मा के गुणों की झलक दिखायी देती है। अपने सद्गुरू के प्रति उस पवित्र भावना से प्रभावित होकर, जिसने सद्गुरू के प्रति अपने अहं का विसर्जन कर दिया तो उसे आध्यात्मिक सम्पदा इसलिए प्राप्त हो जाती है, क्योंकि उसका शुद्ध और निश्छल प्रेम परब्रह्म के प्रति हो जाता है। किन्तु जो सद्गुरू के प्रति किसी छल, द्वेष, स्वार्थपरतः, या दोष दृष्टि से ग्रसित होकर प्रेम और समर्पण की राह पर नहीं चल पाता, वह

आध्यात्मिक दृष्टि से खाली हाथ रह जाता है, भले ही वह कितना ही बड़ा विद्वान क्यों न हो?

किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि यहाँ सद्गुरू शब्द का आशय ट्रस्टियों की कृपा से बने हुए किसी मठ या आश्रम के स्वामी, गादीपति, या धर्मग्रन्थों के धुरन्धर विद्वान से नहीं है, बल्कि जिसके हृदय में परब्रह्म की छवि बस गयी, वही सद्गुरु कहलाता है।

साखी–

बीतेगा उनतालीसा दगेगा चालीसा, तब कोई होसी मरद मरद का चेला।

नानक गुरू दिखावे सांई, होसी सच सच दी वेला।।

गुरु ग्रन्थ साहिब में कहा गया है कि जब वि.सं. १७३९ बीत रहा होगा तथा १७४० का प्रारम्भ होगा, उस समय कोई मर्द–मर्द का शिष्य होगा। गुरुनानक देव जी कहते

हैं कि यही स्वरूप सच्चिदानन्द परब्रह्म की पहचान करायेगा। उस समय एकमात्र सत्य का ही साम्राज्य होगा।

भावार्थ– सिक्ख पन्थ के अनुयायी ऐसा मानते हैं कि मर्द का तात्पर्य बहादुर पुरुष होता है, इसलिए यह प्रसंग गुरु गोविन्द सिंह और बन्दा बैरागी के मिलन का है। किन्तु यदि आध्यात्मिक दृष्टि से देखा जाये, तो पुरुष तो एकमात्र परमात्मा है। सिक्ख मान्यता के अनुसार गुरु गोविन्द सिंह सम्भवतः आदिनारायण के अवतार माने जाते हैं। आदिनारायण के अंश रूप ही सारे संसार के जीव माने जाते हैं। आगे जो कहा गया है कि सत्य का साम्राज्य आएगा, तो वह बात व्यवहार में घटित नहीं होती।

वास्तविकता यह है कि यह प्रसंग परमधाम की दो

आत्माओं श्री इन्द्रावती जी और साकुण्डल के मिलन का है। परमधाम की आत्मायें परब्रह्म का अंग होने से मर्द कही गयी हैं। जब श्रीजी पन्ना जी पधारे थे, उस समय वि.सं. १७३९ का समय बीत रहा था तथा वि.सं. १७४० का प्रारम्भ हुआ था। पन्ना जी में विराजमान होकर श्रीजी ने सब सुन्दरसाथ को परमधाम एवं अक्षरातीत के दर्शन कराए, तथा महाराजा छत्रशाल जी ने एक आदर्श धर्म राज्य की स्थापना की। इस प्रकार यह चौपाई श्री प्राणनाथ जी और छत्रशाल जी के लिए घटती है, गुरु गोविन्द सिंह और बन्दा बैरागी के लिए नहीं।

बिजिया अभिनन्द बुध जी, ब्रह्म सृष्टि सिरताज।
हाथ हुकम छत्रसाल के, दियो सो आपनो राज।।६३।।

विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप श्री प्राणनाथ जी ब्रह्मसृष्टियों के प्रियतम हैं। उन्होंने महाराजा छत्रशाल जी को अपने हुक्म की शक्ति की शोभा सौंप दी।

साखी कहके थाल ले, तिलक करयो श्री राज।

भाल माहिं छत्रसाल के, कही आप बैठो महाराज।।६४।।

गुरू ग्रन्थ साहिब में वर्णित साखी को कहकर श्रीजी ने थाल में रखे हुए चन्दन से महाराजा छत्रसाल जी के माथे पर तिलक कर दिया और छत्रसाल जी को महाराजा कहकर सिंहासन पर बैठने का निर्देश दिया।

बजी बधाई नृपत के, करी आरती प्रान।

कही सब जन महाराज जू, करयो प्रणाम प्रमान।।६५।।

श्रीजी के मुखारविन्द से छत्रशाल जी के लिए महाराजा

बनने का आशीर्वाद पाते ही बधाई गायी जाने लगीं। स्वयं महाराजा छत्रशाल जी ने "पूर्णब्रह्म ब्रह्म से न्यारे" पद गाकर अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत की स्तुति की और उनकी आरती उतारी। इसके पश्चात् वहाँ उपस्थित महाराजा छत्रशाल जी सहित सभी लोगों ने धाम धनी के चरणों में प्रणाम किया और अपनी अटल निष्ठा प्रदर्शित की।

सकुण्डल सोभा भई, प्रगट भई पहिचान।
छत्रसाल छत्ता हुआ, छिपे सबे सुलतान।।६६।।

महाराजा श्री छत्रशाल जी के हृदय में विराजमान साकुण्डल की आत्मा को धाम धनी ने विशेष शोभा दी, जिससे सब सुन्दरसाथ में उनकी पहचान स्पष्ट रूप से उजागर हो गयी। श्रीजी की दृष्टि में छत्रशाल जी का स्नेह

भरा नाम "छत्ता" हुआ और उनकी कृपा से छत्रशाल जी में इतनी शक्ति आ गयी कि बादशाह औरंगज़ेब के सारे सेनापति छिप गए।

छत्रसाल छत्ता हुआ, कह्या सुन्दर बाई जोए।
आप दिखावत आपनी, कही सकुण्डल सोए।।६७।।

श्रीजी की प्रेम भरी दृष्टि में छत्रशाल "छत्ता" के रूप में उजागर हो गए। छत्रशाल जी के अन्दर साकुण्डल की आत्मा है, जिसकी जागनी के सम्बन्ध में सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी ने भविष्यवाणी की थी। अब वही छत्रशाल जी अपना अपनापन दिखा रहे हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण का आशय यह है कि छत्रशाल जी की आत्मा जाग्रत होकर जागनी के क्षेत्र में प्रेम, समर्पण, और श्रद्धा का ऐसा इतिहास रच रही है,

जो सबके लिए अनुकरणीय है।

अरूगावने श्री राज को, मेवा मिठाई पकवान।

आनन्द इन सुख को, कह्यो न जाए परमान।।६८।।

महाराजा छत्रशाल जी ने श्रीजी को मेवा-मिठाई तथा तरह-तरह के पकवानों का भोजन कराया। इस सेवा में उन्हें इतना आनन्द हुआ कि जिसका वर्णन जिह्वा से नहीं हो सकता।

फेर और बेर बुलाए, भीतर लई सुखपाल।

एक तरफ आप उठाए, एक तरफ ठकुरानी होए खुसाल।।६९।।

इसके पश्चात् और कई बार महाराजा छत्रशाल जी ने श्रीजी को सुखपाल में बैठाया और अपनी हवेली में ले आए। सुखपाल में एक तरफ महाराजा छत्रशाल जी स्वयं

रहते थे तथा दूसरी तरफ बहुत आनन्दित होकर मझली रानी सुशीला जी स्वयं उठाती थीं।

पधराए अपनें घरों, अत हेत कर प्यार।

भूषन पहेराए भली भांत सों, कियो बड़ो मनुहार।।७०।।

अपनी हवेली में लाकर श्रीजी और श्री बाई जी को छत्रशाल जी ने परमधाम के युगल स्वरूप के रूप में माना और उसी भाव से प्रेमपूर्वक श्रृंगार किया। उन्होंने युगल स्वरूप को परमधाम जैसे ही वस्त्र और आभूषण अच्छी तरह से पहनाकर बहुत प्रेम भाव से रिझाया।

चीन पेहेराई नवघरी, ले धरी आगे।

हीरा मानिक चूनी, तले पहुंची लटके।।७१।।

महाराजा छत्रशाल जी ने श्रीजी की कलाइयों में नौ नगों

वाली नवघरी का आभूषण पहनाया। इसके अतिरिक्त हीरा और माणिक के छोटे-छोटे टुकड़ों से जड़ी हुई पहुँची भी श्रीजी के चरणों में समर्पित की।

और दुगदुगी सांकर, तले हीरा मानिक।
पहुंची जड़ाव हीरे की, रीझ पेहेनाई हक।।७२।।

महाराजा छत्रशाल जी ने हीरे और माणिक से जड़ी हुई तथा दुगदुगी से युक्त सोने की सांकल (लरी) श्रीजी के गले में पहनायी। इसी प्रकार प्रेम विभोर होकर उन्होंने अपने धाम धनी को हीरे से जड़ी हुई पहुँची पहनायी।

और भूषन कई भांत के, ले आगे धरे आए।
और मझली ने अपने भूषन, श्री बाई जी को पहिनाए।।७३।।

इसी तरह कई प्रकार के आभूषण श्रीजी के आगे

महाराजा छत्रशाल जी ने रखे अर्थात् पहनाए तथा सुशीला महारानी जी ने अपने आभूषणों को श्री बाई जी को पहना दिया।

और साथ ने इतहीं, सेवा करी बनाए।

सो इन जुबां केती कहों, कहनी में न आए।।७४।।

इसके अतिरिक्त सुन्दरसाथ ने भी युगल स्वरूप की तरह-तरह से सेवा की, जिसका वर्णन मैं इस जिह्वा से कितना कहूँ? वह शब्दों में नहीं आ सकता।

तन मन धन सों, कियो सब निछावर।

हाथ जोड़े ठाढ़े भए, सिफत भई सब पर।।७५।।

महाराजा छत्रशाल जी ने अपना तन, मन, धन सब कुछ धाम धनी के ऊपर न्योछावर कर दिया और अति

विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर श्रीजी के सम्मुख खड़े हो गए। उनके इस श्रेष्ठ व्यवहार के कारण उन की महिमा सर्वोपरि हो गयी।

पहिचान पूरी करी, सेवे धनी कर धाम।

साथ जो अन्दर रहे, तिन सेवा करी तमाम।।७६।।

महाराजा छत्रशाल जी ने श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की पूर्ण पहचान की और उन्हें पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द के रूप में पहचानकर शुद्ध हृदय से सेवा की। महल के अन्दर रहने वाले अन्य सुन्दरसाथ ने भी युगल स्वरूप की सच्चे भाव से सेवा की।

देखा देखी महाराज के, ल्याया जो ईमान।

बस बसा छाती पर, करता था सैतान।।७७।।

महाराजा छत्रशाल जी की देखा–देखी चाचा बलदीवान ने भी अधूरे मन से तारतम ज्ञान ग्रहण किया था। उसके मन में संशय रूपी शैतान का वास था, जिसके कारण वह कई बार महाराजा छत्रशाल जी को परेशानी में डाल देता था।

भावार्थ– "छाती पर बसबसा करना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है इतना अधिक सन्देह करना कि वह व्यक्ति दुविधाग्रस्त हो जाये।

बात छिपाई कुरान की, आवते महाराज सो आप।
सो पहिचान के वास्ते, इनको प्रकट करने प्रताप।।७८।।

श्रीजी ने अब तक कुरआन पक्ष की चर्चा महाराजा छत्रशाल जी से इसलिए नहीं की थी कि उचित समय पर कुरआन के माध्यम से सत्य की पहचान करायी जाये,

जिससे महाराजा छत्रशाल जी जागनी लीला एवं श्री प्राणनाथ जी (इमाम महदी) की अलौकिक शक्ति की महिमा को संसार में प्रकट कर सकें।

भावार्थ– चाचा बलदीवान में हमेशा नकारात्मकता के विचार भरे रहते थे और वह छत्रशाल जी को अपने प्रभाव क्षेत्र में लेने का प्रयास करते थे। ऐसी अवस्था में कुरआन के प्रसंग की चर्चा कर देना उचित नहीं था।

उचित समय पर छत्रशाल जी कुरआन पक्ष का ज्ञान प्राप्त करके, वेद और कतेब के एकीकरण के द्वारा, सबको एक सत्य के झण्डे के नीचे ला सकते थे और श्री प्राणनाथ जी की दिव्य महिमा सर्वत्र फैला सकते थे।

इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "प्रताप प्रगट करने" का तात्पर्य श्रीजी एवं तारतम वाणी की अलौकिक महिमा को फैलाने से है।

बैठे आप बंगले मिने, बांचे लाल किताब।

आप करत है माएनें, भाई दो चार बैठे हिसाब।।७९।।

एक बार श्रीजी बंगले के एक कोने में बैठे हुए थे। उनके आगे लालदास जी कुरआन पढ़ रहे थे। श्रीजी उसके अर्थ स्पष्ट करते जा रहे थे तथा पास में दो –चार सुन्दरसाथ बैठे हुए तल्लीनतापूर्वक उसका श्रवण कर रहे थे।

भावार्थ– यह उस समय का प्रसंग है, जब चर्चा करने हेतु एक लम्बे–चौड़े कच्चे कक्ष का निर्माण किया जा चुका था, जिसे इस चौपाई में बंगला जी कहा गया है। वर्तमान समय में जो बंगला जी मन्दिर है, उसका निर्माण महाराजा छत्रशाल जी के पौत्र और हृदय शाह जी के पुत्र सभा सिंह के द्वारा करवाया गया है। इसके अतिरिक्त नेपाल आदि कई स्थानों के सुन्दरसाथ ने भी इसकी

सजावट में अपना विशेष योगदान दिया है। सुन्दरसाथ ने बंगला जी से कुछ दूरी पर चारों तरफ अपनी छोटी-छोटी झोपड़ियाँ बना ली थीं।

बैठे सब एकान्त में, ऐसे में आए महाराज।
दूर बैठ मन बिचारिया, यों क्यों बैठे हैं आज।।८०।।

श्रीजी के साथ सब सुन्दरसाथ एकान्त में बैठे हुए चर्चा कर रहे थे। ऐसे समय में ही महाराजा छत्रशाल जी आ पहुँचे। उन्होंने दूर से ही अपने मन में सोचा कि आज श्रीजी के साथ एकान्त में कैसी बैठक हो रही है?

बुलाए के लालदास को, पूछी राजा ने एह।
तुम कहा गुप्त बांचत हो, हमको कहिए तेह।।८१।।

उन्होंने लालदास जी को संकेत से बुलाकर यह बात

पूछी कि आप लोग एकान्त में कौन सा गोपनीय ग्रन्थ पढ़ रहे हैं? कृपा करके मुझे भी बताने का कष्ट करें।

तब कह्या उत लाल नें, हमको हुकम नाहिं।
पूछें जाए हजूर में, तब कहें तुमें आहिं।।८२।।

तब लालदास जी ने कहा कि बिना धाम धनी की स्वीकृति के मुझे बताने का आदेश नहीं है। मैं पहले जाकर श्रीजी से पूछता हूँ, तब उनकी सहमति होने पर आपसे आकर बताऊँगा।

जाए लालें पूछी हजूर में, तब बुलाए हजूर महाराज।
कही ए जो बात कुरान की, तुम सों छिपाई लों आज।।८३।।

तब श्री लालदास जी ने जाकर श्रीजी से पूछा कि महाराजा छत्रशाल जी पूछ रहे हैं कि क्या बात चल रही

है? क्या वे भी इसे सुन सकते हैं? तब श्री प्राणनाथ जी ने कहा कि छत्रशाल जी को यहीं बुला लाओ। छत्रशाल जी के आने पर धाम धनी ने कहा कि कुरआन की बात मैंने तुमसे आज तक छिपाकर रखी थी।

सो ए अब कहत हैं, इनमें बात अपनी है सब।

महम्मद साहिब कुरान ल्याए, सो सब अपनो सबब।।८४।।

उसे अब मैं तुम्हें बता रहा हूँ। इसमें अपने परमधाम की सारी बातें लिखी हैं। मुहम्मद (सल्लि.) हमारी साक्षी के लिए ही कुरआन लेकर आए हैं।

यामें अपनी बीतक सब है, श्री देवचन्द्र जी को मेरे तेरो नाम।

जा दिन जो बीती हम तीनों में, सो सब लिखी तमाम।।८५।।

इस कुरआन के अन्दर सांकेतिक रूप से सद्गुरू धनी

श्री देवचन्द्र जी का, मेरा, और तुम्हारा नाम लिखा हुआ है। इस जागनी ब्रह्माण्ड में हम तीनों के साथ जिस समय जो भी घटना हुई है, वह सारी की सारी इसमें संकेतों में लिखी है।

भावार्थ– कुरआन में सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी को ईसा रूहुल्लाह, जिकरिया, तथा इब्राहीम; श्री प्राणनाथ जी को मूसा, एहिया; तथा महाराजा छत्रशाल जी को हारून के नाम से दर्शाया गया है। कुरआन में ३१३ आत्माओं की जागनी, इश्क–रब्द, व्रज–रास, तथा जागनी के सन्दर्भ में भी प्रकाश डाला गया है।

ए बात सुनत महाराज को, जोस जो बढ़यो जोर।
ए वस्त प्रकट करके, करों खेल में सोर।।८६।।

यह बात सुनते ही महाराजा छत्रशाल जी को बहुत

अधिक जोश आ गया और कहने लगे कि यह अलौकिक ज्ञान प्रकट करके मैं इस जागनी लीला में चारों ओर आपकी महिमा की गूँज कराऊँगा।

बात हमारे घर की, क्यों छिपावे हम।
मुसलमान हमें कहा करें, ल्यावें तले तुमारे कदम।।८७।।

जब कुरआन में हमारे परमधाम की बातें लिखी हैं, तो इसे हम क्यों छिपायें? अब ये मुसलमान हमारा क्या कर लेंगे? अब इन सबको मैं आपके हुक्म के नीचे लाऊँगा।

बांधी तरवार साह सों, सो तुमारे चाकर होए।
हक हादी मोमिन बिना, और न देखे कोए।।८८।।

अब मेरी तलवार औरंगज़ेब से लड़ने के लिए तैयार है। उसे आपके चरणों की छत्रछाया में आना ही पड़ेगा। आप

युगल स्वरूप और सुन्दरसाथ के सिवाय, किसी और का आध्यात्मिक क्षेत्र में वर्चस्व नहीं रहेगा।

और बात हमारी ए सुनो, जो ए बात सुन ल्यावे ईमान।
छत्रसाल तिन ऊपर, तन मन धन कुरबान।।८९।।

हे धाम धनी! हमारी एक और बात सुन लीजिए। आपकी इस बात को सुनकर जो भी व्यक्ति उस पर विश्वास लाएगा, उस व्यक्ति के ऊपर मुझ छत्रशाल का तन, मन, धन न्यौछावर रहेगा।

ए बात सुन राजा की, आप हुए खुसाल।
जाहिर किया दीन को, बकसी किताब हाल।।९०।।

महाराजा छत्रशाल जी के मुख से इस तरह की जोश भरी बातें सुनकर श्रीजी बहुत ही प्रसन्न हुए। वेद–कतेब

का एकीकरण करके निजानन्द के वास्तविक सत्य को उजागर करने का दृढ़ संकल्प लेने वाले महाराजा छत्रशाल जी को श्रीजी ने खुलासा ग्रन्थ भेंट किया, जो अभी कुछ ही समय पहले अवतरित हुआ था।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में "हाल" शब्द का प्रयोग है, जिसका आशय है उसी समय। जिस समय श्रीजी और छत्रशाल जी के बीच में बात चल रही थी, उस समय "खुलासा" ग्रन्थ का अवतरण हुआ था। इसलिए श्रीजी ने महाराजा छत्रशाल जी को "खुलासा" ग्रन्थ भेंट किया, ताकि उसके माध्यम से वेद–कतेब के एकीकरण का मार्ग स्पष्ट हो सके और किसी भी तरह की भ्रान्ति न रह जाये।

उस समय कियामतनामा का अवतरण नहीं हुआ था, इसलिए यहाँ पर कियामतनामा को देने का कोई प्रसंग

नहीं है। बड़ा कियामतनामा में जो छत्रशाल जी की छाप है, उसका आशय दूसरा है।

ए बात राजा के घर में, कोई कोई कों न आई नजर।
परचो लीजे इनको, ए हिन्दू बांचे क्यों कर।।९१।।

महाराजा छत्रशाल जी के परिवार में किसी-किसी को यह बात समझ में नहीं आयी कि आखिरकार एक हिन्दू तन में होते हुए भी श्रीजी सहित सभी सुन्दरसाथ कुरआन क्यों पढ़ते हैं? इसकी जानकारी लेनी चाहिए।

भावार्थ- चाचा बलदीवान के अन्दर ही इस प्रकार की मानसिकता सबसे अधिक थी। उस युग में रूढ़िवादिता अपने चरम पर थी, जिसमें एक हिन्दू के लिये कुरआन तथा एक मुस्लिम के लिये शास्त्र आदि को पढ़ना बहुत आश्चर्यजनक माना जाता था। दोनों ने ही एक दूसरे के

ग्रन्थ पढ़ने पर प्रतिबन्ध लगा रखा था।

तब बुलाए बलदीवान ने, काजी मुल्ला पण्डित।

तिन सों तहकीक करने, चरचा कराई इत।।९२।।

इसलिये बलदीवान ने यह निर्णय किया कि देश के सर्वश्रेष्ठ काजी-मुल्लाओं तथा पण्डितों को बुलाकर श्रीजी से धर्म चर्चा करायी जाये, जिससे यह निर्णय हो सके कि यथार्थ में श्री प्राणनाथ जी का स्वरूप क्या है?

आया काजी महोबे का, नाम अब्दुल रसूल।

तिन सेती चरचा भई, कुरान की मकबूल।।९३।।

इस कार्य के लिये सबसे पहले महोबा के काज़ी अब्दुल रसूल को बुलवाया गया। उनसे कुरआन की बहुत ही सुन्दर चर्चा हुई।

तिन सेती पूछाइया, कुरान का सवाल एक।
एकै जबाब दीजियो, जिन बोलो जवाब अनेक।।९४।।

उस काज़ी अब्दुल रसूल से श्रीजी के प्रतिनिधि के रूप में श्री लालदास जी ने कुरआन का एक सवाल पूछा। उनसे श्री लालदास जी ने आग्रह किया कि आप एक प्रश्न का मात्र एक ही उत्तर दीजिएगा, अनेक नहीं।

मेरे आगे कुरान की, कोई मार न सके दम।
उमी ओए पूछत हो, कुरान की बातें तुम।।९५।।

यह सुनकर काज़ी कहने लगा कि मेरे सामने तो कोई भी कुरआन के सम्बन्ध में कुछ भी बात नहीं कर सकता है। आप तो कुरआन-ए-पाक के सम्बन्ध में अनपढ़ों की तरह बातें कर रहे हैं।

भावार्थ- प्रायः कुछ सुन्दरसाथ भी ऐसा मानते हैं कि

काज़ी अब्दुल रसूल से श्रीजी ने धर्म चर्चा की थी, किन्तु इस चौपाई में जिस शब्दावली (अनपढ़) का प्रयोग अब्दुल रसूल ने किया है, श्रीजी के लिए इस तरह की शब्दावली का प्रयोग करने का साहस उसमें नहीं था। "वृत्तान्त मुक्तावली" में भी वर्णन है कि श्री लालदास जी ने ही काज़ी से धर्म चर्चा की थी।

कुरान तमाम तपसीर, मुझको रहे याद।
मुझ सेती कई खलक, पढ़के पहुंची मुराद।।९६।।

अर्थ सहित सम्पूर्ण कुरआन मुझे कण्ठस्थ है। मुझसे कई पीढ़ियों ने कुरआन पढ़कर अपनी इच्छानुसार ऊँचे-ऊँचे ओहदों को प्राप्त किया है।

भावार्थ- इस चौपाई में पीढ़ियों का तात्पर्य जन्म-मृत्यु से नहीं लिया जायेगा, बल्कि पढ़ने से लिया जायेगा।

कल्पना करें कि यदि कोई कुरआन का शिक्षक अपने जीवन काल में ६० वर्ष कुरआन पढ़ाता है और विद्यार्थियों का एक समूह लगभग पाँच वर्षों तक उसके पास अध्ययन करता है, तो उसने १२ पीढ़ियों को शिक्षा दे दी।

तिस वास्ते तुमको डरत हैं, कोई न ल्यावे ताब।
हम सवाल पूछत हैं, तिनका देओ जवाब।।९७।।

यह सुनकर श्री लालदास जी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया कि काज़ी साहब! भला आपके सामने बोलने की ताकत किसमें हो सकती है? इसलिये तो मुझे भी आपसे प्रश्न करते हुए डर लगता है, फिर भी मैं आपसे एक सवाल पूछता हूँ। इसका उत्तर दीजिए।

क्यों दुनियां की पैदाइस, लिखी बीच कुरान।

समझ जवाब दीजिओ, है बात बड़ी फिरकान।।९८।।

कुरआन में कितने प्रकार की पैदाइश लिखी हुई है? आप कृपा करके बहुत सोच-समझकर ही इसका उत्तर दीजिएगा, क्योंकि यह बात कुरआन में बहुत ही महत्वपूर्ण है।

तब जवाब काजीएं दिया, हम क्यों कर कहें खिलाफ।

बूढ़े हुए पढ़ते, हमारे दिल हैं साफ।।९९।।

तब काज़ी अब्दुल रसूल ने उत्तर दिया कि भला मैं कुरआन के कथनों के विपरीत क्यों बोलूँगा? कुरआन पढ़ते-पढ़ते मैं बूढ़ा हो गया। मेरा दिल इस सम्बन्ध में पूरी तरह से साफ है।

जो कदी ए कुरान, और भांत बोलें।

तो तुम आगे हारहीं, दम ना मार सकें।।१००।।

यदि मेरे कहने में और कुरआन के कहने में जरा सा भी भेद हो जाये, तो मैं इसी बात पर आपसे बिना कुछ कहे ही अपनी हार मान लूँगा।

विशेष– "दम न मारना" एक मुहावरा है, जिसका अर्थ होता है– न बोल पाना।

पांच भांत की पैदाईस, लिखी अल्ला कलाम।

खबर कोई ना पावहीं, पढ़ी खलक तमाम।।१०१।।

कुरआन में पाँच तरह की पैदाइश लिखी हुई है। यद्यपि सारी दुनियाँ कुरआन को पढ़ती है, लेकिन इसके रहस्यों को नहीं जान पाती।

तब कुरान आगे धरी, खोल देखो किताब।

तिलकर रसूल में लिखा, आया नहीं जवाब।।१०२।।

तब लालदास जी ने सामने कुरआन रखकर कहा कि आप इसमें से हमें खोजकर बताइये कि पाँच तरह की पैदाइश कहाँ लिखी है? काज़ी ने बहुत खोजा, किन्तु उसे उत्तर नहीं मिल पाया। अन्त में लालदास जी ने खोलकर दिखा दिया कि कुरआन के तीसरे पारे तिल्कर्रसूल में यह प्रसंग लिखा है।

भावार्थ– कुरआन के सत्ताइसवें सिपारे की सूरा ५५ अल रहमान की आयत ११–१२ तथा २६,२७ में तीन तरह की सृष्टि का वर्णन है, जिसमें ब्रह्मसृष्टि को मेवा (अंगूर), ईश्वरी सृष्टि को खजूर, तथा जीवसृष्टि को भूसा वाले अन्न के रूप में वर्णित किया गया है।

कुरआन के तीसरे सिपारे को तिलकर्रसूल सिपारा भी

कहते हैं। इसमें "कुंन" की पैदाइश का वर्णन आयत ४७ में है। आयत ३८,३९ में "एक हाथ" तथा "दो हाथ" की पैदाइश का वर्णन है, तथा आयत ७ और २५ में "मूल इसदाए" और "खिलक्त" की पैदाइश का वर्णन किया गया है। तफ्सीर-ए-हुसैनी में इसी तीसरे सिपारे की व्याख्या में ५ तरह की पैदाइश का वर्णन है। कुरआन के पारा ३ सूरे वक्र २ आयत २५९,२६० में भी पाँच तरह की पैदाइश का वर्णन है।

कुंन सेती पैदा भई, ए जो आम खलक।
एक कहे एक हाथ से, दो हाथों कहे हक।।१०३।।

काजी ने कुरआन पढ़कर बताया कि यह जीव सृष्टि (आम खलक) कुंन से पैदा हुयी है। दूसरे प्रकार की पैदाइश एक हाथ से कही गयी है तथा तीसरे प्रकार की

पैदाइश दो हाथों से कही गयी है।

भावार्थ– कुंन की पैदाइश का तात्पर्य है, आदिनारायण के संकल्प "एकोऽम् बहुस्याम्" से उत्पन्न होने वाली जीव सृष्टि। इसी प्रकार एक हाथ की पैदाइश का तात्पर्य है– मुहम्मद साहिब के ऊपर ईमान लाने वाली उम्मत, तथा दो हाथ की पैदाइश से तात्पर्य है– ईसा रूहुल्लाह और इमाम महदी के ऊपर ईमान लाने वाली उम्मत।

और एक जमात को, ले आए उठाए इप्दाए।

और एक खिलकत और से, ए पांचों की पैदाए।।१०४।।

चौथी जो एक प्रकार की जमात है, वह मूल से अर्थात् अनादि काल से है और उसे इस दुनिया में लेकर धाम धनी आए, और पाँचवी जो एक प्रकार की जमात है, वह उसकी पड़ोसी है। इस प्रकार यह पाँच प्रकार की सृष्टि

इस संसार में है।

भावार्थ– इस चौपाई से यह स्पष्ट होता है कि जो अनादि काल की सृष्टि है, वह ब्रह्म सृष्टि है। ईश्वरीय सृष्टि अक्षरधाम (सत्स्वरूप) से आयी है, इसलिए उसे ब्रह्मसृष्टि की पड़ोसी कहा गया है। मुहम्मद साहिब के समय ब्रह्मसृष्टि और ईश्वरीय सृष्टि दोनों ही नहीं थीं , इसलिए उनके अनुयायियों (एक हाथ वालों) में केवल जीव सृष्टि ही रही। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी एवं श्री प्राणनाथ जी के तन से होने वाली जागनी लीला में (दोनों हाथों की पैदाइश में) तीनों प्रकार की सृष्टि– जीव, ईश्वरीय, ब्रह्म– सम्मिलित हैं।

तब पूछा अब्दुल रसूल को, तुम हो किन में।
अब सांच बोलियो, तुम पैदाइस जिनसें।।१०५।।

यह सुनकर लालदास जी ने अब्दुल रसूल से पूछा– काज़ी साहब! अब आप सच–सच बताइये कि आप स्वयं को इन पाँच तरह की पैदाइश में से किसके अन्तर्गत मानते हैं?

तब काजी के दिल में, भई जो दुदली।
तब जवाब आया नहीं, तब बात कही विचली।।१०६।।

तब काज़ी के दिल में घबराहट सी हो गयी। उसे उत्तर समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे? तब उसने भटकावपन जैसा उत्तर दिया।

भावार्थ– कभी तो वह कहता कि मैं मूल इप्तदाए का हूँ, लेकिन पुनः सोचने लगा कि मूल इप्तदाए के बारे में तो मैं कुछ जानता ही नहीं हूँ, तो कभी एक हाथ की कहने लगा। फिर उसने सोचा कि मुझे इसके बारे में भी कुछ

मालूम नहीं है और अधिक घबराहट में उसने "कुंन से" कह दिया। तत्पश्चात् उसने विचार किया कि "कुंन से" पैदा होने वाली खलक तो जुलमत के अन्दर होती है और वह अर्शे आज़म कैसे जाएगी? इस प्रकार वह बहुत परेशान सा नजर आने लगा।

तब बलदिवान नें, कही ऐ मियाँ तुम।

भूल के बात करत हो, छूटा वह हुकम।।१०७।।

तब बलदीवान ने कहा कि काजी साहिब! इस तरह से भूले-भटके की तरह बातें क्यों कर रहे हो? यदि आप इनके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाते हैं, तो आप अपने शागिर्दों पर एक उस्ताद के रूप में हुक्म चलाने के काबिल नहीं रह जाएंगे।

तब काजी कदमों लगा, किया सेजदा हक।

हम तहकीक पहचानिया, ए बात बड़ी बुजरक।।१०८।।

तब काज़ी ने श्रीजी के चरणों में अल्लाह के भाव से प्रणाम (सिज्दा) करते हुए कहा कि अब मैंने आपको पहचान लिया है। यह मेरे जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि है।

तब बल दिवान नें, काजी सों पूछी ए।

मुसाफ सिर पर धर कहो, सांच बताओ जे।।१०९।।

तब बलदीवान ने आश्चर्यचकित होकर काज़ी से पूछा– काजी साहब! आप क्या कह रहे हैं? आपने अभी जो बात कही, क्या इसकी सत्यता के प्रमाण में आप कुरआन को अपने शिर पर रखकर कह सकते हैं?

तब जवाब काजी दिया, मुसाफ सिर हमारे।

जो हम झूठ बोलहीं, तो ए ही हमको मारे।।११०।।

तब काज़ी ने कुरआन को अपने सिर पर रखकर उत्तर दिया कि मैं कुरआन को शिर पर रखकर कसम खाकर यह बात कह रहा हूँ कि यदि मैं झूठ बोलूँ, तो यह कुरआन मेरा नाश कर दे।

ए तहकीक जमाने का खाविन्द, जो करी थी सरत।

सो सरत आए पहुंची, फरदा रोज कयामत।।१११।।

निश्चित रूप से ये श्री प्राणनाथ जी ही आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्जमां हैं। इनके अन्दर अल्लाह तआला की वही आवाज बोल रही है, जिसने मुहम्मद (सल्ल.) से वायदा किया था कि मैं फरदा रोज कियामत के समय आऊँगा। अब वही समय आ गया है।

भावार्थ– कुरआन मंजिल २ पारा ७ सूरा ६ आयत ३६ में कहा गया है कि अल्लाह मुर्दों को कियामत के दिन उठायेगा।

इसी प्रकार मंजिल ५ सिपारा २२ सूरा ३४ आयत २९,३० में कहा गया है कि यह कियामत का वायदा कब पूरा होगा, तो कह दो कि तुम्हारे साथ एक दिन का वायदा है। सिपारा १७ सूरा २२ आयत ४७ में कहा गया है कि अल्लाह कभी भी अपना वादा–खिलाफी नहीं करेगा और तुम्हारे परवरदिगार का एक दिन तुम लोगों की गिनती के १००० वर्ष के बराबर है। दुनियाँ के १०० वर्षों के बराबर परवरदिगार की एक रात्रि होती है। इस तरह ११वीं सदी में कियामत और इमाम महदी के प्रकट होने का कथन सिद्ध होता है।

मुकम्मल सही बुखारी हजरत ईमाम सफा ६६४/९ में

भी कहा गया है कि कियामत के दिन तुम अपने अल्लाह का दीदार करोगे।

उपरोक्त कथनों से काजी अब्दुल रसूल ने मान लिया था कि सचमुच इनके अन्दर अल्लाह की सूरत है।

तब बलदिवान के, कछू सांच आई दिल में।
पण्डितों से तो पूछ देखों, कोई चरचा करे इनसें।।११२।।

तब बलदीवान जी के दिल में श्री प्राणनाथ जी के प्रति कुछ सच्चाई आई, किन्तु उन्हें अभी पूर्ण विश्वास नहीं था। उन्होंने अपने मन में सोचा कि पण्डितों से भी पूछकर देखूँ कि पण्डित लोग श्रीजी के बारे में क्या कहते हैं? इसके लिए श्रीजी से पण्डितों का शास्त्रार्थ करवाना होगा।

तब सुन्दर वल्लभ बद्री, और बुलाए पण्डित।

तिनको लगा पूछने, ए बात कैसी इत।।११३।।

तब चारों ओर के पण्डितों को बुलाकर , उनमें से सुन्दर, बल्लभ, और बद्रीदास जी का चयन किया गया। बलदीवान ने उन पण्डितों से पूछा कि श्री प्राणनाथ जी को विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप कहा जाता है, क्या यह सत्य बात है?

बद्री को बुलाए के, महाराजें पूछी बात खरी।

ए जो सवाल भागवत के, चित दे चरचा करी।।११४।।

बद्रीदास जी को बुलाकर महाराजा छत्रशाल जी ने स्पष्ट बातें की। महाराजा छत्रशाल जी की तरफ से भागवत के कुछ प्रश्न थे, जिनके ऊपर दोनों ने एकाग्र चित्त से चर्चा की।

द्रष्टव्य– "वृत्तान्त मुक्तावली" में महाराजा छत्रशाल जी तथा बद्रीदास जी के बीच में होने वाले शास्त्रार्थ का विस्तृत रूप से वर्णन दिया गया है।

तब बद्रीदास ने, प्रसन सुनें दे कान।
ए बात श्री कृष्ण की, होए ना बिना भगवान।।११५।।

बद्रीदास जी ने छत्रशाल जी के प्रश्नों को बहुत सावधानी से सुना। उनसे किसी भी प्रश्न का उतर देते नहीं बना। थक–हार कर उन्होंने कह दिया कि आप श्री कृष्ण जी की जिन लीलाओं के बारे में प्रश्न कर रहे हैं, उनका उत्तर परमात्मा के अतिरिक्त कोई नहीं दे सकता।

तब श्री महाराज नें, पाया बद्री पर सुख।
रस रहया चरचा मिने, कहया न जाए मुख।।११६।।

बद्रीदास जी की इस स्पष्टवादिता पर महाराजा श्री छत्रशाल जी को बहुत ही सुख हुआ। दोनों के मध्य होने वाली धर्म चर्चा में बहुत आनन्द बरसा , जिसका वर्णन इस मुख से कहा नहीं जा सकता है।

आधी रात उपरान्त, घरों गया बद्री जब।
सब पण्डितों मिल के, बातें पूछी तब।।११७।।

आधी रात के पश्चात् जब बद्रीदास अपने निवास पर गए, तो अन्य साथी पण्डितों ने मिलकर उनसे सारी बातें पूछीं।

कैसी तुम चरचा करी, कैसा दिया जवाब।
मैं जथारथ बोलिया, उड़ाए दिया ए ख्वाब।।११८।।

तुमने छत्रशाल जी के साथ कैसी चर्चा की और उनके

प्रश्नों का किस प्रकार से उत्तर दिया? बद्रीदास ने उत्तर दिया कि मैंने अपने हृदय की आवाज के आधार पर यथार्थ सत्य कह दिया कि आप जो प्रश्न पूछ रहे हैं , उनका उत्तर परमात्मा के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं दे सकता और अब तक की अपनी मिथ्या धारणाओं को स्वप्न की तरह उड़ा दिया।

भावार्थ– छत्रशाल जी और बद्रीदास जी के शास्त्रार्थ का विवरण "वृत्तान्त मुक्तावली" के प्रकरण ६६ एवं ६७ में विस्तारपूर्वक दिया गया है।

इन ख्वाब के आज लों, है तुमारे घर।

फिटकार सबों नें दई, क्यों ना गए तुम मर।।११९।।

क्योंकि तुमने तो आज तक अपनी मुक्ति का स्थान वैकुण्ठ और निराकार को ही मान रखा है, जो कि

स्वप्नमयी है और महाप्रलय में लय को प्राप्त हो जाने वाला है। छत्रशाल जी ने अखण्ड व्रज–रास के बारे में प्रश्न पूछा था, जो वैकुण्ठ और निराकार से परे है। इसलिए मुझे विवश होकर यह कहना पड़ा कि आपके इन प्रश्नों का उत्तर केवल परमात्मा के पास है। बद्रीदास जी की इस बात को सुनकर सभी पण्डित फटकार लगाने लगे कि हारकर आने की अपेक्षा तुम वहीं मर क्यों नहीं गए?

जब बात रोपी तुम इनकी, फिर है तुमारा कोई ठौर।
अब मारो उलटाए के, बात करो जाए और।।१२०।।

जब तुमने ब्राह्मण होकर एक क्षत्रिय से हार मान ली, तो तुमने सोचा है कि दुनिया में तुम्हारा क्या ठिकाना होगा? अब तुम पुनः जाओ और दोबारा शास्त्रार्थ करो और

किसी भी प्रकार से उन्हें बुरी तरह से हराओ।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में "उल्टा करके मारने की बात" मुहाविरे के रूप में प्रयोग की गयी है, जिसका अर्थ होता है– बुरी तरह से हराना।

हम देत सवाल बनाए के, लेके जाओ तुम।

जाए के खंत करो, आवें मद्दत हम।।१२१।।

हम कुछ प्रश्न बनाकर तुम्हें देते हैं, उन्हें लेकर तुम जाओ और पुनः शास्त्रार्थ की इच्छा व्यक्त करो। तुम्हारी सहायता के लिए हम भी रहेंगे।

सवाल बनाए रात में, बिना जाने निसान।

परियान कर उठे, प्रात करें पहिचान।।१२२।।

रात में पण्डितों ने बिना स्कन्ध, अध्याय, और श्लोक को जाने ही इधर–उधर से जोड़कर कुछ प्रश्न बनाए और अपने निवास स्थान की तरफ प्रस्थान किया, ताकि प्रातःकाल उठकर श्री प्राणनाथ जी के ज्ञान की परख करनी है।

प्रात समय उठके, आया बद्री दरबार।

बल दीवान को बात से, किया खबरदार।।१२३।।

प्रातःकाल उठकर बद्रीदास दरबार आए और बलदीवान को दोबारा शास्त्रार्थ करने के लिए सावचेत किया।

भई भेंट महाराज सों, अबही बाताँ करते और।

तब पूछा महाराज ने, रात की बात गई किस ठौर।।१२४।।

जब महाराजा छत्रशाल जी से बद्रीदास जी की भेंट

हुयी, तो महाराजा छत्रशाल जी ने पूछा कि बद्रीदास जी! इस समय तो आपकी बातें कुछ और कह रही हैं, किन्तु रात के समय आपने जो बात कही थी कि इन प्रश्नों का उत्तर परमात्मा के सिवाय अन्य किसी को भी मालूम नहीं है, वह कहाँ चली गयी?

ऐ प्रस्न भागवत के, हम तो सब जानत।
झूठी बातें बनाए के, करने लगे इत।।१२५।।

भागवत के इन सारे प्रश्नों का उत्तर तो मैं अच्छी तरह से जानता हूँ, किन्तु आप पण्डित होकर भी झूठी बातों के आधार पर प्रश्न बनाकर शास्त्रार्थ करने की इच्छा करते हैं?

तब उत महाराज को, चढ़ी बड़ी रीस।

कही बुन्देला इने गुरू ना करें, कोई न नवावें सीस।।१२६।।

उस समय महाराजा छत्रशाल जी को बहुत क्रोध आया और उन्होंने सारी सभा के बीच में यह घोषणा कर दी कि बुन्देलखण्ड में रहने वाला कोई भी व्यक्ति इन्हें अपना गुरु न बनाए और न ही इनके सामने शिर झुकाए।

इनकी पटी सिर पर, अब बांधियों जिन कोए।

बुन्देलों की जात में, इनको उठो न सोए।।१२७।।

विवाह आदि शुभ कार्यों में इनके हाथ से कभी भी शिर पर पाग आदि नहीं बँधवाना और इनके आने पर कोई भी बुन्देला उठकर सम्मान नहीं करेगा।

सुन्दर वल्लभ बद्री, भले मिले कल माहिं।

चौदह विद्या निपुन हैं, पर एकौ जानत नाहिं।।१२८।।

इस कलियुग में सुन्दर, बल्लभ, और बद्री ऐसे पण्डित हैं, जो चौदह विद्याओं में निपुण तो कहलाते हैं, लेकिन एक परमात्मा के बारे में कुछ नहीं जानते।

भावार्थ– चार वेद, छः शास्त्र, ज्योतिष, व्याकरण, आयुर्वेद, और धर्म शास्त्र ये १४ विद्याएँ हैं। इन पण्डितों ने भोली–भाली जनता में प्रसिद्धि कर रखी थी कि हमने चौदह विद्याएँ पढ़ी हैं, जबकि सच्चाई यह है कि उस युग में १४ विद्याओं की शिक्षा ही नहीं होती थी। कौमुदी व्याकरण, श्रीमद्भागवत् आदि कुछ पुराण, उपनिषद्, न्याय, मीमांसा, आदि को पढ़कर ही सर्वोपरि बनने का दावा किया जाता था। चार वेदों के पठन–पाठन की उस समय प्रक्रिया ही समाप्त हो गयी थी।

फेर बलदिवान आगे, भई जो चरचा जोर।

सब पण्डितों मिलके, मेरा चित दिया मरोर।।१२९।।

यह सुनकर बद्रीदास जी ने उत्तर दिया कि महाराज! सभी पण्डितों ने दबाव देकर मेरी बुद्धि को भ्रमित कर दिया था। अन्ततोगत्वा चाचा बलदीवान जी के आगे पुनः बहुत जोर-शोर से चर्चा हुयी।

जेर भए सब पण्डित, फते भई इसलाम।

काफर स्याह मोंह होए के, ले गए अपने ठाम।।१३०।।

इस शास्त्रार्थ में सभी पण्डितों को बुरी तरह से हार खानी पड़ी और निजानन्द के शाश्वत् सिद्धान्तों की जीत हुई। एक परब्रह्म को छोड़कर काल्पनिक देवी-देवताओं (शालिग्राम, शिवलिंग) की पूजा करने वाले पण्डित लोग हारे और अपना मुँह लेकर सिर झुकाए हुए अपने गन्तव्य

की ओर चले गए।

एक बात इत और भई, सब कुंवर ठाकुरों में।
खरच राज की बकसीस देख के, धोखा भया मन में।।१३१।।

इस घटना के बाद यहाँ एक विशेष बात और हुई कि राज परिवार से जुड़े लोगों ने देखा कि ५००० सुन्दरसाथ के खाने-पीने का खर्च कहाँ से आता है? उनके मन में धोखा हो गया।

खरचा इतसे पहुंचे नहीं, ए उठत है कहाँ से।
है इनके पास रसायन, ए सबों जानी मन में।।१३२।।

कहीं श्रीजी के पास लोहा से सोना बनाने वाला रसायन (पारस मणि) तो नहीं है, जिसके द्वारा इतने लोगों के खर्च की व्यवस्था हो रही है, क्योंकि राजकोष से तो

सुन्दरसाथ के खर्च के लिए कोई धन जा नहीं रहा। आखिरकार इस धन की व्यवस्था कहाँ से हो रही है? यह बात सबके मन में बस गयी।

सिवाए एक महाराज के, सबके मन में बस गई।

बरस तीन बीत गए, तब लग खरच की खबर ना भई।।१३३।।

एक महाराजा छत्रशाल जी के अतिरिक्त सबने ऐसा ही समझ लिया। ५००० सुन्दरसाथ की संख्या के साथ श्री जी को पन्ना जी में आए हुए तीन वर्ष हो चुके थे, किन्तु किसी को भी इतने बड़े खर्च की जानकारी ही नहीं हो पायी।

तब एक दिन महाराज ने, पूछी श्री राज से एह।

सबके मन में धोखो है, ए खरच होत है जेह।।१३४।।

एक दिन महाराजा छत्रशाल जी ने धाम धनी से पूछा कि यहाँ के रहने वाले सभी लोगों के मन में यह संशय बना हुआ है कि इतने लोगों का खर्च कहाँ से आता है?

तब फुरमाई श्री राज ने, आवत खरच साथ में सें।
मेरता को साथ है, सो भेजत है हमें।।१३५।।

तब श्री प्राणनाथ जी ने उत्तर दिया कि यह खर्च बाहर के सुन्दरसाथ से आता है। मेड़ता के रहने वाले राजाराम और झांझन भाई की ओर से यह सारी सेवा की जाती है।

तब महाराजा मन में, बहुत दलगीर भए।
हम ब्रह्मसृष्ट के साथ में, अजूं भए ना सही नए।।१३६।।

यह सुनकर महाराजा छत्रशाल जी अपने मन में बहुत

दुःखी हो गए। वे अपने मन में सोचने लगे कि अभी मैं सुन्दरसाथ के बीच में ब्रह्मसृष्टि कहलाने योग्य नहीं हूँ।

बहुत दलगिरी आई दिल में, माने न आपको साथ।
अजहूं काम दीन का, आया न मेरे हाथ।।१३७।।

वे अपने दिल में इतने दुःखी हो गए कि स्वयं को सुन्दरसाथ मानने को भी तैयार नहीं हुए। उनके हृदय से यही आवाज आने लगी कि अभी तो मैंने धर्म का कोई काम किया ही नहीं।

भावार्थ– किसी के व्यक्तित्व की महानता की यही पहचान है कि अपने छोटे से छोटे अवगुण का भी विचार कर उसे त्यागने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहना। इसी सन्दर्भ में श्री महामति जी ने भी कहा है–

रोम रोम कई कोट अवगुन, ऐसी मैं गुन्हेगार।
ए तो कहीं मैं गिनती, पर गुन्हें को नहीं सुमार।।

किरन्तन ४१/१०

किन्तु सामान्य व्यक्ति दूसरों के अवगुण ढूँढने और अपने अवगुणों को छिपाने में सारी ऊर्जा लगा देता है। वह अपनी ही झूठी प्रशंसा से खुश होता है, जबकि दूसरों की सच्ची प्रशंसा भी उसे सहन नहीं होती।

विचार किया मन में, ए बात कहों न जाए कित।
दलगीर होए के प्रात से, पौढ़े घरों जाए तित।।१३८।।

वे अपने मन में सोचने लगे कि अपनी इस व्यथा (पीड़ा) को मैं किससे कहने जाऊँ? वे दुःखी होकर घर गए और अपने कक्ष में दरवाजा बन्द कर प्रातःकाल ही लेट गए।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाई से यह स्पष्ट होता है कि महाराजा छत्रशाल जी सवेरे–सवेरे श्रीजी से मिलने आए थे और उसी दिन प्रातःकाल से लेटे रहे।

जब हो गए दो पहर, घर में रसोई भई तैयार।
रानी तो उठाए ना सके, कह भेजी बलदिवान सो बाहर।।१३९।।

जब दोपहर का समय हो गया, तो घर में भोजन तैयार हुआ। महारानी जी को उन्हें उठाने का साहस नहीं हो सका, इसलिए उन्होंने सूचना भेजकर चाचा बलदीवान को बुलाया।

आए बलदीवान चल के, जगाए श्री महाराज।
तुम काहे होत दलगीर, सो कहो हमें आज।।१४०।।

बलदीवान जी अपने कक्ष से चलकर आए और उन्होंने

महाराजा छत्रशाल जी को जगाया। तत्पश्चात् बहुत स्नेह से पूछने लगे कि छत्रशाल! तुम इतने दुःखी क्यों हो रहे हो? मुझे आज इसका कारण बताओ।

तब कही महाराज ने, नही कहवे की बात।

तब कही बलदीवान ने, ए कही चाहिए साख्यात।।१४१।।

तब महाराजा छत्रशाल जी ने कहा कि मैं आपको क्या बताऊँ? यह कहने की बात नहीं है। यह सुनकर बलदीवान जी ने बहुत अपनेपन के स्नेह से कहा कि तुम्हें तो आज अवश्य ही बताना पड़ेगा।

तब महाराजे ए कही, हमारे मन में रहे एह।

है इन पास रसायन, आज तहकीक करी हम तेह।।१४२।।

तब महाराजा छत्रशाल जी ने कहा कि हम सब के मन

में यह वहम का रोग हुआ था कि श्रीजी के पास कोई रसायन है, जिससे समस्त सुन्दरसाथ का खर्च चलता है। आज प्रातःकाल जब मैंने उसकी जाँच की तो पता चला।

ए आवत खरच साथ में से, ए सुन भयो दरद।

हम कैसे सेवक इनके, हम पर गजब की रही न हद।।१४३।।

यह सारा खर्च सुन्दरसाथ में से आता है। यह सुनकर मेरा हृदय बहुत दुःखी हो गया है कि हम कैसे सेवक हैं कि श्रीजी सहित सब सुन्दरसाथ तीन वर्ष से हमारे यहाँ हैं और उनका खर्च बाहर का सुन्दरसाथ भेज रहा है? हमारी यह अक्षम्य भूल इतनी बड़ी है कि उसकी कोई सीमा नहीं है।

तब बोले बलदिवान, ए बात है सहल।

एक जागा मारिए, ताकी चौथ दीजे सब मिल।।१४४।।

तब बलदीवान जी कहने लगे कि इसका समाधान तो बहुत ही सरल है। तुम्हें औरंगज़ेब के अधीनस्थ राज्यों पर आक्रमण करना चाहिए और उन्हें हराकर विवश करना होगा कि वे औरंगज़ेब को कर न देकर तुम्हें कर दें। उसी कर से तुम्हें धाम धनी की सेवा करनी चाहिए।

ए बात पक्की करके, लिखाए लई महाराज।

तब सब साथ में आए के, अरज करी आगे श्री राज।।१४५।।

इस बात का दृढ़ निश्चय हो जाने पर महाराजा छत्रशाल जी ने बलदीवान जी से लिखित में सहमति करा ली और तब सब सुन्दरसाथ के पास आकर धाम धनी के चरणों में प्रार्थना की।

आवे साथ परदेस को, और रहे जो इत।

तिन सब की सेवा की, मोहे है गरज करों नित।।१४६।।

मेरे प्राणेश्वर! मैं यही चाहता हूँ कि यहाँ से बाहर परदेश में रहने वाले जो भी सुन्दरसाथ हैं, वे पन्ना जी आ जाएँ, और यहाँ रहने वाले जो सुन्दरसाथ हैं, उन सबकी प्रतिदिन की सेवा को मैं शिरोधार्य करूँ।

भावार्थ– श्रीजी अच्छी तरह से जानते थे कि महाराजा छत्रशाल जी के पास इतना धन नहीं है कि पाँच हजार सुन्दरसाथ की प्रतिदिन की सेवा का खर्च वहन कर सकें। इसलिये उन्होंने कहा कि तुम प्रातःकाल अपना घोड़ा लेकर आ जाना।

जब प्रातःकाल महाराजा छत्रशाल जी अपना घोड़ा लेकर आये तो श्रीजी ने कहा कि इस घोड़े से अपने राज्य में सूर्यास्त से पूर्व जहाँ तक दौड़ लगा सकते हो,

वहाँ तक दौड़ लगाकर आ जाओ। छत्रशाल जी ने वैसा ही किया।

जब वे दौड़ लगाकर श्रीजी के चरणों में वापस आये तो श्रीजी ने कहा कि जहाँ तक तुमने दौड़ लगायी है, वहाँ तक की धरती तब तक हीरे उगलती रहेगी, जब तक तुम्हारे वंशज मेरे प्रति निष्ठावान बने रहेंगे। तुम इस हीरे के धन से सबकी सेवा करो। यह सुनकर महाराजा छत्रशाल जी ने कहा कि यह तो मेरी सेवा नहीं कही जा सकती, क्योंकि ये हीरे तो आपकी कृपा के फलस्वरूप प्राप्त हुए हैं।

और करी अरज हजूर में, करो इलाज बाहिर निकलने को।
सब ठाकुरों मिल विचार कियो, एक जागा मारने को।।१४७।।

मेरी आपसे यह प्रार्थना है कि मैं दूसरे राज्यों पर

आक्रमण करना चाहता हूँ। मेरे सहयोगी सभी राजपूतों ने आक्रमण करने के सम्बन्ध में अपनी सहमति दे दी है।

हमको बड़ी उम्मीद है, आप होओ असवार।
चले आगे असवारी में, हम जलेब में खबरदार।।१४८।।

मुझे आपसे बड़ी आशा है कि आप मेरे साथ हाथी पर चलने के लिये अवश्य तैयार हो जायेंगे। आप आगे-आगे हाथी की सवारी पर चलेंगे तथा मैं अपने घोड़े पर सेना का नेतृत्व करूँगा।

सम्बत सत्रह सौ तेतालीसे, असवारी करी जब।
हस्ती पर चढ़ाए के, आगे सेना चलाई तब।।१४९।।

श्रीजी की स्वीकृति मिलने पर वि.सं. १७४३ में महाराजा छत्रशाल जी ने धाम धनी श्री प्राणनाथ जी को

हाथी पर विराजमान किया और स्वयं उनके पीछे-पीछे अपनी सेना सहित चल पड़े।

राठ खड़ोत जलालपुर, नजीक कालपी पहुंचे।
इत मुल्ला काजी सैयद, सब जमा किए।।१५०।।

वे राठ, खड़ोत, जलालपुर होते हुए कालपी के निकट जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने क्षेत्र के सभी मुल्लाओं, काजियों, तथा सय्यिदों को एकत्रित किया।

तिनसों कुरान हदीसों की, चरचा करी जब।
जेर हुए इसलाम में, सबों मेहेजर लिख दिया तब।।१५१।।

वहाँ पर उन्होंने श्रीजी से उनकी कुरआन तथा हदीसों से चर्चा करवायी। वे चर्चा में पूर्णतया परास्त हुए और सबने यह स्वीकृति पत्र (महज़रनामा) लिखकर दे दिया।

ए हम तहकीक किया, खाविन्द जमाने का।

हम अपनी आंखों देखिया, जो कुरान हदीसों लिखा।।१५२।।

हमने कुरआन-ए-पाक तथा हदीसों की रोशनी में देखकर अपनी ओर से यह निर्णय किया है कि ये श्री प्राणनाथ जी ही आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिब्बुज़मां हैं।

सो पहुंचाया सरे तोरे को, कानों सुन्या सुलतान।

सुनके सिर नीचा किया, छूटा नहीं गुमान।।१५३।।

जब यह महज़रनामा शरातोरा के बादशाह औरंगज़ेब के पास पहुँचा, तो उसने पढ़कर अपना शिर नीचा कर लिया, किन्तु उसका अहंकार नहीं गया।

भावार्थ- अपनी सत्ता के मद, लोभ, तथा प्राणों के भय से वह श्रीजी की शरण में नहीं आ सका। उसे डर था कि

कहीं मुसलमान ही मुझे न मार डालें।

मुनकरी रसूल सों, लिखी बीच कुरान।

सो क्यों ईमान ल्यावहीं, जो मोहर लिखी दोऊ कान।।१५४।।

कुरआन के पारा ३, सूरा ३ आले इम्रान, आयत १९ में ऐसा लिखा हुआ है कि इमाम महदी के सन्देश को औरंगज़ेब अस्वीकार कर देगा। जिनके दोनों कानों पर मुहर लगी होती है, अर्थात् जिनमें श्रीजी की वाणी को सुनने की प्रवृत्ति ही नहीं होती, भला वे उन पर कैसे विश्वास ला सकते हैं?

सातों निसान कयामत के, जाहिर किए जब।

सुन के सिर नीचा किया, मुनकर हुए तब।।१५५।।

श्रीजी ने अपने सन्देश में कियामत के सातों निशानों का

अभिप्राय स्पष्ट कर दिया। उसे सुनकर औरंगज़ेब ने अपना शिर तो नीचा कर लिया, किन्तु भय, लोभ, और अहंकार के वशीभूत होने के कारण उसने पैगाम (सन्देश) को नहीं माना।

दाभा हुई जाहिर, उगा सूर मगरब।

लड़ा दज्जाल अहम्मद सों, बिन बातिन न देखा तब।।१५६।।

लोगों में दाब्ह-तुल-अर्ज जानवर के लक्षण प्रकट हो गये हैं। हिन्दुओं (पश्चिम) में तारतम ज्ञान (इल्में लदुन्नी) का सूर्य उग आया है, जिसका सन्देश देने वाले श्रीजी साहिब जी से दज्जाल (मौलवी, मुल्ला, औरंगजेब के अधिकारी, पण्डित) लड़ाई कर रहा है। अन्तर्दृष्टि न होने से औरंगज़ेब को यह सब दिखायी नहीं पड़ा और वास्तविकता से अन्जान सा रहा।

हुए आजूज माजूज जाहिर, बेटे याफिस के।

खाने लगे सब को, मरगी पहुंची ए।।१५७।।

याफिस के बेटे आजूज-माजूज जाहिर हो गए हैं और वे सबकी आयु को हर रहे हैं, अर्थात् रामनगर में जब मिर्गी की बीमारी पहुँची तो बहुत से सुन्दरसाथ ने अपना तन छोड़ दिया।

भावार्थ- यद्यपि दिन और रात्रि का चक्र तो हमेशा से चला आ रहा है, किन्तु कियामत के सात निशानों में याजूज-माजूज (दिन-रात) के जाहिर होने का एक आशय यह भी है कि आखरूल इमाम महदी तब जाहिर होंगे, जब संसार में चारों तरफ त्राहि-त्राहि मच जाएगी और भयंकर युद्धों, अकाल मृत्यु, तथा अन्य विपदाओं का ताण्डव नृत्य सामने होने लगेगा।

जब इमाम जाहिर भए, हजरत ईसा साथ।

मोमिन बन्ध छुड़ाए के, पकड़े नीके हाथ।।१५८।।

जब आखरूल इमाम महदी साहिब्बुजमां जाहिर हुए, तो उनके साथ हजरत ईसा (सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी) भी थे। इन्होंने इल्म–ए–लदुन्नी के द्वारा मोमिनों का हाथ पकड़ा और दज्जाल (माया) के बन्धनों से छुड़ाया।

भावार्थ– वेद और कतेब का एकीकरण करने के लिए हजरत ईसा को रूहुल्लाह (श्यामा जी) कहा गया है, किन्तु सत्य यह है कि जिस समय ईसा मसीह यरोशलम में आए थे, उस समय परमधाम की कोई आत्मा यरोशलम में नहीं आयी थी। यहाँ तक कि स्वयं ईसा मसीह के अन्दर भी परमधाम की श्यामा जी नहीं थी।

यही स्थिति अरब में मुहम्मद साहिब के अवतरण के समय भी थी कि वहाँ पर कोई भी परमधाम की आत्मा

नहीं थी, किन्तु सुन्दरसाथ को साक्षी देने के लिए अक्षर ब्रह्म की आत्मा और धनी के जोश ने कुरआन के ज्ञान का अवतरण किया।

कुरआन–हदीसों में कहा गया है कि इमाम महदी के अन्दर हजरत ईसा और मुहम्मद दोनों ही होंगे। यह कथन उस समय चरितार्थ था, जब श्री महामति जी के धाम हृदय में परमधाम की आह्लादिनी शक्ति श्यामा जी (रूहुल्लाह), उनके सत् अंग अक्षर ब्रह्म (मुहम्मद साहिब), जोश (जिबरील), तथा जाग्रत बुद्धि (अस्राफील) ने लीला की।

असराफीलें आए के, गाया इत कुरान।

नीके मोमिन सुनत है, इनों भई पहिचान।।१५९।।

अस्राफील फरिश्ता श्री महामति जी के धाम हृदय में

आकर कुरआन के गुह्य रहस्यों को सनद , खुलासा, मारिफत सागर, तथा कियामतनामा के रूप में गा रहा है, जिसे परमधाम के ब्रह्ममुनि (मोमिन) बहुत अच्छी तरह से सुनते हैं, और इन्हें ही श्रीजी के वास्तविक स्वरूप की पहचान हुई है।

हकीकत मारफत के, खोल दिए दरबार।

ए मेहर मोमिनों पर, सो आवे नहीं सुमार।।१६०।।

सच्चिदानन्द परब्रह्म के स्वरूप श्री प्राणनाथ जी ने, हकीकत और मारिफत के तारतम ज्ञान से, परमधाम का दरवाजा सबके लिए खोल दिया है। इस प्रकार धनी की अपार कृपा सुन्दरसाथ पर बरस रही है, जिसकी कोई सीमा नहीं है।

भावार्थ– श्रृंगार ग्रन्थ में मारिफत (परम सत्य) का वह

ज्ञान है, जो मुहम्मद साहिब की जिह्वा पर न चढ़ सका। इसी प्रकार मारिफत सागर में कुरआन के अनेक प्रसंगों को मारिफत की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। शेष सम्पूर्ण वाणी परमधाम की हकीकत का वर्णन करती है, जिसमें पच्चीस पक्ष सहित युगल स्वरूप की शोभा तथा लीला विद्यमान है।

इहां से असवारी करके, सिंउड़े पहुंचे जब।
बसन्त सुरखी आए मिल्या, कदमों लगा तब।।१६१।।

कालपी से हाथी की सवारी करके श्रीजी जब सेहुड़ा पहुँचे, तब चित्रकूट के राजा बसन्त सुर्खी ने आकर उनके चरणों में प्रणाम किया।

भावार्थ– सेहुड़ा के राजा को हराकर छत्रशाल जी ने उससे कर वसूला तथा बसन्त सुर्खी को भी युद्ध में

हारकर श्रीजी के चरणों में आना पड़ा। बसन्त सुर्खी बहुत ही चतुर राजा था। उसने छत्रशाल जी से युद्ध में हारने पर अपने राज्य की सुरक्षा के लिए बहुत ही चतुराईपूर्ण ढंग से कहा कि जब आप श्री प्राणनाथ जी को पूर्ण ब्रह्म मानते हैं , तो उनकी सेवा करने का अधिकार सबको मिलना चाहिए, केवल आपको ही क्यों? इसलिए मैं श्रीजी की एक वर्ष तक सेवा करूँगा। श्रीजी को विवश होकर चित्रकूट जाना पड़ा।

चित्रकूट को ले चल्या, पर जुदा रख्या आप।
तो संसार की लहर का, कबूल हुआ ताप।।१६२।।

श्रीजी को बसन्त सुर्खी चित्रकूट तो अवश्य ले गया, किन्तु श्रद्धा भाव की कमी के कारण उसने स्वयं को सेवा से दूर रखा और सुन्दरसाथ में भी सम्मिलित नहीं

हुआ। इसलिए वह मायावी बन्धनों में ही बँधा रह गया और उसे लौकिक कष्टों को सहना पड़ा।

श्री राज चले चित्रकूट को, लिया महाराजे दिल में।
सेवा में भंग होत है, कोई इलाज करो इनसें।।१६३।।

जब धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने चित्रकूट के लिए प्रस्थान किया, तब महाराजा छत्रशाल जी ने अपने मन में सोचा कि चतुराईपूर्वक बसन्त सुर्खी ने एक वर्ष तक सेवा माँग ली है, इससे तो मेरी अखण्ड सेवा का व्रत टूट जाएगा। इसका कोई रास्ता निकालना चाहिए।

तब सेवा के वास्ते, पहुंचाया सब साथ।
कुंवर ठकुराइने सबे, सोंपे श्री राज के हाथ।।१६४।।

तब उन्होंने श्रीजी की सेवा के लिए सब सुन्दरसाथ को

वहाँ भिजवा दिया और महल की महारानी सहित सभी महिलाओं को भी सेवा के लिए धाम धनी के हाथों में सौंप दिया।

भावार्थ– राज परिवार के सभी लोगों को उस समय "कुँवर ठाकुर" कहा जाता था। इसी प्रकार "कुँवर ठकुराइनों" से तात्पर्य महल में रहने वाली सभी विशिष्ट महिलाओं, अर्थात् सुशीला महारानी, देवकरण जी की धर्म पत्नी, तथा अन्य महिला वर्ग से है।

एक बरस तहां रहे, इत खोले अल्ला कलाम।
श्री राज रोसनी जाहिर करी, खुल गए सब ठाम।।१६५।।

श्रीजी एक वर्ष तक चित्रकूट में रहे और उन्होंने कुरआन के गुह्यतम् रहस्यों को कियामतनामा की वाणी के रूप में खोला। कियामतनामा के माध्यम से धाम धनी ने

आत्म–जाग्रति तथा परमधाम के गुह्य ज्ञान को जाहिर किया, जिससे कुरआन के सभी गुह्य रहस्य उजागर हो गए।

तब श्री राजें लिया दिल में, ए खबर करी महाराज।
चाहिए इन मेहर से, खुसाल होवें आज।।१६६।।

तब धाम धनी ने अपने दिल में लिया कि कियामतनामा के अवतरण की खुशी महाराजा छत्रशल जी को बतानी चाहिए। निश्चित रूप से धाम धनी की मेहर से अवतरित इस कियामतनामा की वाणी को पढ़कर महाराजा छत्रशाल जी बहुत आनन्दित होंगे। इस प्रकार धाम धनी ने बड़ा कियामतनामा के अवतरण की सूचना महाराजा छत्रशाल जी को भिजवा दी।

भावार्थ– यह विशेष ध्यान देने योग्य तथ्य है कि छोटा

कियामतनामा में "महामति जी" की छाप है तथा बड़ा कियामतनामा में "छत्रशाल जी" (छत्ता) की, जिससे स्पष्ट होता है कि छत्रशाल जी की सेवा पर रीझकर धाम धनी ने चित्रकूट में अवतरित बड़ा कियामतनामा में उनके नाम की शोभा दी। छोटा कियामतनामा पन्ना जी में उतरा है, जिस पर श्री महामति जी की छाप है।

तब ओरछे के राजा ने, लिया खटोला ए।

लगी फिटकार तिनको, मौत हुआ तिन से।।१६७।।

जब श्रीजी चित्रकूट में थे, तब ओरछा के राजा ने छत्रशाल जी के राज्य में खटोला नगर पर अधिकार कर लिया। उसको ऐसी सजा मिली कि ओरछा के राजा का विनाश हो गया और उसकी मृत्यु हो गयी।

फेर मिठू पीरजादे ने, बुरी करी नजर।

पांच हजार असवार ले दौड़ा, राह में भई फजर।।१६८।।

जब श्रीजी चित्रकूट से पन्ना जी आ रहे थे, तब औरंगज़ेब के एक सेनापति मिट्ठु पीरजादा की उन पर बुरी नजर हो गयी अर्थात् द्वेषभाव से ग्रसित हो गया। उसने ५००० घुड़सवारों की सेना लेकर हमला करना चाहा। श्रीजी पर हमला करने की चाहत में वह पूरी रात चलता रहा और प्रातः होने पर सेहुड़ा ग्राम पहुँचा।

तिनको मारा चमारों ने, फिरा मोंह स्याह ले।

हुई लानत संसार में, काफर होने के।।१६९।।

वहाँ पर निम्न वर्ग के लोगों ने ही उसकी सारी सेना को मार डाला और अपना काला मुँह लेकर वह वहाँ से भागा। काफिर होने के कारण मिट्ठु पीरजादे को संसार में

फटकार मिली।

भावार्थ– ऐसा माना जाता है कि मिट्ठु पीरजादा की योजना रात्रि में श्रीजी और सुन्दरसाथ पर हमला करने की थी, लेकिन जिस मार्ग से उसकी सेना को गुजरना था, वह पहाड़ की दो चोटियों के बीच का बहुत ही तंग रास्ता था। पास में ही निम्न लोगों की बस्ती थी। उन्होंने रात्रि के अंधेरे में खतरा भाँप लिया और तंग रास्ते के दोनों तरफ हथियार लेकर खड़े हो गए।

मिट्ठु पीरजादा का जो भी सैनिक वहाँ से गुजरने की कोशिश करता, उसे वे आसानी से तलवार से काट देते थे और जो मुगल सैनिक मारा जाता था उसके बारे में सेना को पता भी नहीं चलता था। इस प्रकार अपनी बुद्धिमता के बल पर थोड़े से लोगों ने मिट्ठु पीरजादा के सारे सैनिकों को मार डाला। श्रीजी पर आक्रमण करने के

पाप की सजा तो उसे भुगतनी ही थी।

और पुन जिन जिन करी, तिन तित ही पाई सजा।
ए काफर लिखे कुरान में, एही लिखी ताले कजा।।१७०।।

इस प्रकार जिसने-जिसने भी अपने मन में पाप लेकर श्रीजी या महाराजा छत्रशाल जी के प्रति कुदृष्टि की , उसको अपने पाप की सजा भुगतनी पड़ी। ऐसे ही लोगों को कुरआन में काफिर लिखा है और इनके भाग्य में तिरस्कार एवं दुख भोगने का दण्ड लिखा है।

भावार्थ- काफिर किसी वर्ग विशेष या व्यक्ति विशेष को नहीं कहा गया है, बल्कि जो धर्म के आदर्शों को न माने तथा परब्रह्म और उनके आदेशों का विरोध करे , वही काफिर है।

महामत कहें सुनो साथ जी, यह कीमत की बात।

जब आए तुम परना मिने, तब की ए विख्यात।।१७१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! पद्मावती पुरी में होने वाली यह लीला बहुत ही महत्वपूर्ण है। जब आप सभी पन्ना जी में आए थे, उस समय की ये बातें कही जा रही हैं।

प्रकरण ।।६०।। चौपाई ।।३५२७।।

पन्ना की बीतक (सुकराना)

शुक्राना का अर्थ होता है धन्यवाद देना। इस प्रकरण में यह बात दर्शायी गयी है कि हम उस प्रियतम परब्रह्म को पल-पल धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने पद्मावतीपुरी धाम में सब सुन्दरसाथ को सांसारिक कष्टों से दूर रखते हुए परमधाम के आनन्द में डुबोये रखा।

अब कहूं बीतक परना की, जब बैठे इत आए।
दज्जाल लगा पुकारने, सो तुमें कहूं बनाए।।१।।

अब मैं श्री पन्ना जी के अन्दर होने वाले उस घटनाक्रम का वर्णन करने जा रहा हूँ, जब सब सुन्दरसाथ यहाँ आकर बस गये थे। उस समय आसुरी प्रवृत्ति वाले लोगों ने तरह-तरह की बाधाएँ खड़ी की, जिसका वर्णन मैं आपसे कर रहा हूँ।

जब आए रामनगर से, तब पुरदल खान।

कुफर दिल में लेय के, जाए कहो राजा के कान।।२।।

पुरदल खान ने अपने मन में पाप लेकर शेख खिज्र को रामनगर के राजा के पास इस उद्देश्य से भेजा था कि इन वैरागियों को पकड़कर हमारे हवाले कर दो। श्रीजी के रामनगर से पन्ना जी आ जाने के पश्चात् उसने पत्र भेजा।

लिख भेजी पातीय को, तुम क्यों कहत कयामत।

उनकी मुदत दूर है, आज क्यों बताओ इत।।३।।

पुरदल खान ने श्री प्राणनाथ जी को लिखे अपने पत्र में कहा था कि आप अभी कियामत का आना कैसे सिद्ध कर रहे हैं? उसके आने में तो अभी बहुत देर है।

भावार्थ– यहाँ यह स्पष्ट नहीं है कि पुरदल खान का भेजा हुआ पत्र श्रीजी को गढ़े में मिला या मार्ग में या श्री

पन्ना जी में, किन्तु पत्रोत्तर की भाषा से ऐसा लगता है कि उत्तर अवश्य पन्ना जी से दिया गया है।

ताकी पाती को जवाब, लिखो श्री जी साहिब।
तुम दूर कौन किताब से, तहकीक किया अब।।४।।

धाम धनी श्री प्राणनाथ जी ने उसके पत्र का उत्तर देते हुए लिखा कि तुम किस किताब को पढ़कर यह निर्णय कर रहे हो कि कियामत के आने में अभी बहुत देर है।

सो बताओ हमको, जो लिखी बीच फिरकान।
ओतो हुए जाहिर, सात कयामत के निसान।।५।।

मुझे भी उस किताब का नाम बताओ। कुरआन में लिखे हुए कियामत के सातों निशान तो अब जाहिर हो चुके हैं।

सूरज ऊगा मगरब, बिन रोसनी का अंधेर।

तुम आंखों ना देखिया, अब नजर करो फेर।।६।।

परमधाम के ज्ञान का सूरज पश्चिम (हिन्दुओं) में उग आया है, किन्तु शरीअत में फँसे मुसलमानों के लिये वह बिना रोशनी का है, इसलिये उनके अन्दर अज्ञानता का अन्धकार ही फैला हुआ है। बाह्यदृष्टि होने के कारण तुम्हें भी वह दिखायी नहीं पड़ रहा, इसलिये तुम अपनी अन्तर्दृष्टि खोलकर पश्चिम में उगे सूरज को देखो।

भावार्थ– मुसलमानों के लिये सूरज का अँधेरे वाला कहने का आशय यह है कि शरीअत की राह पर चलने वाले मुसलमान न तो इमाम महदी (श्रीजी) पर ईमान लायेंगे और न इल्मे लदुन्नी (तारतम वाणी) पर, परिणामस्वरूप हकीकत एवं मारिफत से दूर रहने के कारण उन्हें परमधाम का सुख प्राप्त नहीं हो सकेगा।

दाभा हुई जाहिर, किया दज्जाल जोर।

ईमान लिया छीन के, पड़ा दीन में सोर।।७।।

मानव मन में दाब्ह–तुल–अर्ज जानवर प्रकट हो चुका है, अर्थात् मनुष्य की प्रवृत्ति जानवरों जैसी हो चुकी है। दज्जाल (माया) का इतना अधिक प्रभाव है कि उसने लोगों के ईमान को छीन लिया है, जिसका परिणाम यह हो रहा है कि चारों ओर धर्म के नाम पर विवाद ही विवाद हो रहे हैं।

तुम राह देखत हो, आजूज माजूज भए जाहिर।

देखा लोकों इसलाम के, खाई खलक बाहिर।।८।।

तुम अभी यह बाट देख रहे हो कि आजूज–माजूज अभी जाहिर क्यों नहीं हुए? निजानन्द की राह पर चलने वाले ब्रह्ममुनियों ने भी देखा कि किस तरह से रामनगर में

याजूज–माजूज ने मिर्गी की बीमारी के रूप में सबको खाना शुरू कर दिया।

असराफीलें गाइया, कुरान के सुकन।
सो नीके सुनत है, खास गिरोह मोमिन।।९।।

अस्रफील फरिश्ता इमाम महदी (श्री प्राणनाथ जी) के अन्दर तारतम वाणी का गायन कर रहा है, जिसको परमधाम के मोमिन तन्मय होकर सुना करते हैं।

हजरत ईसा उतरे, आए दावत करी इमाम।
सो कागद चारों खूंटों, सबको पहुंचाए तमाम।।१०।।

हजरत ईसा रूहुल्लाह (श्री श्यामा जी) आ गये हैं और उन्होंने इमाम महदी (श्री प्राणनाथ जी) को तारतम ज्ञान की कुञ्जी देकर सबको अखण्ड ज्ञान का रस पहुँचाने का

निमन्त्रण दिया है। कुरआन के गुह्यतम् रहस्यों के माध्यम से तारतम ज्ञान, इमाम महदी के द्वारा, चारों ओर फैल रहा है।

भावार्थ– वि.सं. १७१२ तक श्यामा जी के पहले तन से लीला हुई। उसके पश्चात् वे श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में विराजमान हो गयीं। वि.सं. १७३५ से श्यामा जी के स्वामित्व के ४० वर्ष प्रारम्भ होते हैं। उनकी रसना के रूप में परमधाम की वाणी उतरी, जो परमधाम की आत्माओं का आहार है। उसे ही इमाम महदी द्वारा दावत करना या निमन्त्रित करना कहा गया है।

आज तुम सूते नींद में, तो ऐसा लिखा सुकन।

बिन नसीब तुम क्या करो, ए काम ईमान मोमिन।।११।।

तुम अभी माया की नींद में सो रहे हो, इसलिए मुझे

ऐसी बातें लिखकर भेज रहे हो। जब तुम्हारे नसीब में अर्स-ए-अज़ीम का सुख है ही नहीं, तो तुम क्या कर सकते हो? यह सौभाग्य तो केवल ब्रह्मसृष्टियों (मोमिनों) के लिए ही है।

अब तुमें जाहिर होएगी, हकीकत कयामत।
आई नजीक तुम पर, जो कही कुरानें साइत।।१२।।

अब तुम्हें कियामत की वास्तविकता का पता चल जाएगा। कुरआन में कियामत के जाहिर होने का जो समय ११वीं, १२वीं सदी दिया गया है, वह बहुत ही निकट है।

तुमारे अहदी आए थे, बीच रामनगर।
सो तहकीक कर गए हैं, तुमें तहां भी न पड़ी खबर।।१३।।

तुम्हारे द्वारा भेजे हुए शेख खिज्र रामनगर में मेरे पास आए थे। कियामत तथा मेरे बारे में शेख खिज्र को पूरा अहसास हो चुका है। उन्होंने तुम्हें बताया होगा, फिर भी तुम्हें कियामत की समझ नहीं आ पायी है।

अब तुम हलके बहुत हो, बिना वाउ उड़े ज्यों तूल।
सो हाल तुमारा होत है, कछू न रहेगा सूल।।१४।।

जिस तरह से बिना हवा के बहे ही रुई का फोहा उड़ता रहता है, उसी तरह से ईमान से रहित होने के कारण तुम बहुत ओछे (छोटे विचार वाले) हो। तुम्हारा हाल इतना बुरा होगा कि उसका कोई समाधान ही नहीं होगा।

ए लिख भेजी पाती को, सुनावने जवाब।
फेर के उत्तर ना दिया, बिन अंकूर न पावे सवाब।।१५।।

पुरदल खान के पत्र का उत्तर देने के लिए श्रीजी ने इस प्रकार पत्र लिखकर भेजा, किन्तु पुरदल खान ने उसका कोई उत्तर नहीं दिया। जब उसके अन्दर परमधाम का अँकुर था ही नहीं, तो भला वह श्रीजी की कृपा दृष्टि का क्या लाभ उठा सकता था?

जब मारी ललत पुर, तब हुआ असवार।
आवत भेंटा राह में, तब भागा हुआ खुवार।।१६।।

जब महाराजा छत्रशाल जी ने ललितपुर पर आक्रमण किया, तब अचानक रास्ते में उससे भेंट हो गयी। वह घोड़े पर सवार होकर अपने सैनिकों के साथ आ रहा था। वह छत्रशाल जी से युद्ध में परास्त होकर भाग खड़ा हुआ।

बाईस असवारों मारी, फौज तीन हजार।

भागा जाए भेड़ ज्यों, बिना तेज देखा खुवार।।१७।।

धाम धनी की कृपा से महाराजा छत्रशाल जी के मात्र २२ घुड़सवारों ने पुरदल खान के ३००० सैनिकों को मार डाला। जिस तरह से भेड़ें भागती हैं, उसी तरह अपनी सारी फौज को कटवाकर तेजहीन होकर वह भाग खड़ा हुआ।

फौज लेके आइया, गौर सों करी मुलाकात।

लड़ाई सफजंग की, नाम निसान ना रही कछू आस।।१८।।

पुरदल खान एक विशाल सेना लेकर आया और गौर राजा से मुलाकात कर उसे अपनी तरफ मिला लिया। महाराजा छत्रशाल जी से उसका आमने-सामने युद्ध हुआ, तो उसका और उसकी फौज का नाम-निशान

तक मिट गया। छत्रशाल जी को जीत पाने की या विजय प्राप्त करने की अब किसी के भी मन में आशा नहीं रह गयी थी।

ज्यों फेरून दुआ मूसे की, रोंद नील में हुआ गरक।
त्यों औरंगजेब पर, फेरा फुरमान हक।।१९।।

जिस प्रकार मूसा पैगम्बर की प्रार्थना पर अत्याचारी फिरौन बादशाह नील नदी में अपनी सारी सेना सहित डूबकर नष्ट हो गया, उसी तरह से श्रीजी के सन्देश को ठुकराने के कारण औरंगज़ेब भी अपने साम्राज्य सहित नष्ट हो गया।

त्यों ही मिठू दौड़िया, मारा उन्हें चमार।
खुवार हुआ दुनियां मिने, छूट गया अख्तयार।।२०।।

मिट्ठू पीरजादा बुरी दृष्टि से ५००० की सेना लेकर आया। उसकी सारी सेना को निम्न वर्ग के लोगों ने मार डाला। सारे संसार में उसे अपमान का कष्ट झेलना पड़ा। उसका सारा पद भी समाप्त हो गया और अन्ततोगत्वा उसे आत्महत्या करनी पड़ी।

भई मुहिम खटोला की, आए ओरछे के।
उतहीं पटका हुकमें, जड़ समेत उखड़े।।२१।।

ओरछा के राजा ने खटोला गाँव पर अधिकार कर लिया था। श्री राज जी के आदेश से ओरछा का राजा युद्ध में परास्त हुआ और जड़ समेत उसका विनाश हुआ।

फेर जेतपुर के राजा ने, मुहिम करी।
ताको खुवार ऐसा किया, पूरी लानत उतरी।।२२।।

पुनः जैतपुर के राजा ने छत्रशाल जी के विरूद्ध युद्ध किया। श्री राज जी के आदेश से उसे बुरी फटकार मिली और उसका पूरी तरह से विनाश हो गया, अर्थात् अपनी सारी सेना सहित वह मारा गया।

फेर ओरछे के राजा का, आया दौवा खटोला पर।
खुवार हुआ भली भाँत सों, फिरया स्याह मोंह लेकर।।२३।।

ओरछा के राजा के पास बोधन दौआ नामक एक योद्धा था। उसने विशाल सेना लेकर खटोला पर आक्रमण कर दिया। वह युद्ध में बुरी तरह से परास्त हुआ और काला मुँह लेकर वापस भाग गया।

फेर राजा के मुलक लिए की, पहुंची खबर नौरंगाबाद।
सुन साह ने रणमस्त खां को, फौज लेके भेजा विवाद।।२४।।

औरंगाबाद में औरंगज़ेब के पास जब यह सूचना पहुँची कि छत्रशाल जी ने उसके राज्य के कई भागों को जीत लिया है, तो उसने रणमस्त खाँ को एक बहुत बड़ी सेना देकर छत्रशाल जी से युद्ध करने भेजा।

पीछे से पीरजादे में होए के, भई ईसारत रसूल की जब।
तां समें विचार करके, लिखा किया साह ने तब।।२५।।

मिट्ठू पीरजादे की हार के पश्चात् औरंगज़ेब छत्रशाल जी की वीरता से बहुत चिन्तित रहने लगा था। एक दिन उसे स्वप्न में रसूल मुहम्मद (सल्ल.) के द्वारा सन्केत किया गया कि वह छत्रशाल जी से युद्ध करना बन्द कर दे। तब उस पर विचार करके उसने रणमस्त खाँ को वापस लौटने के लिए पत्र लिखा।

भावार्थ– कालपी के मौलवियों के द्वारा भेजे हुए

महज़रनामे तथा श्रीजी के द्वारा भेजे गये "जामिल मारिफत" से औरंगज़ेब इतना प्रभावित हो गया था कि उसने बहादुर खाँ के द्वारा रणमस्त खाँ को ग्वालियर से वापस बुलवा लिया।

स्वप्न में औरंगज़ेब बादशाह ने देखा कि खुदा के दरबार में सारा संसार खड़ा है और उसमें महाराजा छत्रशाल जी सबसे आगे खड़े हैं। इस स्वप्न के टूटने के पश्चात् औरंगज़ेब बादशाह समझ गया कि इसमें मुहम्मद (सल्ल.) की प्रेरणा है कि छत्रशाल जी के समान कोई नहीं हो सकता, इसलिए मुझे अब उनसे युद्ध नहीं लड़ना चाहिए।

सात मजल रनमस्त खां, गया था चल के ले हुकम।
लिखा परवाने में तुमको, उहां से फेर आइयो तुम।।२६।।

बादशाह के आदेश से रणमस्त खाँ एक बहुत बड़ी सेना

लेकर सात पड़ाव ठहरकर आ चुका था, लेकिन बादशाह ने अपने आदेश पत्र में रणमस्त खाँ को लिखा कि तुम वहीं से वापस लौट आओ।

फेर रनमस्त खां ने, पातसाह के हुकम।
सात मजल आइया, लिखा के फेर आओ तुम।।२७।।

बादशाह के आदेश से रणमस्त खाँ सेना के साथ सात पड़ाव आ चुका था, किन्तु बादशाह ने उसे वापस लौट आने के लिए पत्र लिखा।

फेर पंडित ओरछे के, चढ़ आए लड़ने।
तब मारा मुलक ओरछे का, मुस्किल हुआ रखना अपने।।२८।।

ओरछा का पण्डित (मन्त्री) विशाल सेना के साथ छत्रशाल जी से लड़ने के लिए आ गया। तब महाराज

छत्रशाल जी के आक्रमण से ओरछा राज्य का विनाश हो गया और वहाँ के लोगों के लिए उसे सुरक्षित रख पाना कठिन हो गया।

दौआ और पंडित पर, भया कसाला जोर।
विघन पड़े उतहीं, किया दज्जालों सोर।।२९।।

दौआ और ओरछा के पण्डित (मन्त्री) को बहुत अधिक कष्ट सहना पड़ा। शैतान (कलियुग) के वशीभूत होकर जिसने भी श्रीजी या छत्रशाल जी के ऊपर बुरी दृष्टि की, उसे विघ्न रूपी अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा और वह कभी भी सफल नहीं हो पाया।

फेर राणा परताप सिंह नें, बुरी करी नजर।
तो ख्वारी आपस में भई, है कयामत की फजर।।३०।।

इसके पश्चात् राणा प्रताप सिंह ने महाराजा छत्रशाल जी पर बुरी नजर की। इस पाप के परिणामस्वरूप, पड़ोसी राज्य से आपसी लड़ाई में ही वह नष्ट हो गया। कुरआन में इसे ही कियामत की फ़ज़र कहा है, अर्थात् सबको अखण्ड मुक्ति देने वाले तारतम ज्ञान के प्रकाश में अक्षरातीत के प्रेम की राह पर चलने वाले ब्रह्ममुनियों से जो दुर्व्यवहार करेगा, वह अपने इस पाप के कारण कष्ट भोगेगा।

जिनों जिनों जैसी करी, तिन सजा पाई तित।
जैसी जैसी जिनों करी, ताए मारा उसी बखत।।३१।।

उस समय जिसने-जिसने जिस प्रकार का जैसा बुरा कर्म किया, उसके अनुसार उसको सजा मिली। जिसने जैसी-जैसी करनी की, श्री राज जी के आदेश से उसी

समय उसको दण्ड मिल गया।

मरनें के बखत में, दज्जाल पटकत हाथ।

खुवार किया संसार को, जादा जो उनके साथ।।३२।।

दज्जाल (कलियुग) स्वरूप जिन–जिन लोगों ने श्रीजी के प्रति दुर्व्यवहार किया, उन्होंने अपने विनाश के समय बहुत अधिक शोर मचाया। दज्जाल के चँगुल में जो लोग ज्यादा आ गए, उन्होंने इस संसार को दुःखी ही किया है।

भावार्थ– "हाथ पटकना" एक मुहाविरा है, जिसका अर्थ होता है, असहाय अवस्था में तड़पना। अपने बुरे विचारों के कारण श्रीजी के साथ जिन्होंने दुर्व्यवहार किया, जब उनका विनाश होने लगा तो वे घबराने लगे। इसी को दज्जाल का "हाथ पटकना" कहा गया है।

दज्जाल की छाती कही, दूध पीवे तिन सें।

सो खुवारी उन से, रहे परेसानी में।।३३।।

दज्जाल की छाती इतनी कठोर होती है कि वह उससे दूध पीता है, अर्थात् दुष्प्रवृत्ति वाले लोगों में किसी तरह की दया की भावना नहीं होती। ऐसे लोग परेशानी में रहते हैं और विनाश का कारण बनते हैं।

भावार्थ– दज्जाल की छाती से दूध पीना एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य है दज्जाल के द्वारा चमत्कार दिखाना, अर्थात् दज्जाल सबको अपनी इस बात से गुमराह करता है कि मैं जिसे चाहूँ जिन्दा कर सकता हूँ या मार सकता हूँ। इस प्रकार, वह भौतिक चमत्कारों के द्वारा लोगों को अपनी ओर आाकर्षित करके परब्रह्म से दूर कर देता है। वह स्पष्ट कहता है कि मैं ही अल्लाह तआला हूँ, और जो मुझे खुदा मानकर पूजेगा उसे जन्नत मिलेगी, और जो

मुझे खुदा मानकर नहीं पूजेगा उसको दोजख की अग्नि में जलाया जाएगा। इस चौपाई में कथित दज्जाल के द्वारा छाती से दूध पीने का यही भाव है।

उजाड़ सब सहरों का, काहू होए न आराम।
सब परेसान होएंगे, अपने अपने काम।।३४।।

शैतान प्रवृत्ति वाले लोगों को कभी सुख नहीं मिलता। वे जिस नगर में रहते हैं, वहाँ विनाश ही होता है। इस तरह की प्रवृत्ति वाले लोग अपने बुरे कर्मों से हमेशा दुःखी होते रहते हैं।

बलाए जो उतरी, सो दफे होए मोमिनों की बरकत।
सो ठंडी हो जात है, पड़े उम्मत दज्जाल तित।।३५।।

संसार में जो भी कष्ट होते हैं, वे ब्रह्ममुनियों के प्रभाव से

दूर हो जाते हैं। जहाँ ब्रह्मसृष्टि के चरण कमल होते हैं, वहाँ दज्जाल के द्वारा डाली गयी विपत्तियाँ शान्त हो जाती हैं।

पनाह बीच मोमिन रहे, हक सुभान नजर।
इनों को लेलत कदम की, होए गई फजर।।३६।।

श्री राज जी की मेहर भरी नजरों के सामने ब्रह्ममुनि रहते हैं और वे उनकी रक्षा करते हैं। लैल–तुल–कद्र के तीसरे तकरार में तारतम वाणी ने इनके हृदय में परमधाम का उजाला कर दिया है।

ए बैठे अपने ठौर में, करते हैं जिकर।
फिरस्ते चौकी देत हैं, बलाए उड़ावें कर फिकर।।३७।।

इनके मूल तन परमधाम में हैं और स्वाप्निक तन से ये

जहाँ भी रहते हैं, केवल श्री राज जी की ही बातें करते हैं, संसार की नहीं। सभी देवी–देवता इनकी सुरक्षा के लिए पहरे देते हैं और आने वाली आपत्तियों को सावधानीपूर्वक हटा देते हैं।

हकें दई मोमिनों को, अपनी जो पहिचान।
नबूबत रसालत इनको, पूरा पाया ईमान।।३८।।

धाम धनी ने ब्रह्मात्माओं को अपनी पूरी पहचान दी है। इनके अन्दर धनी के प्रति अटूट ईमान होता है। धनी ने इन्हें आध्यात्मिक क्षेत्र का निर्देश देने (नबूवत) और परमधाम के ज्ञान का सन्देश देने की शोभा दी है।

एही सुंनत जमात हैं, गिरोह रब्बानी जे।
इनको दाना हकें किया, अपना इलम दे।।३९।।

इन ब्रह्ममुनियों के समूह को यथार्थ में रसूल मुहम्मद (सल्ल.) के दर्शाये हुए मार्ग का अनुसरण करने वाला कहा गया है। ये परब्रह्म के अंगरूपा हैं। धाम धनी ने इन्हे तारतम ज्ञान का प्रकाश देकर आध्यात्मिक क्षेत्र का गहन विद्वान बना दिया है।

भावार्थ– मुहम्मद साहिब की यह भविष्यवाणी है कि कियामत के समय में अवतरित होने वाले मोमिन (ब्रह्ममुनि) अहले सुन्नत वल जमात से होंगे, अर्थात् मेरे द्वारा दर्शाये गये सुफी दर्शन के अनुयायी होंगे। जिहाद के नाम पर जिस प्रकार यजीद की कट्टरवादी विचारधारा का प्रसार हो रहा है, वह इस्लाम की मूल भावना के पूर्णतया विपरीत है।

साहिदी खुदाए की, कही गिरोह देवन हार।

एही अरस अजीम से, ए सब खबरदार।।४०।।

ब्रह्ममुनियों का यह समूह ही एकमात्र खुदा की पहचान की साक्षी दे सकता है। एकमात्र ये ही परमधाम से आए हैं और ये ही वहाँ की सारी बातों को जानते हैं।

जबराईल वकीली, करत सब ऊपर।

साफ दिल रखे इनको, सब पावत ए पटन्तर।।४१।।

ब्रह्ममुनि अक्षरातीत के अंग हैं। इसलिए धनी के जोश का फरिशता जिबरील भी इन्हीं का पक्ष लेता है, अर्थात् जीवों की अपेक्षा केवल इन्हीं की तरफ अपना ध्यान केन्द्रित किए रहता है। सब ब्रह्ममुनियों को यह रहस्य मालूम है कि जिबरील उन्हें मायावी बन्धनों में फँसने नहीं देता और उनके दिल को साफ रखता है।

सात निसान बड़े कहे, जिनसे होए कयामत।

सो इतसे पावे खलक, जो इत कादर बकसत।।४२।।

कियामत के सात बड़े-बड़े निशान कहे जाते हैं, जिनसे कियामत के आने की पहचान होती है। सारे संसार को इन निशानों की पहचान ब्रह्मसृष्टियों से ही होती है। धाम धनी ने यह ज्ञान एकमात्र इन्हीं को ही दिया है।

विरोध सारी विस्व का, भान किया एक दीन।

सबको सबों समझाए के, एही देवे आकीन।।४३।।

इन ब्रह्मात्माओं ने सारे संसार के मतों (मज़हबों) के आपसी विरोध को समाप्त करके एक सत्य निजानन्द का मार्ग प्रस्तुत किया है। वे सभी मतावलम्बियों को उन्हीं के धर्मग्रन्थ से एक यथार्थ सत्य पर विश्वास दिलाते हैं।

रूहें फिरस्ते उतरे, सोई अरस वारस।

बानी अक्षरातीत की, इनों से सुने सरस।।४४।।

परमधाम तथा अक्षरधाम से ब्रह्मसृष्टि तथा ईश्वरीय सृष्टि इस मायावी जगत का खेल देखने आयी है। जीव सृष्टि को अक्षरातीत की मधुर तारतम वाणी को सुनने का सौभाग्य इन्हीं से प्राप्त होता है।

आठों भिस्त आखर की, पाई इनों की बरकत।

आखर खाविन्द करेगा, इन खातर उठे कयामत।।४५।।

इन ब्रह्ममुनियों की कृपा से ही सातवें दिन की लीला में आठों बहिश्तें योगमाया में अखण्ड की जायेंगी। इन ब्रह्मसृष्टियों की महिमा बढ़ाने के लिए ही श्री प्राणनाथ जी (आखिरी जामने के खावन्द) सभी जीवों को योगमाया में अखण्ड करेंगे।

भावार्थ– कियामत आने का तात्पर्य है, अखण्ड मुक्ति देने वाले परमधाम के तारतम ज्ञान का अवतरण, जबकि इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "कियामत के उठने" का तात्पर्य है, संसार के जीवों का योगमाया के ब्रह्माण्ड में अखण्ड नूरी तनों को धारण करना।

इनों की सिफत सब्द में, आवत नहीं जुबाए।
त्रिगुन रोए पीछे फिरे, इन की खूबी सुन श्रवनाए।।४६।।

इन ब्रह्ममुनियों की महिमा को किसी की भी जिह्वा से शब्दों में नहीं कहा जा सकता। इनकी महिमा को कानों से सुनकर, इनकी सामीप्यता पाने के लिए, त्रिदेव भी रोते हुए इस खेल के खत्म होने पर योगमाया में अखण्ड हो जायेंगे।

भावार्थ– जब योगमाया के ब्रह्माण्ड में न्याय की लीला

होगी, तो उस समय यह सारा ब्रह्माण्ड योगमाया के अन्दर अखण्ड दिखायी देगा। त्रिदेव हम ब्रह्मसृष्टि के जीवों के अखण्ड तनों और उनकी शोभा तथा महिमा को देखकर इस बात पर पश्चाताप के आँसू बहायेंगे कि ये ब्रह्ममुनि हमारे ही संसार में आए थे, किन्तु हम इनकी सामीप्यता का पूरी तरह से लाभ नहीं ले पाए।

महामत कहें ए मोमिनों, याद करो सुकराना।
मेहर करी तुम ऊपर, तुम्हारी सिफत करो सुभाना।।४७।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आप अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को इस बात के लिए धन्यवाद दीजिए कि वे आपके ऊपर पल-पल अपार मेहर कर रहे हैं और अपने श्रीमुख से आपकी महिमा गाते हैं, जबकि सारा संसार उनकी महिमा गाता है।

प्रकरण।।६१।। चौपाई।।३५७४।।

।। नौतनपुरी से लेकर पद्मावती पुरी धाम तक की बीतक सम्पूर्ण हुई ।।

निजनाम श्रीजी साहिब जी, अनादि अक्षरातीत।

सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहित।।

मंगलाचरण

मंगलाचरण का तात्पर्य है– ग्रन्थकार के द्वारा अपना सम्पूर्ण अस्तित्व परब्रह्म के प्रेम में समर्पित कर देना, जिससे उनकी छत्रछाया में रचा जाने वाला ग्रन्थ सबके लिए मंगलकारक हो।

पद्मावतीपुरी धाम में श्री जी साहिब जी (श्री प्राणनाथ जी) को सब सुन्दरसाथ ने साक्षात् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत मानकर परमधाम के भाव से आठों प्रहर सेवा करके जिस प्रकार रिझाया, उसका सचित्र वर्णन अब होने जा रहा है।

श्री श्रीजी की आठ पहर की वृत्त जो श्री पद्मावती पुरी में भई सो सुरू।

अव्वल हक के दिल में, खेल दिखाऊं रूहन।

इस्क रबद खिलवत की, बातां करें सैंयन।।१।।

मूल स्वरूप अक्षरातीत ने सबसे पहले अपने दिल में लिया कि मैं अपनी अँगनाओं को माया का खेल दिखाऊँ क्योंकि परमधाम में अनादि काल से सखियों और श्री राज श्यामा जी के बीच में प्रेम का यह संवाद चल रहा था कि हमारा प्रेम बड़ा है और हम ही आपको रिझाते हैं।

भावार्थ– तारतम वाणी के इस कथन "दायम होत विवाद" से यह सिद्ध है कि इश्क रब्द (अधिक प्रेम का दावा) का संवाद परमधाम में अनादि काल से चल रहा था। उसका निर्णय करने तथा अपने स्वरूप की पूर्ण

पहचान (मारिफत) देने के लिए धाम धनी ने सखियों को माया का खेल दिखाने की इच्छा की। इसी प्रकार अक्षर ब्रह्म के हृदय में श्री परमधाम की लीला देखने की इच्छा पैदा कर दी।

चाह करें खेल देखने, मैं बरजो तीन बेर।
त्यों त्यों मांगे फेर फेर, रबद चढ़ी सिर मेर।।२।।

तुमने माया का खेल देखने की इच्छा की थी और मैंने तुम्हें तीन बार मना किया था। मैं जितना ही मना करता था, उसी अनुपात में तुम बार-बार खेल को माँगते थे। यह बहस इतनी बढ़ गयी कि सुमेरु पर्वत से भी ऊँची हो गयी अर्थात् बहुत अधिक हो गयी।

भावार्थ- इस चौपाई के दूसरे चरण में कथित "मैं" शब्द का प्रयोग "श्रीजी" के द्वारा किया गया है, जो

बँगला जी दरबार में सुन्दरसाथ को सम्बोधित करते हुए कह रहे हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बँगला जी दरबार में विराजमान श्रीजी ही वे पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द हैं, जिनसे परमधाम में इश्क रब्द हुआ था। तारतम वाणी का यह कथन इसी ओर संकेत कर रहा है–

तुमहीं उतर आए अर्स से, इत तुमहीं कियो मिलाप।
तुमहीं दई सुध अर्स की, ज्यों अर्स में हो आप।।

सिनगार २३/३१

नर नारी बूढ़ा बालक, जिन इलम लिया मेरा बूझ।
तिन साहेब कर पूजिया, अर्स का एही गुझ।।

किरंतन १०९/२१

आगे की तीसरी चौपाई में भी यही प्रसंग है।

देख्या ब्रजरास को, तीसरे जो हिसाब।

आए मेरे आगे बातें करे, लेकर बड़ा सवाब।।३।।

तुमने व्रज–रास की लीला देखने के पश्चात् परमधाम में जाग्रत होकर इश्क रब्द का निर्णय करने हेतु तीसरे ब्रह्माण्ड में आने की भूमिका बनायी। वहाँ पर तुम बार–बार आकर मेरे आगे यही कहते थे कि व्रज–रास में आपकी माया ने क्या कर लिया?

भावार्थ– यद्यपि "सबाब" का अर्थ पुण्य होता है, किन्तु इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "सबाब" शब्द से आशय इस भाव में है कि सखियों के ऊपर माया का विशेष प्रभाव नहीं पड़ा था और वे व्रज तथा रास में धनी के प्रेम में डूबी रहीं, जबकि धनी ने कहा था कि तुम माया में मुझे बिल्कुल भूल जाओगी। उसी का निर्णय (हिसाब) करने के लिए ही यह खेल बनाया गया है।

तब लिया हकें दिल में, ए जो चौदह तबक।

तिन में जम्बूद्वीप में, भरत खण्ड बुजरक।।४।।

तब श्री राज जी ने अपने दिल में लिया कि इस माया के खेल में सखियों को पुनः भेजना है। चौदह लोकों के इस ब्रह्माण्ड में जम्बू द्वीप के अन्तर्गत भरतखण्ड सबसे अधिक पवित्र है।

तिनमें बिसेख देख के, ए जो खण्ड बुन्देल।

काएम सिफत तिन की, जो तीसरा तकरार लेल।।५।।

उसमें भी बुन्देलखण्ड को विशेष देखकर जागनी लीला की अपनी राजधानी बनाया। लैल-तुल-कद्र के तीसरे तकरार (महिमावान रात्रि के तीसरे भाग) में होने वाली जागनी लीला का केन्द्र भी यही स्थान रहा है, इसलिए इसकी महिमा अखण्ड कही गयी है।

तामें सिरे सिरदार की, ए जो परना ठौर।

तिनमें सिफत छत्रसाल की, नहीं पटन्तर और।।६।।

बुन्देलखण्ड में भी सर्वश्रेष्ठ स्थान पन्ना जी है, जिसमें महाराजा छत्रशाल जी के अन्दर विराजमान साकुण्डल की महिमा से अन्य किसी की तुलना नहीं की जा सकती।

मिलावा सैयन का, तामें हुकम सिरदार।

हकी सूरत धनीए की, करें ब्रह्मसृष्टि सों प्यार।।७।।

परमधाम की आत्माओं की इस जागनी लीला में श्री राज जी का आवेश ही हुक्म के रूप में सब कुछ कर रहा है। श्री प्राणनाथ जी का स्वरूप धाम धनी का ब्राह्मी स्वरूप (हकी सूरत) है और वे परमधाम की आत्माओं से प्रेम करते हैं।

इन सरूप की इन जुबां, कही न जाए सिफत।

सब्दातीत के पार की, सों कहनी जुबां हद इत।।८।।

श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की महिमा को इस जिह्वा से कभी भी व्यक्त नहीं किया जा सकता। बेहद से भी परे परमधाम का यह स्वरूप श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान होकर लीला कर रहा है, जिसकी महिमा को इस नश्वर जगत में यहाँ के शब्दों में कहने का प्रयास किया जा रहा है।

सागर सुख अनगिनती, पल पल लेत सैयन।

जो सेवा में सामिल, करते जो इन तन।।९।।

परमधाम में अक्षरातीत की लीला का सुख अनन्त सागर के समान है, जिसका पल-पल रसपान सखियाँ किया करती हैं। उन्हीं अक्षरातीत को इस संसार में श्री

प्राणनाथ जी के रूप में पाकर, जिन्हें इस तन से सेवा में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, उन्हें यहीं बैठे-बैठे परमधाम के सुख जैसा ही अनुभव हुआ।

एक पल सेवन की, सुख आवे न इन जुबान।
लिखा अग्यारह सौ बरस का, ए लिया जिन ईमान।।१०।।

जिन्होंने श्रीजी को पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द के रूप में मानकर एक पल भी सेवा कर ली, उन्हें इतना सुख प्राप्त हुआ कि उसका वर्णन इस जिह्वा से नहीं किया जा सकता। इस बात को ११०० वर्ष पहले ही मुहम्मद (सल्ल.) ने कुरआन में लिख रखा है, किन्तु जिन्होंने श्री प्राणनाथ जी को अक्षरातीत मानकर सेवा की, उन्हें ही यह सुख प्राप्त हो सका।

भावार्थ- उपरोक्त चौपाइयों को पढ़कर उन सुन्दरसाथ

को आत्म–मन्थन करना चाहिए, जिनमें श्री प्राणनाथ जी को सन्त, आचार्य, कवि, गुरू, या शिष्य कहने की होड़ मची हुई है।

स्थिति उस समय और विकट हो जाती है, जब यह कहा जाता है कि जो कार्य हमने किया वह श्री प्राणनाथ जी भी नहीं कर सके, या जितनी भाषायें हम जानते हैं श्री प्राणनाथ जी उतनी भाषायें नहीं जानते थे, या जितने देशों में हम घूमे हुए हैं उतने देशों में वे भी नहीं घूमे, या श्री प्राणनाथ जी से अधिक जागनी हमने की है। प्रश्न यह है कि इस प्रकार की विकृत मानसिकता समाज को क्या सन्देश देना चाहती है?

तिन सैयों की सिफत, क्यों सके कोई कर।

पर हुकम कहेवे धनी का, ए सिफत सब ऊपर।।११।।

जिन सुन्दरसाथ ने प्रियतम अक्षरातीत की सेवा में स्वयं को समर्पित कर दिया, उन सुन्दरसाथ की भी महिमा का वर्णन कोई कैसे कर सकता है? किन्तु धाम धनी का आदेश मुझसे ऐसा कहलवा रहा है। इन ब्रह्ममुनियों की महिमा सर्वोपरि है।

तामें सेवा कर जो संग चले, ताकी सुमार न आवे सिफत।
एतो भई बका मिने, ए कहनी जुबां हद इत।।१२।।

जिन सुन्दरसाथ ने, पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत श्रीजी की सेवा करते हुए, अपना तन भी उनके चरणों में छोड़ दिया, उनकी महिमा की कोई सीमा नहीं है। उनकी सेवा की यह शोभा परमधाम में हमेशा के लिए अखण्ड रहेगी, जिसे इस नश्वर जगत की जिह्वा से मुझे कहना पड़ रहा है।

पर आज्ञा कहावत है, इत मैं तें कछुए नाहिं।

सैयन मिलावे मिने, याद ल्यावें दिल माहिं।।१३।।

किन्तु धाम धनी का आदेश ही मेरे तन से यह कहलवा रहा है। ऐसी अवस्था में मैं और तुम तो कुछ हैं ही नहीं, अर्थात् सब कुछ श्री राज जी ही कर रहे हैं। छठे दिन की लीला में जो सुन्दरसाथ जाग्रत होगा, वह अष्ट प्रहर की सेवा के इस वर्णन को पढ़कर अपने दिल में याद रखेगा।

जो याद करें यकीन सों, सो बैठे बका बीच धाम।

सो दोऊ लोक में सिफत, होवे पूरन मनोरथ काम।।१४।।

जो श्री प्राणनाथ जी को अक्षरातीत मानकर अष्ट प्रहर की इस लीला को अपने दिन में बसाए रखेगा, उसकी सुरता अखण्ड परमधाम में विचरण किया करेगी। वह इस लोक में भी धन्य-धन्य होगा और परमधाम में भी, तथा

इस संसार में उसकी सारी कामनायें भी पूर्ण हो जाएंगी।

भावार्थ– श्री पद्मावती पुरी धाम में होने वाली अष्ट प्रहर की लीला को जो आत्मसात् कर लेगा, वह उन ब्रह्ममुनियों के पद चिन्हों पर चलने का प्रयास अवश्य करेगा, जिन्होंने अपना पल–पल धाम धनी की सेवा और प्रेम में लगा दिया। उनकी यह प्रवृत्ति धनी की मेहर की छाँव तले परमधाम के २५ पक्षों में विचरण कराएगी।

साका विजयाभिनन्द का, बरस एक हजार नब्बे।
सम्बत सत्रह सै पैंतीस में, पहुंची सरत जो ए।।१५।।

जब वि.सं. १७३५ का समय था, उस समय हिज़री १०९० का समय चल रहा था। तभी से हरिद्वार में विजयाभिनन्द बुद्ध जी शाका प्रारम्भ हुआ।

साके पांच परना मिनें, हुकम स्यामा जी श्री देवचन्द्र जी सामिल।

दावत करी जाहिर, भई सकुण्डल सामिल।।१६।।

बुद्ध जी शाका के पाँच वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् श्रीजी सब सुन्दरसाथ सहित पन्ना में पधारे। उनके धाम हृदय में श्री राज जी का आवेश हुक्म के रूप में लीला कर रहा है तथा उनके अन्दर श्री श्यामा जी भी हैं जिन्होंने श्री देवचन्द्र जी के अन्दर विराजमान होकर लीला की थी। श्री प्राणनाथ जी ने सारे संसार को तारतम ज्ञान के प्रकाश में अखण्ड मुक्ति पाने का निमन्त्रण दिया। जागनी के इस महान कार्य में महाराजा छत्रशाल जी (साकुण्डल) भी शामिल हुए।

बेवरा तीन सूरत का, जुदे हवाले जुदे काम।

एक हुकम जोस एक आतम, पहुंचे एके बखत मुकाम।।१७।।

तीन सूरतों का ब्योरा इस प्रकार है कि इन तीनों को अलग-अलग कार्यों का उत्तरदायित्व दिया गया है। बशरी सूरत में धनी का हुक्म और जोश था, मलकी सूरत में श्री श्यामा जी की आत्मा थी, तथा हकी सूरत में दोनों सूरतों की सारी शक्तियाँ थीं। इन तीनों ने इस जागनी ब्रह्माण्ड में अपनी सुरता (आत्मिक दृष्टि) द्वारा मूल मिलावे में पहुँच कर धनी का दीदार किया।

भावार्थ- इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "हुक्म" शब्द का विशेष अर्थ है। बशरी सूरत में अक्षर की आत्मा और धनी का जोश था। यह वही स्वरूप है, जो व्रज-रास की लीला कर चुका था।

तहां रास लीला करके, आए बरारब स्याम।

त्रेसठ बरस तहां रहे, वायदा किया इस ठाम।।

बीतक ७१/८४

प्रायः भ्रान्तिवश अरब वाले स्वरूप के अन्दर श्यामा जी की आत्मा का होना माना जाता है, जो उचित नहीं है क्योंकि इसी प्रकरण की ३३वीं चौपाई में भी कहा गया है–

हुक्म के अमल में, न कोई उतरे मोमिन।

बीतक ६२/३३

इसी प्रकार खुलासा में भी कहा गया है–

रूहें गिरोह तब इत आई नहीं, तो यों करी सरत।

कह्या खुदा हम इत आवसी, फरदा रोज कियामत।।

खुलासा २/२८

जब अरब में ब्रह्मसृष्टियाँ ही नहीं आयीं, तो श्यामा जी ब्रह्मसृष्टियों को परमधाम में अकेले छोड़कर कैसे आ सकती हैं? इस कथन की पुष्टि में सनद ग्रन्थ की एक चौपाई दी जाती है–

मुहम्मद कहे मैं हुकमें, सब रूहें मुझ माहे।

मैं चल्या अर्स मेअराज को, पर पहुँच न सक्या नांहें।।

सनंध ४१/६३

किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो आगे की चौपाई यह स्पष्ट करती है कि यह प्रसंग अरब वाले स्वरूप के लिए नहीं, बल्कि मलकी सूरत के लिए है–

मैं ल्याया धनीय की, इसारतें जिन खातिर।

सो ताला अजूं खुल्या नहीं, तो मैं पोहोचों क्यों कर।।

सनंध ४१/६४

इस चौपाई के दूसरे चरण में "इसारतें" शब्द का तात्पर्य कुरआन की इसारतें नहीं है। सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी परमधाम की शोभा–श्रृंगार का वर्णन अवश्य करते थे, लेकिन मारिफत का इल्म अभी अवतरित नहीं हुआ था। इसलिए उस समय की चर्चा को इसारत, अर्थात् संकेत,

कहकर सम्बोधित किया गया है। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी का यह कथन देखने योग्य है–

ब्रह्मसृष्टि हुती व्रज रास में, पर प्रेम हुतो लक्ष बिन।
सो लक्ष अव्वल को ल्याये रूह अल्ला, पर न था आखिरी इलम पूरन।।
जो लो कै मुतलक इलम न आखिरी, तोलों क्या करे खास उम्मत।
पहचान करनी मुतलक, जो गैब हक खिलवत।।

श्रृंगार १/४७,४८

यद्यपि वि.सं. १६७८ में श्यामा जी को भी दर्शन हो गया था और १७१५ में श्री इन्द्रावती जी की आत्मा को भी हब्से में दर्शन हो गया था, लेकिन यहाँ जिस मेअराज (पूर्ण दर्शन) की बात कही जा रही है, वह श्यामा जी के स्वामित्व के ४० वर्ष के प्रारम्भ होने के समय १७३५ से प्रारम्भ होता है। इस सम्बन्ध में कियामतनामा का यह कथन देखने योग्य है–

"बरस निन्यानवे कही हुरम।" (बड़ा कया.१५/२)

वि.सं. १६३८ में श्री देवचन्द्र जी का जन्म होता है। १६३८ + ९९ अर्थात् १७३७ के बाद जब खिल्वत, परिक्रमा, सागर, श्रृंगार की वाणी अवतरित होती है, तो परमधाम की खिलवत, निसबत, और वाहदत की मारिफत का ज्ञान अवतरित होता है, इसी को श्रृंगार ग्रन्थ के दूसरे प्रकरण में कहा गया है कि हुक्में इश्क का द्वार खोल्या है। इसके पहले यह द्वार न बशरी सूरत से खुला था और न मलकी सूरत से।

इस आखिरी इल्म (मारिफत) के खुलने के पश्चात्, सब सुन्दरसाथ के लिए भी परमधाम का दरवाजा खुल गया। इस अवस्था से पहले श्यामा जी की आत्मा को भी पूर्ण रूप से जाग्रत नहीं कहा गया है, क्योंकि कलश हिन्दुस्तानी में कहा गया है–

आवेस जाको मैं देखे पूरे, जोगमाया की नींद होय।

कलश हि. २३/४६

यह निद्रा १७३५ के पश्चात् समाप्त होती है, जब खिल्वत, परिक्रमा, सागर, और श्रृंगार के अवतरण के पश्चात् सबके लिए परमधाम का द्वार खुल गया है। इसे ही पूर्ण मेअराज की संज्ञा दी गयी है।

आगे की चौपाई में भी इसी कथन को सार्थक कर दिया है-

ताला द्वार कजाए का, आए खोलसी जब।

कयामत रोसन करके, मिल भेजे चलसी तब।।

बाईजीएं घर चलते, जाहिर कहे वचन।

आड़ी खड़ी इन्द्रावती, है इनके हाथ जागन।।

सनंध ४१/६५,६६

बीतक की उपरोक्त चौपाई में अरब में आने वाले स्वरूप को हुक्म का स्वरूप इसलिए कहा है, क्योंकि धाम धनी ने इस स्वरूप को जो कार्य करने का निर्देश दिया था, उसे पूरा करना था। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी प्रकाश डालती है–

रसूल आया हुक्में, तब नाम धराया गैन।
हुकम बजाय पीछा फिरया, तब सोई ऐन का ऐन।।

सनंध ३६/६२

यद्यपि तीन सूरतों को चालीस साल की उम्र में धनी का दीदार होता है, किन्तु यहाँ मूल आशय इस जागनी ब्रह्माण्ड से है, क्योंकि धनी का दीदार तो किसी भी अवस्था में हो सकता है।

धनी हजूर पहुंच तीनों, भई मजकूर तिन से।
सुने हरफ नब्बे हजार के, सब रोसनी इनसे।।१८।।

इन तीनों स्वरूपों की सुरता परमधाम में पहुँची। इन तीनों ने धाम धनी से आत्मिक रूप से बातें की और धनी से ९० हजार हरूफों में समाहित ज्ञान को सुना। इस प्रकार परमधाम का सारा ज्ञान इन तीनों सूरतों में विद्यमान हो गया।

भावार्थ– धाम धनी से मुहम्मद साहिब ने ९० हजार हरूफों में ज्ञान सुना, किन्तु अरब में उन्होंने शरीअत का ज्ञान दिया। तरीकत का ज्ञान केवल हज़रत अली को मिला, जिसने बाद में सूफी मत का रूप ले लिया। हकीकत का ज्ञान अल्प मात्रा में १२ हरूफ –ए– मुक्तेआत के रूप में अवतरित हुआ। इसी प्रकार सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के द्वारा परमधाम की हकीकत का

ज्ञान तो उतरा, किन्तु मारिफत का ज्ञान नहीं उतरा। मारिफत का ज्ञान केवल हकी सूरत के द्वारा महा श्रृंगार ग्रन्थ के रूप में अवतरित हुआ।

बसरी मलकी और हकी, ए हुकम तीन सूरत।
तिन दई हैयाती दुनी को, करी सैयन वास्ते सरत।।१९।।

बशरी, मलकी, हकी– ये श्री राज जी के हुक्म की तीन सूरतें, कुरआन के सूरः मरिअम पाराः १६ में वर्णित हैं। इन तीनों ने परमधाम के अपने ज्ञान से संसार के जीवों को अखण्ड मुक्ति दी। बसरी सूरत ने ब्रह्मसृष्टियों के लिए पुनः आने का वायदा किया।

भावार्थ– हुक्म का तात्पर्य श्री राज जी के दिल की इच्छा होती है। ब्रह्मसृष्टियों के लिए धाम धनी ने इन तीन स्वरूपों को धारण किया। इसलिए इन तीनों स्वरूपों को

हुक्म का स्वरूप या हुक्म की सूरत कहते हैं और तीनों के साथ "मुहम्मद" शब्द का प्रयोग होता है। जब मुहम्मद मुस्तफा का जन्म नहीं हुआ था, तब भी मुहम्मद अर्थात् श्री राज जी का हुक्म या इच्छा थी। इस सम्बन्ध में एक हदीस में कहा गया है–

"अनामिन् नूरिल्लाह कुल शैअं मिन्नूरी" अर्थात् मैं अल्लाह के नूर से हूँ और तमाम दुनियाँ मेरे से है। "अव्वल मा खलिकुल्लाह नूरी" अर्थात् दुनियाँ बनाने से पहले मेरा नूर बनाया गया।

आई एक हजारें, सूरत जो बसरी।
दूसरी दसमी सदी मिने, निजधाम से उतरी।।२०।।

मलकी सूरत से हजार वर्ष पहले, बसरी सूरत मुहम्मद (सल्ल.) के रूप में अवतरित हुई। दूसरी सूरत में श्यामा

जी की आत्मा थी। वह दसवीं सदी में परमधाम से मारवाड़ में अवतरित हुई।

तीसरी जो हकी कही, तिन आई वारसी दोए।
मता तीन सूरत का, किया हुकमें जाहिर सोए।।२१।।

तीसरी हकी सूरत श्री प्राणनाथ जी के रूप में अवतरित हुई। इसमें पूर्व की दोनों सूरतें समाहित हो गयीं। इस प्रकार धाम धनी ने अपने हुक्म के द्वारा तीनों सूरतों के रूप में परमधाम का ज्ञान संसार में अवतरित किया।

भावार्थ– हकी सूरत में किस प्रकार दोनों सूरतें समाहित हो गयीं, इसका वर्णन कियामतनामा में बड़े ही मनोरम ढंग से किया गया है–

अव्वल खूबी अल्ला कलाम, दूजी खूबी गिरोह इसलाम।
तीसरी खूबी तीन हादी वजूद, आखिर आए बीच जहूद।।

कियामतनामा ५/३६

हुकम श्री देवचन्द्र जी स्यामा जी, ए तीनों के फैल हाल।
सारा मुदा इनों पर, ना कोई इन मिसाल।।२२।।

हुक्म के स्वरूप मुहम्मद (सल्ल.), मलकी स्वरूप श्री देवचन्द्र जी जिनके अन्दर श्यामाजी की आत्मा थी, तथा हकी सूरत श्री प्राणनाथ जी के रूप में इन तीनों स्वरूपों की करनी और रहनी अलौकिक है। परमधाम के ज्ञान को फैलाने का उत्तरदायित्व इन तीनों पर ही है। इन तीनों से किसी की भी उपमा नहीं दी जा सकती।

भावार्थ- इन तीनों स्वरूपों को मुहम्मद कहने का कारण भी यही है कि इन तीनों के समान सृष्टि में न कोई हुआ और न है। यदि यह संशय करें कि क्या व्रज और रास वाले स्वरूप से इनकी तुलना नहीं कि जा सकती?

तो इसके समाधान में यही कहा जाएगा कि व्रज और रास वाले स्वरूप को इनसे अलग समझा ही नहीं जा सकता, क्योंकि वही स्वरूप तो बसरी सूरत के रूप में जाहिर हुआ। इतना अन्तर अवश्य है कि व्रज में अक्षर की आत्मा को कुछ भी पता नहीं चला कि मैं कौन हूँ और कहाँ से आया हूँ? इसे प्रगट वाणी के सन्दर्भ में इस प्रकार देखा जा सकता है–

तब धाम धनीएं कियो विचार, ए दोऊ मगन हुए खेले नर नार।
मूल वचन की नाहीं सुध, ए दोऊ खेले सुपने की बुध।।

प्रकास हिन्दुस्तानी (प्रगट वाणी) ३६/३३

इसी प्रकार रास में अक्षर की आत्मा को तब पता चला, जब श्री राज जी ने अपना जोश खींच लिया–

फेर मूल सरूपें देखा तित, ए दोऊ मगन हुए खेलत।
जब जोस लियो खेंच कर, तब चित चौक भई अक्षर।।

कौन बन कौन सखियां कौन हम, यो चौक के फिरी आतम।
रास आया मिने जाग्रत बुध, चुभ रही हिरदे में सुध।।

प्रगट वाणी ३७/४१,४२

किन्तु वही अक्षर की आत्मा जब अरब में आती है, तो परमधाम मूल मिलावा में जाकर युगल स्वरूप का दीदार भी करती है और ९० हजार हरूफों में बातें भी सुनती है।

रोसनी तीन सूरत की, तीनों के जुदे जहूर।
बैठक बका बारीकिया, किए जाहिर तीनों नूर।।२३।।

इन तीनों सूरतों (स्वरूपों) के द्वारा अलग–अलग रूपों में अखण्ड ज्ञान का प्रकाश फैला। इन तीनों ने ही अखण्ड परमधाम के मूल मिलावे की गुह्य बातों को अलग–अलग रूपों में जाहिर किया।

भावार्थ– कुरआन के सिपारे १५ सूरा १७ आयत १ में अक्षर ब्रह्म की आत्मा के द्वारा मूल मिलावा में जाकर श्री राज जी के दर्शन का वर्णन सांकेतिक रूप से किया गया है। इस प्रकार रंगमहल के मुख्य द्वार का आधार लेकर मस्जिद के मुख्य द्वार तथा मेहराबों की आकृति निर्धारित की गयी, और मुस्लिम लोगों को वहाँ का भाव लेकर सिज्दा करने का निर्णय दिया गया।

इसी प्रकार सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी प्रतिदिन श्री राज श्यामा जी के वस्त्रों एवं शोभा–श्रृंगार का वर्णन करते थे, किन्तु हकी सूरत श्री प्राणनाथ जी के द्वारा श्री राज जी के एक–एक अंग की शोभा में डूबकर सबके लिए मारिफत का दरवाजा खोल दिया गया।

हुकम जोस बसरी पर, आए निजधाम से दोए।

जिने देख्या सो जाहिर किया, इन बिना जाने न कोए।।२४।।

बशरी सूरत के रूप में परमधाम की दो शक्तियाँ, हुक्म (अक्षर की आत्मा) तथा जोश की शक्ति, आयीं। अक्षर ब्रह्म की आत्मा ने मेअराज में जो कुछ देखा, उसको संकेतों में कुरआन के अन्दर जाहिर किया। मुहम्मद साहिब ने हज़रत अली को कुछ पात्र समझकर तरीकत की बन्दगी बतायी और परमधाम की कुछ बातें सांकेतिक रूप में कहीं। इनके अतिरिक्त और कोई भी परमधाम के ज्ञान को नहीं जान सका। सभी शरीअत में ही उलझे रह गये।

रूह फूंकी मलकी मिने, रूह अपना दिया खिताब।

सो कुंजी फुरमान की, सबों दिखाया हैयाती आब।।२५।।

मलकी सूरत के रूप में धाम धनी ने अपनी आह्लादिनी शक्ति श्री श्यामा जी को भेजा और इस खेल में उनके धाम हृदय में विराजमान होकर अपनी शोभा दी। वे सभी धर्मग्रन्थों के रहस्यों को खोलने वाले तारतम ज्ञान की कुन्जी लेकर आयीं और उन्होंने सबके लिए परमधाम के अखण्ड प्रेम और आनन्द का दरवाजा खोल दिया।

हक हिकमत हकी मिने, जित आई अकल नूर।
तिन मता लिया सबन का, जाहिर किया बका जहूर।।२६।।

हकी सूरत में अक्षरातीत परब्रह्म का सम्पूर्ण तत्व ज्ञान एवं सामर्थ्य विद्यमान होने से इनकी महिमा सर्वोपरि है। इस स्वरूप के अन्दर अक्षर ब्रह्म की जाग्रत बुद्धि के द्वारा तारतम वाणी का प्रकाश फैला। इस स्वरूप में अन्य दोनों स्वरूपों का ज्ञान समाहित हो गया तथा अखण्ड

परमधाम की शोभा एवं लीला भी जाहिर हुई।

भावार्थ– इंजील, जंबूर और तौरेत का ज्ञान कुरआन में समाहित हो गया था, जिसे लेकर बशरी सूरत संसार में आयी।

सभी हिन्दू धर्मग्रन्थों का तत्व ज्ञान सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के हृदय पटल पर अंकित था।

इस प्रकार वेद और कतेब के एकीकरण के रूप में तारतम वाणी का अवतरण हुआ, जिसमें रास ग्रन्थ को इंजील, प्रकाश को जंबूर, कलश ग्रन्थ को तौरेत, तथा सनद ग्रन्थ को कुरआन का स्थानापन्न ग्रन्थ माना गया।

तारीफ महंमद मेहेदी की, ऐसी सुनी न कोई क्यांहे।
कई हुए कई होएसी, पर किन ब्रह्माण्डों नाहें।।

सनंध ४३/३०

अर्थात् श्री प्राणनाथ जी की महिमा के बराबर महिमा

वाला अन्य कोई भी महिमावान् स्वरूप सुना नहीं गया है। अब तक असंख्य ब्रह्माण्ड हो गए और भविष्य में भी होंगे, किन्तु न तो श्री प्राणनाथ जी जैसा कोई हुआ और न कभी होगा।

दुनी पैदा जुलमत से, हिरस हवा सैतान।
सो पहुंचे पेड़े लों, चढ़े न चौथे आसमान।।२७।।

इस संसार के प्राणियों की उत्पत्ति मोह तत्व (निराकार) से हुई है, उनके अन्दर लोभ, लालच, आदि की मायावी प्रवृत्ति (दज्ञाल) स्वाभाविक रूप से होती है। वे बहुत प्रयास करने पर भी निराकार से आगे नहीं जा पाते। उनके लिए परमधाम की प्राप्ति असम्भव होती है।

तीन वजह की पैदाइस, लिखी अपने कलाम।

और लिखा सास्त्रों मिनें, पावे न खलक आम।।२८।।

कुरआन में तीन तरह की सृष्टि आम , खास, और खासल खास के रूप में लिखी है। इसी प्रकार हिन्दू धर्मशास्त्रों में भी जीव सृष्टि, ईश्वरीय सृष्टि, तथा ब्रह्म सृष्टि के रूप में तीन सृष्टि को वर्णित किया गया है। इस तथ्य को जीव सृष्टि के न मुसलमान समझ पाते हैं और न हिन्दू।

कहों तीनों का बेवरा, लाहूत जबरूत मलकूत।

फैल तीनों करत हैं, बीच जिमी नासूत।।२९।।

अब मैं तीनों सृष्टियों का विवरण देता हूँ। इनके तीन धाम हैं- जीव सृष्टि का वैकुण्ठ (मलकूत), ईश्वरीय सृष्टि का बेहद मण्डल या अक्षरधाम (जबरूत), तथा ब्रह्म

सृष्टि का परमधाम (लाहूत)। ये तीनों सृष्टियाँ इस समय जागनी लीला में पृथ्वी लोक के ऊपर आचरण (करनी) कर रही हैं।

सैंया वाहेदत में असल, तिनके फैल तिन माफक।
सो समझे अपनी जात को, निजधाम जिनका हक।।३०।।

ब्रह्मसृष्टियों के मूल तन परमधाम की वहदत में हैं। इसलिए इनका आचरण भी प्रेम और एकत्व (वहदत) के रस से भरा होता है। ये तारतम वाणी के प्रकाश में अपनी जाति (स्वरूप)– श्री राज श्यामा जी, सखियाँ, अक्षर ब्रह्म, तथा महालक्ष्मी– की यथार्थ पहचान कर लेती हैं। स्वलीला अद्वैत परमधाम में इनके प्राणेश्वर अक्षरातीत लीला करते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "जात"

शब्द का तात्पर्य हक जात से है, जिसके अन्तर्गत पाँचों स्वरूप श्री राज श्यामा जी, सखियाँ, अक्षरब्रह्म, तथा महालक्ष्मी आते हैं। इस सम्बन्ध में तारतम वाणी में कहा गया है–

और तो कोई है नहीं, बिना एक हक जात।
जात माहें हक वाहेदत, हक हादी गिरो केहेलात।।

श्रृंगार २३/३

और गिरोह जबरूती, आए लगी इन सोहोबत।
सो आई नूर अकल बीच, जो अक्षर की निसबत।।३१।।

इन ब्रह्मसृष्टियों के साथ ईश्वरीय सुष्टि का समूह भी इस मायावी खेल को देखने के लिए आया हुआ है। इनके अन्दर अक्षर की जाग्रत बुद्धि के ज्ञान का प्रकाश रहता है और इनका सम्बन्ध अक्षर ब्रह्म से होता है।

और आम खलक जो तीसरी, मजकूती अकल।

ए आगे न चल सके, नकल की नकल।।३२।।

तीसरी सृष्टि जीवसृष्टि होती है, जिसके अन्दर वैकुण्ठ की स्वप्नमयी बुद्धि होती है। यह नकल की नकल अर्थात् ईश्वरीय सृष्टि की नकल होती है और यह निराकार से आगे नहीं चल पाती।

भावार्थ– माहेश्वर तन्त्र में आदिनारायण को "आदिजीवो महाजीवो" कहकर वर्णित किया गया है, जबकि बेहद मण्डल में जीव की उपाधि नहीं होती। अव्याकृत का स्थूल प्रणव ही प्रतिबिम्बित रूप में आदिनारायण का स्थूल बन जाता है। किन्तु प्रणव अक्षर ब्रह्म का एक वाचक नाम है, उसे कभी जीव की संज्ञा नहीं दी जा सकती। इसी प्रकार कैवल्य अवस्था को प्राप्त होने वाले जीव भी आदिनारायण की सारूप्य अवस्था को प्राप्त कर

लेते हैं। इस दृष्टि से जीव सृष्टि को ईश्वरीय सृष्टि की नकल कहा जाता है।

हुकम के अमल में, ना कोई उतरे मोमिन।

हकीकत मारफत की, किन आगे करें रोसन।।३३।।

जिस समय अरब में हुक्म के स्वरूप मुहम्मद साहिब का अवतरण हुआ था, उस समय परमधाम की कोई भी ब्रह्मसृष्टि अरब में नहीं आयी थी। इसलिए वे हकीकत और मारिफत के अलौकिक ज्ञान को किसके आगे सुनाते।

भावार्थ– तारतम वाणी का यह कथन भी इसी ओर संकेत करता है–

फुरमान ल्याए मुहमंद, किन खोली न इसारत।

तब रूहें लाई न थी, तो पीछे फेर करी सरत।।

किरंतन १११/८

तब हरफ करमकाण्ड के, कहे तीस हजार।

होसी हकीकत मारफत जाहिर, बीच सैंया बारे हजार।।३४।।

इसलिए उन्होंने कर्मकाण्ड (शरीअत) के ३० हजार हरूफों का कुरआन में वर्णन किया और यह संकेत कर दिया कि जब परमधाम की आत्मायें कियामत के समय में आयेंगी तो हकीकत ओर मारिफत का अलौकिक ज्ञान इमाम महदी (श्री प्राणनाथ जी) के द्वारा जाहिर होगा।

चढ़ नासूत मलकूत, छोड़ सुंन ला मकान।

और देखा नूर मकान, छोड़ी रोसनी इन आसमान।।३५।।

जब मुहम्मद साहब को मेअराज हुआ, तो उनकी आत्मिक दृष्टि पृथ्वी लोक, वैकुण्ठ, शून्य-निराकार को

छोड़कर अक्षर धाम (बेहद मण्डल) में गयी और वहाँ की शोभा को देखने के पश्चात् उससे भी आगे परमधाम में पहुँची।

इतथें आया इसक, बैठे तिन तखत।

पहुंचे अरस अजीम में, तहां देखी हक सूरत।।३६।।

बेहद मण्डल (सत्स्वरूप) को पार करने के पश्चात् इश्क के तख्त (प्रेम के सिंहासन) पर बैठकर वे परमधाम के अन्दर रंगमहल के मूल मिलावे में पहुँचे, जहाँ उन्होंने युगल स्वरूप की शोभा को देखा।

भावार्थ– सर्वरस सागर में भी सखियाँ श्री राज जी के के साथ लीला करने के लिए आती हैं और उसमें परमधाम की वहदत और निसबत का रस भरा है। यही स्थिति आठों सागरों में है। इससे यह सिद्ध होता है कि

परमधाम के अन्दर होने से सर्वसागर से ही इश्क के तख्त पर बैठना पड़ेगा, तभी श्री राज जी का दीदार हो सकता है, क्योंकि जिबरील सतस्वरूप से आगे नहीं जा सकता। इस सम्बन्ध में इसी प्रकरण की ५२वीं चौपाई देखने योग्य है।

देखा मिलावा धनी का, रूहें बारे हजार।
और देखा अरस अजीम को, चौथा नूर के पार।।३७।।

उन्होंने मूल मिलावे में १२,००० सखियों के बीच में बैठे हुए युगल स्वरूप की नख से शिख तक की शोभा को देखा। इसके अतिरिक्त अक्षर धाम से भी परे, उस परमधाम की अनुपम शोभा को देखा।

होज जोए बाग जानवर, देखी हक मोहलात।

पाई माफक साहिदी, जो जाहिर करी बात।।३८।।

उन्होंने हौज-कौसर, यमुना जी, नूरी बागों, जानवरों, तथा श्री राज जी की लीला रूपी नूरी महलों की शोभा को देखा। दर्शन में होने वाले अनुभवों को, साक्षी रूप में, उन्होंने कुरआन के अन्दर संकेतों में प्रकट किया।

कहे दो तकरार लेल के, उतरे रूहें फिरस्ते जित।

सो फेर आवेंगे आखरत, करी बातें साबित।।३९।।

उन्होंने लैल-तुल-कद्र के दो तकरार (महिमावान् रात्रि में खेल के दो भागों व्रज-रास) का वर्णन किया, जिसमें परमधाम से ब्रह्मसृष्टि और अक्षर धाम से ईश्वरीय सृष्टि आयीं। मुहम्मद साहिब ने यह भी भविष्यवाणी की कि कियामत के समय में ये दोनों सृष्टियाँ पुनः आयेंगी। श्री

प्राणनाथ जी ने तारतम वाणी के द्वारा उसे सत्य प्रमाणित कर दिया।

इत आवन को आगम, बातां करी बनाए।
ए खेल देख सैयां पीछे फिरें, रही तामें सक न कांए।।४०।।

इन ब्रह्मसृष्टियों और ईश्वरीय सृष्टियों के आने की बातें भविष्यवाणी का कथन करने वाले हिन्दू धर्मग्रन्थों में भी की गयी हैं। माया के इस खेल को देखकर ब्रह्मसृष्टियाँ अपने मूल घर वापस चली जायेंगी, इस बात में अब किसी को शक नहीं रहेगा।

सेवा सिफत मोमिन की, पहुंचत है सब हक।
इन समान बन्दगी, नहीं कोई बुजरक।।४१।।

इस जगत में जो कोई भी इन मोमिनों (ब्रह्मसृष्टियों) की

सेवा करता है या महिमा गाता है, वह परब्रह्म की सेवा और महिमा के समान होती है। इस संसार में मोमिनों की सेवा तथा महिमा गायन के समान कोई और बन्दगी नहीं है।

और सुनत जमात की, जो बातें हक सोहोबत।
तिनको दीदार जा करे, ताकी न आवे जुबां सिफत।।४२।।

तारतम वाणी के प्रकाश में जो ब्रह्ममुनि अक्षरातीत पर अटूट श्रद्धा रखते हैं और धाम धनी की शोभा एवं श्रृंगार में खोये रहते हैं, संसार का जो जीव उनका दर्शन कर लेता है, तो उसके सौभाग्य का वर्णन भी इस जिह्वा से नहीं हो सकता।

तो इन जमात की क्यों कहों, सोभा सत इन मुख।

ए सोभा सब्दातीत की, कहयो न जाए ये सुख।।४३।।

परमधाम में इन ब्रह्मात्माओं की जो अखण्ड शोभा है, उसका वर्णन मैं इस मुख से कैसे कहूँ? उनकी यह शोभा बेहद मण्डल से परे अखण्ड परमधाम की है। उनके अनन्त सुखों का वर्णन कर पाना भी सम्भव नहीं है।

इनकी सिफत सुक जी कहें, और सास्त्रों वेद व्यास।

त्रिगुन अपने चित में, रज की राखें आस।।४४।।

उनकी महिमा का गायन शुकदेव जी ने श्रीमद्भागवत् में और वेदव्यास जी ने अनेक ग्रन्थों में किया है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, आदि देवता भी अपने चित्त में इनकी चरणधूलि पाने की इच्छा रखते हैं।

और नाम केते लेऊं, ब्रह्मांड के धनी ऊपर।

सब कोई सेवे सनेह सों, अपना इष्ट चित धर।।४५।।

ब्रह्माण्ड के स्वामी कहे जाने वाले इन त्रिदेवों से परे और कौन है, जिसका नाम लेकर मैं बताऊँ? तारतम ज्ञान से इनके स्वरूप की पहचान कर लेने वाला संसार का हर प्राणी, इन्हें अपना इष्ट मानकर अपने हृदय में बसा लेता है और प्रेमपूर्वक सेवा करता है।

अब तो इत कहवे को, रहयो न कोई ठौर।

रही बात बका अरस की, सो सिफत हैं जोर।।४६।।

अब तो ब्रह्ममुनियों की महिमा के सम्बन्ध में कहने के लिए इस संसार में और कोई उदाहरण ही नहीं बचा। यदि अखण्ड परमधाम की दृष्टि से देखा जाये तो इनकी महिमा अनन्त है।

अक्षर ठौर अखण्ड जो, जाके पल थें पैदा कई इण्ड।

सो उपज फना हो जात हैं, त्रिगुन समेत ब्रह्मांड।।४७।।

अक्षर ब्रह्म अक्षर धाम में रहते हैं, जो कि अखण्ड है। उनके एक पल मात्र में त्रिदेवों के इस ब्रह्माण्ड जैसे अनेक ब्रह्माण्ड उत्पन्न होकर लय को प्राप्त हो जाते हैं।

ईस्वर महाविष्णु प्रकृति, पल फिरें होत है नास।

सो अक्षर इन सैयन की, करें दीदार की आस।।४८।।

जिस अक्षर ब्रह्म के एक पल में वायु तत्व के देवता ईश्वर आदिनारायण तथा कारण प्रकृति का लय हो जाता है, वे अक्षर ब्रह्म इन ब्रह्मात्माओं के दर्शन की इच्छा किया करते हैं।

ए तो कही वेद की, और लिखी सिफत कुरान।

सो सब सैंया पावहीं, कर देवें पहिचान।।४९।।

जिस प्रकार वेद पक्ष के ग्रन्थों में ब्रह्मसृष्टियों की महिमा गायी गयी है, उसी प्रकार कुरआन पक्ष में भी इनकी महिमा वर्णित है। किन्तु इसे मात्र ब्रह्मसृष्टियाँ ही जान पाती हैं और वे ही दूसरों को भी इसकी पहचान करा देती हैं।

बीच किताबों में कही, सैयों की सिफत।

सबमें रोसनी होएगी, फरदा रोज कयामत।।५०।।

कतेब परम्परा के ग्रन्थों में इन्हीं ब्रह्मसृष्टियों की महिमा गायी गयी है, जिसकी जानकारी कियामत के समय ११वीं सदी में सबको होगी।

हुकम नूर खुदाए का, जो है नूर जमाल।

दाएम आवे दीदार को, फिरे मुजरा कर नूरजमाल।।५१।।

अक्षर ब्रह्म अक्षरातीत श्री राज जी के नूर और हुक्म के स्वरूप हैं। वे अक्षर धाम से प्रतिदिन श्री राज जी का दर्शन करने आते हैं और दर्शन करके पुनः अपने निजधाम में चले जाते हैं।

भावार्थ– जब अक्षर ब्रह्म को श्री राज जी के हुक्म का स्वरूप माना जाता हैं, तो श्री राज जी का आवेश स्वरूप जो श्री महामति जी के धाम हृदय में लीला कर रहा है, उसे धनी का हुक्म स्वरूप क्यों नहीं माना जा सकता, क्योंकि मूल स्वरूप के दिल की इच्छा ही हुक्म है। इस प्रकार पाँच शक्तियों में कथित हुक्म का तात्पर्य श्री राज जी के आवेश स्वरूप से है।

तहां पैदा फना होत है, ए जो चौदह तबक।

जहां जबराईल रहत है, पहुंच ना सक्या हक।।५२।।

बेहद मण्डल (अव्याकृत, सबलिक) से चौदह लोक का यह ब्रह्माण्ड उत्पन्न होता है और लय को प्राप्त हो जाता है। इसी बेहद मण्डल के अन्दर सत्स्वरूप में जिबरील का निवास है और वह परमधाम की वहदत के मूल मिलावे में धाम धनी के पास नहीं जा सकता।

तिन हक का मेहेबूब, महम्मद अलेहु सलाम।

सो आया गिरोह वास्ते, रसूल अपना नाम।।५३।।

मुहम्मद (सल्ल.) के रूप में अक्षर की आत्मा थी, जिन्हे श्री राज जी का अति प्यारा कहा गया है। वह मुहम्मद साहिब ब्रह्मसृष्टियों को सन्देश देने के लिए इस संसार में आए और अपना नाम रसूल (सन्देशवाहक) रखा।

रब्बानी गिरोह रब्ब से, किए दाना आप।

सिफत सुभान इनकी करे, रहे हजूर हमेसा मिलाप।।५४।।

ब्रह्मसृष्टियों को धाम धनी ने तारतम ज्ञान के द्वारा बहुत अधिक ज्ञानी बना दिया है। स्वयं अक्षरातीत परब्रह्म इनकी महिमा गाते हैं और इनके धाम हृदय में पल-पल विराजमान रहते हैं।

एही औलिया लिल्ला कहे, खुदा के दोस्त ए।

सो रहे हमेसा हजूर, वास्ते बंदगी के।।५५।।

कुरआन में इन्हीं को औलिया लिल्ला और खुदा का दोस्त कहा गया है। ये ब्रह्ममुनि ही अपनी इश्क बन्दगी (प्रेम लक्षणा भक्ति) के कारण पल-पल धनी की सान्निध्यता में रहते हैं।

इनकी जो बीतक भई, ताकी नेक कहों जहूर।
ए सागर सुख अनगिनतती, सो कहयो न जावे नूर।।५६।।

इन ब्रह्मात्माओं ने इस नश्वर जगत में अपने प्राणेश्वर को जिस भाव से रिझाया, उसका मैं थोड़ा सा वर्णन कर रहा हूँ। धनी की सेवा से मिलने वाला सुख तो उस सागर के समान है, जिसकी माप नहीं हो सकती। उस सुख का वर्णन हो पाना असम्भव है।

ए कहावे हक का हुकम, करे वास्ते याद मोमिन।
जिनकी पहुंची बंदगी, सौंप चले अपना तन मन।।५७।।

जिन ब्रह्मात्माओं ने अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति के द्वारा अपने प्रियतम अक्षरातीत को रिझाया और उनकी सेवा में अपना तन-मन न्योछावर कर दिया, उनकी इस लीला को आने वाली ब्रह्मसृष्टियाँ याद रखें। इसलिए श्री

राज जी का आदेश मुझसे इस अष्ट प्रहर की लीला का वर्णन करा रहा है।

विकार सारी विस्व का, मिटसी इन खुसबोए।
सुनत सब्द संसार में, बिन मेहनत एक सृष्ट होए।।५८।।

श्री पन्ना जी में दस वर्ष तक होने वाली अखण्ड ज्ञान, प्रेम, और सेवा की इस लीला की सुगन्धि यदि संसार में फैल जाये तो इस सारे संसार के मायावी विकार नष्ट हो जाएंगे। यदि सारा विश्व तारतम वाणी के प्रकाश को आत्मसात् कर ले, तो बिना परिश्रम किए ही सारा जगत एक अक्षरातीत के प्रेममयी आँगन में आ जाएगा, अर्थात् सत्य को स्वीकार कर लेगा।

ए जो मासूक जबरूत का, कहियत है लाहूत।

सो इत हुआ जाहिर, ऊपर मसनन्द मलकूत।।५९।।

अक्षर ब्रह्म श्री राज जी का दर्शन करने के लिए प्रतिदिन परमधाम में जाया करते हैं। इसलिए अक्षरातीत और उनके धाम को अक्षर ब्रह्म और अक्षर धाम का मासूक कहा जाता है, क्योंकि दर्शन करने के लिए जाने वाला स्वरूप (अक्षर ब्रह्म) आशिक होता है। वही अक्षरातीत इस नश्वर संसार में श्री प्राणनाथ जी के रूप में जाहिर हुए हैं, जिनका स्थान इस नश्वर जगत के कर्ता–धर्ता आदिनारायण से ऊपर है।

हुई जाहिर सब में, काढ्या कुली दज्जाल।

सरतें सब आए मिली, मोमिन भए खुसाल।।६०।।

तारतम वाणी का प्रकाश फैल जाने से लोगों के मन से

अज्ञान रूपी कलियुग (दज्जाल) निकल गया है। श्री प्राणनाथ जी के प्रकटन के सम्बन्ध में सभी धर्मग्रन्थों की साक्षियाँ मिल गयी हैं, जिससे सुन्दरसाथ में आनन्द की लहर दौड़ गयी है।

तब सोर पड़ा आलम में, दौड़ी सब खलक।
खोले द्वार मारफत के, पाया सबों ने हक।।६१।।

अब संसार में श्री प्राणनाथ जी के प्रकटन का समाचार फैल गया है और सारी दुनियाँ श्रीजी का दर्शन करने के लिए दौड़ती हुई आ रही है। श्री प्राणनाथ जी ने तारतम वाणी के प्रकाश में परमधाम की मारिफत (पूर्ण पहचान) का दरवाजा खोल दिया है, जिससे सभी लोगों ने इस नश्वर जगत में ही श्री प्राणनाथ जी को पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत के रूप में प्राप्त कर लिया है।

भावार्थ– उपरोक्त दोनों चौपाइयों में योगमाया में होने वाली सातवें दिन की लीला का वर्णन छठवें दिन के अन्तर्गत किया गया है। काव्यगत सौन्दर्य के अन्तर्गत जिस प्रकार अतीत के सौन्दर्य का वर्णन वर्तमान में किया जाता है, उसी प्रकार भविष्य में (योगमाया में) घटित होने वाले घटनाक्रम का वर्णन यहाँ वर्तमान में किया गया है। इस चौपाई का चौथा चरण डिण्डिम घोष के साथ कह रहा है कि इस जागनी ब्रह्माण्ड में एकमात्र श्री प्राणनाथ जी ही अक्षरातीत हैं।

एक पहिले आए पहुंचे, किया रसूल दीदार।
तिनको द्वार जो भिस्त का, खोला परवरदिगार।।६२।।

सबसे पहले ब्रह्मसृष्टियों ने तारतम वाणी के प्रकाश में श्री प्राणनाथ जी की पहचान की और उनका दर्शन

किया। प्रेम के सागर अक्षरातीत ने उनके जीवों के लिए सत्स्वरूप की अखण्ड बहिश्त का दरवाजा खोल दिया।

ता पीछे सफ दूसरी, आए मिले असहाब।
ताको दिया हक सुभान ने, हैयाती का जो आब।।६३।।

इसके पश्चात् दूसरी सृष्टि ईश्वरीय सृष्टि श्री प्राणनाथ जी के चरणों में आई, जिन्हें श्री प्राणनाथ जी ने सत्स्वरूप की दूसरी बहिश्त का अमृतमयी अखण्ड रस दिया।

तीसरी सफ जो आई, तिन पूछा असहाब देखन हार।
तिनको खोला खालिक नें, भिस्त का दरबार।।६४।।

इसके पश्चात् तीसरी जीव सृष्टि, जो खेल देखने आई, ईश्वरीय सृष्टि से पूछकर श्री प्राणनाथ जी के चरणों में आई। उनको भी दया के सागर परब्रह्म ने शेष अन्य

बहिश्तों का सुख प्रदान किया।

सोर पड़ा संसार में, तब भया ए ख्याल।

फिरस्ते सब पीछे फिरे, नींद उड़ी नूरजलाल।।६५।।

जब सारे संसार में तारतम वाणी के प्रकाश में श्री प्राणनाथ जी के प्रकट होने का शोर मच जाएगा, तब सभी ईश्वरीय सृष्टि अपने निजधाम बेहद मण्डल में पहुँच जायेंगी और अक्षर ब्रह्म की नींद समाप्त हो जाएगी।

भावार्थ– यह संसार तभी तक है, जब तक अक्षर ब्रह्म की नींद है। इस चौपाई में सातवें दिन की लीला में घटित होने वाले भविष्यकाल के कथन को भूतकाल में वर्णित करके दर्शाया गया है। यही स्थिति आगे की दोनों चौपाइयों ६६ और ६७ में भी है।

तब याद किया सुपन को, उठी आठों भिस्त।
नूर की नजरों चढ़े, करके याद जो कस्त।।६६।।

जब अक्षर ब्रह्म जाग्रत अवस्था में इस जागनी लीला को याद करेंगे, तो आठों बहिश्तें बेहद मण्डल में अखण्ड हो जायेंगी। खेल के तीनों भागों– व्रज, रास, एवं जागनी लीला– को याद करते ही अक्षर ब्रह्म की दृष्टि में आठों बहिश्तें शोभायमान होने लगेंगी।

सैयां अपने महल में, पहुंचे नूर जमाल।
खेल देख पीछे फिरे, होए इत खुसाल।।६७।।

ब्रह्मसृष्टियाँ अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत के साथ रंग महल के मूल मिलावे में अपने मूल तन में जाग्रत हो जाएँगी। इस प्रकार वे इस मायावी खेल में जागनी लीला का आनन्द देखकर, अपने परमधाम में वापस जाएँगी।

महामत कहे ऐ मोमिनों, सुनियो मंगलाचरण।

अपनी बीतक देखियो, सुनियों दोए श्रवन।।६८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आपने अभी प्रियतम अक्षरातीत के चरणों में प्रस्तुत किया गया मंगलाचरण सुना। अब अपने दोनों कानों से अष्ट प्रहर की उस लीला का वर्णन सुनिए, जिसमें सुन्दरसाथ ने श्री प्राणनाथ जी को साक्षात् अक्षरातीत मानकर रिझाया है।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "दोनों कानों" का तात्पर्य केवल दोनों बाह्य कान नहीं, बल्कि बाह्य कान और अन्तः श्रवण अर्थात् हृदय के कानों से है। बाह्य कानों से सुनकर हृदय के कानों से आत्मा तक पहुँचाना ही चौपाई के इस चरण का मन्तव्य है।

प्रकरण ।।६२।। चौपाई ।।३६४२।।

अष्ट पोहोर की सेवा

पहला पहर

इसमें प्रातःकाल ६ बजे से ९ बजे तक होने वाली सेवा का वर्णन किया जा रहा है।

सुन्दर सेज सरूप की, अति प्यारी भरी नूर।
तिनकी सिफत इन जुबां, क्यों कर कहों जहूर।।१।।

अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की शैय्या अति सुन्दर, प्यारी, और आभामयी है। मैं इस नश्वर जिह्वा से उस शैय्या की विशेषताओं का प्रत्यक्ष रूप में कैसे वर्णन करूं?

अत प्यारा लाल पलंग, पचरंगी पाटी मिहीं भर।

प्रेम प्रीत सों सेवहीं, सिरदार साथ सुन्दर।।२।।

शैय्या का लाल पलंग बहुत ही प्यारा लग रहा है। पाँच रंगों वाली पतली निवाड़ से बुना हुआ है। इस शैय्या को सजाने की सेवा प्रमुख सुन्दरसाथ बहुत प्रेम–प्रीति के रस में डूबकर करते हैं।

भावार्थ– जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा के अन्दर शीतल चाँदनी के रूप में परिवर्तित हो जाता है, उसी प्रकार प्रेम रूपी सूर्य का प्रकाश लीला रूप में प्रीति रूपी चाँदनी के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

सेज तलाई कोमल, मिहीं चादर धरी नरम।

सिराने गाल मसुरीए, ए जाने सैंया दिल मरम।।३।।

शैय्या पर बहुत ही कोमल गद्दा बिछा हुआ है। जिसके

ऊपर कोमल और पतली चद्दर भी बिछाई गयी है। शिर की तरफ अति सुन्दर और कोमल गाल मसुरिए रखे हैं। इनके रखे जाने का रहस्य सुन्दरसाथ का प्रेम भरा दिल ही जानता है।

भावार्थ– गाल मसुरिए छोटे–छोटे कोमल तकियों को कहते हैं, जिनको सोते समय गालों के नीचे रखा जाता है। इनका उपयोग करने पर हाथों को गाल के नीचे रखने की आवश्यकता नहीं पड़ती। सुन्दरसाथ ने गाल मसुरिये इसलिए रखे हैं, ताकि हमारे प्राणेश्वर को अपना हाथ गालों के नीचे न रखना पड़े।

चारों पाए सेज बन्ध, बांधे सनंध कर अत।
लटके फुमक रेसमी, पचरंग तरंग झलकत।।४।।

चादर को सिलवट से बचाने के लिए उस के चारों कोनों

को सेजबन्ध (सुन्दर रस्सी) के द्वारा बहुत ही कुशलतापूर्वक पलंग के चारों पायों से बाँध दिया गया है। सेजबन्ध की किनार पर रेशमी फुम्मक लटक रहे हैं। पाँच रंगों वाली निवाड़ से आभामयी किरणें झलकार कर रही हैं।

चादर रजाई ओढ़ने, रूत समें सेवा होए।
लाल डांडे चार नूर के, क्यों कहों छत्री सोए।।५।।

ऋतु के अनुसार धाम धनी को ओढ़ने के लिए चादर या रजाई की व्यवस्था की जाती है। पलंग के चारों पायों पर लाल रंग के चमकते हुए चार डंडे जड़े हुए हैं, जिनके ऊपर आई हुयी छतरी की (चन्द्रवा) शोभा का वर्णन मैं कैसे करूँ?

परदे झालर झलकत, लवाजमें नाहीं सुमार।

सेवे प्रेमदास जोस में, द्वारका दास खबरदार।।६।।

पर्दे की किनार पर लगी हुयी झालर झलकार कर रही है। इस प्रकार श्री प्राणनाथ जी की शैय्या में प्रयुक्त सभी सामग्रियों की शोभा की कोई सीमा नहीं है। प्रेम के जोश में भरकर प्रेम दास जी शैय्या बिछाने की सेवा करते हैं और द्वारिका दास जी अपनी सेवा के प्रति बहुत सतर्क रहते हैं।

पलंग उठाए बिछावत, नाराएन हर नन्दन।

कोई दिन नाथे करी, करते थे रात दिन।।७।।

श्रीजी के पलंग पर बिस्तर को बिछाने और उठाने की सेवा नारायण जी और हरिनन्दन जी किया करते हैं। कुछ दिन तक नाथा जोशी ने यह सेवा की। वे दिन-रात

इसी सेवा में लगे रहते थे।

फेर के चित दे करी, मथुरा गंगादास।

परमानन्द भी संग रहे, सेवे धाम धनी लिए आस।।८।।

इसके पश्चात् मथुरा और गँगादास जी ने बहुत लगन से यह सेवा की। इनके साथ परमानन्द जी सेवा में संलग्न रहे। अपने आत्मिक सुख की चाहना के लिए सब सुन्दरसाथ धाम धनी की सेवा करते हैं।

स्याम जी सामिल रहे, सेज सेवा के संग।

ए चारों चित सों करें, जान धाम धनी अरधंग।।९।।

शैय्या की सेवा में मथुरा, गँगादास, और परमानन्द जी के साथ श्याम जी भी सम्मिलित रहते हैं। ये चारों सुन्दरसाथ अपनी आत्मा को प्रियतम अक्षरातीत की

अर्द्धांगिनी मानकर शुद्ध मन से सेवा करते हैं।

मानिक सेवे सनेह सों, सब सेवा में खबरदार।
हजूर हाजिर रात दिन, सब सेवा में सिरदार।।१०।।

मानिक भाई बहुत प्रेमपूर्वक धनी की सेवा करते हैं। ये हर प्रकार की सेवा में सावधान रहते हैं। धाम धनी के सम्मुख दिन–रात उपस्थित रहकर भी प्रत्येक सेवा में ये प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

छबीला जो सेवा करे, जो पहिले करी जमुना।
ए वारसी इनको दई, जान बेटा अपना।।११।।

छबील दास जल पिलाने की सेवा करते हैं। पहले यह सेवा बिहारी जी की बहन यमुना जी किया करती थीं। छबील दास जी को अपना पुत्र मानकर, उन्होंने अपनी

सेवा का उत्तराधिकार इन्हें सौंप दिया।

जल अरूगावें छबीलदास, पीछली रात रहे घड़ी दोए।
उठे पीउ पलंग से, आरोगत हैं सोए।।१२।।

जब रात्रि के व्यतीत होने में दो घड़ी का समय बाकी रहता है, अर्थात् प्रातःकाल के सवा पाँच बजे होते हैं, उस समय प्रियतम अक्षरातीत पलंग से उठकर जल पीते हैं और जल पिलाने की यह सेवा छबील दास जी करते हैं।

पूरबाई को राज नें, रीझ के सेवा दई एह।
पीछली रात को अरूगावने, ल्यावे लोटा जल के।।१३।।

धाम धनी ने पूरबाई को रीझकर जल पिलाने की यह सेवा दी। वे रात्रि के अन्तिम भाग में, अर्थात् सवा पाँच

बजे, धाम धनी को पिलाने के लिए लोटे में जल भरकर लाया करती हैं।

पाव दाबन प्रात को, आवे अगरदास गुलजी।

कबहूं कबहूं माव जी, दावने की सेवा करी।।१४।।

प्रातःकाल श्रीजी के चरणों को दबाने की सेवा अगरदास और गुलजी किया करते हैं। कभी-कभी महाव जी भाई भी चरण दबाने की सेवा में आ जाया करते हैं।

और सेवा में आवत, रामबाई दावत।

कोई दिन खेमदास, पीछे रात जादी आवत।।१५।।

धाम धनी के चरणों को दबाने की सेवा में रामबाई भी आती हैं। कुछ दिनों तक खेमदास जी ने यह सेवा की। वे रात्रि बीतने से कुछ पहले ही आ जाया करते थे।

उठत पीउ पलंग से, बखत अरूण उदे।

सब हजूरी हाजिर रहें, सो सेवा करें ऐ।।१६।।

प्रियतम अक्षरातीत अरूणोदय के समय, जब आकाश में लालिमा फैल रही होती है, तब पलंग से उठते हैं। सेवा करने वाले सब सुन्दरसाथ उस समय उपस्थित रहते हैं और अपनी-अपनी सेवा करते हैं।

अंगीठी इन समें, ल्यावें बिहारी दास।

तपावें श्री राज को इन समें, ए सेवा है खास।।१७।।

इस समय बिहारी दास जी अंगीठी लाते हैं और श्रीजी को आग तपाते हैं। इस समय की इनकी यह विशेष सेवा हैं।

रूमाल रतन बाई का, भिजाइ ताते जल।

श्री राज नेत्र पोंछत, ए सेवें दिल निरमल।।१८।।

रतनबाई गुनगुने जल में रुमाल भिगोकर धाम धनी को देती हैं, जिससे श्री प्राणनाथ जी अपने नेत्रों को पोंछते हैं। रतनबाई अपने शुद्ध एवं प्रेम भरे हृदय से यह सेवा करती हैं।

धनजी और तारा बाई, कन्नड और गंगाराम।

धाम धनी तीजी भोम से, प्रात उठे इन ठाम।।१९।।

धन जी, तारा बाई, कन्नड़, और गँगाराम जी "तीजी भोम की जो पड़साल, ठौर बड़े दरवाजे विशाल। धनी आवत हैं उठि प्रात , बन सींचत अमृत अघात।।" का गायन करते हैं।

ए नित गावत हैं, और साथी गावे कोई कोई।

रिझावत हैं श्री राज को, बानी गावत सोई।।२०।।

ये चारों सुन्दरसाथ प्रतिदिन वाणी गायन की सेवा करते हैं। गाने की सेवा में कोई-कोई और सुन्दरसाथ भी आ जाते हैं तथा वाणी गाकर अपने धाम धनी को रिझाते हैं।

पहिले प्रेम दास करी, भी रामचन्द नन्द राम।

आखर को वल्लभ करी, वस्तर पहिनाए के काम।।२१।।

धाम धनी को वस्त्र पहनाने की सेवा पहले प्रेमदास जी किया करते थे। उनके साथ रामचन्द जी और नन्दराम जी भी रहा करते थे। अन्ततोगत्वा वस्त्र पहनाने की यह सेवा बल्लभ भाई के हाथ में चली गयी।

बिहारी दास सेवा करी, ले आवें अंगीठी भर।

रात प्रात तपावत, बस्तर ताते अंग पर।।२२।।

बिहारी दास जी, शीतकाल में अंगीठी में आग भरकर लाने की सेवा करते हैं। वे प्रातःकाल और रात्रि के समय धाम धनी के वस्त्रों को आग से तपाते हैं और धाम धनी उन वस्त्रों को धारण करते हैं।

पहिले चरना पेहेर के, फेर गोटा कन ढपी।

चित दे चोंपसो सेवहीं, पहिनत हैं साहिब जी।।२३।।

श्री प्राणनाथ जी शीतकाल में चुस्त पायजामा (सूथनी) पहनते हैं। उसके पश्चात् सिर पर गोटा और कनढप्पी पहनते हैं। सुन्दरसाथ बहुत ही सावधानीपूर्वक पूरे मन से पहनाते हैं और श्रीजी उसे धारण करते हैं।

भावार्थ– सिर पर बाँधा जाने वाला कपड़ा गोटा

कहलाता हैं और ऐसी टोपी जिससे कान ढक जाएँ कनढप्पी कहलाती है।

पहिले मोजे पहिनावत, प्रेमदास चित ल्याए।
पीछे वल्लभ दास ने, सेवा करी बनाए।।२४।।

धाम धनी के चरणों में मोजे पहनाने की सेवा प्रेम दास जी पूर्ण मनोयोग के साथ करते हैं। इनके पश्चात् वल्लभ दास जी श्रद्धापूर्वक यह सेवा करते रहे।

कबहूं पहिनें कुरती, जरी बूटे के संग।
पटुका जरी जड़ाव जो , दो थुरमे सुपेत रंग।।२५।।

श्रीजी कभी-कभी कस वाला कुर्ता पहनते हैं, जिसमें सोने-चाँदी के तारों से बेल-बूटे बनाए गए होते हैं। वे तारों से चित्रित पटुके के साथ श्वेत रंग की दो गरम ऊनी

शालें भी ओढ़ते हैं।

भावार्थ– थूरमा, दुशाले को कहते हैं। यह प्रायः दोहरी ऊनी चादर होती है, जिसके किनारों पर बेल–बूटे बने रहते हैं। बेल–बूटेदार अँगोछा या गमछा भी "दो थूरमा" कहलाता है, क्योंकि वह कन्धे के दोनों तरफ लटका रहता है।

इस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में बेल–बूटेदार अँगोछे का प्रयोग होता है तथा शीत ऋतु में दोहरी ऊनी चादर का प्रयोग होता है, इन्हें "दो थूरमा" कहकर सम्बोधित किया जाता है।

प्रेमदास बस्तर में, पहिनावत हैं सिनगार।

नन्दराम सामिल रहे, संग लाल कस बांधनहार।।२६।।

श्रीजी का श्रृँगार करते समय प्रेम दास जी वस्त्र पहनाने

की सेवा करते हैं। इस कार्य में नन्द लाल जी सम्मिलित रहते हैं। साथ में श्री लालदास जी भी कस बाँधा करते हैं।

लालबाई कस बांधत, मकरन्द दास रहे भेले।
लाल दास के बदले, सेवा में रहे ए।।२७।।

श्री लालदास जी की अनुपस्थिति में उनकी धर्मपत्नी लालबाई जी कस बाँधने की सेवा करती हैं। उनके साथ इस सेवा में मकरन्द दास जी भी रहा करते हैं।

जब पहुंचे इत महाराज, पहिनावत सिनगार।
सेवा करे सनेह सों, जान के धनी निरधार।।२८।।

जब कभी महाराजा छत्रशाल जी पहुँच जाते हैं, तो अपने हाथों से श्रीजी के श्रृँगार रूप में वस्त्रों को पहनाते

हैं। वे श्री प्राणनाथ जी को साक्षात् धाम धनी मानकर प्रेमपूर्वक यह सेवा करते हैं।

बल्लभ जीवी प्रेमबाई, बांधे चन्द्रवा सेतखान।
ए सेवा नित करें, एही लई इनों मान।।२९।।

बल्लभ, जीवी, तथा प्रेम बाई शौचालय (सेतखान) के ऊपर चन्दवा बाँधने की सेवा करते हैं। इन्होंने इसे ही अपनी प्रतिदिन की सेवा मान लिया है।

भावार्थ– उस समय आजकल की तरह पक्के शौचालय नहीं हुआ करते थे। कच्चे शौचालयों के ऊपर कपड़े का चन्दवा बाँध दिया जाता था।

प्रात समें पधारत, हरबंस के घर।
पावड़े बिछावत प्रेम सों, लाल बाई सेवा पर।।३०।।

प्रातःकाल श्रीजी हरिवंश जी के घर पधारते हैं। इस समय लाल बाई जी धाम धनी के लिये पाँवड़े बिछाने की सेवा किया करती हैं।

सेतखानों घन स्याम को, था हरबंस के पास।
फेर अपने ढिग किया, ए सेवा करी इनों खास।।३१।।

शौचालयों की व्यवस्था घनश्याम जी किया करते थे। पहले यह सेवा हरिवंश जी के पास थी। पुनः घनश्याम जी ने यह सेवा स्वयं ले ली। इन्होंने इस सेवा को विशेष रूप से निभाया।

चरन दासी पनहीं, पहिले रखी दास नारायन।
कोई दिन मोहन रखी, फेर लई खिमाई जान।।३२।।

श्रीजी के चरण कमलों में खड़ाऊँ पहनाने की सेवा

पहले नारायण दास जी किया करते थे। इसे कुछ दिनों तक मोहन जी ने भी किया। पुनः इस सेवा का उत्तरदायित्व खिमाई भाई ने सँभाला।

फेर श्री राजें रीझ के, दई वल्लभ दास।

कोईक दिन खिमाई सामिल, फेर आई वल्लभ पास।।३३।।

पुनः धाम धनी ने बहुत अधिक प्रसन्न होकर वल्लभ दास जी को यह सेवा दी। कुछ दिनों तक खिमाई भाई इस सेवा में सम्मिलित रहे, पुनः यह सेवा अकेले वल्लभ दास जी करने लगे।

पांवड़े बिछावत बकाई, और सेवा करे किसनी।

चलते सैंया बिछावहीं, ए सेवा की निसानी।।३४।।

श्रीजी के चलते समय पाँवड़े बिछाने की सेवा बकाई

भाई और किसनी किया करते हैं। यह उनकी समर्पित सेवा की पहचान है कि श्रीजी के चलते समय भी वे पाँवड़े बिछाने की सेवा में तत्पर रहते हैं।

लोटा भर के ल्यावहीं, ए जो भाई सिवराम।
दोनों बखत राखत, ए सेवा के काम।।३५।।

शिवराम भाई श्रीजी के लिए लोटे में जल भरकर लाते हैं। इस सेवा को वे प्रातः-सायं दोनों समय पूरी निष्ठा के साथ निभाते हैं।

भावार्थ- जिन सुन्दरसाथ ने श्री प्राणनाथ जी को प्रियतम अक्षरातीत के रूप में पहचान लिया है, वे श्रीजी की सेवा का छोटा सा भी अंश पाकर निहाल हो जाते हैं और स्वयं को धन्य-धन्य मानते हैं।

सेवा डब्बा रूमाल की, लाल बाई धरे।

बदले लाल बाई के, दयाली जो करे।।३६।।

लालबाई मुखवास का एक डिब्बा रखती हैं, जिसमें लौंग, इलायची, इत्यादि पदार्थ रखे रहते हैं। साथ ही हाथ पोंछने के लिए रूमाल भी रखती हैं। श्रीजी के लिए ये दोनों वस्तुएँ उनकी सेवा में प्रस्तुत करती हैं। लालबाई जी की अनुपस्थिति में दयाली बहन इस सेवा को किया करती हैं।

इत पलास के वृक्ष तले, हरवंस देवकी रहें।

साथी जो संग आवत, ताकी सेवा जुगतें करें।।३७।।

यहीं पर पलाश के वृक्ष के नीचे हरिवंश और देवकी जी अपना छोटा-सा निवास बनाकर रहा करते हैं। श्रीजी के साथ जो सुन्दरसाथ यहाँ पर आते हैं, उनकी ये बहुत

अच्छी तरह से सेवा करते हैं।

भावार्थ– श्रीजी के साथ आने वाले सुन्दरसाथ ने श्री बँगला जी के चारों तरफ अपनी छोटी–छोटी कुटियाँ बना ली थीं। वहीं उनका घर था। सबकी यही भावना रहती थी कि हम थोड़े समय के लिए भी धाम धनी से अलग न रहें।

करत ताते जल को, बड़े माट भरे धरे।

जल झारी दातोन, साथ आगे धरे।।३८।।

गुनगुना जल बड़े–बड़े मटकों में भरकर सुन्दरसाथ के लिए रख देते थे। वे सुराही में जल के साथ–साथ दातौन भी सुन्दरसाथ की सेवा में उपस्थित करते थे।

कोई दिन सेवा करी, गुल मुहम्मद दौलत।

नित राज पधारत, साथ सेवा करें इत।।३९।।

कुछ दिनों तक गुल मुहम्मद और दौलत खान ने यह सेवा की। धाम धनी प्रतिदिन यहाँ आते हैं और सुन्दरसाथ यहाँ आकर प्रेमपूर्वक सेवा करते हैं।

सूरज मुखी लिए खड़ा, हाथ पकड़े बदले।

सूरज सामी करत हैं, बदले यों सेवे।।४०।।

श्री प्राणनाथ जी के चलते समय शेख बदल हाथों में सूरजमुखी लेकर खड़े होते हैं। वे सूर्य के सामने हमेशा सूरजमुखी के फूलों को रखते हैं, जिससे श्रीजी के चेहरे पर धूप न लगे। शेख बदल जी इस प्रेममयी भावना के साथ सेवा करते हैं।

अमोला प्रभावती, प्रात लिए मोरछल ये।

करत ऊपर राज के, जोलों केसव न पहुंचे।।४१।।

प्रातःकाल अमोला और प्रभावती मोरछल लेकर धाम धनी के ऊपर तब तक ढुलाती रहती हैं, जब तक केशव दास जी नहीं आ जाते।

भावार्थ- मोरछल एक प्रकार का चँवर है, जिसे मोर के पँखों से बनाया जाता है। चँवर, सुरा गाय की पूँछ के बाल के गुच्छे से बनाया जाता है। चँवर ढुलाने का उदेश्य अपने हृदय की श्रद्धा को प्रकट करना होता है।

दोनों बाजू मोरछल, केसव संकर लिए हाथ।

नन्दराम सामिल रहे, चलत राज के साथ।।४२।।

श्रीजी के दोनों ओर केशव दास जी तथा शँकर जी अपने हाथों में मोरछल लेकर खड़े रहते हैं। इस सेवा में

नन्दराम जी भी सम्मिलित रहते हैं और वे धाम धनी के साथ–साथ चला करते हैं।

छत्र सिर पर फेरत, बल्लभ चले पीछे।

ए सेवे सनेह सों, खड़ा रहे पकड़ के।।४३।।

बल्लभ दास जी चलते समय श्रीजी के शिर के ऊपर छत्र रखे रहने की सेवा करते हैं। यह इनकी प्रेम भरी सेवा है, जो हमेशा हाथों में छत्र पकड़कर श्रीजी के पीछे –पीछे खड़े रहते हैं।

हरबंस के घर से फिरे, चले पांवड़े पर।

हंसे हंसावे साथ को, पहुंचावे मानिक गादी पर।।४४।।

जब श्रीजी हरिवंश जी के घर से वापस लौटते हैं, तो वे बिछाये हुए पावड़े पर चलते हैं। वे स्वयं हँसते हैं तथा

सुन्दरसाथ को भी हँसाते हैं। मानिक भाई श्रीजी को गादी पर बिठाने की सेवा करते हैं।

एक बिछावें धन बाई, एक बिछावें घनस्याम।
हरबंस के घर से फिरे, तब इने सेवा का ए काम।।४५।।

जब श्रीजी हरिवंश जी घर से वापस लौटते हैं, तब एक पाँवड़े को बिछाने की सेवा धनबाई जी करती हैं तथा दूसरे पाँवड़े को बिछाने की सेवा घनश्याम जी किया करते हैं।

हिम्मत जब आइया, बिछावत पांवड़े।
मांग लिया लालबाई से, सेवा करे नित ए।।४६।।

जब हिम्मत सिंह आ जाते हैं, तो वे पाँवड़े बिछाते हैं। उन्होंने लालबाई से यह सेवा प्रेमपूर्वक माँग ली थी और

उसे वे प्रतिदिन करते हैं।

हाथ पकड़ बैठावत, धन बाई रामकुंवर।

जब चरन पखालत, बैठें कुरसी या पलंग पर।।४७।।

जब श्रीजी के चरण धोने का समय होता है, तो वे कुर्सी या पलंग पर बैठते हैं। तो उस समय धनबाई और रामकुँवर जी उनका हाथ पकड़कर बैठाते हैं।

चरण प्रछाल के तखत से, उतर के उतारे वस्तर।

बैठे चन्दन चौकी पर, मरदन होत फुलेल अतर।।४८।।

जब श्रीजी के चरण कमल धो दिये जाते हैं, तो वे तख्त से उतरते हैं और अपने वस्त्रों को उतारते हैं। इसके पश्चात् वे चन्दन की बनी हुई चौकी पर बैठ जाते हैं, जहाँ उनके शरीर पर इत्र और सुगन्धित तेल से मालिश की

जाती है।

कबहूं बैठे पलंग पर, लवाजमें दन्त धावन।

ले रूमाल ठाढ़े दोऊ बाजू, नारायन केसव सैयन।।४९।।

धाम धनी कभी पलंग पर भी बैठ जाते हैं, तब दन्त-धावन की सामग्री लाई जाती है। श्रीजी के दोनों तरफ नारायण, केशव दास, तथा अन्य सुन्दरसाथ रूमाल लेकर खड़े रहते हैं।

छबीला अत छबसों, ल्याया कंचन मढ्यो दातोन।

जल ताता सीरा समें, करे सेवा दे मन।।५०।।

छबील दास बहुत सजावट के साथ दातौन लाते हैं, जिसका निचला भाग कञ्चन से मढ़ा होता है। वे पूर्ण समर्पित मन से श्रीजी को गुनगुना जल देने की सेवा

करते हैं।

चिलमची हाथ में, नन्दराम पकड़ बैठत।

श्री राज हाथ पखालत, संकर बांटत चरणामृत।।५१।।

नन्दराम जी हाथ में चिलमची पकड़कर बैठे रहते हैं और श्रीजी का हाथ धुलाते हैं। शँकर भाई उस जल को चरणामृत के रूप में सबमें बाँट देते हैं।

भावार्थ– "चिलमची" एक टोंटीदार बर्तन होता है, जिसका प्रयोग हाथ, पैर, और मुख, आदि धोने में किया जाता है।

श्री राज अस्नान करके, तिलक चन्दन का समीर मिलाए।

भाल में आप देए के, कर चितवन साथ को दिखाए।।५२।।

श्री प्राणनाथ जी स्नान करके अपने ललाट पर केशर मिश्रित चन्दन का तिलक स्वयं लगाते हैं क्योंकि अब उन्हें सुन्दरसाथ को चितवनि के द्वारा परमधाम दिखाना है।

तहां से आए तखत पर, धरे दोऊ कदम।
साथ खड़ा सेवन को, जान अपनी आतम।।५३।।

वहाँ से आकर तखत पर विराजमान होते हैं और अपने दोनों चरण कमल नीचे रख देते हैं। वहाँ सुन्दरसाथ श्रीजी को अपनी आत्मा का प्रियतम मानकर सेवा के लिए पहले से तैयार खड़े रहते हैं।

फुलमा बनावत, भर ल्यावत डब्बी।
नूर महम्मद सेवत है, गुल महम्मद को दी।।५४।।

नूर मुहम्मद बारीक सुगन्धित सुपारी, इलायची, जावत्री, जायफल, आदि को मिलाकर प्रेमपूर्वक फुलमा बनाते हैं और उससे डिब्बी भरकर लाने की सेवा करते हैं। उन्होंने बाद में यह सेवा गुल मुहम्मद को दी।

रूपा बाई को रीझ के, सेवा दई श्री राज।
नित हरड़े अरूगावहीं, रहे इन सेवा के काज।।५५।।

धाम धनी ने रूपा बाई को रीझकर प्रतिदिन हरड़ खिलाने की सेवा दी है। वे इस सेवा में पूरी निष्ठा से लगी रहती हैं।

पांखड़ी छबील दास सामिल, सेवत है दिन रात।
अमल ल्याई अरूगावने, मीठी बातें करें विख्यात।।५६।।

पाँखड़ी भाई और छबील दास दिन-रात हमेशा सेवा में

लगे रहते हैं। श्रीजी के लिए तुलसी, लौंग, इलायची, जावत्री, मिश्री, दालचीनी, और अदरक का काढ़ा बनाकर पिलाया जाता है। श्रीजी से सब सुन्दरसाथ प्रेम में भरी हुयी मीठी बातें करते हैं।

आए मुकुन्ददास हाजिर, चीरा बंधावें चौपदे चित।
कानढपी तिन ऊपर, गोदावरी बांधत।।५७।।

मुकुन्द दास जी सेवा में उपस्थित होते हैं। वे एकाग्र चित्त होकर अच्छी तरह से श्रीजी के सिर पाग बँधवाते हैं। उसके ऊपर गोदावरी बहन कनढपी रखती हैं।

तुर्रा कलंगी परन की, राखत मकुन्ददास।
चीरा बंधावने बखत हाजिर करें, लटकत तुर्रा खास।।५८।।

मुकुन्द दास जी अपने साथ पँखों से बनी हुयी कलंगी

और तुर्रा रखते हैं। जब श्रीजी की पाग बाँधी जा रही होती है, तो उस समय तुर्रा और कलंगी श्रीजी की सेवा में उपस्थित करते हैं। पाग में बँधा हुआ तुर्रा विशेष रूप से लटकता हुआ दिखाई देता है।

भावार्थ– तुर्रा पाग के ऊपर आए हुए मुकुट के बीच में लगाया जाता है। पक्षियों के पँखों से बनी हुयी कलंगी, तुर्रा के दांये–बांये बगल में लगी रहती है।

सिर पाग बांधें चतुराई सों, हक पेंच हाथ में ले।
भाव दिल में लेए के, सुख क्यों कहुं बिध ए।।५९।।

आप अक्षरातीत श्रीजी स्वयं अपने हाथों से पेंच मिलाकर बहुत चतुराईपूर्वक अपने शिर पर पाग बाँधते हैं। जिस प्रकार अपने दिल में प्रेम का भाव लेकर पाग बाँधते हैं, उस समय के सुख को मैं किस प्रकार से कहूँ?

मकुन्ददास के सामिल, आए मकुन्द दास पहुंचे।

छेड़ा पकड़ ठाढ़ा रहें, आए सेवा करे ये।।६०।।

पाग बाँधते समय मुकुन्द दास जी के साथ दूसरे मुकुन्द दास जी भी उपस्थित हो जाते हैं और वे पाग के कपड़े का एक किनारा पकड़कर खड़े रहते हैं। इनकी यह प्रतिदिन की सेवा है।

अगरदास ठाढ़ा रहें, ले हाथ में दरपन।

सेवा करे समार की, ए सेवे चित दे मन।।६१।।

पाग बाँधते समय अगरदास जी दर्पण लेकर खड़े रहते हैं। वे दर्पण दिखाकर पाग को ठीक करवाने की सेवा करते हैं। यह सेवा वह पूरे समर्पित चित्त, मन के साथ करते हैं।

तामें सामिल सीताराम, और गुल महम्मद।

बंसी भी सेवा मिने, मन में धरे आनन्द।।६२।।

इस सेवा में सीताराम, गुल मुहम्मद, और वंशी जी तल्लीन रहते हैं और अपने मन में हमेशा आनन्द बनाए रखते हैं।

नित ल्यावे दरपन को, ए जो अगरदास।

सिर पेंच बखत हाजिर करें, ए सेवे दिल खास।।६३।।

अगरदास जी पाग बाँधते समय हमेशा दर्पण लाते हैं। शिर पर पाग के पेंच बाँधते समय, वे उसे उपस्थित करते हैं। अपने दिल में विशेष भाव लेकर वे यह सेवा करते हैं।

केते दिन सेवा करी, ऊधो दास तिलक।

पीछे लई छबीलदास ने, करें प्रेम सों हक।।६४।।

कुछ दिनों तक उद्धव दास जी ने तिलक लगाने की सेवा की। उसके बाद छबील दास जी ने यह सेवा ले ली और वे बहुत प्रेमपूर्वक धाम धनी की सेवा करते रहे।

चन्द्रिका लटकें सिर पर, हीरा जोत अपार।

चारों तरफों किरना उठें, तले मोती लटकत हार।।६५।।

श्रीजी के शिर पर आयी हुयी पाग में चन्द्रिका लटक रही होती है, जिसमें जड़े हुये हीरों की अपार ज्योति हो रही है। चन्द्रिका में जड़े हुए मोतियों की लरें लटक रही हैं, जिनसे चारों तरफ किरणें उठ रही हैं।

भावार्थ- "चन्द्रिका" चाँद की आकृति वाला एक आभूषण होता है, जिसमें नंग जड़े होते हैं। इसमें कमल

के फूल की तरह आकृतियाँ बनी होती हैं।

बैठत चीरा बांध के, ऊका ल्याया कलंगी।
हेतें हाथों बनावहीं, ये सेवा इनकी।।६६।।

पाग बाँधकर श्रीजी जब सिंहासन पर विराजमान होते हैं, तो ऊका भाई कलँगी लेकर आते हैं। वे अपने हाथों से बहुत प्रेम भाव से कलँगी बनाते हैं। यह उनकी विशेष सेवा है।

फूलहार बनावत, रामदास धरमा।
ढोला पहुंचावत हैं, बोले ललिता राज खंमा।।६७।।

रामदास और धरमा बाई फूलों के हार बनाते हैं, तथा उसे टोकरी में भरकर श्रीजी के पास लाते हैं। ललिता सखी आकर अपना प्रिय वाक्य दोहराती हैं- "श्री राज

जी सबका मंगल करें।"

झोली मया राम की, सब फकीरी साज।

गोदड़ी पेबंद की, ओढ़ावत हैं राज।।६८।।

मयाराम की झोली में विरक्त जीवन में काम आने वाली सारी वस्तुएँ रखी रहती हैं। छोटे-छोटे कपड़ों को जोड़कर सिली हुयी गुदड़ी भी वह रखते हैं तथा धाम धनी को ओढ़ाते हैं।

सुमरनी कपूर की, ल्याए के देवें हाथ।

चिप्पी सेली मुतका, माला ल्यावें गोदरी साथ।।६९।।

वे कपूर की बनी हुयी सुमरनी लाकर श्रीजी के हाथों में पकड़ा देते हैं। वे गोदड़ी के साथ चिप्पी, सेली, तथा छड़ी, और माला भी श्रीजी को देते हैं।

भावार्थ– नारियल का बना हुआ बर्तन, जो कमण्डल के रूप में प्रयोग किया जाता है, चिप्पी कहलाता है। सैली काले धागे की बनी हुयी एक माला होती है। सुमरनी एक छोटी सी माला होती है, जिसे हाथ में पकड़कर जप किया जाता है।

सुई तागा कोकड़ी, और केतेक सुए बड़े।
अजमा सोंठ पीपर, मसाला गंधियान केते।।७०।।

मयाराम की झोली में सुई, धागा, कुकड़ी, कुछ बड़ी सुइयाँ, अजवायन, सौंठ, पीपर, तथा अन्य कई प्रकार के सुगन्धित मसाले रखे रहते हैं।

भावार्थ– चर्खे में कातकर उतारा हुआ कच्चे सूत का लपेटा हुआ लच्छा कुकड़ी कहलाता है।

काम पड़े मंगावत, बुलाओ मयाराम।

झोली में से ल्याए के, हाजिर करें तमाम।।७१।।

आवश्यकता पड़ने पर श्रीजी मयाराम जी को बुलवाते हैं। मयाराम जी तुरन्त आकर झोली में से वह सामान निकालकर दे देते हैं।

इत महाराजा आवत, पहनावत हैं सिनगार।

पहिनावत बीटी बदले, दई अपने हाथ उतार।।७२।।

जब महाराजा छत्रशाल जी आते हैं, तो श्रीजी को श्रृँगार कराते हैं और धाम धनी की अँगुलियों में अपने हाथ की अँगूठी उतारकर पहना देते हैं।

भूखन श्री बाई जी ल्यावत, उमंग में दे चित्त।

ए जो गोदावरी रूकमनी, संग आवत इत।।७३।।

अपने मन में अत्यधिक उमंग भरकर श्री बाई जी श्रीजी के लिए आभूषण लाती हैं। इस समय उनके साथ गोदावरी और रुकमणि भी आती हैं।

रकेबी रूपे की, भर ल्यावत भूखन।

रूमाल ढाँप के ल्यावत, महाराजा पहिनावत मोमिन।।७४।।

चाँदी के थाल में श्रीजी के आभूषण रखकर लाए जाते हैं। थाल को रूमाल से ढककर लाया जाता है और महाराजा छत्रशाल जी उन्हें पहनाते हैं।

माला दो मोतिन की, जड़ाव मुंदरी कंचन।

सोने की दो सांकली, दुगदुगी मानिक रोसन।।७५।।

श्रीजी के गले में मोतियों की दो माला होती हैं तथा सोने की दो जँजीरें होती हैं। जँजीरों में दुगदुगी (लॉकेट) होती है, जिसमें माणिक के नंग जगमगा रहे होते हैं। श्रीजी के हाथों की अंगुलियों में नंगों से जड़ित कँचन रंग की मुँदरियाँ शोभायमान हो रही हैं।

और सांकली दोहोरी, चंपकली नवसर।

तापर कंठी बिराजत, तीन सरी ऊपर।।७६।।

श्रीजी के गले में एक छोटी और एक बड़ी जँजीर सुशोभित हो रही है। चम्पा की कली के समान नौ लड़ियों वाला हार भी जगमगा रहा है। इसके ऊपर तीन लड़ियों वाला हार (कण्ठी) झलकार कर रहा है।

और कंठी मोतिन की, तले मानिक मोती लटकत।
श्री राज कण्ठ विराजत, रोसन ज्यों झलकत।।७७।।

इसके अतिरिक्त एक लड़ी की मोतियों की मोटी माला दृष्टिगोचर हो रही है, जिसके नीचे के भाग में जड़े हुए माणिक और मोती लटक रहे हैं। इस प्रकार धाम धनी का गला इन हारों की आभा से झलकार कर रहा है।

पहनाए भूखन पीछे फिरें, श्री बाई जी अपने मंदिर।
राज भोग अरूगावत, सेवा रसोई पर।।७८।।

श्री राज जी (श्रीजी) को आभूषण पहनाकर श्री बाई जी अपने निवास स्थान में लौट जाती हैं। रसोई की सेवा में रहने वाले सुन्दरसाथ श्रीजी को हल्का आहार कराते हैं।

आई जी अरूगावने, ल्याई बाल भोग।

रतन बाई मूंग ल्याई, आए पहुंची संजोग।।७९।।

श्री तेज कुँवरी जी की माताजी श्री प्राणनाथ जी के लिए प्रातःकाल का हल्का आहार (जलपान) कराने के लिए लेकर आती हैं। उसी समय संयोगवश रतन बाई भी मूँग लेकर आ जाती हैं।

ले ले दौड़े और कोई, सो केती कहों बात।

आरोगत हैं हेत सों, कोई प्रेम बरते कर विख्यात।।८०।।

अन्य सुन्दरसाथ भी अपने साथ कुछ अन्य पदार्थ लेकर दौड़े-दौड़े आते हैं। इस प्रेममयी लीला का वर्णन मैं किस प्रकार करूँ? श्रीजी प्रेमपूर्वक सबके लाये हुए भोजन में से थोड़ा-थोड़ा ग्रहण करते हैं और सबके प्रति अपना प्रेमभाव दर्शाते हैं।

इन समें छबीलदास, जल देवें कटोरा भर।

बात पूछे कोई बीच में, ताको देत उत्तर।।८१।।

इस समय छबीलदास जी कटोरे में भरकर जल देते हैं। भोजन करते समय यदि बीच में कोई प्रश्न पूछता है, तो धाम धनी उसका उत्तर भी देते हैं।

आसबाई अर्ज करे, पधारो घर मानिक।

श्री राज रीझ के बोलत, आई बाई बुजरक।।८२।।

श्री लालदास जी धाम धनी के चरणों में प्रार्थना करते हैं कि आज मानिक भाई के घर पधारना है। श्री लालदास जी की उत्तम व्यवस्था पर प्रसन्न होकर श्रीजी कहते हैं कि देखो! परमधाम की यह महान आत्मा आ गयी हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में श्रीजी ने श्री लालदास जी को विशेष शोभा देते हुए उन्हें "महान

आत्मा" कहकर सम्बोधित किया है। परमधाम में वहदत होने से सबकी गरिमा (महानता) एक समान है, किन्तु इस नश्वर जगत में श्री लालदास जी ने अपने समर्पण के द्वारा श्रीजी के हृदय में यह स्थान बना लिया है कि उन्हें सब सुन्दरसाथ के बीच में श्री लालदास जी को महान आत्मा कहना ही पड़ता है।

पनही जोड़े जड़ाव की, ल्याया बल्लभदास।
छत्र सिर पर फेरत, ए मोमिन हैं खास।।८३।।

वल्लभदास जी श्रीजी के लिए नंगों से जड़े हुए दो खड़ाऊँ लेकर आते हैं। वे श्रीजी के शिर के ऊपर छत्र लेकर चला करते हैं। ये परमधाम के वे ब्रह्ममुनि हैं, जिनका जीवन ही विशेष रूप से प्रेम और सेवा के लिए है।

पांव तले पांवड़ा, लालबाई बिछावत।

और बिछावत किसनी, लेकर दिल में हित।।८४।।

धाम धनी के चरणों में पाँवड़े बिछाने की सेवा लालबाई और किशनी जी किया करती हैं। यह सेवा वे अपने दिल में बहुत प्रेम लेकर करती हैं।

उठत पलंग पर से, धनबाई लेवें हाथ।

दूजी तरफ लालदास, सेवा हाथ पकड़ने खास।।८५।।

धाम धनी जब पलंग से उठते हैं, तो एक तरफ धन बाई उनका हाथ पकड़ती हैं और दूसरी तरफ श्री लालदास जी। श्रीजी का हाथ पकड़ने की उनकी यह विशेष सेवा है।

हाथ आसा गंगादास के, दूजी तरफ दास लाल।

मकरन्द रहे सामिल, हाथ पकड़ने की चाल।।८६।।

चलते समय श्रीजी का एक हाथ गँगादास जी के हाथ में पकड़ी हुयी लाठी पर होता है, तो दूसरा हाथ श्री लालदास जी के हाथ में। श्रीजी का हाथ पकड़कर चलने की सेवा में मकरन्द जी भी सम्मिलित रहते हैं।

जब महाराजा पहुंचहीं, उठावत पकड़ हाथ।

लालदास बदले लालबाई, कोई समें पकड़ चलें हाथ।।८७।।

जब महाराजा छत्रशाल जी इस समय पहुँच जाते हैं, तो श्री प्राणनाथ जी का हाथ पकड़कर उठाते हैं। कभी-कभी श्री लालदास जी के बदले लालबाई भी श्रीजी का हाथ पकड़कर चलती हैं।

हंसावत हैं राज को, जरा सेवा में।

आड़ी आए ठाढ़ी रहे, राज रीझे तिन से।।८८।।

लालबाई अपनी थोड़ी सी सेवा से भी धाम धनी को हँसाने का प्रयास करती हैं। वे श्रीजी के सामने आकर रास्ते में उन्हें रोकने की मुद्रा में खड़ी हो जाती हैं। उनके इस व्यवहार से धाम धनी बहुत खुश होते हैं।

लटके मटके चलत, संग वानी गावनहार।

संग संकर दास के, और साथ सिरदार।।८९।।

श्री प्राणनाथ जी प्रेम भरी आनन्दमयी चाल से चलते हैं। उनके साथ वाणी गाने वाले सुन्दरसाथ होते हैं। श्रीजी के साथ शँकर और लालदास जी के अतिरिक्त और भी अन्य प्रमुख सुन्दरसाथ होते हैं।

मानिक मंदिर अपने, करें बिछौने जे।

चारों तरफों चन्द्रवा, और रखे गादी तकिए ए।।९०।।

मानिक भाई अपने घर में श्रीजी के स्वागत की तैयारी में बिछौने बिछा देते हैं, और गादी पधराकर तकिए रख देते हैं तथा उसके चारों ओर चँद्रवा तान देते हैं।

सुआ को सेवा दई, अन्दर उतारन।

नित्याने हजूर रहे, करत अपने तन।।९१।।

सुआ बाई को धाम धनी ने मानिक भाई के घर के अन्दर ले जाने की सेवा दी। वे प्रतिदिन उपस्थित रहकर अपने तन से यह सेवा करती हैं।

जोड़े मंदिर गंगादास का, तहां बिछौने सब साज।

तहां राज बिराजत, सब पूरे मनोरथ काज।।९२।।

मानिक भाई के घर के पास ही गँगादास जी का घर है। वहाँ भी बिछौने आदि बिछाकर बैठने की व्यवस्था की जाती है। धाम धनी वहाँ विराजते हैं और सबकी इच्छाओं को पूर्ण करते हैं।

मोदी बड़ा बूलचन्द, चले राज संग ए।

ठौर पहुंचे बोलहीं, धाम धनी की जै।।९३।।

बड़े बूलचन्द मोदी एक वयोवृद्ध व्यक्ति हैं। वे श्रीजी के साथ चला करते हैं, और हर जगह पहुँचकर धाम धनी की जय-जयकार बोला करते हैं।

गौर बाई रहत है, हाथ उठावने सेवा में।

हाथ पकड़ बैठावत, करे सेवा खुसाली से।।९४।।

श्रीजी का हाथ पकड़ कर उठाने की सेवा में गौरबाई रहती हैं और वे हाथ पकड़कर बैठाती भी हैं। यह सेवा वे बहुत प्रसन्नतापूर्वक करती हैं।

भावार्थ– यद्यपि श्रीजी का पञ्चभौतिक तन स्वयं उठने और बैठने में समर्थ है, किन्तु सुन्दरसाथ का व्यक्तिगत भाव होता है कि हम धाम धनी को उठते समय हाथ पकड़कर उठायें और बैठते समय हाथ पकड़कर बैठायें।

पहिले मोरछल में, रहता था नंद राम।

दूजी तरफ केसवदास, करत एही काम।।९५।।

पहले नन्दराम जी श्रीजी के पास मोरछल लेकर खड़े रहते थे तथा दूसरी तरफ केशव दास जी खड़े होकर

यही सेवा किया करते थे।

यों करते मानिक के, घर से फिरे जब।

मोरछल हाथ में लेए के, सेवा करे तब।।९६।।

इस प्रकार श्रीजी मानिक भाई के घर से जब वापस लौटते हैं, तब हाथ में मोरछल लेकर केशवदास जी चँवर ढुलाने की सेवा करते हैं।

और दूजा मोरछल, संकर लिए हाथ।

और चैंरी जड़ाव की, लिए बल्लभदास के साथ।।९७।।

और दूसरा मोरछल शँकर जी के हाथ में होता है, जिससे वे चँवर ढुलाते हैं। वल्लभ दास जी के पास चाँदी के हत्थे से जड़ा चँवर होता है, जिससे वे धाम धनी की सेवा करते हैं।

सामिल बल्लभ दास के, खुसाल बखतावर।

हजूर हमेसा रहे, सेवा करे चित धर।।९८।।

वल्लभदास जी के साथ खुशाल और बखतावर भी हमेशा सेवा में उपस्थित रहते हैं और सच्चे हृदय से सेवा करते हैं।

बल्लभ दास के सामिल, रहे महम्मद खान।

मेहनत सेवा मिने, करे दिल में ले ईमान।।९९।।

मुहम्मद खान भी वल्लभ दास जी के साथ इस सेवा में रहते हैं। वे अपने दिल में सच्चा ईमान लेकर धनी की सेवा में बहुत अधिक परिश्रम करते हैं।

लटके मटके चलत, फेर बैठे पलंग आए।

सामे मुरलीधर आसन किया, श्रवना देत बनाए।।१००।।

श्रीजी प्रेम भरी मस्ती की चाल से चलते हैं और पुनः अपने पलंग पर आकर विराजमान हो जाते हैं। उनके ठीक सामने नीचे मुरलीधर जी भी अपना आसन जमाकर चर्चा सुनने के लिए बैठ जाते हैं।

ऊपर पहर दिन के, आए मानिक के घर से।

पधारत पलंग पर, हुआ चरचा समें।।१०१।।

प्रातः ९ बजे के बाद श्रीजी मानिक भाई के घर से आते हैं और अपने पलंग पर विराजमान हो जाते हैं। यह समय चर्चा के लिए निश्चित होता है।

महामत कहे सुनों साथ जी, ए पोहोर एक की बिरत।

जो होत है ता पर, सोए बताऊं जुगत।।१०२।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह आपने प्रातःकाल के पहले प्रहर ६ से ९ बजे तक की लीला का वर्णन सुना। उसके पश्चात् दूसरे प्रहर में श्री पद्मावती पुरी धाम में जो लीला होती है, उसको मैं युक्तिपूर्वक बताने जा रहा हूँ।

प्रकरण ।।६३।। चौपाई ।।३७४४।।

दूसरा पहर

अब कहों दूसरे पहर की, सेवा साथ की जे।

जिन भांत जो होत है, हक मेहर उतरी ए।।१।।

अब मैं दूसरे प्रहर प्रातः ९ बजे से लेकर १२ बजे तक सुन्दरसाथ द्वारा की जाने वाली धाम धनी की सेवा का वर्णन कर रहा हूँ। दूसरे प्रहर में यह लीला जिस प्रकार होती है, उसका शब्दों में वर्णन प्रस्तुत है। धाम धनी की मेहर से ही इस लीला को कहा जा सका है।

दोऊ बाजू पलंग के, बैठत लाल केसवदास।

फुरमान हदीसां पढ़न की, राज रिझावन आस।।२।।

श्रीजी के पलंग के दोनों ओर लालदास जी और केशव दास जी बैठा करते हैं। वे श्रीजी की चर्चा के समय

कुरआन–हदीस तथा भागवत आदि पढ़कर अपने धाम धनी को रिझाते हैं।

धनी धाम के देत हैं, निजधाम के निसान।
लेवें मोमिन मिल के, अरस सुख सुभान।।३।।

धाम के धनी परमधाम की शोभा का वर्णन करते हैं और सभी ब्रह्ममुनि मिलकर प्रियतम अक्षरातीत द्वारा दिए गए इस अखण्ड सुख को ग्रहण करते हैं।

राज हेत कर कहत हैं, काका बुलाओ सिताब।
दोऊ बाजू रेहेलां धरें, तापर धरें किताब।।४।।

श्रीजी बहुत प्रेमपूर्वक कहते हैं कि जयन्ती काका को शीघ्र बुलाया जाये। श्रीजी के पलंग के दोनों ओर रेहले रखी होती हैं, जिन पर तरह–तरह के धर्मग्रन्थ रखे होते

हैं।

किताब खाना रखत हैं, संदूका सब साज।

सेवा करे सनेह सों, श्री राज रिझावन काज।।५।।

जयन्ती काका सन्दूक के अन्दर सारे धर्मग्रन्थों को रखते हैं। धाम धनी को रिझाने के लिए वे इस सेवा को बहुत प्रेमभाव से करते हैं।

हजूर हमेसा रहत हैं, थैलियें पैसे।

हुकम होये ताए देवहीं, काका सेवा करें ए।।६।।

जयन्ती काका हमेशा अपनी थैली में पैसे रखकर श्रीजी के सम्मुख उपस्थित रहते हैं। जिसे पैसे देने के लिए धाम धनी का आदेश होता है, उसे जयन्ती काका पैसे दे देते हैं। इनकी यह विशेष सेवा है।

बाघजी ले आवत, आगे धरें जंगोटा।

श्री राज रीझ के लेवत, वास्ते बैठक ओटा।।७।।

बाघ जी भाई जँगोटा लेकर आते हैं और उसे श्रीजी के आगे रख देते हैं। उसका सहारा लेकर बैठने के लिए, धाम धनी बहुत प्रसन्न होकर उसे ले लेते हैं।

भावार्थ– "जँगोटा" लकड़ी का बनाया जाता है, जिस पर एक हाथ रखकर बैठने में आराम मिलता है।

पंजा वनमाली दास का, देवे श्री राज के हाथ।

सुंदर सुभग सोभित, खजोले सुख पात।।८।।

वनमाली दास जी के हाथ से बना हुआ पँजा भी श्रीजी के हाथों में दिया जाता है। वह सुन्दर और मनमोहक रूप में सुशोभित होता है। उससे पीठ खुजलाने पर सुख मिलता है।

भावार्थ– वनमाली दास जी ने श्रीजी को चर्चा के समय पीठ खुजलाते हुए देखा, किन्तु उन्होंने यह अनुभव किया कि अपनी पीठ को खुजलाने के लिए श्रीजी जहाँ अपना हाथ पहुँचाना चाहते हैं, वहाँ पहुँच नहीं रहा। इसलिए उन्होंने लकड़ी का हाथ का पँजा ही बना दिया, जिससे इच्छानुसार पीठ में कहीं भी खुजलाया जा सके।

दुदंराए तपसीर ले, सुनावत अल्ला कलाम।

हजूर हमेसा बैठत, इनका एही काम।।९।।

दुन्दराय कुरआन की टीका लेकर उसे सुनाते रहते हैं और धाम धनी के सम्मुख हमेशा बैठे रहते हैं। इनकी यही विशेष सेवा है।

खुसखत किताब लिखके, पहुंचावत पैगाम।

वास्ते फरज उतरने, पहुंचाया खलक तमाम।।१०।।

दुन्दराय बहुत अच्छी लिखावट में पत्र लिखकर श्रीजी का सन्देश चारों ओर पहुँचाते हैं। अपना कर्त्तव्य पूरा करने के उद्देश्य से वे यह सेवा करते हैं। इस प्रकार उन्होंने चारों ओर जगह–जगह धाम धनी की तारतम वाणी का सन्देश पहुँचाया।

कोई दिन गोविन्द राए, और रहत टेकचन्द।

गाजी बनी असराईल की, बीतक बांचे श्री देवचन्द।।११।।

कुछ दिनों तक गोविन्द राय और टेकचन्द सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी तथा उनके साथ धर्म पर सर्वस्व समर्पित करने वाले सुन्दरसाथ की बीतक पढ़ा करते हैं।

और बद्री दास बैठत, वाका लिखा बरस एक।

सेवा है इनकी, और काम किए अनेक।।१२।।

बद्रीदास जी भी चर्चा में बैठते हैं। उन्होंने एक वर्ष तक प्रतिदिन का घटनाक्रम लिखा। यह उनकी विशेष सेवा है। इस प्रकार उन्होंने ऐसी कई सेवायें की।

पोहोकर बद्री सामिल, सेवा करत जो ए।

देवीदास बानी लिखें, पढ़ राज रिझावें जे।।१३।।

देवीदास जी तारतम वाणी लिखते हैं और उसे पढ़कर धाम धनी को रिझाते हैं। उनकी इस सेवा में बद्रीदास और पुष्करण भी सम्मिलित रहते हैं।

और बानी साथ ले खड़े, ए जो लिखन हार।

तथा मथुरा और तिमर, परसराम खबरदार।।१४।।

वाणी लिखने की सेवा में कुछ सुन्दरसाथ हमेशा तत्पर रहते हैं, जिनमें मथुरा, तिमर, एवं परशुराम जी बड़ी सावधानीपूर्वक वाणी लिखने की सेवा करते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के पहले चरण में कथित "खड़ा होना" एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य है तत्पर रहना।

पदमियां और बीरिया, और सूरत सिंह।

मकनिया लिखत हैं, जुगते कलाम सनंध।।१५।।

पद्मिया, बीरिया, सूरत सिंह, और मकनिया भी श्रीजी के मुखारविन्द से अवतरित होने वाली वाणी को युक्तिपूर्वक यथार्थ रूप में लिखते हैं।

हीरामन हेत सों, लिखत बानी सार।

और अपनी अपनी ले खड़े, ए हजूर बैठन हार।।१६।।

हीरामन बहुत प्रेमपूर्वक सभी धर्मग्रन्थों की सार रूप इस तारतम वाणी को लिखते हैं। धनी के सम्मुख रहने वाले सुन्दरसाथ अपनी-अपनी लिखी हुयी वाणी को श्रीजी को सुनाने के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं।

मोहना अत मोह सों, लिखे पढ़े भली भांत।

भवन अडग बैठत, गिरधर सुने एही बात।।१७।।

मोहना भाई बहुत ही लगन से वाणी को लिखते हैं तथा उसे पढ़कर श्रीजी को सुनाते हैं। धाम धनी के मुखारविन्द से चर्चा सुनने के लिए भवन जी बहुत स्थिर होकर बैठते हैं। इसी तरह गिरधर जी भी स्थिर बैठकर चर्चा सुना करते हैं।

हरिदास बैठत, बानी लिखने काज।

पुस्तक लिख घर में धरें, कोई ताले वाले के काज।।१८।।

हरिदास जी वाणी लिखने का कार्य किया करते हैं? वे तारतम वाणी के अलग-अलग ग्रन्थों को लिखकर अपने घर में रखते हैं, ताकि आने वाले समय में कोई ब्रह्मसृष्टि इसका लाभ उठा सके।

भागवत गीता के, रहस्य काढ़ दिखावें राज।

हजूर हमेसा रहत हैं, मिसर गोविन्द जी इन काज।।१९।।

श्रीजी श्रीमद्भागवत् एवं गीता के रहस्यों को अपनी चर्चा में स्पष्ट रूप से उजागर करते हैं। गोविन्द मिश्र जी चर्चा के महत्वपूर्ण प्रसंगों को लिखने के लिए हमेशा श्रीजी के पास बैठे रहते हैं।

श्री महाराजा आवत, बैठत चरचा में।

श्रवना देत सनेह सों, नफा पावे खलक इन सें।।२०।।

जब महाराजा छत्रशाल जी आते हैं, तो वे श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली चर्चा को प्रेमपूर्वक सुनने के लिए अवश्य बैठते हैं। सारे संसार को इन्हीं से ज्ञान का लाभ मिलना है, अर्थात् छठे दिन की लीला में श्रीजी ने श्री छत्रशाल जी को ही जागनी का उत्तरदायित्व सौंपा है।

श्री मुख से चरचा करें, अत मीठी रसाएन बैन।

दे साख वेद कतेब की, अत देत सुख चैन।।२१।।

धाम धनी अत्यधिक मीठी रसना से भरपूर चर्चा करते हैं। वे वेद–शास्त्र और कतेब ग्रन्थों की साक्षियाँ देते हैं, जिसे सुनकर सबको बहुत अधिक आनन्द होता है।

सनमुख श्रवना देत हैं, मुरली धर बनाए।

ना आसन नेत्र डगावहीं, रहें दृस्टें दृस्ट जुड़ाए।।२२।।

जब श्रीजी चर्चा करते हैं, तब मुरलीधर जी उनके सामने बैठकर चर्चा सुनते हैं। न तो उनका आसन हिलता है और न उनके नेत्र हिलते हैं। उनकी दृष्टि हमेशा श्रीजी की दृष्टि से मिली रहती है।

दिल दरियाव खुलत है, कई लहरां उठत तरंग।

श्रवना देत जो साथ जी, कई उपजत अंग उमंग।।२३।।

श्री प्राणनाथ जी के हृदय में जब ज्ञान का अनन्त सागर उमड़ने लगता है, तो उसमें से ज्ञान की लहरों की बहुत सी तरंगे उठा करती हैं। उस समय जो सुन्दरसाथ चर्चा का श्रवण कर रहे होते हैं, उनके हृदय में अनेक प्रकार की आनन्द भरी उमंगे उठने लगती हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के दूसरे चरण में "लहर" का तात्पर्य है किसी धर्मग्रन्थ या विषय से सम्बन्धित ज्ञान, और उस विषय की गहन बातें "तरंग" हैं।

कई लहरें सुख धाम के, बरनन होत रसाल।
श्री महाराजा रीझत, होत दिल खुसाल।।२४।।

जब धाम धनी परमधाम का अति मधुर वर्णन करते हैं तो सुन्दरसाथ को निजधाम के सुख सागर की लहरों का अनुभव हो जाता है। महाराजा छत्रशाल जी चर्चा के रस में रीझ जाते हैं और उनका हृदय बहुत आनन्दित हो जाता है।

कई साखें सास्त्रन की, और भागवत बचन।
प्रसन चालीसों खोलते, सैयां होत मगन।।२५।।

श्रीजी चर्चा के समय शास्त्रों और भागवत के वचनों की साक्षियाँ देते हैं। वे भागवत के ४० प्रश्नों के रहस्य भी स्पष्ट करते हैं, जिन्हे सुनकर सुन्दरसाथ मग्न हो जाता है।

और साखें कई बारीकी, खोज के कीरंतन।
ब्रह्मांड सुंन पार के, पहुंचे अक्षर वतन।।२६।।

श्री प्राणनाथ जी चर्चा में परम तत्व की कई गुह्य बातों को साक्षियाँ के द्वारा समझाते हैं। इसके अतिरिक्त वे परब्रह्म की खोज से सम्बन्धित कीर्तनों की भी चर्चा करते हैं। वे इस ब्रह्माण्ड और शून्य निराकार से परे अक्षर ब्रह्म के धाम तक का वर्णन करते हैं।

ए साहिदियां देत हैं, कई पुरावत साख।
और जो साधों की, भाख भाख कै लाख।।२७।।

चर्चा के प्रसंग में धाम धनी अनेक ग्रन्थों की साक्षियाँ देते हैं। अनेक भाषाओं में वर्णित सन्तों की वाणियों को भी वे उद्धृत करके यथार्थ सत्य की पहचान कराते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में कथित "लाखों भाषाओं" से तात्पर्य बहुत सी भाषाओं से है। यह कथन अतिश्योक्ति अलंकार के रूप में किया गया है।

वेद और कतेब को, दोऊ करत हैं एक।

आज लों कबहूं न हुई, कई उपजे खपे ब्रह्मांड अनेक।।२८।।

धाम धनी अपनी चर्चा द्वारा वेद और कतेब दोनों पक्षों का एकीकरण करते हैं। आज दिन तक अनेकों ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुए और लय को प्राप्त हो गए, लेकिन अभी तक वेद और कतेब का इस तरह से एकीकरण नहीं किया जा सका था।

चरचा चित दे होत है, श्रवना देत सब साथ।

हेत कर कहत हैं, पकड़ के सैयां हाथ।।२९।।

श्री प्राणनाथ जी पूर्ण मनोयोग से चर्चा करते हैं , जिसका श्रवण सब सुन्दरसाथ करते हैं। धाम धनी सब सुन्दरसाथ का माया में हाथ पकड़कर बहुत प्रेमपूर्वक चर्चा सुनाते हैं।

ब्रज नैन और चंचल, रहत चरचा में।

मोंगे होके सुनत हैं, और न होए इनसें।।३०।।

ब्रजनैन और चँचलदास हमेशा चर्चा में उपस्थित रहते हैं। वे चर्चा के रस में इतना डूब जाते हैं कि उनके मुख से न कुछ बोला जाता है और न उनसे दुनिया का कोई काम हो पाता है।

मीठी रसना रस भरी, अत सुन्दर हैं बोल।

चैन होत है चित को, कोई नाहीं ए सुख बोल।।३१।।

श्री प्राणनाथ जी की रसना (वाणी, बोली) अत्यन्त मीठी है और प्रेम रस से भरी हुई है। उनके बोल बहुत ही सुन्दर (मधुर) हैं। जो उसे सुन लेता है, उसके चित्त (हृदय) में आनन्द छा जाता है। उसे ऐसा अनुभव होता है कि इस सुख के समान अन्य कोई भी सुख नहीं है।

भावार्थ– "रसना" और "बोल" में वही सूक्ष्म भेद है, जो कीर्ति–यश, प्रीति–स्नेह, तथा अस्मिता–अहंकार में होता है। परा, पश्यन्ति, तथा मध्यमा तक रसना है, जबकि बैखरी अवस्था में वह बोल का रूप ले लेती है।

कहा कहों इन जुबान की, जो हेत कर फुरमाए।

अहनिस जुगल सरूप कर, बरनन को दिखाए।।३२।।

धाम धनी श्री प्राणनाथ जी की रसना की मधुरता का वर्णन मैं कैसे करूँ? वे बहुत ही प्रेम भरे शब्दों से युगल स्वरूप की शोभा–श्रृँगार का वर्णन करके हृदय में उसकी अनुभूति कराया करते हैं।

धाम धनी निजधाम को, और न दाता होए।
ये लेने वाले साथ हैं, और न समझे सोए।।३३।।

यहाँ होने वाली चर्चा में युगल स्वरूप तथा परमधाम की शोभा का वर्णन करने वाले स्वयं अक्षरातीत ही हैं, अन्य कोई नहीं। उनकी चर्चा को आत्मसात् करने वाले भी परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं, जो उनके अँग रूप हैं। सांसारिक जीवों को उनकी चर्चा में कोई रस नहीं होता और उन्हें उसकी समझ भी नहीं आती।

सुख बतावत धाम को, दुःख बतावत खेल।

जगावत हैं जुगत से, तीसरे तकरार लेल।।३४।।

श्रीजी परमधाम को सुख की राशि बताते हैं, जबकि इस नश्वर जगत को दुःखों का मूल कहते हैं। इस प्रकार खेल के तीसरे भाग जागनी ब्रह्माण्ड में वे युक्तिपूर्वक सुन्दरसाथ को जगा रहे हैं।

तुम नाहीं इन खेल के, याद करो निज धाम।

दो बेर दो तकरार में, पूरे हुए न मनोरथ काम।।३५।।

वे अपनी चर्चा में सुन्दरसाथ को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि हे साथ जी! तुम इस मायावी खेल के नहीं हो। अपने मूल घर परमधाम को याद करो। व्रज एवं रास की लीला में माया का खेल देखने की तुम्हारी इच्छा पूर्ण नहीं हो पायी थी।

तिस वास्ते ए तीसरा, दिखाया तुमको ये।

मेरी तीनों सूरत, खेल में आई जे।।३६।।

इसलिये तुम्हें इस जागनी ब्रह्माण्ड में पुनः लाना पड़ा है। इस ब्रह्माण्ड में मेरी तीन सूरतें खेल में आयी हुई हैं।

पहिले ल्याया कलाम को, इसारतें रमूजें हक।

रूह अल्ला किल्ली ल्याइया, इमाम खोल दिखाया बुजरक।।३७।।

बशरी सूरत मुहम्मद साहब ने श्री राज जी की बातों को सांकेतिक रहस्यों के रूप में कुरआन में कहा। मलकी सूरत सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी, सभी धर्मग्रन्थों के रहस्यों को खोलने के लिये, तारतम ज्ञान (इल्म-ए-लदुन्नी) रूपी कुञ्जी लेकर आये। हकी सूरत श्री प्राणनाथ जी ने सभी धर्मग्रन्थों के रहस्यों को खोलकर एक स्वलीला अद्वैत परमधाम की पहचान करा दी है।

पांचों रोज रब्ब के, दिखावत कर प्यार।

अब हम धाम चलत हैं, तुम हूजो हुसियार।।३८।।

श्रीजी अपनी चर्चा में पाँच दिनों (व्रज, रास, अरब, श्री देवचन्द्र जी, और श्री प्राणनाथ जी की लीला) का प्रेमपूर्वक वर्णन करते हैं। उसमें यह सिखापन भी दी जाती है कि अब मेरी सुरता (आत्मिक दृष्टि) परमधाम को देख रही है। आप लोग सावधान हो जाइए, अर्थात् माया में न फँसे रहिए, बल्कि अपनी दृष्टि परमधाम की ओर ले चलिए।

दिन कयामत के कहे थे, सो आई सरत सुभान।

ए बात मोमिन जानहीं, जाए देवे हक ईमान।।३९।।

कुरआन में कियामत का समय आने की जो बात कही गयी थी, वह समय अब आ गया है। इसमें सबको

अखण्ड मुक्ति देने वाला परब्रह्म का अलौकिक ज्ञान संसार में फैल रहा है, किन्तु इस रहस्य को परमधाम की ब्रह्मसृष्टियाँ ही जानती हैं। इसलिए धाम धनी अपनी कृपा से विश्वास (ईमान) देते हैं।

सात निसान बड़े कहे, होसी रोसन वखत कयामत।
कह्या अग्यारह सौ सन के, सो आए पहुंची सरत।।४०।।

कुरआन में कियामत के ७ बड़े-बड़े निशान कहे गए हैं, जिनके जाहिर होने पर कियामत का आना सिद्ध होता है। इस बात को ११०० वर्ष पहले ही मुहम्मद साहब ने कुरआन में कह दिया था। अब कियामत का वही समय चल रहा है।

चारों वसीयतनामें का, सोर पड़ा संसार।

आप दावत जाहिर करी, हुजो खलक खबरदार।।४१।।

मक्का से आने वाले चारों वसीयतनामों की बात सारे संसार में फैल गयी है। इनके द्वारा इमाम महदी के रूप में स्वयं अक्षरातीत ने सारे संसार को तारतम वाणी के प्रकाश में अखण्ड सुख लेने का निमन्त्रण दिया है। हे संसार के लोगों! तुम सावधान हो जाओ, यह माया में फँसे रहने का समय नहीं है।

आजूज माजूज जाहिर भए, ऊग्या सूरज मगरब।

दाभा हुई जाहिर, देखेगी दुनियां अब।।४२।।

अब संसार के सारे लोग इस बात का अनुभव कर लेंगे कि याजूज-माजूज किस प्रकार से जाहिर हो गए हैं? परमधाम का ज्ञान रूपी सूर्य किस प्रकार हिन्दुओं में

(पश्चिम में) उग आया है? दाब्ह-तुल-अर्ज के रूप में मनुष्यों में किस प्रकार पाश्विक प्रवृत्ति फैल चुकी है?

भई लड़ाई दज्जाल सों, करी मोमिनों और इमाम।
सो अब होसी जाहिर, देखसी खलक तमाम।।४३।।

अज्ञान रूपी राक्षस (दज्जाल) के साथ ब्रह्मात्माओं तथा श्रीजी ने जो युद्ध किया है, वह संसार में प्रकट हो जाएगा, और उसे सारी दुनिया देखेगी। अर्थात् तारतम ज्ञान के द्वारा सबको यह पता चल जाएगा कि किस प्रकार माया से परे होकर परब्रह्म को पाना है?

ईसा और इमाम, लड़े दज्जाल सों जोर।
मरते दज्जाल पुकारिया, पड़ा खलक में सोर।।४४।।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी तथा इमाम महदी ने तारतम

ज्ञान के द्वारा माया से अपनी पूरी शक्ति से युद्ध किया, जिससे अज्ञान रूपी राक्षस का अस्तित्व समाप्त हो गया। इस बात का समाचार सारे संसार में फैल गया है।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में "मरते समय दज्जाल के पुकारने" का आशय यह है कि तारतम वाणी के प्रकाश में जो भी व्यक्ति आ जाता है, उसके हृदय से अध्यात्म जगत की सारी भ्रान्तियाँ मिट जाती हैं और वह सरलतापूर्वक परमधाम की सीधी राह अपना लेता है। इस बात की जानकारी उसके समीपस्थ अन्य लोगों में भी फैल जाती है कि इन्होंने देवी–देवताओं एवं जड़ पूजा को छोड़कर एक स्वलीला अद्वैत सच्चिदानन्द परब्रह्म के प्रेम मार्ग को अपना लिया है।

असराफील आए के, गावे अल्ला कलाम।

सूर फूंका संसार में, होए चालीस बरसों तमाम।।४५।।

श्री महामति जी के धाम हृदय में जाग्रत बुद्धि तारतम वाणी का अवतरण कर रही है। वि.सं. १७३५ से १७७५ तक के इन चालीस वर्षों में परमधाम के अलौकिक ज्ञान का सूर फूँका जा रहा है।

भावार्थ- "सूर फूँकने" का तात्पर्य है, अखण्ड ज्ञान की गूँज करना। वि.सं. १७३५ से १७५१ तक परमधाम की वाणी का अवतरण होता रहा और उसके पश्चात् महाराजा छत्रशाल जी के निर्देशन में चारों ओर उसका प्रकाश फैलता रहा। इसे ही श्यामा जी के स्वामित्व के चालीस वर्ष कहते हैं।

ए नसीहत गिरोह पर, होत है रात दिन।

ए विचार समझहीं, खास गिरोह सैयन।।४६।।

धाम धनी इस प्रकार के सिखापन परमधाम के सुन्दरसाथ को दिन-रात देते हैं, किन्तु इन बातों को मात्र परमधाम की ब्रह्मसृष्टियाँ ही यथार्थ रूप में समझ पाती हैं।

अरस इलाही खजाना, करते है सरफ।

जिन ताले लिखा सो पावहीं, और ना लेवे एक हरफ।।४७।।

धाम धनी अपने परमधाम के ज्ञान रूपी इस अखण्ड धन से सबके हृदय को निर्मल करते हैं। जिनके भाग्य में यह धन लिखा होता है, वही प्राप्त कर पाता है। अन्य मायावी जीव तो इसका एक शब्द भी सुन नहीं पाते।

इन चरचा में बोलन की, काहू न रहे मजाल।
भानने को ठाड़ा रहे, सोई करत दज्जाल।।४८।।

जब स्वयं अक्षरातीत धाम धनी अपनी चर्चा द्वारा परमधाम का अखण्ड आनन्द बरसा रहे होते हैं, तो सभी सुन्दरसाथ आनन्द में इतने विभोर हो जाते हैं कि किसी के पास बोलने की सामर्थ्य नहीं रहती, किन्तु जो इस आनन्द में बाधा डालता है, वही दज्जाल (कलियुग) कहा जाता है।

महामत कहें ए साथ जी, सुनियो चित दे तुम।
अब आरोगन के वखत का, हुआ है हुकम।।४९।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आप एकाग्र चित्त से अभी दूसरे प्रहर की लीला सुनते रहिए। अब श्रीजी के आदेश से भोजन लीला के समय का वर्णन होने

जा रहा है।

प्रकरण ।।६४।। चौपाई ।।३७९३।।

राज भोग

अब कहूं आरोगन की, उठत समें झीलन।

पीछे आरोगन की, कहों सेवा जो सैंयन।।१।।

अब मैं दोपहर की भोजन लीला का वर्णन करने जा रहा हूँ। श्रीजी स्नान करने के समय चर्चा छोड़कर उठ जाते हैं। इसके पश्चात् भोजन लीला में जो सुन्दरसाथ सेवा करते हैं, उसका वर्णन कर रहा हूँ।

दो घड़ी दोए पहर में, बाकी रही जब।

बाई हनमन्त अरज करें, थाल ल्यावन की तब।।२।।

दोपहर होने में जब दो घड़ी का समय बाकी रहता है, अर्थात् सवा ११ बजे होते हैं, तब हनुमन्त बाई श्रीजी से प्रार्थना करती हैं कि हे धाम धनी! यदि आपकी स्वीकृति

हो तो मैं भोजन का थाल ले आऊँ?

हुकम किया हक ने, जाए के ल्याओ थाल।

आए बाई जी सों कहया, होए के खुसाल।।३।।

अक्षरातीत श्रीजी का आदेश होता है कि हाँ! जाकर थाल ले आओ। यह सुनकर हनुमन्त बाई बहुत ही आनन्दित होती हैं, और श्री बाई जी से इसके बारे में कहती हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के प्रथम चरण में कथित "हक" शब्द का क्या अर्थ होगा? क्या किसी आचार्य, सन्त, गुरू, या शिष्य को हक कहलाने का अधिकार है? यदि नहीं तो श्री प्राणनाथ जी को सन्त, महापुरूष, शिष्य, और भक्त के रूप में प्रस्तुत करने की विकृत मानसिकता क्यों पाली जा रही है?

अरज की सेवा मिने, पहिले कमलावती।

तिस पीछे लाड़बाई, पीछे हनुमन्त करती।।४।।

श्री प्राणनाथ जी से भोजन करने के लिए प्रार्थना करने की सेवा सबसे पहले कमलावती जी करती हैं। इसके पश्चात् लाड़ बाई और तत्पश्चात् हनुमन्त बाई करती हैं।

हुकम हुआ श्री राज का, ल्याओ धोती पोती तेल।

सेवा के सामिल मिलो, तब आऊं तुमारी गैल।।५।।

अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी का आदेश होता है कि धोती आदि वस्त्र तथा तेल ले आओ। सेवा करने वाले सुन्दरसाथ पहले इकट्ठे हो जाएँ, तब मैं तुम्हारे साथ चलूँ।

भावार्थ– इस चौपाई के भी प्रथम चरण में भी प्राणनाथ जी को श्री राज जी कहकर सम्बोधित किया गया है। अष्ट

प्रहर की यह लीला श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप पर यथार्थ रूप में प्रकाश डालती है। वह दर्शाती है कि ५००० की संख्या वाले सुन्दरसाथ ने श्री प्राणनाथ जी को किस रूप में मानकर यह सेवा की थी।

विराट प्रश्न यह है कि शिक्षा के इस युग में हम प्राणनाथ जी को किस रूप में मान रहे हैं? हमें यह भी सोचना होगा कि कहीं हम तारतम वाणी एवं बीतक के विरुद्ध उल्टी गँगा तो नहीं बहा रहे हैं?

तबलों मोकों चरचा से, काहे करत हो भंग।
तब साथी सेवा के कहें, श्री बाई जी अरज करें अर्धंग।।६।।

तब तक मेरी चर्चा में बाधा क्यों डाल रहे हो? तब सेवा करने वाले सुन्दरसाथ श्रीजी से कहते हैं कि हे धाम धनी! आपसे भोजन करने के लिए स्वयं श्री बाई जी

प्रार्थना कर रही हैं।

जेनतीदास आए के, बातें करी बीच कान।

अरज खास गिरोह की, देत कर पहिचान।।७।।

इस समय जयन्ती दास जी श्रीजी के पास आकर उनके कान में धीरे से कुछ बातें कहते हैं, अर्थात् इस क्रिया द्वारा वे ब्रह्मसृष्टियों की विशेष प्रार्थना को धाम धनी तक पहुँचाते हैं।

उठत राज झीलन को, बैठत चौकी पर।

सखियां तेल लगावत, चारों तरफों फिर।।८।।

धाम धनी स्नान करने के लिए उठ जाते हैं, और चौकी पर विराजमान हो जाते हैं। सुन्दरसाथ उन्हें चारों तरफ से घेरकर तेल लगाना प्रारम्भ कर देते हैं।

तेल की सेवा मिने, गोदावरी गंगाराम।

कटोरी भर के ल्यावहीं, इनका इन सेवा में विसराम।।९।।

तेल लाने की सेवा गोदावरी और गँगाराम जी करते हैं। वे कटोरी में तेल भरकर लाते हैं। इस प्रकार की सेवा करने में उन्हें आनन्द आता है।

अस्नान के समय में, होत तेल मरदन।

अगरदास गुल जी करे, साथी जो सेवन।।१०।।

स्नान करने से थोड़े समय पहले श्रीजी के शरीर में तेल की मालिश होती है। अगरदास जी, गुल जी, तथा सेवा करने वाले अन्य सुन्दरसाथ श्रीजी के शरीर में तेल की मालिश करते हैं।

इन सेवा में सामिल, बंसी सीताराम।

और सेवा करें सब, सबको देवें आराम।।११।।

इस सेवा में बन्शी और सीताराम जी भी सम्मिलित रहते हैं। ये दोनों अन्य सारी सेवाएँ भी करते हैं और सबको आराम देते हैं।

तेल प्रसादी बांटने, करत सेवा गंगाराम।

साथ की सेवा मिने, करें मनुहार तमाम।।१२।।

श्रीजी की मालिश से बचे हुए तेल को प्रसादी के रूप में बाँटने की सेवा गँगाराम जी करते हैं। इस प्रकार की सेवा करके वे सुन्दरसाथ का सत्कार करते हैं।

धोती पोती पीताम्बर, लालदास इत ल्याए।

मानक ताते जल को, ल्याई कर बनाए।।१३।।

इस समय पीताम्बर जी और लालदास जी धोती आदि वस्त्रों को लाते हैं, और मानिक बाई स्नान करने के लिए गर्म जल लाती हैं।

विशेष– मानिक के नाम से एक महिला सुन्दरसाथ भी हैं और पुरूष सुन्दरसाथ भी। इसी प्रकार मुकुन्द दास जी तथा केशव दास जी भी दो हैं।

जल समोवने ल्याइया, गंगाराम भगवान।

झीलण की सेवा मिने, दिल में नहीं गुमान।।१४।।

गँगाराम और भगवान जी गर्म जल में मिलाने के लिए ठण्डा जल लेकर आते हैं। श्रीजी को स्नान कराने की सेवा में उन्हें अपने दिल में जरा भी अहंकार नहीं रहता।

झीलण रंग सुहामणा, गावें कन्नड़ गंगाराम।

बाई तारा सामी झीलत, गावें केतेक साथ तमाम।।१५।।

जब श्री प्राणनाथ जी स्नान करते हैं, उस समय कन्नड़ तथा गँगाराम जी "झीलण रंग सुहामणां" का गायन करते हैं। उनके साथ तारा बाई तथा कुछ अन्य सुन्दरसाथ भी गायन करते हैं।

चौकी ल्याई अस्नान को, ए जो बाई मान।

तिन आगे पटली धरी, रतन बाई परवान।।१६।।

मान बाई श्रीजी को स्नान कराने के लिए चौकी (बड़ी) लेकर आती हैं। रतन बाई उस चौकी के आगे एक छोटी सी चौकी (पटली) रखती हैं।

पांवड़ियां चन्दन की, ल्याई बाई रतन।

तले पांवड़ा चादर पटली पर, ए रतन बाई का काम।।१७।।

राम बाई श्रीजी के लिए चन्दन की खड़ाऊँ लेकर आती हैं। रतन बाई सबसे पहले चादर बिछाती हैं। उसके ऊपर पटली रखती हैं। पटली के ऊपर पाँवड़ा बिछाकर दोनों खड़ाऊँ पाँवड़े पर रखती हैं। यह उनकी विशेष सेवा है।

चन्द्रवा ऊपर तानत, ए जो बाई राम।

चौकी ऊपर चादर, ल्याई मानिक बाई बिछावन।।१८।।

श्रीजी के स्नान करने के स्थान पर चँद्रवा तानने की सेवा रतन बाई की है। मानिक बाई चौकी के ऊपर बिछाने के लिए चादर लेकर आती हैं।

मानक नहवावें सनेह सों, जल के लोटे भर।

लालदास सामिल रहें, जल डारे उमंग कर।।१९।।

मानिक बाई श्रीजी को लोटे में जल भरकर प्रेमपूर्वक स्नान कराती हैं। इस सेवा में लालदास जी सम्मिलित रहते हैं और वे बहुत उमंग में भरकर श्रीजी के शरीर पर जल डालते हैं।

छबीलदास वृन्दावन, अंग पोंछत समें झीलन।

लाल बाई देत हैं, करें सेवा होए मगन।।२०।।

छबीलदास और वृन्दावन जी स्नान करते समय श्रीजी के अँगों को पोंछने की सेवा करते हैं। अँग पोंछने के लिए रूमाल देने की सेवा लालबाई जी मग्न होकर करती हैं।

इन समें आए पहुंचे, श्री महाराजा जब।

अंग पोंछन हाथ पकड़न की, सेवा करत हैं तब।।२१।।

इस समय यदि महाराजा छत्रशाल जी आ जाते हैं, तो श्रीजी के अँगों को पोंछने तथा हाथ पकड़कर उठाने की सेवा करते हैं।

रूमाल ल्याई लालबाई, श्री बाई जी पोंछत अंग।

प्रेमदास सामिल रहे, कई सखियां सेवे संग।।२२।।

लालबाई जी रूमाल लेकर आती हैं और श्री बाई जी श्रीजी के अँगों को पोंछती हैं। इस सेवा में प्रेमदास जी भी सम्मिलित रहते हैं। इसके अतिरिक्त और कई सुन्दरसाथ भी उनके साथ सेवा करते हैं।

विशेष– उपरोक्त चौपाइयों में रूमाल का तात्पर्य तौलिये से है।

घेर के ठाढ़ी रहें, फिरत हैं गिर्दवाए।

जल लोटा ललिता पर, सब कपड़े दिए भिगाए।।२३।।

सुन्दरसाथ श्रीजी को चारों ओर से घेरकर खड़े रहते हैं और कुछ चलते-फिरते भी रहते हैं। श्रीजी लोटे में भरे हुए जल को ललिता सखी पर फेंक देते हैं, जिससे उनके सारे कपड़े भीग जाते हैं।

हांसी होवे इन समें, सब सैंया करें कलोल।

श्री राज रसना सों, मीठे कहत हैं बोल।।२४।।

इस बात पर सब सुन्दरसाथ जोर-जोर से हँसने लगते हैं। इस समय सुन्दरसाथ में हँसी की लीला होती है और धाम धनी सुन्दरसाथ से बहुत प्रेम भरे मीठे शब्दों में बात करते हैं।

सोभादास झीलन में, लोट पोट होवें जल।

निरगुन भेख रहत हैं, साफ दिल निरमल।।२५।।

श्रीजी के द्वारा स्नान किये हुये बहते जल में शोभादास जी प्रेम की मस्ती में आकर लोट-पोट हो रहे हैं। उनका हृदय अति निर्मल है और हमेशा वैराग्य भेष में रहते हैं।

औलिया लिल्ला जो कहे, नफस के दुस्मन।

सो सिफत है इनमें, जो कही मोमिन।।२६।।

ऐसे ही परमहँसों को कुरआन में औलिया-लिल्ला कहा गया है। ये अपनी इन्द्रियों की चाहनाओं को अपना शत्रु मानते हैं। यह महिमा उन ब्रह्मात्माओं की है, जो मायावी विषयों से हमेशा दूर रहते हैं।

केसवदास बानी ले, बांचत समें इन।

लालदास कुरान की, आएत करें रोसन।।२७।।

इस समय केशव दास जी तारतम वाणी का उच्चारण करते हैं तथा श्री लालदास जी कुरआन की किसी आयत के रहस्य को स्पष्ट करते हैं।

पीताम्बर पहिनावत, लाल प्रेमदास।

महाराजा दो थुरमें, ओढ़ावत हैं खास।।२८।।

श्री लालदास जी तथा प्रेमदास जी श्रीजी को पीताम्बर पहनाते हैं तथा महाराजा छत्रशाल जी विशेष रूप से श्री प्राणनाथ जी को कन्धे के दोनों तरफ लटकने वाला दुशाला (अँगोछा) ओढ़ाते हैं।

पीउ पावड़े चलत, रतन बाई के।

पनही जोड़े जड़ाव की, धरी बल्लभदास आगे।।२९।।

अब धाम धनी रतनबाई के द्वारा बिछाये गाए पाँवड़े पर चलते हैं। उनके दोनों चरण कमलों में नंगो से जड़ी हुयी खड़ाऊँ हैं, जिसे वल्लभदास जी रखते हैं।

एक पांवड़ा रेसमी, दीपा बिछावत।

राज चलत ता ऊपर, रसोई के बखत।।३०।।

दीपा बहन रेशमी पाँवड़ा बिछाती हैं। भोजन करने के लिए जाते समय श्रीजी उस पाँवड़े पर चलते हैं।

पांवड़े बकाई के, चलत लटकनी चाल।

संग सैयां घेर के, बानी गावें रसाल।।३१।।

बकाई भाई के बिछाये हुए पाँवड़े पर श्रीजी प्रेमभरी चाल से चलते हैं। उनके साथ सुन्दरसाथ उन्हें घेरकर मधुर वाणी का गायन करते हुये चलते हैं।

दोना पातर बनावत, ए जो खेमदास।

सीताराम के संग रहे, सेवे कर विस्वास।।३२।।

दोने और पत्तल बनाने की सेवा खेमदास जी किया करते हैं। वे सीताराम जी के साथ रहते हैं और अटूट विश्वास के साथ धाम धनी की सेवा करते हैं।

थाल ऊपर चन्द्रवा, चार जनी पकड़े।

ए सेवा धनबाई की, आवे रसोई के समे।।३३।।

श्रीजी की थाल के ऊपर चार सुन्दरसाथ चन्द्रवा ताने हुए आते हैं। इसकी व्यवस्था करने की सेवा धन बाई जी

की है, जो रसोई के समय आती हैं।

थाल बड़ी रूपे की, आसबाई बनाई कर हेत।

धोए रूमाल सों पोंछ के, बाई जी अपने हाथों लेत।।३४।।

श्रीजी के लिए चाँदी का बड़ा थाल है, जो बड़े प्रेम भाव से श्री लालदास जी ने बनवाया है। इस थाल को श्री बाई जी स्वयं अपने हाथों से जल से धोती हैं और रूमाल से पोंछकर साफ करती हैं।

कटोरे कंचन चांदीए के, दस धरे फिरते।

धोए पोंछे रूमाल सों, वास्ते तरकारी के।।३५।।

थाल के अन्दर सोने और चाँदी के दस कटोरे गोलाई में रखे जाते हैं। इन कटोरों को धोकर रूमाल से पोंछ लिया जाता है, ताकि इनमें सब्जी रखी जा सके।

और राज भोग थाल में, धरत हेत कर प्यार।

और कटोरी सैयन की, कहे हूजो खबरदार।।३६।।

चाँदी की थाली में दोपहर का भोजन बहुत प्रेमपूर्वक रखा जाता है। श्री बाई जी ने सब्जी आदि की कटोरियों को रखते समय सुन्दरसाथ को सावधानी बरतने के लिए कहा।

श्री बाई जी आवत अरूगावने, मध्यान को ले थाल।

तुलसी राधा रूकमणी, सैयां घेर चलें खुसाल।।३७।।

दोपहर के समय श्रीजी को भोजन कराने के लिए श्री बाई जी थाल लेकर आती हैं। तुलसी, राधा, रूक्मणी, आदि सखियाँ श्री बाई जी को घेरकर आनन्दमग्न होकर चला करती हैं।

श्री बाई जी के आगे पांवड़ा, बिछावत करना।

गादी बिहारी दास धरें, करे सेवा जान अपना।।३८।।

श्री बाई जी के आगे करना बाई पाँवड़ा बिछाती हैं। बिहारी दास जी अपनी विशेष सेवा मानकर श्रीजी के लिए गादी बिछाते हैं।

बिहारी दास बिछाईया, आगे तखत के।

गादी चाकले रेसमी, और दोऊ बाजू तकिए।।३९।।

बिहारी दास जी तख्त के ऊपर गादी बिछाते हैं और उस पर रेशमी चाकला (गलीचा) बिछाते हैं तथा उसके दोनों ओर दो तकिए रख देते हैं।

तिन पर आन बिराजत, दोऊ बाजू बैठावनहार।
एक बाजू लालबाई, दूजी धन बाई खबरदार।।४०।।

श्रीजी चाकले पर आकर विराजमान हो जाते हैं। उनके दोनों तरफ हाथ पकड़कर बैठाने वाले सुन्दरसाथ होते हैं। एक ओर लाल बाई रहती है, तो दूसरी तरफ धन बाई श्रीजी को सावधानीपूर्वक बैठाती हैं।

इत खंमा ललिता बोलत, इनकी सेवा ए।
और सनमुख गावन को, मुकुन्द दास बैठे।।४१।।

इस समय ललिता सखी आकर "धाम धनी सबका मंगल करें" का उच्चारण करती हैं, इनकी यही सेवा है। और श्रीजी के सम्मुख मुकुन्ददास जी वाणी गाने के लिए बैठ जाते हैं।

कन्नड़ इनके साथ हैं, परमानन्द प्रवीन।

बिंदा भी सामिल रहे, गावे गंगाराम आकीन।।४२।।

इनके साथ कन्नड़ और बिन्दा जी भी सम्मिलित रहते हैं। गायन में अति प्रवीण परमानन्द जी भी साथ में रहते हैं। गँगाराम जी धाम धनी पर अटूट विश्वास के साथ गायन करते हैं।

मान बाई अत मान सों, चौकी आगे धरत।

धरया झालर लग्या रूमाल, ऊपर बिछावत।।४३।।

प्रेम के मान में भरी हुयीं मान बाई श्रीजी के आगे चौकी रखती हैं तथा उसके ऊपर झालर लगे हुए रूमाल को बिछाती हैं।

थाल धरी ता ऊपर, श्री बाई जी बैठत पास।

आई जी सनमुख बैठत, थाल ल्यावें कर विस्वास।।४४।।

उसके ऊपर भोजन का थाल रखा जाता है। श्री बाई जी पास में बैठ जाती हैं और उनकी माताजी सामने बैठती हैं। धनी पर अटूट विश्वास के साथ श्री बाई जी भोजन का थाल लाया करती हैं।

लई मानक चिलमची, श्री बाई जी हाथ पखालत।

रूमाल सों लेइके, लाल बाई लोबत।।४५।।

मानिक बाई चिलमची लाती हैं और श्री बाई जी उससे श्रीजी के हाथ धुलाती हैं। लाल बाई जी रूमाल से श्रीजी के हाथों को अच्छी प्रकार से पोंछती हैं।

सैयन मिलावें गिरोह सें, आवत आरोगने थाल।

संकर सेवा में हाजिर, राज आरोगत दिल खुसाल।।४६।।

श्रीजी को भोजन कराने के लिए श्री बाई जी सुन्दरसाथ के साथ कोठा मन्दिर से चलकर बँगला जी में आती हैं। इस समय शँकर श्रीजी की सेवा में उपस्थित रहते हैं तथा धाम धनी प्रसन्न मन से भोजन करते हैं।

मिलावे सैयन के, जयन्ति दास सिरदार।

सेवा करें सब साथ की, उपली टहल को खबरदार।।४७।।

सुन्दरसाथ में जयन्ती दास सबके प्रमुख हैं। वे सब सुन्दरसाथ की सेवा करते हैं, और बाहरी सेवा के कार्यों में बहुत सावधान रहते हैं।

सूरजमन रसोई में, रहता था दिन रात।

साथ की सेवा करे, फेर मिला अपनी जात।।४८।।

सूरजमन रसोई की सेवा में दिन-रात रहा करते थे। उन्होंने कुछ दिनों तक बहुत निष्ठा भाव से सेवा की। पुनः अपने पारिवारिक मोह के बन्धन में जाकर बँध गए।

रूमाल कसीदल सिर पर, मानक बांधे कर हेत।

श्री राज बातां करें गुझ सों, मीठी रसना कर देत।।४९।।

मानिक बाई श्रीजी के शिर पर बहुत भाव से चित्रकारी किया हुआ रूमाल बाँधती हैं, और धाम धनी उनसे बहुत प्रेम भरी मीठी भाषा में परमधाम की गुह्य बातें करते हैं।

रूमाल कसीदे का, आरोगते उठावे।

लालबाई सेवा करें, ओढ़त इन समे।।५०।।

श्रीजी जब भोजन कर रहे होते हैं, तब लालबाई जी कसीदा (चित्रकारी) किया हुआ रूमाल उनके सिर पर ओढ़ाती हैं और धाम धनी उसे प्रेमपूर्वक ओढ़ लेते हैं।

मथुरी अत मोह से, रूमाल देवें भिगोए गुलाब।

बिंदी करें तिलक बीच, श्री राज देत हैयाती आब।।५१।।

मथुरी बाई बहुत प्रेमपूर्वक श्रीजी को गुलाब जल में भिगोकर रूमाल देती हैं और उनके तिलक की दोनों रेखाओं के बीच में छोटी-सी बिन्दी भी कर देती हैं। धाम धनी उनके ऊपर मेहर कर परमधाम के अनुभव का अखण्ड आनन्दरस देते हैं।

मथुरी हिमोती थाल ल्यावत, बारे अपने अपने।

सेवा में दोऊ सामिल, कछू चूक ना जान पने।।५२।।

मथुरी बाई और हिमोती अपनी-अपनी बारी में थाल लाती हैं। धनी की सेवा में दोनों सम्मिलित रहती हैं और कुछ भी भूल नहीं होने देतीं।

हमेसा ढिग बैठत, श्री बाई जी सेवा में।

रूच के श्री राज मांगत, कहवत श्री बाई जी इन समें।।५३।।

श्रीजी के भोजन करते समय श्री बाई जी की सेवा हमेशा पास बैठने की होती है। धाम धनी अपना इच्छित पदार्थ माँगते हैं और श्री बाई जी से उसे देने के लिए कहते हैं।

हाथ करके हेत सों, श्री बाई जी परसन हार।

साक तरकारी अथाने, आरोगत बात बिहार।।५४।।

श्री बाई जी बहुत प्रेमपूर्वक अपने हाथों से परोसती हैं। आनन्दपूर्वक बातें करते हुए श्रीजी शाक-सब्जी तथा अचार आदि को ग्रहण करते हैं।

लाल केसव बैठत, दोनों बाजू के।

चौपाई लिखे चितसों, आरोगत फुरमावें जे।।५५।।

श्रीजी के दोनों बगल श्री लालदास जी और केसव दास जी बैठते हैं। भोजन करते समय श्रीजी जो चौपाई कहते हैं, उसे वे दोनों प्रेमपूर्वक अच्छी तरह से लिखते हैं।

गोकुल हाजर इन समें, बातां करें बनाए।

इलम हदीसां साहिदी, कहत हैं चित ल्याए।।५६।।

इस समय गोकुल दास जी श्री प्राणनाथ जी के समक्ष उपस्थित रहते हैं और पूरे मन से हदीसों की साक्षी दे-देकर तरह-तरह की बातें किया करते हैं।

आरोगते प्रथम देत है, बाइयों को प्रसाद।

राजाराम हेत सों, पावे इनको स्वाद।।५७।।

भोजन करते समय श्रीजी सबसे पहले बहनों (महिला सुन्दरसाथ) को प्रसाद देते हैं। राजाराम जी बहुत प्रेमपूर्वक प्रसाद का आनन्द लेते हैं।

द्रष्टव्य- इस चौपाई के चौथे चरण में स्वाद का तात्पर्य आध्यात्मिक आनन्द से है, जिह्वा के स्वाद से नहीं।

रतनबाई मूंग ले आई, ल्याई पूरबाई प्रवीन।

और साथ सब ल्यावत, सब सेवा में आधीन।।५८।।

पूर बाई और रतन बाई मूँग लेकर आती हैं। धाम धनी की सेवा में बँधे हुए सुन्दरसाथ भी अपने भावों के अनुसार कुछ न कुछ लाते हैं।

सुआ और सीताबाई, और प्रेमबाई।

रूमाल हाथ डुलावत, आरोगने बखत आई।।५९।।

सुआ, सीता बाई, और प्रेम बाई श्रीजी के भोजन करते समय आती हैं और आपने हाथों से रूमाल ढुलाती हैं।

छत्र लिए ठाढ़ा रहें, ए वल्लभ दास करी।

रूमाल ठाड़ो डुलावत, ए सेवा करी बिहारी।।६०।।

उस समय श्रीजी के शिर के ऊपर छत्र लेकर वल्लभ दास जी खड़े रहते हैं और बिहारी जी खड़े होकर रूमाल ढुलाने की सेवा करते हैं।

धरम पालें बाई धरमा, रोटी अरूगावने ल्यावत।

रसोई में श्री राज आरोगत, ए ल्यावत कोमल चित।।६१।।

धरमा बाई सेवा धर्म का पालन निष्ठापूर्वक करती हैं। वे श्रीजी के लिए अपने हृदय में अति मधुर प्रेम भरकर गरम-गरम रोटियाँ बनाकर अपने घर से लाती हैं और धाम धनी उसे ग्रहण करते हैं।

दाऐं बाऐं बैठत, खड़गो हनमन्त भंडारन।

श्री बाई जी वस्तां मंगावत, दौड़ ल्यावे दिल दे मन।।६२।।

श्रीजी के दाएँ-बाएँ खड़गो बाई तथा हनुमन्त भण्डारिन बैठा करती हैं। जब श्री बाई जी कोई वस्तु मँगाती हैं, तो ये सच्चे मन से दौड़कर (तेजी से चलते हुए) उसे लाती हैं।

सखियां गिरद घेर के, केतिक रहें खड़ी।

केतिक सनमुख बैठत, इत ठौर ना कछू रही।।६३।।

सुन्दरसाथ श्रीजी को चारों ओर से घेरकर बैठे होते हैं। कुछ खड़े होते हैं तथा कुछ सामने बैठे होते हैं। कहीं भी कोई खाली जगह नहीं रहती।

जल अध बीच में, देवे छबील दास।

पीक दानी तले धरत, वल्लभ मोमिन खास।।६४।।

भोजन करते समय बीच में छबील दास जी जल देते हैं। वल्लभ भाई परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं, जिन्होंने सेवा को ही अपने जीवन का आधार मान लिया है। वे कुल्ला करवाने के लिए तख्त के नीचे पीकदानी रखते हैं।

हजूर में हमेसा, दोए रहें पीकदान।

ठाढ़े रहें हजूर में, सन्त संकर बड़ा ईमान।।६५।।

श्रीजी के तख्त के नीचे हमेशा दो पीकदान रखे रहते हैं। सन्त दास तथा शँकर जी धनी पर अटूट ईमान लेकर हमेशा सेवा में उपस्थित रहते हैं।

और संकर सामिल, राघव जी रहत।

तंबोल प्रसादी लेए के, साथ को पहुंचावत।।६६।।

इस सेवा में शँकर जी और राघव जी भी रहते हैं। वे पान बीड़े का प्रसाद लेकर सब सुन्दरसाथ को बाँटते हैं।

संग रहे संकर के, सेवत मुरली धर।

पीकदान और मोरछल, करत राज ऊपर।।६७।।

शँकरदास जी के साथ में मुरलीधर जी भी सेवा करते हैं। वे पीकदान भी रखते हैं तथा धनी के ऊपर मोरछल ढुलाया करते हैं।

केसवदास लालदास, दोऊ बाजू बैठत।

चौपाई लिखें चित सों, श्री राज को रिझावत।।६८।।

श्रीजी के दोनों बगल श्री लालदास जी और केशव दास जी बैठा करते हैं। वे पूर्ण समर्पित चित्त से चौपाइयाँ लिखते हैं और अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को रिझाया करते हैं।

और साथ केता कहों, दांए बांए बैठन हार।

सखीदास ठाढ़ा रहे, सेवा में खबरदार।।६९।।

इनके अतिरिक्त और कितने सुन्दरसाथ के मैं नाम लूँ। श्री प्राणनाथ जी के दाएँ-बाएँ दोनों ओर सुन्दरसाथ बैठे रहते हैं। सखी दास जी अपनी सेवा के लिए सावधान रहते हुए हमेशा तैयार रहते हैं।

मयाराम आवत, ले चिप्पी में चने।

समारत सनेह सों, श्री राज आरोगे चुटकी से।।७०।।

मयाराम अपनी चिप्पी में गर्म–गर्म चने लेकर आते हैं और अत्यधिक स्नेह से श्रीजी के सामने रखते हैं। श्री प्राणनाथ जी उसे चुटकी में लेकर थोड़ा सा अवश्य ग्रहण करते हैं।

दूध दधि सिखरन, श्री बाई जी अरूगावत कर हेत।
आरोग रहे पीछे, बांटने को कवल देत।।७१।।

श्री बाई जी बहुत प्रेमपूर्वक श्रीजी को दूध–दही और श्रीखण्ड प्रस्तुत करती हैं। श्रीजी उसे ग्रहण करने के पश्चात् शेष बचे हुए खाद्य पदार्थ को प्रसाद रूप में बाँटने के लिए दे देते हैं।

ए सेवा लाल बाई की, देत प्रसाद श्री राज।
वास्ते सब दुलहिन के, और आवे सबके काज।।७२।।

सुन्दरसाथ को प्रसाद बाँटने के लिए धाम धनी लालबाई को देते हैं। वे सब सुन्दरसाथ तथा अन्य के लिए भी प्रसाद बाँटने की सेवा करती हैं।

आरोग रहे पीछे, धरे रूमाल आगे ये।
रामबाई सेवा करे, आरोगे पीछे जे।।७३।।

श्रीजी के द्वारा भोजन किए जाने के पश्चात्, राम बाई उनके आगे रूमाल रखती हैं। यह उनकी विशेष सेवा है।

हरबाई ठाढ़ी रही, लेके हाथ रूमाल।
आरोगे पीछे देत, होत मन खुसाल।।७४।।

हर बाई अपने हाथों में रूमाल लेकर खड़ी रहती हैं। जब धाम धनी भोजन कर लेते हैं, तो वे प्रसन्न मन से उनके हाथों में रूमाल देती हैं।

सुपारी गीगा ल्याइया, और देवे मानक।

और छबीलदास छबसों, सबसे पहिले दें हक।।७५।।

गीगा भाई और मानिक भाई सुपारी लाकर धाम धनी की सेवा में प्रस्तुत करते हैं। छबीलदास जी श्री प्राणनाथ जी को सबसे पहले सुपारी भेंट करते हैं।

और जो तम्बोल को, ले आया प्रहलाद।

कल्यान सेवा करत हैं, प्रहलाद के आद।।७६।।

प्रह्लाद जी श्रीजी की सेवा में पान बीड़ा लेकर आते हैं। इसके पहले यह सेवा कल्याण जी किया करते थे।

प्रहलाद के सामिल, रहत हैं संपत।

तम्बोल सेवा मिने, ए करत हैं नित।।७७।।

श्रीजी को पान बीड़ा अर्पित करने की सेवा में प्रह्लाद के साथ सम्पत भाई रहते हैं। यह इनकी नित्य की ही सेवा है।

पान पोंछने को काढ़त, लगाए काथो चूना जुगत।
लवंग जावन्त्री जायफल, श्री बाई जी बनावत।।७८।।

श्री बाई जी पान के पत्तों को अच्छी तरह से पोंछती हैं तथा उनमें युक्तिपूर्वक उचित मात्रा में कत्था और चूना लगाती हैं। तत्पश्चात् उनमें लौंग, जावन्त्री, तथा जायफल आदि डालकर पानों का बीड़ा तैयार करती हैं।

कपूरदानी राखत है, ए जो मुकुन्द दास।
अरूगावने बीड़ी मिने, ए मोमिन हैं खास।।७९।।

मुकुन्द दास जी परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं। वे अपने साथ

कपूरदानी रखते हैं और पान बीड़ी के साथ श्रीजी को कपूर प्रस्तुत करते हैं।

विशेष– खाने वाला कपूर, जलाने वाले से अलग प्रकार का होता है।

बीड़ी वालें श्री बाई जी, देत राज के हाथ।
लोंग इलाएची देत हैं, इन बीड़ी के साथ।।८०।।

श्री बाई जी पानों का बीड़ी लगाकर धाम धनी के हाथों में देती हैं। वे पान के बीड़े के साथ लौंग और इलायची भी देती हैं।

महाराजा अरूगावहीं, अपने हाथ तम्बोल।
श्री राज रीझ के कहत हैं, कोई नहीं सेवा इन तोल।।८१।।

महाराजा छत्रसाल जी अपने हाथों से धाम धनी को पानों का बीड़ा अर्पित करते हैं। धाम धनी उनके ऊपर प्रसन्न होकर कहते हैं कि श्री छत्रशाल जी की इस सेवा की कोई उपमा नहीं है।

पहिले गिरधर सोंनी, सेवा करी तम्बोल की।
पीछे छोड़ी इनने, साथ जब खेंच करी।।८२।।

धाम धनी को पान बीड़ा अर्पित करने की सेवा पहले गिरधर सोनी किया करते थे, किन्तु जब सुन्दरसाथ ने स्वयं सेवा करने का आग्रह किया तो उन्होंने सेवा छोड़ दी।

कस्तूरी को राखत, बेनी दास कोई दिन।
श्री राज आरोगत पान में, सेवत है दे मन।।८३।।

बेनी दास जी ने कुछ दिनों तक अपने पास कस्तूरी रखने की सेवा की। श्रीजी पान बीड़ा के साथ कस्तूरी का सेवन करते हैं। बेनी दास जी यह सेवा सच्चे मन से करते हैं।

आरोगत आनन्द सों, बातें करत बनाए।
सेज समारी पौढ़न की, सखियां सेवन को इत आए।।८४।।

श्रीजी आनन्दपूर्वक पानों का बीड़ा ग्रहण करते हैं और सुन्दरसाथ से प्रेम भरी बातें भी करते हैं। अब उनके आराम करने के लिए शैय्या तैयार की जाती है। सुन्दरसाथ धाम धनी की सेवा करने के लिए उनके पलंग के पास आ जाते हैं।

इत पांवडे बिछावत, पधारत घर मानक।

हाथ पकड़ उठावहीं, लछिदास बुजरक।।८५।।

श्रीजी मानिक भाई के घर पधारते हैं। उस समय पाँवड़े बिछाए जाते हैं। बड़ी गरिमा वाले लच्छीदास जी श्रीजी का हाथ पकड़कर उन्हें उठाने की सेवा करते हैं।

आसा ले हाजिर किया, गंगादास इत ल्याय।

लटके मटके चलत, मीठी बातां करें बनाय।।८६।।

गँगादास जी छड़ी लाकर श्रीजी की सेवा में प्रस्तुत करते हैं। श्रीजी प्रेम भरी आनन्दमयी चाल से चलते हैं और सुन्दरसाथ से अति मधुर बातें भी करते हैं।

जब महाराजा आवत, तब हाथ पकड़े ए।

दूजी तरफ लालदास को, श्री राज हाथ दे।।८७।।

जब महाराजा छत्रसाल जी आते हैं, तब वे श्रीजी का हाथ पकड़ते हैं, और दूसरी तरफ श्री लालदास जी को धाम धनी अपना हाथ पकड़ा देते हैं।

फिरती बखत हाथ पकड़े, लेत प्रेमदास लाल।

मकरन्द इनके सामिल, सेवत दिल खुसाल।।८८।।

वापस लौटते समय प्रेमदास जी और लालदास जी श्रीजी का हाथ पकड़ते हैं। इनके साथ मकरन्द जी भी शामिल रहते हैं और प्रफुल्लित मन से अपने धाम धनी की सेवा करते हैं।

सेज बिछाई सनेह सों, ए जो द्वारका दास।

प्रेमदास दूजी तरफ, और सेवे साथ जो खास।।८९।।

द्वारिका दास जी श्रीजी के लिए बहुत स्नेहपूर्वक शैय्या तैयार करते हैं। दूसरी तरफ प्रेमदास जी भी रहते हैं। इनके अतिरिक्त और विशिष्ट सुन्दरसाथ भी श्रीजी की सेज की सेवा करते हैं।

चारों तरफ बिछाए पांवड़े, परदछना के गिरद।

लटके मटके चलत, मोमिन सेवें कर मरद।।९०।।

पलंग के चारों ओर पाँवड़े बिछाये जाते हैं, जिससे धाम धनी किसी भी तरफ से आ सकें। श्रीजी प्रेम भरी मस्ती की चाल से चलते हैं और सब सुन्दरसाथ उन्हें अपनी आत्मा का प्राणेश्वर अक्षरातीत मानकर सेवा करते हैं।

संग जुत्थ सैयन के, घेर के चले साथ।

गावें बानी श्री राज की, जाके राजें पकड़े हाथ।।९१।।

जब श्रीजी चलते हैं तो उनके साथ सुन्दरसाथ का समूह उन्हें घेरकर चलता है। सब सुन्दरसाथ धाम धनी की वाणी का गायन करते हैं। श्री राज जी जिसका हाथ पकड़कर माया से निकालते हैं, वही इस प्रकार की सेवा कर सकता हैं।

सैयां राज रिझावत, बचन मीठे बोल।

श्री राज रिझावें सैयन को, कोई नहीं इन सुख तोल।।९२।।

सुन्दरसाथ तारतम वाणी को बहुत मीठे स्वरों में गाकर अपने धाम धनी को रिझाते हैं और श्री प्राणनाथ जी भी मधुर स्वरों में वाणी के रहस्य समझाकर सुन्दरसाथ को रिझाते हैं। इस प्रेममयी लीला से मिलने वाले सुख की

कोई उपमा नहीं हो सकती।

कबहूं बानी रास की, गावत हैं कर प्रेम।

कबहूं ब्रजलीला मिने, कबहूं न लेवें नेम।।९३।।

कभी तो सुन्दरसाथ प्रेमपूर्वक रास की वाणी का गायन करते हैं, तो कभी व्रज लीला से सम्बन्धित प्रकरणों को गाते हैं। इस सम्बन्ध में वे कोई स्थिर नियम का पालन नहीं करते।

कबहूं अरस अजीम को, गावत देकर चित।

श्री राज रीझ के तिन पर, बहुत करत है हित।।९४।।

कभी सुन्दरसाथ परमधाम की वाणी खिल्वत, परिक्रमा, सागर, तथा श्रृंगार को एकाग्र होकर गाते हैं। धाम धनी उनकी इस सेवा पर प्रसन्न होकर उन्हें बहुत प्यार करते

हैं।

बाई जी के गादी तकिए, सेवा करती ए।

राज आरोग पलंग बैठत, आगे आवें धरने के।।९५।।

श्री बाई जी श्रीजी के गादी और तकिए रखने की सेवा करती हैं। जब धाम धनी भोजन करने के पश्चात् पलंग पर बैठ जाते हैं, तब वे पलंग पर तकिए रखने के लिए आगे आती हैं।

सुख देत सनेह सों, कई भांतों कर हेत।

अत मीठी रसना बोलत, धाम धनी सुख देत।।९६।।

धाम धनी सुन्दरसाथ से अनेक रूपों (ज्ञान, चर्चा, चितवनि, आदि) में प्रेम करते हैं तथा उन्हें परमधाम के सुखों का अनुभव कराते हैं। वे सुन्दरसाथ से अति प्रेम

भरे मीठे शब्द बोलकर उन्हें आत्मिक सुख प्रदान करते हैं।

इन समें सनेह की, कहां लो कहों ए सुख।
ए तो सैंया जानहीं, कहयो न जाए मुख।।९७।।

इस समय धाम धनी सुन्दरसाथ से जिस प्रकार प्रेम करके सुख देते हैं, उसका वर्णन मैं कहाँ तक कहूँ? इसे तो भुक्तभोगी सुन्दरसाथ ही जानते हैं। मेरे मुख से उसका वर्णन हो पाना सम्भव नहीं है।

सेज सुरंगी नूर की, अति प्यारी भरी नूर।
इन सेवा के लवाज में, क्यों कर कहो जहूर।।९८।।

श्रीजी की सेज अति स्वच्छ लाल रंग की है। सुन्दरसाथ के प्रेम भरे भावों से सजायी होने के कारण वह बहुत ही

प्यारी दिखती है। धाम धनी की सेवा में जो भी वस्तुएँ प्रयुक्त होती हैं, उनकी शोभा का मैं कैसे वर्णन करूँ?

सेवत अत सनेह सों, साथ गिर्दवाए घेर।

सखियां गिरद घेर के, चरनों लागें बेर बेर।।९९।।

सुन्दरसाथ प्रियतम् अक्षरातीत को चारों ओर से घेरकर बहुत प्रेमपूर्वक उनकी सेवा करते हैं। धाम धनी को चारों ओर से घेरकर सुन्दरसाथ उनके चरणों में बार -बार प्रणाम करते हैं।

लटके मटके चलत, आए बिराजे पलंग।

चरनों लाग पीछे फिरी, श्री जी की अरधंग।।१००।।

श्रीजी प्रेम भरी चाल से चलकर पलंग पर विराजमान हो जाते हैं। श्रीजी की अर्द्धांगिनी, श्री तेज कुँवरी जी, उनके

चरणों में प्रणाम करके वापस अपने कोठा मन्दिर में चली जाती हैं।

इत दोए पहर पूरन भए, हुआ तीसरे का अमल जब।
तिनकी बीतक कहत हों, सुनियो सेवा की विध तब।।१०१।।

अब दोपहर का समय समाप्त हो जाता है। जब तीसरे प्रहर का प्रारम्भ होता है, तो उस समय सुन्दरसाथ जिस तरह से अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत की सेवा करते हैं, उसका वृतान्त मैं कहने जा रहा हूँ, आप उसे सुनिये।

महामत कहे ए साथ जी, ए बात बड़ी बुजरक।
एक जरा मैं न कह सकों, लाल कहया गजे माफक।।१०२।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! धाम धनी को सेवा के द्वारा रिझाने की यह बात बहुत ही गरिमामयी है।

मैं उसका अंश मात्र भी वर्णन नहीं कर सकता। मैंने तो अपनी बुद्धि के अनुकूल नाम मात्र के लिए ही वर्णन किया है।

प्रकरण ।।६५।। चौपाई ।।३८९५।।

तीसरा पहर

अब कहूं तीसरे पहर की, बीतक जो सैंयन।

सो तुम सुनियो नीके कर, दिल के रे कानन।।१।।

अब तीसरे प्रहर अर्थात् दोपहर के १२ से ३ बजे तक सुन्दरसाथ ने अपने धाम धनी को जिस तरह से रिझाया, उसका मैं वर्णन करने जा रहा हूँ। हे साथ जी! अब आप अपने दिल के कानों से उसे अच्छी तरह से सुनिए।

चरना लेके आइया, प्रेमदास पहिनावन।

नन्दराम पीछे खड़ा, ले गोटा कनढपी खलीतन।।२।।

प्रेम दास जी श्रीजी को पहनाने के लिए सूथनी लेकर आते हैं। नन्दराम जी अपनी थैली में गोटा और कनढप्पी

लेकर खड़े रहते हैं।

पिउ पौढ़े पलंग पर, सैयां सेवन को सनमुख।

मीठी बात रसना सों करें, देत निजधाम के सुख।।३।।

श्रीजी पलंग पर लेट जाते हैं। उनके चरण दबाने की सेवा करने वाले सुन्दरसाथ उपस्थित हो जाते हैं। धाम धनी सुन्दरसाथ के साथ प्रेम भरी मीठी बातें करते हैं और परमधाम के सुख देते हैं।

सेवा अंग परस की, वीरो आन करत।

सैयां चरनों लाग के, मंदिर अपनें फिरत।।४।।

श्रीजी के चरण दबाने की सेवा वीरो बाई करती हैं। इसके पश्चात् सुन्दरसाथ चरणों में प्रणाम करके अपने निवास में चले जाते हैं।

जीजी सिर आगे धरें, श्री राज मारो टपले।

पौढ़न बखत पलंग पर, इन समें आन पहुंच।।५।।

जीजी धाम धनी के आगे अपना शिर रख देती हैं और धाम धनी उस पर प्रेम भरी थपकी लगा देते हैं। श्रीजी के पलंग पर लेटने के समय वे अवश्य आ जाती हैं।

इन समें राधाबाई, श्री राज के पकड़े हाथ।

सिर को खुजलावने, बैठे सेज सेवा के साथ।।६।।

शैय्या पर होने वाली श्रीजी की चरण सेवा के समय राधा बाई माधुर्य भाव से श्रीजी के एक हाथ को पकड़ती हैं तथा अपने दूसरे हाथ से उनके सिर को खुजलाती हैं।

भावार्थ– पन्ना जी में होने वाली यह लीला प्रेम की उस चरम माधुर्य की लीला है, जिसमें न तो शरीर का आभास रहता है और न किसी प्रकार की विकार–

वासना। प्रेम और वासना दोनों एक साथ कभी भी नहीं रह सकते। चाहे महिला सुन्दरसाथ हो या पुरूष सुन्दरसाथ, वे भावात्मक रूप से परमधाम के प्रेममयी भाव में खोये रहते हैं। इसलिए उस समय लौकिक भावों की कल्पना भी नहीं हो सकती थी। इतना अवश्य है कि अध्यात्म के उस शिखर तक पहुँचे बिना किसी को अष्ट प्रहर की लीला की नकल करने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

गुलजी और अगरदास, आवत पांव दाबन।
इन सेवा मिने ये, रहते थे मगन।।७।।

गुलजी और अगरदास जी श्रीजी के चरण दबाने के लिए आते हैं। ये दोनों चरण दबाने की सेवा में मग्न रहते हैं।

मयाराम इत आए के, बानी सुनावत धाम।

श्री राज राजी होए के, सब पूरें मनोरथ काम।।८।।

इस समय मयाराम आकर परमधाम की वाणी का गायन करते हैं। धाम धनी उन पर प्रसन्न होते हैं और उनकी सारी कामनाओं को पूर्ण करते हैं।

तमूरा में तांत सों, गावें जगन्नाथ जुगत।

धाम बरनन सुनत हैं, पौढ़ने के बखत।।९।।

जगन्नाथ जी तँबूरे की तारों पर अति मधुर स्वरों में धाम वर्णन गाते हैं। धाम धनी पौढ़ने के समय उसे सुना करते हैं।

गजपत गहरा पन सों, गरजत हैं मुख बान।

साखी कहवे साख को, ले दरद खड़ा ईमान।।१०।।

गजपत गँभीर स्वरों में अपने मुख से वाणी गायन करते हैं। वे बीच-बीच में साक्षी के लिए सन्तों की साक्षियों (साखियों) का भी गायन करते हैं। उनके हृदय में अपने प्रियतम के लिए विरह का दर्द और अटूट ईमान कूट-कूट कर भरा हुआ है।

समय सब पौढ़न के, रिझावत हैं राज।

अखंड बानी धाम की, जाके गाए होत सब काज।।११।।

श्रीजी के पौढ़ने के समय सब सुन्दरसाथ वाणी गाकर धाम धनी को रिझाते हैं। परमधाम की इस अखण्ड वाणी के गाने से सभी कार्य पूर्ण होते हैं।

गजपत चरने राज के, तन मन सौंप्या चित।

कुरबान हुआ श्री राज पर, पीछे कछू न रख्या वित्त।।१२।।

गजपत जी ने धाम धनी के चरणों में अपना तन, मन, एवं चित्त समर्पित कर दिया है। वे श्रीजी पर इतना न्यौछावर हो गये हैं कि उन्होंने अपने लिए कुछ भी धन नहीं रखा।

चन्द्रावली रिझावत, गाए के पंजाब के बचन।

दरद उपजावे दिल को, स्याबास कहिए तिन।।१३।।

चन्द्रावली पंजाबी भाषा में भजन गाकर धाम धनी को रिझाती हैं। उनके गायन से हृदय में प्रियतम के प्रति विरह का दर्द पैदा हो जाता है। सब सुन्दरसाथ उन्हें इसके लिए शाबाशी देते हैं।

नन्दू नित दोए बखत, गावत आगे पलंग के।

तब लों तंबूरा बजावत, जोलों बारी वाले न पहुंचे।।१४।।

नन्दू प्रतिदिन दोनों समय श्रीजी के पलंग के आगे आकर गाते रहते हैं। वे तब तक अपना तँबूरा बजाते हैं, जब तक गाने की बारी वाले नहीं पहुँचते हैं।

बदले आया गावने, अपने साथ संगी ले।

संभु स्वर पूरत, और सन्त दास सेवे।।१५।।

शेख बदल अपने साथ अपने सहयोगियों को लेकर गाने के लिए आते हैं। शम्भू स्वयं पूरते हैं और सन्त दास उसमें सहयोग करते हैं।

बखतावर अमृत कुण्डली, सम्पत सेवे सनेह।

गावत हैं अत हेतसों, श्री राज रिझावे।।१६।।

बख्तावर, अमृत, कुण्डली, तथा सम्पत बहुत प्रेमपूर्वक गाने की सेवा करते हैं और अपने धाम धनी को रिझाते हैं।

बानी मेरे पीऊ की, गावत अति रसाल।

सुनते सुख उपजे, होत दिल खुसाल।।१७।।

"वाणी मेरे पिऊ की" इन पंक्तियों को ये सुन्दरसाथ इतने मीठे स्वरों में गाते हैं कि सुनते ही हृदय में सुख उत्पन्न होता है और प्रसन्नता छा जाती है।

साथ फेरे सब अपनो, इत बानी सुनन का दाव।

श्री राज सुने सनेह सों, दिल में बड़ी चाव।।१८।।

गाने वाले सब सुन्दरसाथ अपनी-अपनी बारी में गाने के लिए आते हैं। इस तीसरे प्रहर में सबको वाणी सुनने का अवसर मिलता है। श्रीजी के दिल में वाणी का गायन सुनने की बहुत चाहना रहती है और उसे वे बहुत प्रेमपूर्वक सुनते हैं।

और भी साथ सुनत हैं, जान धाम धनी सों नेह।

प्यार करें पिउ तिन सों, राखत बड़ा सनेह।।१९।।

धाम धनी से अपना अखण्ड प्रेम मानकर और भी सुन्दरसाथ वाणी का गायन सुनते हैं। श्रीजी भी उनसे प्रेम करते हैं और अपने हृदय में उनके लिए बहुत अधिक स्नेह रखते हैं।

अब कहों गावन की, जो बारी में गावें।

फिरती फिरती आवत, गाए के रिझावें।।२०।।

अब सुन्दरसाथ जो अपनी बारी (पाली) में आकर वाणी गायन करते हैं, उस गायन लीला का वर्णन करता हूँ। बारी वाले अपनी-अपनी बारी में क्रमशः आते हैं और गाकर धाम धनी को रिझाते हैं।

वारी में गावत हैं, चौदह आवत फिरती।

कलाम वहदानियत के, वहीयां जो उतरी।।२१।।

गाने वालों की १४ बारियाँ हैं, जो क्रमशः एक के बाद एक आती हैं। यह सुन्दरसाथ स्वलीला अद्वैत परमधाम की उस ब्रह्मवाणी का गायन करते हैं, जो परब्रह्म के आवेश से श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में अवतरित हुई है।

भावार्थ– परब्रह्म की तरफ से मुहम्मद साहब के पास जिबरील के माध्यम से जो निर्देश आता था, उसे वह्य कहते हैं, किन्तु तारतम वाणी अक्षरातीत के आवेश से कही गयी है। "कहलाया हृदय बैठ साख्यात" का कथन यही सिद्ध करता है कि स्वयं अक्षरातीत ने श्री महामति जी के धाम हृदय में आवेश स्वरूप से विराजमान होकर इस तारतम वाणी को कहा है, जिसका शब्दों में प्रस्तुतीकरण जोश (जिबरील) के द्वारा हुआ है।

जोश (जिबरील) अक्षर का फरिश्ता है। वह स्वयं न तो युगल स्वरूप की नख से शिख तक की शोभा का वर्णन सकता है और न परमधाम की लीला का। इस प्रकार कुरआन, गीता, तथा शुकदेव जी द्वारा महारास का वर्णन, आदि सब जोश के द्वारा कहा हुआ है, किन्तु तारतम वाणी साक्षात् परब्रह्म के आवेश द्वारा कही गयी

है।

ये कलाम रब्बानी, जो सुने रसूल अलेहु सलाम।
तीस हजार जाहिर किए, तीस हजार जो लिखे कलाम।।२२।।

तारतम वाणी के शब्द परब्रह्म के कहे हुए हैं। इसमें परब्रह्म अक्षरातीत द्वारा मुहम्मद (सल्ल.) को कहे हुए हकीकत और मारिफत के शब्दों को प्रकट किया गया है। मुहम्मद साहिब ने अक्षरातीत से जो ९०,००० हरूफ सुने थे, उसमें शरीअत के तीस हजार हरूफों को तो उन्होंने कुरआन में जाहिर कर दिया है, और तीस हजार लिखे तो हैं लेकिन उनका भेद कोई नहीं जानता।

और तीस हजार कानों सुने, पर चढ़े नहीं फुरमान।
सो हरफ सिफायत के, जो मुहम्मद सुने कान।।२३।।

और जो मारिफत के ३०,००० हरूफ थे, उनको मुहम्मद साहिब ने सुना तो, लेकिन वे कुरआन में अवतरित नहीं हुए। मुहम्मद साहेब द्वारा सुने हुए मारिफत के वे शब्द परमधाम की महिमा से सम्बन्धित हैं, जिसमें युगल स्वरूप की शोभा तथा वहदत (एकत्व) की लीला को दर्शाया गया है।

भावार्थ– कुरआन में हरूफ–ए–मुक्तेआत के अतिरिक्त हौज कोसर, जमुना जी, अलस्तो बिरब्बकुंम, आदि अनेक कथन हैं, जो हकीकत के हैं। सम्पूर्ण इस्लामिक जगत इनके वास्तविक आशय से कोसों दूर है। इससे भी परे जो मारिफत के शब्द थे, वे केवल श्री प्राणनाथ जी द्वारा अवतरित ब्रह्मवाणी में निहित हैं।

सो ए कलाम इत आए के, कहे वास्ते पहिचान।

ए दावत कयामत की, ल्यावे खलक ईमान।।२४।।

अब वे अक्षरातीत स्वयं अपने आवेश स्वरूप से श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान हो गए हैं और श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में अपनी पहचान देने के लिए मारिफत के उन शब्दों को स्पष्ट कर रहे हैं। परमधाम के इस अलौकिक ज्ञान के द्वारा इस सारे संसार को अखण्ड मुक्ति प्राप्त करने का निमन्त्रण दे रहे हैं। तारतम वाणी का अवतरण ही इसलिए हुआ है कि सारी सृष्टि को एक परब्रह्म पर अटूट विश्वास हो जाये।

जिन बानी गाए से, होत है दीदार हक।

ए सिफत महम्मद की, होत है इनसे बुजरक।।२५।।

इस ब्रह्मवाणी (श्री मुख वाणी, तारतम वाणी, कुलजम

स्वरूप) का गायन करने से परब्रह्म का दीदार होता है। इसमें जागनी की लीला करने वाले अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की महिमा दर्शायी गयी है। और इन्हीं की कृपा से कोई भी ब्रह्मात्मा आत्मिक जागनी के गरिमामयी पद को प्राप्त कर सकती है।

भावार्थ– इस ब्रह्मवाणी के गाने से परब्रह्म के दर्शन होने का आशय यह है कि यदि कोई सुन्दरसाथ हरिदास जी की तरह संगीत साधना करे और गहन प्रेम भाव में डूबकर अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को रिझाने की भावना से वाणी गाए, तो उसका विरह–प्रेम इतना बढ़ जाएगा कि उसे परब्रह्म का दीदार हो जाएगा।

फिल्मी धुनों पर गाए हुए भजनों या कव्वालियों से परब्रह्म के दीदार का यह लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकता , क्योंकि आवेशित वाणी के कहे हुए शब्द स्वयं श्री राज

जी के होते हैं। भजनों और कव्वालियों के शब्दों की रचना प्रायः उन सुन्दरसाथ के द्वारा की जाती है, जो हकीकत और मारिफत के स्तर तक नहीं पहुँचे होते। ऐसी अवस्था में उनके लिखे हुए शब्द हृदय की अन्तरात्मा तक नहीं पहुँच पाते और मनोरंजन का साधन मात्र रह जाते हैं।

ए आठों पहर में, गावत समें समें।

एक प्रात मध्यान को, गावत हैं चित से।।२६।।

ये १४ बारियाँ प्रतिदिन आठ प्रहर में समय-समय पर आती हैं। एक बारी प्रातःकाल तथा दूसरी दोपहर के समय पूरे मन से गायन करती है।

भावार्थ- "बारी" का तात्पर्य आगे-पीछे के क्रमानुसार आने वाला अवसर या मौका होता है। गायन करने वाले

सुन्दरसाथ को १४ समूहों में बाँट दिया गया है। प्रत्येक समूह के गाने का एक समय निश्चित कर दिया गया है। उस निश्चित समय पर गाने का जो अवसर प्राप्त होता है, उसे अपनी बारी (नम्बर आना) कहते हैं। साहित्यिक दृष्टि से इसे क्रमांक कहते हैं।

और समय चितवनी के, जब रहे दिन घड़ी चार।
और संझा समें, मोमिन करें विचार।।२७।।

चितवनि के समय जब सन्ध्या के साढ़े चार बजे होते हैं, उस समय भी गाने की बारी आती है। इसके अतिरिक्त सायंकाल में जब सुन्दरसाथ परमधाम के बारे में चिन्तन करते हैं, तब भी गाने की बारी आती है।

भावार्थ– चितवनि के पश्चात् जब श्रीजी हल्का आहार लेते हैं, उस समय आरती से पहले "हुओ संझा को

अवसर" गाया जाता है।

और समें पोढ़न के, जब रात जाए पहर दोए।
तब गावने बैठत है, ताके नाम कहत हों सोए।।२८।।

जब रात्रि के दो प्रहर बीत जाते हैं अर्थात् रात्रि के १२ बजे होते हैं, उसके पश्चात् श्रीजी के पौढ़ने का समय होता है। उस समय गाने वाले सुन्दरसाथ में जो गाने के लिए बैठ जाते हैं, मैं उनके नाम बता रहा हूँ।

एक बारी बदले की, तहां संग संभु गावन हार।
कबहुंक थानू बैठत, करे सन्तदास मनुहार।।२९।।

एक बारी शेख बदल की होती है, जिसमें उनके साथ शम्भू गाते हैं। कभी-कभी गाने के लिए थानू भी बैठते हैं। सन्तदास जी वाणी गाकर अपने धाम धनी को रिझाते हैं।

और सामिल गावहीं, ए जो बखतावर।

अमृत कुण्डली गावहीं, बानी सुन्दर वर।।३०।।

इनके साथ गाने वालों में बख्तावर जी भी सम्मिलित हो जाते हैं। साथ में अमृत और कुण्डली भी अपने प्रियतम अक्षरातीत की वाणी को गाते हैं।

और दूसरी बारी मिने, मना और रतनी।

असाई भागो धन बाई, सब वारी रिझावे अपनी।।३१।।

दूसरी बारी में मना, रतनी, असाई, भागो, और धन बाई होती हैं। ये सभी सखियाँ अपनी बारी में वाणी गाकर धाम धनी को रिझाती हैं।

और तीसरी बारी मिने, दयाली गावें।

और खिमोती दमोती, जसिया भी आवे।।३२।।

तीसरी बारी में प्रमुख रूप से दयाली गाती हैं। इनके साथ दमोती, खिमोती, और जसिया भी रहते हैं।

चौथी में लछो आवत, संग असाई मना।

और सब हाजिर रहें, जान राज अपना।।३३।।

चौथी बारी में लच्छो बहन गाने आती हैं। उनके साथ असाई और मना भी रहती हैं। ये सब सुन्दरसाथ श्रीजी को अपना धाम धनी मानकर गाने में उपस्थित रहते हैं।

जहूरा गौरी बारी मिने, गावत बाई प्रेम।

खेम बाई सामिल रहें, गुलो गावें लिए नेम।।३४।।

पाँचवी बारी में जहूरा, गौरी, प्रेम बाई, और खेम बाई सम्मिलित रहती हैं। गुलो नियमित रूप से धाम धनी की वाणी गाने के लिए आया करती हैं।

सब की बारी मिने, चन्द्रावली देत मदत।

श्री राज रीझत तिन पर, गावने के बखत।।३५।।

सबकी बारियों में गाने के समय चन्द्रावली जी सहायता करती हैं। धाम धनी उनके गायन के प्रति निष्ठा को देखकर बहुत ही प्रसन्न होते हैं।

जीजी की बारी मिने, गावत है अगरी।

बड़ी जीजी सामिल रहें, और गावत हैं मथुरी।।३६।।

जीजी की बारी में अगरी और मथुरी बाई गाती हैं। इस गायन की सेवा में बड़ी जीजी भी सम्मिलित हो जाती हैं।

करमेती के सामिल, गावैं हरखों बाई गौर।

लालो रतो लड़ेती, ए गावत हैं जोर।।३७।।

करमेती की सातवीं बारी में हरखो बाई, गौर बाई गाती हैं। लालो, रतो, तथा लड़ेती बाई बहुत ही प्रभावशाली ढँग से गायन करती हैं।

और लछो ललिता, और सुआ संता द्रोपती।

केसर लखमीं आवत, राज बड़ी रीझ करी।।३८।।

इनके अतिरिक्त लच्छो, ललिता, सुआ, सन्ता, द्रोपदी, केशर बाई, तथा लक्ष्मी धाम धनी की वाणी का गायन करने आया करती हैं। इन्होंने अपने गायन के द्वारा श्रीजी को बहुत अधिक रिझाया।

आठमी बारी मिने, हर कुंअर सिरदार।
पांखड़ी सूजा कासी, गावत खबरदार।।३९।।

आठवीं बारी में हरकुँवर प्रमुख हैं। पाँखड़ी, शूजा, तथा काशी बहुत सावधान होकर वाणी का गायन करते हैं।

नवमी जसा की बारी मिने, गावें भीगू चंगाई।
वीरो किसनी सामिल, ए गावने को आई।।४०।।

नवमी बारी जसा की है, जिसमें भीगू और चँगाई गाते हैं। इनके साथ वीरों और किसनी बाई भी शामिल हो

जाती हैं। ये सुन्दरसाथ प्रतिदिन गाने के लिए आया करते हैं।

भागीरथी के भाग में, गावत हैं मोहन दे।

लड़ेती लछो सुआ रहे, पटेलन जेंनती के।।४१।।

दसवीं बारी भागीरथी की है, जिसमें मोहन दे प्रमुख रूप से गाते हैं। लड़ेती, लच्छो, सुआ बाई, तथा जयन्ती पटेलन भी इसमें सम्मिलित होती हैं।

और सन्ता गावें सनेह सों, लाली लालो इनमें।

अपनी बारी गावहीं, रहे खुसाली सें।।४२।।

सन्ता, लाली, तथा लालो बाई अपनी बारी में बहुत प्रेमपूर्वक वाणी को गाती हैं और हमेशा आनन्दित रहती हैं।

अग्यारमी भानी की बारी मिने, गावे हिमोती गोमा।

रामबाई तहां गावत, हक आवत करें उपमा।।४३।।

११वीं बारी भानी बाई की है, जिसमें हिमोती और गोमा गाया करती हैं। इसमें राम बाई भी गाने में सम्मिलित होती है। धाम धनी आते समय इन सब गाने वाले सुन्दरसाथ की दूसरों से उपमा करके प्रशंसा करते हैं।

खरगो खिमोती रहे, ए गावे अल्ला कलाम।

श्री राज रीझ के कहत हैं, इन्हें देओ बैठने का ठाम।।४४।।

खड़्गो और खिमोती धाम धनी की वाणी को प्रेमपूर्वक गाया करती हैं। श्रीजी इन पर प्रसन्न होकर कहते हैं कि इन्हें बैठने के लिए स्थान दो।

खेमबाई की बारी मिने, गावें साहो हंसों जादी।
करमाबाई आवत, रीझ राजें वारी दी।।४५।।

बारहवीं बारी खेमबाई की है, जिसमें साहो, हन्सो, और जादी गाया करती हैं। गाने में कर्मा बाई भी आया करती है। श्री प्राणनाथ जी ने इनके ऊपर प्रसन्न होकर इन्हें गाने की बारी दी है।

गुलो की बारी मिने, गावें जान मानवंती।
दयंती मनिया गौरबाई, गावत सुख देतीं।।४६।।

तेरहवीं बारी गुलो की है, जिसमें जान बाई और मानवन्ती बाई गाया करती हैं। दमयन्ती मनिया तथा गौर बाई वाणी गाकर धाम धनी को सुख देती हैं।

दो पहर की बारी मिने, गावत हैं सिवराम।

संझा समें भी सामिल, ए पावत विसराम।।४७।।

दोपहर की बारी में शिवराम जी गाते हैं। ये सन्ध्या समय भी गाने में सम्मिलित होते हैं। इन्हें इसमें बहुत आनन्द आता है।

सदानन्द गावहीं, भाई जो सिवराम।

और अमृत कुण्डली, और बखतावर को काम।।४८।।

शिवराम जी के भाई सदानन्द जी भी इस बारी में गाया करते हैं। इसके अतिरिक्त अमृत , कुण्डली, और बख्तावर भी गाने की सेवा किया करते हैं।

बनमाली की बारी मिनें, गावे दो पहर संझा समें।

संग सन्ता प्रेम जीजली, राम बाई सूरत से।।४९।।

१४वीं बारी वनमाली जी की है। इस बारी के सुन्दरसाथ दोपहर और सन्ध्या समय गाया करते हैं। इनके साथ सन्ता, प्रेम, जीजली, तथा सूरत की रहने वाली रामबाई गायन किया करती हैं।

ए बारी वाले गावहीं, आठ पहर रात दिन।

एह नित सुनत है, खास गिरोह मोमिन।।५०।।

इस प्रकार, प्रतिदिन आठों प्रहर बारी वाले सुन्दरसाथ धाम धनी की वाणी को गाया करते हैं। परमधाम के ब्रह्ममुनि श्रद्धापूर्वक इसको नित्य ही सुना करते हैं।

और आवत हैं बहुत, मढ़े फिरत दोऊ कान।

बिना अंकूरे क्या करे, पावें ना सुख सुभान।।५१।।

यद्यपि बँगला जी दरबार में बहुत से लोग आते हैं, लेकिन वे अपने दोनों कानों को बन्द करके इधर–उधर घूमा करते हैं। परमधाम के अँकुर से रहित बेचारे जीवसृष्टि के ये लोग भला क्या कर सकते हैं? इनके भाग्य में श्री राज जी का सुख पाना लिखा ही नहीं होता।

नातो बुरा न चाहे कोई आपको, पर ना सुनने ताकत।

लज्जत तिनको न आवहीं, तो क्यों कर बैठे तित।।५२।।

नहीं तो संसार में कोई भी व्यक्ति अपना बुरा नहीं चाहता। किन्तु परमधाम का अँकुर न होने से उनमें वाणी को सुनने का सामर्थ्य ही नहीं होता, इसलिए जब इनको वाणी सुनने में स्वाद ही नहीं आता तो भला क्यों बैठें?

ताबे रहे सैतान के, सो खैंचे अपनी तरफ।

दिखावे दुनीय को, तो पावे ना एक हरफ।।५३।।

जीवसृष्टि हमेशा अज्ञान रूपी कलियुग (दज्जाल) के अधीन रहती है। वह इन्हें अपनी तरफ खींचता रहता है। यह कलियुग इन जीवों को संसार के आकर्षणों में ही फँसाये रखता है। इसलिए ये ब्रह्मवाणी का एक शब्द भी अपने हृदय में उतार नहीं पाते।

जो कदी कानों सुने, काहू की सोहोबत।

पर दिल की आंखे फूटियां, ताथें न पावे लज्जत।।५४।।

यदि किसी की सँगति से जीवसृष्टि ब्रह्मवाणी के शब्दों को अपने कानों से सुन भी लेती है, तो भी दिल की आँखें न होने से उसे ब्रह्मवाणी में कोई रस नहीं आता।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में कथित "दिल

की आँखों के फूटे होने" का अर्थ है, अन्तर्दृष्टि का न होना। अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए मन एवं इन्द्रियों का निर्मल तथा अन्तर्मुखी होना अनिवार्य है। सांसारिक विषयों में लिप्त रहने वाला व्यक्ति इस दृष्टि का अधिकारी नहीं होता।

ए जिनके ताले लिखे, सो गावे सुने सुकन।
जोस फिरे जबरूत लों, नजर लाहूत में मोमिन।।५५।।

यह ब्रह्मवाणी जिन ब्रह्ममुनियों के भाग्य में है, वे ही इसके वचनों को गाते हैं और सुनते हैं। इन ब्रह्मात्माओं का जोश जबरूत तक जाता है और इनकी अन्तर्दृष्टि परमधाम के २५ पक्षों में घूमती रहती है।

तिनके वास्ते खेल को, बनाया खालक।

रसूल को उन इनों पर, भेज दिया है हक।।५६।।

इन ब्रह्मसृष्टियों की इच्छा पूरी करने के लिए ही धाम धनी ने इस खेल को बनाया है और इनके लिए ही मुहम्मद साहब को सन्देशवाहक के रूप में भेजा है।

सुने न कुरान को, इनके कहे न कान।

कलाम रब्बानी उतरे, सो मोमिनों पहिचान।।५७।।

सांसारिक जीवों के आन्तरिक कान नहीं होते, इसलिये ये कुरआन की हकीकत एवं मारिफत के रहस्यों को नहीं समझ सकते। ब्रह्मसृष्टियों को अक्षरातीत की पहचान कराने के लिए ही तारतम वाणी का अवतरण हुआ है।

भावार्थ– जीव सृष्टि (आम खलक) कुरआन की शरीअत और तरीकत से आगे नहीं बढ़ सकते। हकीकत

और मारिफत के गुह्य रहस्यों को सुनने की ताकत जीवसृष्टि में नहीं होती, भले ही उसने सारी कुरआन क्यों न पढ़ डाली हो?

सो वानी सिफायत की, किन वास्ते उतरी।

हक मेहर करत हैं, वास्ते मोमिनों दिल धरी।।५८।।

इसलिए इस नश्वर जगत में ब्रह्ममुनियों की अनुशंसा (महिमा का गायन) करने वाली यह तारतम वाणी भला इनके अतिरिक्त और किसके लिए अवतरित हो सकती थी। धाम धनी ने अपनी मेहर से इस ब्रह्मवाणी का अवतरण किया है, जिसे ब्रह्मात्माओं ने अपने हृदय में धारण कर लिया है।

भावार्थ– सिफायत (अनुशंसा) का सम्बन्ध मात्र मानवीय तन धारण करने वाली ब्रह्मात्माओं तथा ईश्वरीय

सृष्टि से है।

पांचों चीज बका से, उतरी वास्ते मोमिन।

जबराईल जोस धनी का, करत सदा रोसन।।५९।।

अखण्ड धाम से पाँच शक्तियाँ ब्रह्मात्माओं के लिए ही श्री महामति जी के धाम हृदय में अवतरित हुई। जिबरील धनी का जोश है, जो हमेशा उनके अन्दर ज्ञान का प्रकाश करता है।

भावार्थ– जिबरील और अस्राफील अक्षर धाम (सत्स्वरूप) से आये हैं, जबकि श्यामा जी की आत्मा, अक्षर ब्रह्म की आत्मा, हुक्म (आवेश) परमधाम से आये हैं।

असराफील आइया, नूर मकान सें

गावत हैं कुरान को, बैठ बीच मोमिनों में।।६०।।

अस्राफील फरिश्ता अक्षर धाम से आया है और वह ब्रह्मात्माओं के हृदय में बैठकर तारतम वाणी के द्वारा कुरआन के गुह्य रहस्यों को उजागर कर रहा है।

भावार्थ– इस चौपाई के तीसरे चरण में कुरआन का तात्पर्य तारतम वाणी (आखिरी कुरआन) से है, जिसमें हकीकत और मारिफत के भेद दर्शाये गये हैं।

वेद कतेब छुड़ावने, धनी आए इन ठौर।

खुलासा १३/९०

के कथन से यही निष्कर्ष निकलता है कि शरीअत एवं तरीकत की शिक्षा देने वाला यह कुरआन हमें परमधाम की राह नहीं दर्शा सकता।

करनाइ फूंकन को, देखत है राह हुकम।

पीठ कूबड़ी करके, बीच सांस ना लेवे दम।।६१।।

अस्राफील फरिश्ता तुरही (नरसिंघा) में सूर फूँकने के लिए अपनी पीठ टेढ़ी करके श्री राज जी के आदेश की राह देख रहा है। वह इस बीच में एक पल की स्वाँस भी नहीं ले रहा है।

भावार्थ– इस चौपाई में अक्षर की जाग्रत बुद्धि (अस्राफील) को एक मानवीय रूपक अलंकार के माध्यम से दर्शाया गया है। "पीठ टेढ़ी करना" तथा "पल भर के लिए भी स्वाँस न लेना" एक आलंकारिक कथन है, जिसका तात्पर्य यह है कि श्री राज जी के आदेश मात्र से पल भर में जाग्रत बुद्धि के ज्ञान का प्रकाश हो जाएगा।

इसी प्रकार "तुरही में सूर फूँकना" भी आलंकारिक वर्णन है। जैसे बाँसुरी, तुरही, आदि में वायु फूँकने पर

मधुर ध्वनि होती है, वैसे ही जाग्रत बुद्धि के ज्ञान का अवतरण होना भी अस्राफील के द्वारा तुरही में सूर फूँकना है। बाइबिल में इसे "Trumpet of God" कहा गया है।

कुरआन-हदीसों में दो बार सूर फूँकने का वर्णन है। पहले सूर में परमधाम के अखण्ड ज्ञान का अवतरण होना है, तथा दूसरे सूर में इस ब्रह्माण्ड के सभी जीवों में जाग्रत बुद्धि का ज्ञान फैलना है, किन्तु सबके अन्दर प्रकाश एकमात्र योगमाया के ब्रह्माण्ड में ही होगा और इसके लिए महाप्रलय होकर इस ब्रह्माण्ड के जीवों का योगमाया में पहुँचना आवश्यक है। धाम धनी के आदेश से यह सब पल भर में ही हो जाएगा। इसे ही अस्राफील के द्वारा अपनी पीठ टेढ़ी करके सूर फूँकने के लिए श्री राज जी के आदेश की प्रतीक्षा करना कहा गया है। इस

सन्दर्भ में तारतम वाणी में कहा गया है–

एक सूरें उड़ाए के दिए, दूसरे तेरही में कायम किए।

कियामतनामा २४/६

और हुकम आया हक का, ऊपर करने काम।

मोमिनों को खेल दिखाए के, पहुंचावे वतन निजधाम।।६२।।

श्री राज जी के आदेश (आवेश) की शक्ति श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान होकर जागनी लीला के सारे कार्य कर रही है। धनी का हुक्म ही ब्रह्मात्माओं को माया का खेल दिखाकर परमधाम ले जाएगा।

उतरी सहें अरस अजीम से, ए सामिल है पांचे।

सब कारज होवे इन से, एक ठौर होए के।।६३।।

ब्रह्मात्मायें परमधाम से आयी हैं। श्री महामति जी के धाम हृदय में ये पाँचों शक्तियाँ (जोश, श्यामा जी, अक्षर ब्रह्म की आत्मा, श्री राज जी की आदेश शक्ति, तथा जाग्रत बुद्धि) एक जगह इकट्ठी होकर सम्मिलित रूप में लीला कर रही हैं। जागनी लीला का सारा कार्य इन्हीं पाँचों से सम्पादित होना है।

ए सब वास्ते मोमिन के, करत हैं सुभान।

सब सिफत लिखी इनकी, इनको दिया ईमान।।६४।।

यह सारी लीला धाम धनी ब्रह्मसृष्टियों के लिए ही कर रहे हैं। धाम धनी ने इन्हें अपने प्रति अटूट ईमान (विश्वास) दिया है तथा सभी धर्मग्रन्थों में इनकी महिमा लिखी हुई है।

भागवत गीता मिने, और वेद वेदान्त।

सास्त्र इन वास्ते हुआ, हकें करी सब कर खान्त।।६५।।

वेद-वेदान्त, गीता, भागवत, तथा शास्त्र, आदि ग्रन्थों की रचना इनके लिए ही की गई है। ऐसा करके प्रियतम अक्षरातीत ने इनकी सारी इच्छाओं को पूर्ण किया है।

उपनिषद इन वास्ते, बोलत है अद्वैत।

सुनत चरचा इनकी, उड़ जात सब द्वैत।।६६।।

इन ब्रह्मसृष्टियों को साक्षी देने के लिए ही उपनिषद् की वाणी अद्वैत परब्रह्म का वर्णन करती है। उपनिषदों में वर्णित अद्वैत परब्रह्म की चर्चा करने से द्वैत का भाव समाप्त हो जाता है।

वेद कुरान कहेवहीं, सो कह्या वास्ते मोमिन।

हकीकत मारफत के, द्वार खोल के दिये सब इन।।६७।।

वेद और कुरआन जिस ज्ञान का बखान करते हैं, वह ब्रह्मसृष्टियों को लिए ही कहा गया है। तारतम वाणी के द्वारा धाम धनी ने इन ब्रह्मसृष्टियों के लिए ही हकीकत और मारिफत का रहस्य उजागर किया है।

पैगाम जो उतरे, सो वास्ते मोमिनों के।

सब गवाही देवे इनकी, और सिफत कहे ए।।६८।।

अखण्ड धाम से जो भी सन्देश इस संसार में आए हैं, वे इन ब्रह्मसृष्टियों के लिए ही आए हैं। सबके ग्रन्थ इन्हीं की साक्षी देते हैं, और इनकी महिमा गाते हैं।

भावार्थ– शुकदेव जी के द्वारा महारास का वर्णन, योगेश्वर श्री कृष्ण के द्वारा गीता का ज्ञान देना, कबीर जी

के द्वारा बीजक का ज्ञान देना, बेहद मण्डल से सम्बन्धित है और यह सब धनी के जोश के द्वारा सम्भव होता है। कुरआन का ज्ञान भी जोश के द्वारा उतरा, किन्तु उसमें परमधाम का संक्षिप्त वर्णन है। माहेश्वर तन्त्र में भगवान शिव के द्वारा जो उमा को ज्ञान दिया गया है, वह कहीं बेहद मण्डल का है, तो कहीं परमधाम का।

मुकदमा कयामत का, सो इनों वास्ते होए।

मुरदे किये जीवते, इनों वास्ते किया सोए।।६९।।

धाम धनी ने श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में कियामत का दावा भी इन्हीं के लिए किया है। श्रीजी ने तारतम ज्ञान के प्रकाश में मुर्दों को जीवित किया है, अर्थात् शरीर और संसार में फँसे हुए जीवों को अखण्ड परमधाम की राह दिखायी है। ये सब कुछ इनके लिए किया गया

है।

राह जो इसलाम की, पावे सब खलक।

मेहर बड़ी जो उतरी, सो भेजी इन वास्ते हक।।७०।।

परमधाम की वाणी का अवतरण करना प्रियतम अक्षरातीत की सबसे बड़ी मेहर है और इन ब्रह्मात्माओं के कारण ही वाणी इस संसार में आयी है। इस तारतम वाणी के प्रकाश में ही सारी सृष्टि को निजानन्द की वास्तविक राह प्राप्त होनी है।

और बाते केती कहों, सब हुआ इन वास्ते।

सो तुम जाहिर देखोगे, दिल अपनी नजर से ये।।७१।।

और मैं कितना वर्णन करूँ? इस संसार में इन ब्रह्मसृष्टियों के लिए ही सब कुछ हुआ है। आप अपने

दिल की आँखों से, अर्थात् अपनी आत्मिक दृष्टि से, यह सब कुछ भविष्य में प्रत्यक्ष रूप में देखेंगे।

महामत कहे ए साथ जी, सुनो जिकर सुभान।
ए सिफत ईमान की, लाल जिनको भई पहिचान।।७२।।

श्री महामति जी कहते है कि हे साथ जी! आप श्री राज जी की लीला का वर्णन सुनिये। जिन ब्रह्मसृष्टियों को अपने प्रियतम अक्षरातीत की पहचान हो गयी है, उनका यह आचरण ही उनके अटूट विश्वास की महिमा को उजागर करता है। वे ही इस वर्णन को सुन सकती हैं।

प्रकरण ।।६६।। चौपाई ।।३९६७।।

चौथा पहर

अब कहूं पोहोर चौथे की, बीतक जो सैयन।
सो दिल के कानों सुनियो, करत हों रोसन।।१।।

अब मैं चौथे प्रहर, अर्थात् ३ से सायंकाल के ६ बजे तक, की उस लीला का वर्णन कर रहा हूँ, जिसमें सुन्दरसाथ अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत को रिझाते हैं। हे साथ जी! आप अपने दिल के कानों से उसे सुनिये।

इत एक पहर पिउ पौढ़त, आये सेवन को सब साथ।
जल लोटा भर ल्याइया, छबीलदास अपने हाथ।।२।।

धाम धनी एक प्रहर अर्थात् १२ से ३ बजे तक शैय्या पर पौढ़ते हैं। उसके पश्चात् सेवा करने के लिए सब सुन्दरसाथ आ जाते हैं। छबील दास जी अपने हाथों से

लोटे में जल भरकर श्रीजी के लिए लाते हैं।

श्री राज कोगला करत हैं, डारत हैं पीक दान।

संकर आगे धरत हैं, संग सन्तदास परवान।।३।।

श्री प्राणनाथ जी उस जल से कुल्ला करते हैं और उसे पीकदान में डाल देते हैं। शँकरदास जी पीकदान को श्रीजी के आगे रखे रहते हैं। इस समय उनके साथ सेवा में सन्तदास जी निश्चित रूप से होते हैं।

मानक दौड़े इन समें, हजूर पहुंची आए।

ए सब सेवा में सामिल, कछू अरज पहुंचाए।।४।।

इस समय मानिक भाई तेज गति से चलते हुए श्रीजी की सेवा में उपस्थित हो जाते हैं। उपरोक्त सब सुन्दरसाथ धनी की हर प्रकार की सेवा में सम्मिलित

रहते हैं तथा धनी से कुछ और सेवा करने के लिए प्रार्थना किया करते हैं।

श्री राज रजा देत हैं, आए हजूरी सब।
संकर सेवे सनेह सों, मोरछल लिए तब।।५।।

जब श्रीजी स्वीकृति दे देते हैं, तो सेवा करने वाले सारे सुन्दरसाथ आ जाते हैं। उस समय शँकर जी मोरछल लेकर प्रेमपूर्वक ढुलाने की सेवा करते हैं।

हजूर हमेसा रहे, ए जो केसव दास।
कंचन मूठे मोरछल, सनेह सों सेवा खास।।६।।

केशव दास जी हमेशा श्रीजी की सेवा में उपस्थित रहते हैं। उनके मोरछल के मूठ (हत्थे) में कञ्चन जड़ा होता है, जिससे वे प्रेमपूर्वक धनी के ऊपर ढुलाने की सेवा

करते हैं।

बल्लभ गंगादास जो, रहत हजूर हमेस।

निरगुन हो के रहत हैं, माया नहीं लवलेस।।७।।

वल्लभ दास और गँगा दास धाम धनी की सेवा में हमेशा प्रस्तुत रहते हैं। ये हमेशा इस प्रकार विरक्त भाव में रहते हैं कि इनके अन्दर जरा भी माया का प्रवेश नहीं होता।

बिहारी दास हमेसा, रहे हजूर हक।

सब कामों में दौड़त, बड़ी सेवा बुजरक।।८।।

बिहारी दास जी हमेशा ही श्री प्राणनाथ जी की सेवा में उपस्थित रहते हैं। वे सभी कामों में दौड़-दौड़कर हाथ बँटाते हैं। इस प्रकार इनकी बहुत बड़ी गरिमामयी सेवा है।

लालदास हजूर में, मकरन्द इनके साथ।

नीमा पहिनाया प्रेमदास, कस बांधे दोऊ हाथ।।९।।

श्री लालदास जी मकरन्द दास जी के साथ श्री राज जी की सेवा में उपस्थित रहते हैं। प्रेमदास जी श्रीजी को आधी बाँह वाली कुर्ती (नीमा) पहनाते हैं, और अपने दोनों हाथों से उसकी कस बाँधते हैं।

धरत हैं सिर पर, गोटा पहिनावत नन्द राम।

गोस पेंच सिर ऊपर, आये मुकुन्द दास इन ठाम।।१०।।

नन्दराम जी धाम धनी के शिर पर कपड़ा रखकर उसे बाँध देते हैं। इसी समय मुकुन्द दास जी आ जाते हैं और उनके शिर पर गोस पेंच रखते हैं।

भावार्थ– पाग के ऊपर मुकुट जैसी शोभा में नीचे की ओर आयी हुयी पट्टी को गोस पेंच कहा जाता है।

दुता सुपेत कंचन का, पहिनावत ऊपर।

रामचन्द्र हैं सामिल, सेवा नन्दराम यों कर।।११।।

नन्दराम जी सोने के तारों से जड़ी हुयी सफेद चद्दर श्री जी को ओढ़ाते हैं। इस सेवा में उनके साथ रामचन्द्र जी भी शामिल रहते हैं।

पटका कमर सों बांधत, जरी किनारी झलकत।

थुरमा ओढ़े कुरती पर, सोभे सुनहरी बूटे इत।।१२।।

वे श्रीजी की कमर में पटुका बाँधते हैं, जिसकी किनार पर सोने के तारों से बने हुई बेल–बूटे झलकार कर रहे हैं। श्री जी कुर्ती के ऊपर अँगोछा ओढ़ते हैं, जिस पर सुनहरे बेल–बूटे शोभायमान हो रहे हैं।

तकिए मखमली ल्याइया, ए जो बिहारी दास।

कोई दिन सेवा करी, मिल बन्दे फरास।।१३।।

बिहारी दास जी श्रीजी की गादी के लिए मखमली तकिए लेकर आते हैं। सेवा भाव में निपुण बिहारी दास फरास के साथ मिलकर इन्होंने कुछ दिनों तक यह सेवा की।

भावार्थ– बिहारी दास नाम के दो सुन्दरसाथ है, एक का नाम बिहारी दास फरास और दूसरे का नाम बिहारी दास झडूला है। इनका वर्णन छठे प्रहर की २२वीं चौपाई में इस प्रकार किया गया है– बिहारी फरास आवत, और बिहारी झंडूला।

मेघा इनके संग रहे, और सुकाली सेवे।

गोविन्द दास बदले, और बिसंभर सेवा करें।।१४।।

इनके साथ मेघा और सूकाली भी सेवा किया करते हैं। गोविन्द दास, शेख बदल, और विश्वम्भर भी प्रेमपूर्वक सेवा किया करते हैं।

भाई बनमाली दास नें, ए जो बनाया तखत।
हवाले रहे बिहारी दास के, गादी तकिए धरें इत।।१५।।

भाई बनमाली दास ने श्रीजी के लिए एक बहुत ही सुन्दर तख्त बनाया। वह तख्त बिहारी दास जी की देख-रेख में रहता है और वे उस पर गादी बिछाने और तकिये रखने की सेवा करते हैं।

धनजी गावने में रहे, बनमाली दास के संग।
तखत कुरसी सेज सेवा, करें सामिल हो उछरंग।।१६।।

धन जी भाई, वनमाली दास जी के साथ वाणी गाने में

लगे रहते हैं। ये दोनों मिलकर बहुत ही उत्साहपूर्वक तख्त, कुर्सी, तथा सेज की सेवा किया करते हैं।

सेज पर से उठके, कोई दिन घर जावे घनस्याम।
तहां पांवड़े आगे बिछावत, ए लाल बाई का काम।।१७।।

धाम धनी अपनी सेज पर से उठकर किसी–किसी दिन घनश्याम भाई के घर चले जाते हैं। वहाँ श्रीजी के आगे पाँवड़े बिछाने की सेवा लालबाई जी की होती है।

और बिछावत किसनी, एक पाँवड़ा जित।
फुम्मक चंद्रवा बांधत, मानिक बाई तित।।१८।।

वहाँ एक पाँवड़ा किशनी बाई भी बिछाती हैं, तथा मानिक बाई फुम्मक लगे हुए चन्द्रवा को बाँधती हैं।

तिन सेवा के सामिल, गंगादास सोभादास।

इन सेवा बराबरी, कोई न पहुंचे खास।।१९।।

वहाँ चन्द्रवा बाँधने की सेवा में गँगादास जी और शोभादास जी सम्मिलित रहते हैं। चन्द्रवा बाँधने की सेवा के बराबरी में अन्य कोई सेवा महत्वपूर्ण नहीं होती।

भावार्थ– यद्यपि हर प्रकार की सेवा का महत्व है, किन्तु चन्द्रवा बाँधने में श्रीजी के प्रति पूर्ण प्रेम, समर्पण, एवं सम्मान झलकता है, चाहे नित्य क्रिया का समय हो, चाहे भोजन का थाल लाते समय का प्रसंग हो, चाहे बाल कटवाने का। सुन्दरसाथ का श्रीजी के लिए चन्द्रवा बाँधना यही दर्शाता है कि उन्होंने धनी के प्रति स्वयं को न्यौछावर कर दिया है।

इन हाथ पकड़ के, लच्छीदास ल्यावे।

पीछे फिरते हाथ दे, लाल दास पहुंचावें।।२०।।

यहाँ पर श्रीजी का हाथ पकड़कर लच्छीदास जी ले जाते हैं। वहाँ से वापस लौटते समय श्री लालदास जी श्रीजी का हाथ पकड़कर गादी तक पहुँचाते हैं।

प्रेमदास चित्ता गले लिए, सेवन को सब साज।

बातें करें बनाए के, सबे राज के काज।।२१।।

प्रेमदास जी अपने गले में एक थैली लटकाए रखते हैं, जिसमें बाल आदि काटने के सभी सामान रखे रहते हैं। वे श्रीजी के बाल बनाते समय उन्हें रिझाने की भावना से तरह-तरह की बातें बनाते हैं।

लटके मटके चलते, आए बैठे गादिए।

ए सेवा बिहारीदास की, बिछाई है भर के।।२२।।

श्रीजी प्रेम भरी मनोहर चाल में चलते हैं और आकर गादी पर विराजमान हो जाते हैं। यह बिहारी दास जी की विशेष सेवा है। उन्होंने पूरे पलंग पर गादी को अच्छी तरह से बिछा रखा है।

धरे दोऊ बाजू तकिए, ऊपर पाँवड़े चलत।

पगथिए चरन धर के, आए कुरसी बिराजत।।२३।।

श्रीजी के दोनों ओर तकिए रखे जाते हैं। पाँवड़े के ऊपर चलते हुए धाम धनी सीढ़ियों से होते हुए बँगला जी में आकर अपनी कुर्सी पर विराजमान हो जाते हैं।

चरन पखालनें को छबीलदास, ल्यावत सुन्दर जल।

मुकुन्द दास खास पखालत, ए सेवत दिल निरमल।।२४।।

श्रीजी के चरण धोने के लिए छबील दास जी बहुत ही स्वच्छ जल लाते हैं। मुकुन्द दास जी विशेष रूप से श्री प्राणनाथ जी के चरणों को धोते हैं और इस सेवा को बहुत निर्मल हृदय से करते हैं।

दूजा पखालें प्रेमदास, पोंछे केसव रूमाल ले।

नारायण ता ऊपर, रूमाल देवें कर सनेह।।२५।।

श्रीजी के दूसरे चरण कमल को प्रेमदास जी धोते हैं। इसके पश्चात् केशवदास जी श्रीजी के चरणों को रूमाल से पोंछते हैं, तत्पश्चात् नारायण दास जी बहुत प्रेमपूर्वक श्रीजी को रूमाल देते हैं।

दोइ बाजू पिंडुरी, पकड़त बनमाली दास।

लालदास सामल, लिए सेवन की दिल आस।।२६।।

वनमाली दास श्रीजी के दोनों चरणों की पिंडुलियों को पकड़कर दबाते हैं। अपने दिल में धनी की सेवा की आशा लिए लालदास जी भी इसमें सम्मिलित होते हैं।

इत चिलमची धर के, बैठत हैं नन्द राम।

जल प्रसादी बांटत, संकर को ए काम।।२७।।

चिलमची लेकर नन्दराम जी बैठते हैं और चरणामृत को प्रसादी के रूप में बाँटने की सेवा शँकर दास जी करते हैं।

हाथ पखालत हेत सों, छबीलदास रेड़े जल।

हाथ पोंछावे रूमाल सों, प्रेमदास निरमल।।२८।।

स्वच्छ जल से श्रीजी के हाथों को धुलाने की सेवा छबील दास जी करते हैं। इसी प्रकार प्रेम दास जी साफ रूमाल से श्रीजी के हाथों को पोंछते हैं।

अमल आरोगें इन समें, इत छबीलदास देवे।

फोफल आरोगन को, मानक ले पहुंचावें।।२९।।

छबील दास जी औषधियों (लौंग, इलायची, जावन्त्री, जायफल, आदि) का काढ़ा बनाकर श्रीजी को देते हैं। मानिक भाई श्रीजी के लिए सुपारी आदि लेकर आते हैं।

कुरसी गिरद घेर के, अम्बो और गौरीं

और मानवंती मान सों, और गोदावरी।।३०।।

श्रीजी की कुर्सी को चारों ओर से घेरकर अम्बो, गौरी, मानवन्ती, और गोदावरी, अपने प्रेम के मान से श्री प्राणनाथ जी की सेवा लिए उपस्थित रहती हैं।

दुरगी ललिता आइयो, सुआ खिमाई सांम।

लच्छी और मन गमता, मातेन जहूर इस ठाम।।३१।।

दुर्गी बाई, ललिता, सुआ बाई, खिमाई, साम बाई, लच्छो बाई, मन गमता, मातेन बाई, और जहूर बाई इस समय सेवा के लिए उपस्थित हो जाती हैं।

और बाजू सखियां खड़ी, कुरसी को घेर के।

संकर मथुरा गावत, गंगादास बिहारी झीलें।।३२।।

धाम धनी की कुर्सी को घेरकर बगल में और भी कई सखियाँ खड़ी हो जाती हैं। इस समय शँकर दास एवं मथुरा वाणी गायन करते हैं, तथा गँगा दास जी और बिहारी जी उसे दोहराते हैं।

कासी हाथ पकड़त, बैठत कुरसी बखत।

ओका कलंगी हाजिर करे, जब बैठे श्री राज तखत।।३३।।

जब श्रीजी कुर्सी पर बैठते हैं, उस समय काशी श्रीजी का हाथ पकड़ते हैं, और जब श्री प्राणनाथ जी तख्त पर विराजमान होते हैं, उस समय ओका भाई उन्हें कलँगी भेंट करते हैं।

इत बिहार कई भांत के, आवे नहीं जुबान।

सैयों को सुख देत हैं, कराए अपनी पहिचान।।३४।।

इस प्रकार यहाँ कई तरह की प्रेममयी लीलायें होती हैं, जिसका वर्णन इस जिह्वा से नहीं हो सकता। धाम धनी अपनी पहचान देकर सुन्दरसाथ को अनेक प्रकार से सुख देते हैं।

बल्लभ छत्र पकड़ के, फेरत सिर ऊपर।

हाथ पकड़ उठावत, दास लाल इन पर।।३५।।

वल्लभ भाई श्रीजी के शिर के ऊपर छत्र पकड़कर उसे घुमाते रहते हैं। श्री लालदास जी हाथ पकड़कर धाम धनी को तख्त से उठाते हैं।

इन तखत के गोफने, बांधत मानक इस ठाम।

दोए लाल बाई बांधत, एक बांधत घनस्याम।।३६।।

श्रीजी के तख्त के एक पाये में फुँदने बाँधने की सेवा मानिक भाई करते हैं। दो पायों में लालबाई बाँधती हैं तथा एक में घनश्याम भाई बाँधते हैं।

भावार्थ– चादर के कोनों को पलंग के कोनों से बाँधने पर बनी आकृति गोफने कहलाते हैं।

मानक सामिल रहत हैं, फूलबाई सुदामापुर से।

सो फूलबाई रहत है, सरीक सब सेवा में।।३७।।

फूल बाई सुदामापुर से आई हैं। उनके साथ मानिक जी की सम्मिलित सेवा रहती है। फूल बाई श्रीजी की हर प्रकार की सेवा में भाग लेती हैं।

तखत साज सोने रूपे का, राखत हैं बुधसेन।

सब सेवा में ठाढ़ा रहे, आवे जाए लेन देन।।३८।।

श्री राज का तख्त सोने–चाँदी की सामग्री से सजा हुआ है। इसकी देख–रेख बुद्धसेन जी करते हैं। वे हर प्रकार की सेवा में उपस्थित रहते हैं, और आवश्यक सामग्री लाने तथा ले जाने के लिए आते–जाते रहते हैं।

सेवा लिखन हार की, स्याही देत बनाए।

कूजा भरके पुकारहीं, कोई लेवे जो दिल चाह।।३९।।

वाणी या अन्य ग्रन्थ आदि लिखने के लिए स्याही मँगाकर देने की सेवा बुद्धसेन जी की होती हैं। वे एक बर्तन में स्याही भरकर यह पुकार लगाते रहते हैं कि जिसकी भी इच्छा हो, वह मुझसे आकर स्याही ले जाए।

लटके मटके राज चलके, आये बिराजे तखत।

केसव संकर ले खड़े, मोरछल इन वखत।।४०।।

प्रेम और उमंग की चाल से श्रीजी चलकर तख्त पर विराजमान होते हैं। इस समय केशव दास जी और शँकर जी दोनों बगल मोरछल लेकर खड़े हो जाते हैं।

भावार्थ– अष्ट प्रहर की लीला में लटके–मटके चलने का प्रयोग कई बार हुआ है। इसका आशय ऐसी चाल से है, जिससे प्रेम की माधुर्यता और आनन्द का उल्लास प्रकट हो।

योद्धा की चाल में अकड़पन दिखायी देता है। विरक्त की चाल में शरीर के प्रति लापरवाही का भाव दिखता है, तो एक नव वधू की चाल में लज्जा तथा शरीर को सँभाल कर चलने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। इसी प्रकार वृद्ध एवं बालक की चाल में उदासीनता एवं चपलता के दर्शन

होते हैं।

श्रीजी की चाल इन सबसे अलग ब्राह्मी अवस्था की वह त्रिगुणातीत चाल है, जिसमें ऐसा लगता है कि उनके अंग-अंग से प्रेम, आनन्द, और मुस्कुराहट का झरना बह रहा है।

पीछला बाकी दिन, रह्या घड़ी चार।
धाम वतन चलन की, मोमिन करें विचार।।४१।।

जब दिन व्यतीत होने में चार घड़ी शेष रहते हैं, अर्थात् साढ़े ४ बजे का समय होता है, तब सुन्दरसाथ चितवनि के द्वारा परमधाम चलने के बारे में विचार करते हैं, क्योंकि इसी समय परमधाम से इस खेल में आए थे।

दोऊ बाजू भरके, आए के बैठा साथ।

अरस अजीम पहुंचावने, हकें पकड़ें हाथ।।४२।।

सब सुन्दरसाथ श्रीजी के सामने दोनों ओर (दाँए-बाँए) आकर बैठ जाते हैं। सुन्दरसाथ की सुरता को परमधाम पहुँचाने के लिए स्वयं श्री राज जी ने उन्हें चितवनि के मार्ग पर चला दिया है।

भावार्थ- "हाथ पकड़ना" एक मुहाविरा है, जिसका तात्पर्य है , किसी का उत्तरदायित्व वहन करना। सुन्दरसाथ की आत्म-जाग्रति के लिए धाम धनी (श्रीजी) उनकी सुरता को युगल स्वरूप में लगाने जा रहे हैं। इसी सन्दर्भ में यहाँ हाथ पकड़ने की बात कही गयी है।

श्री महाराजा आवत, सब सेवा में सामिल।

अत सनेह सों सेवा करें, पाक दिल निरमल।।४३।।

इस समय महाराजा छत्रसाल जी पधारते हैं और हर प्रकार की सेवा में सम्मिलित होते हैं। वे पवित्र हृदय से बहुत ही प्रेमपूर्वक अपने प्रियतम अक्षरातीत की सेवा करते हैं।

जो सेवा सकुण्डल करी, अपने तन मन धन।

अपना तन धन सोंप्या, तो कह्या अमीरूल मोमिन।।४४।।

महाराजा छत्रसाल जी के अन्दर साकुण्डल की आत्मा है। उन्होंने सेवा में अपना तन, मन, धन श्रीजी और सुन्दरसाथ के प्रति न्यौछावर कर दिया है। इसलिए उन्हें ब्रह्ममुनियों में सर्वोपरि (अमीरूल मोमिनीन) कहा गया है।

अरस की निमाज का, आए पहुंचा बखत।

गोकुल अरज करत हैं, सामें होए तखत।।४५।।

परमधाम की चितवनि का अब समय हो जाता है। इस समय गोकुल जी श्रीजी के तख्त के सामने आकर प्रार्थना करते हैं।

हम को इन खेल से, सिताब काढ़ो श्री राज।

भए मनोरथ पूरन, रहया ना कोई काज।।४६।।

हे धाम धनी! हम सब सुन्दरसाथ को इस माया के खेल से शीघ्र-अतिशीघ्र निकाल दीजिए। हमारी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो गयी हैं तथा अब हमारा यहाँ कोई भी काम बाकी नहीं रह गया है।

श्री धाम धनी सुनत हैं, ए बानी जो मकबूल।
द्वाए जो मोमिनों की, होत है कबूल।।४७।।

अक्षरातीत श्रीजी तख्त पर बैठे हैं और सुन्दरसाथ की ओर से प्रस्तुत हृदय को प्रसन्न करने वाली इस प्रार्थना को सुनते हैं। सुन्दरसाथ के द्वारा की गयी यह प्रेम भरी पुकार श्रीजी स्वीकार कर लेते हैं।

अरज करी एक भांत साथ नें, कई भांत धनी दिए सुख।
खेल समेत बैठाए के धाम में, दोऊ ठौर धन धन किए सनमुख।।४८।।

सुन्दरसाथ ने एक प्रकार से प्रार्थना की, तो धाम धनी ने अनेक प्रकार से सुख दिया। उन्होंने इस मायावी जगत में रहते हुए ही परमधाम के सुखों का अनुभव करा दिया। इस प्रकार हमारे साथ रहकर, उन्होंने हमें यहाँ भी धन्य-धन्य कर दिया और परमधाम में भी।

खास ढाल तलवार जो, दई पहिले मुरलीधर।

कोई दिन भिखारी दास, कोई दिन गिरधर रहे पकर।।४९।।

चितवनि के समय विशेष रूप से ढाल तलवार लेकर पहले मुरलीधर जी खड़े रहते थे, उसके पश्चात् कुछ दिनों तक बिहारी दास जी ने यह सेवा की, तथा कुछ दिनों तक गिरधर जी यह सेवा निभाते रहे।

फेर दई लालदास को, सन्तदास खड़ा रहे ले।

कबहूं दूजा भिखारी दास, पीछे बुध सेन करे।।५०।।

पुनः यह सेवा श्री लालदास जी को दी गई, तत्पश्चात् सन्तदास जी ढाल-तलवार के साथ खड़े रहते हैं। कभी दूसरे बिहारी दास जी ने इस सेवा का निर्वाह किया, बाद में बुद्धसेन जी यह सेवा करते रहे।

सूरत सिंह राखत हैं, तरकस तीर कमान।

बरछी घनस्याम राखत हैं, करे खिजमत रेहेमान।।५१।।

सूरत सिंह अपने साथ धनुष–बाण तथा तरकश रखा करते हैं। घनश्याम जी बरछी रखते हैं। इस प्रकार सुन्दरसाथ अपने धाम धनी की सेवा करते हैं।

भावार्थ– उपरोक्त तीनों चौपाइयों को पढ़ने से मन में यह संशय पैदा होता है कि परमधाम के ध्यान के समय इतने हथियार लेकर खड़े रहने की क्या आवश्यकता है? जहाँ ५००० सुन्दरसाथ रहते हों, श्रीजी का वरद् हस्त और श्री छत्रसाल जी की शक्तिशाली सेना हो, वहाँ किसी चोर–डाकू के भय की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

इसका समाधान ५१वीं चौपाई के चौथे चरण से होता है कि सुन्दरसाथ अपने धाम धनी की सेवा के उद्देश्य से

इन हथियारों को रखते हैं। जब श्रीजी तख्त पर विराजमान हैं, उस समय परमधाम का भाव लेकर उन्हें वही श्रृंगार कराया गया है, जो प्रायः इस संसार में राजा–महाराजा धारण करते हैं। इसी भाव में भावित होकर सुन्दरसाथ भी श्रीजी की सेवा में हथियार लेकर खड़े रहते हैं, अन्यथा चितवनि के समय तो शरीर और संसार को भुला देना होता है।

श्री बाई जी पठे देत हैं, हाथा मकरन्द के।
श्री राज के वास्ते भूषन, ल्यावत है नित ये।।५२।।

श्री बाई जी मकरन्द जी के हाथ से श्रीजी के लिए आभूषण भिजवा देती हैं। प्रतिदिन आभूषण लाने की सेवा मकरन्द भाई करते हैं।

रकेबी रूपे की, भर ल्याए भूखन।

महाराजा पहिनावत, लिए पकड़े हाथ मोमिन।।५३।।

चाँदी के थाल में श्रीजी के लिए आभूषण भरकर लाए जाते हैं। सुन्दरसाथ उस चाँदी की थाल को अपने हाथ में पकड़े रहते हैं और महाराजा छत्रसाल जी उसमें से आभूषणों को निकालकर श्रीजी को पहनाते हैं।

माला दो मोतिन की, और उतरी कंचन।

दोए सांकली सोने की, झलकत हीरा रोसन।।५४।।

वे श्रीजी के गले में दो मोतियों की माला तथा एक सोने का हार पहनाते हैं। सोने की दो जँजीरें भी पहनाते हैं, जिनमें जड़े हुए हीरे झलकार कर रहे हैं।

दुग दुगी दो जड़ाव की, करे मानक जोत अपार।

महाराजा पहिनावत, ताकों क्यों कर कहूं सुमार।।५५।।

महाराजा छत्रसाल जी श्रीजी के गले में नगों से जड़े हुए दो दुगदुगी (लॉकेट) पहनाते हैं, जिनमें जड़े हुए माणिक से इतनी ज्योति निकल रही है कि उसकी शोभा का वर्णन नहीं हो सकता।

चन्द्रहार झलकत, चंपकली सिर नूर।

कण्ठ पर कण्ठी सोहे, सो क्यों कर कहूं जहूर।।५६।।

श्रीजी के गले में चन्द्रहार झलकार कर रहा है और उसके ऊपर चम्पकली का हार सुशोभित हो रहा है। श्रीजी के गले में सोने की कण्ठी (माला) सुशोभित हो रही है, जिसकी शोभा का मैं कैसे वर्णन करूँ?

मोतिन की कण्ठी बनी, तले मोती ऊपर मानक।

चौखूना सोने मढ़ो, सोभित है कण्ठ हक।।५७।।

मोतियों की एक माला है, जिसमें नीचे मोती और ऊपर माणिक जड़े हुए हैं। चौकोर सोने में नंगों से जड़ा हुआ एक आभूषण श्रीजी के कण्ठ में सुशोभित है।

गिरद चन्द्रिका कमल ज्यों, लटकत पाग ऊपर।

सिरे मोती लटकत, धरे हीरा जोत सिर पर।।५८।।

श्रीजी की पाग के ऊपर चारों ओर से लटकी हुयी चन्द्रिका कमल के समान सुशोभित होती है। पाग के किनारे मोती लटक रहे हैं तथा ऊपर हीरों की ज्योति जगमगा रही है।

महाराजा पहिनावत, पोहोंची बांधी इन ठाम।
हीरा मानक झलकत, ए महाराजा का काम।।५९।।

महाराजा छत्रसाल जी श्रीजी के हाथों में पोहोंची बाँधते हैं, जिसमें हीरा और माणिक झलकार कर रहे हैं। महाराजा छत्रसाल जी की यह विशेष सेवा है।

और अंगुरियों मुंदरी, आगे सब धरी।
माफक बैठत अंगुरी, सो अंगीकार करी।।६०।।

श्रीजी की सभी अँगुलियों में महाराजा छत्रसाल जी मुँदरियाँ पहनाते हैं। जिस अँगुली में जो मुँदरी अनुकूल बैठती है, उसमें उसको पहना देते हैं। श्रीजी छत्रसाल जी की इस सेवा को स्वीकार करते हैं।

महामत कहे ऐ मोमिनों, ए चौथे पहर की विरत।

अब कहूं पोहोर पांचमां, सुनियो तन मन हित।।६१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! आपने चौथे प्रहर की लीला का श्रवण किया। अब मैं पाँचवे प्रहर में होने वाली लीला का वर्णन करता हूँ। उसे अपने तन, मन में प्रेम भरकर सुनिये।

प्रकरण ।।६७।। चौपाई ।।४०२८।।

पांचमा पहर

अब कहूं पहर पांचमा, आया जब बखत।

हुआ समें बैठन का, ऊपर इन तखत।।१।।

अब मैं पाँचवे प्रहर, अर्थात् सन्ध्याकाल के पश्चात् ६ से ९ बजे के समय, में होने वाली लीला का वर्णन करता हूँ। इस समय तख्त के ऊपर श्रीजी के विराजमान होने का समय होता है।

लच्छो अरज करत हैं, राज पधारो कौन घाट।

श्री राज उत्तर देत हैं, आज पधारें पाट।।२।।

लच्छो बाई धाम धनी से प्रार्थना करती है कि आप आज कौन से घाट पधारेंगे अर्थात् किसका वर्णन करेंगे? धाम धनी उत्तर देते हैं कि आज पाट घाट पधारेंगे।

तखत बिछौने होत हैं, बिछावत बिहारी दास।

तलाई ओछाड़ सूजनी, तकिए धरे मखमली खास।।३।।

बिहारी दास जी तख्त के ऊपर बिछौने बिछाते हैं। वे तख्त के ऊपर रूई का गद्दा बिछाकर उस पर पतली चादर बिछाते हैं। तत्पश्चात् ओढ़ने के लिए एक मोटी चादर तथा सिरहाने की तरफ विशेष प्रकार के कोमल मखमली तकिये रखते हैं।

इत जोड़े तखत के, गादी बिछौने होए।

चारे गमा ते तान के, बिहारी दास धरें सोए।।४।।

श्री राज जी के तख्त के बगल में दूसरे तख्त पर श्री बाई जी के लिए गादी बिछाई जाती है, जिसके चारों कोनों को तानकर बिहारी दास जी अच्छी तरह से व्यवस्थित करते हैं।

दीपक सेवा में खड़ी, मानक करमेती।

श्री राज को रिझावत, सब विध सुख देती।।५।।

श्रीजी की सेवा में दीपक, मानिक बाई, और करमेती खड़ी हैं। ये धाम धनी को रिझाती हैं और अपनी आत्मा को हर प्रकार से सुख देती हैं।

सुखपाल में बैठ के, श्री बाई जी आवत।

अरज आरोगन की, मीठी बातें करत।।६।।

सुखपाल में बैठकर श्री बाई जी कोठा मन्दिर से श्रीजी के पास आती हैं और उनसे भोजन करने के लिए प्रेम भरे शब्दों में मीठी बातें करती हैं।

इत थाल आरोगन की, ल्याई मथुरी और हिंमत।

साक तरकारी कटोरी, लेके आगे धरत।।७।।

मथुरी और हिम्मत बाई श्रीजी को भोजन कराने के लिए थाल लेकर आती हैं। उसमें शाक –सब्जियों की कटोरियाँ लेकर आगे रखती हैं।

श्री महाराजा बाई जी, बैठत अरूगावने थाल।

हाथ पखालत प्रेम सों, मानक सेवा करें खुसाल।।८।।

महाराजा छत्रशाल जी और श्री बाई जी श्रीजी को भोजन कराने के लिए बैठते हैं। मानिक भाई प्रेमपूर्वक श्रीजी के हाथ धुलाते हैं। वे बहुत ही प्रसन्न होकर धाम धनी की सेवा करते हैं।

हाथ पोंछने को दिया, रूमाल श्री महाराज।

एक मुंह आड़े अपने बांध के, अरूगावत श्री राज।।९।।

महाराजा छत्रसाल जी श्रीजी को हाथ पोंछने के लिए रूमाल देते हैं। एक रूमाल से अपने मुख को बाँधकर, वे धाम धनी को भोजन कराते हैं।

आरोगत अत हेत सों, सो कहां लो कहों मैं ए।

राज भोग सामग्री लवाजमें, सब साक तरकारी के।।१०।।

श्रीजी बहुत ही प्रेमपूर्वक भोजन करते हैं। उस मधुर शोभा का मैं कहाँ तक वर्णन करूँ। श्रीजी के भोजन की सामग्रियों में हर प्रकार की शाक-सब्जियाँ परोसी जाती हैं।

इस रूमाल आड़े डार के, सेवे बिहारीदास।

सखियां सब ठाढ़ी रहे, मन में सेवन की आस।।११।।

यहाँ बिहारी दास जी भी अपने मुख के ऊपर आड़ा रूमाल बाँधकर श्रीजी की सेवा करते हैं और सब महिला सुन्दरसाथ अपने मन में धाम धनी की सेवा की आशा लिए वहीं खड़ी रहती हैं।

थाल ले आगे धरी, बैठे पकड़ महाराज।

मीठी रसना सों बातें करें, रीझ रीझ के राज।।१२।।

महाराजा छत्रसाल जी श्रीजी के आगे भोजन का थाल रखते हैं और उन्हें भोजन कराने के लिए बहुत ही निकट बैठे रहते हैं। उनकी सेवा पर अत्याधिक प्रसन्न होकर श्रीजी बहुत ही मधुर भाषा में उनसे बातें करते हैं।

आरोगत अत हेत सों बातें करें बनाए।

धाम धनी गाए रिझावहीं, कवल देत हैं ताए।।१३।।

श्रीजी बहुत प्रेमपूर्वक भोजन करते हैं। वे साथ ही साथ मधुर बातें भी करते हैं। जो सुन्दरसाथ श्री प्राणनाथ जी को गाकर रिझा रहे होते हैं, उन्हें धाम धनी अपने भोजन में से एक कौर (ग्रास) के रूप में प्रसाद देते हैं।

बाई जी बातां करत है, आरोगने के बखत।

श्री राज रीझ के कहत हैं, ऊपर बैठ इन तखत।।१४।।

जब श्री राज जी भोजन कर रहे होते हैं, उस समय श्री बाई जी उनसे प्रेम भरी बातें करती हैं। श्रीजी बहुत प्रसन्न होकर श्री बाई जी से कहते हैं कि मेरे बगल के तख्त पर बैठो, लेकिन श्री बाई जी मना कर देती हैं।

जल छबील दास ल्याइया, आरोगने को हक।

कंचन कटोरे सुन्दर, जल बाए देत माफक।।१५।।

छबील दास जी श्रीजी को जल पिलाने के लिए ले आते हैं। वे सोने के सुन्दर कटोरे में जलवायु के अनुकूल जल देते हैं, अर्थात् शीतकाल में गुनगुना जल और ग्रीष्मकल में ठण्डा जल।

कोई वस्त अरूगावने, मसाला ल्यावें घर से।

मेवा मिठाई पकवान, राज हेत कर आरोगते।।१६।।

छबील दास जी श्रीजी को कोई विशेष वस्तु खिलाने हेतु अपने घर से मसाला आदि लेकर आते हैं। ये मेवा-मिठाइयाँ तथा पकवान भी लाते हैं, जिन्हें श्री प्राणनाथ जी प्रेमपूर्वक ग्रहण करते हैं।

श्री राज रहे आरोग के, सैयां उठाई थाल।

चुल्लू करावें चोपसों, सकुण्डल दिल खुसाल।।१७।।

धाम धनी के भोजन करने के पश्चात् सुन्दरसाथ थाल उठा लेते हैं। महाराजा छत्रशाल जी अपने हृदय में बहुत आनन्दित होकर श्रीजी को सावधानीपूर्वक कुल्ला कराते हैं।

कहवा आरोगने को, ले आई मानक।

भरके देवे हाथ में, ए जो गंगादास बुजरक।।१८।।

मानिक बाई श्री प्राणनाथ जी के लिए कहवा बनाकर लाती हैं। ऊँचे व्यक्तित्व वाले गँगादास जी, उसे किसी पात्र में भरकर श्रीजी को अर्पित करते हैं।

भावार्थ– "अमल" और "कहवा" एकार्थवाची हैं। दालचीनी, जावन्त्री, जायफल, लौंग, इलायची, अदरक,

तथा मिश्री के जल के साथ काढ़ा बनाकर औषधि के रूप में श्रीजी ग्रहण करते हैं। इसे आजकल की कैफीन वाली चाय या अफ्रीका में होने वाला कहवा नहीं समझना चाहिए।

फूल सुपारी बीड़ी मिनें, अरूगावे कल्याण।
ऐ सेवा श्री बाई जी की, दई सेवक अपना जान।।१९।।

कल्याण बाई पानों के बीड़े के साथ सुपारी के बहुत छोटे-छोटे टुकड़े लाती हैं। श्री बाई जी और महाराजा छत्रसाल जी अपनी-अपनी ओर से पानों का बीड़ा तैयार करते हैं।

बीड़ी वालत श्री बाई जी, महाराजा अपनी।
दे सुपारी मानक छबीला, और सेवत महारानी।।२०।।

मानिक, छबील दास, और मझली महारानी सुपारी देने की सेवा करते हैं।

हार कलंगी आवत, ऊपरा ऊपर इत के।
ले ले नाम मुजरा होत हैं, होए जुबां एक एक के।।२१।।

श्रीजी की सेवा में सुन्दरसाथ की तरफ से फूलों के हार तथा कलंगियाँ एक-एक कर क्रमशः आती हैं।

संभू ओका जसिया, ल्यावत हैं कलंगी।
श्री राज हाथों धरत हैं, सेवा अंगीकार करी।।२२।।

शम्भू, ओका, तथा जसिया फूलों की कलंगी बनाकर लाते हैं, जिन्हें धाम धनी स्वयं अपने हाथों से लेते हैं और उनकी प्रेम भरी सेवा स्वीकार करते हैं।

महाराजा कलंगी बनावत, अपने हाथों कर।

बांधत लटकनी छब की, हाथों हाथ धरें सिर पर।।२३।।

महाराजा छत्रसाल जी अपने हाथों से कलंगी बनाते हैं। वे कलंगी को कुछ झुकी हुयी शोभा वाला बनाते हैं और अपने ही हाथों से श्रीजी के सिर पर बाँध देते हैं।

मुकुन्द दास ले आवत, तुर्रा कलंगी परन।

श्री राज सिर पर धरत हैं, झलकत है किरन।।२४।।

मुकुन्द दास जी तुर्रा तथा पँखों से बनी हुई कलंगी लेकर आते हैं। धाम धनी इन्हें अपने शिर पर धारण करते हैं। कलंगी से निकलती हुई किरणें झलकार करती हैं।

महाराज के रावर से, आवत कलंगी हार।

चित माफक अपने सोभित, दे महाराजा अपने लार।।२५।।

महाराज छत्रशाल जी के महल से कलंगी तथा हार श्रीजी की सेवा में आते हैं। फिर भी महाराजा जी अपने साथ श्री राज जी के श्रृँगार के लिए अपनी मनपसन्द कलंगी आदि लेकर आते हैं।

कहा कहों इन समें की, जहां राज बिराजे तखत।

आई जी मोरछल करत हैं, सो कहयो न जाए बखत।।२६।।

जब धाम धनी तख्त पर विराजमान होते हैं और आई जी (श्री तेज कुँवरी जी की माताजी) श्रीजी को मोरछल करती हैं, उस समय की शोभा का वर्णन मैं कैसे करूँ? वह इस मुख से हो पाना सम्भव नहीं है।

महाराजा मोरछल लिए, दोऊ बाजू चंवर ढुराए।

सेख बदल लाल खान, हाथ फेरत चमर बनाए।।२७।।

महाराजा छत्रसाल जी मोरछल लिए खड़े रहते हैं तथा श्रीजी के दोनों तरफ शेख बदल और लाल खाँ हाथ घुमाते हुए अनोखे ढँग से चँवर ढुलाते हैं।

कबहूं पीठ पीछे होए के, लाल केसव करे अरज।

कुरान हदीसां वास्ते, रहे पढ़नें की गरज।।२८।।

कभी-कभी लालदास और केशवदास जी श्रीजी की पीठ के पीछे होकर प्रार्थना करते हैं कि हमें कुरआन एवं हदीस पढ़ने की इच्छा हो रही है।

चितवनी की बारी मिने, भोग दियो बखत इन।

गावत संझा को अवसर, पहर रात लो रोसन।।२९।।

चितवनि के समय वाणी गायन करने की बारी वाले सुन्दरसाथ श्रीजी को भोग अर्पित करते हैं। इस समय "हुओ संझा को अवसर" का गायन किया जाता है, जो प्रहर रात्रि तक चलता है।

मना अरज करत हैं, बस्तर सुनने की।

सो राज मोसों कहो, मैं हाजिर ना थी।।३०।।

इस समय मना बाई श्रीजी के चरणों में प्रार्थना करती हैं कि हे धाम धनी! मैं युगल स्वरूप के वस्त्रों की शोभा का वर्णन सुनना चाहती हूँ, क्योंकि सेवा में लगी होने के कारण मैं चर्चा में उपस्थित नहीं हो सकी थी। इसलिए कृपा करके मुझसे वस्त्रों की शोभा का वर्णन करने का

कष्ट करें।

साड़ी रंग सेंदुरिएँ, जामा जड़ाव कन्चुकी।

नीली लाहिको चरनियां, ए बस्तर ठकुरानी जी।।३१।।

श्रीजी वस्त्रों की शोभा का वर्णन करते हैं। श्री श्यामा जी के वस्त्र इस प्रकार हैं। उन की साड़ी का रंग सेन्दुरिया है, नगों से जड़ी हुयी कँचुकी (ब्लाउज) श्याम रंग की है, उनका पेटीकोट नीले और लाल रंग की आभा वाला है।

चीरा रंग सेंदुरिया, स्याम सुपेत जवेर तार।

पिछोड़ी रंग आसमानी, देख परवरदिगार।।३२।।

श्री राज जी की पाग का रंग सिन्दुरिया है। सोने के तारों में नूरी जवाहरातों से जड़ा हुआ जामा सफेद रंग का है।

आसमानी रंग की पिछौरी है। अनुपम शोभा वाले श्री राज जी की इस शोभा को देखो।

नीले पीले रंग को, पटका बांधे कमर।

केसरिया रंग इजार है, ल्यो मूल बागों दिलधर।।३३।।

नीले-पीले (तोते के पँख के) रंग का पटुका है, जो कमर में बँधा हुआ है। उनकी इजार केसरिया रंग की है। अपने हृदय में श्री राज जी के मूल वस्त्रों की इस अद्वितीय शोभा को बसाओ।

आज निरत नवरंगबाई को, साड़ी जड़ाव स्याम।

आंबा रस कंचुकी, पांच पटे चरनियां इस ठाम।।३४।।

आज नवरँग बाई की नृत्य की बारी है। उन्होंने नगों से जड़ी हुयी श्याम रंग की साड़ी पहन रखी है। उनकी

कँचुकी (ब्लाउज) पीले (पके हुए आम जैसे) रंग की है। उन्होंने पाँच रंगों की पट्टी वाले पेटीकोट को धारण कर रखा है।

पहिनी इजार नीली, ए बस्तर बाई निरत।
और सिनगार सब साथ को, स्यामा जी माफक देखत।।३५।।

नवरँग बाई ने नीले रंग की इजार पहन रखी है। नृत्य के समय नवरँग बाई के वस्त्रों की इस प्रकार की शोभा है। सब सुन्दरसाथ का श्रृँगार श्यामा जी जैसा ही दिखायी देता है।

ए बस्तर सब साथ को, कहते बखत दोए।
एक प्रात और संझा समें, साथ सुनत हैं सोए।।३६।।

श्रीजी वस्त्रों की इस अनुपम शोभा का वर्णन सुन्दरसाथ

से प्रातः और सायं दोनों समय किया करते हैं। सुन्दरसाथ बहुत ही निष्ठाभाव के साथ श्रवण करते हैं।

सरूप दाता ब्रह्मांड में, भए हैं दो तीन।
सो लिखे सास्त्रों मिने, जो ल्याए आकीन।।३७।।

इस ब्रह्माण्ड में स्वरूप की पहचान कराने वाले मात्र दो या तीन व्यक्ति ही हुए है, जिनका वर्णन शास्त्रों में लिखा है। इन दो-तीन ने ही उस स्वरूप पर पूर्ण विश्वास किया है।

भावार्थ- "स्वरूप दाता" का अर्थ होता है- स्वरूप की पहचान कराने वाला। तारतम ज्ञान के अभाव में सारी सृष्टि के प्राणी प्रणव के प्रतिबिम्बित रूप आदिनारायण को ही प्रणव का यथार्थ रूप मानते रहे हैं, और भक्ति तथा ध्यान द्वारा उन्हीं का साक्षात्कार करके ब्रह्म का

साक्षात्कार मानते रहे हैं। शास्त्रों में नारद आदि ऋषियों का वर्णन है, जिन्होंने दावे के साथ संसार को बताया कि नारायण का स्वरूप क्या है? आगे की चौपाई में यही सन्दर्भ वर्णित है।

सो सरूप बैकुण्ठ का, जाए कह्या मलकूत।
कहने वाले फिरस्ते, जिनका ठौर जबरूत।।३८।।

इस संसार के मनीषियों ने जिस स्वरूप का साक्षात्कार किया है, वह स्वरूप वैकुण्ठ का रहने वाला है। कतेब में इसे ही मलकूत कहा गया है। इसके परे का स्वरूप अक्षर धाम में विराजमान अक्षर ब्रह्म हैं, जिनकी शोभा का वर्णन अक्षर ब्रह्म की सुरताओं ने किया है।

भावार्थ– सारी सृष्टि के मनीषि आदिनारायण और निराकार तक ही जाकर रुक गए, किन्तु अक्षर ब्रह्म की

सुरताओं ने हद (वैकुण्ठ और निराकार) से परे बेहद और अक्षर धाम का वर्णन किया है। इस सन्दर्भ में तारतम वाणी के ये कथन देखने योग्य हैं–

ग्यानी अनेक कथें वहु ग्यान, ध्यानी कई विध धरें ध्यान।
पर ए सबही सुन्य के दरम्यान, छूट्या न काहूं संसे उनमान।।
उपासनी निरगुन या निरंजन, किन उलंघ्यों न जाए विष्णु को कारन।
या सास्त्र या साधू जन, द्वैत सबे समानी सुन।।

प्रकाश हिन्दुस्तानी ३४/९,१०

ब्रह्मादिक नारद कई देव, कई सुर नर करें एक सेब।
ब्रह्मांड विते केखे लेऊं नाम, सब कोई सेवे श्री भगवान।।

प्रकाश हिन्दुस्तानी २९/२६

मोह सागर मथ के, काढ़े सो पांच रतन।

कलस हिन्दुस्तानी १८/६

इन ऊपर पख है एक, सुनियो ताको कहूं विवेक।

पुरूष प्रकृति उलंघ के गए, जाए अखंड सुख माहें रहे।।

एक भगवान जी बैकुण्ठ को नाथ, महादेवजी भी इनके साथ।

सुकजी और सनकादिक दोए, कबीर भी इत पोहोंच्या सोए।।

प्रकास हिन्दुस्तानी ३४/११,१४

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि अक्षर की वासनाओं ने ही धनी के जोश जिबरील के सहयोग से अक्षर ब्रह्म का कुछ ज्ञान दिया है। वस्तुतः जिसे अक्षर ब्रह्म माना जाता रहा है, वे अक्षर की विभूति स्वरूप – सत्स्वरूप, सबलिक, केवल, और अव्याकृत हैं। अक्षरातीत का ज्ञान तो अक्षर ब्रह्म के अतिरिक्त इस सृष्टि में और किसी को भी नहीं हो सका।

हक तरफ जाने नूर अक्षर, और दूजा न जाने कोए।

पर बातून सुध तिनको नहीं, एक इलम देखावे सोए।।

श्रृंगार २८/४६

ए सूरत अरस अजीम की, जाय कह्या अक्षरातीत।
कहने वाले धाम धनी, सुने मोमिन कर परतीत।।३९।।

यहाँ जिसकी शोभा का वर्णन किया जा रहा है, वे परमधाम में विराजमान अक्षरातीत कहे जाते हैं। वे अक्षरातीत स्वयं ही श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में अपनी शोभा का वर्णन कर रहे हैं और ब्रह्ममुनि विश्वासपूर्वक उसे सुनते हैं।

नेष्टाबन्ध सुनत हैं, जाए सांच होवे कान।
पांव हाथ अंग इन्द्रियां, होए हक की ताए पहिचान।।४०।।

परब्रह्म की चर्चा को निष्ठापूर्वक वही सुन सकता है, जिनके हृदय के कानों में सत्य को सुनने की प्रवृत्ति होती

है। हाथ, पैर, आदि इन्द्रियों तथा अन्तःकरण में पवित्रता होने पर ही श्री राज जी की पहचान होती है।

दूसरा कोई इत आए के, कबूं न बैठ सकत।
काहू खुसामद गरज आवही, पर मिने न पेठ सकत।।४१।।

माया का कोई जीव ब्रह्ममुनियों के समूह में आकर कभी बैठ ही नहीं सकता। किसी के द्वारा प्रार्थना किए जाने पर या किसी विवशता में आ जाने पर भी वह धनी की चर्चा में नहीं बैठ सकता (भले ही इधर–उधर घूमता रहे)।

ए तो बात अंकूर की, होए न बिना सनमंध।
जो दुनियां को देखहीं, ताए कह्या बड़ा अंध।।४२।।

धनी की वाणी सुनना और उनसे प्रेम करना तो मूल सम्बन्ध की बात है। बिना मूल सम्बन्ध के कोई भी

निष्ठाबद्ध होकर तारतम वाणी की चर्चा नहीं सुन सकता। जो लोग संसार में ही डूबे रहते हैं, उनको विशेष रूप से अँधा (ज्ञान दृष्टि से रहित) कहा जाता है।

जब कलाम रब्बानी खुले, तब हुआ वखत कयामत।
तब लगा रोजगार को, है बड़ा कम हिंमत।।४३।।

जब कुरआन की हकीकत और मारिफत के भेद खुल जाएँ, तब समझ लेना चाहिए कि कियामत का समय आ गया है। यह कियामत का वही समय चल रहा है, फिर भी जीव सृष्टि अपने सांसारिक कार्यों में फँसी हुई है। उनके अन्दर माया के बन्धनों से छूटने के लिए बहुत कम साहस है।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में "हिम्मत" शब्द स्त्रीलिंग है। उसके अनुसार इस चरण में "बड़ा" के

स्थान पर "बड़ी" शब्द का प्रयोग होना चाहिए अथवा "कम" शब्द की जगह "काम" शब्द का प्रयोग होना चाहिए, तभी यथार्थ रूप से आशय स्पष्ट हो सकेगा।

आया समें आरती का, साथ आवत चारों तरफ।
इन समें सोभा की, कह्यो न जाए हरफ।।४४।।

अब श्रीजी की आरती का समय हो जाता है। चारों ओर से सुन्दरसाथ श्रीजी की आरती के दर्शन के लिए आते हैं। ऐसे समय में बँगला जी दरबार की जो शोभा होती है, उसके वर्णन में एक शब्द भी नहीं कहा जा सकता।

श्री बाई जी आवत इन समें, होत बिछौने जोड़ तखत।
गादी तकिए बिहारी दास, बिछावत हैं इत।।४५।।

इस समय श्री बाई जी श्रीजी के पास आती हैं। श्रीजी

के तख्त के पास में उनके तख्त पर बिछौने बिछाये जाते हैं। बिहारी दास जी विशेष रूप से उस पर गादी बिछाते हैं तथा तकिये रखते हैं।

आरती होत आनन्द सों, करत अति घने प्यार।
सोभा होत संसार में, करत सबे मनुहार।।४६।।

श्रीजी की आनन्दपूर्वक आरती उतारी जाती है। इसके माध्यम से सुन्दरसाथ धनी के प्रति अपने बहुत अधिक गहन प्रेम को प्रकट करते हैं। श्री प्राणनाथ जी की महिमा सारे संसार में फैल रही है और सभी लोग उन्हें अक्षरातीत मानकर उनकी स्तुति करते हैं।

झांझ ताल थैली मिने, ए दगड़ा राखत।
आरती समें ल्यावत, भाखरिया नाचत।।४७।।

दगड़ा झाँझ और ताल को थैली के अन्दर रखते हैं और उसे आरती के समय ले आते हैं। उमंग में भरकर भाखरिया नाचने लगते हैं।

दोऊ बाजू चंवर ढोरत, लालबाई पहिले।
गोबिन्द दास करता था, कोई दिन सिवराम के।।४८।।

श्रीजी के दोनों ओर चँवर ढुलाये जाते हैं। इसके लिए लालबाई पहले आकर खड़ी हो जाती हैं। पहले इस सेवा को गोविन्द दास जी किया करते थे। कुछ दिनों तक शिवराम जी ने भी यह सेवा की।

हरनन्द कोई दिन, सेख बदल लालखान।
आखर आई इन पे, जिनका था ईमान।।४९।।

कुछ दिनों तक हरिनन्द ने भी चँवर ढुलाने की सेवा

की। शेख बदल और लाल खान ने भी यह सेवा की। अन्त में चँवर ढुलाने की यह सेवा उन सुन्दरसाथ के पास आ गई, जिनके मन में इस सेवा के लिए विश्वास था।

गावे गवावें साथ को, ए सेवा मुकुन्द दास।
आरती में आए खड़े, होत नित बिलास।।५०।।

मुकुन्द दास जी की यह विशेष सेवा है कि वे स्वयं आरती गाते हैं और सुन्दरसाथ से गवाते हैं। वे निश्चित समय पर आरती में आकर खड़े हो जाते हैं। इस प्रकार प्रतिदिन ही आनन्द की लीला होती है।

बिन्दा कन्नड़ गावहीं, और गंगा राम।
अगरदास आनन्द सों, बद्री दास इन काम।।५१।।

बिन्दा, कन्नड़, और गँगाराम अत्याधिक भावपूर्वक आरती गाते हैं। अगर दास तथा बद्री दास जी आनन्दपूर्वक यह सेवा करते हैं।

कबहूं उत्तमदास आवहीं, बजावत हैं मृदंग।
झांझ ताल बजावत, केतिक सैयां इन संग।।५२।।

कभी उत्तम दास जी आ जाते हैं और वे मृदँग बजाते हैं। उनके साथ कुछ सुन्दरसाथ झाँझ और ताल भी बजाते हैं।

गावने में आगे खड़ा, परमानन्द प्रवीन।
भाव दिखावत भेद सों, आया कूवत माफक आकीन।।५३।।

गायन करने में अति निपुण परमानन्द जी आरती गाने में आगे खड़े रहते हैं। वे गायन के द्वारा रहस्यमयी तरीके से

अपने भावों को व्यक्त करते हैं। धनी के प्रति विश्वास के अनुकूल ही उनके अन्दर जोश का बल आता है।

साथ सब खड़े रहें, भरकके बाजू दोए।
झांझ मृदंग बजावत, आनन्द अजीम होए।।५४।।

श्रीजी के सामने दोनों ओर (दाएँ–बाएँ) सब सुन्दरसाथ आरती में खड़े रहते हैं। जब सुन्दरसाथ झाँझ और मृदँग बजाते हैं, तब अपार आनन्द होता है।

सुन धुन इन समें की, कांपत कुली दज्जाल।
ए नेहेचे मोकों मारेगा, ऐही मेरा है काल।।५५।।

आरती की इस मधुर धुन को सुनकर अज्ञान रूपी कलियुग (दज्जाल) काँपने लगता है। वह सोचता है कि श्रीजी तो मेरे काल हैं, वे मुझे निश्चित रूप से मार

डालेंगे।

भावार्थ– पहचान के साथ शुद्ध भावों से की गई आरती हृदय में श्रद्धा पैदा करती है। श्रद्धा ही आध्यात्मिक उन्नति का मूल है। जिसके हृदय में श्रद्धा, समर्पण, और प्रेम की सम्पदा बस जाती है, उसके हृदय में प्रियतम की छवि भी बस जाती है। इसलिए इन गुणों को इस चौपाई में आलंकारिक रूप से अज्ञान रूपी कलियुग या दज्जाल का काल कहा गया है।

मेघा गादी बिछावत, श्री बाई जी के कदम तले।
जब आरती करत हैं, श्री बाई जी खड़े ऊपर इनके।।५६।।

मेघा बाई श्री बाई जी के कदमों में गादी बिछाती हैं। जब श्री बाई जी आरती करती हैं, तो इस गादी के ऊपर खड़े होकर ही आरती करती हैं।

आरती के बखत में, चादर बिछावत हीरामन।

चावल बधावत श्री बाई जी, सब आरती वाली सैयन।।५७।।

आरती के समय चादर बिछाने की सेवा हीरामन जी की है। श्री बाई जी तथा आरती करने वाली अन्य सखियाँ श्रीजी के चरणों में चावल अर्पित करती हैं।

श्री बाई जी करें तिलक, चौड़त हैं चावल।

राघव रूमाल धरत है, करे सेवा अपने बल।।५८।।

श्री बाई जी धाम धनी के माथे पर तिलक लगाती हैं तथा चावल अर्पित करती हैं। राघव जी श्रीजी के सिर पर रुमाल रखते हैं। यह सेवा वे अपने आत्मिक बल से करते हैं।

आरती करें आनन्द सों, श्री बाई जी इत आई।

ए सेवा की जोगबाई, साज रूकमनी ल्याई।।५९।।

यहाँ आकर श्री बाई जी सबसे पहले आनन्दपूर्वक श्रीजी की आरती उतारती हैं। रूक्मणी बाई आरती की सेवा की सारी सामग्री लाया करती हैं।

रूपे पच घड़ी आरती, गिरद दीपक जोत बतीस।

करे फिरते प्रकास चहुंदिस, सेवत मन परतीत।।६०।।

आरती चाँदी की बनी हुयी है तथा यह ५ खण्डों में सुशोभित हो रही है। आरती के अन्दर चारों ओर ३२ दीपकों की ज्योति प्रकाशित हो रही है। आरती करते समय उसका प्रकाश सभी दिशाओं में फैल रहा है। अपने मन में अटूट श्रद्धा के साथ आरती की यह सेवा की जाती है।

भावार्थ– पाँच खण्डों का तात्पर्य परमधाम के पाँच स्वरूपों (श्री राज जी, श्यामा जी, सखियाँ, अक्षर ब्रह्म, तथा महालक्ष्मी) से है। इसी प्रकार परमधाम के ३२ हाँसों का भाव लेकर आरती में ३२ दीपकों की ज्योति जलायी जाती है।

और आवत करने आरी, लच्छो इन समें।

दीपक जोत प्रकास के, कोई दिन हुई सेवा इनसे।।६१।।

आरती करने के समय लच्छो बाई आती हैं और दीपक में ज्योति प्रज्वलित करने की सेवा इन्होंने कुछ दिनों तक की।

और अंबो करे आरती, सामिल दूजी तरफ।

एक बाजू महतेन खड़ी, और भानी एक तरफ।।६२।।

अम्बो बाई दूसरी तरफ सुन्दरसाथ में सम्मिलित होकर आरती करती हैं। एक ओर महतेन बाई खड़ी होती हैं और एक ओर भानी बाई।

और कई कुमारिका, लिए दीपक थाली हाथ।
झलकत जोत चहुं दिस, करे बाई जी ऊपर साथ।।६३।।

कई कुँवारी कन्याएँ अपने हाथ में दीपक की थाली लिए हुए आरती करने के लिये खड़ी रहती हैं। दीपकों की ज्योति चारों दिशाओं में झलकार कर रही है। सुन्दरसाथ श्री बाई जी के पीछे खड़े होकर श्रीजी की आरती उतारते हैं।

कंचन थाल चहुं मुख दिवला, दीपक जोत प्रकासी।
करत आरती जियावर रानी, आनन्द अंग उलासी।।६४।।

सोने के थाल में आरती सजाई गई है, जिसके दीपकों की ज्योति चारों दिशाओं में प्रकाश कर रही है। प्रियतम अक्षरातीत की अर्द्धांगिनी श्री बाई जी अपने हृदय में आनन्द का उल्लास लेकर आरती कर रही हैं।

जुगल सरूप सुन्दर सुखदायक, स्याम धाम धनी सोहे।
मंगल रसिक बदन की सोभा, निरखन्ता मन मोहे।।६५।।

श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान युगल स्वरूप अति सुन्दर हैं और अखण्ड सुख के देने वाले हैं। धाम के धनी श्री राज जी श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप में शोभायमान हो रहे हैं। ऐसे श्रीजी के प्रेममयी और मँगलमयी मुख की शोभा को देखकर मन मुग्ध हो जाता है।

सखियां निरत करें और गावें, आनंद अखंड अपार।

ताल मृदंग झांझ जन्त्र बाजे, सखियां बोले जै जै कार।।६६।।

सुन्दरसाथ धनी के प्रेम में नृत्य करते हैं और उनकी महिमा का गायन करते हैं। प्रियतम अक्षरातीत का आनन्द अखण्ड और अनन्त है। ताल, मृदँग, झाँझ, और तार से बने हुए तँबूरा आदि बाजे बज रहे हैं तथा सुन्दरसाथ श्री प्राणनाथ जी की जय-जयकार कर रहे हैं।

बधावें मुक्ताफल सखियां, श्री जियावर स्याम सुहागी।

तन मन जीव निछावर कीन्हों, श्री इन्द्रावती चरणों लागी।।६७।।

प्रियतम अक्षरातीत श्री राज जी और उनकी अर्द्धांगिनी श्यामा जी के चरणों में सखियाँ मोतियों को अर्पित करती हैं। श्री इन्द्रावती जी की आत्मा युगल स्वरूप के चरणों

में तन, मन, जीव न्योछावर करते हुए प्रणाम करती हैं।

भावार्थ– सुन्दरसाथ बँगला जी दरबार में श्री इन्द्रावती जी के तन के अन्दर युगल स्वरूप की बैठक मानकर आरती उतार रहे हैं, किन्तु श्री इन्द्रावती जी की आत्मा भी अन्य सुन्दरसाथ की ही तरह अपने धाम हृदय में विराजमान युगल स्वरूप को प्रणाम करती हैं, तथा अपने तन, मन एवं जीव को न्योछावर करती हैं।

यद्यपि बधाई के रूप में प्रतिदिन मोतियों को समर्पित करना व्यवहारिक प्रतीत नहीं होता है, किन्तु इसका मूल भाव अपने हृदय की श्रद्धा भावना को वैसे ही प्रकट करना है, जैसे भोग में षटरस व्यञ्जनों के स्थान पर सूखी रोटी ही क्यों न रखी हो, किन्तु गायन में षटरस व्यञ्जनों का नाम लिया जाता है। वैसे मुक्ताफल का अर्थ कपूर तथा लिसोढ़ा आदि फल भी होता है।

रूकमनी थाल धरत हैं, श्री राज के आगे।

कर पसार बीड़ा धरें, करे मेहर धाम धनी ए।।६८।।

श्रीजी के आगे रूक्मणी बाई थाल रखती हैं। अक्षरातीत श्रीजी उस थाल में अपनी मेहर स्वरूप पानों का बीड़ा अपने हाथ से रख देते हैं।

और सबकी थाली में, डारत है बीड़ी ये।

सेवा कल्याण प्रहलाद की, नित आवे करने के।।६९।।

कल्याण और प्रह्लाद जी उस पान बीड़े को प्रसाद रूप में थोड़ा-थोड़ा सबकी थाली में डालते हैं। यह उनकी नित्य की सेवा है।

इन भांत नित आनन्द, होत है बंगले में।

कई खलक आवे दीदार को, सुन कायमी पावे इनसे।।७०।।

इस तरह से बँगला जी दरबार में प्रतिदिन ही आनन्द की लीला होती है। इस समय की होने वाली आरती को देखने के लिए नगर के अन्य लोग भी आते हैं और उसमें भाग लेकर अखण्ड मुक्ति पाते हैं।

इत धुन सूरज मन, करे आरती बोध।

श्री धाम धनी जियावर के, नाम लेत भागे बिरोध।।७१।।

सूरजमन इस प्रकार के राग में आरती का गायन करते हैं कि सबको उसके भाव का बोध हो जाता है। प्रियतम अक्षरातीत का नाम लेने मात्र से हृदय के सारे द्वन्द्व समाप्त हो जाते हैं।

भावार्थ– मनुष्य के अन्तर्मन में द्वन्द्वों का ही युद्ध होता

रहता है। प्रियतम अक्षरातीत के प्रति समर्पित होने पर द्वन्द्वों से सम्बन्ध टूट जाता है। ऐसी अवस्था में अध्यात्म का स्वर्णिम पथ सरलता से प्राप्त हो जाता है।

एही अक्षरातीत है, एही हैं धनी धाम।

एही महम्मद मेहंदी ईसा, एही पूरे मनोरथ काम।।७२।।

ये श्री प्राणनाथ जी ही धाम के धनी पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत हैं। इन्हें ही कतेब में आखरूल इमाम मुहम्मद महदी साहिबुज्जमाँ कहा गया है, जिनके अन्दर ईसा रूह अल्ला भी विराजमान हैं। यही सबकी इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं।

इन भांत कई गावत, होए के मन मगन।

कई साथी संग गावत, साथें सूरज मन।।७३।।

इस प्रकार बहुत से सुन्दरसाथ धनी के प्रेम में मग्न होकर आरती का गायन करते हैं। सूरजमन बहुत से सुन्दरसाथ के साथ प्रेम भरे स्वरों में गायन करते हैं।

इन भांत आरती समें, कई विध होत कलोल।
हैं गए बंगले ना सुनात, कोई सुख नाहीं इन तोल।।७४।।

इस प्रकार आरती के समय अनेक प्रकार का शोर होता है, जिसके कारण बँगला जी दरबार में किसी की आवाज स्पष्ट रूप से सुनाई नहीं पड़ती। इस सुख के समान अन्य कोई भी सुख नहीं है।

एक पहर रात लों, होत है ए मनुहार।
कोई आवत कोई जात है, कहां लों कहूं प्रकार।।७५।।

एक प्रहर रात्रि तक, अर्थात् रात्रि के ९ बजे तक, धाम

धनी को रिझाने की यह लीला चलती रहती है। इस समय कोई आ रहा होता है, तो कोई जा रहा होता है। इस लीला का मैं कहाँ तक वर्णन करूँ?

सिंहासन बाई जी, जुगल सरूप सोभाए।
आनन्द सरूप सुतेज को, कहां लों कहूं बनाए।।७६।।

सिंहासन पर श्री बाई जी के विराजमान हो जाने पर युगल स्वरूप की अनुपम शोभा दिखाई दे रही है। तेज से परिपूर्ण इस आनन्दमयी स्वरूप की शोभा का वर्णन मैं कहाँ तक करूँ?

महामत कहें ऐ साथ जी, भया चरचा का वखत।
अब तुम सुनियो चित दे, लाल आगे आए बैठे इन तखत।।७७।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! अब चर्चा का

समय हो जाता है, क्योंकि श्री लालदास जी श्रीजी के तख्त के आगे आकर विराजमान हो जाते हैं। अब इस समय होने वाली लीला का वर्णन चित्त देकर सुनिए।

प्रकरण ।।६८।। चौपाई ।।४१०५।।

छठा पहर

अब कहों पहर छठे की, जित चरचा होत है हक।

बैठे सुंनत जमात, जो खास गिरोह बुजरक।।१।।

अब मैं छठे प्रहर, अर्थात् रात्रि के ९ बजे से १२ बजे के बीच, होने वाली लीला का वर्णन कर रहा हूँ। इस प्रहर में स्वयं अक्षरातीत श्रीजी चर्चा करते हैं। धनी पर अटूट ईमान रखने वाले एवं अध्यात्मिक गरिमा से परिपूर्ण ब्रह्मसृष्टियों का समूह इस चर्चा को बैठकर सुना करता है।

साथ सबे बंगले मिने, बैठे होए सनमुख।

केसव दास बानी पढ़ें, कह्यो न जाए ए सुख।।२।।

सब सुन्दरसाथ बँगला जी दरबार में श्रीजी के सम्मुख बैठे होते है। केशव दास जी वाणी पढ़ते हैं। इस प्रकार

इस लीला के सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता।

कुरान हदीसां बांचने, बैठत है दास लाल।
गोकुलदास पढ़त हैं, करने राज खुसाल।।३।।

कुरआन-हदीस पढ़ने के लिए श्री लालदास जी बैठते हैं। धाम धनी को रिझाने के लिए गोकुल दास जी भी वाणी पढ़ते हैं।

इत चरचा होत है चोपसों, बरखा होत अद्वैत।
रसना मीठी सों कहें, उड़ जात सब द्वैत।।४।।

श्रीजी के मुखारविन्द से यहाँ अति आनन्दमयी चर्चा होती है, जिसमें स्वलीला अद्वैत के अखण्ड ज्ञान की वर्षा होती है। जब श्री प्राणनाथ जी अपनी मीठी वाणी से चर्चा करते हैं, तो उस समय यह द्वैत का संसार रहता ही

नहीं।

मुरलीधर सम्मुख बैठत, पलक न मारत नैन।

मुख सों मुख सनमुख, श्रवण सुने मुख बेन।।५।।

श्रीजी के बिल्कुल सामने मुरलीधर जी चर्चा सुनने बैठ जाते हैं। उनके नैनों की पलकें भी नहीं झपकती हैं। उनका मुख श्रीजी के मुख के पूर्णतया सामने रहता है और उनके कान श्रीजी के मुखारविन्द से निकलने वाली अमृतमयी वाणी को सुनने में तल्लीन रहते हैं।

एक बाजू श्री महाराजा, और देवकरन जी साथ।

और दुरगभान पीछल, जाके धनीएं पकड़े हाथ।।६।।

एक ओर महाराजा छत्रसाल जी तथा देवकरण जी साथ-साथ चर्चा सुनने बैठते हैं। उनके पीछे दुर्गभान जी

बैठते हैं। धाम धनी अपनी मेहर से जिन सुन्दरसाथ का हाथ पकड़कर माया से निकालते हैं, वे ही केवल चर्चा सुनने बैठ सकते हैं।

और चन्द्रहंस आवत, और साह रूप।
देत श्रवना कहते, सरूप सुन्दर रूप।।७।।

श्रीजी की चर्चा सुनने के लिए चन्द्रहँस और शाहरूप आते हैं। जब श्रीजी युगल स्वरूप की अनुपम शोभा का वर्णन कर रहे होते हैं, तो वे एकाग्र मन से सुनते हैं।

और किसोरी आवत, बैठत चरचा में।
झाडू देत बंगले मिने, सोहबत देवकरन सें।।८।।

किशोरी सिंह भी आकर चर्चा में नियमित रूप से बैठते हैं। देवकरण जी की सँगति में रहकर वे भी बँगला जी

दरबार में झाड़ू देने की सेवा करते हैं।

अमानराए परबत सिंह, और नारायन दास।
और सकत सिंह आवत, और जगत सिंह खास।।९।।

अमान राय, पर्वत सिंह, नारायण दास, शक्ति सिंह, और जगत सिंह विशेष रूप से चर्चा सुनने आया करते हैं।

हमेसा दुरगभान के, लोंगे आवत दोए।
एक रूपैया रसोई को, पहुंचावत है सोए।।१०।।

दुर्गभान जी के यहाँ से हमेशा ही दो लौंग तथा एक रूपया रसोई की सेवा के लिए आया करता है।

तुलाराम सेवा मिने, आवत दरसन को जब।
प्रणाम करके बैठत, चरचा सुनत है तब।।११।।

तुलाराम जी जब श्रीजी का दर्शन करने के लिए आते हैं, तो अपनी सेवा पूरी करने के पश्चात् प्रणाम करके बैठ जाते हैं और चर्चा सुनते हैं।

प्रेम जी पीताम्बर, और मुकुन्ददास।
गोकुल केसव बैठत, और जेनती खास।।१२।।

अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी के मुखारविन्द से चर्चा सुनने के लिए प्रेम जी, पीताम्बर, मुकुन्द दास, गोकुल, केशव, और जयन्ती काका विशेष रूप से बैठा करते हैं।

और सूरतसिंह मकरन्द, और मोंनी गिरधर।

भगवान सिवराम सदानन्द, और बैठे गिरधर योंकर।।१३।।

सूरत सिंह, मकरन्द, मोनी गिरधर, भगवान, शिवराम, सदानन्द, और गिरधर जी चर्चा सुनने के लिए बैठा करते हैं।

और सेख बदल बैठत, और लाल खान।

मिहीन पठान बैठत, और अव्वल खां सुने कान।।१४।।

शेख बदल, लाल खान, महीन पठान, और अव्वल खान अपने कानों से श्रीजी की अमृतमयी चर्चा का श्रवण करते हैं।

और नूर महम्मद, और चंचल दयाराम।

गुल जी नाथा ठाड़ा रहे, पावें चरचा में आराम।।१५।।

नूर मुहम्मद, चञ्चल, दयाराम, गुलजी, नाथा जोशी हमेशा चर्चा में उपस्थित होते हैं और उसका आनन्द लेते हैं।

टेकचन्द भली भाँत सों, और दुन्द राए।

पोहोकर दास भी आवत, गोविन्द राए बैठत आए।।१६।।

टेकचन्द, दुन्द राय, बद्रीदास पुष्करन, एवं गोविन्द राय जी आकर बैठते हैं और अच्छी तरह से चर्चा सुनते हैं।

भावार्थ– "पुष्करन" ब्राह्मण वर्ग की एक उपाधि है और यह शब्द बीतक के अन्तर्गत चतुर तथा बद्रीदास जी के आगे जोड़ा गया है।

केसवदास मोदी बैठत, बैठे दूजा मुरलीधर।

इहाँ महावजी नित आवत, मोहन दास बैठे इन पर।।१७।।

केशव दास, मोदी, दूसरे मुरलीधर, तथा महावजी नित्य ही श्रीजी के मुखारविन्द से बरसने वाली अमृत वर्षा का रस लेते हैं। इनके साथ मोहन दास जी भी बैठते हैं।

विशेष– इस चौपाई के पहले चरण में प्रयुक्त मोदी शब्द उपाधि है, वास्तविक नाम छूट गया है, जैसे बूलचन्द मोदी आदि।

मूल जी मामा बैठत, और काका बैठनहार।

सन्त दास सेवा मिने, गंगा राम बैठे खबरदार।।१८।।

मूल जी मामा, जयन्ती काका, सेवा में हमेशा तल्लीन रहने वाले सन्तदास, और गँगाराम जी चर्चा में बहुत सावधान होकर बैठते हैं।

और घनस्याम बैठत, कबूं नाहना भी आवत।

छतई भी सुनत है, और सुकदेव बैठत।।१९।।

घनश्याम, नाह्ना भाई, छतई, और शुकदेव बहुत अधिक श्रद्धा के साथ चर्चा सुनने बैठा करते हैं।

और निरंजन नरसिंह दास, बैठे मके साहमन।

सिंघ घासी ब्रजभूषण, और धना सोहबत इन।।२०।।

निरञ्जन, नरसिंह दास, मके, शाहमन, घासी सिंह, ब्रजभूषण, और धना भाई चर्चा सुनने के लिए नियमित रूप से बैठते हैं।

वीर जी मोदी आवत, और लच्छी सुकल।

मिडई नित चरचा सुने, बिन सुने न पड़े कल।।२१।।

वीरजी मोदी, लच्छी, शुक्ल, तथा मिडई प्रतिदिन श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा सुना करते हैं। चर्चा सुने बिना इनको शान्ति ही नहीं पड़ती।

विशेष– "शुक्ल" शब्द ब्राह्मण वर्ग के लिए उपाधि शब्द है।

बिहारी फरास आवत, और बिहारी झंडूला।
दूर खड़ा सुनत है, भगवान कलाम अल्ला।।२२।।

बिहारी फरास और बिहारी झँडूला भी चर्चा के रस में डूबे रहते हैं। भगवान दूर रहकर ब्रह्मवाणी की चर्चा को सुना करते हैं।

मामा बनमाली दास आवत, और बैठत धन जी इत।
लालमन और संकर, और नारायन बैठत।।२३।।

मामा वनमाली, धन जी भाई, लालमन, शँकर, और नारायण जी बँगला जी दरबार में बैठकर चर्चा का श्रवण करते हैं।

मथुरा कासी आवत, खड़ा रहे बल्लभदास।
सन्तदास हजूर में, परसादी मोमिन खास।।२४।।

मथुरा और काशी चर्चा सुनने नियमित रूप से आते हैं। वल्लभ दास जी खड़े रहकर चर्चा सुनते हैं। सन्तदास तथा परसादी भाई परमधाम के ब्रह्ममुनि हैं। ये श्रीजी के सम्मुख उपस्थित होकर नियमित रूप से चर्चा सुना करते हैं।

और असऊ बैठत, अगर दास आवत।
सुने दूर बैठा गोवरधन, छबील दास बिन्दा बैठत।।२५।।

असऊ, अगर दास, छबील दास, तथा बिन्दा श्रद्धा भाव से श्रीजी के मुखारविन्द की चर्चा सुना हैं। गोवर्धन जी दूर बैठे–बैठे श्रीजी की चर्चा का रसपान करते रहते हैं।

भिखारी दास बैठत, और मया राम।

बेनीदास आवत, सोभा दास विसराम।।२६।।

भिखारी दास, मया राम, बेनी दास, और शोभा दास नियमित रूप से श्रीजी की चर्चा सुनते हैं और आनन्द का अनुभव करते हैं।

गजपत गरीबदास जो, और देवी दास।

थानू बदले सुनत, और संकर रसोइया खास।।२७।।

गजपत, गरीब दास, देवी दास, थानू, शेख बदल, और

शँकर रसोइया विशेष रूप से श्री प्राणनाथ जी की चर्चा सुना करते हैं।

स्यामजी सुनत हैं, और बैठे चंपत।

सुख चैन खरग देऊ, और मुरली आवे इत।।२८।।

श्याम जी, चम्पत, खड़्ग देव, और मुरली जब धाम धनी के मुखारविन्द से चर्चा सुन लेते हैं, तभी उन्हें सुख-चैन प्राप्त होता है।

और साथी केतिक, आवे नेष्टा बंध।

कोई आवे मरजाद में, कोई परवाह की सनंध।।२९।।

कुछ सुन्दरसाथ तो निष्ठाबद्ध होकर चर्चा सुनने आते हैं, तो कुछ मर्यादा में बद्धकर, और कुछ एक-दूसरे की देखा-देखी (प्रवाह में)।

भावार्थ– अपने आत्म–कल्याण की भावना से दृढ़ संकल्प द्वारा सुनना "पुष्ट" भाव से सुनना कहलाता है। इसी प्रकार धार्मिक मर्यादाओं को निभाने मात्र की भावना से सुनना "मर्यादित" भाव से सुनना है, तथा अड़ोस–पड़ोस के लोगों तथा अन्य सगे–सम्बन्धियों की देखा–देखी चर्चा सुनने के लिये आना "प्रवाह" रूप से सुनना है। इसमें हृदय में इच्छा न होते हुए भी विवश होकर सुनना पड़ता है।

कोई सुनत है पुष्ट में, कोई सुने मरजाद।
कोई परवाह में कान दे, ए सुनने की बुनियाद।।३०।।

चर्चा श्रवण करने वाले तीन प्रकार के होते हैं। कोई तो पुष्टि भाव से अर्थात् निष्ठाबद्ध होकर सुनता है, कोई मर्यादा पालन करने के लिये सुनता है, तो कोई प्रवाह में

बहकर चर्चा सुनने के लिये आता है।

कोई ग्रहत है पुष्ट में, कोई ग्रहे मरजाद में।

कोई परवाह में लेत हैं, ए बीतक कहो इन से।।३१।।

कोई पुष्टि (निष्ठा) भाव से चर्चा के आशय को ग्रहण करता है अर्थात् आत्मसात् करता है। तो कोई मर्यादा निभाने की भावना से मात्र सुन भर लेता है। कोई दूसरों की देखा-देखी सुनने के लिये बैठा भर रहता है। उसके कान कहीं और होते हैं और वह कुछ भी ग्रहण नहीं कर पाता। चर्चा सुनने वालों का यही वृत्तान्त है।

एक पांव भरें पुष्ट में, दूजे मरजाद में कदम।

एक परवाह में पांव भरें, यों सोंपी आतम।।३२।।

एक पुष्टि भाव से चर्चा को आचरण में उतारता है। दूसरा

मर्यादित भाव से अचारण में लेता है, और तीसरा प्रवाह रूप से आचरण में लाने का प्रयास करता है। इस तरह तीन प्रकार से लक्ष्य के प्रति स्वयं को समर्पित करने की प्रवृत्ति होती है।

भावार्थ– पुष्टि भाव से आचरण में उतारने वाला लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सब कुछ न्योछावर कर देता है। प्रवाह मार्ग के अनुयायी को केवल लगे भर रहना होता है, उसको सफलता या असफलता से कुछ विशेष लेना–देना नहीं होता। मर्यादा का पालन करने वाला मध्यम मार्गी होता है।

यों एक एक के तीन तीन, तिन तीनों के नव।
फेर बांटे तीन बेर, सताईस कहो।।३३।।

इस तरह तीन प्रकार के स्वभाव वाले श्रोताओं में आने

की क्रिया के भेद से ९ भेद होते हैं। पुनः श्रवण, मनन, और निद्धिध्यासन को आत्मसात् करने से २७ भेद होते हैं।

भावार्थ– पुष्टि, प्रवाह और मर्यादा की प्रवृत्ति (स्वभाव) वाले तीन तरह के लोग होते हैं। इनके आने की क्रिया भी तीन प्रकार से होती है– श्रवण, मनन, तथा निद्धिध्यासन (आचरण में उतारना)– यह भी तीन प्रकार होता है। इस प्रकार का स्वभाव, आगमन, क्रिया, श्रवण, मनन, निद्धिध्यासन, तथा गुण (सत्व, रज, तम) के भेद से ८१ पक्ष होते हैं। दूसरे शब्दों में नवधा भक्ति का उच्चारण करने वाले पुष्ट, प्रवाह, और मर्यादा के भेद से २७ पक्ष होते हैं, तथा सत्व, रज, और तम के भेद से ८१ पक्ष होते हैं।

फेर के बांटे तीन बेर, ताके इक्यासी भए पख।

और पच्चीस पख ब्रह्मसृष्ट के, कहें उन ऊपर अलख।।३४।।

सत्व, रज, तम के भेद से उनके इक्यासी पक्ष हो जाते हैं। ८२वां पक्ष वल्लभाचार्य जी का होता है, ८३वां पक्ष कबीर जी बेहद मण्डल के लिए होता है, और इसके परे परमधाम के २५ पक्ष ब्रह्मसृष्टियों के कहलाते हैं।

ए पच्चीस की बात बड़ी, जिन नजर लाहूत पर।

सो हिसाब में न आवहीं, कहों सैयों की खातिर।।३५।।

पच्चीस पक्षों की महिमा अनन्त है। यहाँ की शोभा, लीला, और आनन्द की कभी माप नहीं की जा सकती। लेकिन मुझे उन ब्रह्मसृष्टियों के लिए कहना पड़ रहा है, जिनकी दृष्टि में परमधाम बसा होता है।

तामें सात घाट धाम के, और जमुना जी पुल दोए।

दसों भोम मोहोल राजत, देखो साथ तुम सोए।।३६।।

पच्चीस पक्षों वाले उस अनन्त परमधाम में रँगमहल के पूर्व की दिशा में सात घाट केल, लिबोई, अनार, अमृत, जाँबू, नारँगी, और वट के आए हैं। इनके सामने पूर्व की दिशा में यमुना जी बह रही हैं, जिनके ऊपर दो पुल– केल पुल और वट पुल– आए हैं। नौ भूमिका एवं दसवीं आकाशी से युक्त रँगमहल सुशोभित हो रहा है। हे साथ जी! आप यहाँ की अलौकिक शोभा को देखिए।

और महल चौबीस हांस को, बड़ी नहरें और जोए।

और तालाब मानक, चार हार हवेली होए।।३७।।

हौज़ कोसर की दक्षिण दिशा में २४ हाँस के महल की शोभा आई है। इस महल की दक्षिण दिशा में बड़ी नहरें

(जवेरों की नहरें) आती हैं। यमुना जी हौज़ कौसर में पूर्व दिशा से आकर मिल जाती हैं। २४ हाँस के महल के उत्तर में हौज़ कौसर ताल आता है। वन की नहरें, माणिक पहाड़ की दक्षिण दिशा में आती हैं। इस प्रकार माणिक पहाड़ २४ हाँस के महल के दक्षिण दिशा में आया है। चार हार हवेली बड़ी राँग को छोड़ अन्य सभी को घेरकर आई हैं।

चारों तरफ सागर के, और जिमी के होए।
मोहलात बड़ी रांग की, गिरदपाल कही सोए।।३८।।

इनके चारों तरफ आठ सागर तथा आठ जिमी की शोभा घेरकर आई है। बड़ी राँग के महलों को चारों ओर से घेरकर पाल की शोभा आई है।

और आठों सागर, और पहाड़ पुखराज।

जमुना जी इहां प्रगटी, ए बेवरा करत हैं श्री राज।।३९।।

परमधाम की आठ दिशाओं में आठ सागर– नूर, नीर, क्षीर, दधि, घृत, मधु, रस, और सर्वरस– आए हैं। रँगमहल की उत्तर दिशा में पुखराज पहाड़ आया है, जहाँ से यमुना जी प्रकट होकर पूर्व की दिशा में जाती हैं। धाम धनी इन सारी शोभा का वर्णन करके सुन्दरसाथ को सुनाते हैं।

जहाँ पटी महल खुली चली, मरोर खाया और।

इन दरम्यान कई भांत हैं, सब कहें है ठौर।।४०।।

यमुना जी पुखराज पहाड़ से निकलकर आधी ढपी और आधी खुली पूर्व की ओर चलती हैं। वहाँ से दक्षिण दिशा में मुड़कर नौ लाख कोस चलती हैं। इसके दोनों तरफ

महलों और अति सुन्दर चबूतरों की अपरम्पार शोभा है।

ए चरचा नित होत है, भोम कही अद्वैत।

पच्चीस परख में सब है, उड़े सुनते द्वैत।।४१।।

धाम धनी के मुखारविन्द से इस प्रकार की चर्चा नित्य ही होती है। परमधाम की यह भूमिका स्वलीला अद्वैत है। परमधाम की सम्पूर्ण सामग्री (शोभा) २५ पक्षों में समाहित हैं। इसका वर्णन सुनने पर द्वैत का संसार रह ही नहीं जाता।

श्री राज और स्यामा जी, ए दोनों जुगल किसोर।

रूहें रहें दरगाह में, ए तीनों एक सरूप न और।।४२।।

श्री राज जी और श्यामा जी दोनों ही युगल स्वरूप हैं। सखियाँ परमधाम में रहती हैं। इस प्रकार ये तीनों एक ही

स्वरूप हैं, दूसरे नहीं।

लखमी जी और भगवान जी, ए दोनों एकै अंग।
ए हैं अंग श्री राज के, ए पांचों अद्वैत एक संग।।४३।।

महालक्ष्मी तथा अक्षर ब्रह्म ये दोनों एक ही अँग हैं और ये दोनों श्री राज जी के अँग हैं। इस प्रकार ये पाँचों स्वरूप (श्री राज जी, श्यामा जी, सखियाँ, अक्षर ब्रह्म, और महालक्ष्मी) एक ही स्वलीला अद्वैत परब्रह्म श्री राज जी के स्वरूप हैं।

और भगवान जी की दृष्ट से, कई कोट उपजे इण्ड।
पल फिरे उड़त है, त्रिगुण समेत ब्रह्माण्ड।।४४।।

अक्षर ब्रह्म की दृष्टि से (इच्छा शक्ति से) करोड़ों ब्रह्माण्ड (लोक) एक पल में उत्पन्न होते हैं और त्रिगुण समेत लय

को प्राप्त हो जाते हैं।

अक्षर आवें मुजरे को, श्री धाम धनी के दीदार।
मुजरा कर पीछा फिरें, रिझावें परवरदिगार।।४५।।

अक्षर ब्रह्म प्रतिदिन श्री राज जी के दर्शन के लिए आया करते हैं और दर्शन करके अपने अक्षर धाम में वापस चले जाते हैं। इस प्रकार वे श्री राज जी को रिझाते हैं।

जहां राज के दिल में, इस्क रब्द कारण।
खेल दिखाए बेवरा किया, देखो मिल मोमिन।।४६।।

हे साथ जी! आप सभी मिलकर इस बात का विचार कीजिए कि परमधाम में अनादि काल से चल रहे इश्क रब्द का निर्णय करने के लिए ही श्री राज जी के दिल में हमें माया का खेल दिखाने की इच्छा पैदा हुई। उन्होंने

माया का खेल दिखाकर इस जागनी ब्रह्माण्ड में तारतम वाणी के द्वारा इश्क का निर्णय कर दिया है।

चाह करें खेल देखनें, मै बरजे बेर तीन।
तुम भूलोगे तहकीक, रहे न काहू आकीन।।४७।।

अब श्री महामति जी के धाम हृदय में विराजमान श्री राज जी बँगला जी दरबार में कह रहे हैं कि जब तुमने माया का खेल देखने की इच्छा की तो मैंने तुम्हें तीन बार मना किया। मैंने तुम्हें यह भी बताया कि माया में जाकर मुझे तुम पूर्णतया भूल जाओगी, और किसी को मेरे तथा परमधाम के ऊपर विश्वास ही नहीं रहेगा।

तब रब्द करें मुझसों, मेरे कह्यो न माने कोए।
तब सुपन दिखाऊंगा, इनों पें मंगाए के सोए।।४८।।

तब तुमने मुझसे बहस (विवाद) की थी। तुममें से कोई भी मेरा कहना मानने के लिए तैयार नहीं थी। तब मैंने यह निर्णय कर लिया कि मेरी प्रेरणा से तुम्हारे अन्दर माया का खेल देखने की इच्छा होगी और उसे पूर्ण करने के लिए मैं स्वप्न का खेल अवश्य दिखाऊँगा।

भावार्थ– उपरोक्त दोनों चौपाइयाँ श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप पर यथार्थ प्रकाश डाल रही हैं। श्री प्राणनाथ जी के द्वारा यह कहा जाना "मैंने तुम्हें खेल में न आने के लिए तीन बार कहा था और तुमने मुझसे रब्द किया था", यही सिद्ध करता है कि श्री प्राणनाथ जी का स्वरूप अक्षरातीत का स्वरूप है। कोई सन्त, महापुरूष, आचार्य, या भक्त इस प्रकार का कथन स्वप्न में भी नहीं कर सकता।

अक्षर को इच्छा भई, रूहों कैसा इस्क।

प्रेम परवरदिगार सों, क्यों रहे साथ हक।।४९।।

धाम धनी की प्रेरणा से अक्षर ब्रह्म के मन में भी यह इच्छा पैदा हो गयी कि अक्षरातीत के साथ ब्रह्मात्माएँ किस प्रकार प्रेम करती हैं? वे प्रियतम अक्षरातीत के साथ किस प्रकार की लीला करती हैं?

तब हुकम कुदरत मलकूती, भई दीदार चाह जो इन।

किन बिध नूर जमाल मोमिन, नूर सिलसिले से उपजा तिन।।५०।।

तब अक्षर ब्रह्म के दिल में यह इच्छा पैदा हुयी थी कि मैं रँगमहल की उस प्रेममयी लीला को देखूँ कि किस प्रकार परमधाम में श्री राज जी और सखियाँ आपस में प्रेम करते हैं? इस तरह अक्षर ब्रह्म की इच्छा से यह खेल बना और श्री राज जी ने उनकी अखण्ड प्रकृति योगमाया

बेहद मण्डल को खेल बनाने का आदेश दिया।

भावार्थ– प्रगट वाणी में कहा गया है– "या समे श्री वैकुण्ठनाथ, इच्छा दरसन करने साथ।" इस कथन में वैकुण्ठनाथ से तात्पर्य नित्य वैकुण्ठ के स्वामी अक्षर ब्रह्म से है, चौदह लोकों वाले वैकुण्ठ के स्वामी नारायण से नहीं। उसी प्रकार बीतक की इस चौपाई के प्रथम चरण में "मलकूती कुदरत" का तात्पर्य बेहद मण्डल (योगमाया के ब्रह्माण्ड) से है, जिसके द्वारा इस नश्वर जगत की रचना होती है।

तब रूहों के दिल उपज्या, हम खेल देखें भगवान।
मांगे आज राज पे, हमें कब होए पहिचान।।५१।।

तब सखियों के दिल में भी यह बात आई कि हम अक्षर ब्रह्म की लीला को देखें और आज श्री राज जी से यह

माँगे कि हमें अक्षर ब्रह्म के मायावी खेल की कब पहचान होगी?

हम आपस में रब्द करके, आइयां पासे हक।
हमें खेल देखन की, रहे बड़ी चाह बुजरक।।५२।।

हम सभी सखियाँ आपस में बहस करके श्री राज जी के पास आयीं और उनसे जोर देकर कहा कि हे धाम धनी! हमारे अन्दर माया का खेल देखने की बहुत बड़ी इच्छा पैदा हो रही है।

बहुत बरज्या इनको, फेर फेर तीन बेर।
बहुत चाह जब देखिया, उतारी बीच अंधेर।।५३।।

मैंने इन्हें तीन बार बहुत मना किया, लेकिन जब इनके अन्दर बहुत तीव्र इच्छा देखी तो माया के अन्दर इन्हें

उतारना पड़ा।

पहिले हुकम भगवान पे, हुआ एह सुपन।

उतारी रूहें तिन में, आइयां खेल देखन।।५४।।

सबसे पहले अक्षर ब्रह्म पर धनी का आदेश हुआ, जिसके परिणामस्वरूप यह ब्रह्माण्ड बना, और इस संसार में परमधाम की आत्माओं को उतारा ताकि वे माया का खेल देख सकें।

पहिले आए ब्रज में रहे, अग्यारे बरस बावन दिन।

ता पीछे पहुंचे वृन्दावन, एक रात रोसन।।५५।।

सबसे पहले व्रज में अक्षर ब्रह्म की आत्मा तथा जोश के साथ परमधाम की आत्मायें अवतरित हुईं। वहाँ ११ वर्ष और ५२ दिन तक लीला हुई। इसके पश्चात् योगमाया के

ब्रह्माण्ड में नित्य वृन्दावन के अन्दर गये, जहाँ एक रात्रि तक महारास की लीला हुई।

तित तुमको इच्छा रही, तो आए तीसरी बेर।

इन्ना इनजुलना सूरत, तुम वास्ते उतरी खैर।।५६।।

व्रज-रास में तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं हो सकी थी, इसलिए तुम्हें तीसरी बार इस जागनी के ब्रह्माण्ड में आना पड़ा। इसलिए कुरआन तीसवें पारे की "इन्ना इन्जुलना" सूरत तुम्हें पहचान देने के लिए धनी की मेहर के रूप में अवतरित हुई है।

भावार्थ- इस सूरत में कहा गया है कि वह महिमावान रात्रि हजार महीने से बेहतर है, जिसमें रूहें और फरिश्ते अपने परवरदिगार के हुक्म से इस फ़ानी दुनिया में उतरते हैं।

रसूल आए तुम वास्ते, धरी जुदी तीन सूरत।

ए खेल तुम खातिर किया, फरदा रोज कयामत।।५७।।

मुहम्मद साहिब तुम्हारे लिए कुरआन लेकर आए। उन्होंने तीन अलग-अलग समय में सूरतें धारण की। यह माया का खेल तुम्हारे लिए ही बनाया गया है, जिसमें फरदा रोज ११वीं सदी में कियामत का प्रकटन हुआ है।

पांच चीजें बका से उतरी, सो तुमारी खातिर।

हुकम आया तुम पर, ले फिरस्तों का लसगर।।५८।।

अखण्ड धाम से पाँच शक्तियाँ श्री महामति जी के धाम हृदय में तुम्हारे लिए ही प्रकट हुई हैं। श्री राज जी का हुक्म (आदेश) तुम्हारे लिए ही ईश्वरीय सृष्टि का समूह लेकर इस खेल में आया है।

जबराईल जोस धनी का, करे तुमारी वकालत।

तुमको साफ राखहीं, कहूं पैठ न सके इल्लत।।५९।।

धनी का जोश जिबरील तुम्हारी ओर से वकालत कर रहा है। वह तुम्हारे जीव के हृदय को निर्मल रखता है, जिससे माया के विकार तुम्हारे अन्दर प्रवेश न कर सकें।

भावार्थ– "वकालत" का अर्थ होता है, अभियोजना या सूत्रधारिता करना। जिस प्रकार वकील अपने मुवक्किल की सच्चाई को न्यायाधीश तक पहुँचाकर उसे वास्तविक न्याय दिलाता है, उसी तरह से जिबरील ब्रह्मसृष्टियों के जीवों के दिल को मायावी विकारों से दूर रखकर धनी के प्रेम की राह सरल कर देता है, जिससे ब्रह्मसृष्टियों को इस जागनी ब्रह्माण्ड में धनी का सुख सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाता है। इसे ही जिबरील के द्वारा ब्रह्मसृष्टियों की वकालत करना कहा गया है।

असराफील आइया, अपनी फौज बनाए।

सूर फूंका संसार में, कलाम रब्बानी गाये।।६०।।

इस्राफील अपनी सारी सेना के साथ आया हुआ है और वह तारतम वाणी के अवतरण के रूप में परमधाम के ज्ञान का सूर्य फूँक रहा है।

भावार्थ- इस्राफील का अपनी सेना के साथ आने का कथन आलँकारिक है। जिस प्रकार राजा अपनी सेना के साथ किसी अन्य राज्य को जीतता है, उसी प्रकार इस्राफील फरिश्ता (अक्षर ब्रह्म की जाग्रत बुद्धि) अपनी पूर्ण शक्ति के साथ अज्ञानता के अन्धकार को मिटा रहा है। यह वैसे ही है, जैसे यह कहा जाये कि राजा की शक्ति तो सेना में समाहित है।

रूह अल्ला आए तुम पर, तिन पहिने जामें दोए।

रूहों तुमको खेल में से, ढूंढ काढ़े सोए।।६१।।

श्री श्यामा जी इस संसार में तुम्हारे लिए आई हैं, और उन्होंने दो तनों (श्री देवचन्द्र जी, श्री मिहिरराज जी) को धारण किया और वे ही तुम्हें इस मायावी संसार में खोज–खोज कर निकाल रही हैं।

अरस अजीम के सुकन, जिनसों होए सिफायत।

दीदार होए हक का, सो तुम वास्ते ल्याए इत।।६२।।

परमधाम की इस तारतम वाणी से ब्रह्मसृष्टियों और अक्षरातीत की अनुशंसा होती है, तथा श्री राज जी का दीदार होता है। इस ब्रह्मवाणी को तुम्हारे लिए ही इस संसार में लाया गया है।

सो तो सागर सुख के, बरनन करत हैं जेह।

विचार जिनको विवेक, दिल श्रवना देत हैं तेह।।६३।।

जिनके विचारों में विवेक का प्रकाश है तथा जो दिल के कानों से श्रीजी के द्वारा वर्णन की गयी परमधाम की शोभा का वर्णन सुनते हैं, उन्हें यही अनुभव होता है कि वे सुख के सागर में क्रीड़ा कर रहे हैं।

सातों सरूप स्याम के, बरनन करत श्री राज।

साथ को सुख उपजावहीं, पूरें मनोरथ काज।।६४।।

श्रीजी मूल स्वरूप श्री राज जी के सातों स्वरूपों का अपनी चर्चा में विस्तारपूर्वक वर्णन करते हैं। इसे सुनकर सुन्दरसाथ के हृदय में अलौकिक सुख उत्पन्न होता है और उनकी सारी कामनायें पूर्ण हो जाती हैं।

भावार्थ– "जेती परिक्रमा निजधाम की, सातों स्वरूप

श्री राज" की व्याख्या में श्री राज जी के सातों स्वरूप का वर्णन किया जा चुका है। यहाँ भी वही प्रसंग मानना उचित होगा। इस छठे प्रहर की चर्चा में केवल परमधाम की ही चर्चा होती है। इसलिए सात स्वरूपों की गणना में रास के दोनों स्वरूपों तथा परमधाम के पाँच स्वरूपों को मानकर, रास के दोनों स्वरूपों की चर्चा का प्रसंग मानना उचित प्रतीत नहीं होता।

बरनन करते धाम को, परदक्षना पुखराज।

अहिनिस केल करत हैं, संग सैयां श्री राज।।६५।।

श्रीजी परमधाम की शोभा का वर्णन करते हैं। पुखराज की परिक्रमा का भी वर्णन करते हैं। पुखराज के पश्चिम और उत्तर दिशा में दो घाटियाँ आई हुई हैं, दक्षिण में महावन के वृक्षों की शोभा है, तथा पूर्व में यमुना जी का

प्रकटन हुआ है। इन सभी स्थानों पर धाम धनी अपनी अँगनाओं के साथ रात–दिन क्रीड़ा करते हैं।

सातों घाट पधारते, श्री ठकुरानी जी संग।
खेलें सब सैंयन सों, श्री धाम धनी अरधंग।।६६।।

धाम धनी अपनी अर्द्धांगिनी स्वरूप श्यामा जी और सब सखियों के साथ यमुना जी के सातों घाटों में पधारते हैं और प्रेममयी क्रीड़ायें करते हैं।

दोनों पुलों पधारत, कुंजवन मंदिर।
जमुना जहां मरोर खाए के, आए ताल मिली यों कर।।६७।।

यमुना जी के ऊपर केल एवं वट के दो पुल आए हुए हैं। इन्हें देखते हुए कुँज–निकुँज के मन्दिरों में आते हैं। वहाँ से यमुना जी पश्चिम दिशा में मरोड़ खाकर १६ देहुरी के

घाट से हौज कौसर ताल में मिल जाती हैं।

हौज दिखावत हेत सों, और चारों घाट।

टापू बरनन करत हैं, एक हीरे को सब ठाट।।६८।।

धाम धनी अपनी चर्चा में हौज़ कौसर ताल और उसके चारों घाटों का बहुत प्रेमपूर्वक वर्णन करते हैं। वे हौज़ कौसर के मध्य में आए हुए टापू महल का भी वर्णन करते हैं, जो एक ही हीरे के अन्दर समाहित है।

भावार्थ– हौज़ कौसर ताल की चार दिशाओं में चार घाट आए हैं। पूर्व दिशा में १६ देहुरी का घाट, पश्चिम में झुण्ड का घाट, उत्तर दिशा में ९ देहुरी का घाट, तथा दक्षिण में १३ देहुरी के घाट की शोभा आयी हुई है।

गिरद ताल के बन भला, आगे पहाड़ मानक।
बीच महल खेलन का, जहां खेलत हक।।६९।।

हौज़ कौसर की पाल पर घेरकर बड़ो वन के पाँच वृक्षों की बहुत ही सुन्दर शोभा आयी हुई है। इसके आगे माणिक पहाड़ दृष्टिगोचर होता है। माणिक पहाड़ के अन्दर प्रेममयी क्रीड़ा के लिए महलों की अलौकिक शोभा है, जिनमें धाम धनी श्यामा जी तथा सखियों के साथ तरह-तरह की आनन्दमयी लीलायें करते हैं।

चौबीस फुहारे बीच में, परे चौबीस गुरजें।
तासों परे चौबीस चादरें, गिरद परे कुण्डें।।७०।।

हौज़ कौसर तथा माणिक पहाड़ के मध्य में २४ हाँस के महल की अलौकिक शोभा दिखायी देती है। इसके २४ गुर्जों के २४ कुण्डों में २४ चादरें २४ फुहारों के रूप में

पड़ती हैं। इन २४ कुण्डों से होकर जल आगे की तरफ प्रवाहित होता है।

धनी मानक पहाड़ को, कर देत बरनन।
जहां हिंडोले दो पहाड़ बीच, सुन सुख पावें मोमिन।।७१।।

श्रीजी माणिक पहाड़ की अलौकिक शोभा का वर्णन करते हैं। माणिक पहाड़ की दो भूमिकाओं के बीच आये हुये बड़े हिन्डोलों का वर्णन सुनकर सुन्दरसाथ बहुत ही आनन्दित होते हैं।

जित फिरती हवेलियां, चौखूनी गिरदवाए।
बारे हजार मंदिर हर एक में, फिरते बड़े दरवाजे आए।।७२।।

माणिक पहाड़ के अन्दर घेरकर ६००० गोल एवं ६००० चौरस हवेलियाँ आई हैं। एक-एक हवेली में

१२–१२ हजार मन्दिर आए हैं। माणिक पहाड़ को घेरकर चार दिशाओं में चार बड़े दरवाजे आए हैं।

मानक पहाड़ से दछिन, नदी निरमल नीर।
ताकी सिफत कह दिखावहीं, जल उजल खुस्बोए खीर।।७३।।

माणिक पहाड़ की दक्षिण दिशा में घेरकर महानद आया हुआ है, जिसकी शोभा का वर्णन धाम धनी इस प्रकार करते हैं कि उसका जल अत्यन्त निर्मल, दूध की तरह उज्ज्वल, और सुगन्धि से भरपूर है।

दोऊ बाजू देहुरे बने, बड़ी हीरे की पड़साल।
सुन सैंयां कामिल, होत अति खुसाल।।७४।।

महानद के दोनों किनारों पर हीरे की बहुत बड़ी पड़साल आयी हुई है। पड़सालों पर दोनों तरफ देहुरियाँ

आयी हुई हैं। परमधाम की लीला का रसपान करने में समर्थ ब्रह्मसृष्टियाँ इस शोभा का वर्णन सुनकर बहुत अधिक आनन्दित होती हैं।

जहां राज रमत हैं, बन की जो मोहलात।
अत सुन्दर सोभा देत है, सो क्यों कर कहों विख्यात।।७५।।

जवेरों की नहरों को घेरकर वन की नहरों (महलों) की शोभा आयी हुई है। यहाँ पर धाम धनी, श्यामा जी और सुन्दरसाथ के साथ तरह-तरह की क्रीड़ायें करते हैं। वन की नहरों की शोभा अनन्त है। उनकी अनुपम शोभा का वर्णन भला कैसे किया जा सकता है?

अत ऊंची है अलंग, गिरदवाए फिरती।
चार हार मोहोल बनें, याकी सोभा कहों केती।।७६।।

वन की नहरों के आगे चारों तरफ घेरकर छोटी राँग चार–हार हवेली की शोभा आयी हुई है। चार–हार हवेली में आए हुए महलों की सुन्दरता अनुपम है, जिसका मैं कितना वर्णन करूँ।

आठों सागर ए कहे, जहां रमन की ठौर।
टापू बेट बिराजत, कह्यो न जाए मरोर।।७७।।

बड़ी राँग की हवेलियों के मध्य आठ दिशाओं में आठ सागरों की शोभा आयी हुई है, जिनमें धाम धनी, श्यामा जी और सुन्दरसाथ के साथ तरह–तरह की क्रीड़ायें करते हैं। सागरों के मध्य में टापू महलों की शोभा आयी है, जिनकी अलौकिक शोभा हृदय को छू लेने वाली है। इनका वर्णन हो पाना किसी भी तरह से सम्भव नहीं है।

भावार्थ– एक–एक सागर में १२–१२ हज़ार टापू महल

आये हैं और एक–एक महल की ऊँचाई १२–१२ हज़ार भूमिका की है।

और बानी कई भांत की, कह समझावत सब साथ।
साथ अब कोई धाम में, पकड़ बैठाए हाथ।।७८।।

धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी कई प्रकार की चर्चा द्वारा सुन्दरसाथ को परमधाम का वर्णन इस प्रकार समझाते हैं कि उन सुन्दरसाथ को ऐसा अनुभव होने लगता है, जैसे किसी ने उनका हाथ पकड़कर परमधाम में बैठा दिया हो।

भावार्थ– जब श्रीजी परमधाम की शोभा का वर्णन करते हैं, तो सुन्दरसाथ की अन्तर्दृष्टि परमधाम में ही घूमने लगती है, जिससे सुन्दरसाथ को संसार की जरा भी याद नहीं रहती, बल्कि उनकी दृष्टि में एकमात्र परमधाम ही

रह जाता है। यही भाव इस चौपाई में दर्शाया गया है।

ए लीला केती कहों, रात होत पहर दोए।

कोई समें तीन जात है, चरचा कहि समझावे सोए।।७९।।

इस लीला का मैं कितना वर्णन करूँ? चर्चा होते-होते रात्रि के दो प्रहर बीत जाते हैं, अर्थात् बारह बज जाते हैं। कभी-कभी रात्रि के तीन भी बज जाते हैं, किन्तु तब तक धाम धनी अपनी चर्चा द्वारा परमधाम का अमृत उड़ेलते रहते हैं।

श्री राज पौढ़े पलंग पर, गादी तकिए उठावें ये।

बिहारीदास संग नाथा रहे, और साथी सामिल सेवा के।।८०।।

चर्चा समाप्त होने के पश्चात् श्रीजी पलँग पर लेटते हैं। जिस तख्त पर बैठकर वे चर्चा कर रहे होते हैं, उस

तख्त से गादी और तकिए उठा लिए जाते हैं। इस सेवा में बिहारी दास, नाथा जोशी, और अन्य कई सुन्दरसाथ सम्मिलित रहते हैं।

महामत कहें ए सैंयनों, ए छटे पहर की बीतक।
अब कहों पहर सातमां, जैसी सोहोबत हक।।८१।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! यह छठे प्रहर की लीला का वर्णन हुआ। अब सातवें प्रहर में श्रीजी के साथ सुन्दरसाथ की जैसी लीला होती है, उसका वर्णन कर रहा हूँ।

प्रकरण ।।६९।। चौपाई ।।४१८६।।

सातमा प्रहर

अब रात पहर दो गई, पोहोर चार दिन दो रात।
उपरान्त पोहोर सातमा, कहों ताकी विख्यात।।१।।

अब दिन के चार तथा रात्रि के दो प्रहर बीत चुके हैं, अर्थात् रात्रि के १२ बज रहे हैं। अब सातवाँ प्रहर रात्रि के १२ से ३ बजे का चल रहा है। इस में जो ब्रह्मलीला होती है, उसका मैं वर्णन कर रहा हूँ।

इन समें सेज समारत, नारायन द्वारका दास।
गंगादास परमानन्द, और सेज समारत खास।।२।।

इस समय श्रीजी की सेज को व्यवस्थित करने, गद्दे आदि बिछाने की सेवा नारायण जी, द्वारिका दास, गँगादास, और परमानन्द जी करते हैं।

इत साज समारत, ए जो दोए पलंग के।

एक पर बैठे एक कोतल, सोभा कही न जाए ते।।३।।

इस समय दोनों पलँगों को व्यवस्थित किया जाता है। एक पर श्री प्राणनाथ जी बैठे होते हैं, तथा श्री बाई जी का पलँग खाली रहता है। इस शोभा का वर्णन हो पाना सम्भव नहीं है।

चार पाए अत सुन्दर, नूर भरे अत प्यार।

इस उपले नूर के, ताको क्योंकर कहों बिहार।।४।।

श्रीजी के पलँग के चारों पाए बहुत ही सुन्दर हैं। वे प्रकाश में चमकते हुए बहुत प्यारे लगते हैं। पायों की इस बाह्य शोभा को देखकर हृदय में अनुभव होने वाले आनन्द का वर्णन मैं कैसे करूँ?

पचरंगी पाटी भरी, अत नरम सुखदाए।

तापर तलाई सोभित, तापर चादर बिछाए।।५।।

यह पलँग पाँच रंगों वाली निवाड़ (पाटी) से बुना हुआ है, जो बहुत ही कोमल और सुखदायक है। उसके ऊपर पतला गद्दा बिछा हुआ है, जिसके ऊपर चादर बिछायी जाती है।

अत सुन्दर सेज बन्ध, जुगतें बांधे चारों पाए।

पांचों रंग रेसमी झलकत, सुन्दरता सुख दाए।।६।।

सेजबन्ध बहुत ही सुन्दर है। इन्हें चारों पायों के साथ युक्तिपूर्वक बाँध दिया गया है। सेजबन्ध के धागे और फुम्मक पाँच रंगों वाले रेशम के बने हुए हैं और अति सुन्दर झलकार कर रहे हैं। उसकी यह सुन्दरता मन को बहुत ही सुखकारी लगती है।

सिराने गाल मसुरिए, कहां लों कहूं बनाए।

चारों डांडे नूर के, ऊपर छत्री गिरदवाए।।७।।

पलँग के सिरहाने (शिर की ओर) गाल मसुरिए (गोल छोटे तकिए) रखे हैं, जिनकी सुन्दरता का मैं कहाँ तक वर्णन करूँ? पलँग के चारों डण्डे बहुत ही सुन्दर हैं, जिनके ऊपर चारों ओर छत्री आयी हुई है।

झालर झलके नूर की, ऊपर छत्री घेर।

ए जो सोभा सेज की, क्यों कर कहों इन बेर।।८।।

छत्री के नीचे अति सुन्दर झालर झलकार कर रही है। इस समय सेज की जो अनुपम छवि दिखायी दे रही है, उसका वर्णन मैं कैसे करूँ?

सेज बिछाई सनेह सों, फेरत ऊपर हाथ।

जिन तिनका कोई रहे, बिसंभर सेवे इन साथ।।९।।

विश्वम्भर जी, श्रीजी के पलँग की सेज बिछाने की सेवा करते हैं। वे उसके ऊपर अपने हाथों को फेर-फेर कर अच्छी तरह से यह देख लेते हैं कि कहीं इस पर कोई तिनका तो नहीं पड़ा है।

आए आगे अरज करी, सेवे बल्लभ दास।

घड़ी घड़ी पोहोर पोहोर, सुनावें धाम लीला खास।।१०।।

श्रीजी अपने तख्त पर विराजमान होकर चर्चा कर रहे होते हैं। इस समय वल्लभ दास जी आगे आकर प्रार्थना करते हैं, किन्तु धाम धनी तो मध्य रात्रि के इस प्रहर की घड़ी-घड़ी में परमधाम की लीला सुनाने में ही मग्न हैं।

आनके अरज करी, घड़ी पहुंची आए।

धाम धनी याद कीजिए, समया पहुंचा धाए।।११।।

वल्लभ दास जी सामने आकर प्रार्थना करते हैं कि हे धाम धनी! इस बात का ध्यान रखें कि अब आपके विश्राम करने का समय हो गया है।

अरज करे सेज की, गंगादास इन काम।

समें भया पौढ़न का, राज पधारो इस ठाम।।१२।।

इस समय गँगादास जी भी आकर शयन करने (पौढ़ने) के लिये प्रार्थना करते हैं। वे कहते हैं कि हे धनी! अब आपके आराम करने का समय हो गया है, इसलिये आप अपने पलँग पर विराजमान होइए।

चरचा में चित रहे, स्वाद धाम बरनन।

सब श्रवना देत सनेह सों, खास गिरोह सैयन।।१३।।

किन्तु प्रियतम अक्षरातीत का चित्त सेवा में ही लगा रहता है। परमधाम की शोभा तथा लीला के वर्णन में उन्हें रस (आनन्द) आ रहा होता है। सब ब्रह्मसृष्टि सुन्दरसाथ प्रेमपूर्वक उस चर्चा का रसपान कर रहे होते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में केवल ब्रह्मसृष्टि सुन्दरसाथ को ही प्रेमपूर्वक चर्चा सुनते हुए वर्णित किया गया है। जीव सृष्टि को विवशतावश चर्चा में बैठे रहना पड़ता है। उसकी उतनी रुचि चर्चा सुनने में नहीं होती है, इसलिये इसी प्रकरण की चौपाई ३२ में कहा गया है कि "पहले उठी सब आम"।

सवाल करे कोई बीच में, ताको दे उत्तर।

फेर चरचा तिन पर होत है, रस घटे न क्यों ए कर।।१४।।

यदि कोई बीच में प्रश्न कर देता है, तो श्री प्राणनाथ जी उसका उत्तर देते हैं और पुनः उसी प्रश्न के सम्बन्ध में चर्चा होने लगती है। किसी भी प्रकार से चर्चा का आनन्द कम नहीं होता।

इन समें कोई आयत, लालदास ल्यावत।

फेर सुने चित देय के, पौढ़ने की अरज करत।।१५।।

इस समय श्री लालदास जी कोई आयत ले आते हैं। उसे धाम धनी ध्यानपूर्वक सुनते हैं, किन्तु कुछ सुन्दरसाथ उनसे विश्राम करने का आग्रह करते हैं।

जेनती इत आए के, बीच में करें अरज।

बातें गिरोह की सुनी होए, ताको उतारें फरज।।१६।।

जयन्ती काका इस समय आकर चर्चा के बीच में ही विश्राम करने के लिये श्रीजी से निवेदन करते हैं। श्री बाई जी ने उनके माध्यम से यह आग्रह किया होता कि आप धाम धनी से चर्चा बन्द करके आराम करने के लिये कहिए, इसलिये वे ऐसा करके अपना कर्त्तव्य पूरा करते हैं।

गोकुलदास इत आए के, ल्यावत हदीसें।

केसवदास पढ़त हैं, हदीसां इन समें।।१७।।

इस समय गोकुल दास जी हदीसें लाते हैं और उन्हें केसव दास जी पढ़कर सुनाते हैं।

साथी सब सेवन के, रहे गिरदवाए घेर।

फेर फेर अरज होत है, अब बहुत हुई है बेर।।१८।।

सेवा करने वाले सब सुन्दरसाथ श्रीजी को घेरकर खड़े हो जाते हैं। वे बार–बार धाम धनी से प्रार्थना करते हैं कि अब बहुत देर हो चुकी है। अब आराम कीजिए।

साथ सबे इन्तजार खड़े, श्री जी आप करें झेर।

चरचा के सुख वास्ते, सब मोंगे रहे फेर।।१९।।

सब सुन्दरसाथ श्रीजी के उठने की प्रतीक्षा में खड़े रहते हैं, किन्तु वे चर्चा में ही लगे रहते हैं। चर्चा का सुख प्राप्त करने के लिये अन्य सुन्दरसाथ पुनः चुप हो जाते हैं।

यों करते आधी पर, घड़ी दोए चार बितीत।

फेर के अरज होत है, कहें उठत हैं ल्याओ परतीत।।२०।।

इस प्रकार आधी रात्रि के पश्चात् दो चार घड़ी का समय बीत जाता है, अर्थात् प्रायः १२:४५ या १:३० बजे का समय हो जाता है। इसके पश्चात् जब पुनः सुन्दरसाथ प्रार्थना करते हैं तो श्रीजी कहते हैं कि भाई ! विश्वास करो! मैं अभी उठने ही वाला हूँ।

भावार्थ– उपरोक्त लीला आज के समय में बहुत ही प्रासंगिक है। चर्चा–चितवनि का कार्यक्रम छोड़कर आजकल सारी ऊर्जा शोभा यात्राओं, माला के द्वारा जप, नृत्य, तथा व्यर्थ की बातों में व्यय हो जाती है। क्या इन्हीं से आत्म–जाग्रति होगी?

जब महाराजा होवहीं, देवें चरचा में श्रवन।

कोई न बोलें इन समें, साथ चरचा के आधीन।।२१।।

जब कभी महाराजा छत्रसाल जी उपस्थित होते हैं तो चर्चा अवश्य सुनते हैं। उस समय सब सुन्दरसाथ चर्चा के रस में इतने डूबे होते हैं कि किसी भी सुन्दरसाथ के मुख से कोई आवाज नहीं निकलती।

श्री बाई जी इत बैठत, करत इसारत साथ।

बेर भई अबेर, क्यों ना छोड़ो किताब हाथ।।२२।।

इस समय श्री बाई जी भी चर्चा में बैठी होती हैं और वे लालदास जी, गोकुल दास, आदि की ओर सन्केत करते हुए कहती हैं कि इतनी रात बीत गई है, अब इन किताबों को क्यों नहीं रखते हो?

श्री राजें देखा साथ सामनें, हुए उठने को तैयार।

तब सरूप बरनन धाम का, दिखाया परवरदिगार।।२३।।

प्रियतम अक्षरातीत ने देखा कि अब सुन्दरसाथ बार-बार उनसे चर्चा बन्द करने के लिए आग्रह कर रहा है, तो वे उठने के लिए तैयार हो गए। तब उन्होंने परमधाम में विराजमान मूल स्वरूप श्री राज जी की शोभा का वर्णन किया और सुन्दरसाथ से कहा।

तुम सुरत राखो धाम में, श्री राज पौढ़ने की ठौर।

इन समें अपने सरूप को, याद ल्याओ न और।।२४।।

हे साथ जी! इस समय आप अपनी सुरता रँगमहल की पाँचवी भूमिका में प्रवाली रँग के मन्दिर में ले चलिए और अपने परात्म स्वरूप की भावना से (परात्म का श्रृँगार सजकर) धाम धनी के साथ प्रेममयी लीला का आनन्द

लीजिए। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी बात अपने मन में न रखिए।

भावार्थ– इस चौपाई में सुन्दरसाथ के लिए बहुत बड़ी सिखापन दी गयी है कि रात्रि में सोते समय युगल स्वरूप का ध्यान अवश्य करना चाहिए, क्योंकि ऐसा कर लेने पर हमारे अवचेतन मन में युगल स्वरूप की शोभा पूर्णतया बस जाती है, जिसके परिणामस्वरूप हमारे मनोविकार शीघ्र ही समाप्त होने लगते हैं और धनी का प्रेम बढ़ने लगता है। सोने से पहले ध्यान न करने पर भोजन, निद्रा, और बुरे विचारों के योग से तमोगुणी वृत्ति क्रमशः बढ़ती जाती है, परिणामस्वरूप अध्यात्म क्षेत्र में यथेष्ट उन्नति नहीं हो पाती।

सरूप बरनन सनेह सों, करत साथ पर प्यार।

इन समें को सुख क्यों कहूं, जो करते थे मनुहार।।२५।।

श्रीजी अति प्रेमपूर्वक श्री राज जी की शोभा का वर्णन करके सुन्दरसाथ पर अपना प्रेम लुटाते हैं और सुन्दरसाथ भी धनी को पूर्ण समर्पित प्रेम के साथ रिझाते हैं। इस प्रकार इस समय होने वाली इस प्रेममयी लीला के सुख का वर्णन मैं कैसे करूँ?

इत वल्लभ अरज करत हैं, श्री धाम धनी की वृत।

संझा से आधी लग, कहता कोमल चित।।२६।।

वल्लभ दास जी श्रीजी से धाम धनी की वृत्त सुनाने की स्वीकृति माँगते हैं। श्रीजी के द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के पश्चात् वे मध्य रात्रि का स्वरूप सुनाते हैं, जिसमें सन्ध्या समय से लेकर आधी रात अर्थात् रँगप्रवाली

मन्दिर में जाने तक की सारी लीला का वर्णन किया हुआ है। मध्य रात्रि के स्वरूप को वे बहुत ही कोमल भावों में व्यक्त करते हैं।

श्री राज उठत इन समें, पधारत घर मानक।
हाथ पकड़ उठावत, गंगादास बुजरक।।२७।।

इस समय, जब श्री प्राणनाथ जी मानिक भाई के घर देह क्रिया के लिए जाते हैं, तो उनका हाथ पकड़कर उठाने की सेवा श्री गँगादास जी किया करते हैं।

एक तरफ लालदास, या तो लच्छीदास।
या हाजिर होवे मकरन्द, पकड़ ग्रहत दिल उलास।।२८।।

एक तरफ श्रीजी का हाथ श्री लालदास जी या लच्छीदास जी पकड़ते हैं, या इस सेवा के लिए अपने

दिल में उमँग लेकर मकरन्द जी उपस्थित रहते हैं।

पांवड़े बिछावन होत हैं, हाजिर रहे हिम्मत।

लटके मटके चलत, मीठी बातां बीच करत।।२९।।

श्रीजी के चलते समय पाँवड़े बिछाये जाते हैं। इस सेवा के लिए हिम्मत सिंह उपस्थित रहते हैं। धाम धनी प्रेम और आनन्द भरी चाल से चलते हैं, तथा मार्ग में सुन्दरसाथ से मधुर शब्दों में बातें करते चलते हैं।

पहुंचावे मानक के मकरन्द, बैठावत बाई गौर।

मानक बातें करत हैं, लिए हुज्जत चित मरोर।।३०।।

मकरन्द श्रीजी को मानिक भाई के घर पहुँचाते हैं। गौर बाई श्रीजी को बैठाने की सेवा करती हैं। मानिक भाई परमधाम की ब्रह्मात्मा का दावा लेकर हृदय को स्पर्श

करने वाली अति प्रेममयी बातें करते हैं।

हंसते उत्तर देत हैं, कई न्याय चुकावें इत।
फेर इहां से उठ चले, आए सेज पौढ़ने बखत।।३१।।

धाम धनी सुन्दरसाथ के प्रश्नों का हँसते हुए उत्तर देते हैं तथा कई विवादों का न्याय भी करते हैं। पुनः यहाँ से उठकर चल देते हैं और बँगला जी दरबार में शैय्या पर पौढ़ने के लिए आते हैं।

आय बिराजे सेज पर, साथ सब किया प्रणाम।
आप अपने आसन गए, पहिले उठी सब आम।।३२।।

श्रीजी अपनी सेज पर विराजमान हो जाते हैं। सब सुन्दरसाथ उनके चरणों में प्रणाम करते हैं और अपने-अपने बिछौनों पर शयन करने के लिए चले जाते हैं। सोने

के लिए सबसे पहले जीव सृष्टि उठकर जाती है।

इत गोदावरी आवत, ले आई कटोरी में तेल।
चोटी छोरें बातां करें, राज भला दिखाया हमें खेल।।३३।।

इस समय गोदावरी बाई कटोरी में तेल लेकर आती हैं। वे श्रीजी की चोटी खोलकर तेल लगाते हुए बातें करती हैं– हे धाम धनी! आपने हमें माया का अच्छा खेल दिखाया है।

बातें श्री बाई जी की, घर की जो बीतक।
श्री राज श्रवना देत है, ए बातें बुजरक।।३४।।

कोठा मन्दिर में श्री बाई जी की गोदावरी से जो विशेष बातें हुई होती हैं, उसे वे धाम धनी को सुनाती हैं और श्रीजी उसे ध्यानपूर्वक सुनते हैं।

भावार्थ– गोदावरी बाई श्री बाई जी की बहुत ही निकटस्थ हैं। श्री बाई जी गोदावरी जी से वार्तालाप के समय श्रीजी के द्वारा अत्यधिक समय तक चर्चा करने आदि की जो बातें करती हैं, उसे वे श्रीजी से कह देती हैं।

अंगारे अंगीठी भर के, ल्यावत बिहारी दास।
थाली में अंगारे धर के, फेरत मानक खास।।३५।।

शीतकाल में बिहारी जी अँगीठी में अँगारे भरकर लाते हैं। माणिक भाई विशेष रूप से थाली में अँगारे रखकर सेज आदि को गर्म करने के लिए उसके ऊपर फिराते हैं।

सेज तपावें भली भांत सों, रजाइयां और चादर।
कनढपी गोटा हाजिर करें, पहिनावत ऊपर।।३६।।

वे श्रीजी की सेज, रजाई, और चादर आदि को अच्छी तरह से गर्म करते हैं, तथा शयन के समय गोटा और कनढप्पी लाकर श्रीजी को पहनाते हैं।

मुरलीधर बिदा भए, उठे गिरोह के लोक।
चरचा आहार अघाय के, भाग गए सब सोक।।३७।।

मुरलीधर जी यहाँ से विदा होते हैं, उनके साथ ही सुन्दरसाथ भी उठ जाते हैं। परमधाम की चर्चा से तृप्त हो जाने से उन्हें किसी दुःख का अनुभव ही नहीं होता है।

श्री राज पौढ़ें पलंग पर, सबको कही प्रणाम।
गावन वाली आइयां, अढ़ाई पहर गई जाम।।३८।।

धाम धनी पलँग पर पौढ़ते समय सब सुन्दरसाथ को प्रणाम कहते हैं। उस समय तक गाने वाले आ चुके होते

हैं। इस समय रात्रि के ढाई प्रहर बीत गए होते हैं, अर्थात् लगभग डेढ़ बजे होते हैं।

भावार्थ– उपरोक्त चौपाई में अक्षरातीत श्रीजी के द्वारा सुन्दरसाथ को प्रणाम किया जाना यही दर्शाता है कि परमधाम के सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए परमधाम के सुन्दरसाथ में भेदभाव की लकीरें नहीं खींचनी चाहिए तथा धर्म के विशिष्ट पदों पर बैठे हुए सुन्दरसाथ को प्रणाम का उत्तर प्रणाम से देने में झिझक का अनुभव नहीं करना चाहिए।

बदले राग अलापत, साखियां लगा कहनें।

सब संगी सुर पूरत, लगे मीठी श्रवने।।३९।।

शेख बदल राग अलापते हुए साखियाँ गाने लगते हैं। शेष गाने वाले सुन्दरसाथ उसमें सुर भरते हैं, जिससे यह

गायन बहुत ही मीठा लगता है।

श्री राज चित दे सुनत हैं, बड़ी खुसाली कर।
इन समय साथी खिजमत के, आए अपनी खिजमत पर।।४०।।

धाम धनी एकाग्र चित्त होकर बहुत प्रसन्नता से इस गायन को सुनते हैं। इस समय श्रीजी की सेवा करने वाले सुन्दरसाथ अपनी सेवा पूरी करने के लिए आ जाते हैं।

चौकी सेज्या की बैठत, हंसे और साहमन।
केसवदास दौलत, और हजूरी सैयन।।४१।।

श्रीजी की सेज की सेवा करने के लिए हँसे, शाहमन, केशव दास, दौलत खान, और अन्य सेवा करने वाले सुन्दरसाथ आ जाते हैं।

भावार्थ– इस चौपाई के प्रथम चरण में "चौकी" शब्द का तात्पर्य बैठने वाली चौकी से नहीं है , बल्कि यह कथन मुहाविरे की तरह प्रयुक्त हुआ है। सेज की चौकी बैठना एक मुहाविरा है, जिसका आशय होता है– सेज की सेवा करने वालों का आना।

और बानी सुनन को, कोई कोई साथी बैठत।
मानक लगते सेज के, तलाई पठई उन बखत।।४२।।

उस समय होने वाले वाणी गायन को सुनने के लिए कुछ सुन्दरसाथ भी बैठ जाते हैं। श्रीजी के पलँग के बगल में स्थित श्री बाई जी के पलँग के लिए माणिक भाई उस समय गद्दा भिजवाते हैं।

लगते बिछौने बाई जी के, होत सिराने तरफ।

और घेर बिछौने सैयन के, और कोई दम ना मारे हरफ।।४३।।

श्री बाई जी का पलँग श्रीजी के पलँग के शिर की ओर लगाया जाता है तथा सुन्दरसाथ के शयन के लिए बिछौने चारों तरफ घेरकर बिछाये जाते हैं। श्रीजी के पौढ़ने के समय में कोई भी सुन्दरसाथ एक शब्द भी नहीं बोलता।

भावार्थ– श्री बाई जी का पलँग खाली ही रहता है, उस पर वे कभी शयन नहीं करतीं। मात्र अपनी श्रद्धा भावना को व्यक्त करने के लिए सुन्दरसाथ उनका पलँग बिछाया करते हैं।

और मोमिन भर बंगले, कोई बैठत कोई सोवत।

मुरलीधर और जेंनतीदास, बैठे चरचा को इत।।४४।।

सम्पूर्ण बँगला जी दरबार में सुन्दरसाथ भरे रहते हैं, कोई बैठा होता है तो कोई सो रहा होता है। उस समय मुरलीधर और जयन्ती दास जी आपस में बैठकर चर्चा कर रहे होते हैं।

कोठरी काके की, आगे मिलावा होत सैयन।
तहां कुरान हदीसां बांचत, लाल केसव मोमिन।।४५।।

जयन्ती काका की कोठरी के आगे सुन्दरसाथ एकत्रित हो जाते है। वहाँ लालदास जी और केशव दास जी कुरआन तथा हदीसों को पढ़ते हैं।

गोकुल दास बैठत, और मोदी बूलचद।
और केतिक बाइयां बैठत, और सदा बैठे सदानन्द।।४६।।

वहाँ पर गोकुल दास और बूल चन्द मोदी बैठा करते हैं,

और कुछ महिला सुन्दरसाथ भी बैठती हैं। सदानन्द जी उस समूह में हमेशा ही वहाँ बैठा करते हैं।

इत बड़ा मिलावा होत है, कबूं बानी कबूं चरचाए।
कबहुं किताबें कई तरह, यों आहार रूह खिलाए।।४७।।

जयन्ती काका की कोठरी के आगे सुन्दरसाथ का समूह बढ़ता ही गया। वहाँ पर कभी तारतम वाणी की चर्चा होती है, तो कभी कई अन्य तरह के ग्रन्थों की चर्चा होती है। इस प्रकार सुन्दरसाथ अपनी आत्मा को ज्ञान रूपी आहार से तृप्त करता है।

श्री राज इन समै पूछत हैं, बैठे कौन इन बखत।
संकर बुधसेन बल्लभ, नाम साथ के बतावत।।४८।।

श्रीजी यह जानकारी लेते हैं कि इस समय जयन्ती

काका की कोठरी के आगे चर्चा में कौन–कौन सुन्दरसाथ बैठे हुए हैं? शँकर, बुद्धसेन, और वल्लभ जी वहाँ बैठे हुए सब सुन्दरसाथ के नाम बताते हैं।

कबूं दस कबूं बीस, तीस चालीस पचास।

कबूं साठ सत्तर असी, ए धाम धनी की आस।।४९।।

वहाँ कभी दस बैठते हैं, तो कभी बीस, कभी तीस, चालीस, या पचास भी बैठ जाते हैं, तो कभी धाम धनी की चाहत में साठ, सत्तर, या अस्सी सुन्दरसाथ भी बैठ जाते हैं।

आखर को सौ बैठत, कबूं ऊपर भी होए।

भर एक अलंग बंगले, बैठत हैं सब सोए।।५०।।

अन्ततोगत्वा सौ की संख्या भी बैठने लगी। कभी इससे

अधिक भी हो गई। बँगला जी दरबार में सब सुन्दरसाथ एक तरफ इकट्ठे होकर बैठते हैं।

कोई कोई नेष्टा बन्ध, चूकत नाहीं सोए।

कोई कबहुं आवे कबहुं नहीं, ए चरचा सब मिल होए।।५१।।

कोई-कोई सुन्दरसाथ निष्ठाबद्ध होकर वहाँ बैठता है। वह अपने आने का नियम भंग नहीं करता, किन्तु कुछ सुन्दरसाथ कभी आते हैं तो कभी नहीं आते। इस प्रकार सब सुन्दरसाथ मिलकर आपस में चर्चा करते हैं।

ए चरचा सो करे, जो सुनी होय श्री राज।

तिन चरचा को अरचत, श्री राज रिझावन काज।।५२।।

सुन्दरसाथ ने धाम धनी के मुख से जो चर्चा सुनी होती है, आपस में पुनः उसी की दोबारा चर्चा करते हैं। धाम

धनी को रिझाने की भावना से श्रीजी की चर्चा की पुनः चर्चा करते हैं।

मिलावा बैठत सैयन का, रीझ राज भेजत हार।
कबूं कलंगी बकसत, ऐसी करें मनुहार।।५३।।

जब सुन्दरसाथ आपस में बैठकर श्रीजी की चर्चा को दुहरा रहा होता है, तो उस समय धाम धनी उन पर रीझकर (अति प्रसन्न होकर) प्रसाद के रूप में कभी अपना हार भेज देते हैं, तो कभी अपनी कलँगी। इस प्रकार श्रीजी सुन्दरसाथ का सत्कार करते हैं।

उठ मुरलीधर लेत हैं, श्री राज की बकसीस।
बांट देत सब साथ को, फेर फेर नवावें सीस।।५४।।

मुरलीधर जी उठकर धाम धनी जी के द्वारा दी गई

प्रसाद रूपी भेंट को ले लेते हैं और सब सुन्दरसाथ में बाँट देते हैं। श्रद्धा के अतिरेक (अधिकता) में बार–बार वे धनी के चरणों में अपना सिर झुकाते हैं।

गोकुल केसव दौलत, कबहुंक लालदास।
जो चरचा इत होत है, सो सुनावन की आस।।५५।।

गोकुल, केशव, दौलत खान, और कभी लालदास जी ने श्रीजी के मुखारविन्द से जो चर्चा सुनी होती है, उसे सुन्दरसाथ में सुनाने की आशा से बैठे रहते हैं।

राज सों बातां करन को, हरखत है मन मांहे।
श्री राज राजी होत है, सुन विवेक इनको मुस्कायें।।५६।।

धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी से बातें करके सुन्दरसाथ बहुत आनन्दित होते हैं। उनके प्रेम के इस भाव को

देखकर धाम धनी प्रसन्न होते हैं और इनके विवेक पर मुस्कुराते हैं।

इत कई भांत बिहार की, बातां होए विवेक।
सो मेरी इन जुबां केती कहों, न आवे रसना एक।।५७।।

इस प्रकार श्रीजी के द्वारा होने वाली ब्रह्मलीला में अनेक प्रकार की विवेकपूर्ण बातें होती हैं, जिसका वर्णन मैं अपनी इस एक जिह्वा से कैसे करूँ? मेरी जिह्वा से तो इस लीला का एक शब्द भी यथार्थ रूप से नहीं कहा जा सकता।

महामत कहे ए मोमिनों, ए सातवें पहर की बीतक।
अब कहों पहर आठमा, ताकी सुनों सिफत।।५८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! अभी आपने

सातवें प्रहर में होने वाली ब्रह्मलीला का वृत्तान्त सुना। अब मैं आठवें प्रहर में होने वाली लीला का वर्णन करने जा रहा हूँ, उसकी महिमा सुनिए।

प्रकरण ।।७०।। चौपाई ।।४२४४।।

आठमा पहर

अब कहों पोहोर आठमा, श्री राज पौढ़े पलंग पर।

बानी धाम धनीय की, गरजत सब ऊपर।।१।।

अब मैं आठवें प्रहर, अर्थात् रात्रि ३ बजे से प्रातः के ६ बजे तक, की ब्रह्मलीला का वर्णन करता हूँ। इस समय धाम धनी पलँग पर लेटे होते हैं। अक्षरातीत की यह तारतम वाणी सभी धर्मग्रन्थों के ज्ञान के ऊपर सुशोभित होती है (गर्जना करती है)।

बारी वाले गावत, फिरती चौकी पर।

जिनकी आवे सो गावहीं, रसना मीठी कर।।२।।

वाणी का गायन करने वाले सुन्दरसाथ की मण्डलियाँ अपने समय पर गाती हैं और उनके बाद अन्य मण्डली

(बारी) को अवसर मिलता है। इस प्रकार सभी मण्डलियाँ बदलती रहती हैं। सभी मण्डलियां अपने-अपने समय पर सुमधुर स्वरों में गायन करती हैं।

बानी धाम धनीय की, ए चौदे तबक हैयात।

पहिचान भई न काहू को, रूह पिये हैयाती हो जात।।३।।

अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की यह तारतम वाणी चौदह लोकों के इस ब्रह्माण्ड को अखण्ड मुक्ति देने वाली है। इस वाणी के अभाव में आज दिन तक किसी को भी सच्चिदानन्द परब्रह्म की पहचान नहीं हो सकी थी। इस ब्रह्मवाणी का रसपान करने से आत्मा को अखण्ड आनन्द की प्राप्ति होती है।

आज लों इन इण्ड में, कबहूं काहू सुनी न कान।

कई हुए इण्ड कई होवहीं, पर काहू न बोए पहिचान।।४।।

आज तक इस ब्रह्माण्ड में किसी ने भी कभी भी अक्षरातीत के बारे में नहीं सुना था। यद्यपि अब तक असँख्य ब्रह्माण्ड बन गये तथा भविष्य में भी बनेंगे, किन्तु आज दिन तक तारतम ज्ञान के बिना किसी को भी अक्षरातीत की ज़रा भी पहचान नहीं हो सकी थी।

भावार्थ– धर्मग्रन्थों में अक्षरातीत शब्द तो था, किन्तु तारतम ज्ञान के बिना अब तक कोई भी यह नहीं जान सका है कि वह कहाँ है, कैसा है, और क्या लीला करता है? संसार के लोगों के पास इन प्रश्नों का उत्तर नहीं था। वे अक्षरातीत शब्द पढ़कर मात्र उनकी महिमा का ही गायन करते रहे हैं।

ए सुनने की ताकत, त्रिगुन को ना होए।

और नाम किन के लेऊं, इन उपरान्त सोए।।५।।

इस ब्रह्मवाणी को सुनने की शक्ति त्रिदेवों में भी नहीं है। इस ब्रह्माण्ड में इनसे श्रेष्ठ और कौन है, जिनके नाम लिए जायें?

भावार्थ– माहेश्वर तन्त्र में शँकर जी ने पार्वती जी से कहा कि मैं तुम्हें जो अलौकिक ज्ञान सुना रहा हूँ, इसे तुम कार्तिकेय तथा गणेश को भी न बताना क्योंकि वे इसके पात्र नहीं हैं।

तारतम वाणी की खिल्वत, परिक्रमा, सागर, तथा श्रृंगार में परमधाम के ज्ञान का जो रस है, उसका लाखवाँ अंश भी माहेश्वर तन्त्र में नहीं है। ऐसी स्थिति में इस चौपाई का कथन पूर्णतया सार्थक होता है कि इस ब्रह्मवाणी को सुनने का सामर्थ्य त्रिदेव के पास भी नहीं

है।

सो रस सागर रेलत, कोई ना धरत कान।

एक सैयों की रूह पीवहीं, और काहूं ना पहिचान।।६।।

अक्षरातीत श्रीजी के हृदय में तारतम वाणी का रस सागर की तरह उमड़ रहा है। इसे वे अपनी चर्चा में उड़ेल रहे हैं, लेकिन जीव सृष्टि उसे कभी आत्मसात् नहीं करती। एकमात्र ब्रह्मसृष्टियाँ हीं इसका रसपान करती हैं। इनके अतिरिक्त और कोई भी इस ब्रह्मवाणी की महिमा को समझ नहीं पाता।

कैसी जिकर होत है, किन ठौर पहुंचत।

क्या नफा होत है, ए पहुंचावे कित।।७।।

संसार के जीव यह समझ ही नहीं पाते कि बँगला जी

दरबार में श्रीजी के मुखारविन्द से क्या चर्चा हो रही है? तथा इस तन को छोड़ने के बाद हम कहाँ पहुँचेंगे? इसको सुनने से क्या लाभ होता है तथा यह ब्रह्मवाणी हमें अध्यात्म में किस स्तर तक पहुँचा सकती है?

एह मेहर किन करी, ए हुई किन ऊपर।
किन बरकतें आई इत, कोई पावे न पटन्तर।।८।।

जीवसृष्टि का कोई भी व्यक्ति इस रहस्य को नहीं समझ पाता कि इस ब्रह्मवाणी के रूप में अलौकिक ज्ञान देने की यह कृपा किसने की है, और किसके लिए की गई है, तथा किसकी कृपा से इस मायावी जगत में यह वाणी आई है?

जो पावे ए पटन्तर, ताकी पल न वृथा जाए।

सो इन रस में झीलत, ताको और कछू न सुहाए।।९।।

किन्तु यदि वह इस रहस्य को समझ जाता है, तो उसका एक पल भी माया के कार्यों में व्यर्थ नहीं होगा। वह ब्रह्मवाणी के शाश्वत् आनन्द में स्नान करता है और उसे इसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

ए बैठत ढिग आए के, धरें सुनने को कान।

होत पहिचान रूह की, बढ़त जात ईमान।।१०।।

ऐसा व्यक्ति प्रियतम् अक्षरातीत के चरणों में आ जाता है और वह श्रद्धापूर्वक श्रीजी के मुखारविन्द से होने वाली वाणी चर्चा का रस लेना चाहता है। ऐसा करने पर उसे अपने आत्मिक स्वरूप की पहचान होती है तथा धनी के प्रति उसकी आस्था और विश्वास पल-पल बढ़ता ही

जाता है।

ए बानी इन धाम की, ले बैठावत निजधाम।

सबको सुख उपजे, होए पूरन मनोरथ काम।।११।।

परमधाम की यह वाणी सबकी आत्मिक दृष्टि को परमधाम में ले जाती है, जिससे अखण्ड सुख की अनुभूति होती है और सभी इच्छायें भी पूर्ण हो जाती हैं।

इन बानी से होत है, नजर पड़े बीच बका।

ए रसना स्यामा जीए की, पिलावत रस रब्ब का।।१२।।

प्रियतम अक्षरातीत की यह वाणी हमारी आत्मिक दृष्टि को परमधाम के २५ पक्षों में विचरण कराती है। यह श्री श्यामा जी की रसना है, जो अक्षरातीत के हृदय में बहने वाले प्रेम और आनन्द के रस को सुन्दरसाथ तक

पहुँचाती है।

भावार्थ– इस वाणी को श्री श्यामा जी की रसना कहने का आशय यह है कि श्यामा जी के दूसरे तन (श्री इन्द्रावती के तन) से परमधाम की वाणी का अवतरण हुआ है। वाणी के माध्यम से अक्षरातीत के हृदय का रस सुन्दरसाथ की आत्मा तक पहुँच रहा है।

जो धाम अन्दर की, विहार की मजकूर।
सो अक्षर को सुध नहीं, जो अन्दर का जहूर।।१३।।

अक्षर ब्रह्म को भी इस बात की जानकारी नहीं है कि परमधाम के अन्दर कैसी लीला होती है तथा उसका वास्तविक रहस्य क्या है?

जो अक्षर को सुध नहीं, सो त्रिगुन पास क्यों होए।
सो सब इन बानी में, सुपने नजर पहुंची सोए।।१४।।

जिस बात की सुध अक्षर को नहीं है, तो वह त्रिदेव के पास कैसे हो सकती है? किन्तु इस ब्रह्मवाणी में गोते लगाने वाले व्यक्ति की दृष्टि, इस स्वप्नमयी संसार में रहने पर भी अखण्ड परमधम में पहुँच जाती है।

नजर नाबूद जीव को, सो सुपने में रल जाए।
नींद उड़े उड़त हैं, सुध ना रहवे ताए।।१५।।

आदिनारायण के अंश रूप स्वाप्निक जीव की दृष्टि निराकार में ही लीन हो जाती है। आदिनारायण की नींद के समाप्त होते ही उसका भी अस्तित्व समाप्त हो जाता है। उसे जरा भी अखण्ड की सुधि नहीं हो पाती।

तिन नाबूद की नजर, बीच अखण्ड पहुंचे।

अक्षर ठौर सरूप की, इन बानी से देखे।।१६।।

किन्तु तारतम वाणी के प्रकाश में स्वाप्निक जीव की दृष्टि भी अखण्ड परमधाम में घूमने लगती है तथा उसे अक्षर धाम का भी अनुभव हो जाता है।

जहां जबराईल रह्या, चल सक्या न आगे।

इन बानी की बरकतें, जमुना सातों घाट पहुंचे।।१७।।

जिबरील फरिश्ता अक्षर ब्रह्म के लीला धाम (सत्स्वरूप) से आगे नहीं जा सका, किन्तु इस वाणी की कृपा से माया का जीव भी यमुना जी के सातों घाटों का दीदार कर लेता है।

आगे रसूल तखत पर, रफ रफ के बैठे।

जोए उलंघ आगे चले, देखा धाम ठौर जेठे।।१८।।

मुहम्मद (सल्ल.) सत्स्वरूप से आगे इश्क के तख्त पर विराजमान हुए और यमुना जी को पार कर रँगमहल के अन्दर उन्होंने सर्वोपरि अक्षरातीत का दीदार किया।

इन जुबां के सुर सुनते, सब ठौर आवे नजर।

रूह आतम पहुंचत, ताए हो जात फजर।।१९।।

ब्रह्मवाणी के शब्द जिसके हृदय में पहुँच जाते हैं, उसे ज्ञान दृष्टि से हद से लेकर परमधाम तक का सारा अनुभव होने लगता है और आत्मा की दृष्टि परमधाम पहुँच जाती है। उसके हृदय में अलौकिक ज्ञान का प्रकाश इस प्रकार हो जाता है कि उसकी दृष्टि में इस मायावी जगत का अन्धकार रहता ही नहीं है, बल्कि

आत्म–जाग्रति का सवेरा हो जाता है।

इन बानी के सुनते, आप होत हैयात।
देखें बैठे माया मिने, ठौर बका हक जात।।२०।।

इस ब्रह्मवाणी का रसपान करने वाले अखण्ड आनन्द तथा अखण्ड मुक्ति को प्राप्त होते हैं। वे इस मायावी जगत में रहकर भी अखण्ड परमधाम श्री राज श्यामा जी व सखियों की शोभा को देख लेते हैं।

इन बानी के सुनते, खुलत भिस्त के द्वार।
आप देखे औरों दिखावहीं, पहुंचे नूर द्वार पार।।२१।।

इस ब्रह्मवाणी को सुनने से अखण्ड बहिश्तों की प्राप्ति होती है। सुन्दरसाथ इस ब्रह्मवाणी के प्रकाश में अक्षर धाम से भी परे प्रेम द्वारा परमधाम में पहुँच जाते हैं। वे

स्वयं परमधाम तथा युगल स्वरूप को देखते हैं और दूसरों को भी दिखाते हैं, अर्थात् दिखाने की राह पर ले चलते हैं।

इन बानी की बरकतें, कछू न रहवे सक।
रूहें राजी रहे रात दिन, जाए बैठे कदमों हक।।२२।।

इस ब्रह्मवाणी की कृपा से हृदय में कोई भी संशय नहीं रह जाता। ब्रह्मात्माएँ दिन-रात प्रियतम के प्रेम में आनन्दित रहती हैं और अपनी सुरता (आत्मिक दृष्टि) द्वारा परात्म की भावना से स्वयं को मूल मिलावे में धनी के सम्मुख बैठा हुआ अनुभव करती हैं।

इन बानी की बरकतें, भया जागृत सुपन।
पहिचान काहू ना हुई, पहिले पास आई सैंयन।।२३।।

इस ब्रह्मवाणी की कृपा से स्वप्न के इस ब्रह्माण्ड में भी जाग्रति का अनुभव होने लगता है। आज दिन तक संसार में किसी को भी अक्षरातीत की पहचान नहीं थी। इसलिए मूल सम्बन्ध के कारण यह सबसे पहले ब्रह्मसृष्टियों को प्राप्त हुयी।

तहां से ए संसार में, पसरी चौदे तबक।
बढ़ते बढ़ते बढ़ चली, जाए त्रिगुन पहुंची हक।।२४।।

इन ब्रह्मात्माओं से फैलते-फैलते चौदह लोकों वाले इस समस्त ब्रह्माण्ड में फैल जाएगी। इसका प्रकाश फैलते-फैलते त्रिदेव तक भी जा पहुँचेगा।

विशेष- यह कथन योगमाया के ब्रह्माण्ड में ही पूर्ण रूप से सार्थक होगा।

इन बानी की बरकतें, नींद उड़ी नूर जलाल।

ए याद करे सुपन को, होए के दिल खुसाल।।२५।।

इस वाणी की कृपा से अक्षर ब्रह्म की नींद समाप्त हो जाएगी और वे प्रसन्न होकर स्वप्न के ब्रह्माण्ड में होने वाली जागनी लीला को याद करेंगे।

भावार्थ– श्री महामति जी के धाम हृदय में अक्षर ब्रह्म एवं उनकी जाग्रत बुद्धि भी विराजमान है। तारतम ज्ञान के प्रकाश में ही अक्षर ब्रह्म की जाग्रत बुद्धि को परमधाम की लीला की जानकारी हुई है। इस सम्बन्ध में कलश वाणी में कहा गया है–

मेरी संगतें ऐसी सुधरी, बुध बड़ी हुई अछर।

तारतमें सब सुध पड़ी, लीला अंदर की घर।।

क. हि. २३/१०३

परमधाम की लीला का ज्ञान पाते ही अक्षर ब्रह्म को

अपने मूल स्वरूप का बोध हो गया। इसे ही इस चौपाई के दूसरे चरण में अक्षर ब्रह्म की नींद का उड़ना कहा गया है।

याद करे बानीय को, तब उठे आठों भिस्त।
इन बानी की बरकतें, धाम अन्दर पाई किस्त।।२६।।

तारतम ज्ञान के प्रकाश में ही अक्षर ब्रह्म को भी परमधाम की प्रेममयी लीला की पहचान हो गयी। सातवें दिन की लीला में जब वे जाग्रत होकर इस जागनी लीला को याद करेंगे, तो तारतम ज्ञान के कारण परमधाम की लीला का बोध होने से सत्स्वरूप की दोनों बहिश्तों के साथ सारी आठों बहिश्तें अखण्ड हो जाएँगी।

भावार्थ– व्रज–रास की लीला नींद और अर्द्धजाग्रति में हुई, किन्तु जागनी लीला तारतम ज्ञान के प्रकाश में पूर्ण

जाग्रत ही कही जाएगी। अक्षर ब्रह्म की आत्मा को तारतम ज्ञान के प्रकाश में परमधाम की अष्ट प्रहर की सारी लीलाओं की जानकारी हो चुकी है। सत्स्वरूप की पहली बहिश्त में परमधाम की उन लीलाओं का ही प्रतिबिम्ब झलका करेगा, जिसे अक्षर ब्रह्म जान गये हैं।

जिस प्रकार अक्षर ब्रह्म की आत्मा के द्वारा अपनी परात्म में जाग्रति होने के पश्चात्, व्रज और रास की लीलाओं का स्मरण करने से व्रज और रास की बहिश्त अखण्ड हो गई, इसी प्रकार सातवें दिन की लीला में जब अक्षर ब्रह्म की आत्मा परमधाम की अष्ट प्रहर की लीला को याद करेगी, तो सत्स्वरूप की पहली बहिश्त सहित अन्य सभी बहिश्तें अखण्ड हो जाएँगी।

श्री महामति जी की वृत्त में सातवें दिन की लीला में इस सम्बन्ध में कहा गया है–

छठा दिन जुम्मे का, होवे मोमिन जमा जब।

सातमें दिन अरस में, तुम उठ खड़े हो तब।।

लालदास कृत बड़ी वृत्त ८८/७७

इन बानी की बरकत, मावे न जिमी आसमान।

सुंन छोड़ बका पहुंचे, सो मोमिन सुनके कान।।२७।।

इस ब्रह्मवाणी से होने वाला आत्मिक लाभ तो इतना अधिक है कि वह धरती और आकाश में समा ही नहीं सकता। इस ब्रह्मवाणी को अपने हृदय के कानों से सुनकर ब्रह्मसृष्टियाँ, प्रेम मार्ग द्वारा निराकार को छोड़कर, अपनी सुरता द्वारा अखण्ड परमधाम में पहुँच जाती हैं।

श्री धाम नव भोम है, इन बानी के में।

सो ठौर है अखण्ड, बानी ऐसी कहे सें।।२८।।

इस मायावी जगत में मात्र तारतम ज्ञान के द्वारा ही यह विदित हो सका है कि स्वलीला अद्वैत परमधाम नौ भूमिकाओं तथा दसवीं आकाशी वाला है, और वह शाश्वत अखण्ड भमिका है। इस वाणी के अवतरण से पहले इस सृष्टि में इसका ज्ञान कहीं भी नहीं था।

हौज जोए बाग जानवर, सो इन बानी बीच है सब।

सातों घाट जो पुल हैं, सो सैयां देखें अब।।२९।।

हौज कौसर, यमुना जी, फूल बाग, नूर बाग, नूरमयी जानवर, यमुना जी के किनारे आए हुए सातों घाट, तथा दोनों पुलों– केल पुल एवं वट पुल– का बहुत विस्तृत वर्णन इस तारतम वाणी में है, जबकि कुरआन, पुराण

संहिता, तथा माहेश्वर तन्त्र में सांकेतिक रूप में है। धनी के प्रेम डूबकर सुन्दरसाथ इस नश्वर जगत में भी वहाँ की अनुपम शोभा का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं।

मानक महल पुखराज, और अलंग गिरदवाए।
सो सब बानी बीच में, सैंयन को पहुंचाए।।३०।।

माणिक पहाड़, २४ हाँस का महल, पुखराज पहाड़, और रँगमहल को घेरकर चारों ओर आई हुई बड़ी राँग तथा छोटी राँग की हवेलियों की शोभा का सारा ज्ञान इस वाणी में दर्शाया गया है, जिससे इस नश्वर जगत में भी परमधाम की आत्माओं को वह सारा ज्ञान प्राप्त हो रहा है।

आठों सागर सुख के, बीच टापू महल मोहलात।

सो सब है बानी में, पहुंचावत साथ हैयात।।३१।।

आठों सागरों के मध्य में टापू महलों की अलौकिक शोभा आई है। वस्तुतः ये अनन्त सुख के भण्डार हैं, जिनका सारा वर्णन तारतम वाणी में दिया गया है। जो इन सागरों की शोभा को अपने हृदय में आत्मसात् कर लेता है, वह अखण्ड मुक्ति का सुख प्राप्त कर लेता है।

हक हादी रूहें रहत हैं, सो इन बानी में।

नित विहार करत हैं, सो इन बानी सें।।३२।।

परमधाम में श्री राज जी, श्यामा जी, और सखियाँ अपनी अनन्त शोभा के साथ प्रेम और आनन्द की अखण्ड लीला में निमग्न रहते हैं। उन सबका वर्णन इस तारतम वाणी में दे दिया है।

औलिया लिल्ला कामिल, दोस्त कहे खुदाए।

सो इन बानी बीच में, हमेसा इस्तदाए।।३३।।

इन ब्रह्मात्माओं को कुरआन में औलिया लिल्लाह और खुदा का सच्चा दोस्त कहा गया है। अनादि काल से प्रियतम के साथ लीला करने वाली इन ब्रह्मात्माओं का विशद् वर्णन इस तारतम वाणी में है।

और सिफत कहां लों कहों, पातसाही परवरदिगार।

सो इन बानी बीच में, सब सैयां जानन हार।।३४।।

प्रियतम अक्षरातीत के स्वामित्व की महिमा का मैं कहाँ तक वर्णन करूँ। वह अनन्त है और इस तारतम वाणी में दर्शायी गयी है। इस वाणी के द्वारा परमधाम की आत्माएँ अपने प्रियतम के स्वामित्व को इस मायावी जगत में भी अच्छी तरह से जान गई हैं।

इन बानी की बरकतें, सब दफे होत बलाए।

सदा सैतान कांपत, मिने पैठ न सके ताए।।३५।।

इस वाणी की कृपा से सारी आपत्तियाँ दूर हो जाती हैं तथा अज्ञान रूपी कलियुग (दज्जाल) हमेशा काँपता रहता है। तारतम वाणी के रस में गोता लगाने वाले सुन्दरसाथ के हृदय में वह कदापि प्रवेश नहीं कर सकता।

एह जिकर जुबान सों, करत हैं सब मोमिन।

श्री राज पौढ़े सुनत हैं, नींद न आवे नैनन।।३६।।

ऐसी अनुपम महिमा वाली तारतम वाणी का गायन सुन्दरसाथ अपने मधुर स्वरों से करते रहते हैं तथा श्रीजी की चर्चा को दोहराते रहते हैं। धाम धनी अपनी शैय्या पर लेटे-लेटे सुनते रहते हैं और उनकी आँखों में

नींद नहीं आती।

कछू आंख मिली के ना मिली, फेर सुनत हैं कान।
कोई आगूं पीछूं हरफ कहे, कहें मोमिनों को सुभान।।३७।।

कभी–कभी कुछ पलों के लिए श्रीजी की आँखें बन्द हो जाती हैं, अर्थात् हल्की–सी झपकी ले लेते हैं, और पुनः अपने कानों से सुनने लगते हैं। यदि किसी सुन्दरसाथ ने किसी शब्द को आगे–पीछे भी कह दिया होता है, तो श्रीजी उसी समय उसे टोक देते हैं कि तुम अशुद्ध बोल रहे हो।

ये आगे पीछे क्यों कहया, क्यों गए हरफ भूल।
चुप रहें अरज करें, कहें हमें न आया सूल।।३८।।

तुमने इस शब्द को आगे या पीछे क्यों कहा है? तुम यह

शब्द क्यों भूल गए हो? सुन्दरसाथ श्रीजी के इन वचनों को सुनकर चुप रह जाते हैं और प्रार्थना करते हैं कि धनी! हमें वह पूर्ण रूप से याद नहीं हो पाया था, इसलिए भूल हो गई।

यों करते इन भांत से, बाकी रात रही घड़ी चार।
आया समें बिरत का, गिरोह उठने का करे विचार।।३९।।

इस प्रकार लीला करते हुए रात्रि बीतने में साढ़े चार घड़ी का समय बाकी रहता है, अर्थात् प्रातःकाल के साढ़े चार बज चुके होते हैं। इस समय परमधाम की वृत्त का समय हो जाता है और सुन्दरसाथ निद्रा से उठने का विचार कर रहा होता है।

सरूप मुरलीधर कह के, करे साथ को प्रणाम।

साथ सब कोई उठे, अपने देह क्रिया के काम।।४०।।

मुरलीधर जी प्रातःकाल का स्वरूप पढ़कर सब सुन्दरसाथ को प्रणाम करते हैं। इस समय सब सुन्दरसाथ शौच तथा स्नान आदि क्रियाओं के लिए उठ गए होते हैं।

कोई नींद करत हैं, कोई सुनने चाहें विरत।

उठे लालदास कहने को, पहले मंगला आरती के इत।।४१।।

इस समय कोई सुन्दरसाथ सोया भी रहता है, तो कोई परमधाम की वृत्त (चर्चनी) सुनना चाहता है। प्रातःकाल की मँगल आरती से पूर्व ही श्री लालदास जी अपनी शैय्या छोड़कर उठ जाते हैं, ताकि मँगल आरती के पश्चात् वे परमधाम की वृत्त सुना सकें।

मंगल आरती के समय में, साथ नेष्टाबन्ध आवे इत।
आरती सब मिल कर के, फेर बैठ के सुने विरत।।४२।।

मँगल आरती के समय सुन्दरसाथ निष्ठाबद्ध होकर आता है। सब सुन्दरसाथ मिलकर आरती करते हैं और उसके पश्चात् परमधाम की वृत्त सुनने के लिए बैठ जाते हैं।

सोवते सुन विरत को, बैठे आए के इत।
सावचेत सब दिल दे, होए बैठे जाग्रत।।४३।।

जो सुन्दरसाथ अभी तक सो रहे होते हैं, वे वृत्त का वर्णन सुनकर उठ जाते हैं और जहाँ वर्णन हो रहा होता है, वहाँ आकर बैठ जाते हैं। सब सुन्दरसाथ निद्रा छोड़कर पूर्ण रूप से जाग्रत हो जाते हैं और सावधान होकर एकाग्र मन से परमधाम की वृत्त का वर्णन सुनते

हैं।

इत पहिले हंसे के घर में, बिरत का उठा अंकूर।
जेंनती गिरोह मिलाय के, करते थे मजकूर।।४४।।

सबसे पहले हँसे भाई के घर से परमधाम की वृत्त का वर्णन सुनाना प्रारम्भ हुआ था। जयन्ती काका सुन्दरसाथ को एकत्रित करके परमधाम की वृत्त की चर्चा किया करते थे।

तहां सेती लई लाल नें, ए मेहर हक सुभान।
फेर एक एक दिन सबों कही, जिनको जेती पहिचान।।४५।।

श्री राज जी की मेहर से वहाँ से यह सेवा श्री लालदास जी ने ले ली। पुनः प्रत्येक दिन एक–एक सुन्दरसाथ ने परमधाम की वृत्त को जितना समझा, उतना कहने की

सेवा ली।

वृन्दावन के घर में, कोई दिन कही विरत।

साथ सब उत बैठ के, कस्त जो करते इत।।४६।।

वृन्दावन के घर में कुछ दिनों तक परमधाम की वृत्त कहने की प्रक्रिया चली। सब सुन्दरसाथ वहाँ पर बैठकर परमधाम के २५ पक्षों को हृदयंगम करने के लिए परिश्रम करते थे।

भावार्थ- परमधाम के पच्चीस पक्षों के वर्णन को "वृत्त" कहने का एक विशेष प्रयोजन है। जिस प्रकार किसी वृत्त का प्रत्येक बिंदु वृत्त के केन्द्र से समान दूरी पर होता है, उसी प्रकार परम सत्य (मारिफत) स्वरूप अक्षरातीत का हृदय ही परमधाम के २५ पक्षों सत्य (हकीकत) के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। सभी भागों में एकत्व

(वहदत) का साम्राज्य है, अर्थात् सभी भागों का तेज, सौन्दर्य, सुगन्धि, लीला, प्रेम और आनन्द एक समान है, रंचमात्र भी अन्तर नहीं है, और सबके मूल (केन्द्र) में एक ही अक्षरातीत श्री राज जी हैं। इसी भाव को दर्शाने के लिए परमधाम के २५ पक्षों के वर्णन को "वृत्त" या "चर्चनी" कहते हैं।

अग्यारहीं जोलों रही, दिल बड़ो चाह धरे।
फेर ठंडे पड़ते गए कहे लाल अंग ठरे।।४७।।

११वीं सदी के अन्त अर्थात् वि.सं. १७४५ तक सुन्दरसाथ के दिल में परमधाम के २५ पक्षों के ज्ञान को ग्रहण करने की बहुत अधिक उमंग रही। उसके पश्चात् धीरे-धीरे उनके उत्साह में कमी आती गई। श्री लालदास जी कहते हैं कि अब तो उनके अंग बर्फ की

तरह शीतल हो गए हैं, अर्थात् परमधाम के २५ पक्षों का वर्णन समझने की कोई चाहत नहीं रह गई।

भावार्थ–

"तीसे सृष्ट विष्णु सौ बरसे, प्रेमे पीवेगा शब्दों का सार।"

किरंतन ५४/१६ के इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि १७४५ से १७७५ तक इन तीस वर्षों में ईश्वरीय सृष्टि की जागनी का वर्चस्व रहा और ज्ञान की प्रधानता रही। १७७५ से शेष ७०वर्षों में जीव सृष्टि का साम्राज्य हो गया, जिसमें केवल कर्मकाण्ड की प्रधानता रही। चितवनि और परमधाम की चर्चनी नाम मात्र को ही रह गई।

तारतम वाणी के अवतरण को आज ३२२ वर्षों के पश्चात् स्थिति और भी विकट हो गयी है। खड़ाऊँ, वृक्ष, समाधि, मूर्ति, और चित्र–पूजा के युग में चितवनि और

चर्चनी का अस्तित्व तो उस टिमटिमाते हुए दीपक की तरह हो गया है, जो विवादों, रूढ़िवादिता, एवं अशिक्षा की हवा के तेज झोंको के बीच कभी भी बुझने के लिए तैयार बैठा है।

लालें दई मकरन्द को, फेर लई लाल खान।
ये तीन फिरते कहे, श्री राज सुनत है कान।।४८।।

श्री लालदास जी ने मकरन्द जी को परमधाम की वृत्त सुनाने की सेवा दी। पुनः उनसे लाल खान ने ले ली। ये तीनों सुन्दरसाथ अपनी-अपनी बारी में परमधाम का वर्णन सुनाते हैं और श्रीजी लेटे-लेटे उसे सुनते रहते हैं।

बहुत खुसाल होत है, सुन धाम बिरत प्रात।
उठ बैठे सेज्या पर, कानों सुनें विख्यात।।४९।।

श्रीजी प्रातःकाल सुन्दरसाथ के मुख से परमधाम का वर्णन सुनकर बहुत प्रसन्न होते हैं। वे अपनी सेज पर उठ बैठते हैं और अपने कानों से प्रत्यक्ष रूप में सुनते हैं।

पीवत कहवा मंगाए के, बिरत सुनत जात हैं कान।
देख मेहर हक सुभान की, करावत है पहिचान।।५०।।

श्रीजी उस समय दालचीनी, अदरक, लोंग, इलायची, मिश्री, आदि औषधियों का काढ़ा मँगाकर पीते हैं तथा साथ ही साथ सुन्दरसाथ के द्वारा कहा हुआ परमधाम के २५ पक्षों का वर्णन भी सुनते जाते हैं। हे साथ जी! धाम धनी की इस मेहर को आप देखिए कि किस प्रकार ज्ञान के द्वारा वे अपनी पहचान करा रहे हैं।

आवे महावजी इन समें, नेष्टा लेकर दिल।

बिरत कहने वाले ढिग बैठत, अंग दाबें हिल मिल।।५१।।

इस समय महाव जी भाई अपने हृदय में धनी के प्रति अटूट निष्ठा लेकर आते हैं और जिस सुन्दरसाथ ने परमधाम की वृत्त सुनाई होती हैं, उनके पास बैठकर बहुत प्रेम से उनके अँगों को दबाने की सेवा करते हैं।

जो कोई बिरत कहे, करे सेवा ताए।

आवें पिछली रात को, एही हेत दिल ल्याए।।५२।।

जो भी सुन्दरसाथ परमधाम के २५ पक्षों की शोभा का वर्णन करते हैं, महाव जी भाई उनकी सेवा करते हैं। वे अपने दिल में इसी प्रेम भरी सेवा का भाव लेकर रात बीतने से पहले ही बँगला जी में आ जाते हैं।

और मोहन दास आवत, और मोदी मूलचन्द।

नेष्टा ए ना छोड़ही, ले दिल में आनन्द।।५३।।

चर्चनी सुनने के लिए मोहन दास जी और मूलचन्द मोदी निष्ठाबद्ध होकर आते हैं। परमधाम की वृत्त सुनने के पश्चात् इनके हृदय में बहुत अधिक आनन्द होता है।

और गोविन्द दास आवत, और इन पीछे सब कोए।

आवत सुनने सरूप को, आनन्द अंग में होए।।५४।।

मुरलीधर जी के द्वारा कहे जाने वाले प्रातःकाल के स्वरूप को सुनने के लिए गोविन्द दास जी आते हैं। इनका अनुकरण करके परिवार के सब सदस्य भी आने लगे। इनके हृदय में श्री राज जी का स्वरूप सुनकर बहुत आनन्द होता है।

धाम की गिरद कहके, फेर अन्दर पैठे।

चारों चौक उलंघ के, पहुंचे पांचवे चौके।।५५।।

परमधाम के वृत्त का वर्णन करने वाले सुन्दरसाथ रँगमहल के चारों ओर की बाह्य शोभा चाँदनी चौक , वट-पीपल की चौकी, फूल बाग, नूर बाग, लाल चबूतरा, ताड़वन, आदि का संक्षिप्त वर्णन करके पुनः रँगमहल के अन्दर प्रवेश करते हैं और चार चौरस हवेलियों को पार करके पाँचवी गोल हवेली मूल मिलावे का वर्णन करते हैं।

कहे चौसठ थंभ फिरते, चन्द्रवा दुलीचे।

सिंहासन के ऊपर, जुगल किसोर बैठत।।५६।।

मूल मिलावे में एक गोल चबूतरे के ऊपर चारों तरफ ६४ थम्भ घेरकर आए हैं, उसके ऊपर चन्द्रवा है, और

नीचे पशमी गिलम बिछी हुई है। चबूतरे के मध्य में कञ्चन रँग का सिंहासन है, जिस पर श्री राज श्यामा जी विराजमान हैं।

साथ गिर्दवाए घेर के, बैठे चबूतरे भर।
सब भूखन वस्तर, बरनन होत चित धर।।५७।।

सुन्दरसाथ युगल स्वरूप को चारों ओर से घेरकर सम्पूर्ण चबूतरे पर बैठा हुआ है। युगल स्वरूप के वस्त्रों और आभूषणों का वर्णन होता है, जिसे सुन्दरसाथ अपने हृदय में बसाते हैं।

फेर चौक गिरद के, गिरद छज्जे बन मोहोलात।
फेर लेत दूसरी भोम को, फेर तीसरी चढ़ जात।।५८।।

पुनः मूल मिलावे के चारों चौकों का वर्णन करते हैं।

रँगमहल के छज्ञों, वनों, तथा महलों की शोभा का वर्णन करते हैं। इसके बाद दूसरी भूमिका में भुलवनी के मन्दिरों का वर्णन करते हैं। तत्पश्चात् तीसरी भूमिका की पड़साल का वर्णन किया जाता है।

चौथी निरत की बरनन होत है, पैठे पौंढ़न पांचमी में।
फेर छठी सुखपाल की, हिंडोले झूलें सातमी ऐ।।५९।।

चौथी भूमिका में चार चौरस हवेलियों की चौथी हवेली में नृत्य की लीला होती है, जिसका अति सुन्दर वर्णन किया जाता है। पाँचवी भूमिका में शयन लीला होती है। छठी भूमिका के वर्णन में सुखपालों की शोभा का वर्णन होता है, जो बाहर के मन्दिरों की हार छोड़कर पहली गली में दहलान में आए हैं। सातवीं भूमिका में हिण्डोलों की मनोरम शोभा आई है।

खट छप्पर है आठमी, नोंमी पे सिंहासन।

तहां बैठे गिरद देखहीं, बहुत झलकत नूर रोसन।।६०।।

आठवीं भूमिका में खट् छप्पर के हिंडोले हैं, जहाँ चारों तरफ की ताली पड़ती है। नवमीं भूमिका में बाहरी हार मन्दिरों के स्थान पर दहलानें आयी हैं, जिसमें सिंहासन रखे हैं। इन सिंहासनों पर बैठकर सखियाँ परमधाम के चारों ओर का दृश्य देखती हैं। परमधाम में चारों ओर नूर ही नूर की झलकार हो रही होती है।

जब पूरब तरफ बैठत, तब देखत सातों घाट।

और ठौर अक्षर की, वार न पार इन ठाट।।६१।।

जब नवमी भूमिका में युगल स्वरूप सहित सुन्दरसाथ पूर्व दिशा में बैठते हैं, तो यमुना जी के सातों घाट और अक्षर धाम को देखते हैं, जिसकी शोभा की कोई सीमा

ही नहीं है।

बट पीपल चौकी बैठहीं, मानक और पुखराज।

या बीच धाम तालाब, इहां खेले सैंया संग राज।।६२।।

दक्षिण की ओर बैठकर वट-पीपल की चौकी तथा माणिक पहाड़ की शोभा देखते हैं। उत्तर की दिशा में बैठने पर पुखराज पहाड़ दिखायी देता है, जिसका वर्णन किया जाता है। रँगमहल तथा माणिक पहाड़ के बीच हौज कौसर ताल है, जहाँ ब्रह्मात्माएँ युगल स्वरूप के साथ तरह-तरह की आनन्दमयी लीलायें करती हैं।

तालाब मानक बीच में, चौबीस फुहारे उछलत।

चौबीस गुरजों चादरें, कुण्ड लहरें तलाबे इत।।६३।।

हौज कौसर ताल और माणिक पहाड़ के बीच में २४

हाँस का महल आता है। यहाँ २४ गुर्जों से जल के २४ फव्वारे चादरों के रूप में २४ कुण्डों में गिरते हैं। कुण्डों से होकर नहरें हौज कौसर ताल में जाती हैं।

फेर मानक वर्णन होत है, गिरद फिरत हवेली ए।
दोई बीच में दरवाजे, एक गिरद चौखूनी के।।६४।।

इसके पश्चात् माणिक पहाड़ का वर्णन होता है। पहले माणिक पहाड़ के अन्दर चारों ओर घूमकर आई हुई चौरस तथा गोल हवेलियों का वर्णन होता है। पुनः उन हवेलियों के बीच जो आमने-सामने दरवाजे आए हैं, उनकी शोभा दर्शायी जाती है।

फेर गिरद के हिंडोलें, जहां बैठे बारे हजार।
नेहरां दोऊ बाजू देहुरे, सैयां रमते करें करार।।६५।।

इसके पश्चात् माणिक पहाड़ को घेरकर आए हुए बड़े हिण्डोलों की शोभा सुनाई जाती है। जिनके ऊपर धाम धनी अपनी अँगनाओं के साथ बैठकर झूला झूलते हैं। महानद के दोनों किनारों पर छोटी-छोटी देहुरियाँ आई हैं, जहाँ धाम धनी के साथ क्रीड़ा करती हुई सखियाँ अत्यधिक आनन्द का अनुभव करती हैं।

नहरे चार आठ कहूं बारह, फेर आवें वन मोहोलात।
आगे मैदान देख के, खेले चौगान में इत।।६६।।

इसके पश्चात् महानद से आगे वन की नहरों का वर्णन होता है, जहाँ चार, आठ, और कहीं बारह नहरों की शोभा आयी है। इसके पश्चात् छोटी राँग में आये हुये वन के महलों की शोभा दर्शायी जाती है। तत्पश्चात् रँगमहल की पश्चिम दिशा में पश्चिम की चौगान आयी है, जिसमें

धाम धनी के साथ ब्रह्मात्मायें तरह–तरह की क्रीड़ायें किया करती हैं।

फेर अलंग बरनन करें, चार हार सोलह दरबार।
आठों सागर टापू बीच में, खेले परवरदिगार।।६७।।

पुनः वे चार–हार हवेलियों का वर्णन करते हुए इन हवेलियों के सामने आए हुए सोलह दरबार का वर्णन करते हैं। पुनः आठों सागरों के बीच में आए हुए टापू महलों का वर्णन किया जाता है।

फेर नवमी भोम से, जाए पहुंचे दसमी आकास।
तहां से तले चौक पांचमां, रूहें स्याम स्यामा जी खास।।६८।।

इसके पश्चात् रँगमहल की नवमीं भूमिका से दसवीं आकाशी में जाते हैं। वहाँ से पुनः पहली भूमिका की

पाँचवी हवेली मूल मिलावे में प्रवेश करते हैं, जहाँ युगल स्वरूप के सम्मुख सभी ब्रह्माँगनायें बैठी हुई हैं।

चारों चौक उलंघ के, आए पहुंचे बीच द्वार।

फेर आगे आए देखे चांदनी, दोऊ चबूतरों खेलनहार।।६९।।

पुनः मूल मिलावे से पूर्व की ओर चार चौरस हवेलियों को पार करने के पश्चात् मुख्य द्वार पर आ जाते हैं। फिर आगे आकर चाँदनी चौक की शोभा को देखते हैं, जिसके अन्दर दोनों चबूतरों पर लाल और हरे वृक्ष आए हैं। इन दोनों चबूतरों पर धाम धनी के साथ ब्रह्माँगनायें क्रीड़ा करती हैं।

सातों घाट फेर के, दोउ पुलों ऊपर जुमना।।

चल आगे पीछे मरोर खाई, पहुंची तालाब में लेहरां।।७०।।

इसके पश्चात् यमुना जी के सातों घाटों केल, लिबोई, अनार, अमृत, जाम्बू, नारंगी, वट, तथा दोनों पुलों– केल एवं वट– की शोभा का वर्णन किया जाता है। यमुना जी मूल कुण्ड से निकलकर आधी ढँपी तथा आधी खुली चलकर, दक्षिण दिशा में मुड़कर सातों घाटों के सामने से होती हुई, पश्चिम दिशा में मुड़कर हौज कौसर ताल में प्रवेश कर जाती है।

गिरद तालाब टापू बरनन, बन चौफेर गिरदवाए।
अन्न बन लगता आगे दूब बन, सब जरद रंग सोभाए।।७१।।

हौज कौसर के मध्य में टापू महल आया है। इसको चारों ओर से घेरकर वन की शोभा आई हुई है। इसके पश्चात् रँगमहल से पश्चिम दिशा में आए हुए अन्न वन और दूब दुलीचा का वर्णन सुनाया जाता है, जहाँ पीले रँग की

शोभा दृष्टिगोचार हो रही है।

इन आगे मैदान है, फेर फूलबाग करें नजर।

सौ बाग तले सौ ऊपर, सोभा सुनते हो जाए फजर।।७२।।

इसके आगे पश्चिम की चौगान आई है। पुनः पूर्व दिशा में आए हुए फूल बाग एवं नूर बाग की शोभा का वर्णन किया जाता है, जिसमें १०० बाग नीचे नूर बाग के और १०० बाग ऊपर फूल बाग के आए हैं। इस शोभा का वर्णन सुनकर उसे आत्मसात् कर लेने पर, हृदय से माया का अन्धकार निकल जाता है और उसमें आत्म-जाग्रति का उजाला फैल जाता है।

फेर लाल चबूतरे आए के, आए चारों बन पुखराज।

हजार गुरज गिर्दवाए, चारों दरवाजे खेले श्री राज।।७३।।

पुनः रँगमहल की उत्तर दिशा में स्थित लाल चबूतरे का वर्णन किया जाता है, जो १२०० मन्दिर लम्बा और ३० मन्दिर चौड़ा है। इसके आगे चार वन– ताड़वन, मधुवन, बड़ोवन, और महावन– आए हैं, जो पुखराज पहाड़ के पास तक चले गए हैं। हजार हाँस वाले पुखराज के चबूतरे को घेरकर हजार गुर्ज आए हैं। इसके चारों तरफ चार दरवाजों में होकर धाम धनी अपनी अँगनाओं के साथ प्रेममयी लीलायें करते हैं।

आठ पेड़ पुखराज के, तले बंगले जमुना मूल।
आगे पटी जमुना खुली, मरोर खाए मिली पुल मूल।।७४।।

पुखराज के आठ पेड़ इस प्रकार आए हैं– पाँच पेड़ पुखराज के खजाने की ताल से, पश्चिम और उत्तर की दो घाटियाँ, तथा तीसरा पुखराजी ताल। नीचे बँगलों के

महल हैं, जहाँ से यमुना जी निकलती हैं, और पुनः आगे चलकर आधी ढँपी तथा आधी खुली होकर दक्षिण दिशा में मुड़कर, दो पुलों– केल तथा वट– से होती हुई पुनः पश्चिम दिशा में मुड़कर हौज कौसर में मिल जाती है।

दोनों पुलों बीच में, सातों घाट कहे।
छुटक देहुरी तिन में, आगे चली तालाबें ये।।७५।।

यमुना जी पर आये हुए केल पुल तथा वट पुल के बीच में सात घाटों की शोभा दृष्टिगोचर हो रही है। इन दोनों पुलों के बीच में यमुना जी के दोनों किनारों पर सात घाटों की सन्धियों में छूटक –छूटक दयोहरियाँ बनी हुई हैं। यमुना जी यहाँ से आगे चलकर, पश्चिम में मुड़कर, हौज–कौसर में मिल जाती है।

भावार्थ– सातों घाटों की सन्धि में जल रौंस पर

दयोहरियां आई हैं, जिनके बीच में एक–एक चबूतरा आया है। प्रत्येक दयोहरी के पश्चात् एक चबूतरे की जगह छोड़कर दूसरी दयोहरी आई है, इसलिए इसे छूटक दयोहरी कहते हैं।

कुंजबन इन बीच में, ए विरत होत बरनन।
दिन रह्या पोहोर पीछला, श्री राज स्यामा जी उठ बैठे सैंयन।।७६।।

वट के घाट तथा हौज कौसर की पूर्व में आए हुए १६ देहुरी के घाट के बीच में कुँज–निकुँज की शोभा दिखायी दे रही है। इस प्रकार परमधाम की वृत्त का वर्णन होता रहता है। जब परमधाम में पिछला दिन एक प्रहर शेष रह जाता है, तब श्री राज श्यामा जी तीसरी भूमिका के नीले–पीले मन्दिर से उठकर जैसे ही विराजमान होते हैं, सब सखियाँ आकर उनके चरणों में प्रणाम करती हैं।

कौन घाट आज जाएंगे, पूछ के पहुंचे तित।

एक पहर बिलास किया, दोए पहर बिहरत।।७७।।

तब धाम धनी श्यामा जी से कहते हैं कि सखियों से पूछिए कि आज कौन से घाट चलना है? सखियों के बताने पर युगल स्वरूप उनके साथ वहाँ पहुँच जाते हैं। वनों में दो प्रहर तक लीला होती है, जिसमें एक प्रहर तक प्रेममयी लीला होती है।

भावार्थ– यह प्रसंग शुक्ल पक्ष की रात्रि का है। युगल स्वरूप सखियों के साथ तीन बजे सुखपालों से इच्छित स्थान की ओर प्रस्थान करते हैं। वहाँ छः घड़ी तक तरह-तरह की क्रीड़ायें करते हैं। दो घड़ी दिन शेष रहने पर एक घड़ी झीलना करते हैं तथा एक घड़ी में श्रृँगार करते हैं। इसके पश्चात् एक प्रहर रात्रि तक तरह-तरह की प्रेममयी लीलायें करते हैं। पुनः सुखपालों से पाँचवी

भोम के झरोखे में आते हैं।

फेर पौढ़े पांचमी, प्रात उठे इन ठौर।

तीसरी भोम पधारत, ए सोभा है जोर।।७८।।

वनों से सीधा आकर पाँचवी भूमिका के प्रवाली रंग वाले मन्दिर में शयन करते हैं। प्रातःकाल वहाँ से उठकर तीसरी भूमिका की पड़साल में आकर विराजमान होते हैं, जिसकी शोभा अनुपम है।

आरोग पौढ़े भोम तीसरी, खेलें चौक में साथ।

श्री राजें आज चित धरी, खेल दिखाऊं पकड़ हाथ।।७९।।

तीसरी भूमिका की पड़साल में युगल स्वरूप भोजन करके विश्राम करते हैं। इस समय सभी सखियाँ रँगमहल के आसपास के स्थानों (चौकों) में क्रीड़ा करने जाती हैं।

जब परमधाम में इश्क रब्द बहुत अधिक बढ़ गया, तो धाम धनी ने आज ही के दिन अपने चित्त में ले लिया कि मैं इन्हें अपने चरणों में बैठाकर माया का खेल दिखाऊँगा।

भावार्थ– इस चौपाई के चौथे चरण में "हाथ पकड़कर खेल दिखाने" का तात्पर्य यह है कि धाम धनी ने हमें परमधाम में अपने चरणों में बैठा रखा है और इस नश्वर जगत में भी हमारी प्राणनली (साहरग) से अधिक निकट हैं। "ये दोऊ तन तले कदम के, आतम परआतम" का कथन भी इसी सन्दर्भ में किया गया है।

खेल दिखावन की, जो भई रद–बदल इसक।

भूत भविष्य और वर्तमान, सब ये देखाया हक।।८०।।

परमधाम में होने वाला इश्क रब्द ही खेल दिखाने का

मुख्य कारण बना। हमने अतीत में जो व्रज और रास की लीलायें की हैं, वर्तमान में हम जागनी ब्रह्माण्ड में रह रहे हैं, तथा भविष्य में सातवें दिन की लीला में जो कुछ होगा, वह सब कुछ धाम धनी ने अपने दिल में पहले ही ले लिया है और उसी के अनुसार यहाँ होता जा रहा है।

फेर इस्क रब्द खिलवत की, मजकूर करी मोमिन।
आए तले बिराजत, होए आप में चेतन।।८१।।

इसके पश्चात् सखियों ने भी परमधाम में होने वाले इश्क रब्द का निर्णय हो जाना स्वीकार कर लिया और युगल स्वरूप सहित सभी सखियाँ मूल मिलावे में आकर बैठ गईं तथा खेल के प्रति सावचेत हो गईं।

इच्छा भई भगवान पर, आए बीच सुपन।

फेर रूहों पर हुकम हुआ, ब्रज में भए एक ठौर सैंयन।।८२।।

उधर अक्षर ब्रह्म के अन्दर भी परमधाम की प्रेममयी लीला देखने की इच्छा प्रकट हो गई। इसलिए उन्हें भी इस खेल में धनी के जोश–आवेश के साथ आना पड़ा। धाम धनी के आदेश से सखियों को लीला करने के लिए व्रज में एक ही जगह आना पड़ा।

अग्यारे बरस बावन दिन, पीछे पहुंचे वृन्दावन।

एक रात तहां रहे, फेर तीसरा उत्पन।।८३।।

व्रज में ११ वर्ष ५२ दिन तक लीला करने के पश्चात्, धाम धनी योगमाया के ब्रह्माण्ड में नित्य वृन्दावन पहुँचे। वहाँ महारास की एक रात्रि की लीला की। उसके पश्चात् परमधाम चले गए। सखियों की माया देखने की इच्छा

पूरी न होने के कारण, उन्हें पुनः इस तीसरे ब्रह्माण्ड में आना पड़ा।

तहां रास लीला कर के, आए बरारब स्याम।

त्रेसठ बरस तहां रहे, वायदा किया इस ठाम।।८४।।

रास लीला करने के पश्चात् अक्षर की आत्मा के साथ धनी का जोश अरब में आया। वहाँ ६३ वर्ष लीला करके कुरआन का ज्ञान अवतरित किया तथा कियामत के समय ११वीं सदी में पुनः आने का वायदा किया।

रूह अल्ला आए दसमी मिने, रहे बरस चौहत्तर।

ताए तीन सौ तेरे मिली, पाई कुरान में पटन्तर।।८५।।

श्री श्यामा जी १०वीं सदी में आईं। उन्होंने श्री देवचन्द्र जी के तन में विराजमान होकर ७४ वर्षों तक लीला की।

उन्हें ३१३ आत्मायें मिलीं। यह रहस्य कुरआन के पारा ३, सूरा आले इम्रान, आयत ३९ में वर्णित है।

ए संक्षेप बिरत का, एक एक कह्या सुकन।
विस्तार इत बहुत है, सब ठौर पावें मोमिन।।८६।।

यह संक्षेप में परमधाम की वृत्त सुनाए जाने का प्रसंग है। इसमें २५ पक्षों के मुख्य–मुख्य प्रसंगों का वर्णन है। यद्यपि चर्चनी का विस्तार तो बहुत अधिक है और तारतम वाणी के द्वारा उसके २५ पक्षों का ज्ञान भी हो गया है, इसलिए यहाँ बहुत थोड़े में संकेत किया गया है।

ए बिरत श्री राज सुनत हैं, तब होत अरून उदे।
सब सेवा में सनमुख, हुआ प्रात को समें।।८७।।

श्रीजी परमधाम की इस वृत्त को सुनते रहते हैं, तब

तक पूर्व दिशा में लालिमा छा जाती है और प्रातःकाल हो जाता है। उस समय धनी की सेवा करने वाले सभी सुन्दरसाथ उपस्थित हो जाते हैं।

महामत कहें ऐ मोमिनों, ए आठों पहर की बीतक।
अब सरूप साथ को देत हैं, सो कहूं सोभा हक।।८८।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! श्री पद्मावती पुरी धाम में सुन्दरसाथ ने श्री प्राणनाथ जी को पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत मानकर परमधाम के भाव से आठों प्रहर रिझाया, उसका प्रत्यक्ष वर्णन आपने अभी सुना। अब उन्होंने बाह्य रूप से अपनी लीला को छिपा लिया है। अब वे छठे दिन की लीला में ब्रह्मात्माओं के धाम हृदय में विराजमान होकर स्वयं ही जागनी लीला कर रहे हैं। धाम धनी जी के द्वारा सुन्दरसाथ को छठे

दिन में दी जाने वाली इस शोभा को मैं कह रहा हूँ।

प्रकरण ।।७१।। चौपाई ।।४३३२।।

छत्तीस कारखानों की सेवा

दिन आठों पहर की, कही बिरत जो ए।

नित कारखाने सेवहीं, कहूं साथी सब सेवन के।।१।।

हे साथ जी! श्री पद्मावती पुरी धाम में सुन्दरसाथ ने श्रीजी को अक्षरातीत मानकर जिस तरह से आठों प्रहर रिझाया, उसका मैंने यह वर्णन कर दिया। अब अलग-अलग विभागों में जो सुन्दरसाथ सेवा करते थे, उनका मैं वर्णन कर रहा हूँ।

मूल कुल दीवान गिरी, थी सेवा गरीब दास।

सो नित अरज करें, अब चले न सेवा मों पास।।२।।

सभी सुन्दरसाथ की सेवा की सारी व्यवस्था गरीब दास जी के पास रहा करती थी। वे प्रतिदिन धाम धनी से

प्रार्थना करते थे कि हे धाम धनी! अब मुझसे व्यवस्था का उत्तरदायित्व सँभाला नहीं जा रहा।

एह तुम देओ और को, मजल राम नगर।

कही बहुत आतुर होए के, तब हुआ हुकम लाल पर।।३।।

यह व्यवस्था आप किसी और को दे दीजिए। रामनगर में जब गरीब दास जी ने बहुत व्याकुल होकर श्रीजी से आग्रह किया, तब उन्होंने श्री लालदास जी को व्यवस्था सम्भालने के लिए आदेश दिया।

गढ़े से हुकम हुआ, पातसाह के हजूर।

तब वृन्दावन को दई, जान के काम जरूर।।४।।

गढ़ा में श्रीजी ने श्री लालदास जी को औरंगजेब बादशाह के पास जाने का आदेश दिया था। उस समय

अति आवश्यक कार्यवश लालदास जी के जाने के कारण यह व्यवस्था वृन्दावन जी के हाथ में दे दी गई।

लाल का रहना हुआ, हुकम ना हुआ सो तेह।
सुनी ए साकुण्डल ने, परने जाए कहो एह।।५।।

अचानक श्री लालदास जी का औरंगज़ेब के पास जाने का कार्यक्रम नहीं हुआ क्योंकि कुरआन में साक्षी मिल जाने के बाद धाम धनी ने उन्हें न जाने का निर्देश दिया। महाराजा छत्रशाल जी ने देवकरण जी के माध्यम से श्रीजी के आने की जानकारी प्राप्त कर ली थी। इसलिए श्री प्राणनाथ जी ने श्री लालदास जी को पन्ना जाकर छत्रशाल जी को प्रबोधित करने के लिए कहा।

तब लालदास को पठाए, ले परने को पैगाम।

महाराजा सों मिल के, किया बुलावने को काम।।६।।

तब धाम धनी ने अपना सन्देश देकर लालदास जी को पन्ना जी भेजा। श्री लालदास जी ने महाराजा छत्रसाल जी से मिलकर उन्हें सन्तुष्ट किया , जिसके परिणामस्वरूप महाराजा छत्रशाल जी ने लालदास जी से आग्रह किया कि आप श्रीजी को यहाँ बुलाकर लाएँ।

आए पहुंचे परना में, लाल चले ना तब।

तब छोड़ी वृन्दावन नें, सौंपी लाल को सब।।७।।

जब श्रीजी पन्ना जी आ गए, तब श्री लालदास जी औरंगज़ेब को सन्देश देने नहीं जा सके। तब वृन्दावन जी ने सुन्दरसाथ की व्यवस्था का उत्तरदायित्व लालदास जी को सौंप दिया।

दे पठई कुंजी को, लाल को हुआ हुकम।

एह आई आज्ञा से, सेवा करो अब तुम।।८।।

लालदास जी को कुञ्जी देकर श्रीजी ने सब सुन्दरसाथ की सेवा का उत्तरदायित्व सम्भालने का आदेश दिया कि अब तुम्हें मेरे आदेश से यह सेवा सम्भालनी होगी।

मूल छत्तीस कारखाने का, सब दिया हाथ लाल के।

जिनको जो कछू चाहिए, सो सबों पहुंचावे ये।।९।।

सुन्दरसाथ की सेवा को सुचारू रूप से चलाने के लिए पहले से जो ३६ विभाग बनाए गए थे, श्रीजी ने उन सबको निर्देशित करने का अधिकार लालदास जी के हाथों में सौंप दिया। सुन्दरसाथ को आवश्यकतानुसार हर सुविधा को उपलब्ध कराना इन ३६ कारखानों का उदेश्य था।

एक मूल श्री बाई जी के, सब पहुंचावें साज।

बस्तर जो पहिनन के, तुमें क्या चाहियत हैं आज।।१०।।

श्री बाई जी के पहनने के लिए वस्त्र आदि सभी आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति लालदास जी स्वयं किया करते हैं। वे श्री बाई जी के पास जाकर स्वयं पूछते थे कि आज आपको क्या चाहिए?

दोनों सरूप और साथ के, सब बस्तर भूषन।

पहुंचावे सनेह सों, नित नित रंग नौतन।।११।।

श्रीजी, श्री बाई जी, तथा अन्य सभी सुन्दरसाथ के लिए वस्त्र, आभूषण, आदि की व्यवस्था स्वयं श्री लालदास जी करते थे। वे प्रतिदिन नए-नए भावों से बहुत प्रेमपूर्वक यह सेवा करते थे।

और अनाज सब जात के, साक तरकारी सब।

मेवा मिठाई हरड़े, जो जिन समें चाहिए जब।।१२।।

श्री लालदास जी इस बात का हमेशा ध्यान रखते थे कि सब सुन्दरसाथ को हर तरह के अनाज, शाक-सब्जियाँ, मेवा-मिठाई, तथा हरड़ आदि उचित समय पर आवश्यकता अनुसार प्राप्त हो जाया करे।

रूई सूत और बासन, निरगुन और सरगुन।

सब पहुंचावें समें समें, आन आन देवें सैंयन।।१३।।

गृहस्थ तथा विरक्त, दोनों प्रकार के सुन्दरसाथ के लिए रूई, सूत, और बर्तन इत्यादि सारी वस्तुएँ समय पर पहुँचा दी जाती थीं। श्री लालदास जी के निर्देशन में सेवा करने वाले सुन्दरसाथ ला-लाकर सबको दिया करते थे।

हाजिर रहें हजूर में, बैठे श्री राज के पास।

आगे पीछे ना होवहीं, ये सेवा करें खास।।१४।।

सारी व्यवस्था का निर्देशन करते हुए भी लालदास जी श्रीजी के पास बैठे रहते थे। लालदास जी ने इस प्रकार की व्यवस्था की थी कि किसी भी विभाग की सेवा में विलम्ब या त्रुटि नहीं होने पाती थी।

इनके पास रहत हैं, इन कारखाने में।

घनस्याम लेखा लिखें, धरम दास खजानें।।१५।।

अब उन सुन्दरसाथ के नाम बताये जा रहे हैं, जिनके पास अलग-अलग विभागों की सेवा सम्भालने का उत्तरदायित्व था। घनश्याम जी बही-खाता लिखने की सेवा करते थे, तो धर्मदास जी खजाने की देखभाल करते थे।

सन्त दास सामिल रहें, और चतुर रहे इत।

और मानक रहत हैं, कल्यान भी आवत।।१६।।

सन्त दास जी, चतुर जी, माणिक भाई, और कल्याण जी भी खजाने की देख-रेख किया करते थे।

भिखारीदास भी रहें, खजाना मकरन्द रखें।

इन पीछे गीगे को दई, सेवा करें सब कोए।।१७।।

भिखारी दास जी भी इस सेवा में रहते हैं। खजाने के रख-रखाव की व्यवस्था मकरन्द जी के हाथों में थी। इनके पश्चात् गीगे जी को यह सेवा दी गई। इस प्रकार ये सभी सुन्दरसाथ मिलकर यह सेवा सम्भालते हैं।

कपड़ा मकरन्द देवहीं, सब साथ और राज।

नित सेवे सनेह सों, फेर खेम करन रखा इन काज।।१८।।

सब सुन्दरसाथ और श्रीजी के लिये कपड़ों की सेवा मकरन्द जी किया करते थे। ये हमेशा ही प्रेमपूर्वक सेवा करते थे। पुनः खेमकरन जी को श्री लालदास जी ने इस सेवा के लिए मनोनीत किया।

पहिले नारायन देवें कपड़ा, रहे सेवा में हुकम।

देवें सब सनेह सो, फेर करी खेमकरन आतम।।१९।।

पहले नारायण दास जी कपड़ा बाँटने की सेवा किया करते थे। ये धाम धनी के हुक्म से हमेशा ही सेवा में तल्लीन रहा करते थे और सबको प्रेमपूर्वक दिया करते थे। पुनः खेमकरन जी ने आपने आत्मिक सुख के लिये यह सेवा की।

महामत कहे ए मोमिनों, ए साथी सेवा के।

कहों केता अजूं बहुत हैं, जिन प्यारे चरन धनी के।।२०।।

श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! सेवा करने वाले कुछ ही सुन्दरसाथ के नाम अभी बताये गये हैं, किन्तु अभी मैं कितना वर्णन करूँ? सेवा में समर्पित हो जाने वाले तो बहुत से सुन्दरसाथ हैं। जिन्हें धाम धनी के चरणों से प्रेम होता है, एकमात्र वे ही यथार्थ रूप से सेवा करते हैं।

प्रकरण ।।७२।। चौपाई ।।४३५२।।

गर्मी के दिनों की सेवा

गरमी के दिनों में, सब सेवा खुसबोए।

अतर खरीद सब जात के, आवे तुंग भरे गुलाब के सोए।।१।।

गर्मी के दिनों में बँगला जी दरबार को सुगन्धित और शीतल रखने के लिए हर प्रकार की व्यवस्था की जाती है। फूलों की प्रायः सभी प्रमुख जातियों के इत्र खरीदे जाते हैं। गुलाब जल से भरे हुए मटके बाहर से मँगाए जाते हैं।

अगर चोवा खस खाना, करें सेवा गंगाराम।

खसबोय खाना सब रखत हैं, एही खरीद करें इस ठाम।।२।।

अगर, इत्र, आदि सुगन्धित पदार्थों को रखने की सेवा गँगाराम जी करते हैं। वे बाहर से इन सभी सुगन्धित

पदार्थों को खरीदकर अपने नियन्त्रण में रखा करते हैं।

खस खाना बनावत, टटियां अपने हाथ।

छप्पर छांटे भली भांत सों, छिटकत पानी साथ।।३।।

सुन्दरसाथ गाडर नामक घास की सुगन्धित जड़ों को बाँस की फटियों के साथ मिलाकर दीवारें (चिके, पल्ले, टटियां, आदि) बनाते हैं। इसी घास (खस) से वे अच्छी तरह से छप्पर भी बनाते हैं और उस पर पानी भी छिड़कते हैं।

टटियां बांधने को, एक ओका गंगा राम।

सेवा कृष्णदास दयाल, रहे महम्मद खां इन काम।।४।।

गाडर, घास (खस) से चिकें (पर्दे) बाँधने की सेवा में ओका, गँगाराम, कृष्ण दास, दयाल, और मुहम्मद खान

रहते हैं।

फते महम्मद आवत, खड़ा करन खस खान।

बंगले के बीच में, सब सेवा करें समान।।५।।

खस की दीवारों को खड़ा करने के लिए फतेह मुहम्मद आते हैं। बँगला जी दरबार में सब सुन्दरसाथ समान भाव से सेवा करते हैं।

काम बढ़ई का पड़े, रहे मोहन हीरा मन।

सुतरी डोरी ल्यावन को, बूल चन्द मोहन।।६।।

जब बढ़ई के काम की आवश्यकता पड़ती है, तो मोहन और हीरामन हमेशा इसके लिए उपस्थित रहते हैं। सुतली और डोरी लाने की सेवा बूलचन्द और मोहन जी किया करते हैं।

बांस कमचिएँ ल्यावत, पुरबीए खोज पर।

समारने बांसन का, जग्गू वीर जी बुलावने पर।।७।।

पुरवीए सुन्दरसाथ जँगल से बाँसों की फट्टियाँ लाते हैं, और उन्हें सीधा तथा सुन्दर बनाने के लिए जग्गू तथा वीर जी को बुलाते हैं।

लाल खारूआ चाहिए, ल्यावत है नारायन।

बनाए के ठाढ़ी करें, पोंढ़त है सुभान।।८।।

बाँसों की फट्टियों को बाँधने के लिए लाल कपड़े की आवश्यकता पड़ती है, इसे लाने की सेवा नारायण जी करते हैं। इनकी चिकें बनाकर खड़ी करते हैं क्योंकि बँगला जी में धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी विश्राम करते हैं।

जल छिरकत सब बंगले, उठाए सब बिछौनें।

इनाएत खां भगवान, गंगाराम सेवें इनमें।।९।।

सम्पूर्ण बँगला जी दरबार में सब के बिछौने को उठाकर जल छिड़का जाता है। इनायत खाँ, भगवान, तथा गँगाराम जी इस सेवा में सक्रिय रहते हैं।

बिछौने वाले बिहारीदास, सब साथ दौड़े इन काम।

वीरजी मोदी जल छिरकत, कर राज की पहिचान।।१०।।

श्रीजी का बिछौना बिछाने की सेवा करने वाले बिहारी दास जी तथा सब सुन्दरसाथ इस सेवा में दौड़ पड़ते हैं। श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की पहचान करके वीरजी मोदी जल छिड़कने की सेवा करते हैं।

नन्दराम पखाले मंगावत, आखर बल्लभ इत छिरकत।

तर करें जिमी को, गरमी न फरकत।।११।।

नन्दराम जी पानी छिड़कने वाले छोटे-छोटे घड़े मँगवाते हैं और वल्लभ दास जी जल छिड़कते हैं। वे धरती को इतना तर कर देते हैं कि गर्मी पास नहीं आती।

वाओ ढोले इत हजूरी, खड़े रहें इक पाये।

बिहारी वाओ ढोलत, कबूं गंगादास इत आए।।१२।।

श्रीजी की सेवा करने वाले सुन्दरसाथ उनके ऊपर पँखे से हवा करते हैं और सेवा में पल-पल उपस्थित रहते हैं। कभी बिहारी जी पँखे से हवा करते हैं, तो कभी गँगादास जी।

संकर हाथ में रहत हैं, हमेसा ही बिजने।

जब महाराजा आवत, वाओ ढोलें इन समें।।१३।।

शँकर भाई के हाथ में हमेशा ही पँखा रहता है। जब महाराजा छत्रशाल जी आते हैं, तो वे भी श्री प्राणनाथ जी के ऊपर पँखा झलते हैं।

और साथी सब ढोलत, जहां लग पौढ़त श्री राज।

चार जने इत खड़े रहें, वल्लभ संकर एही काज।।१४।।

जब तक श्रीजी लेटे रहते हैं, तब तक सेवा वाले सब सुन्दरसाथ पँखा झलते रहते हैं। इस सेवा में चार सुन्दरसाथ हमेशा उपस्थित रहते हैं। वल्लभ दास जी तथा शँकर भाई की यही विशेष सेवा है।

गंगादास गंगाराम, और बिहारीदास।

सन्त दास सेवन में, खड़े रहें ए खास।।१५।।

गँगादास, गँगाराम, विहारी दास, और सन्त दास, ये चारों सुन्दरसाथ धाम धनी की सेवा में विशेष रूप से खड़े रहते हैं।

और साथी भी सेवन को, खड़े रहें सदा सनमुख।

जिनों सुख लिया इन समें, कह्यो न जाए इन मुख।।१६।।

इनके अतिरिक्त और भी बहुत से सुन्दरसाथ हैं, जो हमेशा ही श्रीजी की सेवा के लिए उपस्थित रहते हैं। जिन सुन्दरसाथ ने श्री प्राणनाथ जी को पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द अक्षरातीत मानकर सेवा की और सुख लिया, उनके सौभाग्य का वर्णन इस मुख से नहीं किया जा सकता।

इन सेवा मिने पहिले, रहते निरमल दास।

ता पीछे प्रेमदास नें, सेवा करी जो खास।।१७।।

श्रीजी की सेवा में पहले निर्मलदास जी रहा करते थे। उनके बाद प्रेम दास जी ने विशेष रूप से धाम धनी की सेवा की।

लाल मुकुन्द दास रहत हैं, निरमल दास के संग।

गोविन्द दास सूरती, मगन सेवत सर्वा अंग।।१८।।

लालदास जी तथा मुकुन्द दास जी सेवा में निर्मल दास जी के साथ रहते हैं। सूरत के रहने वाले गोविन्द दास जी धनी के प्रेम में मग्न होकर सभी अँगों से सेवा करते हैं।

जमुना मानक इन समें, रहें हजूर सेवा में।

रामबाई आखर में, ए सबे हुई बल्लभ सें।।१९।।

इस समय यमुना बाई तथा मानक बाई श्रीजी की सेवा में उपस्थित रहा करती हैं। बाद में राम बाई भी इस सेवा में रहने लगीं। वल्लभ भाई ने धाम धनी की इन सारी सेवाओं को निभाया।

हकीकत खां भेजत है, गुलाब के सीसे।

छिरकत हैं सब सेज पर, गंगाराम इन समें।।२०।।

हकीकत खाँ श्रीजी की सेवा में गुलाब के इत्र को शीशे के बर्तनों में रखकर भिजवाते हैं। गँगाराम जी उसे श्रीजी की सम्पूर्ण सेज पर छिड़कते हैं।

मिहीं वस्तर पहिनन के, प्रेमदास ल्यावे।

आखर को इन पे, नन्दराम पासे जावे।।२१।।

श्री राज जी के पहनने के लिए महीन वस्त्र प्रेम दास जी लाते हैं। अन्ततोगत्वा उनसे यह सेवा नन्दराम जी के पास चली गई।

आई फेर बल्लभ पास, यापे सब सेवा को बोझ।

बहुत मेहनत इन करी, सब सेवा की खोज।।२२।।

पुनः यह सेवा वल्लभदास जी के पास आयी। वल्लभदास जी के ऊपर हर तरह की सेवा का उत्तरदायित्व था। उन्होंने खोज-खोजकर हर तरह की सेवा की और इसमें बहुत अधिक परिश्रम किया।

महावजी भाई इन समें, आए पोरबन्दर से।

सेवा अनार राखवे की, और पत्री लिखवे की सेवा में।।२३।।

इस समय पोरबन्दर से आए हुए महाव जी भाई स्याही रखने और पत्र लिखने की सेवा सम्भालते हैं।

आसबाई इन समें, लागत हैं चरन।

श्री राज हेत कर बुलावत, प्रसन्न होए के मन।।२४।।

श्री लालदास जी सारी व्यवस्थाओं पर दृष्टिपात करने के पश्चात् धाम धनी के चरणों में प्रणाम करते हैं। धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी उनकी सेवाओं से प्रसन्न होते हैं और उनको बहुत लाड भरे शब्दों से बुलाते हैं।

महामत कहें सैयन को, ए सेवा के कहे साथ।

इहां तेही खड़े रहे, जाके धनीएं पकड़े हाथ।।२५।।

सब सुन्दरसाथ को सम्बोधित करते हुए श्री महामति जी कहते हैं कि हे साथ जी! उपरोक्त प्रकरणों में सेवा के प्रति समर्पित हो जाने वाले सुन्दरसाथ के नाम बताए गए हैं। धाम धनी की सेवा वे ही सुन्दरसाथ करते हैं, जिनके ऊपर श्री राज जी की अपार मेहर होती है और माया से बचाने के लिए स्वयं अक्षरातीत जिनका हाथ पकड़े रहते हैं, अर्थात् अपना वरद् हस्त रखे रहते हैं।

प्रकरण ।।७३।। चौपाई ।।४३७७।।

कुल प्रकरण– ७३, कुल चौपाई– ४३७७

।। इति पूर्णम् ।।